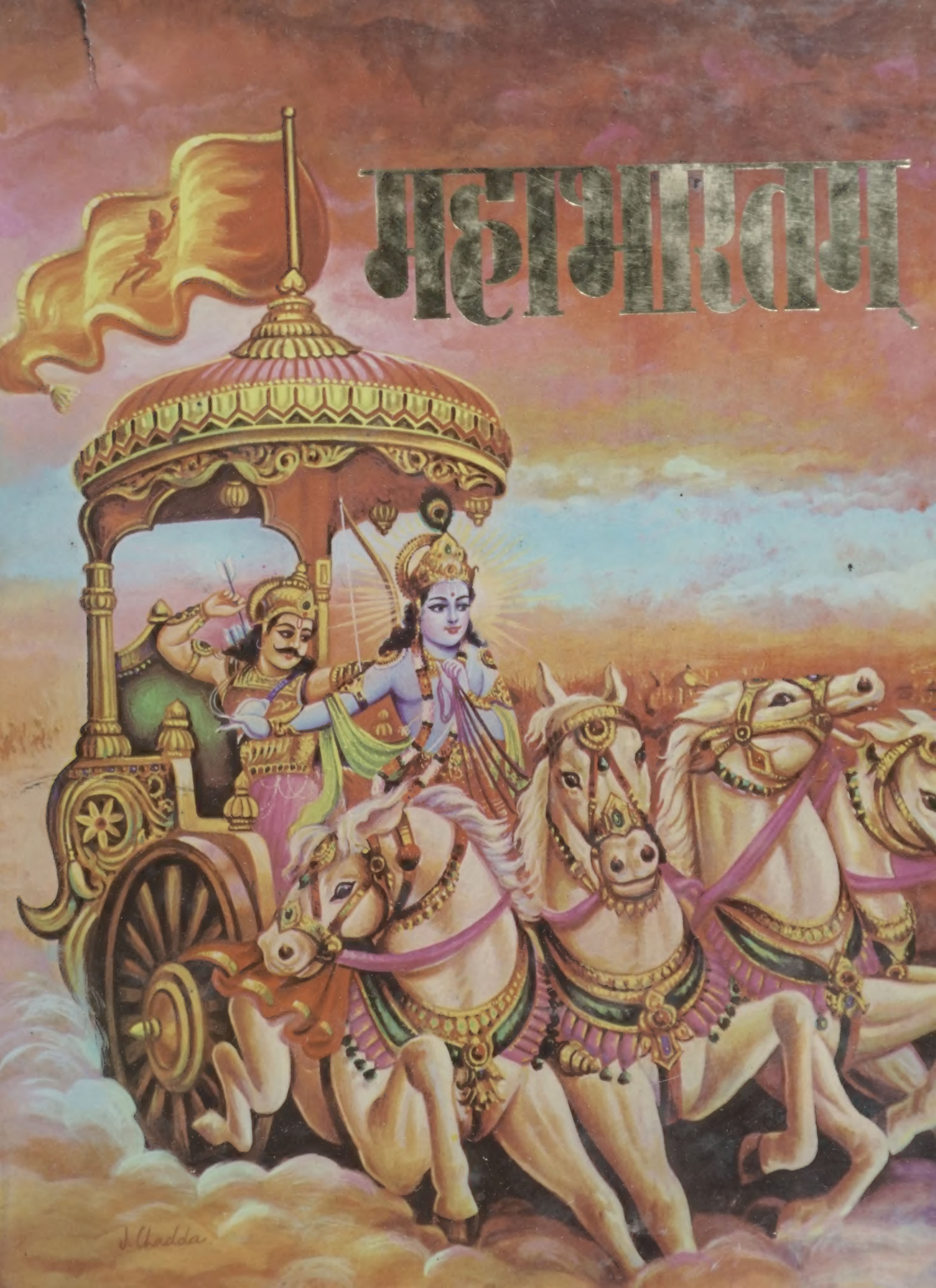
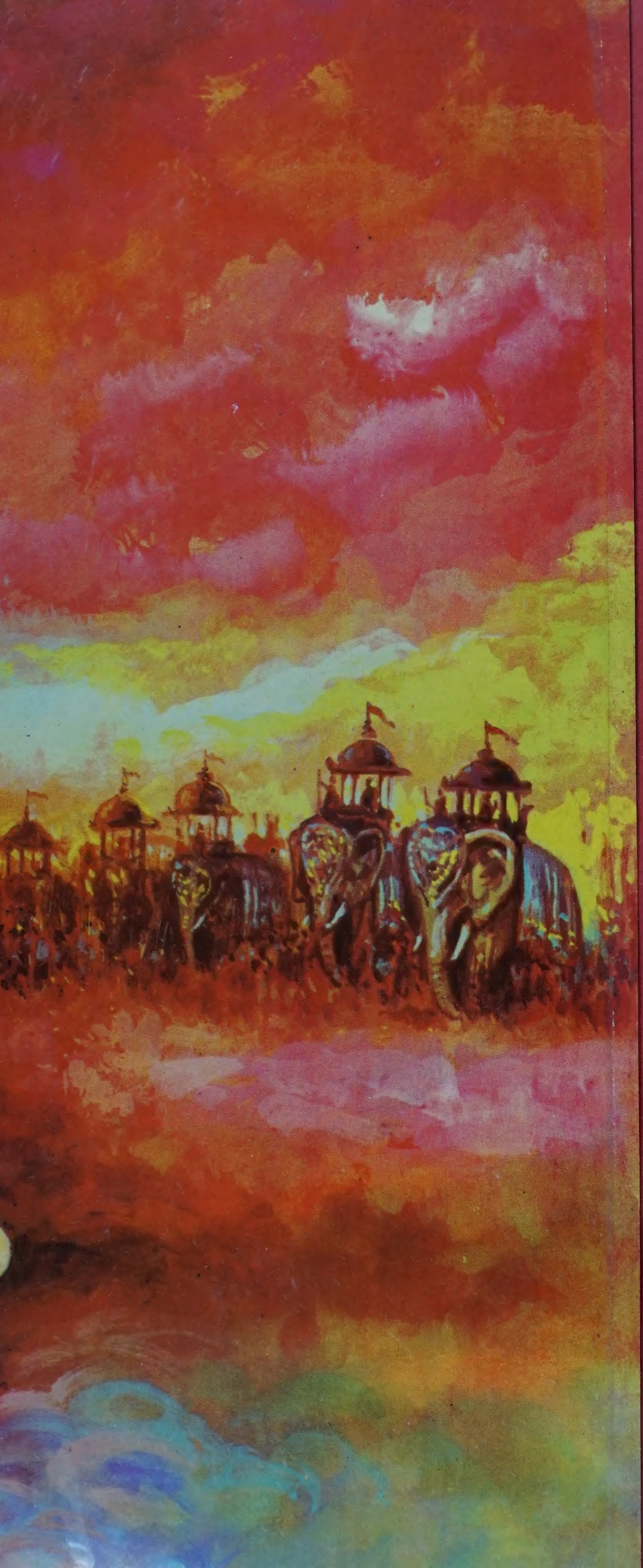
# महाभारतम्





भगवतीभाष्यसमलंकृतम्

॥ ओ३म् ॥

# महाभारतम्

[ द्वितीयो भागः ]

अनुवादक, सम्पादक
तथा
टिप्पणीकार
परमहंस स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती

गोविन्दराम हासानन्द दिल्ली

प्रकाशक :
**विजय कुमार**
**गोविन्दराम हासानन्द**
नई सड़क,
दिल्ली-११०००६



संस्करण : प्रथम
**गणतन्त्र दिवस**
**जनवरी १९८४**

मुद्रक :
**दुर्गा मुद्रणालय**
सुभाषपार्क एक्सटेंशन,
नवीन शाहदरा, दिल्ली-११००३२

# विषय-सूची

## द्रोणपर्व

## कर्णपर्व

## शल्यपर्व

## सौप्तिकपर्व

## स्त्रीपर्व

# भीष्मपर्व

## प्रथमोऽध्यायः

### दोनों सेनाओं का कुरुक्षेत्र में जमाव तथा युद्ध के नियमों का निर्माण

वैशम्पायन उवाच

**तेऽवतीर्य कुरुक्षेत्रं पाण्डवाः सहसोमकाः ।**
**कौरवाः समवर्तन्त जिगीषन्तो महाबलाः ॥१॥**

**वैशम्पायनजी कहते हैं**—सोमकोंसहित पाण्डव और कौरव—दोनों महाबली थे । वे एक-दूसरे को जीतने की इच्छा से कुरुक्षेत्र में उतरकर आमने-सामने डटे हुए थे ।

**अभियाय च दुर्धर्षां धार्तराष्ट्रस्य वाहिनीम् ।**
**प्राङ्मुखाः पश्चिमे भागे न्यविशन्त ससैनिकाः ॥२॥**

पाण्डवों के योद्धा लोग अपने-अपने सैनिकोंसहित धृतराष्ट्रपुत्र दुर्योधन की दुर्धर्ष सेना के सम्मुख जाकर पश्चिम भाग में पूर्वाभिमुख होकर ठहर गये थे ।

**दृष्ट्वा ध्वजाग्रं पार्थस्य धार्तराष्ट्रो महामनाः ।**
**सह सर्वैर्महीपालैः प्रत्यव्यूहत पाण्डवम् ॥३॥**

कुन्तीपुत्र अर्जुन के ध्वज का अग्रभाग देखकर महामना दुर्योधन ने समस्त भूपालों के साथ पाण्डव-सेना के विरुद्ध अपनी सेना की व्यूहरचना की ।

**दृष्ट्वा दुर्योधनं हृष्टाः पाञ्चाला युद्धनन्दिनः ।**
**दध्मुः प्रीता महाशंखान् भेर्यश्च मधुरस्वनाः ॥४॥**

दुर्योधन को देखकर युद्ध का अभिनन्दन करने-वाले पाञ्चाल सैनिक बहुत प्रसन्न हुए और हर्ष में भरकर बड़े-बड़े शंखों तथा मधुर ध्वनि करनेवाली भेरियों को बजाने लगे ।

**ततो हर्षं समागम्य वासुदेवधनञ्जयौ ।**
**दध्मतुः पुरुषव्याघ्रौ दिव्यौ शंखौ रथे स्थितौ ॥५॥**

अपनी सेना को हर्ष और उल्लास में भरी हुई देख एक ही रथ पर बैठे हुए पुरुषसिंह श्रीकृष्ण और अर्जुन भी आनन्दमग्न होकर अपने दिव्य शंखों को बजाने लगे ।

**पाञ्चजन्यस्य निर्घोषं देवदत्तस्य चोभयोः ।**
**श्रुत्वा तु निनदं योधाः शकृन्मूत्रं प्रसुस्रुवुः ॥६॥**

पाञ्चजन्य और देवदत्त दोनों शंखों की ध्वनि सुनकर शत्रुपक्ष के बहुत-से सैनिकों का तो भयभीत होकर मल-मूत्र निकलने लगा ।

**उभे सैन्ये च राजेन्द्र युद्धाय मुदिते भृशम् ।**
**कुरुक्षेत्रे स्थिते यत्ते सागरक्षुभितोपमे ॥७॥**

राजेन्द्र ! कुरुक्षेत्र में युद्ध के लिए अत्यन्त हर्षोल्लास से भरी हुई दोनों पक्ष की सेनाएँ दो विक्षुब्ध महासागरों के समान एक-दूसरे के सम्मुख खड़ी थीं ।

**तयोस्तु सेनयोरासीदद्भुतः स तु सङ्गमः ।**
**युगान्ते समनुप्राप्ते द्वयोः सागरयोरिव ॥८॥**

दोनों सेनाओं का वह अद्भुत समागम प्रलय-काल उपस्थित होने पर परस्पर मिलनेवाले दो समुद्रों के समान जान पड़ता था ।

**शून्यासीत् पृथिवी सर्वा वृद्धबालावशेषिता ।**
**निरश्वपुरुषेवासीद् रथकुञ्जरवर्जिता ॥९॥**

सारी पृथिवी नवयुवकों से शून्य-सी हो रही थी । सर्वत्र केवल बालक और बूढ़े ही शेष रह गये थे । सारी वसुधा हाथी, घोड़े, रथ और तरुणों से हीन-सी हो गई थी ।

**ततस्ते समयं चक्रुः कुरुपाण्डवसोमकाः ।**
**धर्मान् संस्थापयामासुर्युद्धानां भरतर्षभ ॥१०॥**

भरतश्रेष्ठ ! दोनों सेनाओं के मोर्चों पर डटे

जाने पर कौरव, पाण्डव तथा सोमकों ने परस्पर मिलकर युद्ध के सम्बन्ध में कुछ नियम बनाये और युद्ध की मर्यादा स्थापित की।

**निवृत्ते विहिते युद्धे स्यात् प्रीतिर्नः परस्परम्।**
**यथापरं यथायोगं न च स्यात् कस्यचित् पुनः ॥११॥**

वे नियम थे—युद्ध बन्द हो जाने पर सन्ध्याकाल में हम सब लोगों में परस्पर प्रेम बना रहे। उस समय पुनः किसी का किसी के साथ शत्रुतापूर्ण अयोग्य व्यवहार नहीं होना चाहिए।

**वाचा युद्धप्रवृत्तानां वाचैव प्रतियोधनम्।**
**निष्क्रान्ताः पृतनामध्यान्न हन्तव्याः कदाचन ॥१२॥**
**रथी च रथिना योध्यो गजेन गजधूर्गतः।**
**अश्वेनाश्वी पदातिश्च पादातेनैव भारत ॥१३॥**

जो वाग्युद्ध में प्रवृत्त हों उनके साथ वाणी से ही युद्ध किया जाए। जो सेना से बाहर निकल गये हों, उनका वध कदापि न किया जाए। हे भारत! रथी को रथी के साथ ही युद्ध करना चाहिए। इसी प्रकार हाथीसवार को हाथीसवार के साथ, घुड़सवार को घुड़सवार के साथ और पैदल को पैदल के साथ युद्ध करना चाहिए।

**यथायोगं यथाकामं यथोत्साहं यथाबलम्।**
**समाभाष्य प्रहर्तव्यं न विश्वस्ते न विह्वले ॥१४॥**

जिसमें जैसी योग्यता, इच्छा, उत्साह और बल हो उसी के अनुसार विपक्षी को बताकर, उसे सावधान करके ही उसपर प्रहार किया जाए। जो विश्वास करके असावधान हो अथवा जो युद्ध से घबराया हुआ हो, उसपर प्रहार न किया जाए।

**एकेन सह संयुक्तः प्रपन्नो विमुखस्तथा।**
**क्षीणशस्त्रो विवर्मा च न हन्तव्यः कदाचन ॥१५॥**

जो एक के साथ युद्ध में लगा हो, शरण में आया हो, पीठ दिखाकर भागा हो तथा जिसके अस्त्र-शस्त्र और कवच कट गये हों, ऐसे मनुष्य को कदापि न मारा जाए।

**न सूतेषु न धुर्येषु न च शस्त्रोपनायिषु।**
**न भेरीशंखवादेषु प्रहर्तव्यं कथञ्चन ॥१६॥**

घोड़ों की सेवा के लिए नियुक्त हुए सूतों, बोझ ढोनेवालों, शस्त्र पहुँचानेवालों तथा भेरी और शंख बजानेवालों पर कोई किसी प्रकार भी प्रहार न करे।

**इति महाभारते भीष्मपर्वणि प्रथमोऽध्यायः ॥१॥**

# द्वितीयोऽध्यायः

## संजय का युद्धभूमि से लौटकर धृतराष्ट्र को भीष्मजी की मृत्यु का समाचार सुनाना

वैशम्पायन उवाच

**अथ गावल्गणिर्विद्वान् संयुगादेत्य भारत।**
**आचष्ट निहतं भीष्मं धृतराष्ट्राय ध्यायते ॥१॥**

**वैशम्पायनजी कहते हैं**—जनमेजय! एक दिन गवल्गणपुत्र विद्वान् संजय ने युद्धभूमि से लौटकर चिन्तामग्न धृतराष्ट्र के पास जा उन्हें पितामह भीष्म के युद्धभूमि में मारे जाने का समाचार सुनाया।

संजय उवाच

**संजयोऽहं महाराज नमस्ते भरतर्षभ।**
**हतो भीष्मः शान्तनवो भरतानां पितामहः ॥२॥**

**संजय बोले**—महाराज! भरतश्रेष्ठ! नमस्ते। मैं संजय आपकी सेवा में उपस्थित हूँ। भरतवंशियों के पितामह, महाराज शान्तनु के पुत्र भीष्मजी आज युद्ध में मारे गये।

**ककुदं सर्वयोधानां धाम सर्वधनुष्मताम्।**
**शरतल्पगतः सोऽद्य शेते कुरुपितामहः ॥३॥**

जो समस्त योद्धाओं के ध्वजस्वरूप तथा सम्पूर्ण धनुर्धरों के आश्रय थे, वे ही कुरुकुलपितामह भीष्म आज बाणशय्या पर सो रहे हैं।

**यः सर्वान् पृथिवीपालान् समवेतान् महामृधे।**
**जिगायैकरथेनैव काशिपुर्यां महारथः ॥४॥**
**जामदग्न्यं रणे रामं योऽयुध्यदपसम्भ्रमः।**
**न हतो जामदग्न्येन स हतोऽद्य शिखण्डिना ॥५॥**

जिन महारथी वीर भीष्म ने काशिराज की नगरी में एकत्र हुए समस्त नरेशों को रथ पर बैठकर अकेले ही महान् युद्ध में पराजित कर दिया था, जिन्होंने युद्धक्षेत्र में जमदग्निनन्दन परशुराम के साथ निर्भय होकर युद्ध किया था और जिन्हें परशुरामजी

भी नहीं मार सके, वे ही भीष्म आज शिखण्डी के द्वारा मारे गये।

**स शेते निहतो भूमौ वातभग्न इव द्रुमः ।**
**तव दुर्मन्त्रिते राजन् यथा नार्हः स भारत ॥६॥**

भरतवंशी नरेश ! भीष्मजी आँधी से उखाड़े हुए वृक्ष की भाँति मारे जाकर युद्धभूमि में सो रहे हैं। यह सब आपकी कुमन्त्रणा का फल है, अन्यथा भीष्मजी इस दुर्दशा के योग्य नहीं थे।

धृतराष्ट्र उवाच

**कथं चातिरथस्तेन पाञ्चाल्येन शिखण्डिना ।**
**भीष्मो विनिहतो युद्धे देवैरपि दुरासदः ॥७॥**

**धृतराष्ट्र बोले**—भीष्म तो युद्ध में देवताओं के लिए भी दुर्जय और अतिरथी वीर थे, फिर पाञ्चाल-राजकुमार शिखण्डी के हाथ से वे कैसे मारे गये ?

**अश्मसारमयं नूनं हृदयं सुदृढं मम ।**
**यत् श्रुत्वा पुरुषव्याघ्रं हतं भीष्मं न दीर्यते ॥८॥**

निश्चय ही मेरा यह हृदय लोहे के समान कठोर है, तभी तो पुरुषसिंह भीष्मजी की मृत्यु का समाचार सुनकर भी विदीर्ण नहीं होता है।

**योषेव हतवीरा मे सेना पुत्रस्य संजय ।**
**अगोपमिव चोद्भ्रान्तं गोकुलं तद् बलं मम ॥९॥**

संजय ! उन वीर सेनापति के मारे जाने पर मेरे पुत्र की सेना विधवा स्त्री के समान असहाय हो गई है। जैसे ग्वाले के बिना गौओं का समुदाय इधर-उधर भटकता फिरता है, उसी प्रकार अब मेरी सेना उद्भ्रान्त हो रही होगी !

**अगाधे सलिले मग्नां नावं दृष्ट्वेव पारगाः ।**
**भीष्मे हते भृशं दुःखान्मन्ये शोचन्ति पुत्रकाः ॥१०॥**

जैसे पार जाने की इच्छावाले पथिक नौका को अगाध जल में डूबी हुई देखकर दुःखी होते हैं, मैं समझता हूँ कि भीष्मजी के मारे जाने पर मेरे पुत्र भी दुःख के कारण अत्यन्त शोकमग्न हो गये होंगे।

**यद् वृत्तं तत्र संग्रामे मन्दस्याबुद्धिसम्भवम् ।**
**अपनीतं सुनीतं यत् तन्ममाचक्ष्व संजय ॥११॥**

संजय ! मूर्ख दुर्योधन के अज्ञान के कारण उस युद्ध में अन्याय और न्याय की जो-जो बातें संघटित हुई हों, तुम उन सबका वर्णन करो।

**यत्कृतं तत्र संग्रामे भीष्मेण जयमिच्छता ।**
**तेजोयुक्तं कृतास्त्रेण शंस तच्चाप्यशेषतः ॥१२॥**

विजय की इच्छा रखनेवाले अस्त्रवेत्ता भीष्मजी ने उस युद्ध में अपनी तेजस्विता के अनुरूप जो-जो कार्य किया हो, वह सभी पूर्णरूप से मुझे बताओ।

संजय उवाच

**त्वद्युक्तोऽयमनुप्रश्नो महाराज यथार्हसि ।**
**न तु दुर्योधने दोषमिममासंक्तुमर्हसि ॥१३॥**

**संजय ने कहा**—महाराज ! आपने बारम्बार जो अनेक प्रश्न किये हैं, वे सर्वथा उचित तथा आपके ही योग्य हैं, परन्तु आपको यह सारा दोष दुर्योधन के माथे पर नहीं मढ़ना चाहिए।

**प्रत्यक्षं यन्मया दृष्टं दृष्टं योगबलेन च ।**
**शृणु तत्पृथिवीपाल मा च शोके मनः कृथाः ॥१४॥**

भूपाल ! युद्ध का जो वृत्तान्त मैंने अपनी आँखों से देखा है तथा योगबल से जिसका साक्षात्कार किया है, वह सब सुना रहा हूँ, सुनिए। अपने मन को शोक में न डुबाइए।

**तेष्वनीकेषु यत्तेषु व्यूढेषु च विधानतः ।**
**दुर्योधनो महाराज दुःशासनमथाब्रवीत् ॥१५॥**

महाराज ! जब समस्त सेनाएँ शास्त्रीय विधि के अनुसार व्यूह-रचनापूर्वक अपने-अपने स्थान पर युद्ध के लिए तैयार हो गईं, तब दुर्योधन ने दुःशासन से कहा—

दुर्योधन उवाच

**दुःशासन रथास्तूर्णं युज्यन्तां भीष्मरक्षिणः ।**
**अनीकानि च सर्वाणि शीघ्रं त्वमनुनोदय ॥१६॥**

**दुर्योधन बोला**—दुःशासन ! तुम भीष्मजी की रक्षा करनेवाले रथों को शीघ्र तैयार कराओ। सम्पूर्ण सेनाओं को भी शीघ्र उनकी रक्षा के लिए तैयार हो जाने की आज्ञा दो।

**नातः कार्यतमं मन्ये रणे भीष्मस्य रक्षणात् ।**
**हन्याद् गुप्तो ह्यसौ पार्थान्सोमकांश्च ससृञ्जयान् ॥१७**

मैं इस समय युद्ध में भीष्मजी की रक्षा से बढ़कर और कोई कार्य आवश्यक नहीं समझता हूँ, क्योंकि वे सुरक्षित रहें तो कुन्ती के पुत्रों, सोमकों तथा सृंजयवंशियों को भी मार सकते हैं।

**अब्रवीच्च विशुद्धात्मा नाहं हन्यां शिखण्डिनम् ।**
**श्रूयते स्त्री ह्यसौ पूर्वं तस्माद् वर्ज्यो रणे मम ॥१८॥**

विशुद्धहृदय भीष्मजी मुझसे कह चुके हैं कि "मैं शिखण्डी को युद्ध में नहीं मारूँगा । सुनते हैं कि वह पहले स्त्री था, अतः रणभूमि में मेरे लिए वह सर्वथा त्याज्य है ।"

**रक्षितव्यो ह्यतो भीष्मो विशेषेणेति मे मतिः ।**
**शिखण्डिनो वधे यत्ताः सर्वे तिष्ठन्तु मामकाः ॥१९॥**

अतः मेरा विचार है कि इस समय हमें विशेषरूप से भीष्मजी की रक्षा में ही तत्पर रहना चाहिए तथा मेरे सारे सैनिक शिखण्डी को मार डालने का प्रयत्न करें ।

संजय उवाच

**ततो रजन्यां व्युष्टायां शब्दः समभवन्महान् ।**
**क्रोशतां भूमिपालानां युज्यतां युज्यतामिति ॥२०॥**

**संजय कहते हैं**—राजन् ! रात्रि के अन्त में प्रभात होते ही—'रथ जोतो, युद्ध के लिए तैयार हो जाओ' इस प्रकार चिल्लानेवाले नरेशों का महान् कोलाहल चहुँ ओर व्याप्त हो गया ।

**शंखदुन्दुभिघोषैश्च सिंहनादैश्च भारत ।**
**हयहेषितनादैश्च रथनेमिस्वनैस्तथा ॥२१॥**
**गजानां बृंहतां चैव योधानां चापि गर्जताम् ।**
**क्ष्वेलितास्फोटितोत्क्रुष्टैस्तुमुलं सर्वतोऽभवत् ॥२२॥**

भरतनन्दन ! शंख और दुन्दुभियों की ध्वनि, वीरों के सिंहनाद, घोड़ों की हिनहिनाहट, रथ के पहियों की घरघराहट, हाथियों की चिंघाड़ और गर्जते हुए योद्धाओं के सिंहनाद करने, ताल ठोकने और चीखने-चिल्लाने की तुमुल ध्वनि सब ओर व्याप्त हो गई ।

**उदतिष्ठन्महाराज सर्वं युक्तमशेषतः ।**
**सूर्योदये महत् सैन्यं कुरुपाण्डवसेनयोः ॥२३॥**

महाराज ! सूर्योदय होते-होते कौरव और पाण्डवों की वह विशाल सेना सम्पूर्ण रूप से युद्ध के लिए तैयार हो उठी ।

**राजेन्द्र तव पुत्राणां पाण्डवानां तथैव च ।**
**दुष्प्रधृष्याणि चास्त्राणि समदृश्यन्त चन्द्रवत् ॥२४॥**

राजेन्द्र ! उस समय आपके पुत्रों और पाण्डवों के दुर्दम्य अस्त्र-शस्त्र चन्द्रमा के समान प्रकाशित हो उठे ।

**महेन्द्रकेतवः शुभ्रा महेन्द्रसदनेष्विव ।**
**संनद्धास्ते प्रवीराश्च ददृशुर्युद्धकांक्षिणः ॥२५॥**

जैसे इन्द्र-भवन में देवराज इन्द्र के चमकीले ध्वज फहराते हैं, उसी प्रकार कौरव-पाण्डवों के ध्वज फहरा रहे थे । दोनों सेनाओं के प्रमुख वीर युद्ध की अभिलाषा रखकर कवच आदि से सुसज्जित दिखाई दे रहे थे ।

**उद्यतैरायुधैश्चित्रास्तलबद्धाः कलापिनः ।**
**ऋषभाक्षा मनुष्येन्द्राश्चमूमुखगता बभुः ॥२६॥**

उनके हथियार उठे हुए थे । हाथों में दस्ताने तथा पीठ पर तरकस बाँधे सेना के मुहाने पर खड़े हुए वे भूपाल अद्भुत शोभा पा रहे थे । उनकी आँखें क्रोधोद्धत साँडों की आँखों के समान बड़ी-बड़ी दिखाई दे रही थीं ।

**रथानीकान्यदृश्यन्त नगराणीव भूरिशः ।**
**अतीव शुशुभे तत्र पिता ते पूर्णचन्द्रवत् ॥२७॥**

बहुसंख्यक रथों की सेनाएँ नगरों के समान दृष्टिगोचर हो रही थीं । उनके मध्य में आपके ताऊ भीष्मजी पूर्ण चन्द्रमा के समान प्रकाशित हो रहे थे ।

**जृम्भमानं महासिंहं दृष्ट्वा क्षुद्रमृगा यथा ।**
**धृष्टद्युम्नमुखाः सर्वे समुद्विविजिरे मुहुः ॥२८॥**

धृष्टद्युम्न आदि सृंजयवंशी उन्हें देखकर बार-बार उद्विग्न हो उठते थे, ठीक उसी प्रकार जैसे मुँह बाये हुए विशाल सिंह को देखकर क्षुद्रमृग भय से व्याकुल हो उठते हैं ।

**उन्मत्तमकरावर्तौ महाग्राहसमाकुलौ ।**
**युगान्ते समवेतौ द्वौ दृश्येते सागराविव ॥२९॥**

वे दोनों सेनाएँ प्रलयकाल में एक-दूसरे से मिलनेवाले उन दो समुद्रों के समान दृष्टिगोचर हो रही थीं जिनमें विकराल मगर और भँवर होते हैं तथा जिनमें बड़े-बड़े ग्राह सब ओर फैले रहते हैं ।

**नैव नस्तादृशो राजन् दृष्टपूर्वो न च श्रुतः ।**
**अनीकानां समेतानां कौरवाणां तथाविधः ॥३०॥**

राजन् ! कौरवों की इतनी बड़ी सेना का वैसा

संगठन हमने पहले कभी न तो देखा ही था और न सुना ही था।

**मघाविषयगः सोमस्तद् दिनं प्रत्यपद्यत।**
**दीप्यमानाश्च सम्पेतुर्दिवि सप्त महाग्रहाः ॥३१॥**

उस दिन चन्द्रमा मघा नक्षत्र पर था तथा आकाश में सात महाग्रह अग्नि के समान उद्दीप्त दिखाई दे रहे थे।

**सर्वधर्मविशेषज्ञः पिता देवव्रतस्तव।**
**समानीय महीपालानिदं वचनमब्रवीत् ॥३२॥**

उस दिन सम्पूर्ण धर्मों के विशेषज्ञ आपके ताऊ देवव्रत भीष्मजी ने सब राजाओं को बुलाकर उनसे इस प्रकार कहा—

भीष्म उवाच

**इदं वः क्षत्रिया द्वारं स्वर्गायापावृतं महत्।**
**गच्छध्वं तेन शक्रस्य ब्रह्मणः सहलोकताम् ॥३३॥**

**भीष्मजी बोले**—क्षत्रियो ! यह युद्ध तुम्हारे लिए स्वर्ग का खुला हुआ विशाल द्वार है। तुम लोग इसके द्वारा इन्द्र वा ब्रह्माजी के लोकों को प्राप्त करो।

**एष वः शाश्वतः पन्थाः पूर्वैः पूर्वतरैः कृतः।**
**सम्भावयध्वमात्मानमव्यग्रमनसो युधि ॥३४॥**

यह तुम्हारे पूर्वजों के पूर्वजों द्वारा स्वीकार किया हुआ सनातन मार्ग है। तुम सब लोग शान्त-चित्त होकर और युद्ध में शौर्य का परिचय देते हुए अपने-आपको सुयश और सम्मान का भागी बनाओ।

**अधर्मः क्षत्रियस्यैष यद् व्याधिमरणं गृहे।**
**यदयोनिधनं याति सोऽस्य धर्मः सनातनः ॥३५॥**

घर में रोगी होकर पड़े-पड़े प्राण त्यागना क्षत्रिय के लिए अधर्म माना गया है। युद्ध में लोहे के अस्त्र-शस्त्रों द्वारा आहत होकर जो मृत्यु का आलिंगन करता है, वही उसका सनातन धर्म है।

संजय उवाच

**एवमुक्ता महीपाला भीष्मेण भरतर्षभ।**
**निर्ययुः स्वान्यनीकानि शोभयन्तो रथोत्तमैः ॥३६॥**

**सञ्जय कहते हैं**—भरतश्रेष्ठ ! भीष्मजी के ऐसा कहने पर वे सभी नरेश श्रेष्ठ रथों द्वारा अपनी सेनाओं की शोभा बढ़ाते हुए युद्ध के लिए प्रस्थित हुए।

**स तु वैकर्तनः कर्णः सामात्यः सह बन्धुभिः।**
**न्यासितः समरे शस्त्रं भीष्मेण भरतर्षभ ॥३७॥**

भरतभूषण ! इस युद्ध में भीष्मजी ने मन्त्रियों तथा बन्धुओंसहित कर्ण के अस्त्र-शस्त्र रखवा दिये थे।

**अपेतकर्णाः पुत्रास्ते राजानश्चैव तावकाः।**
**निर्ययुः सिंहनादेन नादयन्तो दिशो दश ॥३८॥**

अतः आपके पुत्र और अन्य नरेश बिना कर्ण के ही अपने सिंहनाद से दसों दिशाओं को गुँजाते हुए युद्ध के लिए निकले।

**पुत्राणां तव दुर्धर्ष पाण्डवानां तथैव च।**
**समकम्पन्त सैन्यानि परस्परसमागमे ॥३९॥**

दुर्धर्ष नरेश ! आपके पुत्रों और पाण्डवों की सेनाएँ एक-दूसरे के निकट आने पर काँप उठीं।

धृतराष्ट्र उवाच

**अक्षौहिण्यो दशैका च व्यूढा दृष्ट्वा युधिष्ठिरः।**
**कथमल्पेन सैन्येन प्रत्यव्यूहत पाण्डवः ॥४०॥**

**धृतराष्ट्र ने पूछा**—सञ्जय ! मेरी ग्यारह अक्षौहिणी सेना को व्यूहाकार में खड़ी हुए देख पाण्डुनन्दन युधिष्ठिर ने उसका सामना करने के लिए अपनी थोड़ी-सी सेना के द्वारा किस प्रकार व्यूह-रचना की ?

सञ्जय उवाच

**बृहतीं धार्तराष्ट्रस्य सेनां दृष्ट्वा समुद्यताम्।**
**विषादमगमद् राजा कुन्तीपुत्रो युधिष्ठिरः ॥४१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! युद्ध के लिए उद्यत हुई दुर्योधन की विशाल सेना को देखकर कुन्तीपुत्र राजा युधिष्ठिर के मन में विषाद छा गया।

**व्यूहं भीष्मेण चाभेद्यं कल्पितं प्रेक्ष्य पाण्डवः।**
**अक्षोभ्यमिव सम्प्रेक्ष्य विवर्णोऽर्जुनमब्रवीत् ॥४२॥**

भीष्मजी ने जिस व्यूह की रचना की थी, उसका भेदन करना असम्भव था। उसे अक्षोभ्य-सा देखकर पाण्डुनन्दन युधिष्ठिर की कान्ति फीकी पड़ गई और वे अर्जुन से इस प्रकार बोले—

युधिष्ठिर उवाच

**धनञ्जय कथं शक्यमस्माभिर्योद्धुमाहवे।**
**धार्तराष्ट्रैर्महाबाहो येषां योद्धा पितामहः ॥४३॥**

**युधिष्ठिर बोले**—महाबाहो ! धनञ्जय ! जिनके प्रधान योद्धा पितामह भीष्म हैं, उन धृतराष्ट्र-पुत्रों के साथ हम रणभूमि में कैसे युद्ध कर सकते हैं ?

**अक्षोभ्योऽयमभेद्यश्च भीष्मेणामित्रकर्षिणा ।**
**कल्पिता शास्त्रदृष्टेन विधिना भूरिवर्चसा ॥४४॥**

महातेजस्वी शत्रुसंहारक भीष्मजी ने शास्त्रीय विधि के अनुसार यह अक्षोभ्य एवं अभेद्य व्यूह रचा है।

**ते वयं संशयं प्राप्ताः ससैन्याः शत्रुकर्षण ।**
**कथमस्मान्महाव्यूहादुत्थानं नो भविष्यति ॥४५॥**

शत्रुसंहारक अर्जुन ! हम लोग अपनी सेनाओं के साथ प्राण-संकट की स्थिति में पहुँच गये हैं। इस महान् व्यूह से हमारा उद्धार कैसे होगा ?

अर्जुन उवाच

**न तथा बलवीर्याभ्यां जयन्ति विजिगीषवः ।**
**यथा सत्यानृशंस्याभ्यां धर्मेणैवोद्यमेन च ॥४६॥**

**अर्जुन बोला**—विजय की इच्छा रखनेवाले शूर-वीर अपने बल और पराक्रम से वैसी विजय नहीं पाते जैसी कि सत्य, सज्जनता, धर्म और उत्साह से प्राप्त कर लेते हैं।

**त्यक्त्वाधर्मं च लोभं च मोहं चोद्यममास्थिताः ।**
**युद्धयध्वमनहंकारा यतो धर्मस्ततो जयः ॥४७॥**

अधर्म, लोभ और मोह त्यागकर तथा उद्यम का सहारा ले अहंकारशून्य होकर युद्ध करो। जहाँ धर्म है, उसी पक्ष की विजय होती है।

**एष व्यूहामि ते व्यूहं राजसत्तम दुर्जयम् ।**
**अचलं नाम वज्राख्यं विहितं वज्रपाणिना ॥४८॥**

नृपश्रेष्ठ ! यह लीजिए, मैं आपके लिए अविचल एवं दुर्जय वज्रव्यूह की रचना करता हूँ, जिसका आविष्कार वज्रधारी इन्द्र ने किया है।

**यः स वात इवोद्धूतः समरे दुःसहः परैः ।**
**योत्स्यते वै पुरो नः स भीमः प्रहरतां वरः ॥४९॥**

जो संग्राम में प्रचण्ड वायु की भाँति उठकर शत्रुओं के लिए दुःसह हो उठते हैं, वे योद्धाओं में श्रेष्ठ आर्य भीमसेन हमारे आगे रहकर युद्ध करेंगे।

**यं दृष्ट्वा कुरवः सर्वे दुर्योधनपुरोगमाः ।**
**निर्वर्तिष्यन्ति संत्रस्ताः सिंहं क्षुद्रमृगा यथा ॥५०॥**

जैसे सिंह को देखते ही क्षुद्र मृग भयभीत होकर भाग जाते हैं, उसी प्रकार इन्हें देखकर दुर्योधन आदि समस्त कौरव त्रस्त होकर पीछे भाग जाएँगे।

**न हि सोऽस्ति पुमाँल्लोके यः संक्रुद्धं वृकोदरम् ।**
**द्रष्टुमत्युग्रकर्माणं विषहेत नरर्षभम् ॥५१॥**

संसार में ऐसा कोई भी वीर पुरुष नहीं है जो भयंकर पराक्रम प्रकट करनेवाले और क्रोध में भरे हुए नरश्रेष्ठ वृकोदर की ओर देखने का साहस भी कर सके।

सञ्जय उवाच

**एवं ते पुरुषव्याघ्राः पाण्डवा युद्धनन्दिनः ।**
**व्यवस्थिताः प्रतिव्यूह्य तव पुत्रस्य वाहिनीम् ॥५२॥**
**ग्रसन्त इव मज्जा नो योधानां भरतर्षभ ।**
**दृष्ट्वाऽग्रतो भीमसेनं गदापाणिमवस्थितम् ॥५३॥**

भरतभूषण ! इस प्रकार युद्ध से आनन्दित होनेवाले पुरुषसिंह पाण्डव आपके पुत्र की सेना के सामने व्यूह बनाकर खड़े थे तथा हमारे योद्धाओं का रक्त और मज्जा भी सुखाये देते थे। हाथ में गदा लिये भीमसेन को आगे खड़ा देखकर हमारी सारी सेना भयभीत हो रही थी।

**इति महाभारते भीष्मपर्वणि द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥**

# तृतीयोऽध्यायः

## श्रीकृष्ण द्वारा गीता-उपदेश

धृतराष्ट्र उवाच

**धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता युयुत्सवः ।**
**मामकाः पाण्डवाश्चैव किमकुर्वत संजय ॥१॥**

**धृतराष्ट्र ने पूछा**—हे सञ्जय ! पुण्यभूमि कुरुक्षेत्र में युद्ध की इच्छा से एकत्र हुए मेरे और पाण्डु के पुत्रों ने क्या किया ?

सञ्जय उवाच

**दृष्ट्वा तु पाण्डवानीकं व्यूढं दुर्योधनस्तदा ।**
**आचार्यमुपसंगम्य राजा वचनमब्रवीत् ॥२॥**

**सञ्जय ने कहा**—उस समय व्यूह-रचनायुक्त

पाण्डव-सेना को देखकर तथा द्रोणाचार्य के पास जाकर राजा दुर्योधन यह वचन कहने लगा—

**पश्यैतां पाण्डुपुत्राणामाचार्य महतीं चमूम् ।**
**व्यूढां द्रुपदपुत्रेण तव शिष्येण धीमता ।।३।।**

"हे आचार्य ! आपके बुद्धिमान् शिष्य द्रुपदपुत्र धृष्टद्युम्न द्वारा व्यूहाकार खड़ी की हुई पाण्डुपुत्रों की इस विशाल सेना को निहारिए ।

**अत्र शूरा महेष्वासा भीमार्जुनसमा युधि ।**
**युयुधानो विराटश्च द्रुपदश्च महारथः ।।४।।**
**धृष्टकेतुश्चेकितानः काशिराजश्च वीर्यवान् ।**
**पुरुजित् कुन्तिभोजश्च शैब्यश्च नरपुङ्गवः ।।५।।**
**युधामन्युश्च विक्रान्त उत्तमौजश्च वीर्यवान् ।**
**सौभद्रो द्रौपदेयाश्च सर्व एव महारथाः ।।६।।**

"इस सेना में बड़े-बड़े धनुषोंवाले और युद्ध में भीम तथा अर्जुन के समान शूरवीर, सात्यकि एवं विराट और महारथी राजा द्रुपद, धृष्टकेतु तथा चेकितान और बलवान् काशी का राजा, कुन्तिभोज-कुमार राजा पुरुजित्, और नरश्रेष्ठ शिबी देश का राजा; महापराक्रमी युधामन्यु तथा शक्तिशाली उत्तमौजा, सुभद्रापुत्र अभिमन्यु और द्रौपदी के पाँचों पुत्र—ये सभी महारथी हैं ।

**अस्माकं तु विशिष्टा ये तान्निबोध द्विजोत्तम ।**
**नायका मम सैन्यस्य संज्ञार्थं तान्ब्रवीमि ते ।।७।।**

"हे ब्राह्मणश्रेष्ठ ! हमारे पक्ष में जो प्रधान, मुख्य अथवा विशेष वीर पुरुष हैं, उन्हें भी जान लीजिए । आपके परिचय के लिए मैं अपनी सेना के जो-जो सेनापति हैं, उन्हें बताता हूँ ।

**भवान् भीष्मश्च कर्णश्च कृपश्च समितिंजयः ।**
**अश्वत्थामा विकर्णश्च सौमदत्तिस्तथैव च ।।८।।**
**अन्ये च बहवः शूरा मदर्थे त्यक्तजीविताः ।**
**नानाशस्त्रप्रहरणाः सर्वे युद्धविशारदाः ।।९।।**

"[मेरी सेना में] आप=द्रोणाचार्य और पितामह भीष्म, कर्ण और संग्रामविजेता कृपाचार्य और वैसे ही अश्वत्थामा, विकर्ण और सोमदत्त का पुत्र भूरिश्रवा तथा मेरे लिए अपने जीवन का बलिदान करनेवाले और भी बहुत-से शूरवीर हैं जो सभी अनेक प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित तथा सब-के-सब युद्ध में कुशल हैं ।

**अपर्याप्तं तदस्माकं बलं भीष्माभिरक्षितम् ।**
**पर्याप्तं त्विदमेतेषां बलं भीमाभिरक्षितम् ।।१०।।**

"भीष्म द्वारा रक्षित हमारी वह सेना असंख्य अतः सब प्रकार से अजेय है और भीम द्वारा रक्षित इन लोगों की यह सेना तो परिमित अतएव जीतने में सुगम है ।

**अयनेषु च सर्वेषु यथाभागमवस्थिताः ।**
**भीष्ममेवाभिरक्षन्तु भवन्तः सर्व एव हि ।।११।।**

"इसलिए सब मोर्चों पर अपने-अपने स्थान पर स्थित रहते हुए आप सभी लोग भीष्मपितामह की ही सब ओर से रक्षा करें ।"

**अथ व्यवस्थितान्दृष्ट्वा धार्तराष्ट्रान्कपिध्वजः ।**
**प्रवृत्ते शस्त्रसम्पाते धनुरुद्यम्य पाण्डवः ।।१२।।**
**हृषीकेशं तदा वाक्यमिदमाह महीपते ।**

अर्जुन उवाच

**सेनयोरुभयोर्मध्ये रथं स्थापय मेऽच्युत ।।१३।।**

हे पृथिवीनाथ ! तत्पश्चात् वानर की ध्वजा-वाले अर्जुन ने मोर्चा बाँधकर डटे हुए धृतराष्ट्र के पुत्रों और सम्बन्धियों को देखकर, शस्त्रों का चलना आरम्भ होने के समय, धनुष उठाकर श्रीकृष्ण से यह वचन कहा—

**अर्जुन बोला**—हे निश्चल कृष्ण ! आप मेरे रथ को दोनों सेनाओं के बीच में खड़ा कर दीजिए ।

**यावदेतान्निरीक्षेऽहं योद्धुकामानवस्थितान् ।**
**कैर्मया सह योद्धव्यमस्मिन् रणसमुद्यमे ।।१४।।**

और जबतक कि मैं रणभूमि में डटे हुए युद्ध के अभिलाषी इन विपक्षी योद्धाओं को भली-भाँति देख लूँ कि इस युद्ध के व्यापार में मुझे किन-किन के साथ लड़ना है, तबतक खड़ा रखिए ।

सञ्जय उवाच

**एवमुक्तो हृषीकेशो गुडाकेशेन भारत ।**
**सेनयोरुभयोर्मध्ये स्थापयित्वा रथोत्तमम् ।।१५।।**
**भीष्मद्रोणप्रमुखतः सर्वेषां च महीक्षिताम् ।**
**उवाच पार्थ पश्यैतान् समवेतान् कुरूनिति ।।१६।।**

**सञ्जय बोले**—हे धृतराष्ट्र ! निद्राविजयी अर्जुन के ऐसा कहने पर इन्द्रियों के विजेता श्रीकृष्ण ने

अर्जुन के रथ को दोनों सेनाओं के बीच में तथा भीष्म एवं द्रोणाचार्य तथा समस्त राजाओं के सामने खड़ा करके इस प्रकार कहा—"हे पार्थ! युद्ध के लिए जुटे हुए इन कौरवों को देखो।"

**तत्रापश्यत् स्थितान् पार्थः पितॄनथ पितामहान्।**
**आचार्यान्मातुलान्भ्रातॄन्पुत्रान्पौत्रान्सखींस्तथा ॥१७॥**
**श्वशुरान् सुहृदश्चैव सेनयोरुभयोरपि।**

तब वहाँ अर्जुन ने दोनों ही सेनाओं में स्थित चचा-ताउओं को, दादा-परदादाओं को, गुरुओं को, मामाओं को, भाइयों को, पुत्रों को, पौत्रों को तथा मित्रों को, ससुरों को और सुहृदों को देखा।

**तान्समीक्ष्य स कौन्तेयः सर्वान्बन्धूनवस्थितान् ॥१८॥**
**कृपया परयाऽऽविष्टो विषीदन्निदमब्रवीत्।**

वहाँ उपस्थित उन समस्त बन्धुओं को देखकर वह कुन्तीपुत्र अर्जुन अत्यन्त करुणा से युक्त होकर दुःखी होता हुआ यह वचन बोला—

अर्जुन उवाच

**दृष्ट्वेमं स्वजनं कृष्ण युयुत्सुं समुपस्थितम् ॥१९॥**
**सीदन्ति मम गात्राणि मुखं च परिशुष्यति।**
**वेपथुश्च शरीरे मे रोमहर्षश्च जायते ॥२०॥**

**अर्जुन बोले**—हे कृष्ण! रणभूमि में मोर्चे पर डटे हुए युद्ध की इच्छावाले अपने बन्धुवर्ग को देखकर मेरे अङ्ग शिथिल हुए जा रहे हैं तथा मुख सूखा जा रहा है और मेरे शरीर में कम्प एवं रोमाञ्च हो रहा है।

**गाण्डीवं स्रंसते हस्तात् त्वक् चैव परिदह्यते।**
**न च शक्नोम्यवस्थातुं भ्रमतीव च मे मनः ॥२१॥**

गाण्डीव धनुष मेरे हाथ से खिसका जा रहा है और त्वचा भी जल रही है। मेरा मन भ्रमित-सा हो रहा है, अतः मैं खड़ा रहने में भी समर्थ नहीं हूँ।

**निमित्तानि च पश्यामि विपरीतानि केशव।**
**न च श्रेयोऽनुपश्यामि हत्वा स्वजनमाहवे ॥२२॥**

हे केशव! मैं लक्षणों को भी विपरीत देख रहा हूँ, अतः युद्ध में अपने बन्धु-बान्धवों को मारकर मैं कल्याण नहीं देखता।

**न कांक्षे विजयं कृष्ण न च राज्यं सुखानि च।**
**किं नो राज्येन गोविन्द किं भोगैर्जीवितेन वा ॥२३॥**

हे कृष्ण! मुझे विजय, राज्य और सुख नहीं चाहिए। हे गोविन्द! हमें ऐसे [बन्धु-बान्धवों को मारकर प्राप्त होनेवाले] राज्य से क्या प्रयोजन है अथवा ऐसे भोगों और जीवन से भी क्या लाभ है?

**येषामर्थे काङ्क्षितं नो राज्यं भोगाः सुखानि च।**
**त इमेऽवस्थिता युद्धे प्राणाँस्त्यक्त्वा धनानि च ॥२४॥**

हमें जिनके लिए राज्य, भोग तथा सुखादि अभीष्ट है, वे ही ये सब लोग धन और जीवन की आशा को त्यागकर संग्राम में खड़े हैं।

**एतान्न हन्तुमिच्छामि घ्नतोऽपि मधुसूदन।**
**अपि त्रैलोक्यराजस्य हेतोः किं नु महीकृते ॥२५॥**

हे मधुसूदन! मुझे मारने पर भी अथवा तीनों लोकों के राज्य के लिए भी मैं इन सबको नहीं मारना चाहता, फिर पृथिवी के लिए तो कहना ही क्या है?

**अहो बत महत् पापं कर्तुं व्यवसिता वयम्।**
**यद्राज्यसुखलोभेन हन्तुं स्वजनमुद्यताः ॥२६॥**

हा! शोक! हम लोग बुद्धिमान् होकर भी महान् पाप करने लगे हैं जो कि राज्य और सुख के लोभ से अपने बन्धु-बान्धवों को मारने के लिए उद्यत हो गये हैं।

**यदि मामप्रतीकारमशस्त्रं शस्त्रपाणयः।**
**धार्तराष्ट्रा रणे हन्युस्तन्मे क्षेमतरं भवेत् ॥२७॥**

शस्त्र हाथ में लिये धृतराष्ट्र के पुत्र यदि मुझ शस्त्ररहित और सामना न करनेवाले को युद्ध में मार डालें तो मेरा वह मरण भी परम कल्याणकारक होगा।

संजय उवाच

**एवमुक्त्वार्जुनः संख्ये रथोपस्थ उपाविशत्।**
**विसृज्य सशरं चापं शोकसंविग्नमानसः ॥२८॥**

**संजय कहते हैं**—रणभूमि में शोक से खिन्न मन-वाला अर्जुन इस प्रकार कहकर, बाणसहित धनुष को छोड़कर रथ के पिछले भाग में बैठ गया।

**तं तथा कृपयाविष्टमश्रुपूर्णाकुलेक्षणम्।**
**विषीदन्तमिदं वाक्यमुवाच मधुसूदनः ॥२९॥**

इस प्रकार करुणा से आर्द्र तथा आँसुओं से पूर्ण एवं व्याकुल नेत्रोंवाले शोकयुक्त उस अर्जुन को मधुसूदन श्रीकृष्ण ये वचन कहने लगे—

कृष्ण उवाच

**कुतस्त्वा कश्मलमिदं विषमे समुपस्थितम् ।**
**अनार्यजुष्टमस्वर्ग्यमकीर्तिकरमर्जुन ॥३०॥**

**श्रीकृष्ण बोले**—हे अर्जुन ! तुझे इस असमय में यह मोह किस हेतु से प्राप्त हो गया ? तेरा यह व्यवहार न तो आर्यों=श्रेष्ठ पुरुषों द्वारा आचरित है, न स्वर्ग को देनेवाला है और न कीर्ति ही देनेवाला है ।

**क्लैब्यं मा स्म गमः पार्थ नैतत् त्वय्युपपद्यते ।**
**क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परन्तप ॥३१॥**

हे अर्जुन ! नपुंसकता को प्राप्त मत हो, यह तेरे लिए उचित नहीं है । हे शत्रुसंतापक ! हृदय की तुच्छ दुर्बलता को त्यागकर तू युद्ध के लिए खड़ा हो जा ।

अर्जुन उवाच

**कथं भीष्ममहं संख्ये द्रोणं च मधुसूदन ।**
**इषुभिः प्रतियोत्स्यामि पूजार्हावरिसूदन ॥३२॥**

**अर्जुन बोले**—हे मधुसूदन ! मैं युद्धक्षेत्र में पितामह भीष्म और द्रोणाचार्य के विरुद्ध बाणों से कैसे लड़ूँगा ? हे अरिसूदन ! वे दोनों ही पूजनीय हैं ।

**गुरूनहत्वा हि महानुभावान्**
**श्रेयो भोक्तुं भैक्ष्यमपीहि लोके ।**
**हत्वार्थकामाँस्तु गुरूनिहैव**
**भुञ्जीयभोगान्रुधिरप्रदिग्धान् ॥३३॥**

इन महानुभावों को न मारकर मैं इस संसार में भिक्षा का अन्न खा लेना अधिक कल्याणकारक समझता हूँ, क्योंकि गुरुओं को मारकर तो मैं इसी लोक में रक्त से सने हुए अर्थ और कामरूप भोगों को ही भोगूँगा ।

**न चैतद् विद्मः कतरन्नो गरीयो**
**यद् वा जयेम यदि वा नो जयेयुः ।**
**यानेव हत्वा न जिजीविषाम-**
**स्तेऽवस्थिताः प्रमुखे धार्तराष्ट्राः ॥३४॥**

हम यह भी नहीं जानते कि हमारे लिए युद्ध करना और न करना—इन दोनों में से कौन-सा कार्य श्रेष्ठ है अथवा हम यह भी नहीं जानते कि युद्ध में हम उन्हें जीतेंगे या वे हमें जीतेंगे और जिनको मारकर हम जीना भी नहीं चाहते, वे ही हमारे आत्मीय धृतराष्ट्र के पुत्र हमारे मुकाबले पर खड़े हैं ।

**कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः**
**पृच्छामि त्वां धर्मसम्मूढचेताः ।**
**यत् श्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे-**
**शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम् ॥३५॥**

कायरता के दोष से दबे हुए क्षात्रस्वभाववाला, कर्तव्य और अकर्तव्य के विषय में भ्रान्तचित्तवाला मैं आपसे पूछता हूँ कि जो साधन निश्चितरूप से कल्याणकारक हो, मुझे उसी का उपदेश दीजिए । मैं आपका शिष्य हूँ, आप अपनी [श्रीकृष्ण की] शरण में आये हुए मेरा उचित पथ-प्रदर्शन कीजिए ।

संजय उवाच

**एवमुक्त्वा हृषीकेशं गुडाकेशः परन्तप ।**
**न योत्स्य इति गोविन्दमुक्त्वा तूष्णीं बभूव ह ॥३६॥**

**संजय कहते हैं**—हे राजन् ! निद्रा को जीतनेवाला अर्जुन इन्द्रियों के स्वामी श्रीकृष्ण से "मैं युद्ध नहीं करूँगा"—ऐसा कहकर चुप हो गया ।

**तमुवाच हृषीकेशः प्रहसन्निव भारत ।**
**सेनयोरुभयोर्मध्ये विषीदन्तमिदं वचः ॥३७॥**

हे भरतवंशी धृतराष्ट्र ! योगेश्वर श्रीकृष्ण दोनों सेनाओं के बीच में शोक करते हुए उस अर्जुन को मुस्कराते हुए-से यह वचन बोले—

कृष्ण उवाच

**अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे ।**
**गतासूनगतासूंश्च नानुशोचन्ति पण्डिताः ॥३८॥**

**श्रीकृष्ण बोले**—हे अर्जुन ! तू शोक न करने योग्य मनुष्यों के लिए शोक करता है और पण्डितों के-से वचन बोलता है, परन्तु विद्वान् लोग जिनके प्राण चले गये हैं उनके लिए और जिनके प्राण नहीं गये हैं, उनके लिए भी शोक नहीं करते ।

**न त्वेवाहं जातु नासं न त्वं नेमे जनाधिपाः ।**
**न चैव न भविष्यामः सर्वे वयमतः परम् ॥३९॥**

न तो ऐसा ही है कि मैं किसी काल में नहीं था, अथवा तू नहीं था, या ये राजा लोग नहीं थे और न ऐसा ही है कि हम सब इसके पश्चात् नहीं रहेंगे ।

देहिनोऽस्मिन् यथा देहे कौमारं यौवनं जरा ।
तथा देहान्तरप्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यति ॥४०॥

जैसे आत्मा के इस शरीर में कुमार, युवा और वृद्धावस्था होती है, वैसे ही एक शरीर को छोड़कर दूसरे शरीर की प्राप्ति होती है, अतः बुद्धिमान् मनुष्य इस विषय में मोह नहीं करता ।

मात्रास्पर्शास्तु कौन्तेय शीतोष्णसुखदुःखदाः ।
आगमापायिनोऽनित्यास्ताँस्तितिक्षस्व भारत ॥४१॥

हे कुन्तीपुत्र ! सरदी-गरमी और सुख-दुःख को देनेवाले इन्द्रिय और विषयों के संयोग तो उत्पत्ति-विनाशशील तथा अनित्य हैं, अतः हे भारत ! तू उनको सहन कर ।

यं हि न व्यथयन्त्येते पुरुषं पुरुषर्षभ ।
समदुःखसुखं धीरं सोऽमृतत्वाय कल्पते ॥४२॥

हे पुरुषश्रेष्ठ ! सुख और दुःख को समान समझने-वाले जिस धीरपुरुष को ये इन्द्रिय और विषयों के संयोग व्याकुल नहीं करते, वह मोक्ष का अधिकारी होता है ।

नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः ।
उभयोरपि दृष्टोन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः ॥४३॥

जो नहीं है उसकी उत्पत्ति नहीं होती और जो है उसका नाश कभी नहीं होता । इस प्रकार तत्त्व-ज्ञानियों ने इन दोनों का ही तत्त्व देखा है ।

अविनाशि तु तद्विद्धि येन सर्वमिदं ततम् ।
विनाशमव्ययस्यास्य न कश्चित्कर्तुमर्हति ॥४४॥

जिसने इस सारे संसार का विस्तार=निर्माण किया है, जिससे सम्पूर्ण जगत् व्याप्त है तू उस परमेश्वर को नाशरहित जान । इस अविनाशी का विनाश करने में कोई भी समर्थ नहीं है ।

अन्तवन्त इमे देहा नित्यस्योक्ताः शरीरिणः ।
अनाशिनोऽप्रमेयस्य तस्माद् युध्यस्व भारत ॥४५॥

नष्ट न होनेवाले, अप्रमेय=इन्द्रियों के ज्ञान से परे नित्यस्वरूप जीवात्मा के ये सब शरीर नाशवान् कहे गये हैं । शरीर नाशवान् है और आत्मा अमर है, अतः हे अर्जुन ! तू खड़ा हो जा और युद्ध कर ।

न जायते म्रियते वा कदाचि-
न्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः ।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो
न हन्यते हन्यमाने शरीरे ॥४६॥

यह आत्मा किसी भी काल में न तो जन्म लेता है और न मरता ही है । ऐसी बात भी नहीं है कि यह आत्मा न होकर फिर होगा । यह आत्मा अजन्मा, नित्य, स्थिर और अनादि, शाश्वत एवं पुरातन है, शरीर के नष्ट हो जाने पर भी इसका नाश नहीं होता ।

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय
नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि ।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णा-
न्यन्यानि संयाति नवानि देही ॥४७॥

जैसे मनुष्य पुराने वस्त्रों को उतारकर दूसरे नवीन वस्त्रों को धारण करता है, वैसे ही जीवात्मा पुराने शरीरों को छोड़कर दूसरे नये शरीरों में प्रवेश करता है ।

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः ।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः ॥४८॥

इस आत्मा को शस्त्र काट नहीं सकते, अग्नि इसे जला नहीं सकता, जल इसे गीला नहीं कर सकता तथा वायु इसे सुखा नहीं सकता । [अतः तुझे शोक करने की आवश्यकता नहीं, और यदि तू इसे मरणधर्मा मान ले तो भी चिन्ता की कोई बात नहीं ।]

जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च ।
तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि ॥४९॥

क्योंकि जन्म लेनेवाले की मृत्यु निश्चित है तथा मरे हुए का जन्म भी निश्चित है, अतः बिना उपाय-वाले [न टलनेवाले] विषय में तुझे शोक करना उचित नहीं है ।

देही नित्यमवध्योऽयं देहे सर्वस्य भारत ।
तस्मात्सर्वाणि भूतानि न त्वं शोचितुमर्हसि ॥५०॥

हे अर्जुन ! यह आत्मा सबके शरीरों में सदा ही अवध्य है, अतः तुझे सब प्राणियों के लिए शोक नहीं करना चाहिए ।

स्वधर्ममपि चावेक्ष्य न विकम्पितुमर्हसि ।
धर्म्याद्धि युद्धाच्छ्रेयोऽन्यत् क्षत्रियस्य न विद्यते ॥५१॥

अपने क्षात्रधर्म का चिन्तन करके भी तुझे भयभीत नहीं होना चाहिए, क्योंकि क्षत्रिय के लिए धर्म-युद्ध से बढ़कर दूसरा कोई कल्याणकारक कर्त्तव्य नहीं है।

**यदृच्छया चोपपन्नं स्वर्गद्वारमपावृतम्।**
**सुखिनः क्षत्रियाः पार्थ लभन्ते युद्धमीदृशम् ॥५२॥**

हे पार्थ ! अपने-आप प्राप्त हुए तथा खुले हुए स्वर्ग के द्वाररूप इस प्रकार के युद्ध को भाग्यवान् क्षत्रिय लोग ही पाते हैं।

**अथ चेत्त्वमिमं धर्म्यं संग्रामं न करिष्यसि।**
**ततः स्वधर्मं कीर्तिं च हित्वा पापमवाप्स्यसि ॥५३॥**

अब यदि तू इस धर्मयुक्त युद्ध को नहीं करेगा तो अपने क्षात्रधर्म और यश को खोकर पाप को ही प्राप्त होगा।

**भयाद् रणादुपरतं मंस्यन्ते त्वां महारथाः।**
**येषां च त्वं बहुमतो भूत्वा यास्यसि लाघवम् ॥५४॥**

जिनकी दृष्टि में तू बहुत बड़ा और सम्मानित था अब उन्हीं की दृष्टि में तुच्छता को प्राप्त हो जाएगा, वे महारथी लोग तुझे भय के कारण युद्ध से हटा हुआ मानेंगे।

**हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम्।**
**तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृतनिश्चयः ॥५५॥**

यदि तू युद्ध में मारा गया तो तुझे स्वर्ग की प्राप्ति होगी और यदि जीत गया तो पृथिवी का राज्य भोगने को मिलेगा, अतः अर्जुन ! तू युद्ध के लिए निश्चय करके खड़ा हो जा।

**सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ।**
**ततो युद्धाय युज्यस्व नैवं पापमवाप्स्यसि ॥५६॥**

सुख-दुःख, लाभ-अलाभ तथा जय और अजय को समान समझकर तू युद्ध के लिए तैयार हो जा, इस प्रकार तू पाप का भागी नहीं बनेगा।

**कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।**
**मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि ॥५७॥**

तेरा कर्म करने में ही अधिकार है, उसके फलों में कदापि नहीं, अतः तू कर्मों के फल का हेतु मत बन, फल-प्राप्ति के लिए कर्म मत कर और तेरी कर्म न करने में भी आसक्ति न हो अर्थात् कर्मरहित, कर्मशून्य भी मत बन।

**कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः।**
**लोकसंग्रहमेवापि सम्पश्यन् कर्तुमर्हसि ॥५८॥**

जनक आदि ज्ञानीजन भी आसक्तिरहित कर्म द्वारा ही परमसिद्धि को प्राप्त हुए थे इसीलिए तथा लोक-संग्रह[लोगों को साथ लेने] को दृष्टि में रखते हुए भी तुझे कर्म करना ही उचित है।

**यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।**
**स यत् प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते ॥५९॥**

श्रेष्ठपुरुष जो-जो आचरण करता है, दूसरे मनुष्य भी वैसा-वैसा ही आचरण करते हैं। वह जो कुछ प्रमाण कर देता है, समस्त मनुष्य-समुदाय भी उसी के अनुसार बर्तने [व्यवहार करने] लग जाता है।

**न मे पार्थास्ति कर्तव्यं त्रिषु लोकेषु किंचन।**
**नानवाप्तमवाप्तव्यं वर्त एव च कर्मणि ॥६०॥**

हे अर्जुन ! मुझे तीनों लोकों में न तो कोई कर्त्तव्य कर्म करना शेष है और न कोई भी प्राप्त करने योग्य वस्तु अप्राप्त है, फिर भी मैं निरन्तर कर्म में ही लगा रहता हूँ।

**सक्ताः कर्मण्यविद्वांसो यथा कुर्वन्ति भारत।**
**कुर्याद्विद्वांस्तथासक्तश्चिकीर्षुर्लोकसंग्रहम् ॥६१॥**

हे अर्जुन ! जैसे कर्म में आसक्त हुए अज्ञानी लोग कर्म करते हैं, वैसे ही ज्ञानी मनुष्य भी अनासक्त होकर लोक-संग्रह की इच्छा से कर्म करे।

**तस्मादज्ञानसम्भूतं हृत्स्थं ज्ञानासिनाऽऽत्मनः।**
**छित्त्वैनं संशयं योगमातिष्ठोत्तिष्ठ भारत ॥६२॥**

अतः हे भरतवंशी अर्जुन ! तू हृदय में स्थित इस अज्ञानजनित अपने संशय को विवेक-[ज्ञान] रूपी तलवार के द्वारा काटकर, छिन्न-भिन्न करके समत्वरूप कर्मयोग का आश्रय लेकर युद्ध के लिए खड़ा हो जा।

**ऋतेऽपि त्वां न भविष्यन्ति सर्वे**
**येऽवस्थिताः प्रत्यनीकेषु योधाः।**
**तस्मात् त्वमुत्तिष्ठ यशो लभस्व**
**जित्वा शत्रून् भुङ्क्ष्व राज्यं समृद्धम् ॥६३॥**

प्रतिपक्षी सेना में जो योद्धा लोग खड़े हैं, वे सब

तेरे बिना भी नहीं रहेंगे अर्थात् तेरे युद्ध न करने पर भी इन सब का नाश हो जाएगा, अतः तू उठ और शत्रुओं को जीतकर यश प्राप्त कर तथा धन-धान्य से सम्पन्न राज्य को भोग।

**यदहंकारमाश्रित्य न योत्स्य इति मन्यसे।**
**मिथ्यैष व्यवसायस्ते प्रकृतिस्त्वां नियोक्ष्यति ॥६४॥**

जो तू अहंकार का आश्रय लेकर यह मान रहा है कि—"मैं युद्ध नहीं करूँगा"—तेरा यह व्यापार निश्चय ही झूठा है, क्योंकि तेरा क्षत्रियपन का स्वभाव तुझे जबरदस्ती युद्ध में लगा देगा।

**ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।**
**भ्रामयन्सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया ॥६५॥**

क्योंकि हे अर्जुन! शरीररूपी यन्त्र पर आरूढ़ हुए सम्पूर्ण प्राणियों को अन्तर्यामी परमेश्वर अपनी माया=शक्ति से उनके कर्मों के अनुसार भ्रमण कराता हुआ सब प्राणियों के हृदय में स्थित है।

**तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत।**
**तत्प्रसादात्परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम् ॥६६**

हे अर्जुन! तू सब प्रकार से उसी परमेश्वर की शरण में जा, पूर्णरूपेण आत्मसमर्पण कर दे। उसी परमेश्वर की कृपा से तू परमशान्ति को तथा परान्त-काल तक मोक्षपद को प्राप्त करेगा।

**इति ते ज्ञानमाख्यातं गुह्याद्गुह्यतरं मया।**
**विमृश्यैतदशेषेण यथेच्छसि तथा कुरु ॥६७॥**

मैंने तुझे यह गूढ़-से-गूढ़ [अत्यन्त रहस्यमय] ज्ञान बतला दिया। अब तू इस रहस्यमय ज्ञान पर पूर्णरूप से विचार-विमर्श करके जैसा चाहता है, वैसा कर।

**कच्चिदेतत् श्रुतं पार्थ त्वयैकाग्रेण चेतसा।**
**कच्चिदज्ञानसम्मोहः प्रनष्टस्ते धनञ्जय ॥६८॥**

हे पार्थ! क्या इस उपदेश, ज्ञान को तूने एकाग्र-चित्त से श्रवण किया? हे धनञ्जय! क्या तेरा अज्ञान से उत्पन्न हुआ मोह नष्ट हुआ?

अर्जुन उवाच

**नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा त्वत्प्रसादान्मयाच्युत।**
**स्थितोऽस्मि गतसन्देहः करिष्ये वचनं तव ॥६९॥**

**अर्जुन बोले**—हे अच्युत! आपकी कृपा से मेरा मोह नष्ट हो गया, मेरी भ्रान्ति दूर हो गई। मुझे अपने क्षात्रधर्म का स्मरण हो गया। अब मैं संशय-रहित होकर स्थित हूँ, अतः आपकी आज्ञा का पालन करूँगा।

सञ्जय उवाच

**यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः।**
**तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम ॥७०॥**

**सञ्जय कहते हैं**—हे राजन्! जहाँ योगेश्वर श्रीकृष्ण हैं और जहाँ गाण्डीवधारी अर्जुन हैं [जहाँ ब्रह्म और क्षात्रशक्ति दोनों का मेल है] वहीं पर श्री, विजय, विभूति और अचल नीति है—ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है।

**इति महाभारते भीष्मपर्वणि तृतीयोऽध्यायः ॥३॥**

# चतुर्थोऽध्यायः

## युधिष्ठिर का भीष्म-द्रोण आदि से अनुमति लेकर युद्ध के लिए तैयार होना

सञ्जय उवाच

**ततो धनञ्जयं दृष्ट्वा बाणगाण्डीवधारिणम्।**
**पुनरेव महानादं व्यसृजन्त महारथाः ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! तत्पश्चात् अर्जुन को गाण्डीव धनुष और बाण धारण किये देख पाण्डव महारथियों ने पुनः बड़े जोर से सिंहनाद किया।

**ततो युधिष्ठिरो दृष्ट्वा युद्धाय समवस्थिते।**
**ते सेने सागरप्रख्ये मुहुः प्रचलिते नृप ॥२॥**
**विमुच्य कवचं वीरो निक्षिप्य च वरायुधम्।**
**अवरुह्य रथात् क्षिप्रं पद्भ्यामेव कृताञ्जलिः ॥३॥**
**पितामहमभिप्रेक्ष्य धर्मराजो युधिष्ठिरः।**
**वाग्यतः प्रययौ येन प्राङ्मुखो रिपुवाहिनीम् ॥४॥**

राजन्! तदनन्तर महावीर राजा युधिष्ठिर समुद्र के समान उन दोनों सेनाओं को युद्ध के लिए

उपस्थित और चञ्चल हुई देख अपना कवच खोल और उत्तम अस्त्र-शस्त्रों को नीचे डालकर रथ से उतर पड़े और हाथ जोड़े हुए पैदल ही पितामह भीष्म को लक्ष्य करके चल दिये। धर्मराज युधिष्ठिर मौन एवं पूर्वाभिमुख हो शत्रुसेना की ओर चले।

**तं प्रयान्तमभिप्रेक्ष्य कुन्तीपुत्रो धनञ्जयः।**
**अवतीर्य रथात् तूर्णं भ्रातृभिः सहितोऽन्वयात् ॥५॥**

कुन्तीपुत्र धनञ्जय उन्हें शत्रुसेना की ओर जाते देख तुरन्त रथ से उतर पड़े और अपने भाइयोंसहित उनके पीछे-पीछे चल पड़े।

अर्जुन उवाच

**किं ते व्यवसितं राजन् यदस्मानपहाय वै।**
**पद्भ्यामेव प्रयातोऽसि प्राङ्मुखो रिपुवाहिनीम् ॥६॥**

**अर्जुन ने पूछा**—राजन्! आपने क्या निश्चय किया है कि हम लोगों को छोड़कर आप पूर्वाभिमुख हो पैदल ही शत्रुसेना की ओर जा रहे हैं?

भीमसेन उवाच

**क्व गमिष्यसि राजेन्द्र निक्षिप्तकवचायुधः।**
**दंशितेष्वरिसैन्येषु भ्रातॄनुत्सृज्य पार्थिव ॥७॥**

**भीम ने पूछा**—महाराज! पृथिवीपते! कवच और हथियार नीचे डालकर तथा भाइयों को छोड़कर कवच आदि से सुसज्जित हुई शत्रुसेना में आप कहाँ जाएँगे?

सञ्जय उवाच

**एवमाभाष्यमाणोऽपि भ्रातृभिः कुरुनन्दनः।**
**नोवाच वाग्यतः किञ्चिद् गच्छत्येव युधिष्ठिरः ॥८॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! भाइयों के इस प्रकार कहने पर भी कुरुकुल को आनन्दित करनेवाले राजा युधिष्ठिर उनसे कुछ नहीं बोले, चलते ही गये।

**तानुवाच महाप्राज्ञो वासुदेवो महामनाः।**
**अभिप्रायोऽस्य विज्ञातो मयेति प्रहसन्निव ॥९॥**

तब परम बुद्धिमान् महामना श्रीकृष्ण ने उन चारों भाइयों से हँसते हुए-से कहा—"इनका अभिप्राय मुझे ज्ञात हो गया है।

**एष भीष्मं तथा द्रोणं गौतमं शल्यमेव च।**
**अनुमान्य गुरून् सर्वान् योत्स्यते पार्थिवोऽरिभिः ॥१०॥**

"ये राजा युधिष्ठिर भीष्म, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य और शल्य—इन सभी गुरुजनों से आज्ञा लेकर शत्रुओं के साथ युद्ध करेंगे।

**अनुमान्य यथाशास्त्रं यस्तु युध्येन्महत्तरैः।**
**ध्रुवस्तस्य जयो युद्धे भवेदिति मतिर्मम ॥११॥**

"जो शास्त्र की आज्ञा के अनुसार माननीय महानुभावों से आज्ञा लेकर युद्ध करता है, उसकी युद्ध में अवश्य विजय होती है, ऐसा मेरा विश्वास है।"

**एवं ब्रुवति कृष्णोऽत्र धार्तराष्ट्रचमूं प्रति।**
**हाहाकारो महानासीन्निःशब्दास्त्वपरेऽभवन् ॥१२॥**

जिस समय श्रीकृष्णजी ये बातें कह रहे थे और युधिष्ठिर दुर्योधन की सेना की ओर बढ़ रहे थे, उस समय कहीं महान् हाहाकार हो रहा था और कहीं सर्वत्र सन्नाटा छाया हुआ था, कोई कुछ नहीं बोल रहा था।

**दृष्ट्वा युधिष्ठिरं दूराद् धार्तराष्ट्रस्य सैनिकाः।**
**मिथः संकथयाञ्चक्रुरेषो हि कुलपांसनः ॥१३॥**

युधिष्ठिर को दूर से ही देखकर दुर्योधन के सैनिक परस्पर इस प्रकार बातें करने लगे—"यह युधिष्ठिर तो अपने कुल का जीता-जागता कलंक ही है।

**व्यक्तं भीत इवाभ्येति राजासौ भीष्ममन्तिकम्।**
**युधिष्ठिरः ससोदर्यः शरणार्थं प्रयाचकः ॥१४॥**

"देखो, स्पष्ट ही दिखाई दे रहा है कि राजा युधिष्ठिर भयभीत की भाँति भाइयोंसहित भीष्मजी के पास शरण माँगने के लिए आ रहा है।"

**सोऽवगाह्य चमूं शत्रोः शरशक्तिसमाकुलाम्।**
**भीष्ममेवाभ्ययात् तूर्णं भ्रातृभिः परिवारितः ॥१५॥**

उधर इस प्रकार की बातें हो रही थीं, इधर भाइयों से घिरे हुए युधिष्ठिर बाण और शक्तियों से युक्त शत्रु की सेना में घुसकर शीघ्र ही भीष्मजी के पास जा पहुँचे।

**तमुवाच ततः पादौ कराभ्यां पीड्य पाण्डवः।**
**भीष्मं शान्तनवं राजा युद्धाय समुपस्थितम् ॥१६॥**

वहाँ पहुँचकर पाण्डुनन्दन राजा युधिष्ठिर ने अपने दोनों हाथों से पितामह के चरणों को दबाया और युद्ध के लिए उपस्थित हुए उन शान्तनुनन्दन भीष्मजी से इस प्रकार कहा—

युधिष्ठिर उवाच

**आमन्त्रये त्वां दुर्धर्ष त्वया योत्स्यामहे सह ।**
**अनुजानीहि मां तात आशिषश्च प्रयोजय ।।१७।।**

**युधिष्ठिर बोले**—दुर्धर्ष वीर पितामह ! हमें आपके साथ युद्ध करना है, अतः मैं आपसे अनुमति चाहता हूँ । तात ! मुझे युद्ध के लिए आज्ञा और विजय के लिए आशीर्वाद प्रदान कीजिए ।

भीष्म उवाच

**यद्येवं नाभिगच्छेथा युधि मां पृथिवीपते ।**
**शपेयं त्वां महाराज पराभवाय भारत ।।१८।।**

**भीष्मजी बोले**—पृथिवीपते ! भरतकुलभूषण ! महाराज ! यदि इस युद्ध के समय तुम इस प्रकार मेरे पास नहीं आते तो मैं तुम्हें पराजित होने के लिए शाप दे देता ।

**प्रीतोऽहं पुत्र युध्यस्व जयमाप्नुहि पाण्डव ।**
**यत् तेऽभिलषितं चान्यत् तदवाप्नुहि संयुगे ।।१९।।**

पाण्डुनन्दन ! पुत्र ! मैं प्रसन्न हूँ तथा तुम्हें आज्ञा देता हूँ । तुम युद्ध करो और विजय पाओ । इसके सिवा और भी जो तुम्हारी अभिलाषा हो, वह भी इस युद्धभूमि में प्राप्त करो ।

**व्रियतां च वरः पार्थ किमस्मत्तोऽभिकाङ्क्षसि ।**
**एवं गते महाराज न तवास्ति पराजयः ।।२०।।**

हे पार्थ ! तुम वर माँगो । तुम मुझसे क्या चाहते हो ? महाराज ! ऐसी स्थिति में तुम्हारी पराजय नहीं होगी ।

**अर्थस्य पुरुषो दासो दासस्त्वर्थो न कस्यचित् ।**
**इति सत्यं महाराज बद्धोऽस्म्यर्थेन कौरवैः ।।२१।।**

महाराज ! पुरुष अर्थ का दास है, परन्तु अर्थ किसी का दास नहीं है । यह सच्ची बात है । मैं कौरवों के द्वारा अर्थ से बँधा हुआ हूँ ।

**अतस्त्वां क्लीबवद् वाक्यं ब्रवीमि कुरुनन्दन ।**
**भृतोऽस्म्यर्थेन कौरव्य युद्धादन्यत् किमिच्छसि ।।२२।।**

कुरुनन्दन ! आज मैं तुम्हारे सामने नपुंसक के समान वचन बोलता हूँ । कौरव ! धृतराष्ट्र के पुत्रों ने धन के द्वारा मेरा भरण-पोषण किया है, अतः [तुम्हारे पक्ष में होकर] उनके साथ युद्ध करने के सिवा तुम क्या चाहते हो, यह बताओ ।

युधिष्ठिर उवाच

**मन्त्रयस्व महाबाहो हितैषी मम नित्यशः ।**
**युध्यस्व कौरवस्यार्थे ममैष सततं वरः ।।२३।।**

**युधिष्ठिर ने कहा**—महाबाहो ! आप सदा मेरा हित चाहते हुए मुझे उचित परामर्श दें और दुर्योधन के लिए युद्ध करें । मैं सदा के लिए यही वर चाहता हूँ ।

भीष्म उवाच

**राजन् किमत्र साह्यं ते करोमि कुरुनन्दन ।**
**कामं योत्स्ये परस्यार्थे ब्रूहि यत्ते विवक्षितम् ।।२४।।**

**भीष्म बोले**—राजन् ! कुरुनन्दन ! मैं तुम्हारी क्या सहायता करूँ ? युद्ध तो मैं इच्छानुसार तुम्हारे शत्रु की ओर से ही करूँगा, अतः बताओ तुम क्या कहना चाहते हो ?

युधिष्ठिर उवाच

**कथं जयेयं संग्रामे भवन्तमपराजितम् ।**
**एतन्मे मन्त्रय हितं यदि श्रेयः प्रपश्यसि ।।२५।।**

**युधिष्ठिर ने कहा**—पितामह ! आप अजेय हैं, फिर मैं आपको युद्ध में कैसे जीत सकूँगा ? यदि आप मेरा कल्याण देखते और सोचते हों तो मेरे हित का परामर्श दीजिए ।

भीष्म उवाच

**नैनं पश्यामि कौन्तेय यो मां युध्यन्तमाहवे ।**
**विजयेत पुमान् कश्चित् साक्षादपि शतक्रतुः ।।२६।।**

**भीष्म बोले**—कुन्तीनन्दन ! मैं ऐसे किसी वीर को नहीं देखता, जो युद्धभूमि में युद्ध करते समय मुझे पराजित कर सके, चाहे वह साक्षात् इन्द्र ही क्यों न हो ?

युधिष्ठिर उवाच

**हन्त पृच्छामि तस्मात्त्वां पितामह नमोऽस्तु ते ।**
**वधोपायं ब्रवीहि त्वमात्मनः समरे परैः ।।२७।।**

**युधिष्ठिर ने कहा**—पितामह ! आपको नमस्कार है । आप अजेय हैं, अतः मैं आपसे पूछता हूँ, आप संग्राम में शत्रुओं द्वारा मारे जाने का उपाय बताइए ।

भीष्म उवाच

**न स्म तं तात पश्यामि समरे यो जयेत माम् ।**
**न तावन्मृत्युकालो मे पुनरागमनं कुरु ।।२८।।**

**भीष्म बोले**—वत्स ! मैं ऐसे किसी वीर को नहीं देखता हूँ जो युद्धभूमि में मुझे जीत ले और अभी मेरी मृत्यु का समय भी नहीं आया है, अतः अपने इस प्रश्न का उत्तर लेने के लिए फिर किसी समय आना।

संजय उवाच

**ततो युधिष्ठिरो वाक्यं भीष्मस्य कुरुनन्दन।**
**शिरसा प्रतिजग्राह भूयस्तमभिवाद्य च ॥२९॥**
**प्रायात् पुनर्महाबाहुराचार्यस्य रथं प्रति।**
**पश्यतां सर्वसैन्यानां मध्येन भ्रातृभिः सह ॥३०॥**
**स द्रोणमभिवाद्याथ कृत्वा चाभिप्रदक्षिणम्।**
**उवाच राजा दुर्धर्षमात्मनिःश्रेयसं वचः ॥३१॥**

**संजय कहते हैं**—कुरुनन्दन ! तत्पश्चात् महाबाहु युधिष्ठिर ने भीष्म की आज्ञा को शिरोधार्य किया तथा उन्हें प्रणाम करके वे द्रोणाचार्य के रथ की ओर गये। सारी सेना के देखते हुए वे उसके बीच से निकलकर भाइयों सहित द्रोणाचार्य के पास जा पहुँचे। वहाँ राजा युधिष्ठिर ने उन्हें प्रणाम करके उनकी प्रदक्षिणा की और उन दुर्जय वीर-शिरोमणि से अपने हित की बात पूछी—

**आमन्त्रये त्वां भगवन् योत्स्ये विगतकल्मषः।**
**कथं जयेयं रिपून् सर्वाननुज्ञातस्त्वया द्विज ॥३२॥**

"भगवन् ! मैं आपसे सम्मति चाहता हूँ कि मैं किस प्रकार आपके साथ निरपराध तथा पापरहित होकर युद्ध करूँ। विप्रवर ! आपकी आज्ञा से मैं किस प्रकार समस्त शत्रुओं को जीतूँ ?"

द्रोण उवाच

**यदि मां नाभिगच्छेथा युद्धाय कृतनिश्चयः।**
**शपेयं त्वां महाराज पराभवाय सर्वशः ॥३३॥**

**द्रोणाचार्य ने कहा**—महाराज ! यदि युद्ध का निश्चय करने के पश्चात् तुम मुझसे आज्ञा माँगने के लिए नहीं आते तो मैं तुम्हारी सर्वथा पराजय होने के लिए तुम्हें शाप दे देता।

**तद् युधिष्ठिर तुष्टोऽस्मि पूजितश्च त्वयानघ।**
**अनुजानामि युध्यस्व विजयं समवाप्नुहि ॥३४॥**

निष्पाप युधिष्ठिर ! मैं तुमपर प्रसन्न हूँ। मैं तुम्हारे द्वारा सत्कृत हो गया। मैं तुम्हें आज्ञा देता हूँ, तुम शत्रुओं से लड़ो और विजय प्राप्त करो।

**करवाणि च ते कामं ब्रूहि त्वमभिकांक्षितम्।**
**एवं गते महाराज युद्धादन्यत् किमिच्छसि ॥३५॥**

महाराज ! तुम्हारा अभीष्ट मनोरथ क्या है ? मैं तुम्हारी कामना पूर्ण करूँगा। वर्तमान स्थिति में मैं तुम्हारी ओर से युद्ध तो कर नहीं सकता, उसे छोड़कर तुम क्या चाहते हो ?

**अर्थस्य पुरुषो दासो दासस्त्वर्थो न कस्यचित्।**
**इति सत्यं महाराज बद्धोऽस्म्यर्थेन कौरवैः ॥३६॥**

मनुष्य अर्थ का दास है। अर्थ किसी का दास नहीं है। महाराज ! यह सच्ची बात है। मैं कौरवों के द्वारा अर्थ से बँधा हुआ हूँ।

**ब्रवीम्येतत् क्लीबवत् त्वां युद्धादन्यत् किमिच्छसि।**
**योत्स्येऽहं कौरवस्यार्थे तवाशास्यो जयो मया ॥३७**

मैं यह बात नपुंसक की भाँति तुमसे पूछता हूँ कि तुम युद्ध के सिवा मुझसे क्या चाहते हो ? मैं युद्ध तो दुर्योधन के लिए करूँगा, परन्तु विजय तुम्हारी ही चाहूँगा।

युधिष्ठिर उवाच

**जयमाशास्व मे ब्रह्मन् मन्त्रयस्व च मद्धितम्।**
**युद्धचस्व कौरवस्यार्थे वर एष वृतो मया ॥३८॥**

**युधिष्ठिर ने कहा**—ब्रह्मन् ! आप दुर्योधन की ओर से ही युद्ध करें परन्तु आप मेरी विजय चाहें तथा मेरे हित का परामर्श देते रहें, मैं आपसे यही वर माँगता हूँ।

द्रोण उवाच

**ध्रुवस्ते विजयो राजन् यस्य मन्त्री हरिस्तव।**
**अहं त्वामभिजानामि रणे शत्रून् विमोक्ष्यसे ॥३९॥**

**द्रोणाचार्य बोले**—राजन् ! तुम्हारी विजय निश्चित है, क्योंकि श्रीकृष्ण तुम्हारे मन्त्री हैं। मैं तुम्हें आज्ञा देता हूँ। तुम युद्ध में शत्रुओं को उनके प्राणों से मुक्त कर दोगे।

**यतो धर्मस्ततः कृष्णो यतः कृष्णस्ततो जयः।**
**युद्धचस्व गच्छ कौन्तेय पृच्छ मां किं ब्रवीमि ते ॥४०॥**

जहाँ धर्म है, वहाँ कृष्ण हैं और जहाँ श्रीकृष्ण हैं, वहीं विजय है। कुन्तीकुमार ! जाओ, युद्ध करो। और कुछ पूछना हो तो पूछो, तुम्हें क्या बताऊँ ?

युधिष्ठिर उवाच

**पृच्छामि त्वां द्विजश्रेष्ठ शृणु यन्मेऽभिकांक्षितम् ।**
**कथं जयेयं संग्रामे भवन्तमपराजितम् ।।४१।।**

**युधिष्ठिर ने पूछा**—द्विजश्रेष्ठ ! मैं आपसे जो पूछता हूँ मेरे उस मनोवाञ्छित प्रश्न को सुनिए । आप अजेय हैं, फिर आपको मैं युद्ध में कैसे जीत सकूँगा ?

**हन्त तस्मान्महाबाहो वधोपायं वदात्मनः ।**
**आचार्य प्रणिपत्यैष पृच्छामि त्वां नमोऽस्तु ते ।।४२।।**

महाबाहो ! आचार्य ! आप अजेय हैं, अतः अपने वध का उपाय मुझे बताइए । आपको नमस्कार है । मैं आपके चरणों में प्रणाम करके यह प्रश्न पूछ रहा हूँ ।

द्रोण उवाच

**न शत्रुं तात पश्यामि यो मां हन्याद् रथे स्थितम् ।**
**युध्यमानं सुसंरब्धं शरवर्षौघवर्षिणम् ।।४३।।**

**द्रोणाचार्य बोले**—तात ! जब मैं रथ पर बैठकर क्रुद्ध हो बाणों की वर्षा करते हुए युद्ध में संलग्न रहूँ, उस समय जो मुझे मार सके, ऐसे किसी शत्रु को मैं नहीं देखता हूँ ।

**ऋते प्रायगतं राजन् न्यस्तशस्त्रमचेतनम् ।**
**हन्यान्मां युधि योधानां सत्यमेतद् ब्रवीमि ते ।।४४।।**

राजन् ! जब मैं हथियार डालकर तथा अचेत-सा होकर आमरण अनशन के लिए बैठ जाऊँ, उस दशा को छोड़कर और किसी समय कोई मुझे नहीं मार सकता । उसी दशा में कोई श्रेष्ठ योद्धा मुझे युद्ध में मार सकता है, मैं तुमसे यह सच्ची बात कह रहा हूँ ।

**शस्त्रं चाहं रणे जह्यां श्रुत्वा तु महदप्रियम् ।**
**श्रद्धेयवाक्यात् पुरुषादेतत् सत्यं ब्रवीमि ते ।।४५।।**

यदि मैं किसी विश्वसनीय पुरुष से युद्धभूमि में कोई अत्यन्त अप्रिय समाचार सुन लूँ तो हथियार नीचे डाल दूँगा यह भी सच्ची बात कह रहा हूँ ।

सञ्जय उवाच

**एतत् श्रुत्वा महाराज भारद्वाजस्य धीमतः ।**
**अनुमान्य तमाचार्यं प्रायाच्छारद्वतं प्रति ।।४६।।**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज ! परम बुद्धिमान् द्रोणाचार्य की यह बात सुनकर और उनका आदर-सम्मान करके राजा युधिष्ठिर कृपाचार्य के पास गये ।

**सोऽभिवाद्य कृपं राजा कृत्वा चापि प्रदक्षिणम् ।**
**उवाच दुर्धर्षतमं वाक्यं वाक्यविदां वरः ।।४७।।**

उन्हें नमस्कार करके तथा उनकी प्रदक्षिणा करने के पश्चात् वक्ताओं में श्रेष्ठ राजा युधिष्ठिर ने दुर्धर्ष वीर कृपाचार्य से कहा—

**आज्ञप्तस्त्वामहं योत्स्ये गुरो विगतकल्मषः ।**
**जयेयं च रिपून् सर्वाननुज्ञातस्त्वयानघ ।।४८।।**

"निष्पाप ! गुरुदेव ! मैं निष्पाप रहकर आपके साथ युद्ध कर सकूँ, इसके लिए आपकी आज्ञा चाहता हूँ । आपका आदेश पाकर मैं समस्त शत्रुओं को युद्ध में जीत सकता हूँ ।"

कृप उवाच

**प्रीतस्तेऽभिगमेनाहं जयं तव नराधिप ।**
**आशासिष्ये सदोत्थाय सत्यमेतद् ब्रवीमि ते ।।४९।।**

**कृपाचार्य बोले**—नरेश्वर ! तुम्हारे इस आगमन से मुझे अति हर्ष हुआ है, अतः मैं प्रातः उठकर सदा तुम्हारी विजय के लिए शुभ-कामना करूँगा । तुमसे मैं यह सच्ची बात कहता हूँ ।

सञ्जय उवाच

**एतत् श्रुत्वा महाराज गौतमस्य विशाम्पते ।**
**अनुमान्य कृपं राजा प्रययौ यत्र मद्रराट् ।।५०।।**

**सञ्जय कहते हैं**—हे महाराज ! प्रजेश्वर ! कृपाचार्य की बात सुनकर राजा युधिष्ठिर उनकी अनुमति ले, उधर गये जहाँ मद्रराज शल्य थे ।

**स शल्यमभिवाद्याथ कृत्वा चाभिप्रदक्षिणम् ।**
**उवाच राजा दुर्धर्षमात्मनिःश्रेयसं वचः ।।५१।।**

दुर्जय वीर शल्य को प्रणाम करके तथा उनकी परिक्रमा करने के पश्चात् राजा युधिष्ठिर ने उनसे अपने कल्याण की बात कही—

**अनुमानये त्वां दुर्धर्ष योत्स्ये विगतकल्मषः ।**
**जयेयं तु परान् राजन्ननुज्ञातस्त्वया रिपून् ।।५२।।**

"दुर्धर्ष वीर ! मैं पापरहित और निरपराध रहकर आपके साथ युद्ध कर सकूँ, इसके लिए आपकी अनुमति चाहता हूँ । राजन् ! आपकी आज्ञा

पाकर मैं समस्त शत्रुओं को युद्ध में परास्त कर सकता हूँ।

शल्य उवाच

**तुष्टोऽस्मि पूजितश्चास्मि यत्कांक्षसि तदस्तु ते ।**
**अनुजानामि चैव त्वां युध्यस्व जयमाप्नुहि ॥५३॥**

**शल्य बोले**—मैं अति सन्तुष्ट हूँ। तुमने मेरा बहुत आदर किया है। तुम्हारी जो अभिलाषा है, वह पूर्ण हो। मैं तुम्हें आज्ञा देता हूँ, तुम युद्ध करो और विजयी बनो।

**ब्रूहि चैव परं वीर केनार्थः किं ददामि ते ।**
**एवं गते महाराज युद्धादन्यत् किमिच्छसि ॥५४॥**

हे वीर! तुम कुछ और बताओ, किस प्रकार तुम्हारा मनोरथ सिद्ध होगा? मैं तुम्हें क्या दूँ? महाराज! इस परिस्थिति में तुम्हारी ओर से युद्ध करने के सिवा तुम मुझसे क्या चाहते हो?

युधिष्ठिर उवाच

**स एव मे वरः शल्य उद्योगे यस्त्वया कृतः ।**
**सूतपुत्रस्य संग्रामे कार्यस्तेजोवधस्त्वया ॥५५॥**

**युधिष्ठिर ने कहा**—मामा शल्य! युद्ध के लिए उद्योग के दिनों में आपने जो वर मुझे दिया था, वही वर आज भी मेरे लिए आवश्यक है। जब सूत-पुत्र कर्ण का अर्जुन के साथ युद्ध हो उस समय आपको उसका उत्साह भंग करना चाहिए।

शल्य उवाच

**सम्पत्स्यत्येष ते कामः कुन्तीपुत्र यथेप्सितम् ।**
**गच्छ युध्यस्व विश्रब्धः प्रतिजाने वचस्तव ॥५६॥**

**शल्य बोले**—कुन्तीकुमार! तुम्हारा यह अभीष्ट मनोरथ अवश्य पूर्ण होगा। जाओ, निश्चिन्त होकर युद्ध करो। मैं तुम्हारे वचन के पालन करने की प्रतिज्ञा करता हूँ।

सञ्जय उवाच

**अनुमान्याथ कौन्तेयो मातुलं मद्रकेश्वरम् ।**
**निर्जगाम महासैन्याद् भ्रातृभिः परिवारितः ॥५७॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! इस प्रकार अपने मामा मद्रराज शल्य की अनुमति लेकर भाइयों से घिरे हुए कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर उस विशाल सेना से बाहर निकल गये।

**वासुदेवस्तु राधेयमाहवेऽभिजगाम वै ।**
**तत एनमुवाचेदं पाण्डवार्थे गदाग्रजः ॥५८॥**

इधर श्रीकृष्ण उस युद्ध में राधानन्दन के पास गये। वहाँ जाकर गदाग्रज ने पाण्डवों के हित के लिए उससे इस प्रकार कहा—

**श्रुतं मे कर्ण भीष्मस्य द्वेषात् किल न योत्स्यसे ।**
**अस्मान् वरय राधेय यावद् भीष्मो न हन्यते ॥५९॥**

"कर्ण! मैंने सुना है कि तुम भीष्म से द्वेष होने के कारण युद्ध नहीं करोगे। राधानन्दन! ऐसी परि-स्थिति में जबतक भीष्म नहीं मारे जाते, तबतक हम लोगों का पक्ष ग्रहण कर लो।

**हते तु भीष्मे राधेय पुनरेष्यसि संयुगम् ।**
**धार्तराष्ट्रस्य साहाय्यं यदि पश्यसि चेत् समम् ॥६०॥**

"राधेय! भीष्मजी की मृत्यु के पश्चात् यदि तुम ठीक समझो तो युद्ध में पुनः दुर्योधन की सहायता के लिए चले जाना।"

कर्ण उवाच

**न विप्रियं करिष्यामि धार्तराष्ट्रस्य केशव ।**
**त्यक्तप्राणं हि मां विद्धि दुर्योधनहितैषिणम् ॥६१॥**

**कर्ण बोला**—केशव! मैं दुर्योधन का हितैषी हूँ। उसके लिए अपने प्राणों को न्यौछावर किये बैठा हूँ, अतः मैं उसका अप्रिय कदापि नहीं करूँगा।

सञ्जय उवाच

**तत् श्रुत्वा वचनं कृष्णः संन्यवर्तत भारत ।**
**युधिष्ठिरपुरोगैश्च पाण्डवैः सह संगतः ॥६२॥**

**सञ्जय कहते हैं**—हे भारत! कर्ण की यह बात सुनकर श्रीकृष्ण लौट आये तथा युधिष्ठिर आदि पाण्डवों से जा मिले।

**अथ सैन्यस्य मध्ये तु प्राक्रोशत् पाण्डवाग्रजः ।**
**योऽस्मान् वृणोति तमहं वरये साह्यकारणात् ॥६३॥**

तब ज्येष्ठ पाण्डव युधिष्ठिर ने सेना के बीच में खड़े होकर पुकारा—"जो कोई वीर सहायता के लिए हमारे पक्ष में आना स्वीकार करे, मैं भी उसे स्वी-कार करूँगा।"

**अथ तान् समभिप्रेक्ष्य युयुत्सुरिदमब्रवीत् ।**
**प्रीतात्मा धर्मराजं तं कुन्तीपुत्रं युधिष्ठिरम् ॥६४॥**

उस समय आपके पुत्र युयुत्सु ने पाण्डवों की ओर

देखकर प्रसन्नचित्त हो धर्मराज कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर से इस प्रकार कहा—

**अहं योत्स्यामि भवतः संयोगे धृतराष्ट्रजान् ।**
**युष्मदर्थं महाराज यदि मां वृणुषेऽनघ ॥६५॥**

"महाराज ! निष्पाप नरेश ! यदि आप मुझे स्वीकार करें तो मैं आप लोगों के लिए युद्ध में धृतराष्ट्र के पुत्रों से युद्ध करूँगा ।"

युधिष्ठिर उवाच

**एह्येहि सर्वे योत्स्यामस्तव भ्रातॄनपण्डितान् ।**
**युयुत्सो वासुदेवश्च वयं च ब्रूमः सर्वशः ॥६६॥**

**युधिष्ठिर बोले**—युयुत्सो ! आओ, आओ । हम सब लोग मिलकर तुम्हारे इन मूर्ख भाइयों से युद्ध करेंगे । यह बात हम और श्रीकृष्ण सभी कह रहे हैं ।

**वृणोमि त्वां महाबाहो युद्धयस्व मम कारणात् ।**
**भजस्वास्मान् राजपुत्र भजमानान् महाद्युते ॥६७॥**

महाबाहो ! मैं तुम्हें स्वीकार करता हूँ । तुम मेरे लिए युद्ध करो । महातेजस्वी राजकुमार ! हम तुम्हें अपनाते हैं । तुम भी हमें स्वीकार करो ।

सञ्जय उवाच

**ततो युयुत्सुः कौरव्यान् परित्यज्य सुतांस्तव ।**
**जगाम पाण्डुपुत्राणां सेनां विश्राव्य दुन्दुभिम् ॥६८॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! तब युयुत्सु आपके सभी पुत्रों का परित्याग कर डंका पीटता हुआ पाण्डवों की सेना में चला गया ।

**ततो युधिष्ठिरो राजा सम्प्रहृष्टः सहानुजः ।**
**जग्राह कवचं भूयो दीप्तिमत् कनकोज्ज्वलम् ॥६९॥**

तत्पश्चात् राजा युधिष्ठिर ने भाइयोंसहित अत्यन्त प्रसन्न हो सुवर्ण-निर्मित चमकीला कवच धारण किया ।

**प्रत्यपद्यन्त ते सर्वे स्वरथान् पुरुषर्षभाः ।**
**ततो व्यूहं यथापूर्वं प्रत्यव्यूहन्त ते पुनः ॥७०॥**

तदनन्तर वे सभी श्रेष्ठ पुरुष अपने-अपने रथों पर आरूढ़ हुए और उन्होंने पुनः शत्रुओं के विरुद्ध पहले की भाँति ही अपनी सेना की व्यूहरचना की ।

**गौरवं पाण्डुपुत्राणां मान्यान् मानयतां च तान् ।**
**दृष्ट्वा महीक्षितस्तत्र पूजयाञ्चक्रिरे भृशम् ॥७१॥**

माननीय पुरुषों का सम्मान करनेवाले पाण्डवों के उस गौरव को देखकर सब भूपाल उनकी अत्यन्त प्रशंसा करने लगे ।

**सौहृदं च कृपां चैव प्राप्तकालं महात्मनाम् ।**
**दयां च ज्ञातिषु परां कथयाञ्चक्रिरे नृपाः ॥७२॥**

सब नरेश महात्मा पाण्डवों के सौहार्द, कृपाभाव, समयोचित कर्तव्य के पालन तथा कुटुम्बियों के प्रति परम दयाभाव की चर्चा करने लगे ।

**साधु साध्विति सर्वत्र निश्चेरुः स्तुतिसंहिताः ।**
**वाचः पुण्याः कीर्तिमतां मनोहृदयहर्षणाः ॥७३॥**

यशस्वी पाण्डवों के लिए सब ओर से उनकी स्तुति-प्रशंसा से भरी हुई—'अत्युत्तम, बहुत सुन्दर'—आदि बातें निकलती थीं । उन्हें ऐसी पवित्र वाणी सुनने को मिलती थी, जो उनके मन और हृदय के हर्ष को बढ़ानेवाली थी ।

**म्लेच्छाश्चार्याश्च ये तत्र ददृशुः शुश्रुवुस्तथा ।**
**वृत्तं तत् पाण्डुपुत्राणां रुरुदुस्ते सगद्गदाः ॥७४॥**

वहाँ जिन-जिन म्लेच्छों और आर्यों ने पाण्डवों का वह बर्ताव देखा तथा सुना, वे सब गद्गदकण्ठ होकर रोने लगे ।

**इति महाभारते भीष्मपर्वणि चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥**

## पञ्चमोऽध्यायः

### प्रथम दिन का युद्ध, कौरव-पाण्डवों का घमासान युद्ध, भीष्म के साथ अभिमन्यु का भयंकर युद्ध, शल्य द्वारा उत्तरकुमार का वध और श्वेत का पराक्रम

सञ्जय उवाच

**ततस्ते पार्थिवाः सर्वे प्रगृहीतशरासनाः ।**
**सहसैन्याः समापेतुः पुत्रस्य तव शासनात् ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—पाण्डवों को व्यूहाकार में व्यवस्थित देखकर अन्य सब राजा भी आपके पुत्र दुर्योधन की आज्ञा से हाथों में धनुषबाण लिये सेनाओं सहित वहाँ आ पहुँचे ।

**युधिष्ठिरेण चादिष्टाः पार्थिवास्ते सहस्रशः ।**
**विनदन्तः समापेतुः पुत्रस्य तव वाहिनीम् ॥२॥**

इधर युधिष्ठिर की आज्ञा पाकर सहस्रों नरेश गर्जना करते हुए आपके पुत्र की सेना पर टूट पड़े ।

**पूर्वाह्णे तस्य रौद्रस्य युद्धमह्नो विशाम्पते ।**
**प्रावर्तत महाघोरं राज्ञां देहावकर्तनम् ॥३॥**

प्रजेश्वर ! उस भयंकर दिन के प्रथम भाग में महाभयानक युद्ध होने लगा, जो राजाओं के शरीरों का उच्छेद करनेवाला था ।

**कुरूणां सृञ्जयानां च जिगीषूणां परस्परम् ।**
**सिंहानामिव संह्लादो दिवमुर्वीं च नादयन् ॥३॥**

कौरव और सृञ्जयवंशी वीर एक-दूसरे को जीतने की इच्छा रखकर सिंहों के समान दहाड़ रहे थे । उनका वह सिंहनाद पृथिवी और आकाश को निनादित कर रहा था ।

**आसीत् किलकिलाशब्दस्तलशंखरवैः सह ।**
**जज्ञिरे सिंहनादाश्च शूराणां प्रतिगर्जताम् ॥५॥**

तल और शंखों की ध्वनि के साथ सैनिकों का किलकिल शब्द गूँज उठा । एक-दूसरे के प्रति गर्जना करनेवाले शूरवीरों के सिंहनाद होने लगे ।

**ते मनः क्रूरमाधाय समभित्यक्तजीविताः ।**
**पाण्डवानभ्यवर्तन्त सर्व एवोच्छ्रितध्वजाः ॥६॥**

उस समय समस्त कौरव सैनिक अपने मन को कठोर बना तथा प्राणों की बाजी लगाकर ऊँची ध्वजाएँ फहराते हुए पाण्डवों पर धावा करने लगे ।

**अथ शान्तनवो राजन्नभ्यधावद् धनञ्जयम् ।**
**प्रगृह्य कार्मुकं घोरं कालदण्डोपमं रणे ॥७॥**

राजन् ! उस युद्ध में शान्तनुनन्दन भीष्म कालदण्ड के समान भयंकर धनुष लेकर अर्जुन की ओर दौड़े ।

**अर्जुनोऽपि धनुर्गृह्य गाण्डीवं लोकविश्रुतम् ।**
**अभ्यधावत् तेजस्वी गाङ्गेयं रणमूर्धनि ॥८॥**

उधर से महातेजस्वी अर्जुन भी अपना लोकप्रसिद्ध गाण्डीव धनुष लेकर युद्ध के मुहाने पर गङ्गानन्दन भीष्म की ओर दौड़े ।

**गाङ्गेयस्तु रणे पार्थं विद्ध्वा नाकम्पयद् बली ।**
**तथैव पाण्डवो राजन् भीष्मं नाकम्पयद् युधि ॥९॥**

महाबली भीष्म युद्ध में अर्जुन को घायल करके भी उन्हें विचलित न कर सके । हे राजन् ! उसी प्रकार पाण्डुनन्दन अर्जुन भी भीष्मजी को युद्ध में चलायमान न कर सके ।

**सात्यकिस्तु महेष्वासः कृतवर्माणमभ्ययात् ।**
**तयोः समभवद् युद्धं तुमुलं रोमहर्षणम् ॥१०॥**

दूसरी ओर महाधनुर्धर सात्यकि ने कृतवर्मा पर धावा किया । उन दोनों में बड़ा भयंकर रोमाञ्चकारी युद्ध हुआ ।

**सात्यकिः कृतवर्माणं कृतवर्मा च सात्यकिम् ।**
**आनर्च्छतुः शरैर्घोरैस्तक्षमाणौ परस्परम् ॥११॥**

सात्यकि ने कृतवर्मा को और कृतवर्मा ने सात्यकि को भयंकर बाणों से घायल करते हुए एक-दूसरे को पीड़ा पहुँचाई ।

**अभिमन्युर्महेष्वासं बृहद्बलमयोधयत् ।**
**भीमसेनस्तव सुतं दुर्योधनमयोधयत् ॥१२॥**

अभिमन्यु ने महान् धनुर्धर बृहद्बल के साथ युद्ध किया और भीमसेन आपके पुत्र दुर्योधन से युद्ध करने लगे ।

**तावुभौ नरशार्दूलौ कुरुमुख्यौ महाबलौ ।**
**अन्योन्यं शरवर्षाभ्यां ववृषाते रणाजिरे ॥१३॥**

वे दोनों नरश्रेष्ठ महाबली वीर कुरुकुल के प्रधान व्यक्ति थे । उन्होंने युद्धभूमि में एक-दूसरे पर बाणों की वर्षा आरम्भ कर दी ।

**युधिष्ठिरः स्वयं राजा मद्रराजमथाभ्ययात् ।**
**तस्य मद्राधिपश्चापं द्विधा चिच्छेद मारिष ॥१४॥**

स्वयं राजा युधिष्ठिर ने मद्रराज शल्य पर आक्रमण किया । परन्तु राजन् ! मद्रराज ने युधिष्ठिर के धनुष के दो टुकड़े कर दिये ।

**धृष्टद्युम्नस्ततो द्रोणमभ्यद्रवत भारत ।**
**तस्य द्रोणः सुसंक्रुद्धस्त्रिधा चिच्छेद कार्मुकम् ॥१५॥**

भरतनन्दन ! धृष्टद्युम्न ने द्रोणाचार्य पर धावा किया, तब द्रोण ने अत्यन्त क्रुद्ध होकर उसके धनुष के तीन टुकड़े कर डाले ।

**राक्षसं रौद्रकर्माणं क्रूरकर्मा घटोत्कचः ।**
**अलम्बुषं प्रत्युदियाद् बलं शक्र इवाहवे ॥१६॥**

जैसे इन्द्र ने युद्ध में बल नामक दैत्य पर चढ़ाई

की थी, उसी प्रकार क्रूरकर्मा घटोत्कच ने भयंकर कर्म करनेवाले अलम्बुष नामक राक्षस पर आक्रमण किया।

**शिखण्डी समरे राजन् द्रौणिमभ्युद्ययौ बली।**
**बृहत्क्षत्रं तु कैकेयं कृपः शारद्वतो ययौ ॥१७॥**

राजन्! बलवान् शिखण्डी ने युद्धभूमि में द्रोण-पुत्र अश्वत्थामा पर आक्रमण किया। उधर केकयराज बृहत्क्षत्र पर शरद्वान् के पुत्र कृपाचार्य ने चढ़ाई की।

**एवं द्वन्द्वसहस्राणि रथवारणवाजिनाम्।**
**पदातीनां च समरे तव तेषां च संकुले ॥१८॥**

इस प्रकार उस घमासान युद्ध में आपके और पाण्डवपक्ष के रथ, हाथी, घोड़े और पैदल सैन्य के सहस्रों योद्धाओं में द्वन्द्व-युद्ध चल रहा था।

**मुहूर्तमिव तद् युद्धमासीन्मधुरदर्शनम्।**
**तत उन्मत्तवद् राजन् न प्राज्ञायत किंचन ॥१९॥**

महाराज! दो घड़ी तक तो वह युद्ध देखने में बड़ा मनोहर प्रतीत हुआ, फिर उन्मत्त की भाँति विकट युद्ध होने लगा। उस समय किसी को कुछ सूझ नहीं पड़ता था।

**गजो गजेन समरे रथिनं च रथी ययौ।**
**अश्वोऽश्वं समभिप्रायात् पदातिश्च पदातिनम् ॥२०॥**

उस युद्धभूमि में गजारोही गजारोही से भिड़ गया, रथी ने रथी पर आक्रमण किया, घुड़सवार घुड़सवार पर चढ़ आया और पैदल ने पैदल पर धावा बोल दिया।

**न पुत्रः पितरं जज्ञे न पिता पुत्रमौरसम्।**
**न भ्राता भ्रातरं तत्र स्वस्रीयं न च मातुलः ॥२१॥**

उस युद्ध में पुत्र पिता को नहीं पहचानता था और न पिता अपने औरस पुत्र को। न भाई भाई को जानता था तथा न मामा अपने भानजे को पहचानता था।

**मातुलं न च स्वस्रीयो न सखायं सखा तथा।**
**आविष्टा इव युध्यन्ते पाण्डवाः कुरुभिः सह ॥२२॥**

न भानजा अपने मामा को पहचानता था, न मित्र मित्र को। उस समय पाण्डव-योद्धा कौरव-सैनिकों के साथ इस प्रकार युद्ध करते थे मानो उनमें किसी महाशक्ति का आवेश आ गया हो।

**रथानीकं नरव्याघ्राः केचिदभ्यपतन् रथैः।**
**अभजन्त युगैरेव युगानि भरतर्षभ ॥२३॥**

कुछ नरश्रेष्ठ वीर अपने रथों द्वारा शत्रुपक्ष की रथसेना पर टूट पड़े। भरतश्रेष्ठ! कितने ही रथों के जुए विपक्षी रथों के जुओं से टकराकर टूट गये।

**प्रभिन्नास्तु महाकायाः संनिपत्य गजा गजैः।**
**बहुधा दारयन् क्रुद्धा [1]विषाणैरितरेतरम् ॥२४॥**

गण्डस्थल से मद की धारा बहानेवाले विशाल-काय गजराज क्रुद्ध हो दूसरे हाथियों से टक्कर लेते हुए अपने दाँतों के आघात से एक-दूसरे को नाना प्रकार से विदीर्ण करने लगे।

**अश्वैरग्र्यजवैः केचिदाप्लुत्य महतो रथान्।**
**शिरांस्याददिरे वीरा रथिनामश्वसादिनः ॥२५॥**

कितने ही वीर घुड़सवार शीघ्रगामी अश्वों द्वारा आक्रमण करके बड़े-बड़े रथों पर कूद पड़ते और रथियों के मस्तक काट लेते थे।

**बहूनपि हयारोहान् भल्लैः संनतपर्वभिः।**
**रथी जघान सम्प्राप्य बाणगोचरमागतान् ॥२६॥**

इसी प्रकार एक-एक रथी झुकी हुई गाँठोंवाले भल्ल नामक बाणों द्वारा निशाने पर आये हुए बहुत-से घुड़सवारों का संहार कर डालता था।

**गतपूर्वाह्णभूयिष्ठे तस्मिन्नहनि दारुणे।**
**वर्तमाने तथा रौद्रे महावीरवरक्षये ॥२७॥**
**दुर्मुखः कृतवर्मा च कृपः शल्यो विविंशतिः।**
**भीष्मं जुगुपुरासाद्य तव पुत्रेण नोदितः ॥२८॥**

राजन्! उस अत्यन्त भयंकर दिन का पूर्वभाग जब प्रायः व्यतीत हो गया, तब बड़े-बड़े वीरों का विनाश करनेवाले उस भयानक युद्ध में आपके पुत्र की आज्ञा से दुर्मुख, कृतवर्मा, कृपाचार्य, शल्य और विविंशति वहाँ भीष्म की रक्षा करने लगे।

---

१. विषाणः का बहुप्रचलित अर्थ सींग है परन्तु कोशों में 'विषाणः' का अर्थ हाथी का दाँत भी दिया हुआ है। हाथी के सींग नहीं होते इसलिए भी 'विषाणः' का अर्थ दाँत करना ही समीचीन है।

**एतैरतिरथैर्गुप्तः पञ्चभिर्भरतर्षभः ।**
**पाण्डवानामनीकानि विजगाहे महारथः ॥२९॥**

इन पाँच अतिरथी वीरों से सुरक्षित हो भरत-भूषण महारथी भीष्मजी ने पाण्डवों की सेना में प्रवेश किया ।

**स शिरांसि रणेऽरीणां रथांश्च सयुगध्वजान् ।**
**निचकर्त महावेगैर्भल्लैः संनतपर्वभिः ॥३०॥**

वे युद्ध में झुकी हुई गाँठवाले अति वेगशाली भल्लों द्वारा शत्रुओं के मस्तक, रथ, जुआ और ध्वजाओं को काट-काटकर गिराने लगे ।

**अभिमन्युः सुसंक्रुद्धः पिशङ्गैस्तुरगोत्तमैः ।**
**संयुक्तं रथमास्थाय प्रायाद् भीष्मरथं प्रति ॥३१॥**

यह देख अभिमन्यु अत्यन्त कुपित हो पिङ्गलवर्ण के श्रेष्ठ घोड़ों से जुते हुए रथ पर बैठकर भीष्म के रथ की ओर दौड़ पड़े ।

**स तालकेतोस्तीक्ष्णेन केतुमाहत्य पत्रिणा ।**
**भीष्मेण युयुधे वीरस्तस्य चानुरथैः सह ॥३२॥**

वीर अभिमन्यु ने तीखे बाण से उनके ताल-चिह्नित ध्वज को छेद डाला तथा भीष्म और उनके अनुगामी रथियों के साथ युद्ध आरम्भ कर दिया ।

**कृतवर्माणमेकेन शल्यं पञ्चभिराशुगैः ।**
**विद्ध्वा नवभिरानर्च्छच्छिताग्रैः प्रपितामहम् ॥३३॥**

उन्होंने एक बाण से कृतवर्मा को तथा पाँच शीघ्रगामी बाणों से शल्य को बेधकर तीखी धारवाले नौ बाणों से प्रपितामह भीष्म को भी चोट पहुँचाई ।

**दुर्मुखस्य तु भल्लेन सर्वावरणभेदिना ।**
**जहार सारथेः कायाच्छिरः संनतपर्वणा ॥३४॥**

तत्पश्चात् अभिमन्यु ने झुकी हुई गाँठवाले तथा सब प्रकार के आवरणों का भेदन करनेवाले एक भल्ल के द्वारा दुर्मुख के सारथि का मस्तक धड़ से अलग कर दिया ।

**लब्धलक्ष्यतया कार्ष्णेः सर्वे भीष्ममुखा रथाः ।**
**सत्त्ववन्तममन्यन्त साक्षादिव धनञ्जयम् ॥३५॥**

अर्जुनकुमार के इस लक्ष्य-वेध की सफलता से प्रभावित हो भीष्म आदि सभी रथियों ने उन्हें साक्षात् अर्जुन के समान शक्तिशाली समझा ।

**तमासाद्य महावेगैर्भीष्मो नवभिराशुगैः ।**
**विव्याध समरे तूर्णमार्जुनिं परवीरहा ॥३६॥**

अर्जुनकुमार अभिमन्यु को अपने ऊपर आक्रमण करते देख शत्रुवीरों का हनन करनेवाले भीष्म ने समरभूमि में नौ शीघ्रगामी महावेगवान् बाणों द्वारा तुरन्त ही उन्हें वेध दिया ।

**ध्वजं चास्य त्रिभिर्भल्लैश्चिच्छेद परमौजसः ।**
**सारथिं च त्रिभिर्बाणैराजघान यतव्रतः ॥३७॥**

साथ ही उस तेजस्वी वीर के ध्वज को भी तीन बाणों से काट गिराया, इतना ही नहीं, नियमपूर्वक ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करनेवाले भीष्म ने तीन बाणों से अभिमन्यु के सारथि को भी मार डाला ।

**तथैव कृतवर्मा च कृपः शल्यश्च मारिष ।**
**विद्ध्वा नाकम्पयत्कार्ष्णि मैनाकमिव पर्वतम् ॥३८॥**

आर्य ! इसी प्रकार कृतवर्मा, कृपाचार्य तथा शल्य मैनाक पर्वत की भाँति स्थिर हुए उस अर्जुनपुत्र को बाणों से घायल करके भी चलायमान न कर सके ।

**स तैः परिवृतः शूरो धार्तराष्ट्रैर्महारथैः ।**
**ववर्ष शरवर्षाणि कार्ष्णिः पञ्चरथान् प्रति ॥३९॥**

दुर्योधन के उन महारथियों से घिर जाने पर भी शूरवीर अर्जुनकुमार उन पाँचों रथियों पर बाणवर्षा करता रहा ।

**ततस्तेषां महास्त्राणि संवार्य शरवृष्टिभिः ।**
**ननाद बलवान् कार्ष्णि भीष्माय विसृजञ्शरान् ॥४०॥**

अपनी बाणवर्षा से उन सबके महान् अस्त्रों का निवारण करके महाबली अर्जुनकुमार अभिमन्यु ने भीष्म पर सायकों का प्रहार करते हुए भीषण सिंहनाद किया ।

**तत्रास्य सुमहद् राजन् बाह्वोर्बलमदृश्यत ।**
**समरे यतमानस्य भीष्ममर्दयतः शरैः ॥४१॥**

राजन् ! उस समय समरभूमि में प्रयत्नपूर्वक अपने बाणों द्वारा भीष्म को पीड़ा देते हुए अभिमन्यु की भुजाओं का महान् बल प्रत्यक्ष देखा गया ।

**पराक्रान्तस्य तस्यैव भीष्मोऽपि प्राहिणोच्छरान् ।**
**स तांश्चिच्छेद समरे भीष्मचापच्युताञ्शरान् ॥४२॥**

तब भीष्म ने भी उस पराक्रमी वीर पर बाणों का प्रहार किया, परन्तु अभिमन्यु ने युद्धभूमि में

भीष्म के धनुष से छूटे हुए समस्त बाणों को काट डाला।

**ततो ध्वजममोघेषुर्भीष्मस्य नवभिः शरैः।**
**चिच्छेद समरे वीरस्तत उच्चुक्रुशुर्जनाः॥४३॥**

अभिमन्यु के बाण अमोघ थे। उस वीर ने रण-क्षेत्र में नौ बाणों द्वारा भीष्मजी के ध्वज को काट गिराया। यह देख सब लोग उच्च स्वर से कोलाहल कर उठे।

**अथ भीष्मो महास्त्राणि दिव्यानि सुबहूनि च।**
**प्रादुश्चक्रे महारौद्रे रणे तस्मिन् महाबलः॥४४॥**

तब महाबली भीष्म ने उस अत्यन्त भयंकर संग्राम में अनेक महान् दिव्यास्त्र प्रकट किये।

**ततो दश महेष्वासाः पाण्डवानां महारथाः।**
**रक्षार्थमभ्यधावन्त सौभद्रं त्वरिता रथैः॥४५॥**
**विराटः सहपुत्रेण धृष्टद्युम्नश्च पार्षतः।**
**भीमश्च केकयाश्चैव सात्यकिश्च विशाम्पते॥४६॥**

राजन्! तब पुत्रसहित विराट, द्रुपदकुमार धृष्टद्युम्न, भीमसेन, पाँचों भाई केकय-राजकुमार तथा सात्यकि—पाण्डवपक्ष के महान् धनुर्धर ये दस महारथी अभिमन्यु की रक्षा के लिए रथों द्वारा तुरन्त वहाँ दौड़े आये।

**प्रगृहीताग्रहस्तेन वैराटिरपि दन्तिना।**
**अभ्यद्रवत राजानं मद्राधिपतिमुत्तरः॥४७॥**

तब जिसने अपनी सूँड को मोड़कर मुख में रख लिया था, उस दन्तार हाथी पर आरूढ़ हुए विराट-कुमार उत्तर ने मद्रराज शल्य पर आक्रमण किया।

**तस्य वारणराजस्य जवेनापततो रथे।**
**शल्यो निवारयामास वेगमप्रतिमं शरैः॥४८॥**

वह गजराज बड़े वेग से शल्य के रथ की ओर झपटा। उस समय शल्य ने अपने बाणों द्वारा उसके अप्रतिम वेग को रोक दिया।

**तस्य क्रुद्धः स नागेन्द्रो बृहतः साधुवाहिनः।**
**पदा युगमधिष्ठाय जघान चतुरो हयान्॥४९॥**

इससे वह गजेन्द्र शल्य पर अत्यन्त कुपित हो उठा और अपना एक पैर रथ के जुए पर रखकर उस रथ को अच्छी प्रकार वहन करनेवाले चारों बड़े-बड़े घोड़ों को मार डाला।

**स हताश्वे रथे तिष्ठन् मद्राधिपतिरायसीम्।**
**उत्तरान्तकरीं शक्तिं चिक्षेप भुजगोपमाम्॥५०॥**

घोड़ों के मर जाने पर भी उसी रथ में बैठे हुए मद्रराज शल्य ने लोहे की बनी हुई एक शक्ति चलाई जो सर्प के समान भयंकर तथा राजकुमार उत्तर का अन्त करनेवाली थी।

**तया भिन्नतनुत्राणः प्रविश्य विपुलं तमः।**
**स पपात गजस्कन्धात् प्रमुक्ताङ्कुशतोमरः॥५१॥**

उस शक्ति ने उत्तर के कवच को काट दिया। उसकी चोट से उसपर अत्यन्त मोह छा गया। उसके हाथ से अंकुश और तोमर छूटकर गिर गये तथा वह भी अचेत होकर हाथी की पीठ से भूमि पर गिर पड़ा।

**असिमादाय शल्योऽपि ह्यवप्लुत्य रथोत्तमात्।**
**तस्य वारणराजस्य चिच्छेदाथ महाकरम्॥५२॥**

इसी समय शल्य भी हाथ में तलवार लेकर अपने श्रेष्ठ रथ से कूद पड़े और उस गजराज की विशाल सूँड को उन्होंने काट गिराया।

**भिन्नमर्मा शरशतैश्छिन्नहस्तः स वारणः।**
**भीममार्तस्वरं कृत्वा पपात च ममार च॥५३॥**

सैकड़ों बाणों से उसके मर्मस्थल विद्ध हो गये थे तथा उसकी सूँड भी काट डाली गई थी, इससे भयंकर आर्तनाद करके वह गजराज भूमि पर गिर पड़ा और मर गया।

**एतदीदृशकं कृत्वा मद्रराजो नराधिप।**
**आरुरोह रथं तूर्णं भास्वरं कृतवर्मणः॥५४॥**

हे नरेश्वर! यह पराक्रम करके मद्रराज शल्य तुरन्त ही कृतवर्मा के तेजस्वी रथ पर चढ़ गये।

**उत्तरं वै हतं दृष्ट्वा वैराटिर्भ्रातरं तदा।**
**श्वेतः क्रोधात् प्रजज्वाल हविषा हव्यवाडिव॥५५॥**

अपने भाई उत्तर को मारा गया देख विराटपुत्र श्वेत क्रोध से जल उठे, मानो अग्नि में घी की आहुति पड़ गई हो।

**स विस्फार्य महच्चापं शक्रचापोपमं बली।**
**मुञ्चन् बाणमयं वर्षं प्रायाच्छल्यरथं प्रति॥५६॥**

वह बलवान् वीर इन्द्रधनुष के समान अपने

विशाल धनुष को कानों तक खींचकर बाणों की वर्षा करता हुआ शल्य के रथ पर चढ़ आया।

**तमापतन्तं सम्प्रेक्ष्य मत्तवारणविक्रमम्।**
**तावकानां रथाः सप्त समन्तात् पर्यवारयन्।**
**मद्रराजमभीप्सन्तो मृत्योर्दंष्ट्रान्तरं गतम् ॥५७॥**

मदमस्त गजराज के समान पराक्रम प्रकट करनेवाले श्वेत को धावा करते देख आपके सात रथियों ने मौत के मुँह में फँसे हुए मद्रराज शल्य को बचाने की इच्छा रखकर उन्हें चारों ओर से घेर लिया।

**ते तु बाणमयं वर्षं श्वेतमूर्धन्यपातयन्।**
**निदाघान्तेऽनिलोद्धूता मेघा इव नगे जलम् ॥५८॥**

फिर उन सबने श्वेत के मस्तक पर बाणों की वर्षा आरम्भ कर दी, मानो ग्रीष्म ऋतु के अन्त में वायु के द्वारा उठाये हुए मेघ पर्वत पर जल बरसा रहे हों।

**ततः क्रुद्धो महेष्वासः सप्तभल्लैः सुतेजनैः।**
**धनूंषि तेषामाच्छिद्य ममर्द पृतनापतिः ॥५९॥**

तब तो महान् धनुर्धर सेनापति श्वेत ने कुपित होकर अत्यन्त तीक्ष्ण भल्ल नामक सात बाणों द्वारा उन सातों रथियों के धनुषों को काटकर उनके टुकड़े-टुकड़े कर दिये।

**ते निकृत्तमहाचापास्त्वरमाणा महारथाः।**
**रथशक्तीः परामृश्य विनेदुर्भैरवान् रवान् ॥६०॥**

अपने विशाल धनुषों के कट जाने पर उन सातों महारथियों ने अत्यन्त शीघ्रतापूर्वक रथ-शक्तियाँ उठा लीं और भयंकर गर्जना की।

**अन्वयुर्भरतश्रेष्ठ सप्त श्वेतरथं प्रति।**
**अप्राप्ताः सप्तभिर्भल्लैश्चिच्छेद परमास्त्रवित् ॥६१॥**

भरतश्रेष्ठ ! वे सातों शक्तियाँ एकसाथ श्वेत के रथ की ओर चलीं। परन्तु उत्तम अस्त्रों के ज्ञाता श्वेत ने सात भल्ल मारकर अपने निकट आने से पूर्व ही उन शक्तियों के टुकड़े-टुकड़े कर डाले।

**शरं ततः समादाय सर्वकायविदारणम्।**
**प्राहिणोद् भरतश्रेष्ठ श्वेतो रुक्मरथं प्रति ॥६२॥**

भरतकुलभूषण ! तदनन्तर श्वेत ने सबके शरीरों को विदीर्ण कर देनेवाले एक बाण को लेकर उसे रुक्मरथ की ओर चलाया।

**स तु रुक्मरथो राजन् सायकेन दृढाहतः।**
**निषसाद रथोपस्थे कश्मलं चाविशन्महत् ॥६३॥**

राजन् ! उस बाण से अत्यन्त घायल होकर रुक्मरथ अपने रथ के पिछले भाग में बैठ गया और अत्यन्त मूर्च्छित हो गया।

**तं विसंज्ञं विमनसं त्वरमाणस्तु सारथिः।**
**अपोवाह न सम्भ्रान्तः सर्वलोकस्य पश्यतः ॥६४॥**

उसे अचेत और अनमना देख उसका सारथि तनिक भी घबराहट में न पड़कर अति शीघ्रतापूर्वक सबके देखते-देखते उसे युद्धभूमि से दूर हटा ले गया।

**ततोऽन्यान् षट् समादाय श्वेतो हेमविभूषितान्।**
**तेषां षण्णां महाबाहुर्ध्वजशीर्षाण्यपातयत् ॥६५॥**

तब महाबाहु श्वेत ने दूसरे स्वर्णभूषित छह बाण लेकर उन छह रथियों के ध्वजों के अग्रभाग काट गिराये।

**हयांश्च तेषां निर्भिद्य सारथींश्च परन्तप।**
**शरैश्चैतान् समाकीर्य प्रायाच्छल्यरथं प्रति ॥६६॥**

हे परन्तप ! तत्पश्चात् उसने उनके घोड़ों और सारथियों को विदीर्ण करके उनके शरीरों में भी बहुत-से बाण जड़ दिये। फिर श्वेत ने शल्य पर आक्रमण किया।

**ततो हलहलाशब्दस्तव सैन्येषु भारत।**
**दृष्ट्वा सेनापतिं तूर्णं यान्तं शल्यरथं प्रति ॥६७॥**

हे भारत ! सभी रथियों को पीड़ित करने के पश्चात् सेनापति श्वेत को शल्य के रथ की ओर जाते देख आपकी सेना में हाहाकार मच गया।

**ततो भीष्मं पुरस्कृत्य तव पुत्रो महाबलः।**
**वृतस्तु सर्वसैन्येन प्रायाच्छ्वेतरथं प्रति।**
**मृत्योरास्यमनुप्राप्तं मद्रराजममोचयत् ॥६८॥**

तब आपके महाबलीपुत्र दुर्योधन ने भीष्मजी को आगे करके सम्पूर्ण सेना के साथ श्वेत के रथ पर आक्रमण किया और मृत्यु के मुख में पड़े हुए मद्रराज शल्य को छुड़ा लिया।

**इति महाभारते भीष्मपर्वणि पञ्चमोऽध्यायः ॥५॥**

## षष्ठोऽध्यायः

**श्वेत और भीष्म का युद्ध, भीष्म द्वारा श्वेत का वध, भीष्म का प्रचण्ड पराक्रम तथा प्रथम दिन के युद्ध की समाप्ति**

सञ्जय उवाच

**प्रहरन्तमनीकानि पिता देवव्रतस्तव ।**
**दृष्ट्वा सेनापतिं भीष्मस्त्वरितः श्वेतमभ्ययात् ॥१॥**

सञ्जय कहते हैं—हे राजन् ! जब आपके पिता देवव्रत ने देखा कि सेनापति श्वेत हमारी सेना पर प्रहार कर रहे हैं, तब वे तुरन्त उसका सामना करने के लिए गये।

**स भीष्मं शरजालेन महता समवाकिरत् ।**
**श्वेतं चापि तथा भीष्मः शरौघैः समवाकिरत् ॥२॥**

महारथी श्वेत ने अपने असंख्य बाणों का जाल-सा बिछाकर भीष्म को ढक दिया। तब भीष्म ने भी श्वेत पर बाणसमूहों की झड़ी लगा दी।

**तौ वृषाविव नर्दन्तौ मत्ताविव महाद्विपौ ।**
**व्याघ्राविव सुसंरब्धावन्योन्यमभिजघ्नतुः ॥३॥**

वे दोनों वीर गर्जते हुए दो साँडों, मद से उन्मत्त हुए दो गजराजों तथा क्रोध में भरे हुए दो सिंहों की भाँति एक-दूसरे पर चोट करने लगे।

**वैराटिः समरे क्रुद्धो भृशमायम्य कार्मुकम् ।**
**आजघान ततो भीष्मं श्वेतः क्षत्रियनन्दनः ॥४॥**

क्षत्रियकुल को आनन्दित करनेवाले विराटकुमार श्वेत ने युद्ध में कुपित हो धनुष को पूरा तानकर भीष्म पर पुनः बाणों द्वारा प्रहार किया।

**सम्प्रहस्य ततः श्वेतः सृक्किणी परिसंलिहन् ।**
**धनुश्चिच्छेद भीष्मस्य नवभिर्दशधा शरैः ॥५॥**

श्वेत ने हँसते हुए और अपने मुँह के दोनों कोनों को चाटते हुए नौ बाण मारकर भीष्म के धनुष के दस टुकड़े कर दिये।

**संधाय विशिखं चैव शरं लोमप्रवाहिनम् ।**
**उन्ममाथ ततस्तालं ध्वजशीर्षं महात्मनः ॥६॥**

फिर शिखाशून्य पंखयुक्त बाण का सन्धान करके उसके द्वारा महात्मा भीष्म के तालचिह्नयुक्त ध्वज का ऊपरी भाग काट गिराया।

**केतुं निपतितं दृष्ट्वा भीष्मस्य तनयास्तव ।**
**हतं भीष्ममन्यन्त श्वेतस्य वशमागतम् ॥७॥**

भीष्म के ध्वज को नीचे गिरा देख आपके पुत्रों ने उन्हें श्वेत के वश में पड़कर मरा हुआ ही समझा।

**ततोऽन्यद् धनुरादाय भीष्मः शान्तनवो युधि ।**
**श्वेतं प्रति महाराज व्यसृजत् सायकान् बहून् ॥८॥**
**तानावार्य रणे श्वेतो भीष्मस्य रथिनां वरः ।**
**धनुश्चिच्छेद भल्लेन पुनरेव पितुस्तव ॥९॥**

महाराज ! तब शान्तनुनन्दन भीष्म ने दूसरा धनुष लेकर समरभूमि में श्वेत पर बहुत-से बाणों की वृष्टि की, परन्तु रथियों में श्रेष्ठ श्वेत ने युद्धभूमि में उन सब सायकों का निवारण करके पुनः एक भल्ल के द्वारा आपके पिता भीष्म का धनुष काट दिया।

**उत्सृज्य कार्मुकं राजन् गाङ्गेयः क्रोधमूर्च्छितः ।**
**अन्यत् कार्मुकमादाय विपुलं बलवत्तरम् ॥१०॥**
**तत्र संधाय विपुलान् भल्लान् सप्त शिलाशितान् ।**
**चतुर्भिश्च जघानाश्वाञ्छ्वेतस्य पृतनापतेः ॥११॥**
**ध्वजं द्वाभ्यां तु चिच्छेद सप्तमेन च सारथेः ।**
**शिरश्चिच्छेद भल्लेन संक्रुद्धो लघुविक्रमः ॥१२॥**

राजन् ! यह देख गङ्गानन्दन भीष्म ने क्रोध से मूर्च्छित हो उस धनुष को फैंककर दूसरा अत्यन्त प्रबल एवं विशाल धनुष ले लिया तथा उसपर पत्थर पर रगड़कर तेज किये हुए सात विशाल भल्लों का सन्धान किया। उनमें से चार भल्लों द्वारा उन्होंने सेनापति श्वेत के चारों घोड़ों को मार डाला, दो से उसका ध्वज काट गिराया तथा अपनी फुर्ती का परिचय देते हुए सातवें भल्ल के द्वारा क्रोधपूर्वक उनके सारथि का सिर उड़ा दिया।

**हताश्वसूतात् स रथादवप्लुत्य महाबलः ।**
**ततः शक्तिं रणे श्वेतो जग्राहोग्रां महाभयाम् ॥१३॥**
**कालदण्डोपमां घोरां मृत्योर्जिह्वामिव श्वसन् ।**
**अब्रवीच्च तदा श्वेतो भीष्मं शान्तनवं रणे ॥१४॥**

युद्धक्षेत्र में घोड़े और सारथि के मारे जाने पर महाबली श्वेत उस रथ से कूद पड़ा और उसने एक

अत्यन्त उग्र, महाभयंकर, कालदण्ड के समान घोर तथा मृत्यु की जिह्वा-सी प्रतीत होनेवाली शक्ति को हाथ में लेकर लम्बी साँस लेते हुए रणक्षेत्र में शान्तनु-पुत्र भीष्म से इस प्रकार कहा—

**तिष्ठेदानीं सुसंरब्धः पश्य मां पुरुषो भव ।**
**एवमुक्त्वा महेष्वासो भीष्मं युधि पराक्रमी ॥१५॥**
**ततः शक्तिममेयात्मा चिक्षेप भुजगोपमाम् ।**
**पाण्डवार्थे पराक्रान्तस्तवानर्थं चिकीर्षुकः ॥१६॥**

"भीष्म ! इस समय साहसपूर्वक खड़े रहो । मुझे देखो और पुरुष बनो ।" ऐसा कहकर अमित आत्म-बल से सम्पन्न महाधनुर्धर और पराक्रमी वीर श्वेत ने भीष्म पर वह सर्प के समान भयंकर शक्ति चलाई । श्वेत पाण्डवों का हित और आपके पक्ष का अहित करने की इच्छा से पराक्रम दिखा रहे थे ।

**अपतत् सहसा राजन् महोल्केव नभस्तलात् ।**
**ज्वलन्तीमन्तरिक्षे तां ज्वालाभिरिव संवृताम् ॥१७॥**
**असम्भ्रान्तस्तदा राजन् पिता देवव्रतस्तव ।**
**अष्टभिर्नवभिर्भीष्मः शक्तिं चिच्छेद पत्रिभिः ॥१८॥**

राजन् ! वह शक्ति आकाश से बहुत बड़ी उल्का के समान सहसा गिरी । अन्तरिक्ष में ज्वालाओं से घिरी हुई-सी उस प्रज्वलित शक्ति को देखकर आपके पिता देवव्रत तनिक भी नहीं घबराये । उन्होंने आठ-नौ बाण मारकर उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिये ।

**शक्तिं विनिहतां दृष्ट्वा वैराटिः क्रोधमूर्च्छितः ।**
**कालोपहतचेतास्तु कर्तव्यं नाभ्यजानत ॥१९॥**
**क्रोधसम्मूर्च्छितो राजन् वैराटिः प्रहसन्निव ।**
**गदां जग्राह संहृष्टो भीष्मस्य निधनं प्रति ॥२०॥**

अपनी शक्ति को इस प्रकार व्यर्थ हुई देख विराट-पुत्र श्वेत क्रोध से मूर्च्छित हो गये । काल ने उनकी विवेकशक्ति को नष्ट कर दिया था, अतः उन्हें अपने कर्तव्य का भान न रहा । उन्होंने हर्ष से उत्साहित हो हँसते-हँसते भीष्म को मार डालने के लिए हाथ में गदा उठा ली ।

**श्वेतः क्रोधसमाविष्टो भ्रामयित्वा तु तां गदाम् ।**
**रथे भीष्मस्य चिक्षेप यथा देवो धनेश्वरः ॥२१॥**

फिर श्वेत ने अत्यन्त क्रुद्ध हो उस गदा को आकाश में घुमाकर भीष्म के रथ पर फेंक दिया, मानो कुबेर ने गदा का प्रहार किया हो ।

**तया भीष्मनिपातिन्या स रथो भस्मसात्कृतः ।**
**सध्वजः सह सूतेन साश्वः सयुगबन्धुरः ॥२२॥**

भीष्म का वध कर डालने के लिए चलाई हुई उस गदा के आघात से ध्वज, सारथि, घोड़े, जुआ और धुरा आदि के साथ वह सारा रथ चूर-चूर हो गया ।

**ततोऽन्यं रथमास्थाय गाङ्गेयः प्रहसन्निव ।**
**शरमेकं मृत्युसमं समाधत्त दुरासदम् ॥२३॥**

तब गङ्गानन्दन भीष्म ने दूसरे रथ पर बैठकर हँसते हुए-से, मृत्यु के समान भयंकर और दुःसह एक बाण का संधान कर उसे श्वेत पर छोड़ दिया ।

**स तस्य कवचं भित्त्वा हृदयं चामितौजसः ।**
**जगाम धरणीं बाणो महाशनिरिव ज्वलन् ॥२४॥**

वह बाण महान् वज्र के समान प्रज्वलित हो उठा और अमित बलशाली श्वेत के कवच तथा हृदय को छेदकर भूमि में समा गया ।

**अस्तं गच्छन् यथाऽऽदित्यः प्रभामादाय सत्वरः ।**
**एवं जीवितमादाय श्वेतदेहाज्जगाम ह ॥२५॥**

जैसे अस्त होता हुआ सूर्य अपनी प्रभा को साथ लेकर शीघ्र ही अस्त हो जाता है, उसी प्रकार वह बाण श्वेत के शरीर से उसके प्राण लेकर चला गया ।

**गतपूर्वाह्णभूयिष्ठे तस्मिन्नहनि दारुणे ।**
**तावकानां परेषां च पुनर्युद्धमवर्तत ॥२६॥**

उस भयंकर दिन के पूर्वभाग का अधिकांश व्यतीत हो जाने पर आपके और पाण्डवों के सैनिकों में पुनः युद्ध आरम्भ हुआ ।

**श्वेतं तु निहतं दृष्ट्वा विराटस्य चमूपतिम् ।**
**कृतवर्मणा च सहितं दृष्ट्वा शल्यमवस्थितम् ।**
**शंखः क्रोधात्प्रजज्वाल हविषा हव्यवाडिव ॥२७॥**

विराट के सेनापति श्वेत को मारा गया और राजा शल्य को कृतवर्मा के साथ रथ पर बैठा हुआ देख शंख क्रोध से जल उठा, मानो अग्नि में घी की आहुति पड़ गई हो ।

**स विस्फार्य महच्चापं शक्रचापोपमं बली ।**
**अभ्यधावज्जिघांसन् वै शल्यं मद्राधिपं युधि ॥२८॥**

उस बलशाली वीर ने इन्द्रधनुष के समान अपने

विशाल धनुष को कान तक खींचकर मद्रराज शल्य को युद्ध में मार डालने की इच्छा से उनपर आक्रमण किया।

**तमापतन्तं सम्प्रेक्ष्य मत्तवारणविक्रमम्।**
**तावकानां रथाः सप्त समन्तात् पर्यवारयन् ॥२९॥**

मदमस्त गजराज के समान पराक्रम प्रकट करनेवाले शंख को धावा करते देख आपके सात रथियों ने शल्य को चारों ओर से घेर लिया।

**ते तु बाणमयं वर्षं शंखमूर्ध्नि न्यपातयन्।**
**निदाघान्तेऽनिलोद्धूता मेघा इव नगे जलम् ॥३०॥**

उन सबने शंख के मस्तक पर बाणों की वर्षा आरम्भ कर दी, मानो ग्रीष्म ऋतु के अन्त में वायु द्वारा उठाये हुए मेघ पर्वत पर जल बरसा रहे हों।

**ततः क्रुद्धो महेष्वासः सप्तभल्लैः सुतेजनैः।**
**धनूंषि तेषामाच्छिद्य ननर्द पृतनापतिः ॥३१॥**

उस समय महान् धनुर्धर सेनापति शंख ने क्रुद्ध होकर भल्ल नामक साण पर तेज किये हुए सात बाणों द्वारा उन सातों रथियों के धनुषों को काटकर गर्जना की।

**ततो भीष्मो महाबाहुर्विनद्य जलदो यथा।**
**तालमात्रं धनुर्गृह्य शंखमभ्यद्रवद् रणे ॥३२॥**

तब महाबाहु भीष्म ने मेघ के समान गर्जन करके चार हाथ लम्बा धनुष लेकर रणभूमि में शंख पर धावा किया।

**तमुद्यन्तमुदीक्ष्याथ महेष्वासं महाबलम्।**
**संत्रस्ता पाण्डवी सेना वातवेगहतेव नौः ॥३३॥**

उस समय महाधनुर्धर महाबली भीष्म को युद्ध के लिए उद्यत देख पाण्डव-सेना हवा के झोंकों से डगमग होनेवाली नौका की भाँति काँपने लगी।

**ततोऽर्जुनः संत्वरितः शंखस्यासीत् पुरः सरः।**
**भीष्माद् रक्ष्योऽयमद्येति ततो युद्धमवर्तत ॥३४॥**

यह देख अर्जुन तुरन्त ही शंख के आगे आ गये। उनके आगे आने का उद्देश्य यह था कि आज भीष्म के हाथ से शंख को बचाना चाहिए। फिर तो [अर्जुन और भीष्म का] महान् युद्ध आरम्भ हुआ।

**अथ शल्यो गदापाणिरवतीर्य महारथात्।**
**शंखस्य चतुरो वाहानहनद् भरतर्षभ ॥३५॥**

भरतश्रेष्ठ! उसी समय राजा शल्य हाथ में गदा लेकर अपने विशाल रथ से उतर पड़े और शंख पर आक्रमण कर उसके चारों घोड़ों को मार डाला।

**स हताश्वाद् रथात् तूर्णं खड्गमादाय विद्रुतः।**
**बीभत्सोश्च रथं प्राप्य पुनः शान्तिमविन्दत ॥३६॥**

घोड़ों के मारे जाने पर शंख जल्दी से तलवार हाथ में लेकर रथ से कूद पड़ा और अर्जुन के रथ पर चढ़कर उसने पुनः शान्ति की साँस ली।

**ततो भीष्मरथात् तूर्णमुत्पतन्ति पतत्रिणः।**
**यैरन्तरिक्षं भूमिश्च सर्वतः समवस्तृता ॥३७॥**

उधर भीष्म के रथ से शीघ्रतापूर्वक पंखयुक्त बाण पक्षी के समान उड़ने लगे, जिन्होंने पृथिवी और और आकाश सबको आच्छादित कर लिया।

**पाञ्चालानथ मत्स्यांश्च केकयांश्च प्रभद्रकान्।**
**भीष्मः प्रहरतां श्रेष्ठः पातयामास पत्रिभिः ॥३८॥**

योद्धाओं में श्रेष्ठ भीष्म पाञ्चाल, मत्स्य, केकय तथा प्रभद्रक वीरों को अपने बाणों से मार-मारकर गिराने लगे।

**ततः सैन्येषु भग्नेषु मथितेषु च सर्वशः।**
**प्राप्ते चास्ते दिनकरे न प्राज्ञायत किंचन ॥३९॥**

भीष्म के बाणों की मार से सारी सेना व्यथित हो उठी, व्यूह भंग हो गया तथा सूर्य अस्ताचल को चले गये। उस समय अन्धेरे में कुछ भी सूझ नहीं पड़ता था।

**भीष्मं च समुदीर्यन्तं दृष्ट्वा पार्था महाहवे।**
**अवहारमकुर्वन्त सैन्यानां भरतर्षभ ॥४०॥**

हे भरतश्रेष्ठ! उस महान् युद्ध में भीष्म का वेग अधिकाधिक प्रचण्ड होता जा रहा था, यह देख कुन्ती के पुत्रों ने अपनी सेनाओं को युद्धक्षेत्र से पीछे हटा लिया।

**इति महाभारते भीष्मपर्वणि षष्ठोऽध्यायः ॥६॥**

# सप्तमोऽध्यायः

## युधिष्ठिर की चिन्ता, श्रीकृष्ण द्वारा उन्हें आश्वासन, धृष्टद्युम्न का उत्साह और दूसरे दिन के युद्ध के लिए क्रौञ्चारुणव्यूह का निर्माण

सञ्जय उवाच

**कृतेऽवहारे सैन्यानां प्रथमे भरतर्षभ ।**
**धर्मराजस्ततस्तूर्णमभिगम्य जनार्दनम् ॥१॥**
**शुचा परमया युक्तश्चिन्तयानः पराजयम् ।**
**वार्ष्णेयमब्रवीद्राजन्दृष्ट्वा भीष्मस्य विक्रमम् ॥२॥**

**सञ्जय कहते हैं**—हे भरतश्रेष्ठ ! राजन् ! प्रथम दिन युद्ध में जब पाण्डव-सेना पीछे हटा ली गई, तब धर्मराज युधिष्ठिर तुरन्त श्रीकृष्ण के पास गये तथा अत्यन्त शोक से सन्तप्त हो भीष्म का पराक्रम देखकर अपनी पराजय के लिए चिन्ता करते हुए श्रीकृष्ण से इस प्रकार बोले—

युधिष्ठिर उवाच

**कृष्ण पश्य महेष्वासं भीष्मं भीमपराक्रमम् ।**
**शरैर्दहन्तं सैन्यं मे ग्रीष्मे कक्षमिवानलम् ॥३॥**

**युधिष्ठिर बोले**—श्रीकृष्ण ! देखिए तो, महान् धनुर्धर और भयंकर पराक्रमी भीष्म अपने बाणों द्वारा मेरी सेना को उसी प्रकार दग्ध कर रहे हैं, जैसे ग्रीष्म-ऋतु में लगी हुई आग घास-फूँस को जलाकर भस्म कर डालती है ।

**शक्यो जेतुं यमः क्रुद्धो वज्रपाणिश्च संयुगे ।**
**न तु भीष्मो महातेजाः शक्यो जेतुं महाबलः ॥४॥**

क्रोध में भरे हुए यमराज और वज्रधारी इन्द्र कदाचित् युद्ध में जीते जा सकते हैं, परन्तु महाबली, महातेजस्वी भीष्म को जीतना असम्भव है ।

**वनं यास्यामि वार्ष्णेय श्रेयो मे तत्र जीवितुम् ।**
**न त्वैतान् पृथिवीपालान् दातुं भीष्माय मृत्यवे ॥५॥**

वार्ष्णेय ! अब मैं वन को चला जाऊँगा । वहीं जीवन व्यतीत करना मेरे लिए कल्याणकारी होगा । इन नरेशों को व्यर्थ ही भीष्मरूपी मृत्यु के मुख में सौंप देने में कोई भलाई नहीं है ।

**क्षयं नीतोऽस्मि वार्ष्णेय राज्यहेतोः पराक्रमी ।**
**भ्रातरश्चैव मे वीराः कर्शिताः शरपीड़िताः ॥६॥**

वार्ष्णेय ! राज्य के लिए पराक्रम करके मैं सब प्रकार से क्षीण होता जा रहा हूँ । मेरे वीर भाई बाणों से पीड़ित होकर अत्यन्त कृश होते जा रहे हैं ।

**किं नु कृत्वा हितं मे स्याद् ब्रूहि माधव मा चिरम् ।**
**मध्यस्थमिव पश्यामि समरे सव्यसाचिनम् ॥७॥**

माधव ! शीघ्र बताइए, क्या करने से मेरा हित होगा ? सव्यसाची अर्जुन को तो मैं इस युद्ध में मध्यस्थ=उदासीन-सा देख रहा हूँ ।

**एको भीमः परं शक्त्या युध्यत्येव महाभुजः ।**
**केवलं बाहुवीर्येण क्षत्रधर्ममनुस्मरन् ॥८॥**

एकमात्र महाबाहु भीमसेन ही क्षत्रियधर्म का विचार करता हुआ केवल बाहुबल के भरोसे अपनी पूरी शक्ति लगाकर युद्ध कर रहा है ।

**नालमेष क्षयं कर्तुं परसैन्यस्य मारिष ।**
**आर्जवेनैव युद्धेन वीर वर्षशतैरपि ॥९॥**

माननीय वीर श्रीकृष्ण ! यदि इस प्रकार सरलतापूर्वक युद्ध किया जाए तो यह अकेला भीमसेन सौ वर्षों में भी शत्रु-सेना का विनाश नहीं कर सकता ।

**एकोऽस्त्रवित् सखा तेऽयं सोऽप्यस्मान् समुपेक्षते ।**
**निर्दह्यमानान् भीष्मेण द्रोणेन च महामना ॥१०॥**

केवल आपका यह सखा अर्जुन ही दिव्य अस्त्रों का ज्ञाता है, परन्तु यह भी महामना भीष्म और द्रोण के द्वारा दग्ध होते हुए हम लोगों की उपेक्षा कर रहा है ।

**स त्वं पश्य महाभाग योगेश्वर महारथम् ।**
**भीष्मं यः शमयेत् संख्ये दावाग्निं जलदो यथा ॥११॥**

महाभाग योगेश्वर ! आप ऐसे किसी महारथी को ढूँढिए जो संग्रामभूमि में भीष्म को उसी प्रकार शान्त कर दे, जैसे बादल दावानल को बुझा देता है ।

**तव प्रसादाद् गोविन्द पाण्डवा निहतद्विषः ।**
**स्वराज्यमनुसम्प्राप्ता मोदिष्यन्ते सबान्धवाः ॥१२॥**

हे गोविन्द ! आपकी कृपा से ही पाण्डव अपने

शत्रुओं को मारकर तथा स्वराज्य प्राप्त करके बन्धु-बान्धवोंसहित सुखी होंगे ।

कृष्ण उवाच

**मा शुचो भरतश्रेष्ठ न त्वं शोचितुमर्हसि ।**
**यस्य ते भ्रातरः शूराः सर्वलोकेषु धन्विनः ।।१३।।**
**अहं च प्रियकृद्राजन् सात्यकिश्च महायशाः ।**
**विराटद्रुपदौ चेमौ धृष्टद्युम्नश्च पार्षतः ।।१४।।**
**तथैव सबलाश्चेमे राजानो राजसत्तम ।**
**त्वत्प्रसादं प्रतीक्षन्ते त्वद्भक्ताश्च विशाम्पते ।।१५।।**

**श्रीकृष्ण बोले**—हे भरतश्रेष्ठ ! तुम शोक मत करो । इस प्रकार शोक करना तुम्हारे योग्य नहीं है । तुम्हारे शूरवीर भाई समस्त लोकों में विख्यात धनुर्धर हैं । राजन् ! मैं भी तुम्हारा प्रिय करनेवाला ही हूँ । नृपश्रेष्ठ ! महायशस्वी सात्यकि, विराट्, द्रुपद, द्रुपदपुत्र धृष्टद्युम्न तथा सेनासहित ये सम्पूर्ण नरेश आपके कृपाप्रसाद की प्रतीक्षा करते हैं । महाराज ! ये सब-के-सब आपके भक्त हैं ।

**एष ते पार्षतो नित्यं हितकामः प्रिये रतः ।**
**सैनापत्यमनुप्राप्तो धृष्टद्युम्नो महाबलः ।।१६।।**

ये द्रुपदपुत्र महाबली धृष्टद्युम्न भी सदा आपका हित चाहते हैं तथा आपके प्रिय-साधन में तत्पर होकर ही इन्होंने प्रधान सेनापति का गुरुतर भार सँभाला है ।

**शिखण्डी च महाबाहो भीष्मस्य निधनं किल ।**
**करिष्यति न सन्देहो नृपाणां युधि पश्यताम् ।।१७।।**

महाबाहो ! यह शिखण्डी, समस्त राजाओं के देखते-देखते भीष्म का वध कर डालेगा, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है ।

सञ्जय उवाच

**एतत् श्रुत्वा ततो राजा धृष्टद्युम्नं महारथम् ।**
**अब्रवीत् समितौ तस्यां वासुदेवस्य शृण्वतः ।।१८।।**

**सञ्जय कहते हैं**—यह सुनकर धर्मराज युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण के सुनते हुए ही उस सभा में महारथी धृष्टद्युम्न से कहा—

युधिष्ठिर उवाच

**धृष्टद्युम्न निबोधेदं यत् त्वां वक्ष्यामि मारिष ।**
**नातिक्रम्यं भवेत् तच्च वचनं मम भाषितम् ।।१९।।**

**युधिष्ठिर ने कहा**—आर्य धृष्टद्युम्न ! मैं तुमसे जो कुछ कहता हूँ उसे ध्यानपूर्वक सुनो । मेरे कहे हुए वचनों का तुम्हें उल्लंघन नहीं करना चाहिए ।

**भवान् सेनापतिर्मह्यं वासुदेवेन सम्मतः ।**
**स त्वं पुरुषशार्दूल विक्रम्य जहि कौरवान् ।।२०।।**

तुम मेरे सेनापति हो और श्रीकृष्ण के समान पराक्रमी हो । पुरुषसिंह ! तुम पराक्रम करके कौरवों का नाश करो ।

**अहं च तेऽनुयास्यामि भीमः कृष्णश्च मारिष ।**
**माद्रीपुत्रौ च सहितौ द्रौपदेयाश्च दंशिताः ।।२१।।**

हे नरश्रेष्ठ ! मैं, भीमसेन, श्रीकृष्ण, माद्रीपुत्र नकुल और सहदेव तथा द्रौपदी के पाँचों पुत्र कवच धारण करके तुम्हारे पीछे-पीछे चलेंगे ।

धृष्टद्युम्न उवाच

**अहं भीष्मं कृपं द्रोणं तथा शल्यं जयद्रथम् ।**
**सर्वानद्य रणे दृप्तान् प्रतियोत्स्यामि पार्थिव ।।२२।।**

**धृष्टद्युम्न बोला**—पृथिवीपते ! आज युद्धभूमि में मैं भीष्म, कृपाचार्य, द्रोणाचार्य, शल्य तथा जयद्रथ—इन समस्त अभिमानी योद्धाओं का सामना करूँगा ।

सञ्जय उवाच

**तमब्रवीत् ततः पार्थः पार्षतं पृतनापतिम् ।**
**व्यूहः क्रौञ्चारुणो नाम सर्वशत्रुनिबर्हणः ।।२३।।**

**सञ्जय कहते हैं**—धृष्टद्युम्न के युद्ध के लिए उद्यत होने पर युधिष्ठिर ने सेनापति द्रुपदपुत्र से पुनः इस प्रकार कहा—"सेनापते ! क्रौञ्चारुण नामक व्यूह समस्त शत्रुओं का संहार करनेवाला है ।

**तं यथावत् प्रतिव्यूह परानीकविनाशनम् ।**
**अदृष्टपूर्वं राजानः पश्यन्तु कुरुभिः सह ।।२४।।**

"शत्रुसेना का विनाश करनेवाले उस क्रौञ्चारुण नामक व्यूह का तुम यथावत् रूप से निर्माण करो । आज समस्त राजा कौरवों के साथ उस अदृष्टपूर्व व्यूह को अपनी आँखों से देखें ।"

**यथोक्तः स नृदेवेन व्यूहमार्गविचक्षणः ।**
**प्रभाते सर्वसैन्यानामग्रे चक्रे धनञ्जयम् ।।२५।।**

नरदेव युधिष्ठिर के पूर्वोक्त बात कहने पर व्यूहरचना में कुशल धृष्टद्युम्न ने प्रातःकाल [सूर्योदय

से पूर्व] ही समस्त सेनाओं का व्यूह निर्माण किया। उन्होंने सबसे आगे अर्जुन को खड़ा किया।

**शिरोऽभूद् द्रुपदो राजन् महत्या सेनया वृतः।**
**कुन्तिभोजश्च चैद्यश्च चक्षुरासीज्जनेश्वरौ ॥२६॥**
**दाशार्णकाः प्रभद्राश्च दाशेरकगणैः सह।**
**अनूपकाः किराताश्च ग्रीवायां भरतर्षभ ॥२७॥**

राजन्! अपनी विशाल सेना के साथ राजा द्रुपद उस व्यूह के सिर के स्थान पर थे। कुन्तिभोज और धृष्टकेतु—ये दोनों नरेश नेत्रों के स्थान पर प्रतिष्ठित हुए। हे भरतश्रेष्ठ! दाशार्णक, दाशेरक समूहों के साथ प्रभद्रक, अनूपक और किरातगण गर्दन के स्थान में खड़े किये गये।

**पटच्चरैश्च पौण्ड्रैश्च राजन् पौरवकैस्तथा।**
**निषादैः सहितश्चापि पृष्ठमासीद् युधिष्ठिरः।**
**पक्षौ तु भीमसेनश्च धृष्टद्युम्नश्च पार्षतः ॥२८॥**

पटच्चर, पौण्ड्र, पौरव तथा निषादों के साथ स्वयं राजा युधिष्ठिर पृष्ठभाग में स्थित हुए। भीमसेन और धृष्टद्युम्न क्रौञ्चपक्षी के दोनों पंखों के स्थान पर नियुक्त किये गये।

**एवमेनं महाव्यूहं व्यूह्य भारत पाण्डवाः।**
**सूर्योदयं त इच्छन्तः स्थिता युद्धाय दंशिताः ॥२९॥**

हे भारत! इस प्रकार पाण्डव क्रौञ्चारुण नामक महाव्यूह की रचना करके सूर्योदय की प्रतीक्षा करते हुए कवच आदि से सुसज्जित हो युद्ध के लिए खड़े हो गये।

**इति महाभारते भीष्मपर्वणि सप्तमोऽध्यायः ॥७॥**

# अष्टमोऽध्यायः

## दूसरे दिन का युद्ध, भीष्म और अर्जुन, धृष्टद्युम्न तथा द्रोणाचार्य का युद्ध

सञ्जय उवाच

**क्रौञ्चं दृष्ट्वा ततो भीष्मस्तव पुत्राश्च मारिष।**
**अव्यूहन्त महाव्यूहं पाण्डूनां प्रतिबाधनम् ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—धृष्टद्युम्न द्वारा निर्मित उस क्रौञ्चव्यूह को देखकर भीष्म और आपके पुत्रों ने मिलकर अपनी सेना का महान् व्यूह बनाया, जो पाण्डव सैनिकों को बाधा पहुँचाने में समर्थ था।

**ततस्ते तावकाः सर्वे हृष्टा युद्धाय भारत।**
**दध्मुः शंखान् मुदा युक्ताः सिंहनादांश्च नादयन् ॥२॥**

भारत! व्यूह निर्मित हो जाने पर आपकी सेना के समस्त सैनिक हर्ष से उल्लसित हो प्रसन्नतापूर्वक शंख बजाने और सिंहनाद करने लगे।

**ततो युद्धं समभवत् तुमुलं लोमहर्षणम्।**
**तावकानां परेषां च व्यतिषक्तरथद्विपम् ॥३॥**

फिर तो आपके और पाण्डवों के सैनिकों में रोमाञ्चकारी घमासान युद्ध होने लगा। उसमें उभय पक्ष के रथ और हाथी एक-दूसरे के साथ जूझ गये।

**तथा प्रवृत्ते संग्रामे धनुरुद्यम्य दंशितः।**
**अभिपत्य महाबाहुर्भीष्मो भीमपराक्रमः ॥४॥**
**सौभद्रे भीमसेने च धृष्टद्युम्ने च पार्षते।**
**ववर्ष शरवर्षाणि वृद्धः कुरुपितामहः ॥५॥**

इस प्रकार युद्ध आरम्भ हो जाने पर भयंकर पराक्रमी तथा कुरुकुल के प्रभावशाली वृद्ध पितामह महाबाहु भीष्म कवच बाँधे और धनुष उठाये सहसा आगे बढ़े और अभिमन्यु, भीमसेन तथा द्रुपदकुमार धृष्टद्युम्न पर बाणों की वर्षा करने लगे।

**अभिद्यत ततो व्यूहस्तस्मिन् वीरसमागमे।**
**सर्वेषामेव सैन्यानामासीद् व्यतिकरो महान् ॥६॥**

वीरों के इस संघर्ष में सेनाओं का व्यूह भंग हो गया तथा सभी सैनिकों का आपस में महान् सम्मिश्रण हो गया।

**सादिनो ध्वजिनश्चैव हताः प्रवरवाजिनः।**
**विप्रद्रुतरथानीकाः समपद्यन्त पाण्डवाः ॥७॥**

घुड़सवार, ध्वजा धारण करनेवाले सैनिक तथा उत्तम घोड़े मारे गये। पाण्डवों की रथ-सेना मैदान छोड़कर भागने लगी।

**अर्जुनस्तु नरव्याघ्रो दृष्ट्वा भीष्मं महारथम्।**
**वार्ष्णेयमब्रवीत् क्रुद्धो याहि यत्र पितामहः ॥८॥**

**एष भीष्मः सुसंक्रुद्धो वार्ष्णेय मम वाहिनीम् ।**
**नाशयिष्यति सुव्यक्तं दुर्योधनहिते रतः ॥६॥**

तब नरश्रेष्ठ अर्जुन ने महारथी भीष्म को देखकर श्रीकृष्ण से क्रुद्ध होकर कहा—"वार्ष्णेय ! जहाँ पितामह भीष्म हैं, वहाँ चलिए। अन्यथा ये भीष्म अत्यन्त क्रोध में भरकर निश्चय ही मेरी सारी सेना का विनाश कर डालेंगे, क्योंकि इस समय ये दुर्योधन के हित में तत्पर हैं।"

**तमब्रवीद् वासुदेवो यत्तो भव धनञ्जय ।**
**एष त्वां प्रापयिष्यामि पितामहरथं प्रति ॥१०॥**

तब श्रीकृष्ण ने कहा—"धनञ्जय ! सावधान हो जाओ। मैं तुम्हें अभी भीष्म के रथ के समीप पहुँचाये देता हूँ।"

**एवमुक्त्वा ततः शौरी रथं तं लोकविश्रुतम् ।**
**प्रापयामास भीष्मस्य रथं प्रति जनेश्वर ॥११॥**

जनेश्वर ! ऐसा कहकर श्रीकृष्ण ने उस विश्व-विख्यात रथ को भीष्म के रथ के समीप पहुँचा दिया।

**तमापतन्तं वेगेन प्रभिन्नमिव वारणम् ।**
**सहसा प्रत्युदीयाय भीष्मः शान्तनवोऽर्जुनम् ॥१२॥**

मद की धारा वहानेवाले गजराज की भाँति उन्हें वेग से आते देख शान्तनुनन्दन भीष्म सहसा अर्जुन की ओर बढ़े।

**भीष्मस्तु रथिनां श्रेष्ठो राजन् विव्याध पाण्डवम् ।**
**अशीत्या निशितैर्बाणैस्ततोऽक्रोशन्त तावकाः ॥१३॥**

राजन् ! रथियों में श्रेष्ठ भीष्म ने पाण्डुनन्दन अर्जुन को अस्सी तीखे बाण मारकर बींध डाला। यह देखकर आपके सैनिक हर्षित होकर कोलाहल करने लगे।

**तेषां तु निनदं श्रुत्वा सहितानां प्रहृष्टवत् ।**
**प्रविवेश ततो मध्यं नरसिंहः प्रतापवान् ॥१४॥**
**तेषां महारथानां स मध्यं प्राप्य धनञ्जयः ।**
**चिक्रीड धनुषा राजँल्लक्ष्यं कृत्वा महारथान् ॥१५॥**

उन समस्त कौरवों का हर्षनाद सुनकर प्रतापी पुरुषसिंह अर्जुन ने आपकी सेना के भीतर प्रवेश किया। राजन् ! उन महारथियों के मध्य में पहुँचकर अर्जुन उन सबको अपने बाणों का निशाना बनाकर धनुष से खेल करने लगे।

**ततो दुर्योधनो राजा भीष्ममाह जनेश्वरः ।**
**पीड्यमानं स्वकं सैन्यं दृष्ट्वा पार्थेन संयुगे ॥१६॥**

तब प्रजापालक राजा दुर्योधन ने अर्जुन के द्वारा युद्ध में अपनी सेना को पीड़ित हुई देख भीष्मजी से कहा—

**एष पाण्डुसुतस्तात मूलं नः परिकृन्तति ।**
**स तथा कुरु गाङ्गेय यथा हन्येत फाल्गुनः ॥१७॥**

"तात ! ये पाण्डुपुत्र अर्जुन हम लोगों का मूलोच्छेद कर रहे हैं। गङ्गानन्दन ! आप ऐसा प्रयत्न कीजिए जिससे अर्जुन मार डाले जाएँ।"

**एवमुक्तस्ततो राजन् पिता देवव्रतस्तव ।**
**धिक् क्षात्रधर्ममित्युक्त्वा प्रायात् पार्थरथं प्रति ॥१८॥**

हे राजन् ! दुर्योधन के ऐसा कहने पर आपके पितृ-तुल्य भीष्मजी 'क्षत्रिय-धर्म को धिक्कार है'—ऐसा कहकर अर्जुन के रथ की ओर चले।

**उभौ श्वेतहयौ राजन् संसक्तौ प्रेक्ष्य पार्थिवाः ।**
**सिंहनादान् भृशं चक्रुः शंखान् दध्मुश्च मारिष ॥१९॥**

महाराज ! उन दोनों के रथों में श्वेत घोड़े जुते हुए थे। आर्य ! उन्हें एक-दूसरे से भिड़े हुए देख सभी भूपाल जोर-जोर से सिंहनाद करने और शंख बजाने लगे।

**द्रौणिर्दुर्योधनश्चैव विकर्णश्च तवात्मजः ।**
**परिवार्य रणे भीष्मं स्थिता युद्धाय मारिष ॥२०॥**

आर्य ! उस समय अश्वत्थामा, दुर्योधन और आपका पुत्र विकर्ण—ये सभी रणक्षेत्र में भीष्म को घेरकर युद्ध के लिए खड़े थे।

**तथैव पाण्डवाः सर्वे परिवार्य धनञ्जयम् ।**
**स्थिता युद्धाय महते ततो युद्धमवर्तत ॥२१॥**

इसी प्रकार समस्त पाण्डव भी अर्जुन को सब ओर से घेरकर महायुद्ध के लिए वहाँ डटे हुए थे, अतः उनमें भारी युद्ध छिड़ गया।

**गाङ्गेयस्तु रणे पार्थमानर्च्छन्नवभिः शरैः ।**
**तमर्जुनः प्रत्यविध्यद् दशभिर्मर्मभेदिभिः ॥२२॥**

गङ्गानन्दन भीष्म ने उस रणक्षेत्र में नौ बाणों से अर्जुन को गहरी चोट पहुँचायी। तब अर्जुन ने भी उन्हें दस मर्मभेदी बाणों द्वारा बींध डाला।

**उभौ परमसंहृष्टावुभौ युद्धाभिनन्दिनौ ।**
**निर्विशेषमयुध्येतां कृतप्रतिकृतैषिणौ ॥२३॥**

वे दोनों वीर अत्यन्त हर्ष में भरकर युद्ध का अभिनन्दन करनेवाले थे। दोनों ही एक-दूसरे के किये हुए प्रहार का प्रतिकार करते हुए समानभाव से युद्ध करने लगे।

**भीष्मचापविमुक्तानि शरजालानि संघशः ।**
**शीर्यमाणान्यदृश्यन्त भिन्नान्यर्जुनसायकैः ॥२४॥**

भीष्म के धनुष से छूटे हुए सायकों के समूह अर्जुन के बाणों से छिन्न-भिन्न होकर इधर-उधर बिखरे दिखाई देते थे।

**तथैवार्जुनमुक्तानि शरजालानि सर्वशः ।**
**गाङ्गेयशरनुन्नानि प्रापतन्त महीतले ॥२५॥**

इसी प्रकार अर्जुन के छोड़े हुए बाणसमूह गङ्गा-नन्दन भीष्म के बाणों से छिन्न-भिन्न होकर पृथिवी पर सब ओर पड़े हुए थे।

**अर्जुनः पञ्चविंशत्या भीष्ममार्च्छच्छितैः शरैः ।**
**भीष्मोऽपि समरे पार्थं विव्याध निशितैः शरैः ॥२६॥**

अर्जुन ने पच्चीस तीखे बाण मारकर भीष्म को पीड़ित कर दिया, फिर भीष्मजी ने भी युद्धक्षेत्र में अपने तीखे सायकों द्वारा अर्जुन को बींध दिया।

**ततः क्रुद्धो महाराज भीष्मः प्रहरतां वरः ।**
**वासुदेवं त्रिभिर्बाणैराजघान महोरसि ॥२७॥**

महाराज ! फिर प्रहार करनेवालों में श्रेष्ठ भीष्म ने कुपित होकर तीन बाणों से श्रीकृष्ण की छाती में गहरी चोट पहुँचाई।

**ततोऽर्जुनो भृशं क्रुद्धो निर्विद्धं प्रेक्ष्य माधवम् ।**
**सारथिं कुरुवृद्धस्य निर्बिभेद शितैः शरैः ॥२८॥**

श्रीकृष्ण को घायल हुआ देख अर्जुन अत्यन्त कुपित हो उठे और उन्होंने तीखे सायकों द्वारा कुरुकुलवृद्ध भीष्म के सारथि को विदीर्ण कर डाला।

**यतमानौ तु तौ वीरावन्योन्यस्य वधं प्रति ।**
**न शक्नुतां तदान्योन्यमभिसंधातुमाहवे ॥२९॥**

इस प्रकार वे दोनों वीर एक-दूसरे के वध के लिए पूरा प्रयत्न कर रहे थे, तो भी वे रणक्षेत्र में परस्पर घातक प्रहार करने में सफल न हो सके।

**अन्तरं च प्रहारेषु तर्कयन्तौ परस्परम् ।**
**राजन्नन्तरमार्गस्थौ स्थितावास्तां मुहुर्मुहुः ॥३०॥**

राजन् ! वे दोनों ही एक-दूसरे के प्रहारों में छिद्र ढूँढने के लिए सतर्क थे। वे बारम्बार छिद्रान्वेषण के मार्ग में स्थित हो छिद्र देखने में संलग्न रहते थे।

**न तयोर्विवरं कश्चिद् रणे पश्यति भारत ।**
**धर्मे स्थितस्य हि यथा न कश्चिद् वृजिनं क्वचित् ॥३१**

भरतनन्दन ! जैसे कोई धार्मिक मनुष्य में कहीं कोई पाप नहीं देख पाता, उसी प्रकार कोई भी रण-भूमि में उन दोनों योद्धाओं का छिद्र नहीं देख पाता था।

**उभौ च शरजालेन तावदृश्यौ बभूवतुः ।**
**प्रकाशौ च पुनस्तूर्णं बभूवतुरुभौ रणे ॥३२॥**

दोनों ही वीर रणक्षेत्र में एक-दूसरे के बाण-समूहों से आच्छादित होकर अदृश्य हो जाते और उन्हें छिन्न-भिन्न करके शीघ्र ही प्रकट हो जाते थे।

**न हि शक्यो रणे जेतुं भीष्मः पार्थेन धीमता ।**
**सधनुः सरथः साश्वः प्रवपन् सायकान् रणे ॥३३॥**

बुद्धिमान् पार्थ युद्धभूमि में भीष्म को जीतने में असमर्थ थे, क्योंकि वे समरभूमि में घोड़े और धनुष तथा रथसहित उपस्थित हो बाणों को बीज की भाँति बो रहे थे।

**तथैव पाण्डवं युद्धे देवैरपि दुरासदम् ।**
**न विजेतुं रणे भीष्म उत्सहेत धनुर्धरम् ॥३४॥**

उसी प्रकार भीष्म भी युद्ध में देवताओं के लिए भी दुर्जय गाण्डीवधारी पाण्डुपुत्र अर्जुन को जीतने में समर्थ नहीं हो सके।

**त्वदीयास्तु तदा योधाः पाण्डवेयाश्च भारत ।**
**अन्योन्यं समरे जघ्नुस्तयोस्तत्र पराक्रमे ॥३५॥**

भारत ! उस समय वहाँ उन दोनों वीरों के पराक्रम करते समय युद्धभूमि में आपके और पाण्डव-पक्ष के योद्धा भी एक-दूसरे को मार रहे थे।

**वर्तमाने तथा घोरे तस्मिन् युद्धे सुदारुणे ।**
**द्रोणपाञ्चाल्ययो राजन् महानासीत् समागमः ॥३६॥**

राजन् ! जहाँ एक ओर इस प्रकार भयानक व अत्यन्त दारुण युद्ध चल रहा था, वहीं दूसरी ओर

द्रोणाचार्य और धृष्टद्युम्न में बहुत घमासान युद्ध छिड़ा हुआ था।

**द्रोणस्तु निशितैर्बाणैर्धृष्टद्युम्नमविध्यत।**
**सारथिं चास्य भल्लेन रथनीडादपातयत् ॥३७॥**

द्रोणाचार्य ने अपने तीखे बाणों द्वारा धृष्टद्युम्न को घायल कर दिया और एक भल्ल के द्वारा उनके सारथि को मारकर रथ की बैठक से नीचे गिरा दिया।

**तथास्य चतुरो वाहाँश्चतुर्भिः सायकोत्तमैः।**
**पातयामास संक्रुद्धो धृष्टद्युम्नस्य मारिष ॥३८॥**

आर्य! क्रोध में भरे हुए द्रोणाचार्य ने चार उत्तम सायकों से धृष्टद्युम्न के चारों चतुर घोड़ों को भी मार डाला।

**धृष्टद्युम्नस्ततो द्रोणं नवत्या निशितैः शरैः।**
**विव्याध प्रहसन् वीरस्तिष्ठ तिष्ठेति चाब्रवीत् ॥३९॥**

तब धृष्टद्युम्न ने भी नब्बे तीखे बाणों से द्रोणाचार्य को घायल कर दिया और कहा—"खड़े रहो, खड़े रहो।"

**ततः पुनरमेयात्मा भारद्वाजः प्रतापवान्।**
**शरैः प्रच्छादयामास धृष्टद्युम्नममर्षणम् ॥४०॥**

तब तो अमेय आत्मबल से सम्पन्न प्रतापी द्रोणाचार्य ने पुनः अमर्षशील धृष्टद्युम्न को अपने बाणों से ढक दिया।

**आददे च शरं घोरं पार्षतान्तचिकीर्षया।**
**शक्राशनिसमस्पर्शं कालदण्डमिवापरम् ॥४१॥**

तत्पश्चात् धृष्टद्युम्न का काम तमाम कर डालने की इच्छा से उन्होंने द्वितीय कालदण्ड के समान एक भयंकर बाण हाथ में लिया, जिसका स्पर्श इन्द्र के वज्र के समान कठोर था।

**तं च दीप्तं शरं घोरमायान्तं मृत्युमात्मनः।**
**चिच्छेद शरवृष्टिं च भारद्वाजे मुमोच ह ॥४२॥**

अपने ऊपर मृत्यु बनकर आते हुए उस भयंकर तेजस्वी बाण को देखकर धृष्टद्युम्न ने तत्काल ही उसे काट गिराया और द्रोणाचार्य पर बाण-वृष्टि आरम्भ कर दी।

**ततः शक्तिं महावेगां स्वर्णवैदूर्यभूषिताम्।**
**द्रोणस्य निधनाकांक्षी चिक्षेप स पराक्रमी ॥४३॥**

तत्पश्चात् द्रोणाचार्य की मृत्यु चाहनेवाले पराक्रमशाली धृष्टद्युम्न ने उनपर सुवर्ण और वैदूर्यमणि से भूषित अत्यन्त वेगशाली शक्ति चलाई।

**तामापतन्तीं सहसा शक्तिं कनकभूषिताम्।**
**त्रिधा चिच्छेद समरे भारद्वाजो हसन्निव ॥४४॥**

उस सुवर्णभूषित शक्ति को सहसा अपनी ओर आते देख द्रोणाचार्य ने युद्धभूमि में हँसते-हँसते उसके तीन टुकड़े कर दिये।

**शक्तिं विनिहतां दृष्ट्वा धृष्टद्युम्नः प्रतापवान्।**
**ववर्ष शरवर्षाणि द्रोणं प्रति जनेश्वर ॥४५॥**

राजन्! अपनी शक्ति को नष्ट हुई देख प्रतापी धृष्टद्युम्न ने द्रोणाचार्य पर पुनः बाणों की वर्षा आरम्भ कर दी।

**शरवर्षं ततस्तत् तु संनिवार्य महायशाः।**
**द्रोणो द्रुपदपुत्रस्य मध्ये चिच्छेद कार्मुकम् ॥४६॥**

तब महायशस्वी द्रोणाचार्य ने उस शर-वृष्टि का निवारण करके द्रुपदपुत्र के धनुष को बीच में से काट डाला।

**स च्छिन्नधन्वा विरथो हताश्वो हतसारथिः।**
**गदापाणिरवारोहत् ख्यापयन् पौरुषं महत् ॥४७॥**
**तामस्य विशिखैस्तूर्णं पातयामास भारत।**
**रथादनवरूढस्य तदद्भुतमिवाभवत् ॥४८॥**

इस प्रकार धनुष कट जाने और सारथि तथा घोड़ों के मारे जाने पर रथहीन हुए धृष्टद्युम्न हाथ में गदा लेकर रथ से नीचे उतरने लगे। हे भारत! इतने में ही अपने महान् पौरुष का परिचय देते हुए द्रोणाचार्य ने तुरन्त ही बाण मारकर रथ से उतरते-उतरते ही उनकी गदा को भी काट डाला। वह एक अद्भुत-सी घटना हुई।

**ततः स विपुलं चर्म शतचन्द्रं च भानुमत्।**
**खड्गं च विपुलं दिव्यं प्रगृह्य सुभुजोगं बली ॥४९॥**
**अभिदुद्राव वेगेन द्रोणस्य वधकाङ्क्षया।**
**आमिषार्थी यथा सिंहो वने मत्तमिव द्विपम् ॥५०॥**

तब सुन्दर भुजाओंवाले शक्तिशाली वीर धृष्टद्युम्न ने चन्द्राकार सौ फुल्लियों से सुशोभित तेजस्वी और विस्तृत ढाल तथा दिव्य एवं विशाल खड्ग हाथ में लेकर द्रोण का वध करने की इच्छा से

उनपर वेगपूर्वक आक्रमण किया। ठीक वैसे ही जैसे मांस चाहनेवाला सिंह वन में किसी मतवाले हाथी पर धावा करता है।

**तत्राद्भुतमपश्याम भारद्वाजस्य पौरुषम्।**
**लाघवं चास्त्रयोगं च बलं बाह्वोश्च भारत ॥५१॥**

हे भारत! उस समय हमने वहाँ द्रोणाचार्य का अद्‌भुत हस्तलाघव, अस्त्र-प्रयोग, बाहुबल और पुरुषार्थ देखा।

**यदेनं शरवर्षेण वारयामास पार्षतम्।**
**न शशाक ततो गन्तुं बलवानपि संयुगे ॥५२॥**

उन्होंने अपने बाणों की वर्षा से द्रुपदकुमार धृष्टद्युम्न को सहसा आगे बढ़ने से रोक दिया, अतः वे बलवान् होने पर भी युद्ध में द्रोणाचार्य के पास तक न पहुँच सके।

**निवारितस्तु द्रोणेन धृष्टद्युम्नो महारथः।**
**न्यवारयच्छरौघाँस्ताँश्चर्मणा कृतहस्तवत् ॥५३॥**

द्रोणाचार्य द्वारा रोके गये महारथी धृष्टद्युम्न सिद्धहस्त वीर की भाँति अपनी ढाल से ही उनके बाणसमूहों का निवारण करने लगे।

**ततो भीमो महाबाहुः सहसाभ्यपतद् बली।**
**साहाय्यकारी समरे पार्षतस्य महात्मनः ॥५४॥**

उसी समय बलवान् महाबाहु भीमसेन सहसा युद्धक्षेत्र में महामना धृष्टद्युम्न की सहायता करने के लिए आ पहुँचे।

**स द्रोणं निशितैर्बाणै राजन् विव्याध सप्तभिः।**
**पार्षतं च रथं तूर्णं स्वकमारोहयत् तदा ॥५५॥**

राजन्! उन्होंने सात तीखे बाणों द्वारा द्रोणाचार्य को घायल कर दिया तथा द्रुपदपुत्र धृष्टद्युम्न को तुरन्त ही अपने रथ पर चढ़ा लिया।

**ततो दुर्योधनो राजन् भानुमन्तमनोदयत्।**
**सैन्येन महता युक्तं भारद्वाजस्य रक्षणे ॥५६॥**

महाराज! तब दुर्योधन ने विशाल सेना से युक्त भानुमान् को द्रोणाचार्य की रक्षा के लिए प्रेरित किया।

**ततः सा महती सेना कलिङ्गानां जनेश्वर।**
**भीममभ्युद्ययौ तूर्णं तव पुत्रस्य शासनात् ॥५७॥**

नरेश्वर! तब आपके पुत्र की आज्ञा से कलिङ्ग-देशीय वीरों की वह विशाल सेना तुरन्त ही भीमसेन के सम्मुख आ पहुँची।

**ततः प्रववृते युद्धं तुमुलं लोमहर्षणम्।**
**कलिङ्गानां च समरे भीमस्य च महात्मनः ॥५८॥**

फिर तो रणभूमि में कलिङ्ग-देशीय योद्धाओं और महामनस्वी भीमसेन का अत्यन्त भयंकर तथा रोमाञ्चकारी युद्ध होने लगा।

**इति महाभारते भीष्मपर्वणि अष्टमोऽध्यायः ॥८॥**

# नवमोऽध्यायः

## भीमसेन द्वारा शक्रदेव, भानुमान् तथा केतुमान् का वध और उनके बहुत-से सैनिकों का संहार

सञ्जय उवाच

**कलिङ्गस्तु महेष्वासः पुत्रश्चास्य महारथः।**
**शक्रदेव इति ख्यातो जघ्नतुः पाण्डवं शरैः ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाधनुर्धर कलिङ्गराज तथा शक्रदेव नाम से विख्यात उसका महारथी पुत्र—दोनों मिलकर पाण्डुनन्दन भीमसेन पर बाणों का प्रहार करने लगे।

**शक्रदेवस्तु समरे विसृजन् सायकान् बहून्।**
**अश्वाञ्जघान समरे भीमसेनस्य सायकैः ॥२॥**

शक्रदेव ने रणभूमि में बहुत-से सायकों की वर्षा करते हुए उन सायकों द्वारा भीमसेन के घोड़ों को मार डाला।

**हताश्वे तु रथे तिष्ठन् भीमसेनो महाबलः।**
**शक्रदेवाय चिक्षेप सर्वशैक्यायसीं गदाम् ॥३॥**

मृत घोड़ोंवाले रथ पर खड़े हुए महाबली भीमसेन ने शक्रदेव को लक्ष्य करके पूर्णरूप से लोहे के सारतत्त्व से बनी हुई अपनी गदा चलाई।

**स तया निहतो राजन् कलिङ्गतनयो रथात्।**
**सध्वजः सह सूतेन जगाम धरणीतलम् ॥४॥**

राजन्! उस गदा की चोट खाकर कलिङ्ग-

राजकुमार प्राणशून्य हो अपने सारथि और ध्वज के साथ रथ से नीचे भूमि गिर पर पड़ा।

**हतमात्मसुतं दृष्ट्वा कलिङ्गानां जनाधिपः।**
**रथैरनेकसाहस्रैर्भीमस्यावारयद् दिशः ॥५॥**

अपने पुत्र को मारा गया देख कलिङ्गराज ने बहुत-से रथों के द्वारा भीमसेन की सम्पूर्ण दिशाओं को रोक दिया।

**प्रगृह्य च शरं घोरं सविषं सर्पसदृशम्।**
**प्राहिणोद् भीमसेनाय वधाकांक्षी जनेश्वर ॥६॥**

जनेश्वर! फिर सर्प के समान एक विषैला एवं भयंकर बाण हाथ में लेकर भीमसेन का वध करने की इच्छा से उनपर चला दिया।

**तमापतन्तं वेगेन प्रेरितं निशितं शरम्।**
**भीमसेनो द्विधा राजँश्चिच्छेद विपुलासिना ॥७॥**

राजन्! भीमसेन ने अपने विशाल खड्ग से उसके वेगपूर्वक चलाये हुए तीखे बाण के दो टुकड़े कर दिये।

**कलिङ्गस्तु ततः क्रुद्धो भीमसेनाय संयुगे।**
**तोमरान् प्राहिणोच्छीघ्रं चतुर्दश शिलाशितान् ॥८॥**

तब कलिङ्गराज ने युद्धभूमि में अत्यन्त कुपित हो भीमसेन पर तुरन्त ही चौदह तोमरों का प्रहार किया, जिन्हें साण पर चढ़ाकर तेज किया गया था।

**तानप्राप्तान् महाबाहुः खगतानेव पाण्डवः।**
**चिच्छेद सहसा राजन्नसम्भ्रान्तो वरासिना ॥९॥**

राजन्! अपने पास पहुँचने से पूर्व ही महाबाहु पाण्डुकुमार ने बिना किसी घबराहट के अपनी श्रेष्ठ तलवार से सहसा उन्हें आकाश में ही काट डाला।

**भानुमाँस्तु ततो भीमं शरवर्षेण च्छादयन्।**
**ननाद बलवन्नादं नादयानो नभस्तलम् ॥१०॥**

यह देख भानुमान् ने अपने बाणों की वर्षा से भीमसेन को आच्छादित करके आकाश को निनादित करते हुए बड़े जोर की गर्जना की।

**न च तं ममृषे भीमः सिंहनादं महाहवे।**
**ततः शब्देन महता विननाद महास्वनः।**
**तेन नादेन वित्रस्ता कलिङ्गानां वरूथिनी ॥११॥**

भीमसेन उस महासमर में भानुमान् की वह गर्जना न सह सके। उन्होंने और भी अधिक जोर से सिंह के समान दहाड़ना आरम्भ किया। उनकी उस गर्जना से कलिङ्गों की वह विशाल वाहिनी संत्रस्त हो उठी।

**न भीमं समरे मेने मानुषं भरतर्षभ।**
**ततो भीमो महाबाहुर्नर्दित्वा विपुलं स्वनम् ॥१२॥**
**सासिर्वेगवदाप्लुत्य दन्ताभ्यां वारणोत्तमम्।**
**आरुरोह ततो मध्यं नागराजस्य मारिष ॥१३॥**

भरतश्रेष्ठ! उस सेना के सैनिकों ने भीमसेन को युद्ध में मनुष्य नहीं, कोई देवता समझा। आर्य! महाबाहु भीमसेन जोर-जोर से गर्जना करके हाथ में तलवार लिये वेगपूर्वक उछलकर गजराज के दाँतों के सहारे उसके मस्तक पर चढ़ गये।

**ततो मुमोच कालिङ्गः शक्तिं तामकरोद् द्विधा।**
**खड्गेन पृथुना मध्ये भानुमन्तमथाच्छिनत् ॥१४॥**

इतने में ही कलिङ्गराजकुमार ने उनपर शक्ति चलाई, परन्तु भीम ने उसके दो टुकड़े कर दिये तथा अपने विशाल खड्ग से भानुमान् के शरीर को बीच से काट डाला।

**सोऽन्तरायुधिनं हत्वा राजपुत्रमरिन्दमः।**
**गुरुं भारसहं स्कन्धे नागस्यासिमपातयत् ॥१५॥**

इस प्रकार गजारूढ होकर लड़नेवाले कलिङ्ग-राजकुमार को मारकर शत्रुदमन भीम ने भार सहने में समर्थ अपनी भारी तलवार को उस हाथी के कन्धे पर भी दे मारा।

**छिन्नस्कन्धः स विनदन् पपात गजयूथपः।**
**आरुग्णः सिन्धुवेगेन सानुमानिव पर्वतः ॥१६॥**

कन्धा कट जाने से वह गजयूथपति चिंघाड़ता हुआ समुद्र के वेग से भग्न होकर गिरनेवाले शिखर-युक्त पर्वत के समान धराशायी हो गया।

**ततस्तस्मादवप्लुत्य गजाद् भारत भारतः।**
**खड्गपाणिरदीनात्मा तस्थौ भूमौ सुदंशितः ॥१७॥**

हे भारत! फिर कवचधारी, खड्गपाणि, उदार-चित्त, भरतवंशी भीमसेन उस हाथी से सहसा कूद-कर धरती पर खड़े हो गये।

**स चचार बहून् मार्गानभितः पातयन् गजान्।**
**अग्निचक्रमिवाविद्धं सर्वतः प्रत्यदृश्यत ॥१८॥**

फिर दोनों ओर घूम-घूमकर हाथियों को गिराते

हुए वे अनेक मार्गों से विचरण करने लगे। उस समय घूमते हुए अलातचक्र की भाँति वे सब ओर दिखाई देते थे।

**केचिदग्रासिना छिन्नाः पाण्डवेन महात्मना।**
**विनेर्दुर्भिन्नमर्माणो निपेतुश्च गतासवः ॥१९॥**

पाण्डुनन्दन महामना भीमसेन के प्रचण्ड खड्ग की चोट से कितने ही हाथियों के अङ्ग छिन्न-भिन्न हो उनके मर्मस्थल विदीर्ण हो गये और वे चिंघाड़ते हुए प्राणशून्य होकर भूमि पर गिर पड़े।

**आप्लुत्य रथिनः काँश्चित् परामृश्य महाबलः।**
**पातयामास खड्गेन सध्वजानपि पाण्डवः ॥२०॥**

महाबली पाण्डुनन्दन भीम उछलकर कितने ही रथियों के पास पहुँच जाते और उन्हें पकड़कर ध्वजों-सहित तलवार से काट गिराते थे।

**स जघान पदा काँश्चिद् व्याक्षिप्यान्यानपोथयत्।**
**खड्गेनान्यांश्च चिच्छेद नादेनान्यांश्च भीषयन् ॥२१॥**
**उरुवेगेन चाप्यन्यान् पातयामास भूतले।**
**अपरे चैनमालोक्य भयात् पञ्चत्वमागताः ॥२२॥**

उन्होंने कितने ही योद्धाओं को पैरों से कुचलकर मार डाला, कितनों को ऊपर उछालकर पटक दिया, कितनों को तलवार से काट दिया, दूसरे कितने ही योद्धाओं को अपनी गर्जना से डरा दिया और कितनों को अपने महान् वेग से पृथिवी पर दे मारा। दूसरे बहुत-से योद्धा उन्हें देखते ही भय के मारे निष्प्राण हो गये।

**एवं सा बहुला सेना कलिङ्गानां तरस्विनाम्।**
**परिवार्य रणे भीष्मं भीमसेनमुपाद्रवत् ॥२३॥**

इस प्रकार मारी जाने पर भी वेगशाली कलिङ्ग वीरों की उस विशाल सेना ने युद्धभूमि में भीष्म की रक्षा के लिए उन्हें चारों ओर से घेरकर पुनः भीमसेन पर धावा किया।

**ततः कलिङ्गसैन्यानां प्रमुखे भरतर्षभ।**
**श्रुतायुषमभिप्रेक्ष्य भीमसेनः समभ्ययात् ॥२४॥**

भरतश्रेष्ठ ! कलिङ्गसेना के अग्रभाग में राजा श्रुतायु को देखकर भीमसेन उसका सामना करने के लिए आगे बढ़े।

**तमायान्तमभिप्रेक्ष्य कलिङ्गो नवभिः शरैः।**
**भीमसेनममेयात्मा प्रत्यविध्यत् महोरसि ॥२५॥**

उन्हें आगे बढ़ते देख अमेय आत्मबल से सम्पन्न कलिङ्गराज श्रुतायु ने भीमसेन की छाती में नौ बाण मारे।

**समाहतो महाराज कलिङ्गेन महात्मना।**
**सञ्चुक्रुशे भृशं भीमो दण्डाहत इवोरगः ॥२६॥**

हे महाराज ! महामना कलिङ्गराज के बाणों से घायल हो भीमसेन डण्डे की चोट खाये हुए सर्प की भाँति अत्यन्त कुपित हो उठे।

**क्रुद्धश्च चापमायम्य बलवद् बलिनां वरः।**
**कलिङ्गमवधीत् पार्थो भीमः सप्तभिरायसैः ॥२७॥**

तब बलवानों में श्रेष्ठ कुन्तीपुत्र भीमसेन ने क्रुद्ध हो अपने सुदृढ़ धनुष को बलपूर्वक खींचकर लोहे के सात बाणों द्वारा कलिङ्गराज श्रुतायुध को घायल कर दिया।

**क्षुराभ्यां चक्ररक्षौ च कलिङ्गस्य महाबलौ।**
**सत्यदेवं च सत्यं च प्राहिणोद् यमसादनम् ॥२८॥**

तत्पश्चात् दो क्षुर नामक बाणों से कलिङ्गराज के चक्ररक्षक महाबली सत्यदेव तथा सत्य को यमलोक पहुँचा दिया।

**ततः पुनरमेयात्मा नाराचैर्निशितैस्त्रिभिः।**
**केतुमन्तं रणे भीमोऽगमयद् यमसादनम् ॥२९॥**

फिर अमेय आत्मबल से सम्पन्न भीम ने तीन तीखे नाराचों द्वारा रणभूमि में केतुमान् को मारकर उसे भी यमलोक पठा दिया।

**ततः कलिङ्गाः संनद्धा भीमसेनममर्षणम्।**
**अनीकैर्बहुसाहस्रैः क्षत्रियाः समवारयन् ॥३०॥**

तब कलिङ्गदेशीय समस्त क्षत्रियों ने कई सहस्र सैनिकों के साथ आकर युद्ध के लिए उद्यत हो अमर्षशील भीमसेन को आगे बढ़ने से रोक दिया।

**ततः शक्तिगदाखड्गतोमरर्ष्टिपरश्वधैः।**
**कलिङ्गाश्च ततो राजन् भीमसेनमवाकिरन् ॥३१॥**

राजन् ! उस समय कलिङ्ग योद्धा भीमसेन पर शक्ति, गदा, खड्ग, तोमर, ऋष्टि तथा फरसों की मार मारने लगे।

**संनिवार्य स तां घोरां शरवृष्टिं समुत्थिताम्।**
**भीमः सप्तशतान् वीराननयद् यमसादनम् ॥३२॥**

वहाँ होती हुई उस भयंकर बाणवृष्टि को रोककर भीम ने सात सौ वीरों को यमलोक भेज दिया।

**ततो भीमो महाबाहुः खड्गहस्तो महाभुजः ।**
**सम्प्रहृष्टो महाघोषं शंखं प्राध्मापयद् बली ॥३३॥**

तत्पश्चात् महाबली महाबाहु भीमसेन ने खड्ग हाथ में लिये हुए अत्यन्त प्रसन्न हो बड़े जोर से शंख बजाया।

**सर्वकालिङ्गसैन्यानां मनांसि समकम्पयत् ।**
**मोहश्चापि कलिङ्गानामाविवेश परन्तप ॥३४॥**

परंतप ! उस शंखनाद के द्वारा उन्होंने सम्पूर्ण कलिङ्गों [कलिङ्ग सैनिकों] के हृदय में कम्प मचा दिया। इतना ही नहीं, उन सबपर मोह छा गया।

**भीमसेनं तथा दृष्ट्वा प्राक्रोशंस्तावका नृप ।**
**कालोऽयं भीमरूपेण कलिङ्गैः सह युध्यते ॥३५॥**

राजन् ! भीमसेन को उस रूप में देखकर आपके सैनिक पुकार-पुकारकर कहने लगे, यह साक्षात् काल ही भीमसेन के रूप में प्रकट होकर कलिङ्गों के साथ युद्ध कर रहा है।

**ततः शान्तनवो भीष्मः श्रुत्वा तं निनदं रणे ।**
**अभ्ययात् त्वरितो भीमं व्यूढानीकः समन्ततः ॥३६॥**

तब शान्तनुनन्दन भीष्म युद्धभूमि में उस कोलाहल को सुनकर अपनी सेना को सब ओर से व्यूहबद्ध करके तुरन्त ही भीमसेन के पास आये।

**सात्यकिश्च ततस्तूर्णं भीमस्य प्रियकाम्यया ।**
**गाङ्गेयसारथिं तूर्णं पातयामास सायकैः ॥३७॥**

इधर सात्यकि ने भी भीमसेन का प्रिय करने की इच्छा से भीष्म के सारथि को तुरन्त ही अपने सायकों द्वारा मार गिराया।

**भीष्मस्तु निहते तस्मिन् सारथौ रथिनां वरः ।**
**वातायमानैस्तैरश्वैरपनीतो रणाजिरात् ॥३८॥**

रथियों में श्रेष्ठ भीष्म सारथि के मारे जाने पर वायु के समान शीघ्रगामी घोड़ों के द्वारा रथभूमि से बाहर कर दिये गये।

**भीमसेनस्ततो राजन्नपयाते महाव्रते ।**
**प्रजज्वाल यथा वह्निर्दहन् कक्षमिवैधितः ॥३९॥**

राजन् ! महान् व्रतधारी भीष्म के रणभूमि से हट जाने पर भीमसेन घास-फूस के ढेर में लगी हुई अग्नि के समान अपने तेज से प्रज्वलित हो उठे।

**स हत्वा सर्वकालिङ्गान् सेनामध्ये व्यतिष्ठित ।**
**नैनमभ्युत्सहन् केचित् तावका भरतर्षभ ॥४०॥**

भरतश्रेष्ठ ! भीमसेन सम्पूर्ण कलिङ्गों का संहार करके सेना के मध्यभाग में ही खड़े थे, परन्तु आपके सैनिकों में से कोई भी उनके पास जाने का साहस नहीं करता था।

**इति महाभारते भीष्मपर्वणि नवमोऽध्यायः ॥९॥**

# दशमोऽध्यायः

## अभिमन्यु एवं अर्जुन का पराक्रम तथा दूसरे दिन के युद्ध की समाप्ति

सञ्जय उवाच

**गतपूर्वाह्णभूयिष्ठे तस्मिन्नहनि भारत ।**
**रथनागाश्वपत्तीनां सादिनां च महाक्षये ॥१॥**
**द्रोणपुत्रेण शल्येन कृपेण च महात्मना ।**
**समसज्जत पाञ्चाल्यस्त्रिभिरेतैर्महारथैः ॥२॥**

**सञ्जय कहते हैं**—भारत ! उस दूसरे दिन जब पूर्वाह्न का अधिक भाग व्यतीत हो गया और बहुसंख्यक रथ, हाथी, घोड़े, पैदल और सवारों का महान् संहार होने लगा, उस समय पाञ्चालराजकुमार धृष्टद्युम्न अकेला ही द्रोणपुत्र अश्वत्थामा, शल्य और महामनस्वी कृपाचार्य—इन तीनों महारथियों के साथ युद्ध करने लगा।

**स लोकविदितानश्वान् निजघान महाबलः ।**
**द्रौणेः पाञ्चालदायादः शितैर्दशभिराशुगैः ॥३॥**

महाबली पाञ्चाल-राजकुमार ने दस शीघ्रगामी तीखे बाण मारकर अश्वत्थामा के विश्वविख्यात घोड़ों को मार डाला।

**धृष्टद्युम्नं तु संसक्तं द्रौणिना वीक्ष्य भारत ।**
**सौभद्रोऽभ्यपतत् तूर्णं विकिरन् निशिताञ्शरान् ॥४॥**

भरतनन्दन ! धृष्टद्युम्न को अश्वत्थामा के साथ

जूझता हुआ देख सुभद्राकुमार अभिमन्यु भी धुआँधार शरवर्षा करता हुआ तुरन्त वहाँ आ पहुँचा ।

**लक्ष्मणस्तव पौत्रस्तु सौभद्रं समवस्थितम् ।**
**अभ्यवर्तत संहृष्टस्ततो युद्धमवर्तत ॥५॥**

उधर आपके पौत्र लक्ष्मण ने सुभद्राकुमार अभिमन्यु को सामने खड़ा देख हर्ष और उत्साह में भरकर उसपर धावा किया । फिर तो दोनों में युद्ध ठन गया ।

**दौर्योधनिः सुसंक्रुद्धः सौभद्रं परवीरहा ।**
**विव्याध समरे राजँस्तद्भुतमिवाभवत् ॥६॥**

राजन् ! शत्रुवीरों का संहार करनेवाले दुर्योधन के पुत्र लक्ष्मण ने अति क्रुद्ध हो युद्धभूमि में अनेक बाणों से अभिमन्यु को बींध डाला । वह एक अद्भुत-सी बात हुई ।

**अभिमन्युः सुसंक्रुद्धो भ्रातरं भरतर्षभ ।**
**शरैः पञ्चाशता राजन् क्षिप्रहस्तोऽभ्यविध्यत ॥७॥**

भरतश्रेष्ठ ! राजन् ! यह देख शीघ्रतापूर्वक बाण चलानेवाला वीर अभिमन्यु कुपित हो उठा और उसने अपने भाई लक्ष्मण को पचास बाणों से घायल कर दिया ।

**लक्ष्मणोऽपि पुनस्तस्य धनुश्चिच्छेद पत्रिणा ।**
**मुष्टिदेशे महाराज ततस्ते चुक्रुशुर्जनाः ॥८॥**

महाराज ! तब लक्ष्मण ने भी पुनः एक बाण मारकर उसके धनुष को, जहाँ मुट्ठी रखी जाती है, वहाँ से काट दिया । यह देख आपके सैनिक हर्ष से कोलाहल कर उठे ।

**तद् विहाय धनुश्छिन्नं सौभद्रः परवीरहा ।**
**अन्यदादत्तवाँश्चित्रं कार्मुकं वेगवत्तरम् ॥९॥**

तब शत्रुवीरों का संहार करनेवाले सुभद्राकुमार ने उस कटे हुए धनुष को फेंककर दूसरा विचित्र धनुष हाथ में लिया, जो अत्यन्त वेगशाली था ।

**तौ तत्र समरे युक्तौ कृतप्रतिकृतैषिणौ ।**
**अन्योऽन्यं विशिखैस्तीक्ष्णैर्जघ्नतुः पुरुषर्षभौ ॥१०॥**

वे दोनों नररत्न वहाँ एक-दूसरे के अस्त्रों का निवारण अथवा प्रतिकार करने की इच्छा रखकर युद्ध में डटे हुए थे और पैने बाणों द्वारा एक-दूसरे को घायल कर रहे थे ।

**ततो दुर्योधनो राजा दृष्ट्वा पुत्रं महारथम् ।**
**पीडितं तव पौत्रेण प्रायात् तत्र प्रजेश्वरः ॥११॥**

तब प्रजाओं का स्वामी राजा दुर्योधन अपने महारथी पुत्र को आपके पौत्र अभिमन्यु से पीड़ित होता हुआ देख स्वयं वहाँ जा पहुँचा ।

**सौभद्रमथ संसक्तं दृष्ट्वा तत्र धनञ्जयः ।**
**अभिदुद्राव वेगेन त्रातुकामः स्वमात्मजम् ॥१२॥**

इसी समय अर्जुन सुभद्राकुमार को युद्ध में जूझते देख अपने पुत्र की रक्षा के लिए बड़े वेग से वहाँ आ पहुंचे ।

**ततः सरथनागाश्वा भीष्मद्रोणपुरोगमाः ।**
**अभ्यवर्तन्त राजानः सहिताः सव्यसाचिनम् ॥१३॥**

यह देख भीष्म और द्रोण आदि सभी कौरव-पक्षीय नरेश रथ, हाथी और घोड़ों की सेनासहित एक-साथ अर्जुन पर चढ़ आये ।

**तानि नागसहस्राणि भूमिपालशतानि च ।**
**तस्य बाणपथं प्राप्य नाभ्यवर्तन्त सर्वशः ॥१४॥**

इधर सहस्रों हाथी और सैकड़ों नरेश अर्जुन के बाणों के सन्मुख आकर किसी प्रकार भी आगे नहीं बढ़ सके ।

**सादिता रथनागाश्च हताश्वा रथिनो रणे ।**
**विप्रद्रुतरथाः केचिद् दृश्यन्ते रथयूथपाः ॥१५॥**

उस युद्धभूमि में कितने ही रथ टूट गये, अनेकों हाथी मारे गये, कितने ही रथियों के घोड़े मार डाले गये और कितने ही रथयूथपतियों के रथ भागते दिखाई दिये ।

**हयारोहा हयाँस्त्यक्त्वा गजारोहाश्च दन्तिनः ।**
**अर्जुनस्य भयाद् राजन् समन्ताद् विप्रदुद्रुवुः ॥१६॥**

महाराज ! अर्जुन के भय से घुड़सवार घोड़ों को और गजारोही गजों को छोड़कर सब ओर भाग चले ।

**रथेभ्यश्च गजेभ्यश्च हयेभ्यश्च नराधिपाः ।**
**पतिताः पात्यमानाश्च दृश्यन्तेऽर्जुनसायकैः ॥१७॥**

वहाँ बहुत-से नरेश अर्जुन के सायकों से कटकर रथों, हाथियों और घोड़ों से गिरते और गिराये जाते हुए दृष्टिगोचर हो रहे थे ।

**नासीत्तत्र पुमान् कश्चित्तव सैन्यस्य भारत ।**
**योऽर्जुनं समरे शूरं प्रत्युद्यायात् कथञ्चन ॥१८॥**

हे भारत ! उस समय आपकी सेना में कोई भी ऐसा पुरुष नहीं था, जो रणक्षेत्र में शूरवीर अर्जुन का सामना करने के लिए किसी प्रकार आगे बढ़ सके ।

**यो यो हि समरे पार्थं प्रत्युद्याति विशाम्पते ।**
**स संख्ये विशिखैस्तीक्ष्णैः परलोकाय नीयते ॥१९॥**

प्रजेश्वर ! उस समरभूमि में जो-जो वीर अर्जुन की ओर बढ़ता था, वही-वही उनके तीखे बाणों द्वारा परलोक पठा दिया जाता था ।

**तत् प्रभग्नं बलं दृष्ट्वा पिता देवव्रतस्तव ।**
**अब्रवीत् समरे शूरं भारद्वाजं स्मयन्निव ॥२०॥**

कौरव-सेना को इस प्रकार नष्ट होते देख रणक्षेत्र में खड़े हुए आपके ताऊ भीष्म ने शूरवीर आचार्य द्रोण से मुस्कराते हुए-से कहा—

**न ह्येष समरे शक्यो विजेतुं हि कथञ्चन ।**
**यथास्य दृश्यते रूपं कालान्तकयमोपमम् ॥२१॥**

"यह अर्जुन समरभूमि में किसी प्रकार भी जीता नहीं जा सकता, क्योंकि इसका रूप इस समय प्रलय-काल के यमराज-सा दिखाई दे रहा है ।

**न निवर्तयितुं चापि शक्येयं महती चमूः ।**
**अन्योन्यप्रेक्षया पश्य द्रवतीयं वरूथिनी ॥२२॥**

"यह विशालवाहिनी इस समय पीछे भी नहीं लौटाई जा सकती । देखिए, सारे सैनिक एक-दूसरे की देखा-देखी भागे जा रहे हैं ।

**एष चास्तं गिरिश्रेष्ठं भानुमान् प्रतिपद्यते ।**
**चक्षूँषि सर्वलोकस्य संहरन्निव सर्वथा ॥२३॥**

"इधर ये सूर्यदेव सम्पूर्ण जगत् के नेत्रों की ज्योति को सर्वथा समेटते हुए-से गिरिश्रेष्ठ अस्ताचल को जा पहुँचे हैं ।

**तत्रावहारं सम्प्राप्तं मन्येऽहं पुरुषर्षभ ।**
**श्रान्ता भीताश्च नो योधा न योत्स्यन्ति कथञ्चन ॥२४॥**

"नरश्रेष्ठ ! मैं इस समय समस्त सैनिकों को युद्ध से हटा लेना ही उचित समझता हूँ । हमारे सभी योद्धा थके-माँदे और डरे हुए हैं, अतः इस समय वे किसी प्रकार युद्ध नहीं कर सकेंगे ।"

**एवमुक्त्वा ततो भीष्मो द्रोणमाचार्यसत्तमम् ।**
**अवहारमथो चक्रे तावकानां महारथः ॥२५॥**

आचार्यप्रवर द्रोण से ऐसा कहकर महारथी भीष्म ने आपके समस्त सैनिकों को युद्धक्षेत्र से लौटा लिया ।

**ततोऽवहारः सैन्यानां तव तेषां च भारत ।**
**अस्तं गच्छति सूर्येऽभूत् सन्ध्याकाले समागते ॥२६॥**

हे भारत ! इस प्रकार सूर्य के अस्ताचल को चले जाने पर सन्ध्या के समय आपकी और पाण्डवों की सेनाएँ लौट आईं ।

**इति महाभारते भीष्मपर्वणि दशमोऽध्यायः ॥१०॥**

## एकादशोऽध्यायः

### तृतीय दिवस—कौरव-पाण्डवों की व्यूहरचना तथा युद्ध का आरम्भ, पाण्डववीरों का पराक्रम, दुर्योधन और भीष्म का संवाद

सञ्जय उवाच

**प्रभातायां च शर्वर्यां भीष्मः शान्तनवस्तदा ।**
**अनीकान्यनुसंयाने व्यादिदेशाथ भारत ॥१॥**

सञ्जय कहते हैं—हे भारत ! जब रात्रि व्यतीत हुई और सूर्योदय हुआ, तब शान्तनुनन्दन भीष्म ने अपनी सेनाओं को युद्धभूमि में चलने का आदेश दिया ।

**गारुडं च महाव्यूहं चक्रे शान्तनवस्तदा ।**
**पुत्राणां ते जयाकांक्षी भीष्मः कुरुपितामहः ॥२॥**

उस समय कुरुकुल के पितामह शान्तनुकुमार भीष्म ने आपके पुत्रों को विजय दिलाने की इच्छा से महान् गरुड़व्यूह की रचना की ।

**व्यूढं दृष्ट्वा तु तत्सैन्यं सव्यसाची परन्तपः ।**
**अर्धचन्द्रेण व्यूहेन प्रत्यव्यूहत संयुगे ॥३॥**

शत्रुओं को सन्ताप देनेवाले सव्यसाची अर्जुन ने कौरव-सेना की वह व्यूहरचना देखकर युद्धभूमि में उसका सामना करने के लिए अपनी सेना का अर्ध-चन्द्राकार व्यूह बनाया ।

**ततो व्यूढेष्वनीकेषु तावकेषु परेषु च।**
**किरीटी च ययौ क्रुद्धः समन्तात् पार्थिवोत्तमान्॥४॥**

राजन्! आपकी और पाण्डवों की व्यूहरचना सम्पन्न हो जाने पर क्रोध में भरे हुए किरीटधारी अर्जुन सब ओर खड़े हुए श्रेष्ठ नरेशों का सामना करने के लिए बढ़े।

**ततस्ते पार्थिवाः क्रुद्धाः फाल्गुनं वीक्ष्य संयुगे।**
**रथैरनेकसाहस्रैः समन्तात् पर्यवारयन्॥५॥**

वे समस्त भूपाल युद्धभूमि में अर्जुन को देखते ही क्रुद्ध हो उठे तथा उन्होंने बहुत-से रथियों के साथ उन्हें सब ओर से घेर लिया।

**अथैनं रथवृन्देन कोष्टकीकृत्य भारत।**
**शरैः सुबहुसाहस्रैः समन्तादभ्यवारयन्॥६॥**

भरतनन्दन! उन राजाओं ने रथसमूह द्वारा अर्जुन को सब ओर से घेरकर उनपर बहुत-से बाणों की झड़ी लगा दी।

**शस्त्राणामथ तां वृष्टिं शलभानामिवायतिम्।**
**रुरोध सर्वतः पार्थः शरैः कनकभूषणैः॥७॥**

शलभों की श्रेणी के समान अस्त्र-शस्त्रों की उस वर्षा को अर्जुन ने सुवर्णभूषित बाणों द्वारा सब ओर से रोक दिया।

**सात्यकिश्चाभिमन्युश्च महत्या सेनया वृतौ।**
**गान्धारान् समरे शूराञ्जग्मतुः सहसौबलान्॥८॥**

उधर विशाल सेना से घिरे हुए सात्यकि और अभिमन्यु ने युद्धक्षेत्र में सुबल के पुत्रोंसहित गान्धार-देशीय शूरवीरों पर आक्रमण किया।

**ततो धर्मसुतो राजा माद्रीपुत्रौ च पाण्डवौ।**
**मिषतां सर्वसैन्यानां द्रोणानीकमुपाद्रवन्॥९॥**

इधर धर्मपुत्र राजा युधिष्ठिर तथा माद्रीकुमार पाण्डुनन्दन नकुल-सहदेव ने समस्त सेनाओं के देखते-देखते द्रोणाचार्य की सेना पर धावा किया।

**कुर्वाणौ सुमहत् कर्म भीमसेनघटोत्कचौ।**
**दुर्योधनस्य महतीं द्रावयामास वाहिनीम्॥१०॥**

दूसरी ओर भीमसेन और घटोत्कच ने महान् पराक्रम का परिचय देते हुए दुर्योधन की विशाल सेना को खदेड़ना आरम्भ किया।

**द्रवतस्तान् समालक्ष्य भीष्मद्रोणौ महारथौ।**
**न्यवारयेतां संरब्धौ दुर्योधनहितैषिणौ॥११॥**

दुर्योधन की सेना के योद्धाओं को भागते देख दुर्योधन का हित चाहनेवाले महारथी भीष्म और द्रोण क्रोधपूर्वक उन्हें रोकने लगे।

**संनिवृत्तांस्ततस्तांस्तु दृष्ट्वा राजा सुयोधनः।**
**अब्रवीत् त्वरितो गत्वा भीष्मं शान्तनवं वचः॥१२॥**

अपनी सेना के वीरों को लौटा हुआ देख राजा दुर्योधन तुरन्त ही शान्तनुनन्दन भीष्म के पास जाकर बोला—

दुर्योधन उवाच

**पितामह निबोधेदं यत् त्वां वक्ष्यामि भारत।**
**नानुरूपमहं मन्ये त्वयि जीवति कौरव॥१३॥**
**द्रोणे चास्त्रविदां श्रेष्ठे सपुत्रे ससुहृज्जने।**
**कृपे चैव महेष्वासे द्रवते यद् वरूथिनी॥१४॥**

**दुर्योधन बोला**—पितामह भरतनन्दन! मैं आपसे जो कुछ कहता हूँ, उसे सुनिए। कुरुनन्दन! आपके पुत्रों तथा सुहृदोंसहित अस्त्रवेत्ताओं में श्रेष्ठ द्रोणाचार्य के और महाधनुर्धर कृपाचार्य के जीते-जी जो मेरी सेना भाग रही है, इसे मैं आप लोगों के अनुरूप नहीं मानता।

**न पाण्डवान् प्रतिबलाँस्तव मन्ये कथञ्चन।**
**तथा द्रोणस्य संग्रामे द्रौणेश्चैव कृपस्य च॥१५॥**

मैं किसी भी प्रकार यह नहीं मान सकता कि पाण्डव संग्राम में आपके, द्रोणाचार्य के, कृपाचार्य के और अश्वत्थामा के समान बलवान् हैं।

**अनुग्राह्याः पाण्डुसुतास्तव नूनं पितामह।**
**यथेमां क्षमसे वीर वध्यमानां वरूथिनीम्॥१६॥**

वीर पितामह! निश्चय ही पाण्डव आपके कृपापात्र हैं, तभी तो मेरी सेना का वध हो रहा है और आप चुपचाप इसकी दुर्दशा को सहते चले जा रहे हैं।

**सोऽस्मि वाच्यस्त्वया राजन् पूर्वमेव समागमे।**
**न योत्स्ये पाण्डवान् संख्ये नापि पार्षतसात्यकी॥१७॥**

राजन्! यदि पाण्डवों पर दया ही करनी थी तो आप युद्धारम्भ होने से पूर्व ही मुझे यह बता देते कि मैं रणक्षेत्र में पाण्डुपुत्रों, धृष्टद्युम्न और सात्यकि से युद्ध नहीं करूँगा।

**तावकीनं वचः श्रुत्वा ह्याचार्यस्य कृपस्य च ।**
**कर्णेन सहितः कृत्यं चिन्तयानस्तदैव हि ॥१८॥**

उस अवस्था में आपका, आचार्य द्रोण का तथा कृपाचार्य का वचन सुनकर मैं कर्ण के साथ उसी समय अपने कर्तव्य का निश्चय कर लेता ।

**यदि नाहं परित्याज्यो युवाभ्यामिह संयुगे ।**
**विक्रमेणानुरूपेण युध्येतां पुरुषर्षभौ ॥१९॥**

यदि युद्ध में आप दोनों को मेरा परित्याग करना उचित नहीं जान पड़ता हो तो द्रोणाचार्य और आप—दोनों श्रेष्ठ पुरुष अपने योग्य पराक्रम प्रकट करते हुए युद्ध कीजिए ।

सञ्जय उवाच

**एतत् श्रुत्वा वचो भीष्मः प्रहसन् वै मुहुर्मुहुः ।**
**अब्रवीत् भवतः पुत्रं क्रोधादुद्वृत्य चक्षुषी ॥२०॥**

**सञ्जय कहते हैं**—यह सुनकर भीष्मजी बार-बार हँसकर और क्रोध से आँखें तरेरते हुए आपके पुत्र से बोले—

भीष्म उवाच

**बहुशोऽसि मया राजँस्तथ्यमुक्तो हितं वचः ।**
**अजेयाः पाण्डवा युद्धे देवैरपि सवासवैः ॥२१॥**

**भीष्म बोले**—राजन् ! मैंने तुमसे अनेक बार यह सत्य और हित की बात बताई है कि युद्ध में पाण्डवों को इन्द्र आदि देवता भी नहीं जीत सकते ।

**यत्तु शक्यं मया कर्तुं वृद्धेनाद्य नृपोत्तम ।**
**करिष्यामि यथाशक्ति प्रेक्षस्व त्वं सबान्धवः ॥२२॥**

नृपश्रेष्ठ ! तो भी मुझ वृद्ध के द्वारा जो कुछ किया जा सकता है, उसे आज यथाशक्ति करूँगा । तुम अपने बन्धु-बान्धवोंसहित मेरा पराक्रम देखो ।

**अद्य पाण्डुसुतानेकः ससैन्यान् सह बन्धुभिः ।**
**सोऽहं निवारयिष्यामि सर्वलोकस्य पश्यतः ॥२३॥**

आज मैं अकेला ही सबके देखते-देखते सेना और बन्धुओंसहित समस्त पाण्डवों को आगे बढ़ने से रोक दूँगा ।

सञ्जय उवाच

**एवमुक्ते तु भीष्मेण पुत्रास्तव जनेश्वर ।**
**दध्मुः शंखान् मुदायुक्ता भेरीः संजघ्निरे भृशम् ॥२४**

**सञ्जय कहते हैं**—जनेश्वर ! भीष्म के ऐसा कहने पर आपके पुत्र आनन्दमग्न होकर जोर-जोर से शंख बजाने और डंका पीटने लगे ।

**इति महाभारते भीष्मपर्वणि एकादशोऽध्यायः ॥११॥**

## द्वादशोऽध्यायः

### भीष्म का पराक्रम, श्रीकृष्ण का उन्हें मारने के लिए उद्यत होना, अर्जुन की प्रतिज्ञा एवं उनके द्वारा कौरव सेना की पराजय, तीसरे दिन के युद्ध की समाप्ति

सञ्जय उवाच

**गतपूर्वाह्णभूयिष्ठे तस्मिन्नहनि भारत ।**
**जयं प्राप्तेषु हृष्टेषु पाण्डवेषु महात्मसु ॥१॥**
**सर्वधर्मविशेषज्ञः पिता देवव्रतस्तव ।**
**अभ्ययाज्जवनैरश्वैः पाण्डवानामनीकिनीम् ॥२॥**

**सञ्जय कहते हैं**—भारत ! उस दिन जब पूर्वाह्ण-काल का अधिक भाग व्यतीत हो गया और विजय को प्राप्त हुए महामना पाण्डव आनन्द मनाने लगे, उस समय सब धर्मों के विशेषज्ञ आपके ताऊ भीष्मजी ने वेगशाली अश्वों द्वारा पाण्डवों की सेना पर आक्रमण किया ।

**प्रावर्तत ततो युद्धं तुमुलं लोमहर्षणम् ।**
**अस्माकं पाण्डवैः सार्धमनयात् तव भारत ॥३॥**

हे भारत ! तत्पश्चात् आपके अन्याय से हम लोगों का पाण्डवों के साथ रोमाञ्चकारी भयंकर युद्ध होने लगा ।

**तिष्ठ स्थितोऽस्मि विद्ध्येनं निवर्तस्व स्थिरो भव ।**
**स्थिरोऽस्मि प्रहरस्वेति शब्दोऽश्रूयत सर्वशः ॥४॥**

उस समय 'खड़े रहो, खड़ा हूँ, इसे बींध डालो, लौटो, स्थिरभाव से खड़े रहो, हाँ-हाँ, स्थिरभाव से ही खड़ा हूँ, तुम प्रहार करो'—ऐसे शब्द सब ओर सुनाई पड़ते थे ।

**पतितान्युत्तमाङ्गानि बाहवश्च विभूषिताः ।**
**व्यचेष्टन्त महीं प्राप्य शतशोऽथ सहस्रशः ॥५॥**

उस तुमुल युद्ध में सैनिकों के सैकड़ों-सहस्रों मस्तक तथा स्वर्ण-विभूषित भुजाएँ कट-कटकर पृथिवी पर गिरने और तड़पने लगीं ।

**हृतोत्तमाङ्गाः केचित्तु तथैवोद्यतकार्मुकाः ।**
**प्रगृहीतायुधाश्चापि तस्थुः पुरुषसत्तमाः ।।६।।**

कितने ही पुरुष-शिरोमणि वीरों के मस्तक तो कट गये, परन्तु उनके धड़ पूर्ववत् धनुष-बाण एवं अन्य आयुध लिये खड़े ही रह गये ।

**प्रावर्तत महावेगा नदी रुधिरवाहिनी ।**
**मातङ्गाङ्गशिलारौद्रा मांसशोणितकर्दमा ।।७।।**
**वराश्वनरनागानां शरीरप्रभवा तदा ।**
**परलोकार्णवमुखी गृध्रगोमायुमोदिनी ।।८।।**

रणक्षेत्र में बड़े वेग से रक्त की नदी बह चली, जो देखने में बहुत भयानक थी । हाथियों के शरीर उसमें भीषण शिलाखण्डों के समान जान पड़ते थे । रक्त और मांस कीचड़ के समान प्रतीत होते थे । बड़े-बड़े हाथी, घोड़े और मनुष्यों के शरीरों से वह रक्त की नदी निकली थी तथा परलोकरूपी समुद्र की ओर प्रवाहित हो रही थी । वह रक्त-मांस की नदी गीधों और गीदड़ों को आनन्द प्रदान करनेवाली थी ।

**न दृष्टं न श्रुतं वापि युद्धमेतादृशं नृप ।**
**यथा तव सुतानां च पाण्डवानां च भारत ।।९।।**

हे भारत ! राजन् ! पाण्डवों और आपके पुत्रों का उस दिन जैसा भयानक युद्ध हुआ, वैसा न कभी देखा गया था और न सुना ही गया था ।

**तात भ्रातः सखे बन्धो वयस्य मम मातुल ।**
**मा मां परित्यजेत्यन्ये चुक्रुशुः पतिता रणे ।।१०।।**

कितने ही योद्धा रणभूमि में गिरकर इस प्रकार आर्तभाव से स्वजनों को पुकार रहे थे—"तात ! भ्रातः ! सखे ! बन्धो ! मेरे मित्र ! मेरे मामा ! मुझे छोड़कर न जाओ ।"

**अथाभ्येहि त्वमागच्छ किं भीतोऽसि क्व यास्यसि ।**
**स्थितोऽहं समरे मा भैरिति चान्ये विचुक्रुशुः ।।११।।**

दूसरे सैनिक यों चिल्ला रहे थे—"अरे आओ, मेरे पास आओ, क्यों डरे हुए हो ? कहाँ जाओगे ? मैं संग्राम में डटा हुआ हूँ । तुम भय न करो ।"

**तत्र भीष्मः शान्तनवो नित्यं मण्डलकार्मुकः ।**
**मुमोच बाणान् दीप्ताग्रानहीनाशीविषानिव ।।१२।।**

उधर शान्तनुनन्दन भीष्म अपने धनुष को मण्डलाकार करके विषधर सर्पों के समान भयंकर एवं प्रज्वलित बाणों की निरन्तर वर्षा कर रहे थे ।

**तमेकं समरे शूरं पाण्डवाः सृञ्जयैः सह ।**
**अनेकशतसाहस्रं समपश्यन्त लाघवात् ।।१३।।**

युद्ध में शूरवीर भीष्म यद्यपि अकेले थे, तथापि संजयोंसहित पाण्डवों को वे अपनी फुर्ती के कारण कई सौ व्यक्तियों के समान दिखाई देते थे ।

**न हि मोघः शरः कश्चिदासीद् भीष्मस्य संयुगे ।**
**नरनागाश्वकायेषु बहुत्वाल्लघुयोधिनः ।।१४।।**

युद्ध में मनुष्यों, हाथियों और घोड़ों के शरीरों पर चलाया हुआ भीष्म का कोई भी बाण व्यर्थ नहीं जाता था, क्योंकि एक तो उनके पास बाण बहुत थे और दूसरे वे बड़ी फुर्ती से चलाते थे ।

**यो यो भीष्मं नरव्याघ्रमभ्येति युधि कश्चन ।**
**मुहूर्तदृष्टः स मया पतितो भुवि दृश्यते ।।१५।।**

जो कोई भी योद्धा नरश्रेष्ठ भीष्म के सम्मुख आ जाता, वह मुझे एक ही मुहूर्त में खड़ा दिखाई देकर उसी क्षण भूमि पर लोटता दिखाई देता था ।

**एवं सा धर्मराजस्य वध्यमाना महाचमूः ।**
**भीष्मेणातुलवीर्येण व्यशीर्यत सहस्रधा ।।१६।।**

इस प्रकार अतुल पराक्रमी भीष्म के द्वारा मारी जाती हुई धर्मराज युधिष्ठिर की वह विशाल वाहिनी अनेकों भागों में बिखर गई ।

**महेन्द्रसमवीर्येण वध्यमाना महाचमूः ।**
**अभज्यत महाराज न च द्वौ सह धावतः ।।१७।।**

महाराज ! महेन्द्र के समान पराक्रमी भीष्म की मार खाकर वह विशाल सेना इस प्रकार तितर-बितर हुई कि उसके दो-दो सैनिक भी साथ नहीं भाग सकते थे ।

**प्रभज्यमानं सैन्यं तु दृष्ट्वा यादवनन्दनः ।**
**उवाच पार्थं बीभत्सुं निगृह्य रथमुत्तमम् ।।१८।।**

अपनी सेना में इस प्रकार भगदड़ मची हुई देख यदुकुलनन्दन श्रीकृष्ण ने अपने उत्तम रथ को खड़ा करके कुन्तीपुत्र अर्जुन से कहा—

कृष्ण उवाच

**अयं स कालः सम्प्राप्तः पार्थ यस्तेऽभिकांक्षितः ।**
**प्रहरस्व नरव्याघ्र न चेन्मोहाद् विमुह्यसे ॥१९॥**

**श्रीकृष्ण बोले**—पुरुषसिंह ! दीर्घकाल से तुम जिसकी अभिलाषा करते थे, यह वही अवसर प्राप्त हुआ है। यदि तुम मोह से किंकर्तव्यविमूढ़ नहीं हो गये हो तो पूरी शक्ति लगाकर युद्ध करो।

**यत् त्वया कथितं वीर पुरा राज्ञां समागमे ।**
**भीष्मद्रोणमुखान्सर्वान्धार्तराष्ट्रस्य सैनिकान् ॥२०॥**
**सानुबन्धान् हनिष्यामि ये मां योत्स्यन्ति संयुगे ।**
**इति तत्कुरु कौन्तेय सत्यं वाक्यमरिन्दम ॥२१॥**

हे वीर ! पहले राजाओं की मण्डली में तुमने जो यह कहा था कि 'जो मेरे साथ युद्धभूमि में उतरकर युद्ध करेंगे, दुर्योधन के उन भीष्म, द्रोण आदि समस्त सैनिकों को मैं सगे-सम्बन्धियोंसहित मार डालूँगा।' शत्रुसूदन कुन्तीनन्दन ! अब अपनी उस बात को सत्य कर दिखाओ।

अर्जुन उवाच

**नोदयाश्वान् यतो भीष्मो विगाहे तद् बलार्णवम् ।**
**पातयिष्यामि दुर्धर्षं वृद्धं कुरुपितामहम् ॥२२॥**

**अर्जुन ने कहा**—भगवन् ! इन घोड़ों को हाँककर वहीं ले चलिए जहाँ भीष्म हैं। इस सेनारूपी समुद्र में प्रवेश कीजिए। आज मैं कुरुकुल के वृद्ध पितामह दुर्धर्ष वीर भीष्म को मार गिराऊँगा।

सञ्जय उवाच

**ततोऽश्वान् रजतप्रख्यान् नोदयामास माधवः ।**
**यतो भीष्मरथो राजन् दुष्प्रेक्ष्यो रश्मिवानिव ॥२३॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! तब श्रीकृष्ण ने अर्जुन के चाँदी के समान सफेद घोड़ों को उधर ही हाँका जहाँ भीष्मजी का रथ था। सूर्य की भाँति उस रथ की ओर आँख उठाकर देखना भी कठिन था।

**ततस्तत् पुनरावृत्तं युधिष्ठिरबलं महत् ।**
**दृष्ट्वा पार्थं महाबाहुं भीष्मायोद्यतमाहवे ॥२४॥**

उस समय महाबाहु अर्जुन को समरभूमि में भीष्म से लोहा लेने को उद्यत देख युधिष्ठिर की वह विशाल वाहिनी पुनः लौट आई।

**ततो भीष्मः कुरुश्रेष्ठ सिंहवद् विनदन् मुहुः ।**
**धनञ्जयरथं शीघ्रं शरवर्षैरवाकिरत् ॥२५॥**

कुरुश्रेष्ठ ! उस समय भीष्म सिंह के समान बारम्बार गर्जना करते हुए अर्जुन के रथ पर शीघ्रतापूर्वक बाणों की वर्षा करने लगे।

**गृहित्वा च धनुः पार्थः दिव्यं जलदनिःस्वनम् ।**
**पातयामास भीष्मस्य धनुश्छित्वा त्रिभिः शरैः ॥२६॥**

तब अर्जुन ने मेघ के समान गम्भीर घोष करनेवाले दिव्य धनुष को हाथ में लेकर तीन बाणों से भीष्म के धनुष को काट गिराया।

**स च्छिन्नधन्वा कौरव्यः पुनरन्यन्महद् धनुः ।**
**निमिषान्तरमात्रेण सज्यं चक्रे पिता तव ॥२७॥**

धनुष कट जाने पर आपके ताऊ कुरुनन्दन भीष्म ने पलक मारते-मारते पुनः दूसरे विशाल धनुष पर प्रत्यञ्चा चढ़ा दी।

**विचकर्ष ततो दोर्भ्यां धनुर्जलदनिःस्वनम् ।**
**अथास्य तदपि क्रुद्धश्चिच्छेद धनुरर्जुनः ॥२८॥**

फिर मेघ के समान गम्भीर शब्द करनेवाले उस धनुष को दोनों हाथों से खींचा। इतने में ही कुपित हुए अर्जुन ने उनके उस धनुष को भी काट डाला।

**तस्य तत् पूजयामास लाघवं शान्तनोः सुतः ।**
**साधु पार्थ महाबाहो साधु भोः पाण्डुनन्दन ॥२९॥**
**त्वय्येवैतद् युक्तरूपं महत् कर्म धनञ्जय ।**
**प्रीतोऽस्मि सुभृशं पुत्र कुरु युद्धं मया सह ॥३०॥**

अर्जुन की इस फुर्ती को देखकर शान्तनुनन्दन भीष्म ने उनकी बड़ी प्रशंसा की और कहा—"महाबाहु कुन्तीकुमार ! तुम्हें साधुवाद। पाण्डुनन्दन ! धन्यवाद। वत्स ! तुम्हारी इस फुर्ती से मैं बहुत प्रसन्न हूँ। धनञ्जय ! यह महान् कर्म तुम्हारे ही योग्य है। अब तुम मेरे साथ युद्ध करो।"

**इति पार्थं प्रशस्याथ प्रगृह्यान्यन्महद् धनुः ।**
**मुमोच समरे वीरः शरान् पार्थरथं प्रति ॥३१॥**

इस प्रकार कुन्तीकुमार अर्जुन की प्रशंसा करके और पुनः दूसरा विशाल धनुष हाथ में लेकर वीर भीष्म ने युद्धस्थल में उनके रथ की ओर बाण-वृष्टि आरम्भ की।

**अदर्शयद् वासुदेवो हययाने परं बलम् ।**
**मोघान् कुर्वञ्शरांस्तस्य मण्डलान्याचरल्लघु ॥३२॥**

उस समय श्रीकृष्ण ने घोड़ों को हाँकने की कला में अपने उत्तम कौशल का परिचय दिया। वे भीष्म के बाणों को व्यर्थ करते हुए बड़ी फुर्ती के साथ रथ को मण्डलाकार चलाने लगे।

**तथा भीष्मस्तु सुदृढं वासुदेवधनञ्जयौ।**
**विव्याध निशितैर्बाणैः सर्वगात्रेषु भारत ॥३३॥**

हे भारत! इतना होने पर भी भीष्म ने श्रीकृष्ण और अर्जुन के सम्पूर्ण अङ्गों में अपने तीखे बाणों से गहरे आघात किये।

**ततस्तु कृष्णः समरे दृष्ट्वा भीष्मपराक्रमम्।**
**सम्प्रेक्ष्य च महाबाहुः पार्थस्य मृदुयुद्धताम् ॥३४॥**
**भीष्मं च शरवर्षाणि सृजन्तमनिशं युधि।**
**अचिन्तयदमेयात्मा नास्ति यौधिष्ठिरं बलम् ॥३५॥**

तब अमेय आत्मबल से सम्पन्न महाबाहु श्रीकृष्ण ने उस युद्धभूमि में भीष्म का पराक्रम देखकर मन-ही-मन विचार किया कि अर्जुन तो कोमलतापूर्वक युद्ध कर रहा है और भीष्म रणभूमि में निरन्तर बाणों की वर्षा कर रहे हैं, अतः युधिष्ठिर की सेना का अस्तित्व मिटना चाहता है।

**सोऽहं भीष्मं निहन्म्यद्य पाण्डवार्थाय दंशितः।**
**भारमेतं विनेष्यामि पाण्डवानां महात्मनाम् ॥३६॥**
**अर्जुनो हि शरैस्तीक्ष्णैर्बध्यमानोऽपि संयुगे।**
**कर्तव्यं नाभिजानाति रणे भीष्मस्य गौरवात् ॥३७॥**

अतः आज पाण्डवों के लिए कवच धारण किया हुआ मैं स्वयं ही भीष्म को मारे डालता हूँ। महामना पाण्डवों के इस भारी भार को मैं ही दूर करूँगा। अर्जुन तो इस युद्ध में तीखे बाणों की मार खाकर भी भीष्म के प्रति गौरव-बुद्धि रखने के कारण अपने कर्तव्य को नहीं समझ रहा है। [ऐसा सोचकर—]

**क्षुरान्तमुद्यम्य भुजेन चक्रं**
**रथादवप्लुत्य विसृज्य वाहान्।**
**संकम्पयन् गां चरणैर्महात्मा**
**वेगेन कृष्णः प्रससार भीष्मम् ॥३८॥**

श्रीकृष्ण घोड़ों की लगाम छोड़कर और हाथ में छुरे के समान तीक्ष्ण किनारेवाले चक्र को लेकर रथ से कूद पड़े तथा अपने पैरों की धमक से पृथिवी को कँपाते हुए बड़े वेग से भीष्मजी की ओर दौड़े।

**रथादवप्लुत्य ततस्त्वरावान्**
**पार्थोऽप्यनुद्रुत्य यदुप्रवीरम्।**
**बलान्निजग्राह हरिं किरीटी**
**पदेऽथ राजन् दशमे कथञ्चित् ॥३९॥**

श्रीकृष्ण को भीष्म के रथ की ओर बढ़ते देख किरीटधारी अर्जुन ने भी बड़ी उतावली के साथ अपने रथ से कूदकर यदुकुलश्रेष्ठ श्रीकृष्ण [के पैरों] को बलपूर्वक पकड़ लिया और किसी प्रकार दसवें कदम पर पहुँचते-पहुँचते उन्हें रोका।

**अवस्थितं च प्रणिपत्य कृष्णं**
**प्रीतोऽर्जुनः काञ्चनचित्रमाली।**
**उवाच कोपं प्रतिसंहरेति**
**गतिर्भवान् केशव पाण्डवानाम् ॥४०॥**

जब श्रीकृष्ण खड़े हो गये, तब सुवर्ण का विचित्र हार पहने हुए अर्जुन ने अत्यन्त हर्षित हो उनके चरणों में प्रणाम करके कहा—"केशव! आप अपना क्रोध रोकिए। आप ही पाण्डवों के परम आश्रय हैं।

**न हास्यते कर्म यथाप्रतिज्ञं**
**पुत्रैः शपे केशव सोदरैश्च।**
**अन्तं करिष्यामि यथा कुरूणां**
**त्वयाहमिन्द्रानुज सम्प्रयुक्तः ॥४१॥**

"केशव! अब मैं अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार कर्तव्य का पालन करूँगा, उसका त्याग कभी नहीं करूँगा। यह बात मैं अपने पुत्रों और भाइयों की शपथ खाकर कहता हूँ। उपेन्द्र! आपकी आज्ञा मिलने पर मैं समस्त कौरवों का अन्त कर डालूँगा।"

**ततः प्रतिज्ञां समयं च तस्य**
**जनार्दनः प्रीतमना निशम्य।**
**स्थितः प्रिये कौरवसत्तमस्य**
**रथं सचक्रः पुनरारुरोह ॥४२॥**

अर्जुन की यह प्रतिज्ञा तथा कर्तव्यपालन का निश्चय सुनकर श्रीकृष्ण का मन प्रसन्न हो गया। वे कुरुश्रेष्ठ अर्जुन का प्रिय करने के लिए उद्यत हो पुनः चक्र हाथ में लिये रथ पर जा बैठे।

**स तानभीषून् पुनराददानः**
**प्रगृह्य शंखं द्विषतां निहन्ता।**
**निनादयामास ततो दिशश्च**
**स पाञ्चजन्यस्य रवेण शौरिः ॥४३॥**

शत्रुओं का संहार करनेवाले श्रीकृष्ण ने पुनः घोड़ों की बागडोर सँभाली और पाञ्चजन्य शंख लेकर उसकी ध्वनि से सम्पूर्ण दिशाओं को निनादित कर दिया ।

**ततो भुजाभ्यां बलवद् विकृष्य**
**चित्रं धनुर्गाण्डिवमप्रमेयम् ।**
**माहेन्द्रमस्त्रं विधिवत् सुघोरं**
**प्रादुश्चकाराद्भुतमन्तरिक्षे ॥४४॥**

उधर अप्रमेय शक्तिशाली विचित्र गाण्डीव धनुष को दोनों भुजाओं से बलपूर्वक खींचकर अर्जुन ने विधिपूर्वक अत्यन्त भयंकर माहेन्द्र अस्त्र को प्रकट किया । वह अद्भुत अस्त्र अन्तरिक्ष में चमक उठा ।

**तेनोत्तमास्त्रेण ततो महात्मा**
**सर्वाण्यनीकानि महाधनुष्मान् ।**
**शरौघजालैर्विमलाग्निवर्णैर्-**
**निवारयामास किरीटमाली ॥४५॥**

तब किरीटधारी महाधनुर्धर अर्जुन ने उस उत्तम अस्त्र द्वारा निर्मल एवं अग्नि के समान प्रज्वलित बाणों का जाल-सा बिछाकर कौरवों के सभी सैनिकों को आगे बढ़ने से रोक दिया ।

**पदातिसंघाश्च रथाश्च संख्ये**
**हयाश्च नागाश्च धनञ्जयस्य ।**
**बाणाहतास्तूर्णमपेतसत्त्वा**
**विष्टभ्य गात्राणि निपेतुरुर्व्याम् ॥४६॥**

उस संग्राम में अर्जुन के उस महेन्द्रास्त्र से निकले बाणों से घायल पैदलों के समूह, रथ, घोड़े और हाथी शीघ्र ही सत्त्वशून्य होकर अपने अङ्गों को सिकोड़े हुए पृथिवी पर गिरने लगे ।

**तदैन्द्रमस्त्रं विततं च घोर-**
**मसह्यमुद्वीक्ष्य युगान्तकल्पम् ।**
**अथापयानं कुरवः सभीष्माः**
**चक्रुर्निशां सन्धिगतां समीक्ष्य ॥४७॥**

उस भयंकर ऐन्द्रास्त्र को प्रलयंकर अग्नि के समान सर्वत्र व्याप्त एवं असह्य हुआ जानकर और निशा के आरम्भकाल का अवलोकन कर भीष्म और अन्य कौरव योद्धाओं ने सेना को युद्धभूमि से लौटा लिया ।

**अवाप्य कीर्ति च यशश्च लोके**
**विजित्य शत्रूँश्च धनञ्जयोऽपि ।**
**ययौ नरेन्द्रैः सह सोदरैश्च**
**समाप्तकर्मा शिबिरं निशायाम् ॥४८॥**

धनञ्जय भी शत्रुओं को जीतकर तथा लोक में सुयश और कीर्ति पाकर अपने भाइयों और राजाओं के साथ सारा कार्य समाप्त करके निशा के आरम्भ में अपने शिबिर को लौट गये ।

**इति महाभारते भीष्मपर्वणि द्वादशोऽध्यायः ॥१२॥**

# त्रयोदशोऽध्यायः

**चतुर्थ दिवस—भीष्म एवं अर्जुन का द्वैरथ-युद्ध; अभिमन्यु, भीम और घटोत्कच का पराक्रम तथा चौथे दिन के युद्ध की समाप्ति**

सञ्जय उवाच

**व्युष्टां निशां भारत भारताना-**
**मनीकिनीनां प्रमुखे महात्मा ।**
**ययौ सपत्नान् प्रति जातकोपो**
**वृतः समग्रेण बलेन भीष्मः ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—हे भारत ! जब रात बीती और प्रभात हुआ, तब भरतवंशियों की सेना के अग्रभाग में स्थित हुए महामना भीष्म सम्पूर्ण सेना से घिरकर शत्रुओं से युद्ध करने के लिए चले । उस समय उनके मन में शत्रुओं के प्रति बड़ा क्रोध था ।

**तं व्यालनानाविधगूढसारं**
**गजाश्वपादातरथौघपक्षम् ।**
**व्यूहं महामेघसमं महात्मा**
**ददर्श दूरात् कपिराजकेतुः ॥२॥**

उधर महामना कपिध्वज अर्जुन ने दूर से देखा कि कौरवसेना व्याल नामक व्यूह में आबद्ध होने के कारण अनेक प्रकार की दिखाई दे रही है । उसकी शक्ति छिपी हुई है । उसमें हाथी, घोड़े, पैदल तथा रथियों के समूह भरे हुए हैं । सेना का वह व्यूह महान् मेघों की घटा के समान प्रतीत होता था ।

**विनिर्ययौ केतुमता रथेन**
**नरर्षभः श्वेतहयेन वीरः ।**
**वरूथिना सैन्यमुखे महात्मा**
**वधे धृतः सर्वसपत्नयूनाम् ॥३॥**

तब नरश्रेष्ठ महामना वीर अर्जुन समस्त शत्रु-पक्षीय युवकों के वध का संकल्प करके श्वेत घोड़ों से जुते हुए, ध्वज एवं आवरणों से युक्त रथ पर आरूढ़ हो शत्रुसेना के सामनें चले ।

**ततो यथादेशमुपेत्य तस्थुः**
**पाञ्चालमुख्याः सह चेदिमुख्यैः ।**
**ततः समादेशसमाहतानि**
**भेरीसहस्राणि विनेदुराजौ ॥४॥**

उधर सेनापति के आदेश के अनुसार यथोचित स्थान पर पहुँचकर पाञ्चाल और चेदिदेश के प्रमुख वीर खड़े हो गये । फिर उस युद्धस्थल में प्रधान की आज्ञानुसार सहस्रों रणभेरियाँ एक-साथ बज उठीं ।

**महानुभावाश्च ततः प्रकाश-**
**मालोक्य वीराः सहसाभिपेतुः ।**
**रथी रथेनाभिहतः ससूतः**
**पपात साश्वः सरथः सकेतुः ॥५॥**
**गजो गजेनाभिहतः पपात**
**पदातिना चाभिहतः पदातिः ।**
**सम्भ्रान्तनागाश्वरथे मुहूर्ते**
**किरीटिनं शान्तनवोऽभ्यधावत् ॥६॥**

रणभेरी बजने के पश्चात् महान् प्रभावशाली वीर सूर्यदेव का प्रकाश देखकर सहसा शत्रुदल पर टूट पड़े । रथी रथी से भिड़कर सारथि, घोड़े, रथ और ध्वजसहित कटकर गिरने लगे । हाथी हाथी के आघात से और पैदल पैदल की चोट से धराशायी होने लगे । उस समय जब हाथी, घोड़े और रथ [रथी] सभी अत्यन्त घबराहट में पड़े हुए थे, शान्तनुनन्दन भीष्म ने किरीटधारी अर्जुन पर आक्रमण किया ।

**तमुत्तमं सर्वधनुर्धराणा-**
**मसक्तकर्मा कपिराजकेतुः ।**
**भीष्मं महात्माभिववर्ष तूर्णं**
**शरौघजालैर्विमलैश्च भल्लैः ॥७॥**

तब अप्रतिहत पराक्रमी महामना कपिध्वज अर्जुन ने भी समस्त धनुर्धरों में श्रेष्ठ भीष्म पर तुरन्त ही निर्मल भल्लों तथा बाणसमूहों की वर्षा आरम्भ कर दी ।

**तथैव भीष्माहतमन्तरिक्षे**
**महास्त्रजालं कपिराजकेतोः ।**
**विशीर्यमाणं ददृशुस्त्वदीया**
**दिवाकरेणेव तमोऽभिभूतम् ॥८॥**

महाराज ! आपके सैनिकों ने देखा कि आकाश में कपिध्वज अर्जुन के बिछाये हुए महान् अस्त्रजाल को भीष्मजी ने अपने अस्त्रों के आघात से वैसे ही छिन्न-भिन्न कर दिया है, जैसे सूर्य अन्धकार को नष्ट कर देता है ।

**एवंविधं कार्मुकभीमनाद-**
**मदीनवत् सत्पुरुषोत्तमाभ्याम् ।**
**ददर्श लोकः कुरुसृञ्जयाश्च**
**तद् द्वैरथं भीष्मधनञ्जयाभ्याम् ॥९॥**

इस प्रकार सत्पुरुषों में श्रेष्ठ भीष्म और अर्जुन में धनुषों की भयंकर टङ्कार से युक्त दीनतारहित द्वैरथ युद्ध होने लगा, जिसे कौरव और सृञ्जय वीरों तथा अन्य लोगों ने भी देखा ।

**द्रोणिर्भूरिश्रवाः शल्यश्चित्रसेनश्च मारिष ।**
**पुत्रः सांयमनेश्चैव सौभद्रं पर्यवारयन् ॥१०॥**

आर्य ! उधर तो भीष्म और अर्जुन का द्वैरथ युद्ध चल रहा था, इधर द्रोणपुत्र अश्वत्थामा, भूरिश्रवा, शल्य, चित्रसेन तथा शल के पुत्र ने सुभद्रा-कुमार अभिमन्यु को आगे बढ़ने से रोका ।

**संसक्तमतितेजोभिस्तमेकं ददृशुर्जनाः ।**
**पञ्चभिर्मनुजव्याघ्रैर्गजैः सिंहशिशुं यथा ॥११॥**

जैसे सिंहशावक [सिंह का बच्चा] पाँच हाथियों से भिड़ा हुआ हो, उसी प्रकार सुभद्राकुमार अभिमन्यु उन अत्यन्त तेजस्वी पाँच पुरुषसिंहों से अकेला ही युद्ध कर रहा था । यह बात वहाँ सब लोगों ने प्रत्यक्ष देखी ।

**नातिलक्ष्यतया कश्चिन्न शौर्ये न पराक्रमे ।**
**बभूव सदृशः कार्ष्णेर्नास्त्रेनापि च लाघवे ॥१२॥**

लक्ष्य वेधने, शौर्य प्रकट करने, पराक्रम दिखाने,

अस्त्रज्ञान प्रदर्शित करने तथा हाथों की फुर्ती में उन पाँचों में से कोई भी अभिमन्यु की समानता न कर सका।

**स द्रौणिमिषुणैकेन विद्ध्वा शल्यं च पञ्चभिः।**
**ध्वजं सांयमनेश्चैव सोऽष्टाभिश्चिच्छिदे तदा ॥१३॥**

उसने अश्वत्थामा को एक तथा शल्य को पाँच बाणों से घायल करके शल के ध्वज को आठ बाणों से काट डाला।

**रुक्मदण्डां महाशक्तिं प्रेषितां सोमदत्तिना।**
**शितेनोरगसंकाशां पत्त्रिणापजहार ताम् ॥१४॥**

फिर भूरिश्रवा द्वारा फेंकी गई स्वर्णदण्डविभूषित सर्पसदृश महाशक्ति को एक तीखे बाण से छिन्न-भिन्न कर डाला।

**शल्यस्य च महावेगानस्यतः समरे शरान्।**
**निवार्यार्जुनदायादो जघान चतुरो हयान् ॥१५॥**

शल्य रणभूमि में बड़े वेगशाली बाणों का प्रहार कर रहे थे, परन्तु पार्थकुमार अभिमन्यु ने उन बाणों का निवारण कर उसके चारों घोड़ों को मार डाला।

**भूरिश्रवाश्च शल्यश्च द्रौणिः सांयमनिः शलः।**
**नाभ्यवर्तन्त संरब्धाः कार्ष्णेर्बाहुबलोदयम् ॥१६॥**

भूरिश्रवा, शल्य, अश्वत्थामा तथा सांयमनि -[सोमदत्तपुत्र]-शल—ये सभी अत्यन्त क्रोध में भरे हुए थे, तथापि वे अभिमन्यु के बाहुबल की वृद्धि को न रोक सके।

**अथ दुर्योधनं दृष्ट्वा भीमसेनो महाबलः।**
**विधित्सुः कलहस्यान्तं गदां जग्राह पाण्डवः ॥१७॥**

इधर अभिमन्यु शत्रुओं से लोहा ले रहा था उधर महाबली पाण्डुपुत्र भीम ने दुर्योधन को देखकर झगड़े का अन्त कर डालने की इच्छा से गदा उठा ली।

**तमुद्यतगदं दृष्ट्वा कैलासमिव शृङ्गिणम्।**
**भीमसेनं महाबाहुं पुत्रास्ते प्राद्रवन् भयात् ॥१८॥**

गदा उठाये हुए महाबाहु भीमसेन को एक शिखर से युक्त कैलास पर्वत के समान उपस्थित देख आपके सभी पुत्र भय के मारे भाग खड़े हुए।

**अनीकं पुरतः कृत्वा कुञ्जराणां तरस्विनाम्।**
**दुर्योधनस्तु संक्रुद्धो भीमसेनं समभ्ययात् ॥१९॥**

तब वेगशाली हाथियों की सेना को आगे करके दुर्योधन ने कुपित होकर भीमसेन पर आक्रमण किया।

**आपतन्तं च तं दृष्ट्वा गजानीकं वृकोदरः।**
**गदापाणिरवारोहद् रथात् सिंह इव नदन् ॥२०॥**

उस गजसेना को आते देख भीमसेन हाथ में गदा लेकर और सिंह के समान गर्जना करते हुए अपने रथ से उतर पड़े।

**स गजान् गदया निघ्नन् व्यचरत् समरे बली।**
**भीमसेनो महाबाहुः सवज्र इव वासवः ॥२१॥**

फिर तो महाबली महाबाहु भीमसेन वज्रधारी इन्द्र के समान गदा से हाथियों का संहार करते हुए समराङ्गण में विचरने लगे।

**एकप्रहारनिहतान् भीमसेनेन दन्तिनः।**
**अपश्याम रणे तस्मिन् गिरीन् वज्रहतानिव ॥२२॥**

महाराज! उस रणभूमि में हमने वज्र के मारे हुए पर्वतों की भाँति भीमसेन के एक ही प्रहार से दन्तार हाथियों को भी मरते देखा था।

**शोणिताक्तां गदां बिभ्रदुक्षितां गजशोणितैः।**
**कृतान्त इव रौद्रात्मा भीमसेनो व्यदृश्यत ॥२३॥**

रक्त में सनी और हाथियों के लहू से भीगी हुई गदा लिये हुए रौद्ररूपधारी भीमसेन यमराज के समान दिखाई देते थे।

**यथा पशूनां संघातं यष्ट्या पालः प्रकालयेत्।**
**तथा भीमो गजानीकं गदया समकालयत् ॥२४॥**

जैसे चरवाहा पशुओं के झुण्ड को डण्डे से हाँकता है, वैसे ही भीमसेन हाथियों के समूह को अपनी गदा से हाँक रहे थे।

**गदया वध्यमानास्ते मार्गणैश्च समन्ततः।**
**स्वान्यनीकानि मृद्नन्तः प्राद्रवन् कुञ्जरास्तव ॥२५॥**

महाराज! चारों ओर से गदा और बाणों की मार पड़ने पर आपकी सेना के वे समस्त हाथी अपने ही सैनिकों को कुचलते हुए भाग रहे थे।

**हते तस्मिन् गजानीके पुत्रो दुर्योधनस्तव।**
**भीमसेनं घ्नतेत्येवं सर्वसैन्यान्यनोदयत् ॥२६॥**

महाराज! हाथियों की उस सेना के मारे जाने पर आपके पुत्र दुर्योधन ने समस्त सैनिकों को आदेश

दिया कि सब मिलकर भीमसेन को मार डालो ।

**ततः सर्वाण्यनीकानि तव पुत्रस्य शासनात् ।**
**अभ्यद्रवन् भीमसेनं नदन्तं भैरवान् रवान् ।।२७।।**

तब आपके पुत्र की आज्ञा से समस्त सेनाएँ भैरव गर्जना करती हुई भीमसेन पर टूट पड़ीं ।

**ततः शैक्यायसीं गुर्वीं प्रगृह्य महतीं गदाम् ।**
**अधावत् तावकान् योधान् दण्डपाणिरिवान्तकः ।।२८।।**

फिर तो पूर्णतः फौलाद की बनी हुई विशाल एवं भारी गदा हाथ में लेकर भीमसेन दण्डपाणि यमराज की भाँति आपके सैनिकों पर टूट पड़े ।

**उरुवेगेन संकर्षन् रथजालानि पाण्डवः ।**
**बलानि सम्ममर्दाशु नड्वलानीव कुञ्जरः ।।२९।।**

पाण्डुनन्दन भीम अपने महान् वेग से रथसमूहों को खींचकर नष्ट कर देते और शीघ्र ही सारी सेना को उसी प्रकार रौंद डालते थे, जैसे हाथी सरकण्डों के पौधों को रौंद डालता है ।

**मृद्नन् रथेभ्यो रथिनो गजेभ्यो गजयोधिनः ।**
**सादिनश्चाश्वपृष्ठेभ्यो भूमौ चापि पदातिनः ।।३०।।**
**गदया व्यधमत् सर्वान् वातो वृक्षानिवौजसा ।**
**भीमसेनो महाबाहुस्तव पुत्रस्य वै बले ।।३१।।**

महाबाहु भीमसेन रथों से रथियों को, हाथियों से हाथीसवारों को, घोड़ों की पीठ से घुड़सवारों को और पृथिवी पर पैदलों को मसलते हुए गदा से आपके पुत्र की सेना के सब लोगों को उसी प्रकार नष्ट कर देते थे, जैसे वायु अपने वेग से वृक्षों को उखाड़ फेंकती है ।

**यतो यतः प्रेक्षते स्म गदामुद्यम्य पाण्डवः ।**
**तेन तेन स्म दीर्यन्ते सर्वसैन्यानि भारत ।।३२।।**

हे भारत ! भीमसेन गदा उठाकर जिस-जिस ओर देखते थे, उधर-उधर से सारी सेनाओं में दरार पड़ जाती थी [वहाँ के सैनिक भागकर स्थान रिक्त कर देते थे] ।

**ततो भीमो महाबाहुः स्वरथं सुमहाबलः ।**
**आरुरोह रथश्रेष्ठं विशोकं चेदमब्रवीत् ।।३३।।**

दुर्योधन की उस सेना का संहार कर महाबली महाबाहु भीमसेन अपने श्रेष्ठ रथ पर आरूढ़ हो गये और अपने सारथि विशोक से इस प्रकार बोले—

भीम उवाच

**एते महारथाः शूरा धार्तराष्ट्राः समागताः ।**
**मामेव भृशसंक्रुद्धा हन्तुमभ्युद्यता युधि ।।३४।।**

**भीमसेन बोले**—ये महारथी शूरवीर धृतराष्ट्र-पुत्र अत्यन्त क्रुद्ध हो युद्ध में मुझे ही मारने के लिए उद्यत हो यहाँ आये हैं ।

**मनोरथद्रुमोऽस्माकं चिन्तितो बहुवार्षिकः ।**
**सफलः सूत चाद्येह योऽहं पश्यामि सोदरान् ।।३५।।**

सूत ! मेरे मन में बहुत वर्षों से जिसका चिन्तन हो रहा था, वह मनोरथरूपी वृक्ष आज सफल होना चाहता है, क्योंकि इस समय यहाँ मैं दुर्योधन के भाइयों को एकत्र देख रहा हूँ ।

**यत्राशोक समुत्क्षिप्ता रेणवो रथनेमिभिः ।**
**प्रयास्यन्त्यन्तरिक्षं हि शरवृन्दैर्दिगन्तरे ।।३६।।**
**तत्र तिष्ठति संनद्धः स्वयं राजा सुयोधनः ।**
**भ्रातरश्चास्य सन्नद्धाः कुलपुत्रा मदोत्कटाः ।।३७।।**

विशोक ! जहाँ रथ के पहियों से उड़ी हुई धूल बाणसमूहों के साथ अन्तरिक्ष और दिगन्त में फैल रही है, वहीं स्वयं राजा दुर्योधन कवच आदि से सुसज्जित होकर युद्ध के लिए खड़ा है । उसके कुलीन और मदोन्मत्त भाई भी वहीं कवच बाँधकर खड़े हैं ।

**एतानद्य हनिष्यामि पश्यतस्ते न संशयः ।**
**तस्मान्ममाश्वान् संग्रामे यत्तः संयच्छ सारथे ।।३८।।**

आज तुम्हारे देखते-देखते मैं इन सबको मार डालूँगा, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है, अतः सारथे ! तुम सावधान होकर संग्राम में मेरे घोड़ों को वश में रखो ।

सञ्जय उवाच

**एवमुक्त्वा ततः पार्थस्तव पुत्रं विशाम्पते ।**
**विव्याध दशभिस्तीक्ष्णैः शरैः कनकभूषणैः ।।३९।।**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! ऐसा कहकर कुन्ती-कुमार भीम ने स्वर्णभूषित दस तीखे बाणों द्वारा आपके पुत्र दुर्योधन को बींध डाला ।

**प्रत्युद्ययुस्ततो भीमं तव पुत्राश्चतुर्दश ।**
**विसृजन्तो बहून् बाणान् क्रोधसंरक्तलोचनाः ।।४०।।**

राजन् ! तब आपके चौदह पुत्रों ने क्रोध से

आँखें लाल करके बहुत-से बाणों की वर्षा करते हुए भीमसेन पर धावा किया ।

**पुत्रांस्तु तव सम्प्रेक्ष्य भीमसेनो महाबलः ।**
**सृक्किणी विलिहन् वीरः पशुमध्ये यथा वृकः ॥४१॥**
**अभिपत्य महाबाहुर्गरुत्मानिव वेगितः ।**
**सेनापतेः क्षुरप्रेण शिरश्चिच्छेद पाण्डवः ॥४२॥**

महाबली महाबाहु वीर भीमसेन आपके पुत्रों को देखकर पशुओं के मध्य में खड़े हुए भेड़िये के समान अपने मुंह के दोनों कोनों को चाटते हुए गरुड़ के समान बड़े वेग से उनके सामने पहुंचे । वहाँ जाकर पाण्डुकुमार ने क्षुरप्र नामक बाण से आपके पुत्र सेनापति का सिर काट डाला ।

**सुषेणं च ततो हत्वा त्रिभिर्बाणैर्महाभुजः ।**
**जलसन्धं विनिर्भिद्य सोऽनयद् यमसादनम् ॥४३॥**

तत्पश्चात् सुषेण को मारकर महाबाहु भीमसेन ने जलसन्ध को तीन बाणों से विदीर्ण करके यमलोक पठा दिया ।

**उग्रस्य सशिरस्त्राणं शिरश्चन्द्रोपमं भुवि ।**
**पातयामास भल्लेन कुण्डलाभ्यां विभूषितम् ॥४४॥**

फिर उग्र के कुण्डलों से विभूषित चन्द्रोपम मस्तक को एक भल्ल के द्वारा शिरस्त्राणसहित काटकर भूमि पर गिरा दिया ।

**वीरबाहुं च सप्तत्या साश्वकेतुं ससारथिम् ।**
**निनाय समरे वीरः परलोकाय पाण्डवः ॥४५॥**

तत्पश्चात् पाण्डुनन्दन वीरवर भीमसेन ने रण-भूमि में घोड़े, ध्वज और सारथिसहित वीरबाहु को सत्तर बाणों से मारकर परलोक पहुँचा दिया ।

**भीमभीमरथौ चोभौ भीमसेनो हसन्निव ।**
**पुत्रौ ते दुर्मदौ-राजन्ननयद् यमसादनम् ॥४६॥**

राजन् ! तदनन्तर भीमसेन ने हँसते हुए-से आपके दो पुत्र भीम और भीमरथ को भी जो युद्ध में उन्मत्त होकर लड़नेवाले थे, यमलोक भेज दिया ।

**पुत्रास्तु तव तं दृष्ट्वा भीमसेनपराक्रमम् ।**
**शेषा येऽन्येऽभवँस्तत्र विप्रद्रुता दिशो दश ॥४७॥**

आपके जो अन्य शेष पुत्र वहाँ विद्यमान थे, वे भीमसेन का पराक्रम देखकर वहाँ से सम्पूर्ण दिशाओं में भाग खड़े हुए ।

**ततोऽब्रवीच्छान्तनवः सर्वानेव महारथान् ।**
**एष भीमो रणे क्रुद्धो धार्तराष्ट्रान् महारथान् ॥४८॥**
**यथा प्राग्रचान्यथा ज्येष्ठान्यथा शूराँश्च संगतान् ।**
**निपातयत्युग्रधन्वा तं प्रगृह्णीत माचिरम् ॥४९॥**

दुर्योधन के भाइयों का संहार होते देख शान्तनु-नन्दन भीष्म ने अपने सभी महारथियों से कहा—"ये भयंकर धनुर्धर भीमसेन युद्ध में क्रुद्ध होकर सामने आये हुए श्रेष्ठ, ज्येष्ठ एवं शूर महारथी धृतराष्ट्र-पुत्रों को मारे डालते हैं, अतः तुम सब मिलकर इन्हें शीघ्र वश में करो ।"

**एवमुक्तास्ततः सर्वे धार्तराष्ट्रस्य सैनिकाः ।**
**अभ्यद्रवन्त संक्रुद्धा भीमसेनं महाबलम् ॥५०॥**

उनके ऐसा कहने पर दुर्योधन के सभी सैनिक क्रुद्ध होकर महाबली भीमसेन की ओर दौड़े ।

**भगदत्तः प्रभिन्नेन कुञ्जरेण विशाम्पते ।**
**अभ्ययात् सहसा तत्र यत्र भीमो व्यवस्थितः ॥५१॥**

हे प्रजेश्वर ! राजा भगदत्त मदवर्षी गजराज पर आरूढ़ होकर सहसा वहाँ जा पहुँचे, जहाँ भीमसेन खड़े थे ।

**ततस्तु नृपतिः क्रुद्धो भीमसेनस्य वक्षसि ।**
**आजघान महाराज शरेणानतपर्वणा ॥५२॥**

महाराज ! वहाँ पहुँचकर राजा भगदत्त ने कुपित हो झुकी हुई गाँठवाले बाण से भीमसेन की छाती में गहरी चोट पहुँचाई ।

**सोऽतिविद्धो महेष्वासस्तेन राज्ञा महारथः ।**
**मूर्च्छयाभिपरीतात्मा ध्वजयष्टिं समाश्रयत् ॥५३॥**

राजा भगदत्त द्वारा अत्यन्त घायल किये जाने पर महाधनुर्धर महारथी भीमसेन ने मूर्च्छा से व्याप्त हो ध्वज का दण्डा थाम लिया ।

**ततो घटोत्कचो राजन् प्रेक्ष्य भीमं तथागतम् ।**
**ऐरावणं समारूढो घोररूपं समास्थितः ॥५४॥**

भीमसेन को उस अवस्था में देखकर घटोत्कच ऐरावण हाथी पर आरूढ़ होकर भयंकररूप धारण किये हुए दृष्टिगोचर हुआ ।

**घटोत्कचस्तु स्वं नागं प्रेरयामास तं तदा ।**
**सगजं भगदत्तं तु हन्तुकामः परन्तपः ॥५५॥**

शत्रुओं को सन्ताप देनेवाले घटोत्कच ने अपने

हाथी को गजारूढ़ राजा भगदत्त के हाथी की ओर बढ़ाया। वह उन्हें हाथी सहित मारना चाहता था।

**नागेन पीड्यमानः स वेदनार्तः शराहतः।**
**अनदत् सुमहानादमिन्द्राशनिसमस्वनम् ॥५६॥**

भगदत्त का हाथी बाणों से घायल हो चुका था, अतः घटोत्कच के हाथी द्वारा पीड़ित होने पर वह वेदना से व्याकुल हो बड़े जोर से चीत्कार करने लगा। उसकी आवाज इन्द्र के वज्र की गड़गड़ाहट के समान जान पड़ती थी।

**तस्य तं नदतो नादं सुघोरं भीमनिःस्वनम्।**
**श्रुत्वा भीष्मोऽब्रवीद् द्रोणं राजानं च सुयोधनम् ॥५७॥**

भयंकर आवाज के साथ अत्यन्त घोर शब्द करने-वाले हाथी के उस चीत्कार को सुनकर भीष्म ने द्रोणाचार्य तथा दुर्योधन से कहा—

**एष युध्यति संग्रामे हैडिम्बेन दुरात्मना।**
**भगदत्तो महेष्वासः कृच्छ्रे च परिवर्तते ॥५८॥**

"ये महाधनुर्धर राजा भगदत्त दुरात्मा घटोत्कच के साथ जूझ रहे हैं तथा संकट में पड़ गये हैं।

**तत्र गच्छाम भद्रं वो राजानं परिरक्षितुम्।**
**अरक्ष्यमाणः समरे क्षिप्रं प्राणान् विमोक्ष्यति ॥५९॥**

"तुम्हारा कल्याण हो। आओ, हम राजा भगदत्त की रक्षा करने के लिए वहाँ चलें, अन्यथा अरक्षित होने पर वे रणभूमि में शीघ्र ही अपने प्राण त्याग देंगे।

**ते त्वरध्वं महावीर्याः किं चिरेण प्रयामहे।**
**महान् हि वर्तते रौद्रः संग्रामो लोमहर्षणः ॥६०॥**

"महापराक्रमी वीरो! शीघ्रता करो। विलम्ब से क्या लाभ? हमें जल्दी चलना चाहिए, क्योंकि यह संग्राम अत्यन्त भयंकर तथा रोमाञ्चकारी है।"

**भीष्मस्य तद् वचः श्रुत्वा सर्व एव महारथाः।**
**उत्तमं जवमास्थाय प्रययुर्यत्र सोऽभवत् ॥६१॥**

भीष्म का यह कथन सुनकर सभी महारथी अत्यन्त वेग से उस स्थान पर गये, जहाँ भगदत्त थे।

**तान्यनीकान्यथालोक्य राक्षसेन्द्रः प्रतापवान्।**
**ननाद सुमहानादं विस्फोटमशनेरिव ॥६२॥**

उन सेनाओं को आते देख प्रतापी राक्षसराज घटोत्कच ने बड़े जोर से सिंहनाद किया मानो वज्र फट पड़ा हो।

**तस्य तं निनदं श्रुत्वा दृष्ट्वा नागाँश्च युध्यतः।**
**भीष्मः शान्तनवो भूयो भारद्वाजमभाषत ॥६३॥**

घटोत्कच की वह गर्जना सुनकर तथा जूझते हुए हाथियों को देखकर शान्तनुनन्दन भीष्म ने पुनः द्रोणाचार्य से कहा—

**न रोचते मे संग्रामो हैडिम्बेन दुरात्मना।**
**बलवीर्यसमाविष्टः ससहायश्च साम्प्रतम् ॥६४॥**

"मुझे इस समय दुरात्मा घटोत्कच के साथ युद्ध करना अच्छा नहीं लगता, क्योंकि वह बल और पराक्रम से सम्पन्न है तथा इस समय उसे प्रबल सहायक भी मिल गये हैं।

**नैष शक्यो युधा जेतुमपि वज्रभृता स्वयम्।**
**लब्धलक्ष्यः प्रहारी च वयं च क्षतविक्षताः ॥६५॥**

"ऐसी अवस्था में साक्षात् वज्रधारी इन्द्र भी उसे युद्ध में पराजित नहीं कर सकते। यह प्रहार करने में कुशल तथा लक्ष्य भेदने में सफल है। इधर हमारे शरीर क्षत-विक्षत हो रहे हैं।

**तन्न मे रोचते युद्धं पाण्डवैर्जितकाशिभिः।**
**घुष्यतामवहारोऽद्य श्वो योत्स्यामः परैः सह ॥६६॥**

"अतः विजय से सुशोभित होनेवाले पाण्डवों के साथ इस समय युद्ध करना मुझे अच्छा नहीं लगता। आज युद्ध का विराम घोषित कर दिया जाए। कल प्रातः हम लोग शत्रुओं के साथ युद्ध करेंगे।"

**पितामहवचः श्रुत्वा तथा चक्रुः स्म कौरवाः।**
**उपायेनापयानं ते घटोत्कचभयार्दिताः ॥६७॥**

पितामह भीष्म की यह बात सुनकर कौरवों ने उपायपूर्वक युद्ध से हट जाना स्वीकार कर लिया, क्योंकि उस समय वे घटोत्कच के भय से पीड़ित थे।

**कौरवेषु निवृत्तेषु पाण्डवा जितकाशिनः।**
**सिंहनादान् भृशं चक्रुः शंखान् दध्मुश्च भारत ॥६८॥**

भारत! कौरवों के निवृत्त हो जाने पर विजय से आनन्दित होनेवाले पाण्डव बारम्बार सिंहनाद करने और शंख बजाने लगे।

**कौरवास्तु ततो राजन् प्रययुः शिबिरं स्वकम् ।**
**व्रीडमाना निशाकाले पाण्डवैश्च पराजिताः ॥६९॥**

राजन् ! तत्पश्चात् निशा के प्रारम्भकाल में पाण्डवों से पराजित होकर कौरव लज्जित हो अपने शिबिर को गये ।

**शरविक्षतगात्रास्तु पाण्डुपुत्रा महारथाः ।**
**युद्धे सुमनसो भूत्वा जग्मुः स्वशिबिरं प्रति ॥७०॥**

महारथी पाण्डवों के शरीर भी युद्ध में बाणों से क्षत-विक्षत हो गये थे, तथापि वे प्रसन्नचित्त होकर अपने शिबिर को लौटे ।

**इति महाभारते भीष्मपर्वणि त्रयोदशोऽध्यायः ॥१३॥**

# चतुर्दशोऽध्यायः

## पञ्चम दिवस—भीष्म-अर्जुन, दुर्योधन-भीमसेन, अभिमन्यु और लक्ष्मण, सात्यकि एवं भूरिश्रवा का युद्ध, अर्जुन का पराक्रम तथा पाँचवें दिन के युद्ध का उपसंहार

सञ्जय उवाच

**व्युषितायां तु शर्वर्यामुदिते च दिवाकरे ।**
**उभे सेने महाराज युद्धायैव समीयतुः ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज ! वह रात्रि व्यतीत होने पर जब सूर्योदय हुआ तब दोनों ओर की सेनाएँ आमने-सामने आकर युद्ध के लिए डट गईं ।

**ततो दुर्योधनो राजा कलिङ्गैर्बहुभिर्वृतः ।**
**पुरस्कृत्य रणे भीष्मं पाण्डवानभ्यवर्तत ॥२॥**

उस समय बहुसंख्यक कलिङ्गों से घिरे हुए राजा दुर्योधन ने युद्ध में भीष्म को आगे करके पाण्डवों पर आक्रमण किया ।

**तथैव पाण्डवाः सर्वे परिवार्य वृकोदरम् ।**
**भीष्ममभ्यद्रवन् क्रुद्धास्ततो युद्धमवर्तत ॥३॥**

इसी प्रकार क्रोध में भरे हुए समस्त पाण्डवों ने भी भीमसेन को घेरकर भीष्म पर धावा किया । फिर तो दोनों पक्षों में भयंकर युद्ध होने लगा ।

**दृष्ट्वा भीष्मेण संसक्तान्भ्रातॄनन्याँश्च पार्थिवान् ।**
**समभ्यधावद् गाङ्गेयमुद्यतास्त्रो धनञ्जयः ॥४॥**

अपने भाइयों तथा दूसरे राजाओं को भीष्म के साथ जूझते हुए देख अस्त्र उठाये हुए अर्जुन ने भी गङ्गानन्दन भीष्म पर धावा किया ।

**तोमरप्रासनाराचगजाश्वरथयोधिनाम् ।**
**बलेन महता भीष्मः समसज्जत् किरीटिना ॥५॥**

उधर भीष्म भी तोमर, नाराच और प्रास आदि धारण करनेवाले हाथीसवार, घुड़सवार तथा रथारोही योद्धाओं की विशाल सेना के साथ किरीटधारी अर्जुन से भिड़ गये ।

**आवन्त्यः काशिराजेन भीमसेनेन सैन्धवः ।**
**अजातशत्रुर्मद्राणामृषभेण यशस्विना ॥६॥**

दूसरी ओर अवन्तीनरेश काशिराज के साथ, सिन्धुराज जयद्रथ भीमसेन के साथ और अजातशत्रु राजा युधिष्ठिर यशस्वी मद्रराज शल्य के साथ युद्ध करने लगे ।

**विकर्णः सहदेवेन चित्रसेनः शिखण्डिना ।**
**मत्स्या दुर्योधनं जग्मुः शकुनिं च विशाम्पते ॥७॥**
**द्रुपदश्चेकितानश्च सात्यकिश्च महारथः ।**
**द्रोणेन समसज्जन्त सपुत्रेण महात्मना ॥८॥**

प्रजेश्वर ! विकर्ण सहदेव के साथ तथा चित्रसेन शिखण्डी के साथ भिड़ गये । मत्स्यदेशीय योद्धाओं ने दुर्योधन और शकुनि का सामना किया । द्रुपद, चेकितान और महारथी सात्यकि—ये तीनों द्रोण-पुत्र अश्वत्थामा और महामना द्रोण से जूझने लगे ।

**एवं प्रव्रजिताश्वानि भ्रान्तनागरथानि च ।**
**सैन्यानि समसज्जन्त प्रयुद्धानि समन्ततः ॥९॥**

इस प्रकार अपने-अपने घोड़ों को आगे बढ़ाकर तथा हाथी एवं रथों को घुमाकर समस्त सैनिक सब ओर युद्ध करने लगे ।

**वीरबाहुविसृष्टानां सर्वावरणभेदिनाम् ।**
**संघातः शरजालानां तुमुलः समपद्यत ॥१०॥**

उस समय वीरों की भुजाओं से छूटकर सब प्रकार के आवरणों [कवच आदि] का भेदन करनेवाले बाणसमूहों के भयानक आघात सब ओर हो रहे थे ।

ग्नचक्राक्षनीडाश्च निपातितमहाध्वजाः ।
ताश्वाः पृथिवीं जग्मुस्तत्र तत्र महारथाः ।।११।।

उन द्वन्द्व युद्धों में कितने ही महारथियों के रथों के पहिये, धुरे और भीतर की बैठकें टूट-फूटकर नष्ट हो गईं, बड़ी-बड़ी ध्वजाएँ खण्डित होकर गिर गईं, घोड़े मार दिये गये और वे महारथी स्वयं भी मारे जाकर भूमि पर जहाँ-तहाँ लोटने लगे ।

एवं संछादितं तत्र बभूवायोधनं महत् ।
सादिभिश्च पदातैश्च सध्वजैश्च महारथैः ।।१२।।

इस प्रकार सवारों, पैदलों और ध्वजाओंसहित महारथियों के शरीरों से वह विशाल युद्धस्थल पट गया था ।

विराटोऽथ त्रिभिर्बाणैर्भीष्ममार्च्छन्महारथम् ।
विव्याध तुरगांश्चास्य त्रिभिर्बाणैर्महारथः ।।१३।।

उधर महारथी राजा विराट ने तीन बाण मारकर महारथी भीष्म को पीड़ित किया तथा तीन ही बाणों से उनके घोड़ों को भी घायल कर दिया ।

तं प्रत्यविध्यद् दशभिर्भीष्मः शान्तनवः शरैः ।
रुक्मपुंखैर्महेष्वासः कृतहस्तो महाबलः ।।१४।।

तब महाधनुर्धर, महाबली और शीघ्रतापूर्वक हाथ चलानेवाले शान्तनुनन्दन भीष्म ने सोने के पंखवाले दस बाण मारकर विराट को भी घायल कर दिया ।

द्रौणिर्गाण्डीवधन्वानं भीमधन्वा महारथः ।
अविध्यदिषुभिः षड्भिर्दृढहस्तश्च वक्षसि ।।१५।।

भयंकर धनुष धारण करनेवाले महारथी अश्वत्थामा ने अपने हाथ की दृढ़ता का परिचय देते हुए गाण्डीवधारी अर्जुन की छाती में छह बाणों से प्रहार किया ।

ममैष आचार्यसुतो द्रोणस्यातिप्रियः सुतः ।
समास्थाय मतिं वीरः कृपां चक्रे सुतं प्रति ।।१६।।

वीर अर्जुन ने यह सोचकर कि अश्वत्थामा मेरे आचार्य का पुत्र है, द्रोण का लाड़ला बेटा है, आचार्य-पुत्र पर कृपा की ।

द्रौणिं त्यक्त्वा ततो युद्धे कौन्तेयः श्वेतवाहनः ।
युयुधे तावकान् निघ्नंस्त्वरमाणः पराक्रमी ।।१७।।

तब श्वेत घोड़ोंवाले कुन्तीकुमार पराक्रमी अर्जुन ने अश्वत्थामा को वहीं युद्धस्थल में छोड़कर अति उतावली के साथ आपके दूसरे सैनिकों का संहार करते हुए उनके साथ युद्ध आरम्भ किया ।

चित्रसेनं नरव्याघ्रं सौभद्रः परवीरहा ।
अविध्यद् दशभिर्बाणैः पुरुमित्रं च सप्तभिः ।।१८।।

उधर शत्रुवीरों का संहार करनेवाले सुभद्राकुमार अभिमन्यु ने नरश्रेष्ठ चित्रसेन को दस और पुरुमित्र को सात बाणों से बींध डाला ।

तस्य तच्चरितं दृष्ट्वा पौत्रस्तव विशाम्पते ।
लक्ष्मणोऽभ्यपतत् तूर्णं सात्वतीपुत्रमाहवे ।।१९।।

प्रजेश्वर ! उसका यह पराक्रम देखकर आपका पौत्र लक्ष्मण तुरन्त ही युद्ध में सुभद्राकुमार का सामना करने के लिए आ पहुँचा ।

अभिमन्युस्तु संक्रुद्धो लक्ष्मणं शुभलक्षणम् ।
विव्याध निशितैः षड्भिः सारथिं च त्रिभिः शरैः ।।२०

तब क्रोध में भरे हुए अभिमन्यु ने उत्तम लक्षणों से युक्त लक्ष्मण को छह और उसके सारथि को तीन तीखे बाणों से बींध डाला ।

तथैव लक्ष्मणो राजन् सौभद्रं निशितैः शरैः ।
अविध्यत महाराज तदद्भुतमिवाभवत् ।।२१।।

राजन् ! इसी प्रकार लक्ष्मण ने भी सुभद्राकुमार को अपने तीखे बाणों से छेद डाला । महाराज ! वह अद्भुत-सी बात हुई ।

तस्याश्वांश्चतुरो हत्वा सारथिं च महाबलः ।
अभ्यद्रवत् सौभद्रो लक्ष्मणं निशितैः शरैः ।।२२।।

यह देख महाबली सुभद्राकुमार ने लक्ष्मण के चारों घोड़ों और सारथि को मारकर तीखे बाणों द्वारा उसपर भी आक्रमण किया ।

हताश्वे तु रथे तिष्ठँल्लक्ष्मणः परवीरहा ।
शक्तिं चिक्षेप संक्रुद्धः सौभद्रस्य रथं प्रति ।।२३।।

शत्रुवीरों का संहार करनेवाले लक्ष्मण ने उस अश्वहीन रथ पर खड़े-खड़े ही क्रोध में भरकर अभिमन्यु के रथ की ओर एक शक्ति चलाई ।

तामापतन्तीं सहसा घोररूपां दुरासदाम् ।
अभिमन्युः शरैस्तीक्ष्णैश्चिच्छेद भुजगोपमाम् ।।२४।।

उस भयंकर एवं दुर्जय सर्पिणी के समान शक्ति को सहसा अपनी ओर आते देख अभिमन्यु ने तीखे

बाणों द्वारा उसके टुकड़े-टुकड़े कर डाले ।

**ततः स्वरथमारोप्य लक्ष्मणं गौतमस्तदा ।**
**अपोवाह रथेनाजौ सर्वसैन्यस्य पश्यतः ॥२५॥**

तब कृपाचार्य सब सैनिकों के देखते-देखते लक्ष्मण को अपने रथ पर बैठाकर युद्धभूमि से बाहर ले गये ।

**ततः समाकुले तस्मिन् वर्तमाने महाभये ।**
**अभ्यद्रवञ्जिघांसन्तः परस्परवधैषिणाः ॥२६॥**

तत्पश्चात् उस महाभयंकर संघर्ष में सब योद्धा विपक्षी को मारने की इच्छा रखकर एक-दूसरे का वध करने के लिए परस्पर टूट पड़े ।

**तावकाश्च महेष्वासाः पाण्डवाश्च महारथाः ।**
**जुह्वन्तः समरे प्राणान् निजघ्नुरितरेतरम् ॥२७॥**

आपके और पाण्डवपक्ष के महाधनुर्धर महारथी वीर समराङ्गण में प्राणों की आहुति देते हुए एक-दूसरे को मार रहे थे ।

**विकृष्य चापं सुदृढं सात्यकिर्युद्धदुर्मदः ।**
**आससाद ततो वीरो भूरिश्रवसमाहवे ॥२८॥**

उधर युद्ध में उन्मत्त होकर लड़नेवाले वीर सात्यकि ने अपने सुदृढ़ धनुष को बलपूर्वक खेंचकर युद्धस्थल में भूरिश्रवा पर आक्रमण किया ।

**स हि संदृश्य सेनां ते युयुधानेन पातिताम् ।**
**अभ्यधावत संक्रुद्धो दर्शयन् पाणिलाघवम् ॥२९॥**

सात्यकि ने आपकी सेना को मार गिराया है, यह देखकर भूरिश्रवा अत्यन्त क्रुद्ध हो, अपने हस्त-लाघव का परिचय देते हुए उनकी ओर दौड़ा ।

**इन्द्रायुधसवर्णं तु विस्फार्य सुमहद् धनुः ।**
**सृष्टवान् वज्रसंकाशाञ्शरानाशीविषोपमान् ॥३०॥**

इन्द्रधनुष के समान अपने बहुरंगे विशाल धनुष को खींचकर भूरिश्रवा ने वज्र के समान दुःसह और विषैले सर्पों के समान भयंकर बाण-वृष्टि की ।

**शरांस्तान् मृत्युसंस्पर्शान् सात्यकेस्तु पदानुगाः ।**
**न विषेहुस्तदा राजन् दुद्रुवुस्ते समन्ततः ॥३१॥**

राजन् ! उन बाणों का स्पर्श मृत्यु के तुल्य था । उस समय सात्यकि के साथ आये हुए सैनिक उन सायकों का वेग न सह सके, अतः वहाँ से सब ओर भाग निकले ।

**तं दृष्ट्वा युयुधानस्य सुता दश महाबलाः ।**
**ऊचुः सर्वे समासाद्य यूपकेतुं महारणे ॥३२॥**

सात्यकि के दस महाबलवान् पुत्र थे । वे युद्धस्थल में यूपचिह्नित ध्वजावाले भूरिश्रवा को देखकर उसके पास आये और उससे यह बोले—

**भो भोः कौरवदायाद सहास्माभिर्महाबल ।**
**एहि युध्यस्व संग्रामे समस्तैः पृथगेव वा ॥३३॥**

"महाबली कौरवपुत्र ! आओ, इस रणभूमि में हम लोगों के साथ अथवा पृथक्-पृथक् एक-एक के साथ युद्ध करो ।

**अस्मान् वा त्वं पराजित्य यशः प्राप्नुहि संयुगे ।**
**वयं वा त्वां पराजित्य प्रीतिं दास्यामहे पितुः ॥३४॥**

या तो तुम युद्ध में हमें परास्त करके यश प्राप्त करो अथवा हम तुम्हें परास्त करके पिताजी की प्रसन्नता बढ़ाएंगे ।"

**एवमुक्तस्तदा शूरैस्तानुवाच महाबलः ।**
**वीर्यश्लाघी नरश्रेष्ठस्तान् दृष्ट्वा समवस्थितान् ॥३५॥**

उन शूरवीरों के ऐसा कहने पर अपने पराक्रम की प्रशंसा करनेवाला महाबली नरश्रेष्ठ भूरिश्रवा उन्हें युद्ध के लिए उपस्थित देख उनसे इस प्रकार बोला—

**साध्विदं कथ्यते वीरा यद्येवं मतिरद्य वः ।**
**युध्यध्वं सहिता यत्ता निहनिष्यामि वो रणे ॥३६॥**

"वीरो ! यदि तुम्हारा ऐसा विचार है तो तुम लोगों ने यह बहुत अच्छी बात कही है । तुम सब लोग एक-साथ सावधान होकर यत्नपूर्वक युद्ध करो । मैं इस रणभूमि में तुम सब लोगों को मार गिराऊँगा ।"

**एवमुक्ता महेष्वासास्ते वीराः क्षिप्रकारिणः ।**
**महता शरवर्षेण अभ्यधावन्नरिन्दमम् ॥३७॥**

भूरिश्रवा के ऐसा कहने पर शीघ्रता करनेवाले उन महाधनुर्धर वीरों ने बड़ी भारी बाणवर्षा करते हुए शत्रुदमन भूरिश्रवा पर आक्रमण किया ।

**सोऽपराह्णे महाराज संग्रामस्तुमुलोऽभवत् ।**
**एकस्य च बहूनां च समेतानां रणाजिरे ॥३८॥**

महाराज ! अपराह्ण काल में उस युद्धभूमि में एकत्र हुए बहुत-से वीरों के साथ एक वीर का भयंकर युद्ध आरम्भ हुआ ।

**तमेकं रथिनां श्रेष्ठं शरैस्ते समवाकिरन् ।**
**प्रावृषीव यथा मेरुं सिषिचुर्जलदा नृप ॥३९॥**

नरेश्वर ! जैसे मेघ वर्षाकाल में मेरु पर्वत पर जल की बूँदें बरसाते हैं, उसी प्रकार उन सबने मिलकर रथियों में श्रेष्ठ अकेले भूरिश्रवा पर बाण-वृष्टि आरम्भ की ।

**सोमदत्तिस्ततः क्रुद्धस्तेषां चापानि भारत ।**
**चिच्छेद समरे राजन् युध्यमानो महारथैः ॥४०॥**

भरतकुलभूषण ! उस समय क्रोध में भरे हुए भूरिश्रवा ने उन महारथियों के साथ युद्ध करते हुए रणभूमि में उनके धनुष काट डाले ।

**अथैषां छिन्नधनुषां शरैः सन्नतपर्वभिः ।**
**चिच्छेद समरे राजञ्शिरांसि भरतर्षभ ॥४१॥**

भरतश्रेष्ठ ! इनके धनुष कट जाने पर झुकी हुई गाँठवाले बाणों से भूरिश्रवा ने उनके मस्तक भी समरभूमि में काट गिराये ।

**तान्दृष्ट्वा निहतान्वीरो रणे पुत्रान्महाबलान् ।**
**वार्ष्णेयो विनदन् राजन् भूरिश्रवसमभ्ययात् ॥४२॥**

अपने उन महाबली पुत्रों को संग्राम में मारे गये देख वीरवर सात्यकि ने गर्जना करते हुए वहाँ भूरिश्रवा पर आक्रमण किया ।

**तावन्योन्यं हि समरे निहत्य रथवाजिनः ।**
**विरथावभिवल्गन्तौ समेयातां महारथौ ॥४३॥**

उन दोनों ने आपस में एक-दूसरे के रथ और घोड़ों को नष्ट कर दिया । इस प्रकार रथहीन हुए दोनों महारथी उछलते-कूदते हुए एक-दूसरे का सामना करने लगे ।

**प्रगृहीतमहाखड्गौ तौ चर्मवरधारिणौ ।**
**शुशुभाते नरव्याघ्रौ युद्धाय समवस्थितौ ॥४४॥**

वे दोनों पुरुषसिंह हाथों में बड़ी-बड़ी तलवारें तथा सुन्दर ढालें लिये हुए युद्ध के लिए उद्यत होकर बड़ी शोभा पा रहे थे ।

**ततः सात्यकिमभ्येत्य निस्त्रिंशवरधारिणम् ।**
**भीमसेनस्त्वरन् राजन् रथमारोपयत् तदा ॥४५॥**

राजन् ! तदनन्तर उत्तम खड्ग धारण करनेवाले सात्यकि के पास पहुँचकर भीमसेन ने उस समय तुरन्त उन्हें अपने रथ पर चढ़ा लिया ।

**तवापि तनयो राजन् भूरिश्रवसमाहवे ।**
**आरोपयद् रथं तूर्णं पश्यतां सर्वधन्विनाम् ॥४६॥**

महाराज ! इसी प्रकार आपके पुत्र दुर्योधन ने भी युद्धस्थल में समस्त धनुर्धरों के देखते-देखते भूरिश्रवा को तुरन्त अपने रथ पर बिठा लिया ।

**तस्मिंस्तथा वर्तमाने रणे भीष्मं महारथम् ।**
**अयोधयन्त संरब्धाः पाण्डवा भरतर्षभ ॥४७॥**

भरतश्रेष्ठ ! उस समय क्रोध में भरे हुए पाण्डव उस युद्ध में महारथी भीष्म के साथ युद्ध करने लगे ।

**लोहितायति चादित्ये त्वरमाणो धनञ्जयः ।**
**पञ्चविंशति साहस्रान् निजघान महारथान् ॥४८॥**

जिस समय सूर्य अस्ताचल के समीप पहुँचकर लाल होने लगे, उस समय अर्जुन ने बड़ी शीघ्रता के साथ बाण-वर्षा करके पच्चीस सहस्र सैनिकों को मार डाला ।

**एतस्मिन्नेव काले तु सूर्येऽस्तमुपगच्छति ।**
**सर्वेषां चैव सैन्यानां प्रमोहः समजायत ॥४९॥**

इसी समय सूर्य अस्ताचल का चले गये । तब आपके समस्त सैनिकों पर मोह छा गया ।

**अवहारं ततश्चक्रे पिता देवव्रतस्तव ।**
**सन्ध्याकाले महाराज सैन्यानां श्रान्तवाहनः ॥५०॥**

महाराज ! तब आपके ताऊ देवव्रत ने सन्ध्या के समय अपनी सेनाओं को पीछे हटा लिया । उनके वाहन बहुत थक गये थे ।

**ततः स्वशिबिरं गत्वा न्यविशंस्तत्र भारत ।**
**पाण्डवाः सृञ्जयैः सार्धं कुरवश्च यथाविधि ॥५१॥**

हे भारत ! तत्पश्चात् सृञ्जयोंसहित पाण्डव और कौरव अपने-अपने शिविर में जाकर वहाँ विधिपूर्वक विश्राम करने लगे ।

**इति महाभारते भीष्मपर्वणि चतुर्दशोऽध्यायः ॥१४॥**

# पञ्चदशोऽध्यायः

## छठे दिन के युद्ध का आरम्भ, पाण्डव तथा कौरवों का मकर एवं क्रौञ्च व्यूह बनाकर युद्ध में प्रवृत्त होना; भीमसेन, धृष्टद्युम्न तथा द्रोणाचार्य का पराक्रम

सञ्जय उवाच

**ते विश्रम्य ततो राजन् सहिताः कुरुपाण्डवाः ।**
**व्यतीतायां तु शर्वर्यां पुनर्युद्धाय निर्ययुः ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! रात्रि में विश्राम करने के पश्चात् जब वह रात बीती और प्रभात हुआ, तब कौरव और पाण्डव पुनः युद्ध के लिए साथ-साथ निकले ।

**ततो युधिष्ठिरो राजा धृष्टद्युम्नमभाषत ।**
**व्यूहं व्यूह महाबाहो मकरं शत्रुनाशनम् ॥२॥**

उस समय राजा युधिष्ठिर ने धृष्टद्युम्न से कहा—"महाबाहो ! तुम शत्रुनाशक मकरव्यूह की रचना करो ।"

**एवमुक्तस्तु पार्थेन धृष्टद्युम्नो महारथः ।**
**व्यादिदेश महाराज रथिनो रथिनां वरः ॥३॥**

महाराज ! कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर के ऐसा कहने पर रथियों में श्रेष्ठ महारथी धृष्टद्युम्न ने अपने समस्त रथियों को मकरव्यूह बनाने के लिए आदेश दिया ।

**व्यूढं दृष्ट्वा तु तत् सैन्यं पिता देवव्रतस्तव ।**
**क्रौञ्चेन महता राजन् प्रत्यव्यूहत वाहिनीम् ॥४॥**

राजन् ! तब आपके ताऊ देवव्रत ने पाण्डवों का वह व्यूह देखकर उसके मुकाबिले में अपनी सेना को महान् क्रौञ्चव्यूह के रूप में संगठित किया ।

**भीमसेनार्जुनयमैर्गुप्ता चान्यैर्महारथैः ।**
**शुशुभे पाण्डवी सेना नक्षत्रैरिव शर्वरी ॥५॥**

उधर भीमसेन, अर्जुन, नकुल-सहदेव तथा अन्य महारथियों से सुरक्षित हुई पाण्डव-सेना नक्षत्रों से रात्रि की भाँति सुशोभित हो रही थी ।

**तथा भीष्मकृपद्रोणशल्यदुर्योधनादिभिः ।**
**तवापि च बभौ सेना ग्रहैर्द्यौरिव संवृता ॥६॥**

इसी प्रकार इधर भीष्म, कृपाचार्य, द्रोणाचार्य, शल्य और दुर्योधन आदि से घिरी हुई आपकी सेना भी ग्रहों से आकाश की भाँति शोभा पा रही थी ।

**भीमसेनस्तु कौन्तेयो द्रोणं दृष्ट्वा पराक्रमी ।**
**अभ्ययाज्जवनैरश्वैर्भारद्वाजस्य वाहिनीम् ॥७॥**

पराक्रमी कुन्तीकुमार भीमसेन ने द्रोणाचार्य को देखकर वेगशाली अश्वों द्वारा द्रोणाचार्य की सेना पर आक्रमण किया ।

**द्रोणस्तु समरे क्रुद्धो भीमं नवभिरायसैः ।**
**विव्याध समरश्लाघी मर्माण्युद्दिश्य वीर्यवान् ॥८॥**

युद्ध की अभिलाषा रखनेवाले पराक्रमी द्रोणाचार्य ने रणभूमि में क्रुद्ध हो भीम के मर्मस्थानों को लोहे के नौ बाणों से घायल कर दिया ।

**दृढाहतस्ततो भीमो भारद्वाजस्य संयुगे ।**
**सारथिं प्रेषयामास यमस्य सदनं प्रति ॥९॥**

युद्ध में द्रोणाचार्य के द्वारा अत्यन्त आहत होने पर भीमसेन ने उनके सारथि को यमलोक पठा दिया ।

**स संगृह्य स्वयं वाहान् भारद्वाजः प्रतापवान् ।**
**व्यधमत् पाण्डवीं सेनां तूलराशिमिवानलः ॥१०॥**

तब प्रतापशाली द्रोणाचार्य स्वयं अपने घोड़ों की बागडोर सँभालते हुए पाण्डव-सेना का उसी प्रकार संहार करने लगे, जैसे अग्नि रूई के ढेर को भस्म-कर डालती है ।

**ते वध्यमाना द्रोणेन भीष्मेण च नरोत्तमाः ।**
**सृञ्जयाः केकयैः सार्धं पलायनपराऽभवन् ॥११॥**

वे नरश्रेष्ठ सृञ्जय और केकय द्रोणाचार्य और भीष्म की मार खाकर युद्धभूमि से भागने लगे ।

**तथैव तावकं सैन्यं भीमार्जुनपरिक्षतम् ।**
**मुह्यते तत्र तत्रैव समदेव वराङ्गना ॥१२॥**

इसी प्रकार भीम और अर्जुन के बाणों से क्षत-विक्षत हुई आपकी सेना भी मतवाली स्त्री की भाँति जहाँ-तहाँ मूर्च्छित होने लगी ।

धृतराष्ट्र उवाच

**एवं बहुगुणं सैन्यमेवं बहुविधं पुरा ।**
**व्यूढमेवं यथाशास्त्रममोघं चैव सञ्जय ॥१३॥**

**धृतराष्ट्र बोले**—सञ्जय ! हमारी सेना अनेक गुणों से सम्पन्न है । वह अनेक अङ्गों से युक्त और अनेक प्रकार से संगठित है तथा शास्त्रीय विधि से उसकी व्यूहरचना की गई है, अतः वह अमोघ [विजय पाने में विफल न होनेवाली] है ।

**हृष्टमस्माकमत्यन्तमभिकामं च नः सदा ।**
**प्रह्वमव्यसनोपेतं पुरस्ताद् दृष्टविक्रमम् ॥१४॥**

हमारी यह सेना हम लोगों पर सदा प्रसन्न और अनुरक्त रहनेवाली है । यह हमारे प्रति सदा विनीत भाव रखती आई है । यह किसी भी व्यसन में नहीं फँसी है । पूर्वकाल में इसका पराक्रम देखा जा चुका है ।

**नातिवृद्धमबालं च न कृशं न च पीवरम् ।**
**लघुवृत्तायतप्रायं सारयोधमनामयम् ॥१५॥**

इसमें न कोई अत्यन्त वृद्ध है, न बालक है, न अत्यन्त दुबला है और न अत्यन्त मोटा ही है । इसमें शीघ्र कार्य करनेवाले, प्रायः ऊँचे कद के लोग हैं । इस सेना का प्रत्येक सैनिक सारवान् योद्धा और नीरोग है ।

**द्रोणभीष्माभिसंगुप्तं गुप्तं च कृतवर्मणा ।**
**कृपदुःशासनाभ्यां च जयद्रथमुखैस्तथा ॥१६॥**

यह सेना द्रोणाचार्य, भीष्म, कृतवर्मा, कृपाचार्य, दुःशासन और जयद्रथ आदि प्रमुख वीरों के द्वारा सुरक्षित रहती है ।

**ईदृशोऽपि बलौघस्तु संयुक्तः शस्त्रसम्पदा ।**
**वध्यते यत्र संग्रामे किमन्यद् भागधेयतः ॥१७॥**

इतना बड़ा सैन्यसमुदाय शस्त्रसम्पत्ति से युक्त होने पर भी यदि संग्राम में नष्ट हो रहा है तो इसमें भाग्य के सिवा और क्या कारण हो सकता है ?

सञ्जय उवाच

**आत्मदोषात्त्वया राजन्प्राप्तं व्यसनमीदृशम् ।**
**तव दोषात् पुरा वृत्तं द्यूतमेव विशाम्पते ॥१८॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! आपने अपने ही दोष से यह संकट प्राप्त किया है । प्रजानाथ ! पहले आपके ही अपराध से द्यूतक्रीड़ा की घटना घटी थी ।

**तव दोषेण युद्धं च प्रवृत्तं सह पाण्डवैः ।**
**त्वमेवाद्य फलं भुङ्क्ष्व कृत्वा किल्बिषमात्मना ॥१९॥**

आपके ही दोष से आज पाण्डवों के साथ युद्ध आरम्भ हुआ है । आपने स्वयं ही जो पाप किया है, उसका फल आज आप स्वयं ही भोग रहे हैं ।

**आत्मनैव कृतं कर्म आत्मनैवोपभुज्यते । □**
**इह च प्रेत्य वा राजँस्त्वया प्राप्तं यथातथम् ॥२०॥**

राजन् ! इहलोक अथवा परलोक में अपने किये हुए कर्म का फल अपने-आपको ही भोगना पड़ता है, अतः आपको जैसे-का-तैसा प्राप्त हुआ है ।

**तस्माद्राजन् स्थिरो भूत्वा प्राप्येदं व्यसनं महत् ।**
**शृणु युद्धं यथावृत्तं शंसतो मे नराधिप ॥२१॥**

राजन् ! नरेश्वर ! इस महान् संकट को पाकर भी स्थिरतापूर्वक युद्ध का यथावत् वृत्तान्त जैसा मैं बता रहा हूँ, सुनिए ।

**भीमसेनः सुनिशितैर्बाणैर्भित्वा महाचमूम् ।**
**आससाद ततो वीरः सर्वान् दुर्योधनानुजान् ॥२२॥**

वीर भीमसेन ने तीखे बाणों से आपकी विशाल सेना को विदीर्ण करके दुर्योधन के सभी भाइयों पर आक्रमण किया ।

**दुःशासनं दुर्विषहं दुःसहं दुर्मदं जयम् ।**
**एताँश्चान्याँश्च सुबहून् समीपस्थान्महारथान् ॥२३॥**
**धार्तराष्ट्रान् सुसंक्रुद्धान् दृष्ट्वा भीमो महारथः ।**
**भीष्मेण समरे गुप्तां प्रविवेश महाचमूम् ॥२४॥**

दुःशासन, दुर्विषह, दुःसह, दुर्मद, जय—ये तथा और भी बहुत-से आपके जो महारथी पुत्र समीप खड़े थे, उन्हें कुपित देखकर महारथी भीमसेन ने रणभूमि में भीष्म के द्वारा सुरक्षित विशाल कौरव-सेना में प्रवेश किया ।

**अथालोक्य प्रविष्टं तमूचुस्ते सर्व एव तु ।**
**जीवग्राहं निगृह्णीमो वयमेनं नराधिपाः ॥२५॥**

भीमसेन को सेना में प्रविष्ट हुआ देख उन सब नरेशों ने आपस में कहा कि हम लोग इन्हें जीवित ही पकड़कर बन्दी बना लें ।

**तेषां व्यवसितं ज्ञात्वा भीमसेनो जिघृक्षताम् ।**
**समस्तानां वधे राजन् मतिं चक्रे महामनाः ॥२६॥**

राजन् ! उन्हें कैद करने की इच्छावाले क्षत्रियों के इस निश्चय को जानकर महामना भीम ने उन सबके वध का विचार किया ।

**ततो रथं समुत्सृज्य गदामादाय पाण्डवः ।**
**जघान धार्तराष्ट्राणां तं बलौघं महार्णवम् ॥२७॥**

तब तो पाण्डुनन्दन भीमसेन, उस रथ को छोड़ और हाथ में गदा लेकर तथा उस विशाल सेना में घुसकर, उस महासागर के समान सैन्यसमुदाय को नष्ट करने लगे ।

**भीमसेने प्रविष्टे तु धृष्टद्युम्नोऽपि पार्षतः ।**
**द्रोणमुत्सृज्य तरसा प्रययौ यत्र सौबलः ॥२८॥**

भीमसेन के कौरवसेना में प्रवेश करने पर द्रुपद-कुमार धृष्टद्युम्न भी द्रोणाचार्य को छोड़कर, अति वेग से उस स्थान पर गये, जहाँ शकुनि युद्ध कर रहा था ।

**निवार्य महतीं सेनां तावकानां नरर्षभः ।**
**आससाद रथं शून्यं भीमसेनस्य संयुगे ॥२९॥**

वहाँ आपकी विशाल सेना को आगे बढ़ने से रोककर नरश्रेष्ठ धृष्टद्युम्न रणभूमि में भीमसेन के सूने रथ के पास जा पहुँचे ।

**दृष्ट्वा विशोकं समरे भीमसेनस्य सारथिम् ।**
**धृष्टद्युम्नो महाराज दुर्मना गतचेतनः ॥३०॥**

महाराज ! भीमसेन के सारथि विशोक को रण-क्षेत्र में अकेला खड़ा देख धृष्टद्युम्न मन-ही-मन बहुत दुःखी और अचेत हो गये ।

**अपृच्छद् वाष्पसंरुद्धो निःश्वसन् वाचमीरयन् ।**
**मम प्राणैः प्रियतमः क्व भीम इति दुःखितः ॥३१॥**

वे दीर्घ श्वास छोड़ते और आँसू बहाते हुए गद्-गदकण्ठ से पूछने लगे—"विशोक ! मेरे प्राणों से प्रिय भीम कहाँ है ?" इतना कहते-कहते वे अत्यन्त दुःखी हो गये ।

**विशोकस्तमुवाचेदं धृष्टद्युम्नं कृताञ्जलिः ।**
**संस्थाप्य मामिह बली पाण्डवो हि पराक्रमी ॥३२॥**
**प्रविष्टो धार्तराष्ट्राणामेतद् बलमहार्णवम् ।**
**मामुक्त्वा पुरुषव्याघ्रः प्रीतिमुक्तमिदं वचः ॥३३॥**
**प्रतिपालय मां सूत नियम्याश्वान् मुहूर्तकम् ।**
**यावदेतान् निहन्म्यद्य य इमे मद्वधोद्यताः ॥३४॥**

तब विशोक ने हाथ जोड़कर धृष्टद्युम्न से कहा —"प्रभो ! पराक्रमी और बलवान् पाण्डुनन्दन मुझे यहीं खड़ा करके कौरवों के इस सैन्य-समुद्र में घुस गये हैं । जाते समय पुरुषसिंह भीमसेन ने मुझसे प्रीति-पूर्वक यह बात कही कि सूत ! तुम दो घड़ी तक इन घोड़ों को रोककर यहीं मेरी प्रतीक्षा करो, जबतक कि जो लोग मेरा वध करने के लिए उद्यत हैं, मैं इन्हें मार न डालूँ ।"

**विशोकस्य वचः श्रुत्वा धृष्टद्युम्नोऽथ पार्षतः ।**
**प्रत्युवाच ततः सूतं रणमध्ये महाबलः ॥३५॥**

विशोक की यह बात सुनकर महाबली द्रुपद-कुमार धृष्टद्युम्न ने उस रणभूमि में उसके सारथि से यह वचन कहा—

**अस्वस्ति तस्य कुर्वन्ति देवाः शक्रपुरोगमाः । □**
**यः सहायान् परित्यज्य स्वस्तिमानाव्रजेद् गृहम् ॥३६॥**

"जो अपने सहायकों को छोड़कर स्वयं कुशल-पूर्वक घर को लौट जाता है, इन्द्र आदि देवता उसका अनिष्ट करते हैं ।

**मम भीमः सखा चैव सम्बन्धी च महाबलः ।**
**भक्तोऽस्मान् भक्तिमाँश्चाहं तमप्यरिनिषूदनम् ॥३७॥**

"महाबली भीम मेरे मित्र और सम्बन्धी हैं । वे हम लोगों के भक्त हैं और मैं भी उन शत्रु-संहारक भीम का भक्त हूँ ।

**सोऽहं तत्र गमिष्यामि यत्र यातो वृकोदरः ।**
**निघ्नन्तं मां रिपून् पश्य दानवानिव वासवम् ॥३८॥**

"अतः मैं भी वहीं जाऊँगा जहाँ भीमसेन गये हैं । जैसे इन्द्र दानवों का संहार करते हैं, उसी प्रकार मुझे भी शत्रुसेना का विनाश करते हुए देखना ।"

**एवमुक्त्वा ततो वीरो ययौ मध्येन भारत ।**
**भीमसेनस्य मार्गेषु गदाप्रमथितैर्गजैः ॥३९॥**

हे भारत ! ऐसा कहकर वीरवर धृष्टद्युम्न भीमसेन के बनाये हुए मार्गों से कौरव-सेना के भीतर गये । उन मार्गों पर गदा के मारे हुए हाथी पड़े थे ।

**स ददर्श तदा भीमं दहन्तं रिपुवाहिनीम् ।**
**वातो वृक्षानिव बलात् प्रभञ्जन्तं रणे रिपून् ॥४०॥**

तब कुछ दूर जाकर धृष्टद्युम्न ने शत्रुसेना को दग्ध करते हुए भीमसेन को देखा । जैसे आँधी वृक्षों को बलपूर्वक उखाड़ फेंकती है, वैसे ही भीमसेन भी रणभूमि में शत्रुओं का संहार कर रहे थे ।

सैन्येन घोरेण सुसंगतेन
दृष्ट्वा बली पार्षतो भीमसेनम् ।
अथोपगच्छच्छरविक्षताङ्ग-
पदातिनं क्रोधविषं वमन्तम् ॥४१॥

अत्यन्त संगठित हुई भयंकर सेना ने भीमसेन पर आक्रमण किया है, यह देख धृष्टद्युम्न उनके पास गये। उस समय उन-[भीम]-का प्रत्येक अङ्ग बाणों से क्षत-विक्षत हो रहा था। वे पैदल थे और क्रोधरूपी विष उगल रहे थे।

विशल्यमेनं च चकार तूर्ण-
मारोपयच्चात्मरथे महात्मा ।
भृशं परिष्वज्य च भीमसेन-
माश्वासयामास स शत्रुमध्ये ॥४२॥

महामना धृष्टद्युम्न ने तुरन्त ही उन्हें अपने रथ पर बिठा लिया और उनके शरीर में घुसे हुए बाणों को निकाल दिया। उन्होंने शत्रुओं के बीच में ही भीमसेन को हृदय से लगाकर उन्हें पूर्णतः सान्त्वना प्रदान की।

अयं दुरात्मा द्रुपदस्य पुत्रः
समागतो भीमसेनेन सार्धम् ।
तं याम सर्वे महता बलेन
भ्रातॄनुवाचाथ तवापि पुत्रः ॥४३॥

उधर आपका पुत्र दुर्योधन अपने भाइयों से बोला—"यह दुरात्मा द्रुपदपुत्र आकर भीमसेन से मिल गया है। आओ, हम सब लोग विशाल सेना के साथ इसपर आक्रमण करें।"

श्रुत्वा तु वाक्यं तममृष्यमाणा
ज्येष्ठाज्ञया नोदिता धार्तराष्ट्राः ।
वधाय निष्पेतुरुदायुधास्ते
युगक्षये केतवो यद्वदुग्राः ॥४४॥

दुर्योधन का यह कथन सुनकर आपके सभी वीर पुत्र, जो धृष्टद्युम्न का आगमन नहीं सह सके थे, बड़े भाई की आज्ञा से प्रेरित हो प्रलयकाल के भयंकर केतुओं की भाँति हाथ में आयुध लिये धृष्टद्युम्न के वध के लिए उनपर टूट पड़े।

शरैरवर्षन् द्रुपदस्य पुत्रं
यथाम्बुदा भूधरं वारिजालैः ।
निहत्य तांश्चापि शरैः सुतीक्ष्णैर्-
न विव्यथे समरे चित्रयोधी ॥४५॥

जैसे मेघ पर्वत पर जल की बूँदें बरसाते हैं, उसी प्रकार वे द्रुपदपुत्र पर बाणों की वृष्टि करने लगे, परन्तु विचित्र रीति से युद्ध करनेवाले धृष्टद्युम्न उस रणक्षेत्र में अपने तीखे बाणों द्वारा उन सबको अत्यन्त घायल करके स्वयं तनिक भी व्यथित नहीं हुए।

समभ्युदीर्णांश्च तवात्मजाँस्तथा
निशम्य वीरानभितः स्थितान् रणे ।
जिघांसुरुग्रं द्रुपदात्मजो युवा
प्रमोहनास्त्रं युयुजे महारथः ॥४६॥

युद्ध में सामने खड़े हुए आपके वीर पुत्रों को आगे बढ़ते देख नवयुवक महारथी द्रुपदकुमार ने उनके वध के लिए भयंकर प्रमोहनास्त्र का प्रयोग किया।

क्रुद्धो भृशं तव पुत्रेषु राजन्
दैत्येषु यद्वत् समरे महेन्द्रः ।
ततो व्यमुह्यन्त रणे नृवीराः
प्रमोहनास्त्राहतबुद्धिसत्त्वाः ॥४७॥

राजन्! जैसे युद्ध में देवराज इन्द्र दैत्यों पर क्रुद्ध होते हैं, उसी प्रकार आपके पुत्रों पर धृष्टद्युम्न का कोप बहुत बढ़ा हुआ था। उसके मोहनास्त्र के प्रयोग से अपनी चेतना और धैर्य खोकर आपके नर-वीर पुत्र रणक्षेत्र में मोहित हो गये।

प्रदुद्रुवुः कुरवश्चैव सर्वे
सवाजिनागाः सरथाः समन्तात् ।
परीतकालानिव नष्टसंज्ञान्
मोहोपेताँस्तव पुत्रान् निशम्य ॥४८॥

आपके पुत्रों को मोह से युक्त एवं मरे हुए के समान अचेत हुआ देख समस्त कौरव-सैनिक हाथी, घोड़े और रथोंसहित सब ओर भाग चले।

अथ शुश्राव तेजस्वी द्रोणः शस्त्रभृतां वरः ।
रणे प्रमोहनास्त्रेण मोहितानात्मजाँस्तव ॥४९॥

उधर शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ तेजस्वी द्रोणाचार्य ने सुना कि आपके पुत्र युद्धभूमि में प्रमोहनास्त्र से मोहित होकर भूमि पर पड़े हैं।

**ततो द्रोणो महाराज त्वरितोऽभ्याययौ रणात् ।**
**मोहाविष्टाँश्च ते पुत्रानपश्यत् स महारथः ॥५०॥**

महाराज ! यह सुनते ही द्रोणाचार्य तुरन्त उस युद्धस्थल से चलकर वहाँ आ पहुँचे । वहाँ आकर उस महारथी ने देखा कि आपके पुत्र मोहाविष्ट होकर पड़े हुए हैं ।

**ततः प्रज्ञास्त्रमादाय मोहनास्त्रं व्यनाशयत् ।**
**अथ प्रत्यागतप्राणास्तव पुत्रा महारथाः ॥५१॥**

तब उन्होंने प्रज्ञास्त्र लेकर उसके द्वारा मोहनास्त्र का नाश कर दिया । इससे आपके महारथी पुत्रों में पुनः चेतना लौट आई ।

**इति महाभारते भीष्मपर्वणि पञ्चदशोऽध्यायः ॥१५॥**

# षोडशोऽध्यायः

## उभयपक्ष की सेनाओं का संकुल युद्ध, भीमसेन द्वारा दुर्योधन की पराजय तथा छठे दिन के युद्ध की समाप्ति

सञ्जय उवाच

**अपराह्णे महाराज प्रावर्तत महारणः ।**
**तावकानां च बलिनां परेषां चैव भारत ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज ! भरतनन्दन ! अपराह्णकाल में आपके और पाण्डवपक्ष के अत्यन्त बलवान् योद्धाओं में बड़ा भारी युद्ध आरम्भ हुआ ।

**अभिमन्युर्विकर्णस्य हयान् हत्वा महाहवे ।**
**अथैनं पञ्चविंशत्या क्षुद्रकाणां समार्पयत् ॥२॥**

अभिमन्यु ने उस युद्ध में विकर्ण के घोड़ों को मारकर स्वयं विकर्ण को भी पच्चीस बाणों से घायल कर दिया ।

**दुःशासनस्तु समरे केकयान् पञ्च मारिष ।**
**योधयामास राजेन्द्र तदद्भुतमिवाभवत् ॥३॥**

आर्य ! राजेन्द्र ! दुःशासन ने अकेले ही रणभूमि में पाँच केकय-राजकुमारों के साथ युद्ध किया । वह एक अद्भुत-सी बात हुई ।

**द्रौपदेया रणे क्रुद्धा दुर्योधनमवारयन् ।**
**शरैराशीविषाकारैः पुत्रं तव विशाम्पते ॥४॥**

प्रजेश्वर ! युद्ध में कुपित हुए द्रौपदी के पाँचों पुत्रों ने विषधर सर्प के समान आकारवाले भयंकर बाणों द्वारा आपके पुत्र दुर्योधन को आगे बढ़ने से रोक दिया ।

**पुत्रोऽपि तव दुर्धर्षो द्रौपद्यास्तनयान् रणे ।**
**सायकैर्निशितै राजन्नाजघान पृथक् पृथक् ॥५॥**

राजन् ! तब आपके दुर्धर्ष पुत्र ने भी तीखे सायकों द्वारा युद्धभूमि में द्रौपदी के पाचों पुत्रों पर पृथक्-पृथक् प्रहार किया ।

**भीष्मोऽपि समरे राजन् पाण्डवानामनीकिनीम् ।**
**कालयामास बलवान् पालः पशुगणानिव ॥६॥**

राजन् ! बलवान् भीष्मजी भी रणभूमि में पाण्डवसेना को उसी प्रकार खदेड़ने लगे, जैसे चरवाहा पशुओं को हाँकता है ।

**ततो गाण्डीवनिर्घोषः प्रादुरासीद् विशाम्पते ।**
**दक्षिणेन वरूथिन्याः पार्थस्यारीन् विनिघ्नतः ॥७॥**

प्रजानाथ ! उधर शत्रुओं का संहार करते हुए अर्जुन के गाण्डीव धनुष का घोष सेना के दक्षिण भाग से प्रकट हुआ ।

**उत्तस्थुः समरे तत्र कबन्धानि समन्ततः ।**
**कुरूणां चैव सैन्येषु पाण्डवानां च भारत ॥८॥**

हे भारत ! वहाँ रणभूमि में कौरवों और पाण्डवों की सेनाओं में चारों ओर कबन्ध उठने लगे ।

**छिन्नहस्ता विकवचा विदेहाश्च नरोत्तमाः ।**
**दृश्यन्ते पतितास्तत्र शतशोऽथ सहस्रशः ॥९॥**

वहाँ सैकड़ों और हजारों नरश्रेष्ठ भूमि पर पड़े दिखाई देते थे । उनमें से कितनों के हाथ कट गये थे, कितने ही कवचरहित हो गये थे और बहुतों के शरीर छिन्न-भिन्न हो गये थे ।

**एवं युयुधिरे वीराः प्रार्थयाना महद् यशः ।**
**तावकाः पाण्डवैः सार्धमाकाङ्क्षन्तो जयं युधि ॥१०॥**

इस प्रकार महान् यश की अभिलाषा रखते हुए

तथा युद्ध में विजय चाहते हुए आपके वीर सैनिक पाण्डवों के साथ युद्ध कर रहे थे।

**ततो दुर्योधनो राजा लोहितायति भास्करे।**
**संग्रामरभसो भीमं हन्तुकामोऽभ्यधावत ॥११॥**

जब सूर्यदेव पर सन्ध्या की लाली छाने लगी, उस समय युद्ध के लिए उत्साह रखनेवाले राजा दुर्योधन ने भीमसेन को मार डालने की इच्छा से उन पर आक्रमण किया।

**तमायान्तमभिप्रेक्ष्य नृवीरं दृढवैरिणम्।**
**भीमसेनः सुसंक्रुद्ध इदं वचनमब्रवीत् ॥१२॥**

अपने पक्के वैरी नरवीर दुर्योधन को आते देख भीमसेन का क्रोध बहुत बढ़ गया और वे उससे ये वचन बोले—

भीम उवाच

**अयं स कालः सम्प्राप्तो वर्षपूगाभिवाञ्छितः।**
**अद्य त्वां निहनिष्यामि यदि नोत्सृजसे रणम् ॥१३॥**

**भीम बोले**—दुर्योधन! मैं बहुत वर्षों से जिसकी अभिलाषा और प्रतीक्षा कर रहा था, आज वही अवसर मुझे प्राप्त हुआ है। यदि तू युद्ध छोड़कर भाग नहीं जाएगा, तो आज मैं तुझे अवश्य मार डालूँगा।

**अद्य कुन्त्याः परिक्लेशं वनवासं च कृत्स्नशः।**
**द्रौपद्याश्च परिक्लेशं प्रणेष्यामि हते त्वयि ॥१४॥**

माता कुन्ती को जो कष्ट भोगना पड़ा है, हमने वनवास का जो क्लेश उठाया है और सभा में द्रौपदी को जो अपमान सहना पड़ा था, आज तुझे मारकर मैं उन सबका बदला चुका लूँगा।

सञ्जय उवाच

**एवमुक्त्वा धनुर्घोरं विकृष्योद्भ्राम्य चासकृत्।**
**समाधत्त शरान् घोरान् महाशनिसमप्रभान् ॥१५॥**

**सञ्जय कहते हैं**—ऐसा कहकर भीम ने अपने भयंकर धनुष को बारम्बार घुमाकर उसे बलपूर्वक खींचा और वज्र के समान तेजस्वी भयंकर बाणों को उसपर चढ़ाया।

**षड्विंशतिमथ क्रुद्धो मुमोचाशु सुयोधने।**
**ज्वलिताग्निशिखाकारान् वज्रकल्पानजिह्मगान् ॥१६॥**

भीमसेन ने शीघ्रतापूर्वक सीधे जानेवाले, वज्र तथा प्रज्वलित अग्नि की लपटों के समान प्रतीत होनेवाले छब्बीस बाण दुर्योधन के ऊपर छोड़े।

**ततोऽस्य कार्मुकं द्वाभ्यां सूतं द्वाभ्यां च विव्यधे।**
**चतुर्भिरश्वाञ्जवनाननयद् यमसादनम् ॥१७॥**

तत्पश्चात् भीमसेन ने दो बाणों से दुर्योधन का धनुष काट दिया, दो बाणों से उसके सारथि को व्यथा पहुँचाई और चार बाणों से उसके वेगशाली घोड़ों को यमलोक पठा दिया।

**अथैनं दशभिर्बाणैस्तोत्त्रैरिव महाद्विपम्।**
**आजघान रणे वीरं स्मयन्निव महारथः ॥१८॥**

फिर महारथी भीम ने मुस्कराते हुए-से रणभूमि में वीरवर दुर्योधन को दस बाणों से उसी प्रकार घायल किया, जैसे महावत अंकुशों से महान् गजराज को पीड़ित करता है।

**स गाढविद्धो व्यथितो भीमसेनेन संयुगे।**
**निषसाद रथोपस्थे राजन् दुर्योधनस्तदा ॥१९॥**

राजन्! भीमसेन ने उस युद्ध में दुर्योधन को बहुत घायल कर दिया था, अतः उस समय वह व्यथा से व्याकुल होकर रथ के पिछले भाग में जा बैठा।

**परिवार्य ततो भीमं जेतुकामो जयद्रथः।**
**रथैरनेकसाहस्रैर्भीमस्यावारयद् दिशः ॥२०॥**

तब जयद्रथ ने भीमसेन को जीतने की इच्छा रखकर अनेक रथों द्वारा उन्हें घेर लिया और उनकी सम्पूर्ण दिशाओं को अवरुद्ध कर दिया।

**धृष्टकेतुस्ततो राजन्नभिमन्युश्च वीर्यवान्।**
**केकया द्रौपदेयाश्च तव पुत्रानयोधयन् ॥२१॥**

राजन्! उसी समय धृष्टकेतु, पराक्रमी अभिमन्यु, पाँच केकयकुमार तथा द्रौपदी के पाँचों पुत्र आपके पुत्रों के साथ युद्ध करने लगे।

**तेषां सुतुमुलं युद्धं व्यतिषक्तरथद्विपम्।**
**अवर्तत महारौद्रं निघ्नतामितरेतरम् ॥२२॥**

फिर तो एक-दूसरे पर घातक प्रहार करते हुए उन सभी महारथियों में भयंकर तुमुल युद्ध होने लगा। रथों से रथ और हाथियों से हाथी भिड़ गये।

**ततः शान्तनवः क्रुद्धः शरैः संनतपर्वभिः।**
**नाशयामास सेनां तां भीष्मस्तेषां महात्मनाम् ॥२३॥**

उधर शान्तनुनन्दन भीष्म ने कुपित होकर झुकी

हुई गाँठवाले बाणों द्वारा उन महामना वीरों की सेना का नाश कर डाला ।

**एवं भित्त्वा महेष्वासः पाण्डवानामनीकिनीम् ।**
**कृत्वावहारं सैन्यानां ययौ स्वशिबिरं नृप ।।२४।।**

राजन् ! महाधनुर्धर भीष्म इस प्रकार पाण्डव-सेना का संहार करके अपनी समस्त सेनाओं को युद्ध से लौटाकर अपने शिबिर को चले गये ।

**धर्मराजोऽपि सम्प्रेक्ष्य धृष्टद्युम्नवृकोदरौ ।**
**मूर्ध्नि चैतावुपाघ्राय प्रहृष्टः शिबिरं ययौ ।।२५।।**

धर्मराज युधिष्ठिर ने भी धृष्टद्युम्न और भीमसेन दोनों से मिलकर उनका मस्तक सूँघा और बड़े हर्ष के साथ अपने शिबिर को प्रस्थान किया ।

**इति महाभारते भीष्मपर्वणि षोडशोऽध्यायः ।।१६।।**

# सप्तदशोऽध्यायः

## सातवें दिन का युद्ध—कौरव-पाण्डव सेनाओं का मण्डल और वज्रव्यूह बनाकर भीषण संघर्ष, द्रोणाचार्य और विराट, शिखण्डी और अश्वत्थामा का युद्ध, धृष्टद्युम्न के द्वारा दुर्योधन की पराजय, भीमसेन और कृतवर्मा का युद्ध

सञ्जय उवाच

**ततः प्रभाते विमले स्वेन सैन्येन वीर्यवान् ।**
**मण्डलमकरोद्भीष्मः व्यूहं व्यूहविशारदः ।।१।।**

**सञ्जय कहते हैं**—रात्रि व्यतीत होने पर निर्मल प्रभात की वेला में व्यूहविशारद भीष्म ने अपनी सेना के द्वारा स्वयं ही मण्डल नामक व्यूह का निर्माण किया ।

**मण्डलं तु समालोक्य व्यूहं परमदुर्जयम् ।**
**स्वयं युधिष्ठिरो राजा वज्रं व्यूहमथाकरोत् ।।२।।**

कौरवों के परम दुर्जय उस मण्डल-व्यूह को देखकर राजा युधिष्ठिर ने स्वयं अपनी सेना के लिए वज्रव्यूह का निर्माण किया ।

**बिभित्सवस्ततो व्यूहं निर्ययुर्युद्धकांक्षिणः ।**
**इतरेतरतः शूराः ससैन्याः सुप्रहारिणः ।।३।।**

व्यूह-निर्माण हो जाने पर प्रहार करने में कुशल सभी शूरवीर एक-दूसरे का व्यूह तोड़ने और परस्पर युद्ध करने की इच्छा से सेनासहित आगे बढ़े ।

**भारद्वाजो ययौ मत्स्यं द्रौणिश्चापि शिखण्डिनम् ।**
**स्वयं दुर्योधनो राजा पार्षतं समुपाद्रवत् ।।४।।**

द्रोणाचार्य ने विराट पर और अश्वत्थामा ने शिखण्डी पर आक्रमण किया । स्वयं राजा दुर्योधन ने द्रुपद पर चढ़ाई की ।

**नकुलः सहदेवश्च मद्रराजं समीयतुः ।**
**विन्दानुविन्दावावन्त्याविरावन्तमभिद्रुतौ ।।५।।**

नकुल और सहदेव ने अपने मामा मद्रराज शल्य पर धावा बोला । अवन्ती के विन्द और अनुविन्द ने इरावान् पर आक्रमण किया ।

**प्राग्ज्योतिषो महेष्वासो हैडिम्बं राक्षसोत्तमम् ।**
**अभिदुद्राव वेगेन मत्तो मत्तमिव द्विपम् ।।६।।**

महाधनुर्धर भगदत्त ने राक्षसप्रवर घटोत्कच पर बड़े वेग से आक्रमण किया मानो एक मतवाला हाथी दूसरे मतवाले हाथी पर टूट पड़ा हो ।

**भूरिश्रवा रणे मत्तो धृष्टकेतुमयोधयत् ।**
**श्रुतायुषं च राजानं धर्मपुत्रो युधिष्ठिरः ।।७।।**

भूरिश्रवा ने मदमत्त होकर रणभूमि में धृष्टकेतु के साथ युद्ध छेड़ दिया । धर्मपुत्र युधिष्ठिर ने राजा श्रुतायु पर धावा किया ।

**ततो राजसमूहास्ते परिवव्रुर्धनञ्जयम् ।**
**शक्तितोमरनाराचगदापरिघपाणयः ।।८।।**

उधर आपके सारे राजसमूहों ने मिलकर अर्जुन को चारों ओर से घेर लिया । उन सबके हाथों में शक्ति, तोमर, नाराच, गदा और परिघ आदि शोभा पा रहे थे ।

**ततः क्रुद्धोऽर्जुनो राजन्नैन्द्रमस्त्रमुदैरयत् ।**
**तत्राद्भुतमपश्याम विजयस्य पराक्रमम् ।।९।।**

राजन् ! तब अर्जुन ने कुपित होकर ऐन्द्रास्त्र का प्रयोग किया । उस समय हम लोगों ने अर्जुन का अद्भुत पराक्रम देखा ।

**शस्त्रवृष्टिं परैर्मुक्तां शरौघैर्यदवारयत् ।**
**न च तत्राप्यनिर्भिन्नः कश्चिदासीद् विशाम्पते ॥१०॥**

उन्होंने अपने बाणसमूह से शत्रुओं द्वारा की हुई बाणवर्षा को रोक दिया। महाराज ! उस समय वहाँ कोई भी योद्धा ऐसा नहीं रह गया था, जो उनके बाणों से क्षत-विक्षत न हो गया हो।

**ते हन्यमानाः पार्थेन भीष्मं शान्तनवं ययुः ।**
**अगाधे मज्जमानानां भीष्मः पोतोऽभवत् तदा ॥११॥**

अर्जुन की मार खाकर वे सबके सब शान्तनुनन्दन भीष्म की शरण में गये। उस समय अगाध विपत्ति-समुद्र में डूबते हुए सैनिकों के लिए भीष्म ही जहाज बन गये।

**ततः प्रयातः सहसा भीष्मः शान्तनवोऽर्जुनम् ।**
**रणे भारतमायान्तमाससाद महाबलः ॥१२॥**

तब शान्तनुनन्दन भीष्म रणभूमि में सहसा अर्जुन के सामने गये। भरतवंशी भीष्मजी को आते देख महाबली अर्जुन उनके पास जा पहुँचे।

**भारद्वाजस्तु समरे मत्स्यं विव्याध पत्रिणा ।**
**ध्वजं चास्य शरेणाजौ धनुश्चैकेन चिच्छिदे ॥१३॥**

दूसरी ओर द्रोणाचार्य ने मत्स्यराज विराट को रणभूमि में एक बाण से बींध डाला तथा एक बाण से उनका ध्वज तथा एक से धनुष काट डाला।

**तदपास्य धनुश्छिन्नं विराटो वाहिनीपतिः ।**
**अन्यदादत्त वेगेन धनुर्भारसहं दृढम् ॥१४॥**

तब सेनापति विराट ने उस कटे हुए धनुष को फेंककर शीघ्रतापूर्वक एक अन्य सुदृढ़ धनुष को हाथ में लिया, जो भार सहन करने में समर्थ था।

**शरांश्चाशीविषाकाराञ्ज्वलितान् पन्नगानिव ।**
**द्रोणं त्रिभिश्च विव्याध चतुर्भिश्चास्य वाजिनः ॥१५**

उन्होंने उसके द्वारा प्रज्वलित सर्पों की भाँति विषैले सर्पों की-सी आकृतिवाले बाण छोड़कर तीन से द्रोणाचार्य को और चार बाणों से उनके घोड़ों को बींध डाला।

**तस्य द्रोणोऽवधीदश्वाञ्शरैः संनतपर्वभिः ।**
**अष्टाभिर्भरतश्रेष्ठ सूतमेकेन पत्रिणा ॥१६॥**

भरतश्रेष्ठ ! तब द्रोण ने झुकी हुई गाँठवाले आठ बाणों द्वारा विराट के घोड़ों को तथा एक बाण से सारथि को मार डाला।

**स हताश्वादवप्लुत्य स्यन्दनाद्धतसारथिः ।**
**आरुरोह रथं तूर्णं पुत्रस्य रथिनां वरः ॥१७॥**

सारथि और घोड़ों के मारे जाने पर रथियों में श्रेष्ठ विराट अपने रथ से तुरन्त कूद पड़े और अपने पुत्र के रथ पर जा चढ़े।

**ततस्तु तौ पितापुत्रौ भारद्वाजं रथे स्थितौ ।**
**महता शरवर्षेण वारयामासतुर्बलात् ॥१८॥**

फिर तो उन दोनों पिता-पुत्रों ने एक ही रथ पर बैठकर महान् बाण-वृष्टि करके द्रोणाचार्य को बल-पूर्वक आगे बढ़ने से रोक दिया।

**भारद्वाजस्ततः क्रुद्धः शरमाशीविषोपमम् ।**
**चिक्षेप समरे तूर्णं शंखं प्रति जनेश्वर ॥१९॥**

नरेश्वर ! तब द्रोणाचार्य ने कुपित हो रणभूमि में विषधर सर्प के समान एक भयंकर बाण शीघ्रता-पूर्वक [विराट-पुत्र] शंख पर चलाया।

**स तस्य हृदयं भित्त्वा पीत्वा शोणितमाहवे ।**
**जगाम धरणीं बाणो लोहितार्द्रवरच्छदः ॥२०॥**

यह बाण शंख का हृदय विदीर्ण करके तथा रण-भूमि में उसका रक्तपान करके धरती में समा गया। उसके श्रेष्ठ पंख लोहू में भीगकर लाल हो रहे थे।

**स पपात रणे तूर्णं भारद्वाजशराहतः ।**
**धनुस्त्यक्त्वा शरांश्चैव पितुरेव समीपतः ॥२१॥**

द्रोणाचार्य के बाण से आहत होकर शंख पिता के समीप ही धनुष-बाण छोड़कर तुरन्त ही रणभूमि में गिर पड़ा।

**हतं तमात्मजं दृष्ट्वा विराटः प्राद्रवद् भयात् ।**
**उत्सृज्य समरे द्रोणं व्यात्ताननमिवान्तकम् ॥२२॥**

अपने पुत्र को मारा गया देख मुँह बाये हुए काल के समान भयंकर द्रोणाचार्य को रणभूमि में छोड़कर विराट भय के कारण भाग गये।

**भारद्वाजस्ततस्तूर्णं पाण्डवानां महाचमूम् ।**
**दारयामास समरे शतशोऽथ सहस्रशः ॥२३॥**

तब द्रोणाचार्य ने युद्धभूमि में तुरन्त ही पाण्डवों की विशाल सेना को विदीर्ण करना आरम्भ किया। सैकड़ों-सहस्रों योद्धा धराशायी हो गये।

**शिखण्डी तु महाराज द्रौणिमासाद्य संयुगे ।**
**आजघान भ्रुवोर्मध्ये नाराचैस्त्रिभिराशुगैः ॥२४॥**

राजेन्द्र ! दूसरी ओर शिखण्डी ने युद्धभूमि में अश्वत्थामा के पास पहुँचकर तीन शीघ्रगामी नाराच बाणों द्वारा उसके भौंहों के मध्यभाग में आघात किया ।

**अश्वत्थामा ततः क्रुद्धो निमेषार्धाच्छिखण्डिनः ।**
**ध्वजं सूतमथो राजंस्तुरगानायुधानि च ॥२५॥**
**शरैर्बहुभिराच्छिद्य पातयामास संयुगे ।**
**स हताश्वादवप्लुत्य रथाद् वै रथिनां वरः ॥२६॥**
**खड्गमादाय सुशितं विमलं च शरावरम् ।**
**श्येनवद् व्यचरत् क्रुद्धः शिखण्डी शत्रुतापनः ॥२७॥**

राजन् ! तब क्रोध में भरे हुए अश्वत्थामा ने आधे निमेष में ही बहुत-से बाणों द्वारा शिखण्डी के ध्वज, सारथि, घोड़ों और आयुधों को युद्धभूमि में काट गिराया । रथियों में श्रेष्ठ शत्रुसन्तापी शिखण्डी घोड़ों के मर जाने पर उस रथ से कूद पड़े और बहुत तीखी तथा चमकती तलवार एवं ढाल हाथ में लेकर कुपित हुए श्येन पक्षी की भाँति सब ओर विचरने लगे ।

**सात्यकिश्चापि संक्रुद्धो राक्षसं क्रूरमाहवे ।**
**अलम्बुषं शरैस्तीक्ष्णैर्विव्याध बलिनां वरः ॥२८॥**

इधर बलवानों में श्रेष्ठ सात्यकि ने भी अत्यन्त कुपित होकर अपने तीखे बाणों द्वारा संग्रामभूमि में क्रूर राक्षस अलम्बुष को बींध डाला ।

**तत् तथा पीडितं तेन माधवेन यशस्विना ।**
**प्रदुद्राव भयाद् रक्षस्त्यक्त्वा सात्यकिमाहवे ॥२९॥**

महायशस्वी मधुवंशी सात्यकि के द्वारा इस प्रकार पीड़ित होने पर वह राक्षस भय से व्याकुल हो उन्हें युद्धस्थल में छोड़कर भाग गया ।

**न्यहनत् तावकांश्चापि सात्यकिः सत्यविक्रमः ।**
**निशितैर्बहुभिर्बाणैस्तेऽद्रवन्त भयार्दिताः ॥३०॥**

तब सत्यपराक्रमी सात्यकि ने अपने बहुसंख्यक तीखे बाणों द्वारा आपके अन्य योद्धाओं को भी मारना आरम्भ किया । उस समय उनके भय से पीड़ित हो वे सब भागने लगे ।

**एतस्मिन्नेव काले तु द्रुपदस्यात्मजो बली ।**
**धृष्टद्युम्नो महाराज पुत्रं तव जनेश्वरम् ॥३१॥**
**छादयामास समरे शरैः संनतपर्वभिः ।**
**हयाँश्च चतुरः शीघ्रं निजघान महाबलः ॥३२॥**

महाराज ! इसी समय द्रुपद के बलवान् पुत्र धृष्टद्युम्न ने आपके पुत्र राजा दुर्योधन को युद्धभूमि में झुकी हुई गाँठवाले बाणों से आच्छादित कर दिया । फिर शीघ्रतापूर्वक उसके चारों घोड़ों को भी मार डाला ।

**स हताश्वान्महाबाहुरवप्लुत्य रथाद् बली ।**
**पदातिरसिमुद्यम्य प्राद्रवत् पार्षतं प्रति ॥३३॥**

घोड़ों के मारे जाने पर बलवान् महाबाहु दुर्योधन अपने रथ से कूद पड़ा और तलवार उठाकर धृष्टद्युम्न की ओर पैदल ही दौड़ा ।

**शकुनिस्तं समभ्येत्य राजगृद्धी महाबलः ।**
**राजानं सर्वलोकस्य रथमारोपयत् स्वकम् ॥३४॥**

उसी समय महाबली शकुनि ने जो राजा को बहुत चाहता था, निकट आकर सम्पूर्ण जगत् के अधिपति दुर्योधन को अपने रथ पर चढ़ा लिया ।

**कृतवर्मा रणे भीमं शरैराच्छेन्महारथः ।**
**तं च प्रच्छादयामास महामेघो रविं यथा ॥३५॥**

महारथी कृतवर्मा ने युद्धभूमि में भीमसेन को अपने बाणों से बहुत पीड़ित किया और महामेघ जैसे सूर्य को ढक लेता है, वैसे ही उसने भीमसेन को बाणों से आच्छादित कर दिया ।

**ततः प्रहस्य समरे भीमसेनः परन्तपः ।**
**प्रेषयामास संक्रुद्धः सायकान् कृतवर्मणे ॥३६॥**

तब युद्ध में शत्रुओं को सन्ताप देनेवाले भीमसेन ने हँसकर अत्यन्त क्रोधपूर्वक कृतवर्मा पर अनेक सायकों का प्रहार किया ।

**तस्याश्वाँश्चतुरो हत्वा भीमसेनो महारथः ।**
**सारथिं पातयामास सध्वजं सुपरिष्कृतम् ॥३७॥**

फिर महारथी भीमसेन ने उनके चारों घोड़ों को मारकर ध्वजसहित सुसज्जित सारथि को भी काट गिराया ।

**हताश्वश्च ततस्तूर्णं वृषकस्य रथं ययौ ।**
**श्यालस्य ते महाराज तव पुत्रस्य पश्यतः ॥३८॥**

महाराज ! घोड़ों के मारे जाने पर कृतवर्मा आपके पुत्र के देखते-देखते तुरन्त ही आपके साले वृषक के रथ पर जा चढ़ा।

**भीमसेनोऽपि संक्रुद्धस्तव सैन्यमुपाद्रवत्।**
**निजघान च संक्रुद्धो दण्डपाणिरिवान्तकः ॥३६॥**

इधर भीमसेन भी अत्यन्त कुपित होकर आपकी सेना पर टूट पड़े और दण्डपाणि यमराज की भाँति उसका संहार करने लगे।

**इति महाभारते भीष्मपर्वणि सप्तदशोऽध्यायः ॥१७॥**

# अष्टादशोऽध्यायः

## इरावान् द्वारा विन्द-अनुविन्द और भगदत्त द्वारा घटोत्कच की पराजय, अभिमन्यु द्वारा चित्रसेन का हारना, भीष्म और युधिष्ठिर का युद्ध तथा द्रोण का पराक्रम

धृतराष्ट्र उवाच

**बहूनि हि विचित्राणि द्वैरथानि स्म सञ्जय।**
**पाण्डूनां मामकैः सार्धमश्रौषं तव जल्पतः ॥१॥**

**धृतराष्ट्र बोले**—सञ्जय ! मैंने तुम्हारे मुख से अबतक पाण्डवों के मेरे पुत्रों के साथ जो बहुत-से विचित्र द्वैरथ युद्ध हुए हैं, उनका वर्णन सुना।

**न चैव मामकं किञ्चिद्धृष्टं शंससि सञ्जय।**
**नित्यं पाण्डुसुतान् हृष्टानभग्नान् सम्प्रशंससि ॥२॥**

परन्तु सञ्जय ! तुमने अभी तक मेरे पक्ष में घटित हुई कोई हर्ष की बात नहीं कही है, उल्टे तुम पाण्डवों को प्रतिदिन हर्ष से पूर्ण और अपराजित बताते हो।

**जीयमानान् विमनसो मामकान् विगतौजसः।**
**वदसि संयुगे सूत दिष्टमेतन्न संशयः ॥३॥**

तुम सदा मेरे पुत्रों को तेज और बल से हीन, खिन्नचित्त और युद्ध में पराजित बताते हो। सूत ! यह सब प्रारब्ध का ही खेल है, इसमें संशय नहीं है।

सञ्जय उवाच

**यथाशक्ति यथोत्साहं युद्धे चेष्टन्ति तावकाः।**
**दर्शयानाः परं शक्त्या पौरुषं पुरुषर्षभ ॥४॥**

**सञ्जय कहते हैं**—पुरुषश्रेष्ठ ! आपके पुत्र भी पूरी शक्ति से पुरुषार्थ दिखाते हुए अपने बल और उत्साह के अनुसार युद्ध में सफलता प्राप्त करने की चेष्टा करते हैं।

**गङ्गायाः सुरनद्या वै स्वादु भूत्वा यथोदकम्।**
**महोदधेर्गुणाभ्यासाल्लवणत्वं निगच्छति ॥५॥**
**तथा तत् पौरुषं राजंस्तावकानां परन्तप।**
**प्राप्य पाण्डुसुतान् वीरान् व्यर्थं भवति संयुगे ॥६॥**

परन्तप ! नरेश ! जैसे देवनदी गङ्गा का जल स्वादिष्ट होकर भी महासागर के संयोग से उसके गुण का सम्मिश्रण हो जाने से खारा हो जाता है, उसी प्रकार आपके पुत्रों का पुरुषार्थ युद्ध में वीर पाण्डवों तक पहुँचकर व्यर्थ हो जाता है।

**घटमानान् यथाशक्ति कुर्वाणान् कर्म दुष्करम्।**
**न दोषेण कुरुश्रेष्ठ कौरवान् गन्तुमर्हसि ॥७॥**

कुरुश्रेष्ठ ! कौरव यथाशक्ति प्रयत्न करते और दुष्कर कर्म कर दिखाते हैं, अतः आपको उनपर दोषारोपण नहीं करना चाहिए।

**पूर्वाह्णे तु महाराज प्रावर्तत जनक्षयः।**
**तं त्वमेकमना भूत्वा शृणु देवासुरोपमम् ॥८॥**

महाराज ! उस दिन पूर्वाह्णकाल में बड़ा भारी जनसंहार हुआ था। आप एकाग्रचित्त होकर देवासुर-संग्राम के समान भयंकर उस युद्ध का वृत्तान्त सुनिए।

**आवन्त्यौ तु महेष्वासौ महासेनौ महाबलौ।**
**इरावन्तमभिप्रेक्ष्य समेयातां रणोत्कटौ ॥९॥**

अवन्ती के महाबली, महाधनुर्धर और विशाल सेना से युक्त राजकुमार विन्द और अनुविन्द, जो युद्ध में उन्मत्त होकर लड़नेवाले हैं, अर्जुनपुत्र इरावान् को सामने देखकर उसी से भिड़ गये।

**इरावांस्तु ततो राजन्ननुविन्दस्य सायकैः।**
**चतुर्भिश्चतुरो वाहाननयद् यमसादनम् ॥१०॥**

राजन् ! उस समय इरावान् ने अपने चार बाणों द्वारा अनुविन्द के चारों घोड़ों को यमलोक पठा दिया।

**त्यक्त्वानुविन्दोऽथ रथं विन्दस्य रथमास्थितः ।**
**धनुर्गृहीत्वा परमं भारसाधनमुत्तमम् ॥११॥**

तब अनुविन्द अपने रथ को छोड़कर विन्द के रथ पर जा बैठा और भारवहन करने में समर्थ दूसरा परम उत्तम धनुष लेकर युद्ध के लिए डट गया ।

**तावेकस्थौ रणे वीरावावन्त्यौ रथिनां वरौ ।**
**शरान् मुमुचतुस्तूर्णमिरावति महात्मनि ॥१२॥**

रथियों में श्रेष्ठ वे दोनों अवन्ती के वीर रणभूमि में एक ही रथ पर बैठकर बड़ी शीघ्रता के साथ महामना इरावान् पर बाणों की वर्षा करने लगे ।

**इरावाँस्तु रणे क्रुद्धो भ्रातरौ तौ महारथौ ।**
**ववर्ष शरवर्षेण सारथिं चाप्यपातयत् ॥१३॥**

तब इरावान् ने भी रणभूमि में क्रुद्ध होकर उन दोनों महारथी बन्धुओं पर बाणों की वर्षा आरम्भ कर दी और उनके सारथि को मार गिराया ।

**तस्मिंस्तु पतिते भूमौ गतसत्त्वे तु सारथौ ।**
**रथः प्रदुद्राव दिशः समुद्भ्रान्तहयस्ततः ॥१४॥**

सारथि के प्राणशून्य होकर पृथिवी पर गिर जाने के पश्चात् उस रथ के घोड़े घबराकर भागने लगे और इस प्रकार वह रथ समस्त दिशाओं में दौड़ने लगा ।

**तौ स जित्वा महाराज नागराजसुतासुतः ।**
**पौरुषं ख्यापयंस्तूर्णं व्यधमत् तव वाहिनीम् ॥१५॥**

महाराज ! नागराज-कन्या उलूपी के पुत्र इरावान् ने विन्द और अनुविन्द को जीतकर अपने पुरुषार्थ का परिचय देते हुए तुरन्त ही आपकी सेना का संहार आरम्भ कर दिया ।

**हैडिम्बो राक्षसेन्द्रस्तु भगदत्तं समाद्रवत् ।**
**शरैः प्रच्छादयामास मेरुं गिरिमिवाम्बुदः ॥१६॥**

दूसरी ओर राक्षसराज घटोत्कच ने भगदत्त पर आक्रमण किया । उसने बाणों द्वारा उसे उसी प्रकार आच्छादित कर दिया, जैसे बादल मेरुपर्वत को ढक देता है ।

**ततः प्राग्ज्योतिषो राजा प्रहसन्निव भारत ।**
**तस्याश्वांश्चतुरः संख्ये पातयामास सायकैः ॥१७॥**

हे भारत ! तब राजा प्राग्ज्योतिष=भगदत्त ने हँसते हुए-से उस युद्ध में अपने सायकों द्वारा घटोत्कच के चारों घोड़ों को मार गिराया ।

**स हताश्वे रथे तिष्ठन् राक्षसेन्द्रः प्रतापवान् ।**
**शक्तिं विक्षेप वेगेन प्राग्ज्योतिषगजं प्रति ॥१८॥**

घोड़ों के मर जाने पर भी उसी रथ पर खड़े हुए प्रतापी राक्षसराज घटोत्कच ने भगदत्त के हाथी पर बड़े वेग से शक्ति का प्रहार किया ।

**तामापतन्तीं सहसा त्रिधा चिच्छेद भूपतिः ।**
**शक्तिं विनिहतां दृष्ट्वा हैडिम्बः प्राद्रवद् भयात् ॥१९॥**

उस शक्ति को सहसा अपनी ओर आते देख राजा भगदत्त ने उसके तीन टुकड़े कर डाले । अपनी शक्ति को नष्ट हुई देख हिडिम्बाकुमार घटोत्कच भय के मारे रणक्षेत्र से भाग खड़ा हुआ ।

**चित्रसेनो विकर्णश्च राजन् दुर्मर्षणस्तथा ।**
**रथिनो हेमसंनाहाः सौभद्रमभिदुद्रुवुः ॥२०॥**

राजन् ! इसी समय चित्रसेन, विकर्ण तथा दुर्मर्षण—इन तीन रथियों ने सोने के कवच बाँधकर सुभद्राकुमार अभिमन्यु पर आक्रमण किया ।

**अभिमन्योस्ततस्तैस्तु घोरं युद्धमवर्तत ।**
**शरीरस्य यथा राजन् वातपित्तकफैस्त्रिभिः ॥२१॥**

नरेश्वर ! तब उनके साथ अभिमन्यु का भयंकर युद्ध आरम्भ हुआ, ठीक उसी प्रकार, जैसे शरीर का वात, पित्त और कफ—इन तीनों दोषों के साथ होता रहता है ।

**विरथांस्तव पुत्रांस्तु कृत्वा राजन् महाहवे ।**
**न जघान नरव्याघ्रः स्मरन् भीमवचस्तदा ॥२२॥**

राजन् ! उस युद्ध में आपके पुत्रों को रथहीन करके पुरुषसिंह अभिमन्यु ने उस समय भीमसेन की प्रतिज्ञा का स्मरण करके उनका वध नहीं किया ।

**भीष्मः शान्तनवस्तूर्णं युधिष्ठिरमुपाद्रवत् ।**
**युधिष्ठिरोऽपि कौरव्यो भीष्मं शान्तनवं ययौ ॥२३॥**

उसी समय शान्तनुनन्दन भीष्म ने तुरन्त ही राजा युधिष्ठिर पर आक्रमण किया । उधर कुरुनन्दन राजा युधिष्ठिर भी उनका सामना करने के लिए आगे बढ़े ।

**निमेषार्धेन कौन्तेयं भीष्मः शान्तनवो युधि ।**
**अदृश्यं समरे चक्रे शरजालेन भागशः ॥२४॥**

शान्तनुनन्दन भीष्म ने युद्धक्षेत्र में आधे निमेष में ही पृथक्-पृथक् बाणों का जाल-सा बिछाकर कुन्ती-नन्दन युधिष्ठिर को अदृश्य कर दिया।

**ततो युधिष्ठिरो राजा कौरव्यस्य महात्मनः।**
**नाराचं प्रेषयामास क्रुद्ध आशीविषोपमम् ॥२५॥**

तब कुपित हुए राजा युधिष्ठिर ने कुरुवंशी महात्मा भीष्म पर विषधर सर्प के समान नाराच का प्रहार किया।

**तं तु छित्वा रणे भीष्मो नाराचं कालसम्मितम्।**
**निजघ्ने कौरवेन्द्रस्य हयान् काञ्चनभूषणान् ॥२६॥**

रणक्षेत्र में काल के समान भयङ्कर उस नाराच को काटकर भीष्म ने कौरवराज पाण्डवनन्दन युधिष्ठिर के स्वर्णाभूषणों से विभूषित घोड़ों को मार डाला।

**हताश्वं तु रथं त्यक्त्वा धर्मपुत्रो युधिष्ठिरः।**
**आरुरोह रथं तूर्णं नकुलस्य महात्मनः ॥२७॥**

तब जिस रथ के घोड़े मारे जा चुके थे, उस रथ को त्यागकर धर्मपुत्र युधिष्ठिर तुरन्त ही महात्मा नकुल के रथ पर आरूढ़ हो गये।

**ततो युधिष्ठिरो वश्यान् राज्ञस्तान् समनोदयत्।**
**भीष्मं शान्तनवं सर्वे निहतेति सुहृद्गणान् ॥२८॥**

फिर युधिष्ठिर ने अपने वशवर्ती नरेशों तथा हितैषियों को यह आदेश दिया कि तुम सब लोग मिलकर शान्तनुनन्दन भीष्म को मार डालो।

**ततस्ते पार्थिवाः सर्वे श्रुत्वा पार्थस्य भाषितम्।**
**महता रथवंशेन परिवव्रुः पितामहम् ॥२९॥**

उस समय कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर का यह कथन सुनकर समस्त राजाओं ने विशाल रथसमूहों के द्वारा पितामह भीष्म को चारों ओर से घेर लिया।

**परिवृतः समन्तात् सः पिता देवव्रतस्तव।**
**चिक्रीड धनुषा राजन् पातयानो महारथान् ॥३०॥**

राजन्! सब ओर से घिरे हुए आपके ताऊ देवव्रत सब महारथियों को धराशायी करते हुए अपने धनुष से ही खेलने-से लगे।

**तं चरन्तं रणे पार्था ददृशुः कौरवं युधि।**
**मृगमध्यं प्रविश्येव यथा सिंहशिशुं वने ॥३१॥**

जैसे सिंह का बच्चा वन के भीतर मृगों के झुण्ड में घुसकर खेल कर रहा हो उसी प्रकार कुन्तीकुमारों ने युद्ध में विचरते हुए कुरुवंशी भीष्म को वहाँ देखा।

**शिरांसि रथिनां भीष्मः पातयामास संयुगे।**
**तालेभ्यः परिपक्वानि फलानि कुशलो नरः ॥३२॥**

भीष्म उस युद्धस्थल में रथियों के मस्तक काट-काटकर उसी प्रकार गिराने लगे, जैसे कोई कुशल मनुष्य ताड़ के वृक्षों से पके हुए फलों को गिरा रहा हो।

**तस्मिन् सुतुमुले युद्धे वर्तमाने भयानके।**
**सर्वेषामेव सैन्यानामासीद् व्यतिकरो महान् ॥३३॥**

उस भयानक तुमुल युद्ध के होते समय सभी सेनाओं का आपस में भारी संकर हो गया।

**शिखण्डी तु समासाद्य भरतानां पितामहम्।**
**अभिदुद्राव वेगेन तिष्ठ तिष्ठेति चाब्रवीत् ॥३४॥**

उस समय शिखण्डी भरतवंश के पितामह भीष्म के पास पहुँचकर उनकी ओर बड़े वेग से दौड़ा और बोला—"खड़ा रह, खड़ा रह।"

**अनादृत्य ततो भीष्मस्तं शिखण्डिनमाहवे।**
**प्रययौ सृञ्जयान् क्रुद्धः स्त्रीत्वं चिन्त्य शिखण्डिनः ॥३५**

परन्तु भीष्मजी ने शिखण्डी के स्त्रीत्व का स्मरण करके युद्ध में उसकी अवहेलना कर दी और सृञ्जय-वंशी क्षत्रियों पर क्रोधपूर्वक आक्रमण किया।

**ततः प्रववृते युद्धं व्यतिषक्तरथद्विपम्।**
**पश्चिमां दिशमासाद्य स्थिते सवितरि प्रभो ॥३६॥**

राजन्! जब सूर्य पश्चिम दिशा में ढलने लगा उस समय युद्ध का रूप और भी भयंकर हो गया। रथ से रथी और हाथी से हाथी भिड़ गये।

**धृष्टद्युम्नोऽथ पाञ्चाल्यः सात्यकिश्च महारथः।**
**पीडयन्तौ भृशं सैन्यं शक्तितोमरवृष्टिभिः ॥३७॥**

पाञ्चालराजकुमार धृष्टद्युम्न तथा महारथी सात्यकि—ये दोनों शक्ति और तोमरों की वर्षा से कौरव-सेना को अत्यधिक पीड़ा देने लगे।

**अर्जुनश्चापि संक्रुद्धः क्षत्रियान् क्षत्रियर्षभः।**
**अयोधयत संग्रामे वज्रपाणिरिवासुरान् ॥३८॥**

क्षत्रियशिरोमणि अर्जुन भी अत्यन्त कुपित होकर क्षत्रियों के साथ रणभूमि में वैसे ही युद्ध करने लगे, जैसे वज्रधारी इन्द्र असुरों के साथ युद्ध करते हैं।

**द्रोणस्तु समरे क्रुद्धः पुत्रस्य प्रियकृत् तव ।**
**व्यधमत् सर्वपाञ्चालाँस्तूलराशिमिवानलः ॥३९॥**

आपके पुत्र का प्रिय करनेवाले द्रोणाचार्य भी युद्ध में कुपित होकर समस्त पाञ्चालों का विनाश करने लगे, मानो आग रूई के ढेर को जला रही हो।

**युध्यतां तु तथा तेषां कुर्वतां कर्म दुष्करम् ।**
**अस्तं गिरिमथारूढे अप्रकाशति भास्करे ॥४०॥**

जब सब योद्धा वेग से युद्ध करते हुए दुष्कर पराक्रम प्रकट कर रहे थे, उसी समय सूर्य अस्ताचल को चला गया और उसका प्रकाश लुप्त हो गया।

**ततः स्वशिबिरं गत्वा पाण्डवाः कुरवस्तथा ।**
**न्यवसन्त महाराज पूजयन्तः परस्परम् ॥४१॥**

महाराज! सूर्यास्त होने पर पाण्डव तथा कौरव अपने-अपने शिबिरों में जाकर परस्पर एक-दूसरे की प्रशंसा करते हुए विश्राम करने लगे।

**इति महाभारते भीष्मपर्वणि अष्टादशोऽध्यायः ॥१८॥**

# एकोनविंशोऽध्यायः

## आठवें दिन का घमासान युद्ध, भीमसेन के द्वारा धृतराष्ट्र के आठ पुत्रों का वध, दुर्योधन और भीष्म का युद्धविषयक वार्तालाप

सञ्जय उवाच

**परिणाम्य निषां तां तु सुखं प्राप्ता जनेश्वराः ।**
**कौरवाः पाण्डवाश्चैव पुनर्युद्धाय निर्ययुः ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! नरेश्वर कौरव और पाण्डव निद्रासुख का अनुभव करके और वह रात बिताकर पुनः युद्ध के लिए निकले।

**भीष्मः कृत्वा महाव्यूहं पिता तव विशाम्पते ।**
**सागरप्रतिमं घोरं वाहनोर्मितरङ्गिणम् ॥२॥**

प्रजेश्वर! आपके ताऊ भीष्म ने समुद्र के समान विशाल एवं भयङ्कर महाव्यूह का निर्माण किया, जिसमें हाथी, घोड़े आदि वाहन उत्ताल तरंगों के समान प्रतीत होते थे।

**तं तु दृष्ट्वा महाव्यूहं तावकानां महारथः ।**
**युधिष्ठिरोऽब्रवीत् तूर्णं पार्षतं पृतनापतिम् ॥३॥**

राजन्! आपके सैनिकों का वह व्यूह देखकर महारथी युधिष्ठिर ने तुरन्त ही सेनापति धृष्टद्युम्न से कहा—

**पश्य व्यूहं महेष्वास निर्मितं सागरोपमम् ।**
**त्वमपि प्रतिव्यूहं हि कुरु पार्षत सत्वरम् ॥४॥**

"महाधनुर्धर द्रुपदकुमार! देखो, शत्रुसेना का व्यूह सागर के समान बनाया गया है। तुम भी उसके मुकाबिले में शीघ्र ही अपनी सेना का व्यूह बना लो।"

**ततः स पार्षतः क्रूरो व्यूहं चक्रे सुदारुणम् ।**
**शृङ्गाटकं महाराज परव्यूहविनाशनम् ॥५॥**

महाराज! तब क्रूर स्वभाववाले धृष्टद्युम्न ने अत्यन्त दारुण शृङ्गाटक [सिंघाड़े] के आकारवाला व्यूह बनाया, जो शत्रु के व्यूह का विनाश करनेवाला था।

**एवमेतं महाव्यूहं व्यूह्य भारत पाण्डवाः ।**
**अतिष्ठन् समरे शूरा योद्धुकामा जयैषिणः ॥६॥**

भरतनन्दन! इस प्रकार अपनी सेना के इस महाव्यूह का निर्माण करके युद्ध की कामना और विजय की अभिलाषा रखनेवाले शूरवीर पाण्डव रणभूमि में खड़े थे।

**ततः शान्तनवो भीष्मो रथघोषेण नादयन् ।**
**अभ्ययमद् रणे पार्थान् धनुः शब्देन मोहयन् ॥७॥**

इतने में ही शान्तनुनन्दन भीष्म अपने रथ की घरघराहट से सम्पूर्ण दिशाओं को गुँजाते और धनुष की टङ्कार से लोगों को घबराहट में डालते हुए रणभूमि में पाण्डवों पर चढ़ आये।

**पाण्डवानां रथाश्चापि नदन्तो भैरवं स्वनम् ।**
**अभ्यद्रवन्त संयत्ता धृष्टद्युम्नपुरोगमाः ॥८॥**

उस समय धृष्टद्युम्न आदि पाण्डव महारथी भी भयङ्कर नाद करते हुए युद्ध के लिए संनद्ध होकर उनका सामना करने के लिए दौड़े।

**ततः प्रववृते युद्धं घोररूपं भयावहम् ।**
**तावकानां परेषां च निघ्नतामितरेतरम् ॥९॥**

फिर तो आपके और पाण्डवों के सैनिक एक-दूसरे पर अस्त्रों के द्वारा आघात-प्रत्याघात करने लगे। उस समय उनमें अत्यन्त भयङ्कर युद्ध होने लगा।

**भीष्मं तु समरे क्रुद्धं प्रतपन्तं समन्ततः ।**
**न शेकुः पाण्डवा द्रष्टुं तपन्तमिव भास्करम् ॥१०॥**

राजन्! जैसे तपते हुए सूर्य की ओर देखना कठिन होता है, उसी प्रकार जब भीष्म उस युद्ध में कुपित हो सब ओर अपना पराक्रम प्रकट करने लगे, उस समय पाण्डव सैनिक उनकी ओर देख न सके।

**स तु भीष्मो रणश्लाघी सोमकान् सह सृञ्जयान् ।**
**पाञ्चालाँश्च महेष्वासान् पातयामास सायकैः ॥११॥**

युद्ध की स्पृहा रखनेवाले भीष्म अपने बाणों के द्वारा सोमक, सृञ्जय और पाञ्चाल महाधनुर्धरों को रणक्षेत्र में धराशायी करने लगे।

**स तेषां रथिनां वीरो भीष्मः शान्तनवो युधि ।**
**चिच्छेद सहसा राजन् बाहूनथ शिराँसि च ॥१२॥**

राजन्! वीर शान्तनुनन्दन भीष्म उस युद्ध के मैदान में सहसा उन रथियों की भुजाओं तथा मस्तकों को काट-काटकर गिराने लगे।

**निर्मनुष्याँश्च मातङ्गाञ्शयानान् पर्वतोपमान् ।**
**अपश्याम महाराज भीष्मास्त्रेण प्रमोहितान् ॥१३॥**

महाराज! हमने देखा कि भीष्म के अस्त्र से मूर्च्छित हो बहुत-से पर्वताकार गजराज रणभूमि में पड़े हैं तथा उनके पास कोई मनुष्य नहीं है।

**न तत्रासीत्पुमान् कश्चित्पाण्डवानां विशाम्पते ।**
**अन्यत्र रथिनां श्रेष्ठाद् भीमसेनान्महाबलात् ॥१४॥**

प्रजानाथ! उस समय वहाँ रथियों में श्रेष्ठ महाबली भीमसेन के अतिरिक्त पाण्डव-पक्ष का कोई भी वीर भीष्म के सामने नहीं ठहर सका।

**स हि भीष्मं समासाद्य ताडयामास संयुगे ।**
**ततो निष्ठानको घोरो भीष्मभीमसमागमे ॥१५॥**
**बभूव सर्वसैन्यानां घोररूपो भयानकः ।**
**तथैव पाण्डवा हृष्टाः सिंहनादमथानदन् ॥१६॥**

वे ही युद्ध में भीष्म का सामना करते हुए उनपर अपने बाणों का प्रहार कर रहे थे। भीष्म और भीमसेन में युद्ध होते समय सम्पूर्ण सेनाओं में भयङ्कर कोलाहल मच गया और पाण्डव हर्ष में भरकर जोर-जोर से सिंहनाद करने लगे।

**ततो दुर्योधनो राजा सोदर्यैः परिवारितः ।**
**जुगोप समरे भीष्मं वर्तमाने जनक्षये ॥१७॥**

जिस समय युद्ध में वह भयङ्कर जनसंहार हो रहा था, उसी समय राजा दुर्योधन अपने भाइयों से घिरा हुआ वहाँ आया और भीष्म की रक्षा करने लगा।

**भीमस्तु सारथिं हत्वा भीष्मस्य रथिनां वरः ।**
**सुनाभस्य शरेणाशु शिरश्चिच्छेद भारत ॥१८॥**

हे भारत! इसी समय रथियों में श्रेष्ठ भीमसेन ने भीष्म के सारथि को मारकर एक बाण से शीघ्र ही सुनाभ का सिर भी काट डाला।

**हते तस्मिन् महाराज तव पुत्रे महारथे ।**
**नामृष्यन्त रणे शूराः सोदराः सप्त संयुगे ॥१९॥**

महाराज! आपके उस महारथी पुत्र के मारे जाने पर, उसके सात रणवीर भाई, जो वहीं विद्यमान थे, भीम का यह अपराध सहन न कर सके।

**आदित्यकेतुर्बह्वाशी कुण्डधारो महोदरः ।**
**अपराजितः पण्डितको विशालाक्षः सुदुर्जयः ॥२०॥**
**पाण्डवं चित्रसंनाहा विचित्रकवचध्वजाः ।**
**अभ्यद्रवन्त संग्रामे योद्धुकामामरिन्दमाः ॥२१॥**

आदित्यकेतु, बह्वाशी, कुण्डधार, महोदर, अपराजित, पण्डितक तथा अत्यन्त दुर्जय वीर विशालाक्ष—ये सातों शत्रुमर्दन भाई विचित्र वेशभूषा से सुसज्जित हो विचित्र कवच और ध्वज धारण किये रणभूमि में युद्ध की अभिलाषा से पाण्डुपुत्र भीमसेन पर टूट पड़े।

**स तन्न समृषे भीमः शत्रुभिर्वधमाहवे ।**
**धनुः प्रपीड्य वामेन करेणामित्रकर्शनः ॥२२॥**
**शिरश्चिच्छेद समरे शरेणानतपर्वणा ।**
**अपराजितस्य सुनसं तव पुत्रस्य संयुगे ॥२३॥**

भीमसेन उस रणभूमि में शत्रुओं द्वारा किये हुए उस प्रहार को सहन न कर सके। उस शत्रुनाशक वीर ने बाएँ हाथ से धनुष को अच्छी तरह दबाकर झुकी हुई गाँठवाले बाण से युद्धक्षेत्र में आपके पुत्र

अपराजित का सुन्दर नासिका से युक्त मस्तक काट डाला।

**अथापरेण भल्लेन कुण्डधारं महारथम्।**
**प्राहिणोन्मृत्युलोकाय सर्वलोकस्य पश्यतः ॥२४॥**

फिर भीमसेन ने एक-दूसरे भल्ल के द्वारा सब लोगों के देखते-देखते महारथी कुण्डधार को परलोक भेज दिया।

**ततः पुनरमेयात्मा प्रसन्धाय शिलीमुखम्।**
**प्रेषयामास समरे पण्डितं प्रति भारत ॥२५॥**

भरतनन्दन! तत्पश्चात् अमेय आत्मबल से सम्पन्न भीम ने रणक्षेत्र में पुनः एक बाण का सन्धान करके उसे पण्डितक की ओर चलाया।

**स शरः पण्डितं हत्वा विवेश धरणीतलम्।**
**यथा नरं निहत्याशु भुजगः कालनोदितः ॥२६॥**

जैसे काल से प्रेरित सर्प किसी मनुष्य को शीघ्र डँसकर अदृश्य हो जाता है, उसी प्रकार वह बाण पण्डितक की हत्या करके भूमि में समा गया।

**विशालाक्षशिरश्छित्वा पातयामास भूतले।**
**त्रिभिः शरैरदीनात्मा स्मरन् क्लेशं पुरातनम् ॥२७॥**

तत्पश्चात् उदार हृदयवाले भीम ने अपने पूर्व-क्लेशों का स्मरण करके तीन बाणों द्वारा विशालाक्ष के मस्तक को काटकर धरती पर गिरा दिया।

**महोदरं महेष्वासं नाराचेन स्तनान्तरे।**
**विव्याध समरे राजन् स हतो न्यपतद् भुवि ॥२८॥**

राजन्! तदनन्तर उन्होंने महाधनुर्धर महोदर की छाती में एक नाराच से प्रहार किया। युद्ध में उससे मारा जाकर वह धरती पर गिर पड़ा।

**आदित्यकेतोः केतुं च छित्त्वा बाणेन संयुगे।**
**भल्लेन भृशतीक्ष्णेन शिरश्चिच्छेद भारत ॥२९॥**

हे भारत! फिर भीम ने रणभूमि में एक बाण से आदित्यकेतु की ध्वजा काटकर अत्यन्त तीखे भल्ल के द्वारा उसका मस्तक भी काट डाला।

**बह्वाशिनं ततो भीमः शरेणानतपर्वणा।**
**प्रेषयामास संक्रुद्धो यमस्य सदनं प्रति ॥३०॥**

इसी समय क्रोध में भरे हुए भीमसेन ने एक झुकी हुई गाँठवाला बाण मारकर बह्वाशी को भी यमलोक भेज दिया।

**प्रदुद्रुवुस्ततस्तेऽन्ये पुत्रास्तव विशाम्पते।**
**मन्यमाना हि तत्सत्यं सभायां तस्य भाषितम् ॥३१॥**

प्रजेश्वर! तब आपके दूसरे पुत्र भीमसेन के द्वारा सभा में की हुई उस प्रतिज्ञा को सत्य मानकर वहाँ से भाग खड़े हुए।

**ततो दुर्योधनो राजा भीष्ममासाद्य संयुगे।**
**दुःखेन महताऽऽविष्टो विललाप सुदुःखितः ॥३२॥**

उधर राजा दुर्योधन रणभूमि में भीष्म के पास जाकर महान् दुःख से व्याप्त तथा अत्यन्त शोकमग्न होकर विलाप करने लगा—

**निहता भ्रातरः शूरा भीमसेनेन मे युधि।**
**यतमानास्तथान्येऽपि हन्यन्ते सर्वसैनिकाः ॥३३॥**

"पितामह! भीमसेन ने युद्ध में मेरे शूरवीर भाइयों को मार डाला है और दूसरे समस्त सैनिक भी विजय के लिए पूर्ण प्रयत्न करते हुए भी असफल हो उनके हाथों मारे जा रहे हैं।

**भवांश्च मध्यस्थतया नित्यमस्मानुपेक्षते।**
**सोऽहं कुपथमारूढः पश्य दैवमिदं मम ॥३४॥**

"आप मध्यस्थ बने रहने के कारण सदा हम लोगों की उपेक्षा करते हैं। मेरे इस दुर्भाग्य को देखिए, मैं अत्यन्त बुरे मार्ग पर चढ़ आया हूँ।"

**एतत् श्रुत्वा वचः क्रूरं पिता देवव्रतस्तव।**
**दुर्योधनमिदं वाक्यमब्रवीत् साश्रुलोचनः ॥३५॥**

यह क्रूरतापूर्ण वचन सुनकर आपके ताऊ भीष्म ने अपने नेत्रों से आँसू बहाते हुए वहाँ दुर्योधन से इस प्रकार कहा—

**उक्तमेतन्मया पूर्वं द्रोणेन विदुरेण च।**
**गान्धार्या च यशस्विन्या तत्त्वं तात न बुद्धवान् ॥३६॥**

"तात! मैंने, द्रोणाचार्य ने, विदुर ने तथा यशस्विनी गान्धारी ने पहले ही जो बात तुमसे कही थी, तुमने उसपर ध्यान नहीं दिया।

**यं यं हि धार्तराष्ट्राणां भीमो द्रक्ष्यति संयुगे।**
**हनिष्यति रणे नित्यं सत्यमेतद् ब्रवीमि ते ॥३७॥**

"मैं आपसे सत्य कहता हूँ कि भीमसेन धृतराष्ट्र के पुत्रों में से जिस-जिसको भी [युद्ध में अपने समक्ष आया हुआ] देख लेंगे, उसे प्रतिदिन संग्राम में अवश्य मार डालेंगे।

**स त्वं राजन् स्थिरो भूत्वा रणे कृत्वा दृढां मतिम् ।**
**योधयस्व रणे पार्थान् स्वर्गं कृत्वा परायणम् ।।३८।।**

"अतः राजन् ! तुम स्थिर होकर युद्ध के विषय में अपना दृढ़ निश्चय बना लो तथा स्वर्ग को ही अपना अन्तिम आश्रय मानकर युद्धक्षेत्र में पाण्डवों के साथ युद्ध करो ।

**न शक्याः पाण्डवा जेतुं सेन्द्रैरपि सुरासुरैः ।**
**तस्माद् युद्धे स्थिरां कृत्वा मतिं युध्यस्व भारत ।।३९।।**

"हे भारत ! इन्द्रसहित सम्पूर्ण देवता और असुर मिलकर भी पाण्डवों पर विजय नहीं पा सकते, अतः युद्ध के लिए पहले अपनी बुद्धि को स्थिर कर लो फिर युद्ध करो ।"

**इति महाभारते भीष्मपर्वणि एकोनविंशोऽध्यायः ।।१९।।**

# विंशोऽध्याय।

## कौरव-पाण्डव-सेना का घमासान युद्ध, इरावान् द्वारा शकुनि के भाइयों का तथा अलम्बुष द्वारा इरावान् का वध, घटोत्कच और दुर्योधन का युद्ध

सञ्जय उवाच

**मध्याह्ने सुमहारौद्रः संग्रामः समपद्यत ।**
**लोकक्षयकरो राजँस्तन्मे निगदतः शृणु ।।१।।**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! उस दिन दोपहर होते-होते बड़ा भयंकर संग्राम होने लगा, जो सम्पूर्ण संसार के योद्धाओं का संहार करनेवाला था । वह सब मैं कह रहा हूँ, आप सुनिए ।

**धृष्टद्युम्नः शिखण्डी च सात्यकिश्च महारथः ।**
**युक्तानीका महाराज भीष्ममेव समभ्ययुः ।।२।।**

महाराज ! धृष्टद्युम्न, शिखण्डी और महारथी सात्यकि—इन सबने अपनी सेनाओं के साथ भीष्म पर ही आक्रमण किया ।

**अर्जुनो द्रौपदेयाश्च चेकितानश्च वीर्यवान् ।**
**दुर्योधनसमादिष्टान् राज्ञः सर्वान् समभ्ययुः ।।३।।**

अर्जुन, द्रौपदी के पाँचों पुत्र तथा पराक्रमी चेकितान—ये सभी दुर्योधन के द्वारा भेजे गये समस्त राजाओं पर चढ़ धाये ।

**अभिमन्युस्तथा शूरो हैडिम्बश्च महारथः ।**
**भीमसेनश्च संक्रुद्धस्तेऽभ्यधावन्त कौरवान् ।।४।।**

शूरवीर अभिमन्यु, महारथी घटोत्कच तथा क्रोध में भरे हुए भीमसेन—इन सबने कौरवों पर धावा किया ।

**त्रिधाभूतैरवध्यन्त पाण्डवैः कौरवा युधि ।**
**तथैव कौरवै राजन्नवध्यन्त परे रणे ।।५।।**

राजन् ! पाण्डवों ने तीन दलों में विभक्त होकर कौरवों का वध करना आरम्भ किया । इसी प्रकार कौरव भी समरभूमि में शत्रुओं का नाश करने लगे ।

**वर्तमाने तथा रौद्रे राजन् वीरवरक्षये ।**
**सौबलस्यानुजाः शूरा निर्गता रणमूर्धनि ।।६।।**

राजन् ! जिस समय बड़े-बड़े वीरों का विनाश करनेवाला वह भयंकर युद्ध चल रहा था, उसी समय शकुनि के शूरवीर भाई युद्ध के मुहाने पर जा निकले ।

**बलेन महता युक्ताः स्वर्गाय विजयैषिणः ।**
**विविशुस्ते तदा हृष्टा गान्धारा युद्धदुर्मदाः ।।७।।**

उन युद्धदुर्मद गान्धारदेशीय वीरों ने विजय अथवा स्वर्ग की अभिलाषा लेकर विशाल सेना के साथ हर्ष एवं उत्साह में भरकर पाण्डव-सेना के भीतर प्रवेश किया ।

**तान् प्रविष्टाँस्तदा दृष्ट्वा इरावानपि वीर्यवान् ।**
**विकृष्य च शितं खड्गं गृहीत्वा च शरावरम् ।।८।।**
**पदातिर्द्रुतमागच्छञ्जिघांसुः सौबलान् युधि ।**
**असिहस्तापहस्ताभ्यां तेषां गात्राण्यकृन्तत ।।९।।**

तब उन्हें सेना के भीतर प्रविष्ट हुआ देख पराक्रमी इरावान् ने भी तीखी तलवार और ढाल निकालकर युद्ध में सुबलपुत्रों को मार डालने की इच्छा से तुरन्त उनपर पैदल ही धावा किया और कभी दाहिने तथा कभी बाएँ हाथ से तलवार घुमाकर उसके द्वारा शत्रुओं के अङ्गों को छिन्न-भिन्न कर दिया ।

**आयुधानि च सर्वेषां बाहूनपि विभूषितान् ।**
**अपतन्त निकृत्ताङ्गा मृता भूमौ गतासवः ॥१०॥**

फिर उन सबके आयुधों और भूषणभूषित भुजाओं को भी उसने काट डाला । इस प्रकार अङ्ग-अङ्ग कट जाने से वे प्राणशून्य हो मरकर धरती पर गिर पड़े ।

**तान् सर्वान् पतितान् दृष्ट्वा भीतो दुर्योधनस्ततः ।**
**अभ्यधावत संक्रुद्धो राक्षसं घोरदर्शनम् ॥११॥**
**आर्ष्यशृङ्गिं महेष्वासं मायाविनमरिन्दमम् ।**
**वैरिणं भीमसेनस्य पूर्वं बकवधेन वै ॥१२॥**

उन सबको मार गिराया गया देख दुर्योधन भयभीत हो उठा । वह अत्यन्त क्रोध में भरकर भयङ्कर दीखनेवाले राक्षस ऋष्यशृङ्गपुत्र [अलम्बुष] के पास दौड़ा गया । वह राक्षस शत्रुओं का दमन करने में समर्थ, मायावी और महान् धनुर्धर था । पूर्वकाल में किये गये बकासुर-वध के कारण वह भीमसेन का वैरी बन बैठा था ।

दुर्योधन उवाच

**पश्य वीर यथा ह्येष फाल्गुनस्य सुतो बली ।**
**मायावी विप्रियं कर्तुमकार्षीन्मे बलक्षयम् ॥१३॥**

**दुर्योधन बोला**—वीर ! देखो, अर्जुन का यह बलवान् पुत्र बड़ा मायावी है । इसने मेरा अप्रिय करने के लिए मेरी सेना का संहार कर डाला है ।

**त्वं च कामगमस्तात मायास्त्रे च विशारदः ।**
**कृतवैरश्च पार्थेन तस्मादेनं रणे जहि ॥१४॥**

तात ! तुम इच्छानुसार चलनेवाले और मायामय अस्त्रों के संचालन में कुशल हो । कुन्ती-कुमार भीम ने तुम्हारे साथ वैर भी किया है, अतः तुम युद्ध में इस इरावान् को मार डालो ।

सञ्जय उवाच

**बाढमित्येवमुक्त्वा तु राक्षसो घोरदर्शनः ।**
**प्रययौ सिंहनादेन यत्रार्जुनसुतो युवा ॥१५॥**

**सञ्जय कहते हैं**—'बहुत अच्छा' ऐसा कहकर वह भीषण दिखाई देनेवाला राक्षस सिंहनाद करके जहाँ नवयुवक अर्जुनकुमार इरावान् था, उस स्थान पर गया ।

**आद्रवन्तमभिप्रेक्ष्य राक्षसं युद्धदुर्मदम् ।**
**इरावानथ संरब्धः प्रत्यधावन्महाबलः ॥१६॥**

रणदुर्मद राक्षस अलम्बुष को अपने ऊपर आक्रमण करते देख महाबली इरावान् भी उसपर टूट पड़ा ।

**समभ्याशगतस्याजौ तस्य खड्गेन दुर्मतेः ।**
**चिच्छेद कार्मुकं दीप्तं शरावापं च सत्वरम् ॥१७॥**

एक बार जब वह दुर्बद्धि राक्षस अति निकट आ गया, तब इरावान् ने अपने खड्ग से उसके देदीप्यमान धनुष और तरकश को शीघ्र ही काट डाला ।

**ततश्चुक्रोध बलवाँश्चक्रे वेगं च संयुगे ।**
**इरावतः शिरोऽसिना पातयामास भूतले ॥१८॥**

तब तो महाबली अलम्बुष ने [युद्ध में] अत्यन्त क्रोध और वेग प्रकट किया तथा तलवार के द्वारा इरावान् के मस्तक को काटकर भूमि पर गिरा दिया ।

**तस्मिंस्तु निहते वीरे राक्षसेनार्जुनात्मजे ।**
**विशोकाः समपद्यन्त धार्तराष्ट्राः सराजकाः ॥१९॥**

इस प्रकार राक्षस के द्वारा अर्जुन के वीरपुत्र इरावान् के मारे जाने पर राजा दुर्योधनसहित आपके सभी पुत्र शोकरहित हो गये ।

**इरावन्तं तु निहतं संग्रामे वीक्ष्य राक्षसः ।**
**व्यनदत् सुमहानादं भैमसेनिर्घटोत्कचः ॥२०॥**

राजन् ! उधर इरावान् को युद्धभूमि में मारा गया देख भीमसेन का पुत्र राक्षस घटोत्कच बड़े जोर से सिंहनाद करने लगा ।

**नर्दित्वा सुमहानादं रूपं कृत्वा विभीषणम् ।**
**आजघान सुसंक्रुद्धः कालान्तकयमोपमः ॥२१॥**

भयङ्कर गर्जना करके काल, अन्तक और यम के समान क्रोध में भरे हुए उस राक्षस ने भीषण रूप बनाकर आपकी सेना का संहार आरम्भ किया ।

**तमापतन्तं सम्प्रेक्ष्य संक्रुद्धं भीमदर्शनम् ।**
**स्वबलं च भयात् तस्य प्रायशो विमुखीकृतम् ॥२२॥**

अत्यन्त क्रोध में भरे हुए भयङ्कर दिखाई देनेवाले उस राक्षस को आक्रमण करते देख उसके भय से आपकी सेना प्रायः युद्ध से विमुख होकर भाग चली ।

**ततो दुर्योधनो राजा घटोत्कचमुपाद्रवत् ।**
**प्रगृह्य विपुलं चापं सिंहवद् विनदन् मुहुः ॥२३॥**

तब राजा दुर्योधन ने एक विशाल धनुष लेकर और बारम्बार सिंह के समान गर्जना करते हुए घटोत्कच पर आक्रमण किया।

**तमापतन्तं सम्प्रेक्ष्य गजानीकेन संवृतम्।**
**पुत्रं तव महाराज चुकोप च निशाचरः ॥२४॥**

महाराज! हाथियों की सेना से घिरे हुए आपके पुत्र दुर्योधन को आते देख वह निशाचर अत्यन्त कुपित हो उठा।

**अथैनमब्रवीत् क्रुद्धः क्रूरः संरक्तलोचनः।**
**अद्यानृण्यं गमिष्यामि पितॄणां मातुरेव च ॥२५॥**
**ये त्वया सुनृशंसेन दीर्घकालं प्रवासिताः।**
**यच्च ते पाण्डवा राजँश्छलद्यूते पराजिताः ॥२६॥**
**यच्चैव द्रौपदी कृष्णा एकवस्त्रा रजस्वला।**
**सभामानीय दुर्बुद्धे बहुधा क्लेशिता त्वया ॥२७॥**
**एतेषामपमानानामन्येषां च कुलाधम।**
**अन्तमद्य गमिष्यामि यदि नोत्सृजसे रणम् ॥२८॥**

तत्पश्चात् क्रूर घटोत्कच क्रोध से आँखें लाल करके दुर्योधन से बोला—"ओ दुष्ट! आज मैं अपने उन पितरों और माता के ऋण से उऋण हो जाऊँगा, जिन्हें तूने दीर्घकाल तक वन में रहने के लिए विवश कर दिया था। तू अति क्रूर है। दुर्बुद्धि नरेश! तूने जो पाण्डवों को द्यूत में छलपूर्वक हराया था तथा एक वस्त्र धारण करनेवाली द्रुपदकुमारी कृष्णा को रजस्वला-अवस्था में सभा के भीतर लाकर अनेक प्रकार के क्लेश दिये थे, कुलाधम! यदि तू युद्ध छोड़कर भाग नहीं जाएगा तो इन अपमानों और अन्य सब अत्याचारों का भी आज मैं बदला चुका लूँगा।"

**एवमुक्त्वा तु हैडिम्बो महद् विस्फार्य कार्मुकम्।**
**शरवर्षेण महता दुर्योधनमवाकिरत् ॥२९॥**

ऐसा कहकर हिडिम्बाकुमार ने अपने विशाल धनुष को खींचकर दुर्योधन पर बाणों की झड़ी लगा दी।

**ततः क्रोधसमाविष्टो निःश्वसन्निव पन्नगः।**
**संशयं परमं प्राप्तः पुत्रस्ते भरतर्षभ ॥३०॥**

भरतश्रेष्ठ! उस समय क्रोध में भरकर फुंकारते हुए सर्प के समान लम्बी साँस खींचता हुआ आपका पुत्र दुर्योधन जीवन-रक्षा को लेकर भारी संशय में पड़ गया।

**अशक्तः प्रतियोद्धुं वै दृष्ट्वा तस्य पराक्रमम्।**
**क्षात्रधर्मं पुरस्कृत्य तस्थौ गिरिरिवाचलः ॥३१॥**

वह घटोत्कच के पराक्रम पर दृष्टिपात करके उसका सामना करने में असमर्थ हो गया, परन्तु अपने क्षत्रिय धर्म का विचार करके दुर्योधन पर्वत की भाँति अविचल भाव से खड़ा रहा।

**सन्धाय च शितं बाणं कालाग्निसमतेजसम्।**
**मुमोच परमक्रुद्धस्तस्मिन् घोरे निशाचरे ॥३२॥**

तत्पश्चात् उसने प्रलयकाल की अग्नि के समान एक तेजस्वी और तीखे बाण को धनुष पर रखकर उसे अत्यन्त क्रोधपूर्वक उस घोर निशाचर पर छोड़ दिया।

**तमापतन्तं सम्प्रेक्ष्य बाणमिन्द्राशनिप्रभम्।**
**लाघवान्मोचयामास महात्मा वै घटोत्कचः ॥३३॥**

इन्द्र के वज्र के समान प्रकाशित होनेवाले उस बाण को अपनी ओर आता देख महामना राक्षस घटोत्कच ने अपनी फुर्ती के कारण अपने-आपको उससे बचा लिया।

**भूयश्च विननादोग्रं क्रोधसंरक्तलोचनः।**
**त्रासयामास सैन्यानि युगान्ते जलदो यथा ॥३४॥**

अपने-आपको बचा क्रोध से आँखें लाल करके वह पुनः भयङ्कर गर्जना करने लगा। जैसे प्रलयकाल में संवर्तक मेघ की गर्जना होती है, वैसी ही गर्जना करके उसने सारी कौरव-सेना को दहला दिया।

**राक्षसस्य तु तं शब्दं श्रुत्वा राजा युधिष्ठिरः।**
**उवाच भरतश्रेष्ठ भीमसेनमरिन्दमम् ॥३५॥**

भरतश्रेष्ठ! राक्षस घटोत्कच की उस गर्जना को सुनकर राजा युधिष्ठिर ने शत्रुदमन भीमसेन से इस प्रकार कहा—

**युध्यते राक्षसो नूनं धार्तराष्ट्रैर्महारथैः।**
**यथास्य श्रूयते शब्दो नदतो भैरवं स्वनम् ॥३६॥**

"निश्चय ही राक्षस घटोत्कच कौरव महारथियों से युद्ध कर रहा है। भैरवनाद करते हुए उस राक्षस का जैसा शब्द सुनाई देता है, उससे ऐसा ही प्रतीत होता है।

**अतिभारं च पश्यामि तस्मिन् राक्षसपुङ्गवे ।**
**गच्छ त्वं रक्ष हैडिम्बं संशयं परमं गतम् ॥३७॥**

"मैं उस राक्षसशिरोमणि पर बहुत बड़ा भार अनुभव कर रहा हूँ । तुम जाओ और अत्यन्त संशय में पड़े हुए हिडिम्बाकुमार की रक्षा करो ।"

**भ्रातुर्वचनमाज्ञाय त्वरमाणो वृकोदरः ।**
**प्रययौ सिंहनादेन त्रासयन् सर्वपार्थिवान् ॥३८॥**

भाई की यह आज्ञा मानकर भीमसेन अपने सिंहनाद से सम्पूर्ण नरेशों को भयभीत करते हुए बड़ी उतावली के साथ वहाँ से चल दिये ।

**अन्वगच्छन् सत्यधृतिः सौचित्तिर्युद्धदुर्मदः ।**
**अभिमन्युमुखाश्चैव द्रौपदेया महारथाः ॥३९॥**

उनके पीछे-पीछे सत्यधृति, रणदुर्मद सौचित्ति, अभिमन्यु आदि योद्धा और द्रौपदी के पाँचों पुत्र भी गये ।

**ततः प्रववृते युद्धं तत्र तेषां महात्मनाम् ।**
**तावकानां परेषां च संग्रामेष्वनिर्वर्तिनाम् ॥४०॥**

फिर तो संग्राम में कभी पीठ न दिखानेवाले आपके तथा शत्रुपक्ष के उन महामनस्वी योद्धाओं में भारी युद्ध छिड़ गया ।

**विशिरस्कैर्मनुष्यैश्च छिन्नगात्रैश्च वारणैः ।**
**अश्वैः सम्भिन्नदेहैश्च संकीर्णाभूद् वसुन्धरा ॥४१॥**

बिना सिर के मनुष्यों, कटे हुए अङ्गोंवाले हाथियों तथा छिन्न-भिन्न शरीरवाले घोड़ों से वहाँ की सारी भूमि पट गई ।

**हया हयान् समासाद्य प्रेषिता हयसादिभिः ।**
**समाहत्य रणेऽन्योन्यं निपेतुर्गतजीविताः ॥४२॥**

घुड़सवारों द्वारा प्रेरित हुए घोड़े घोड़ों से भिड़-कर और आपस में टक्कर लेकर प्राणशून्य हो रणक्षेत्र में गिर पड़ते थे ।

**नरा नरान् समासाद्य क्रोधरक्तेक्षणा भृशम् ।**
**उराँस्युरोभिरन्योन्यं समाश्लिष्य निजघ्निरे ॥४३॥**

मनुष्य मनुष्यों पर आक्रमण करके अत्यन्त क्रोध से लाल आँखें किये छाती से छाती भिड़ाकर एक-दूसरे को मारने लगे ।

**वर्तमाने तथा तस्मिन् संग्रामे लोमहर्षणे ।**
**धार्तराष्ट्रं महत्सैन्यं प्रायशो विमुखीकृतम् ॥४॥**

इस प्रकार चलनेवाले उस रोमाञ्चकारी संग्राम में दुर्योधन की विशाल सेना प्रायः युद्ध से विमुख होकर भाग गई ।

**इति महाभारते भीष्मपर्वणि विंशोऽध्यायः ॥२०॥**

# एकविंशोऽध्यायः

**दुर्योधन एवं भीमसेन, अश्वत्थामा और राजा नील का युद्ध तथा घटोत्कच की माया से मोहित होकर कौरव-सेना का पलायन**

सञ्जय उवाच

**स्वसैन्यं निहतं दृष्ट्वा राजा दुर्योधनः स्वयम् ।**
**अभ्यधावत संक्रुद्धो भीमसेनमरिन्दमम् ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! अपनी अधिकांश सेना को मारी गई देख क्रोध में भरे हुए स्वयं राजा दुर्योधन ने शत्रुदमन भीमसेन पर धावा किया ।

**अर्धचन्द्रं च सन्धाय सुतीक्ष्णं लोमवाहिनम् ।**
**भीमसेनस्य चिच्छेद चापं क्रोधसमन्वितः ॥२॥**

उसने अत्यन्त कुपित होकर और अपने बाण पर एक पंखयुक्त अत्यन्त तीखे अर्धचन्द्राकार बाण का प्रयोग करके भीमसेन के धनुष को काट दिया ।

**तदन्तरं च सम्प्रेक्ष्य त्वरमाणो महारथः ।**
**प्रसंदधे शितं बाणं गिरीणामपि दारणम् ॥३॥**

फिर उसी को उपयुक्त अवसर समझकर महारथी दुर्योधन ने बड़ी शीघ्रता के साथ एक तीखे बाण का सन्धान किया, जो पर्वत को भी विदीर्ण करनेवाला था ।

**तेनोरसि महाराज भीमसेनमताडयत् ।**
**स गाढविद्धो व्यथितः समालम्बत स्वध्वजम् ॥४॥**

महाराज ! उस बाण के द्वारा दुर्योधन ने भीमसेन की छाती पर गहरी चोट पहुँचाई । उससे अत्यन्त घायल होकर उन्होंने अपने ध्वज का सहारा ले लिया ।

**तथा विमनसं दृष्ट्वा भीमसेनं घटोत्कचः ।**
**क्रोधेनाभिप्रजज्वाल दिधक्षन्निव पावकः ॥५॥**

भीमसेन को इस प्रकार खिन्नचित्त देखकर घटोत्कच जलाने की इच्छावाले अग्निदेव की भाँति क्रोध से प्रज्वलित हो उठा ।

**अभिमन्युमुखाश्चापि पाण्डवानां महारथाः ।**
**समभ्यधावन् क्रोशन्तो राजानं जातसम्भ्रमाः ॥६॥**

साथ ही अभिमन्यु आदि पाण्डव महारथी भी बड़े वेग से राजा दुर्योधन को ललकारते हुए उसी की ओर दौड़े ।

**सम्प्रेक्ष्यैतान् सम्पततः संक्रुद्धाञ्जातसम्भ्रमान् ।**
**भारद्वाजोऽब्रवीद्वाक्यं तावकान् सुमहारथान् ॥७॥**
**क्षिप्रं गच्छत भद्रं वो राजानं परिरक्षत ।**
**संशयं परमं प्राप्तं मज्जन्तं व्यसनार्णवे ॥८॥**

क्रोध में भरे हुए इन समस्त योद्धाओं को वेगपूर्वक धावा करते देख द्रोणाचार्य ने आपके महारथियों से कहा—"वीरो ! तुम्हारा कल्याण हो। तुम शीघ्र जाओ और संकट के समुद्र में डूबकर महान् प्राणसंशय में पड़े हुए राजा दुर्योधन की रक्षा करो ।"

**तदाचार्यवचः श्रुत्वा सौमदत्तिपुरोगमाः ।**
**तावकाः समवर्तन्त पाण्डवानामनीकिनीम् ॥९॥**

आचार्य का यह वचन सुनकर भूरिश्रवा आदि आपके प्रमुख योद्धाओं ने पाण्डव-सेना पर आक्रमण किया ।

**एवमुक्त्वा महाबाहुर्महद् विस्फार्य कार्मुकम् ।**
**भारद्वाजस्ततो भीमं षड्विंशत्या समार्पयत् ॥१०॥**

कौरवमहारथियों से पूर्वोक्त बात कहने के पश्चात् महाबाहु भरद्वाजनन्दन द्रोणाचार्य ने स्वयं भी अपने विशाल धनुष को खींचकर भीमसेन को छब्बीस बाण मारे ।

**तं प्रत्यविध्यद् दशभिर्भीमसेनः शिलीमुखैः ।**
**त्वरमाणो महेष्वासः सव्ये पार्श्वे महाबलः ॥११॥**

तब महाबली धनुर्धर भीम ने भी बड़ी उतावली के साथ द्रोणाचार्य की बाईं पसली में दस बाण मारकर उन्हें घायल कर दिया ।

**स गाढविद्धो व्यथितो वयोवृद्धश्च भारत ।**
**प्रणष्टसंज्ञः सहसा रथोपस्थ उपाविशत् ॥१२॥**

भरतनन्दन ! उन बाणों से उन्हें गहरा आघात लगा । वे वयोवृद्ध तो थे ही, अतः सहसा व्यथित एवं अचेत होकर रथ के पिछले भाग में बैठ गये ।

**गुरुं प्रव्यथितं दृष्ट्वा राजा दुर्योधनः स्वयम् ।**
**द्रौणायनिश्च संक्रुद्धौ भीमसेनमभिद्रुतौ ॥१३॥**

आचार्य द्रोण को व्यथा से पीड़ित देख स्वयं राजा दुर्योधन और अश्वत्थामा दोनों अत्यन्त कुपित हो भीमसेन पर टूट पड़े ।

**तावापतन्तौ सम्प्रेक्ष्य गदामादाय सत्वरम् ।**
**अवप्लुत्य रथात् तूर्णं तस्थौ गिरिरिवाचलः ॥१४॥**

उन दोनों महारथियों को आते देख भीमसेन ने तुरन्त ही गदा हाथ में ले ली और वे रथ से कूदकर पर्वत के समान अविचल भाव से खड़े हो गये ।

**तमुद्यतगदं दृष्ट्वा कैलासमिव शृङ्गिणम् ।**
**कौरवो द्रोणपुत्रश्च सहितावभ्यधावताम् ॥१५॥**

शृङ्गधारी कैलासपर्वत के समान ऊपर गदा उठाये हुए भीमसेन को देखकर दुर्योधन और अश्वथामा ने एक-साथ उनपर धावा किया ।

**तावापतन्तौ सहितौ त्वरितौ बलिनां वरौ ।**
**अभ्यधावत वेगेन त्वरमाणो वृकोदरः ॥१६॥**

बलवानों में श्रेष्ठ उन दोनों वीरों को एक-साथ शीघ्रतापूर्वक अपनी ओर आते देख भीमसेन भी उतावले होकर बड़े वेग से उनकी ओर बढ़े ।

**तमापतन्तं सम्प्रेक्ष्य संक्रुद्धं भीमदर्शनम् ।**
**समभ्यधावंस्त्वरिताः कौरवाणां महारथाः ॥१७॥**

क्रोध में भरकर भयङ्कर दिखाई देनेवाले भीमसेन को देखकर कौरव महारथी बड़ी उतावली के साथ उनकी ओर दौड़े ।

**सहिताः पाण्डवं सर्वे पीडयन्तः समन्ततः ।**
**तं दृष्ट्वा संशयं प्राप्तं पीडचमानं महारथम् ॥१८॥**
**अभिमन्युप्रभृतयः पाण्डवानां महारथाः ।**
**अभ्यधावन्परीप्सन्तः प्राणांस्त्यक्त्वा सुदुस्त्यजान् ॥१९**

वे सब एक-साथ मिलकर चारो ओर से पाण्डुकुमार भीमसेन को पीड़ित करने लगे । महारथी भीमसेन को पीड़ित और उनके प्राणों को संकट में पड़ा देख अभिमन्यु आदि पाण्डव अपने दुस्त्यज प्राणों का मोह छोड़कर उनकी रक्षा के लिए दौड़ पड़े ।

**अनूपाधिपतिः शूरो भीमस्य दयितः सखा ।**
**विस्फार्य सुमहच्चापं द्रौणिं विव्याध पत्रिणा ॥२०॥**

अनूप देश के शूरवीर राजा नील ने जो भीमसेन का प्रिय सखा था, अपने विशाल धनुष को खींचकर एक पंखयुक्त बाण से अश्वत्थामा को घायल कर दिया ।

**स विस्फार्य धनुश्चित्रमिन्द्राशनिसमस्वनम् ।**
**दध्रे नीलविनाशाय मतिं मतिमतां वरः ॥२१॥**

तब बुद्धिमानों में श्रेष्ठ अश्वत्थामा ने इन्द्र के वज्र की भाँति भयंकर टङ्कार करनेवाले अपने विचित्र धनुष को खींचकर नील को मार डालने का विचार किया ।

**ततः सन्धाय विमलान् भल्लान् कर्मारमार्जितान् ।**
**जघान चतुरो वाहान् सारथिं ध्वजमेव च ॥२२॥**
**सप्तमेन च भल्लेन नीलं विव्याध वक्षसि ।**
**स गाढविद्धो व्यथितो रथोपस्थ उपाविशत् ॥२३॥**

तदनन्तर उसने लोहार के माँजे हुए सात चमकीले भल्लों को धनुष पर रखकर चलाया । उनमें से चार के द्वारा उसने नील के चारों घोड़ों को और पाँचवें से सारथि को मार डाला । छठे से ध्वज को काट गिराया और सातवें भल्ल से नील की छाती में प्रहार किया । उस बाण से अत्यधिक घायल हो जाने के कारण वे व्यथित हो रथ के पिछले भाग में बैठ गये ।

**मोहितं वीक्ष्य राजानमभिक्रुद्धो घटोत्कचः ।**
**अभिदुद्राव वेगेन द्रौणिमाहवशोभिनम् ॥२४॥**

राजा नील को मोहित हुआ देख घटोत्कच अत्यन्त क्रुद्ध हो युद्ध में शोभा पानेवाले अश्वत्थामा की ओर बड़े वेग से दौड़ा ।

**तमापतन्तं सम्प्रेक्ष्य राक्षसं घोरदर्शनम् ।**
**अभ्यधावत तेजस्वी भारद्वाजात्मजस्त्वरन् ॥२५॥**

देखने में अत्यन्त भयंकर राक्षस घटोत्कच को धावा करते देख तेजस्वी अश्वत्थामा ने बड़ी उतावली के साथ उसपर आक्रमण किया ।

**प्रादुश्चक्रे ततो मायां घोररूपां सुदारुणाम् ।**
**मोहयन् समरे द्रौणिं मायावी राक्षसाधिपः ॥२६॥**

फिर तो उस मायावी राक्षसराज ने समरभूमि में अश्वत्थामा को मोहित करते हुए अत्यन्त दारुण घोर माया प्रकट की ।

**ततस्ते तावकाः सर्वे मायया विमुखीकृताः ।**
**अन्योन्यं समपश्यन्त निकृत्ता मेदिनीतले ॥२७॥**
**विचेष्टमानाः कृपणाः शोणितेन परिप्लुताः ।**
**विध्वस्ता रथिनः सर्वे राजानश्च निपातिताः ॥२८॥**

तब उस माया से डरकर आपके सभी सैनिक युद्ध से विमुख हो गये । इन्होंने एक-दूसरे को इस प्रकार देखा कि सब-के-सब भिन्न-भिन्न हो पृथिवी पर गिरकर छटपटा रहे हैं और खून से लथपथ होकर दयनीय अवस्था को पहुँच गये हैं । सभी रथी विध्वंस को प्राप्त हो गये हैं और सब राजा मारे गये हैं ।

**तद् दृष्ट्वा तावकं सैन्यं विद्रुतं शिबिरं प्रति ।**
**मम प्राक्रोशतो राजँस्तथा देवव्रतस्य च ॥२९॥**
**युध्यध्वं मा पलायध्वं मायैषा राक्षसी रणे ।**
**घटोत्कचप्रमुक्तेति नातिष्ठन्त विमोहिताः ॥३०॥**

यह सब देखकर आपकी सेना शिबिर की ओर भाग चली। राजन् ! उस समय मैं और देवव्रत भीष्म भी पुकार-पुकारकर कह रहे थे—"वीरो ! युद्ध करो । भागो मत । रणभूमि में तुम जो कुछ देख रहे हो, वह घटोत्कच द्वारा छोड़ी हुई राक्षसी माया है ।" परन्तु वे मोहित होने के कारण ठहर न सके ।

**ताँश्च प्रद्रवतो दृष्ट्वा जयं प्राप्ताश्च पाण्डवाः ।**
**घटोत्कचेन सहिताः सिंहनादान् प्रचक्रिरे ॥३१॥**

उन्हें भागते देख विजयी पाण्डव घटोत्कच के साथ सिंहनाद करने लगे ।

**इति महाभारते भीष्मपर्वणि एकविंशोऽध्यायः ॥२१॥**

# द्वाविंशोऽध्यायः

**भगदत्त का घटोत्कच, भीमसेन और पाण्डव-सेना के साथ घोर युद्ध, इरावान् के वध पर अर्जुन का दुःखपूर्ण उद्गार, भीमसेन द्वारा धृतराष्ट्र के नौ पुत्रों का वध, तथा आठवें दिन के युद्ध का उपसंहार**

सञ्जय उवाच

**तस्मिन् महति संक्रन्दे राजा दुर्योधनस्तदा ।**
**गाङ्गेयमुपसंगम्य विनयेनाभिवाद्य च ॥१॥**
**घटोत्कचस्य विजयमात्मनश्च पराजयम् ।**
**कथयामास दुर्धर्षो विनिःश्वस्य पुनः पुनः ॥२॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज ! दुर्धर्ष वीर राजा दुर्योधन ने उस महान् युद्ध में गङ्गानन्दन भीष्मजी के पास जाकर और उन्हें विनीतभाव से प्रणाम करके बारम्बार लम्बी साँस खींचकर घटोत्कच की विजय और अपनी पराजय की कथा कह सुनाई ।

भीष्म उवाच

**शृणु राजन् मम वचो यत् त्वां वक्ष्यामि कौरव ।**
**यथा त्वया महाराज वर्तितव्यं परन्तप ॥३॥**

**भीष्मजी बोले**—महाराज ! कुरुनन्दन! मैं तुमसे जो कहता हूँ, उसे ध्यान देकर सुनो । शत्रुन्तापक राजन् ! तुम्हें जैसा बर्ताव करना चाहिए, वह सुनो ।

**आत्मा रक्ष्यो रणे तात सर्वावस्थास्वरिन्दम ।**
**धर्मराजेन संग्रामस्त्वया कार्यः सदानघ ॥४॥**

तात ! शत्रुदमन ! तुम युद्ध में सदा अपनी रक्षा करो । निष्पाप ! तुम्हें सदा धर्मराज युधिष्ठिर से ही युद्ध करना चाहिए ।

**अर्जुनेन यमाभ्यां वा भीमसेनेन वा पुनः ।**
**राजधर्मं पुरस्कृत्य राजा राजानमार्छति ॥५॥**

अर्जुन, नकुल, सहदेव अथवा भीमसेन के साथ भी तुम युद्ध कर सकते हो । राजधर्म को समक्ष रखकर यह बात कही गई है । राजा राजा से ही युद्ध करता है ।

**अहं द्रोणः कृपो द्रौणिः कृतवर्मा च सात्वतः ।**
**त्वदर्थे प्रतियोत्स्यामो राक्षसं तं महाबलम् ॥६॥**

मैं, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, अश्वत्थामा और सात्वतवंशी कृतवर्मा—हम सब लोग तुम्हारे लिए उस महाबली राक्षस से युद्ध करेंगे ।

**अयं वा गच्छतु रणे तस्य युद्धाय दुर्मतेः ।**
**भगदत्तो महीपालः पुरन्दरसमो युधि ॥७॥**

अथवा उस दुष्ट के साथ युद्ध करने के लिए भगदत्त जाएँ, क्योंकि ये युद्ध में इन्द्र के समान पराक्रमी हैं ।

सञ्जय उवाच

**एतावदुक्त्वा राजानं भगदत्तमथाब्रवीत् ।**
**समक्षं पार्थिवेन्द्रस्य वाक्यं वाक्यविशारदः ॥८॥**

**सञ्जय कहते हैं**—इतना कहकर बोलनेवालों में कुशल भीष्म ने राजाधिराज दुर्योधन के सामने ही राजा भगदत्त से यह बात कही—

**गच्छ शीघ्रं महाराज हैडिम्बं युद्धदुर्मदम् ।**
**वारयस्व रणे यत्तो मिषतां सर्वधन्विनाम् ॥९॥**

"महाराज ! तुम रणदुर्मद घटोत्कच का सामना करने के लिए शीघ्र जाओ और समस्त धनुर्धरों के देखते-देखते प्रयत्नपूर्वक उसे रणक्षेत्र में आगे बढ़ने से रोको ।"

**एतत् श्रुत्वा तु वचनं भीष्मस्य पतनापतेः ।**
**प्रययौ सिंहनादेन परानभिमुखो द्रुतम् ॥१०॥**

सेनापति भीष्म का यह वचन सुनकर राजा भगदत्त सिंहनाद करते हुए तुरन्त ही शत्रुओं का सामना करने के लिए चल दिये ।

**तमाद्रवन्तं सम्प्रेक्ष्य गर्जन्तमिव तोयदम् ।**
**अभ्यवर्तन्त संक्रुद्धा पाण्डवानां महारथाः ॥११॥**

गर्जते हुए मेघ के समान राजा भगदत्त को धावा करते देख पाण्डवपक्षीय महारथी क्रोध में भरकर उनका सामना करने के लिए आगे आये ।

**ततः समभवद् युद्धं घोररूपं भयानकम् ।**
**पाण्डूनां भगदत्तेन यमराष्ट्रविवर्धनम् ॥१२॥**

फिर तो पाण्डवों का भगदत्त के साथ घोर एवं भयानक युद्ध होने लगा, जो यमराज के राष्ट्र की वृद्धि करनेवाला था ।

**भग्नं तु स्वबलं दृष्ट्वा भगदत्तेन धीमता ।**
**घटोत्कचोऽथ संक्रुद्धो भगदत्तमुपाद्रवत् ॥१३॥**

बुद्धिमान् भगदत्त के द्वारा अपनी सेना में भगदड़ पड़ी हुई देख घटोत्कच ने अत्यन्त कुपित हो भगदत्त पर धावा किया ।

**जग्राह विमलं शूलं गिरीणामपि दारणम् ।**
**नागं जिघांसुः सहसा चिक्षेप च महाबलः ॥१४॥**

उस महाबली राक्षस ने भगदत्त के हाथी को मार डालने की इच्छा से एक अत्यन्त तीखा त्रिशूल हाथ में लिया जो पर्वतों को भी विदीर्ण करनेवाला था, फिर सहसा उसे चला दिया ।

**तमापतन्तं सहसा दृष्ट्वा प्राग्ज्योतिषो नृपः ।**
**चिच्छेद तन्महच्छूलमर्धचन्द्रेण वेगवान् ॥१५॥**
**शूलं निपतितं दृष्ट्वा द्विधा कृत्तं च पार्थिवः ।**
**रुक्मदण्डां महाशक्तिं चिक्षेपाग्निशिखोपमाम् ॥१६॥**

उस त्रिशूल को अपने ऊपर आते देख वेगवान् प्राग्ज्योतिषपुर के नरेश भगदत्त ने एक अर्धचन्द्र बाण चलाकर उस महान् त्रिशूल को काट डाला । उस त्रिशूल को दो टुकड़ों में कटा हुआ देख राजा भगदत्त ने आग की लपटों से वेष्टित तथा स्वर्णमय दण्ड से विभूषित एक महाशक्ति को चलाया ।

**तामापतन्तीं सम्प्रेक्ष्य वियत्स्थामशनीमिव ।**
**उत्पत्य राक्षसस्तूर्णं जग्राह च ननाद च ॥१७॥**
**बभञ्ज चैनां त्वरितो जानुन्यारोप्य भारत ।**
**पश्यतः पार्थिवेन्द्रस्य तदद्भुतमिवाभवत् ॥१८॥**

हे भारत ! आकाश में प्रकाशित होनेवाली अशनि (विद्युत्) के समान उस महाशक्ति को गिरती हुई देख राक्षस घटोत्कच ने उछलकर तुरन्त ही उसे पकड़ लिया और सिंह के समान गर्जना की । फिर उसने तुरन्त ही राजा भगदत्त के देखते-देखते उस महाशक्ति को घुटने पर रखकर तोड़ डाला । यह एक अद्भुत-सी बात हुई ।

**पाण्डवाश्च महाराज भीमसेनपुरोगमाः ।**
**साधु साध्विति नादेन पृथिवीमन्वनादयन् ॥१९॥**

महाराज ! उस समय भीमसेन आदि पाण्डवों ने वाह-वाह कहते हुए अपने सिंहनाद से पृथिवी को गुंजा दिया ।

**एतस्मिन्नेव काले तु पाण्डवः कृष्णसारथिः ।**
**आजगाम महाराज विघ्नञ्शत्रून् समन्ततः ॥२०॥**

इसी समय श्रीकृष्ण जिनके सारथि हैं, वे पाण्डुनन्दन अर्जुन चारों ओर से शत्रुओं का संहार करते हुए वहाँ आ पहुँचे [जहाँ भगदत्त और घटोत्कच युद्ध कर रहे थे] ।

**तदाऽऽसीत् सुमहद् युद्धं भगदत्तस्य मारिष ।**
**पाञ्चालैः पाण्डवैश्चैव केकयैश्चोद्यतायुधैः ॥२१॥**

आर्य ! उस समय शस्त्र उठाये हुए पाञ्चालों, पाण्डवों और केकयों के साथ भगदत्त का बड़ा भारी युद्ध हुआ ।

**भीमसेनोऽपि समरे तावुभौ केशवार्जुनौ ।**
**अश्रावयद् यथावृत्तमिरावद्वधमुत्तमम् ॥२२॥**

भीमसेन ने भी समरभूमि में श्रीकृष्ण और अर्जुन दोनों को इरावान् के वध का यथावत् वृत्तान्त अच्छी प्रकार सुना दिया ।

**पुत्रं विनिहतं श्रुत्वा इरावन्तं धनञ्जयः ।**
**अब्रवीत् समरे राजन् वासुदेवमिदं वचः ॥२३॥**

राजन् ! अपने पुत्र इरावान् के वध का वृत्तान्त सुनकर अर्जुन ने युद्धभूमि में वासुदेव श्रीकृष्ण से कहा—

अर्जुन उवाच

**अर्थहेतोर्नरश्रेष्ठ क्रियते कर्म कुत्सितम् ।**
**धिगर्थान् यत् कृते ह्येवं क्रियते ज्ञातिसंक्षयः ॥२४॥**

**अर्जुन बोला**—नरश्रेष्ठ ! धन के लिए यह कुत्सित कर्म किया जा रहा है । धिक्कार है उस धन को, जिसके लिए इस प्रकार जाति-भाइयों का विनाश किया जाता है ।

**अधनस्य मृतं श्रेयो न च ज्ञातिवधाद् धनम् ।**
**किं नु प्राप्स्यामहे कृष्ण हत्वा ज्ञातीन् समागतान् ॥२५**

मनुष्य का निर्धन रहकर मर जाना उत्तम है, परन्तु जाति-भाइयों के वध से धन प्राप्त करना कदापि अच्छा नहीं है । कृष्ण ! हम यहाँ आये हुए इन जाति-भाइयों को मारकर क्या प्राप्त कर लेंगे ?

**दृष्ट्वा हि क्षत्रियाञ्शूराञ्शयानान् धरणीतले ।**
**निन्दामि भृशमात्मानं धिगस्तु क्षत्रजीविकाम् ॥२६॥**

आज क्षत्रिय वीरों को युद्धभूमि में सोते देख मैं सबसे अधिक अपनी निन्दा करता हूँ । क्षत्रियों की इस जीविका को धिक्कार है !

**अशक्तमिति मामेते ज्ञास्यन्ते क्षत्रिया रणे।**
**युद्धं तु मे न रुचितं ज्ञातिभिर्मधुसूदन ॥२७॥**

मधुसूदन! युद्धभूमि में मेरे मुख से ऐसी बात सुनकर ये क्षत्रिय मुझे शक्तिहीन समझेंगे, परन्तु इन जाति-भाइयों के साथ युद्ध करना मुझे अच्छा नहीं लगता।

**सन्नोदय हयाञ्शीघ्रं धार्तराष्ट्रचमूं प्रति।**
**प्रतरिष्ये महापारं भुजाभ्यां समरोदधिम् ॥२८॥**

[तथापि आपकी आज्ञानुसार मैं युद्ध करूँगा, अतः] आप शीघ्र ही अपने घोड़ों को दुर्योधन की सेना की ओर हाँकिए, जिससे मैं अपनी भुजाओं द्वारा इस अपार समर-सागर को पार करूँ।

सञ्जय उवाच

**एवमुक्तस्तु पार्थेन केशवः परवीरहा।**
**नोदयामास तानश्वान् पाण्डुरान् वातरंहसः ॥२९॥**

**सञ्जय कहते हैं**—अर्जुन के ऐसा कहने पर शत्रु-वीरों का संहार करनेवाले केशव ने वायु के समान वेगशाली उन श्वेत घोड़ों को आगे बढ़ाया।

**अपराह्णे महाराज संग्रामः समपद्यत।**
**पर्जन्यसमनिर्घोषो भीष्मस्य सह पाण्डवैः ॥३०॥**

महाराज! दोपहर पश्चात् पाण्डवों के साथ भीष्म का भीषण संग्राम आरम्भ हुआ, जिसमें मेघ की गर्जना के समान गम्भीर घोष हो रहा था।

**ततस्तव सुता राजन् भीमसेनमुपाद्रवन्।**
**परिवार्य रणे द्रोणं वसवो वासवं यथा ॥३१॥**

राजन्! उधर आपके पुत्र, जैसे वसुगण इन्द्र के सब ओर खड़े होते हैं, उसी प्रकार द्रोणाचार्य को चारों ओर से घेरकर रणक्षेत्र में भीमसेन पर टूट पड़े।

**भीमसेनस्तु सम्प्रेक्ष्य पुत्रांस्तव जनेश्वर।**
**प्रजज्वाल रणे क्रुद्धो हविषा हव्यवाडिव ॥३२॥**

जनेश्वर! जैसे घी की आहुति डालने से अग्नि प्रज्वलित हो उठती है, उसी प्रकार रणभूमि में आपके पुत्रों को देखकर भीमसेन क्रोध से जल उठे।

**स छाद्यमानो बहुधा पुत्रैस्तव विशाम्पते।**
**सृक्किणी संलिहन् वीरः शार्दूल इव दर्पितः ॥३३॥**

**व्यूढोरस्कं ततो भीमः पातयामास भारत।**
**क्षुरप्रेण सुतीक्ष्णेन सोऽभवद् गतजीवितः ॥३४॥**

प्रजापालक! भरतनन्दन! आपके पुत्रों द्वारा बारम्बार बाणों की वर्षा से आच्छादित किये जाने पर क्रोधपूर्वक अपने मुख के दोनों कोनों को चाटते हुए सिंह के समान शौर्य का अभिमान रखनेवाले वीर भीमसेन ने एक अति तीक्ष्ण क्षुरप्र के द्वारा आपके पुत्र व्यूढोरस्क को मार गिराया। उसकी जीवनलीला समाप्त हो गई।

**अपरेण तु भल्लेन पीतेन निशितेन च।**
**अपातयत् कुण्डलिनं सिंहः क्षुद्रमृगं यथा ॥३५॥**

तदनन्तर जैसे सिंह छोटे-से मृग को दबोच लेता है, उसी प्रकार भीम ने दूसरे पानीदार एवं तीखे भल्ल से आपके पुत्र कुण्डली को भूमि पर सुला दिया।

**ततः सुनिशितान् पीतान् समादत्त शिलीमुखान्।**
**ससर्ज त्वरया युक्तः पुत्रांस्ते प्राप्य मारिष ॥३६॥**

आर्य! तत्पश्चात् भीमसेन ने बड़ी उतावली के साथ बहुत-से तीखे और पानीदार बाण हाथ में लिये तथा आपके पुत्रों को लक्ष्य करके छोड़ दिये।

**प्रेषिता भीमसेनेन शरास्ते दृढधन्वना।**
**अपातयन्त पुत्रांस्ते रथेभ्यः सुमहारथान् ॥३७॥**
**अनाधृष्टिं कुण्डभेदिं वैराटं दीर्घलोचनम्।**
**दीर्घबाहुं सुबाहुं च तथैव कनकध्वजम् ॥३८॥**

सुदृढ़ धनुर्धर भीमसेन के द्वारा चलाये हुए उन बाणों ने आपके बहुत-से महारथी पुत्रों को मारकर रथों से नीचे गिरा दिया। उनके नाम हैं—अनाधृष्टि, कुण्डभेदि, वैराट, दीर्घलोचन, दीर्घबाहु, सुबाहु तथा कनकध्वज।

**ततः प्रदुद्रुवुः शेषास्तव पुत्रा महाहवे।**
**तं कालमिव मन्यन्तो भीमसेनं महाबलम् ॥३९॥**

फिर तो उस महासमर में आपके शेष पुत्र महाबली भीमसेन को काल के समान समझकर वहाँ से भाग चले।

**तत्राद्भुतमपश्याम कुन्तीपुत्रस्य पौरुषम्।**
**द्रोणेन वार्यमाणोऽपि निजघ्ने यत् सुतांस्तव ॥४०॥**

महाराज! उस समय हमने कुन्तीपुत्र भीम का

अद्‌भुत पराक्रम देखा। यद्यपि द्रोणाचार्य बाण-वृष्टि करके उन्हें रोक रहे थे, तो भी उन्होंने आपके पुत्रों को मार डाला।

**गाङ्गेयो भगदत्तश्च गौतमश्च महारथाः।**
**पाण्डवं रभसं युद्धे वारयामासुरर्जुनम् ॥४१॥**

दूसरी ओर गङ्गानन्दन भीष्म, भगदत्त और कृपाचार्य—ये तीनों महारथी युद्ध में वेग से आगे बढ़नेवाले पाण्डुनन्दन अर्जुन का निवारण कर रहे थे।

**अस्त्रैरस्त्राणि संवार्य तेषां सोऽतिरथो रणे।**
**प्रवीरांस्तव सैन्येषु प्रेषयामास मृत्यवे ॥४२॥**

परन्तु अतिरथी वीर अर्जुन ने युद्धभूमि में उनके अस्त्रों का अस्त्रों द्वारा निवारण करके आपकी सेना के प्रमुख वीरों को यमलोक पठा दिया।

**धृष्टद्युम्नमुखास्त्वन्ये तव सैन्यमयोधयन्।**
**तथैव तावकाः सर्वे पाण्डुसैन्यमयोधयन् ॥४३॥**

उधर धृष्टद्युम्न आदि अन्य महारथी आपकी सेना के साथ तथा आपके प्रमुख सैनिक पाण्डव-सेना के साथ युद्ध करने लगे।

**तत्राक्रन्दो महानासीत् तव तेषां च भारत।**
**निघ्नतां दृढमन्योन्यं कुर्वतां कर्म दुष्करम् ॥४४॥**

हे भारत! एक-दूसरे पर सुदृढ़ प्रहार और दुष्कर पराक्रम करनेवाले आपके और पाण्डवों के सैनिकों का भयंकर कोलाहल होने लगा।

**अन्योऽन्यं हि रणे शूराः केशेष्वाक्षिप्य मानिनः।**
**नखदन्तैरयुध्यन्त मुष्टिभिर्जानुभिस्तथा ॥४५॥**

कितने ही मानी शूरवीर उस रणक्षेत्र में एक-दूसरे के केश पकड़कर नखों, दाँतों, मुक्कों और घुटनों से प्रहार करते हुए लड़ रहे थे।

**तलैश्चैवाथ निस्त्रिंशैर्बाहुभिश्च सुसंस्थितैः।**
**विवरं प्राप्य चान्योन्यमनयन् यमसादनम् ॥४६॥**

अवसर पाकर वे थप्पड़ों, तलवारों तथा सुदृढ़ भुजाओं द्वारा भी एक-दूसरे को यमलोक भेज देते थे।

**नानाविधानि शस्त्राणि प्रगृह्य पतिता नराः।**
**जीवन्त इव दृश्यन्ते गतसत्त्वा महारथाः ॥४७॥**

अनेक प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों को हाथ में लेकर पृथिवी पर पड़े हुए प्राणहीन महारथी सैनिक जीवित-से दिखाई देते थे।

**गदाविमथितैर्गात्रैर्मुसलैर्भिन्नमस्तकाः।**
**गजवाजिरथक्षुण्णाः शेरते स्म नराः क्षितौ ॥४८॥**

किन्हीं के शरीर गदा की चोट से चूर-चूर हो गये थे, किन्हीं के मस्तक मूसलों की मार से फट गये थे और कितने ही सैनिक घोड़े, हाथी तथा रथों से कुचल गये थे। ये सभी प्राणहीन होकर पृथिवी पर सो गये थे।

**तथैवाश्वनृनागानां शरीरैर्विबभौ तदा।**
**संछन्ना वसुधा राजन् पर्वतैरिव सर्वशः ॥४९॥**

राजन्! इसी प्रकार घोड़े, हाथी और मनुष्यों के मृत शरीरों से सारी पृथिवी आच्छादित हो उस समय पर्वतों से ढकी हुई-सी जान पड़ती थी।

**एवमेते महासेने मृदिते तत्र भारत।**
**परस्परं समासाद्य तव तेषां च संयुगे ॥५०॥**

हे भारत! इस प्रकार आपकी और पाण्डवों की वे दोनों विशाल सेनाएँ एक-दूसरे से भिड़कर रणभूमि में रौंदी जा रही थीं।

**तेषु श्रान्तेषु भग्नेषु मृदितेषु च भारत।**
**रात्रिः समभवत् तत्र नापश्याम ततोऽनुगान्।**
**ततोऽवहारं सैन्यानां प्रचक्रुः कुरुपाण्डवाः ॥५१॥**

भरतनन्दन! उस समय जब अधिकांश सैनिक परिश्रम से थककर चूर-चूर हो रहे थे, कितने ही भाग गये थे तथा कितने ही योद्धा रौंद डाले गये थे, रात्रि हो गई थी और हमें अपने सेवक दिखाई नहीं दे रहे थे, तब कौरवों और पाण्डवों ने अपनी-अपनी सेनाओं को लौटने का आदेश दे दिया।

**इति महाभारते भीष्मपर्वणि द्वाविंशोऽध्यायः ॥२२॥**

# त्रयोविंशोऽध्यायः

## दुर्योधन का भीष्मजी से पाण्डवों को मारने अथवा कर्ण को युद्ध की आज्ञा देने का अनुरोध करना और भीष्म का अर्जुन का पराक्रम बताते हुए भयंकर युद्ध करने की प्रतिज्ञा करना

सञ्जय उवाच

**ततो दुर्योधनो राजा शकुनिश्चापि सौबलः ।**
**दुःशासनश्च पुत्रस्ते सूतपुत्रश्च दुर्जयः ॥१॥**
**समागम्य महाराज मन्त्रं चक्रुर्विवक्षितम् ।**
**कथं पाण्डुसुताः संख्ये जेतव्याः सगणा इति ॥२॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज ! सेनाओं के युद्धभूमि से लौटने के पश्चात् राजा दुर्योधन, सुबलपुत्र शकुनि, आपका पुत्र दुःशासन, दुर्जयवीर सूतपुत्र कर्ण—ये सभी मिलकर अभीष्ट कार्य के विषय में गुप्त परामर्श करने लगे । उनकी मन्त्रणा का मुख्य विषय यह था कि पाण्डवों को दल-बलसहित युद्ध में कैसे जीता जा सकता है ?

दुर्योधन उवाच

**द्रोणो भीष्मः कृपः शल्यःसौमदत्तिश्च संयुगे ।**
**न पार्थान् प्रतिबाधन्ते न जाने तच्च कारणम् ॥३॥**

**दुर्योधन ने कहा**—मित्रो ! द्रोणाचार्य, भीष्म, कृपाचार्य, शल्य एवं भूरिश्रवा—ये लोग युद्ध में कुन्तीपुत्रों को कोई भी बाधा नहीं पहुँचाते हैं । मैं नहीं जानता इसका क्या कारण है ?

**अवध्यमानास्ते चापि क्षपयन्ति बलं मम ।**
**सोऽस्मि क्षीणबलः कर्ण क्षीणशस्त्रश्च संयुगे ॥४॥**

वे पाण्डव स्वयं अवध्य रहकर मेरी सेना का संहार कर रहे हैं । कर्ण ! इस प्रकार मेरी सेना तथा अस्त्र-शस्त्रों का युद्ध में क्षय होता जा रहा है ।"

कर्ण उवाच

**मा शोच भरतश्रेष्ठ करिष्येऽहं प्रियं तव ।**
**भीष्मः शान्तनवस्तूर्णमपयातु महारणात् ॥५॥**

**कर्ण बोला**—भरतश्रेष्ठ ! शोक न करो । मैं तुम्हारा प्रियकार्य करूँगा, परन्तु शान्तनुनन्दन भीष्म शीघ्र ही महायुद्ध से अलग हो जाएँ ।

**अहं पार्थान् हनिष्यामि सहितान् सर्वसोमकैः ।**
**पश्यतो युधि भीष्मस्य शपे सत्येन ते नृप ॥६॥**

[भीष्म के हट जाने पर] मैं युद्ध में भीष्म के देखते-देखते सोमकोंसहित समस्त कुन्तीपुत्रों को एकसाथ मार डालूँगा । हे राजन् ! यह मैं तुमसे सत्य की शपथ खाकर कहता हूँ ।

**पाण्डवेषु दयां नित्यं स हि भीष्मः करोति वै ।**
**अशक्तश्च रणे भीष्मो जेतुमेतान् महारथान् ॥७॥**

भीष्म सदा ही पाण्डवों पर दया करते हैं, अतः युद्ध में इन महारथियों को जीतने में वे सर्वथा असमर्थ हैं ।

**स त्वं शीघ्रमितो गत्वा भीष्मस्य शिबिरं प्रति ।**
**अनुमान्य गुरुं वृद्धं शस्त्रं न्यासय भारत ॥८॥**

"हे भारत ! तुम शीघ्र ही यहाँ से भीष्मजी के शिबिर में जाकर अपने पूज्य वृद्ध पितामह को सन्तुष्ट करके उनके अस्त्र-शस्त्र रखवा दो ।

**न्यस्तशस्त्रे ततो भीष्मे निहतान् पश्य पाण्डवान् ।**
**मयैकेन रणे राजन् ससुहृद्गणबान्धवान् ॥९॥**

राजन् ! भीष्म के हथियार डाल देने पर आप युद्ध में केवल मेरे द्वारा पाण्डवों को सुहृदों और बन्धु-बान्धवोंसहित मारा गया समझो ।

सञ्जय उवाच

**एवमुक्तस्तु कर्णेन कर्णमाह जनेश्वरः ।**
**अनुमान्य रणे भीष्ममेषोऽहं द्विपदां वरम् ॥१०॥**
**आगमिष्ये ततः क्षिप्रं त्वत्सकाशमरिन्दम ।**
**अपक्रान्ते ततो भीष्मे प्रहरिष्यसि संयुगे ॥११॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! कर्ण के ऐसा कहने पर जनेश्वर दुर्योधन ने कर्ण से कहा—"शत्रुदमन ! मैं मनुष्यों में श्रेष्ठ भीष्म को युद्ध से हटने के लिए राजी करके अभी तुम्हारे पास लौट आता हूँ । फिर भीष्म के निवृत्त हो जाने पर तुम रणभूमि में शत्रुओं पर प्रहार करना ।"

**निष्पपात ततस्तूर्णं पुत्रस्तव विशाम्पते ।**
**सहितो भ्रातृभिस्तैस्तु देवैरिव शतक्रतुः ॥१२॥**

प्रजेश्वर ! कर्ण से ऐसा कहकर आपका पुत्र दुर्योधन तुरन्त ही अपने भाइयों के साथ शिबिर से

बाहर निकला, मानो देवताओं के साथ इन्द्र अपने भवन से बाहर आये हों।

**सम्प्राप्य तु ततो राजा भीष्मस्य सदनं शुभम्।**
**उवाच प्राञ्जलिर्भीष्मं वाष्पकण्ठोऽश्रुलोचनः ॥१३॥**
**त्वां वयं हि समाश्रित्य संयुगे शत्रुसूदन।**
**उत्सहेम रणे जेतुं सेन्द्रानपि सुरासुरान् ॥१४॥**
**तस्मादर्हसि गाङ्गेय कृपां कर्तुं मयि प्रभो।**
**जहि पाण्डुसुतान् वीरान् महेन्द्र इव दानवान् ॥१५॥**

तब राजा दुर्योधन भीष्म के सुन्दर निवासस्थान के पास पहुँचकर नेत्रों में आँसू भर हाथ जोड़े हुए भर्राए कण्ठ से भीष्म से इस प्रकार बोला—"शत्रु-सूदन! हम लोग आपका आश्रय लेकर रणभमि में इन्द्रसहित सम्पूर्ण देवताओं तथा असुरों को भी जीतने का उत्साह रखते हैं [पाण्डवों की तो बात ही क्या है!] प्रभो! गङ्गानन्दन! आप मुझपर कृपा कीजिए और जैसे देवराज इन्द्र दानवों का संहार करते हैं, उसी प्रकार आप पाण्डव वीरों को मार डालिए।

**दयया यदि वा राजन् द्वेष्यभावान्मम प्रभो।**
**मन्दभाग्यतया वापि मम रक्षसि पाण्डवान् ॥१६॥**
**समरे ह्यनुजानीहि कर्णमाहवशोभिनम्।**
**स जेष्यति रणे पार्थान् ससुहृद्गणबान्धवान् ॥१७॥**

"प्रभो! यदि पाण्डवों के प्रति दयाभाव अथवा मेरे दुर्भाग्यवश मेरे प्रति द्वेषभाव रखने के कारण आप पाण्डवों की रक्षा करते हैं तो समरभूमि में शोभा पानेवाले कर्ण को युद्ध के लिए आज्ञा दे दीजिए। वह सुहृदों और बान्धवोंसहित कुन्तीपुत्रों को अवश्य जीत लेगा।"

भीष्म उवाच

**किं त्वं दुर्योधनैवं मां वाक्शल्यैरपकृन्तसि।**
**घटमानं यथाशक्ति कुर्वाणं च तव प्रियम् ॥१८॥**

**भीष्मजी बोले**—पुत्र दुर्योधन! तुम इस प्रकार वाग्बाणों से मुझे क्यों छेद रहे हो? मैं तो यथाशक्ति शत्रुओं पर विजय पाने की चेष्टा करता हूँ तथा तुम्हारे प्रिय-साधन में लगा हुआ हूँ।

**यदा च त्वां महाबाहो गन्धर्वैर्हृतमोजसा।**
**अमोचयत् पाण्डुसुतः पर्याप्तं तन्निदर्शनम् ॥१९॥**

महाबाहो! जब गन्धर्वों ने तुम्हें बलपूर्वक पकड़ लिया था, उस समय पाण्डुपुत्र अर्जुन ने ही तुम्हें छुड़ाया था। उनके पराक्रम का यह दृष्टान्त पर्याप्त है।

**द्रवमाणेषु शूरेषु सोदरेषु तव प्रभो।**
**सूतपुत्रे च राधेये पर्याप्तं तन्निदर्शनम् ॥२०॥**

प्रभो! उस समय तुम्हारे ये शूरवीर भाई और राधानन्दन सूतपुत्र कर्ण तो मैदान छोड़कर भाग गये थे। यह अर्जुन की अद्‌भुत शक्ति का ज्वलन्त उदाहरण है।

**यच्च नः सहितान् सर्वान् विराटनगरे तदा।**
**एक एव समुद्यातः पर्याप्तं तन्निदर्शनम् ॥२१॥**

जिस समय विराट नगर में हम सब एक-साथ युद्ध के लिए डटे थे, तब अर्जुन ने अकेले ही हमपर आक्रमण किया था। यह उनकी अजेयता का पूरा प्रमाण है।

**द्रोणं च युधि संरब्धं मां च निर्जित्य संयुगे।**
**वासाँसि च समादत्त पर्याप्तं तन्निदर्शनम् ॥२२॥**

अर्जुन ने क्रोध में भरे हुए द्रोणाचार्य को तथा मुझे भी युद्ध में परास्त करके सबके वस्त्र छीन लिये थे। यह उनकी अजेयता का पर्याप्त प्रमाण है।

**विजित्य च यदा कर्णं सदा पुरुषमानिनम्।**
**उत्तरायै ददौ वस्त्रं पर्याप्तं तन्निदर्शनम् ॥२३॥**

सदा अपने पुरुषार्थ का अभिमान रखनेवाले कर्ण को भी जीतकर अर्जुन ने उसके वस्त्र छीनकर उत्तरा को अर्पित किये थे। उनकी अपरिमित शक्ति का यह पर्याप्त उदाहरण है।

**को हि शक्तो रणे जेतुं पाण्डवं रभसं सदा।**
**त्वं तु मोहान्न जानीषे वाच्यावाच्यं सुयोधन ॥२४॥**

सदा वेगशाली वीर पाण्डुपुत्र अर्जुन को युद्ध के मैदान में कौन जीत सकता है? परन्तु सुयोधन! तुम मोहवश कहने और न कहने योग्य बात को समझते ही नहीं हो।

**स्वयं वैरं महत् कृत्वा पाण्डवैः सह सृञ्जयैः।**
**रणे तानद्य युद्धयस्व पश्यामः पुरुषो भव ॥२५॥**

तुमने स्वयं ही पाण्डवों और सृञ्जयों के साथ महान् वैर ठाना है। अतः अब तुम्हीं युद्ध करो। हम

सब लोग देखते हैं। तुम स्वयं पुरुषत्व का परिचय दो।

**अहं तु सोमकान्सर्वान्पाञ्चालाँश्च समागतान्।**
**निहनिष्ये नरव्याघ्र वर्जयित्वा शिखण्डिनम् ॥२६॥**

पुरुषसिंह! मैं शिखण्डी को छोड़कर युद्ध में आये हुए समस्त सोमकों और पाञ्चालों को मार डालूँगा।

**तैर्वाहं निहतः संख्ये गमिष्ये यमसादनम्।**
**निहत्य समरे वा तान् प्रीतिं दास्याम्यहं तव ॥२७॥**

अब या तो उनके द्वारा युद्ध में मारा जाकर मैं यमलोक का रास्ता लूँगा अथवा उन्हीं को युद्धभूमि में मारकर मैं तुम्हें हर्ष प्रदान करूँगा।

**सुखं स्वपिहि गान्धारे श्वोऽस्मि कर्ता महारणम्।**
**यं जनाः कथयिष्यन्ति यावत् स्थास्यति मेदिनी ॥२८॥**

गान्धारीनन्दन! अब तुम जाकर सुखपूर्वक सो रहो। कल मैं अत्यन्त भीषण युद्ध करूँगा, जिसकी चर्चा लोग तबतक करते रहेंगे, जबतक पृथिवी विद्यमान रहेगी।

सञ्जय उवाच

**एवमुक्तस्तव सुतो निर्जगाम जनेश्वर।**
**अभिवाद्य गुरुं मूर्ध्ना प्रययौ स्वं निवेशनम् ॥२९॥**

**सञ्जय कहते हैं**—जनेश्वर! भीष्मजी के ऐसा कहने पर आपका पुत्र दुर्योधन अपने गुरु [पितामह] के चरणों में मस्तक रखकर प्रणाम करने के पश्चात् अपने शिबिर को चला गया।

**प्रभातायां च शर्वर्यां प्रातरुत्थाय तान् नृपः।**
**राज्ञः समाज्ञापयत सेनां योजयतेति ह ॥३०॥**
**अद्य भीष्मो रणे क्रुद्धो निहनिष्यति सोमकान्।**
**तत्र कार्यतमं मन्ये भीष्मस्यैवाभिरक्षणम् ॥३१॥**

राजन्! प्रातः उठकर राजा दुर्योधन ने समस्त राजाओं को यह आज्ञा दी—"राजसिंहो! तुम सब लोग सेना को युद्ध के लिए तैयार करो। आज पितामह भीष्म युद्धभूमि में क्रुद्ध होकर सोमकों का संहार करेंगे, अतः मैं भीष्म की रक्षा को ही अपना प्रधान कर्तव्य समझता हूँ।

**अब्रवीद्धि विशुद्धात्मा नाहं हन्यां शिखण्डिनम्।**
**स्त्रीपूर्वको ह्यसौ राजँस्तस्माद् वर्ज्यो मया रणे ॥३२॥**

"विशुद्ध अन्तःकरण महात्मा भीष्म ने मुझसे कहा है—'राजन्! मैं शिखण्डी को नहीं मार सकता, क्योंकि वह पहले स्त्रीरूप में उत्पन्न हुआ था, अतः युद्ध में मुझे उसका परित्याग कर देना है।'

**अरक्ष्यमाणं हि वृको हन्यात् सिंहं महाहवे।**
**मा वृकेणेव गाङ्गेयं घातयेम शिखण्डिना ॥३३॥**

"यदि युद्ध में सिंह की रक्षा न की जाए तो उसे एक भेड़िया मार सकता है, परन्तु हम भेड़िये के सदृश शिखण्डी के हाथ से सिंह के समान भीष्म का वध नहीं होने देंगे।"

**एतत् श्रुत्वा तु ते सर्वे दुर्योधनवचस्तदा।**
**सर्वतो रथवंशेन गाङ्गेयं पर्यवारयन् ॥३४॥**

उस समय दुर्योधन की यह बात सुनकर उन सब वीरों ने रथों की विशाल सेना द्वारा गङ्गानन्दन भीष्म को सब ओर से घेर लिया।

**भीष्मं तु रथवंशेन दृष्ट्वा समभिसंवृतम्।**
**अर्जुनो रथिनां श्रेष्ठो धृष्टद्युम्नमुवाच ह ॥३५॥**

उधर भीष्म को रथों के समूहों से घिरा हुआ देख रथियों में श्रेष्ठ अर्जुन ने धृष्टद्युम्न से कहा—

**शिखण्डिनं नरव्याघ्रं भीष्मस्य प्रमुखे नृप।**
**स्थापयस्वाद्य पाञ्चाल्य तस्य गोप्ताहमित्युत ॥३६॥**

"नरेश्वर! पाञ्चाल राजकुमार! आज तुम पुरुषसिंह शिखण्डी को भीष्म के सामने उपस्थित करो। मैं उसकी रक्षा करूँगा।"

**इति महाभारते भीष्मपर्वणि त्रयोविंशोऽध्यायः ॥२३॥**

# चतुर्विंशोऽध्यायः

## नवें दिन का युद्ध—अभिमन्यु द्वारा राक्षस अलम्बुष की पराजय, दोनों पक्षों की सेनाओं का घमासान युद्ध और रक्तमयी नदी का वर्णन

सञ्जय उवाच

**ततः शान्तनवो भीष्मो निर्ययौ सह सेनया ।**
**व्यूहं चाव्यूहत महत् सर्वतोभद्रमात्मनः ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज ! तब शान्तनुनन्दन भीष्म सेना के साथ शिबिर से बाहर निकले। उन्होंने अपनी सेना को सर्वतोभद्र नामक महान् व्यूह के रूप में संगठित किया।

**तत्र तेऽपि महाव्यूहं प्रतिव्यूह्य सुदुर्जयम् ।**
**पाण्डवाः समरे शूराः स्थिता युद्धाय दंशिताः ॥२॥**

उधर शूरवीर पाण्डव भी रणभूमि में अत्यन्त दुर्जय महाव्यूह की रचना करके कवच बाँधे हुए युद्ध के लिए तैयार थे।

**ततोऽन्योन्यं प्रधावन्तः सम्प्रहारं प्रचक्रिरे ।**
**महता तस्य शब्देन प्रचकम्पे वसुन्धरा ॥३॥**

फिर तो दोनों पक्षों के योद्धा एक-दूसरे पर धावा करते हुए अस्त्र-शस्त्रों का प्रहार करने लगे। उस समय जो महान् कोलाहल हुआ, उससे सारी पृथिवी काँपने लगी।

**अभिमन्यू रथोदारः पिशङ्गैस्तुरगोत्तमैः ।**
**अभिदुद्राव तेजस्वी दुर्योधनबलं महत् ॥४॥**

राजन् ! रथियों में श्रेष्ठ तेजस्वी अभिमन्यु पिंगल वर्णवाले श्रेष्ठ घोड़ों से जुते हुए रथ द्वारा दुर्योधन की विशाल सेना पर टूट पड़ा।

**सरथान् रथिनस्तूर्णं हयाँश्चैव ससादिनः ।**
**गजारोहाँश्च सगजान् दारयामास फाल्गुनिः ॥५॥**

अर्जुनकुमार ने रथोंसहित रथियों, सवारोंसहित घोड़ों तथा हाथियोंसहित गजारोहियों को तुरन्त ही विदीर्ण कर डाला।

**मोहयित्वा कृपं द्रोणं द्रौणिं च सबृहद्बलम् ।**
**सैन्धवं च महेष्वासो व्यचरल्लघु सुष्ठु च ॥६॥**

महाधनुर्धर अभिमन्यु कृपाचार्य, द्रोणाचार्य, अश्वत्थामा, बृहद्बल तथा सिन्धुराज जयद्रथ—इन सबको मोहित करके सुन्दर एवं शीघ्र गति से सब ओर विचरता रहा।

**तं दृष्ट्वा क्षत्रियाः शूराः प्रतपन्तं तरस्विनम् ।**
**द्विफाल्गुनमिमं लोकं मेनिरे तस्य कर्मभिः ॥७॥**

सबको सन्ताप देते हुए उस वेगशाली वीर को देखकर समस्त शूरवीर क्षत्रिय उसके कर्मों द्वारा यह मानने लगे कि संसार में दो अर्जुन हो गये हैं।

**तेनार्दिता महाराज भारती सा महाचमूः ।**
**व्यभ्रमत् तत्र तत्रैव योषिन्मदवशादिव ॥८॥**

महाराज ! अभिमन्यु से पीड़ित हुई भरतवंशियों की वह विशाल सेना मदोन्मत्त युवती की भाँति वहीं चक्कर काट रही थी।

**द्रावयित्वा महासैन्यं कम्पयित्वा महारथान् ।**
**सुहृदो नन्दयामास मयं जित्वेव वासवः ॥९॥**

मयासुर पर विजय पानेवाले इन्द्र की भाँति अभिमन्यु ने उस विशाल सेना को भगाकर और महारथियों को कँपाकर अपने सुहृदों को आनन्दित किया।

**दुर्योधनस्तदा राजन्नार्ष्यशृङ्गिमभाषत ।**
**एष कार्ष्णिर्महाबाहो द्वितीय इव फाल्गुनः ॥१०॥**

राजन् ! उस समय दुर्योधन ने राक्षस ऋष्यशृङ्गपुत्र अलम्बुष से इस प्रकार कहा—"महाबाहो ! यह अर्जुन का पुत्र द्वितीय अर्जुन के समान पराक्रमी है।

**चमूं द्रावयते क्रोधाद् वृत्रो देवचमूमिव ।**
**तस्य चान्यन्न पश्यामि संयुगे भेषजं महत् ॥११॥**
**ऋते त्वां राक्षसश्रेष्ठं सर्वविद्यासु पारगम् ।**
**स गत्वा त्वरितं वीर जहि सौभद्रमाहवे ॥१२॥**

"जैसे वृत्रासुर देवताओं की सेना को मार भगाता था, उसी प्रकार यह भी क्रोधपूर्वक मेरी सेना को खदेड़ रहा है। मैं रणभूमि में सम्पूर्ण विद्याओं के पारंगत और राक्षसों में सर्वश्रेष्ठ तुम जैसे वीर को

छोड़कर दूसरे किसी को ऐसा नहीं देखता, जो उस रोग की औषधि हो सके, अतः तुम तुरन्त जाकर युद्धभूमि में सुभद्राकुमार का वध करो।"

**स एवमुक्तो बलवान् प्रययौ समरे मुदा।**
**नर्दमानो महानादं प्रावृषीव बलाहकः ॥१३॥**

दुर्योधन के ऐसा कहने पर बलशाली अलम्बुष तुरन्त ही वर्षाकाल के मेघ की भाँति जोर-जोर से गर्जना करता हुआ समरभूमि में गया।

**कार्ष्णिश्चापि मुदा युक्तः प्रगृह्य सशरं धनुः।**
**नृत्यन्निव रथोपस्थे तद् रक्षः समुपाद्रवत् ॥१४॥**

उधर अभिमन्यु भी हर्ष और उत्साह में भरकर हाथ में धनुष-बाण लिये रथ की बैठक में नृत्य-सा करता हुआ उस राक्षस की ओर दौड़ा।

**ततः स राक्षसः क्रुद्धः सम्प्राप्यैवार्जुनिं रणे।**
**नातिदूरे स्थितां तस्य द्रावयामास वै चमूम् ॥१५॥**

तत्पश्चात् कुपित हुआ वह राक्षस युद्ध में अभिमन्यु के समीप पहुँचकर पास ही खड़ी हुई उसकी सेना को खदेड़ने लगा।

**ततः कार्ष्णिर्महाराज निशितैः सायकैस्त्रिभिः।**
**आर्ष्यशृङ्गिं रणे विद्ध्वा पुनर्विव्याध पञ्चभिः ॥१६**

महाराज! राक्षस द्वारा अपनी सेना को खदेड़ी जाते देख अर्जुनपुत्र अभिमन्यु ने तीन तीखे सायकों से रणभूमि में अलम्बुष को बींधकर पुनः पाँच बाणों से घायल कर दिया।

**अलम्बुषोऽपि संक्रुद्धः कार्ष्णिं नवभिराशुगैः।**
**हृदि विव्याध वेगेन तोत्त्रैरिव महाद्विपम् ॥१७॥**

तब क्रोध में भरे हुए अलम्बुष ने भी नौ शीघ्रगामी बाणों द्वारा अर्जुनपुत्र अभिमन्यु की छाती में उसी प्रकार वेगपूर्वक प्रहार किया, जैसे अंकुश द्वारा गजराज पर प्रहार किया जाता है।

**अभिमन्युस्ततः क्रुद्धो नवभिर्नतपर्वभिः।**
**बिभेद निशितैर्बाणै राक्षसेन्द्रं महोरसि ॥१८॥**

इससे क्रुद्ध होकर अभिमन्यु ने भी राक्षसराज अलम्बुष की चौड़ी छाती में झुकी हुई गाँठवाले नौ बाण मारे।

**ततः क्रुद्धो महाराज आर्ष्यशृङ्गिरमर्षणः।**
**महेन्द्रप्रतिमं कार्ष्णिं छादयामास पत्रिभिः ॥१९॥**

महाराज! तब अमर्षशील अलम्बुष ने कुपित होकर देवराज इन्द्र के समान पराक्रमी अर्जुनकुमार को पंखवाले बाणों से आच्छादित कर दिया।

**तेन ते विशिखा मुक्ता यमदण्डोपमाः शिताः।**
**अभिमन्युं विनिर्भिद्य प्राविशन्त धरातलम् ॥२०॥**

उसके द्वारा छोड़े गये यमदण्ड के समान भयंकर एवं तीखे बाण अभिमन्यु के शरीर को छेदकर भूमि में समा गये।

**तथैवार्जुनिना मुक्ताः शराः कनकभूषणाः।**
**अलम्बुषं विनिर्भिद्य प्राविशन्त धरातलम् ॥२१॥**

उसी प्रकार अभिमन्यु के छोड़े हुए स्वर्णपंखी बाण भी अलम्बुष को विदीर्ण करके पृथिवी में समा गये।

**सौभद्रस्तु रणे रक्षः शरैः संनतपर्वभिः।**
**चक्रे विमुखमासाद्य मयं शक्र इवाहवे ॥२२॥**

जैसे इन्द्र ने युद्धभूमि में मयासुर को विमुख किया था, वैसे ही सुभद्राकुमार अभिमन्यु ने रणभूमि में झुकी हुई गाँठवाले बाण मारकर उस राक्षस को युद्ध से विमुख कर दिया।

**विमुखं च ततो रक्षो वध्यमानं रणेऽरिणा।**
**प्रादुश्चक्रे महामायां तामसीं परतापिनीम् ॥२३॥**

तब समराङ्गण में शत्रु से पीड़ित तथा विमुख हुए राक्षस ने शत्रुओं को तपानेवाली अपनी अन्धकारमयी तामसी माया प्रकट की।

**अभिमन्युश्च तद् दृष्ट्वा घोररूपं महत्तमः।**
**प्रादुश्चक्रेऽस्त्रमत्युग्रं भास्करं कुरुनन्दनः ॥२४॥**

उस भयंकर एवं महान् अन्धकार को देखकर कुरुकुल को आनन्दित करनेवाले अभिमन्यु ने अति उग्र भास्करास्त्र को प्रकट किया [जिससे सर्वत्र प्रकाश हो गया]।

**बह्वीस्तथान्या मायाश्च प्रयुक्तास्तेन रक्षसा।**
**सर्वास्त्रविदमेयात्मा वारयामास फाल्गुनिः ॥२५॥**

उस राक्षस ने अन्य अनेक जिन-जिन मायाओं का प्रयोग किया, उन सबको सम्पूर्ण अस्त्रों के ज्ञाता, अनन्त आत्मबल से सम्पन्न अभिमन्यु ने नष्ट कर दिया।

**हतमायं ततो रक्षो वध्यमानं च सायकैः ।**
**रथं तत्रैव संत्यज्य प्राद्रवन्महतो भयात् ॥२६॥**

अपनी माया के नष्ट हो जाने पर सायकों की मार खाता हुआ वह राक्षस अत्यधिक भयभीत होकर अपने रथ को वहीं छोड़कर भाग गया ।

**तस्मिन् विनिर्जिते तूर्णं कूटयोधिनि राक्षसे ।**
**आर्जुनिः समरे सैन्यं तावकं सम्ममर्द ह ॥२७॥**

माया द्वारा युद्ध करनेवाले उस राक्षस के पराजित हो जाने पर अर्जुनकुमार अभिमन्यु ने तुरन्त ही रणभूमि में आपकी सेना को रौंद डाला ।

**ततः शान्तनवो भीष्मः सैन्यं दृष्ट्वाभिविद्रुतम् ।**
**महता शरवर्षेण सौभद्रं पर्यवारयत् ॥२८॥**

उस समय अपनी सेना को भागती देख शान्तनुनन्दन भीष्म ने बड़ी भारी बाणवर्षा करके सुभद्राकुमार अभिमन्यु को रोक दिया ।

**कोष्ठकीकृत्य तं वीरं धार्तराष्ट्रा महारथाः ।**
**एकं सुबहवो युद्धे ततक्षुः सायकैर्दृढम् ॥२९॥**

फिर आपके महारथी पुत्रों ने वीर अभिमन्यु को चारों ओर से घेर लिया तथा रणभूमि में उस अकेले को बहुत-से योद्धाओं ने सायकों द्वारा जोर-जोर से घायल करना आरम्भ किया ।

**ततो धनञ्जयो वीरो विनिघ्नंस्तव सैनिकान् ।**
**आससाद रणे भीष्मं पुत्रप्रेप्सुरमर्षणः ॥३०॥**

अभिमन्यु को सब ओर से घिरा हुआ देख वीर अर्जुन रणभूमि में आपके सैनिकों का संहार करते हुए अपने पुत्र की रक्षा के लिए अमर्ष में भरकर भीष्म के पास आ पहुँचे ।

**तथैव समरे राजन् पिता देवव्रतस्तव ।**
**आससाद रणे पार्थं स्वर्भानुरिव भास्करम् ॥३१॥**

राजन् ! जैसे सूर्य पर राहु आक्रमण करता है, उसी प्रकार आपके ताऊ देवव्रत भीष्म ने रणभूमि में कुन्तीपुत्र अर्जुन पर धावा किया ।

**शारद्वतस्ततो राजन् भीष्मस्य प्रमुखे स्थितम् ।**
**अर्जुनं पञ्चविंशत्या सायकानां समाचिनोत् ॥३२॥**

राजन् ! उधर भीष्म के समक्ष खड़े हुए अर्जुन को कृपाचार्य ने भी पच्चीस बाण मारे ।

**प्रत्युद्गम्याथ विव्याध सात्यकिस्तं शितैः शरैः ।**
**पाण्डवप्रियकामार्थं शार्दूल इव कुञ्जरम् ॥३३॥**

तब जैसे सिंह हाथी पर आक्रमण करता है, उसी प्रकार सात्यकि ने आगे बढ़कर पाण्डुनन्दन अर्जुन का प्रिय करने के लिए कृपाचार्य को अपने तीखे बाणों से बींध डाला ।

**गौतमोऽपि त्वरायुक्तो माधवं नवभिः शरैः ।**
**हृदि विव्याध संक्रुद्धः कङ्कपत्रपरिच्छदैः ॥३४॥**

यह देख कृपाचार्य ने भी अत्यन्त क्रुद्ध हो बड़ी उतावली के साथ सात्यकि की छाती में कङ्कपत्रविभूषित नौ बाण मारकर उन्हें घायल कर दिया ।

**शैनेयोऽपि ततः क्रुद्धश्चापमानम्य वेगवान् ।**
**गौतमान्तकरं तूर्णं समाधत्त शिलीमुखम् ॥३५॥**

तब वेगशाली सात्यकि ने भी कुपित होकर अपने धनुष को झुकाकर अति शीघ्रतापूर्वक उसपर कृपाचार्य का अन्त कर देनेवाला एक बाण रखा ।

**तमापतन्तं वेगेन शक्राशनिसमद्युतिम् ।**
**द्विधा चिच्छेद संक्रुद्धो द्रौणिः परमकोपनः ॥३६॥**

इन्द्र के वज्र के समान प्रज्वलित उस बाण को वेगपूर्वक आते देख परम क्रोधी अश्वत्थामा ने अत्यन्त क्रुद्ध हो उसके दो टुकड़े कर डाले ।

**समुत्सृज्याथ शैनेयो गौतमं रथिनां वरः ।**
**अभ्यद्रवद् रणे द्रौणिं राहुः खे शशिनं यथा ॥३७॥**

तब रथियों में श्रेष्ठ सात्यकि ने कृपाचार्य को छोड़कर रणभूमि में अश्वत्थामा पर उसी प्रकार आक्रमण किया जैसे आकाश में राहु चन्द्रमा पर आक्रमण करता है ।

**दृष्ट्वा पुत्रं च तं ग्रस्तं राहुणेव निशाकरम् ।**
**अभ्यद्रवत शैनेयं भारद्वाजः प्रतापवान् ॥३८॥**

जैसे राहु चन्द्रमा को ग्रस लेता है, वैसे ही सात्यकि द्वारा अपने पुत्र पर ग्रहण लगा हुआ देख प्रतापी द्रोणाचार्य ने उसपर धावा किया ।

**विव्याध च सुतीक्ष्णेन पृषत्केन महामृधे ।**
**परीप्सन् स्वसुतं राजन् वार्ष्णेयेनाभिपीडितम् ॥३९॥**

राजन् ! उस महायुद्ध में सात्यकि द्वारा पीड़ित हुए अपने पुत्र की रक्षा करने के लिए आचार्य ने तीखे बाण से उसे घायल कर दिया ।

**सात्यकिस्तु रणे हित्वा गुरुपुत्रं महारथम् ।**
**द्रोणं विव्याध विंशत्या सर्वपारशवैः शरैः ॥४०॥**

तब सात्यकि ने रणभूमि में गुरुपुत्र महारथी अश्वत्थामा को छोड़कर पूर्णतः लोहे के बने हुए बीस बाणों से द्रोणाचार्य को बींध डाला ।

**तदन्तरममेयात्मा कौन्तेयः शत्रुतापनः ।**
**अभ्यद्रवद् रणे क्रुद्धो द्रोणं प्रति महारथः ॥४१॥**

इसी समय शत्रुओं को सन्ताप देनेवाले अमेय आत्मबल से युक्त महारथी कुन्तीपुत्र अर्जुन रणक्षेत्र में क्रुद्ध होकर द्रोणाचार्य पर टूट पड़े ।

**ततो द्रोणश्च पार्थश्च समेयातां महामृधे ।**
**यथा बुधश्च शुक्रश्च महाराज नभस्तले ॥४२॥**

महाराज ! फिर तो द्रोणाचार्य और अर्जुन उस महासमर में एक-दूसरे से भिड़ गये, मानो आकाश में बुध और शुक्र एक-दूसरे पर आक्रमण कर रहे हों ।

**अश्वत्थामा ततः शल्यो दुर्योधनः कृपस्तथा ।**
**महता रथवंशेन पार्थस्यावारयन् दिशः ॥४३॥**

तब अश्वत्थामा, शल्य, दुर्योधन और कृपाचार्य—इन सबने रथियों की विशाल सेना साथ लेकर उसके द्वारा अर्जुन की सम्पूर्ण दिशाओं=मार्गों को रोक दिया ।

**तथैव भगदत्तश्च श्रुतायुश्च महाबलः ।**
**गजानीकेन भीमस्य ताववारयतां दिशः ॥४४॥**

उसी प्रकार भगदत्त तथा महाबली श्रुतायु ने हाथियों की सेना द्वारा भीमसेन की सम्पूर्ण दिशाओं को रोक लिया ।

**भूरिश्रवाः शलश्चैव सौबलश्च विशाम्पते ।**
**शरौघैर्विमलैस्तीक्ष्णैर्माद्रीपुत्राववारयन् ॥४५॥**

प्रजेश्वर ! भूरिश्रवा, शल तथा शकुनि ने तीखे और चमकीले बाणसमूहों की वर्षा करके माद्रीकुमार नकुल और सहदेव को रोका ।

**भीष्मस्तु संहतः संख्ये धार्तराष्ट्रैः ससैनिकैः ।**
**युधिष्ठिरं समासाद्य सर्वतः पर्यवारयत् ॥४६॥**

भीष्मजी ने सैनिकों के सहित आपके पुत्रों के साथ संगठित होकर युद्ध में राजा युधिष्ठिर के पास जाकर उन्हें सब ओर से घेर लिया ।

**तत्रासीत् सुमहद् युद्धं तव तेषां च संकुलम् ।**
**नराश्वरथनागानां यमराष्ट्रविवर्धनम् ॥४७॥**

फिर तो उन तथा आपके पैदल, घुड़सवार, रथी और हाथीसवारों में अत्यन्त भयंकर घमासान युद्ध होने लगा, जो यमराज के राष्ट्र की वृद्धि करनेवाला था ।

**रथी रथिनमासाद्य प्राहिणोद् यमसादनम् ।**
**तथेतरान् समासाद्य नरनागाश्वसादिनः ॥४८॥**

रथी ने रथी का सामना करके उसे यमलोक पठा दिया । पैदल, हाथीसवार और घुड़सवारों ने भी ऐसा ही किया ।

**अनयन् परलोकाय शरैः संनतपर्वभिः ।**
**शरैश्च विविधैर्घोरैस्तत्र तत्र विशाम्पते ॥४९॥**

प्रजेश्वर ! उस रणभूमि में जहाँ-तहाँ सब योद्धा झुकी हुई गाँठवाले नाना प्रकार के भयंकर बाणों द्वारा अपने विपक्षियों को परलोक का अतिथि बनाने लगे ।

**रथास्तु रथिभिर्हीना हतसारथयस्तथा ।**
**विप्रद्रुताश्वाः समरे दिशो जग्मुः समन्ततः ॥५०॥**

कितने ही रथ रथियों और सारथियों से शून्य होकर भागते हुए घोड़ों के साथ सम्पूर्ण दिशाओं में चक्कर काट रहे थे ।

**रथिनश्च रथैर्हीनास्तत्र तत्र विशाम्पते ।**
**विप्रद्रुता व्यदृश्यन्त प्राकृता इव मानवाः ॥५१॥**

प्रजानाथ ! कितने ही रथी रथों से हीन हो गये । रथहीन होकर वे गँवार [साधारण] मनुष्यों की भाँति जहाँ-तहाँ भागते दिखाई देते थे ।

**दन्तिनश्च नरश्रेष्ठ हीनाः परमसादिभिः ।**
**मृद्नन्तः स्वान्यनीकानि निपेतुः सर्वशब्दगाः ॥५२॥**

नरश्रेष्ठ ! कितने ही दन्तार हाथी अपने श्रेष्ठ सवारों से रहित हो अपनी ही सेना को कुचलते हुए प्रत्येक शब्द के पीछे दौड़ते थे ।

**अश्वारोहान् हतैरश्वैर्गृहीतासीन् समन्ततः ।**
**द्रवमाणानपश्याम द्राव्यमाणांश्च संयुगे ॥५३॥**

हमने युद्ध में बहुत-से घुड़सवारों को देखा, जो घोड़ों के मारे जाने पर हाथ में तलवार लिये सब ओर भागते और शत्रुओं द्वारा खदेड़े जाते थे ।

**गजो गजं समासाद्य द्रवमाणं महाहवे ।**
**ययौ प्रमृद्य तरसा पादातान् वाजिनस्तथा ॥५४॥**

उस महायुद्ध में एक हाथी भागते हुए दूसरे हाथी के पास पहुँचकर अपने वेग से अनेक पैदल सिपाहियों तथा घोड़ों को कुचलता हुआ उसका अनुसरण करता था ।

**तस्मिन् रौद्रे तथा युद्धे वर्तमाने महाभये ।**
**प्रावर्तत नदी घोरा शोणितान्त्रतरङ्गिणी ॥५५॥**

उस महाभयंकर घोर युद्ध में रक्त और आँतों की तरंगों से युक्त एक भयानक नदी बह चली ।

**अस्थिसंघातसम्बाधा केशशवलशाद्वला ।**
**रथह्रदा शरावर्ता हयमीना दुरासदा ॥५६॥**

वह नदी हड्डियों के समूहरूपी शिलाखण्डों से भरी थी । मृत वीरों के केश ही उसमें सेवार और घास के समान प्रतीत होते थे । रथ कुण्ड और बाण भँवर के समान प्रतीत होते थे । घोड़े ही उस दुर्गम नदी के मत्स्य थे ।

**शीर्षोपलसमाकीर्णा हस्तिग्राहसमाकुला ।**
**कवचोष्णीषफेनौघा धनुर्वेगासिकच्छपा ॥५७॥**

उस नदी में कटे हुए मस्तक पत्थरों के टुकड़ों के समान बिखरे थे । हाथी ही उसमें विशाल ग्राहों के समान प्रतीत होते थे, कवच और पगड़ी फेन-राशि के समान थे, धनुष ही उसका वेगयुक्त प्रवाह और खड्ग ही वहाँ कच्छप के समान जान पड़ते थे ।

**पताकाध्वजवृक्षाढ्या मर्त्यकूलापहारिणी ।**
**क्रव्यादसंघसंकीर्णा यमराष्ट्रविवर्धनी ॥५८॥**

उस नदी में पताका और ध्वजाएँ किनारे के वृक्षों के समान प्रतीत होती थीं । मनुष्यों की लाशें ही उसकी कगारें थीं, जिन्हें वह अपने वेग से तोड़-तोड़कर बहा रही थी, मांसाहारी पक्षियों के समूहों से वह भरी हुई थी । वह नदी यम के राज्य का विस्तार कर रही थी ।

**तां नदीं क्षत्रियाः शूरा रथनागहयप्लवैः ।**
**प्रतेरुर्बहवो राजन् भयं त्यक्त्वा महारथाः ॥५९॥**

राजन् ! बहुत-से शूरवीर महारथी क्षत्रिय नौका के समान घोड़े, रथ, हाथी आदि पर चढ़कर भय से रहित हो उस नदी के पार जा रहे थे ।

**प्राक्रोशन् क्षत्रियास्तत्र दृष्ट्वा तद् वैशसं महत् ।**
**दुर्योधनापराधेन गच्छन्ति क्षत्रियाः क्षयम् ॥६०॥**

वहाँ खड़े हुए क्षत्रिय उस भीषण मार-काट को देखकर पुकार-पुकारकर यह कह रहे थे कि "दुर्योधन के अपराध से ही सारे क्षत्रिय विनाश को प्राप्त हो रहे हैं ।

**गुणवत्सु कथं द्वेषं धृतराष्ट्रो जनेश्वरः ।**
**कृतवान् पाण्डुपुत्रेषु पापात्मा लोभमोहितः ॥६१॥**

"पापात्मा राजा धृतराष्ट्र ने लोभ से मोहित होकर गुणवान् पाण्डवों से द्वेष क्यों किया ?"

**एवं बहुविधा वाचः श्रूयन्ते स्म परस्परम् ।**
**पाण्डवस्तवसंयुक्ताः पुत्राणां ते सुदारुणाः ॥६२॥**

महाराज ! इस प्रकार वहाँ परस्पर कही हुई पाण्डवों की प्रशंसा तथा आपके पुत्रों की अत्यन्त भयंकर निन्दा से युक्त नाना प्रकार की बातें सुनाई पड़ती थीं ।

**इति महाभारते भीष्मपर्वणि चतुर्विंशोऽध्यायः ॥२४॥**

## पञ्चविंशोऽध्यायः

**अनेक द्वन्द्व युद्ध, श्रीकृष्ण का भीष्म को मारने के लिए उद्यत होना और अर्जुन का उन्हें रोकना तथा नवें दिन के युद्ध की समाप्ति**

सञ्जय उवाच

**एकीभूतास्ततः सर्वे कुरवः सह पाण्डवैः ।**
**अयुध्यन्त महाराज मध्यं प्राप्ते दिवाकरे ॥१॥**

सञ्जय कहते हैं—महाराज ! दोपहर होते-होते समस्त कौरव संगठित होकर पाण्डवों के साथ घोर युद्ध करने लगे ।

**भीमसेनस्तु राजानं बाह्लीकं प्रपितामहम् ।**
**विद्ध्वा नदन्महानादं शार्दूल इव कानने ॥२॥**

भीमसेन ने अपने प्रपितामह राजा बाह्लीक को बाणों द्वारा घायल करके वन में सिंह के समान बड़े जोर से गर्जना की।

**तथैव द्रुपदो राजा द्रोणं विद्ध्वा शितैः शरैः।**
**पुनर्विव्याध सप्तत्या सारथिं चास्य पञ्चभिः ॥३॥**

इसी प्रकार राजा द्रुपद ने द्रोणाचार्य को एक बार तीखे बाणों से घायल करके सत्तर बाणों द्वारा पुनः घायल किया तथा पाँच बाणों से उसके सारथि को भी बींध डाला।

**आर्जुनिश्चित्रसेनेन विद्धो बहुभिराशुगैः।**
**अतिष्ठदाहवे शूरः किरन् बाणान् सहस्रशः ॥४॥**

अर्जुनकुमार अभिमन्यु को चित्रसेन ने बहुत-से बाणों द्वारा बींध डाला, तो भी शूरवीर अभिमन्यु सहस्रों बाणों की वर्षा करता हुआ रणभूमि में डटा रहा।

**सात्यकिः कृतवर्माणं वारयित्वा महारणे।**
**शरैर्बहुविधै राजन्नाससाद पितामहम् ॥५॥**

राजन्! दूसरी ओर उस महायुद्ध में सात्यकि ने कृतवर्मा को रोककर अनेक प्रकार से बाणों की वर्षा करते हुए पितामह भीष्म पर धावा किया।

**तस्यायसीं महाशक्तिं चिक्षेपाथ पितामहः।**
**हेमचित्रां महावेगां नागकन्योपमां शुभाम् ॥६॥**

पितामह ने सात्यकि पर लोह-निर्मित एक विशाल शक्ति चलाई जो स्वर्णजटित, अत्यन्त वेग-शालिनी तथा सर्पिणी के समान आकारवाली और सुन्दर थी।

**तामापतन्तीं सहसा मृत्युकल्पां सुदुर्जयाम्।**
**व्यंसयामास वार्ष्णेयो लाघवेन महायशाः ॥७॥**

उस अत्यन्त दुर्जय मृत्युरूपी शक्ति को सहसा अपनी ओर आते देख महायशस्वी सात्यकि ने अपनी फुर्ती के कारण उसे असफल कर दिया।

**वार्ष्णेयस्तु ततो राजन्स्वां शक्तिं कनकप्रभाम्।**
**वेगवद् गृह्य चिक्षेप पितामहरथं प्रति ॥८॥**

राजन्! उस वार को बचाकर सात्यकि ने भी अपनी सुनहरी तथा प्रभावशाली शक्ति लेकर उसे भीष्म के रथ पर बड़े वेग से चलाया।

**तामापतन्तीं सहसा द्विधा चिच्छेद भारतः।**
**क्षुरप्राभ्यां सुतीक्ष्णाभ्यां सा व्यशीर्यत मेदिनीम् ॥९॥**

परन्तु भरतवंशी भीष्म ने अपने दो अत्यन्त तीखे क्षुरप्रों से उस सहसा आती हुई शक्ति को दो स्थानों से काट दिया जिससे वह छिन्न-भिन्न होकर पृथिवी पर गिर पड़ी।

**छित्वा शक्तिं तु गाङ्गेयः सात्यकिं नवभिः शरैः।**
**आजघानोरसि क्रुद्धः प्रहसञ्छत्रुकर्शनः ॥१०॥**

उस शक्ति को काटकर हँसते हुए शत्रुसन्तापक गङ्गानन्दन भीष्म ने कुपित हो सात्यकि की छाती में नौ बाण मारे।

**ततः सरथनागाश्वाः पाण्डवाः पाण्डुपूर्वज।**
**परिवव्रू रणे भीष्मं माधवत्राणकारणात् ॥११॥**

पाण्डु अग्रज! उस समय मधुवंशी सात्यकि को बचाने के लिए पाण्डवों ने रथ, घोड़े और हाथियों की सेना के साथ आकर युद्धभूमि में भीष्म को चारों ओर से घेर लिया।

**स समन्तात् परिवृतो रथौघैरपराजितः।**
**गहनेऽग्निरिवोत्सृष्टः प्रजज्वाल दहन् परान् ॥१२॥**

उस समय चारों ओर से रथसमूहों द्वारा घिरे हुए अपराजित वीर भीष्म गहन वन में लगाई हुई अग्नि के समान शत्रुओं को दग्ध करते हुए प्रज्वलित हो उठे।

**रथाग्न्यागारश्चापार्चिरसिशक्तिगदेन्धनः।**
**शरस्फुलिङ्गो भीष्माग्निर्ददाह क्षत्रियर्षभान् ॥१३॥**

रथ ही उनके लिए अग्निशाला के समान था, धनुष ज्वालाओं के समान प्रकाशित होता था, खड्ग, शक्ति और गदा आदि अस्त्र-शस्त्र समिधा का काम कर रहे थे, बाण चिंगारियों के समान थे। इस प्रकार भीष्मरूपी अग्नि वहाँ क्षत्रिय-शिरोमणियों को दग्ध करने लगी।

**अमोघा ह्यपतन् बाणाः पितुस्ते भरतर्षभ।**
**नासज्जन्त तनुत्रेषु भीष्मचापच्युताः शराः ॥१४॥**
**हतवीरान् रथान् राजन् संयुक्ताञ्जवनैर्हयैः।**
**अपश्याम महाराज ह्रियमाणान् रणाजिरे ॥१५॥**

भरतश्रेष्ठ! आपके ताऊ भीष्म के बाण कभी खाली नहीं जाते थे। राजन्! भीष्म के धनुष से छूटे हुए बाण कवचों में भी नहीं अटकते थे [उन्हें

छिन्न-भिन्न करके भीतर घुस जाते थे]। महाराज! हमने रणभूमि में ऐसे बहुत-से रथ देखे, जिनके रथी और सारथि तो मार दिये गये थे, परन्तु वेगशाली घोड़ों से जुते हुए होने के कारण वे इधर-उधर खींच-कर ले जाए जा रहे थे।

**महेन्द्रसमवीर्येण वध्यमाना महाचमूः।**
**अभज्यत महाराज न च द्वौ सह धावतः ॥१६॥**

महाराज! महेन्द्र के समान पराक्रमी भीष्मजी के द्वारा मारी जाती हुई उस विशाल सेना में भगदड़ मच गई थी। भगदड़ भी ऐसी कि दो आदमी भी एक-साथ नहीं भागते थे।

**तद् गोकुलमिवोद्भ्रान्तमुद्भ्रान्तरथकूबरम्।**
**ददृशे पाण्डुपुत्रस्य सैन्यमार्तस्वरं तदा ॥१७॥**

उस समय पाण्डुनन्दन युधिष्ठिर की सारी सेना [सिंह से डरी हुई] गौओं के झुण्ड की भाँति घब-राहट में पड़ गई थी। रथ के कूबर उलट-पलट हो गये थे तथा सभी सैनिक आर्तनाद कर रहे थे।

**प्रभज्यमानं सैन्यं तु दृष्ट्वा यादवनन्दनः।**
**उवाच पार्थं बीभत्सुं निगृह्य रथमुत्तमम् ॥१८॥**

उस सेना में भगदड़ मची देख यादवनन्दन श्रीकृष्ण ने अपने उत्तम रथ को रोककर कुन्तीकुमार अर्जुन से कहा—

कृष्ण उवाच

**अयं स कालः सम्प्राप्तः पार्थ यः काङ्क्षितस्त्वया।**
**प्रहरास्मिन् नरव्याघ्र न चेन्मोहाद् विमुह्यसे ॥१९॥**

**श्रीकृष्ण बोले**—पार्थ! तुम्हें जिस अवसर की अभिलाषा और प्रतीक्षा थी, वह समय आ गया। पुरुषसिंह! यदि तुम मोह से मोहित नहीं हो रहे हो तो भीष्म पर प्रहार करो।

**यत्पुरा कथितं वीर राज्ञां तेषां समागमे।**
**विराटनगरे तात सञ्जयस्य समीपतः ॥२०॥**
**भीष्मद्रोणमुखान्सर्वान्धार्तराष्ट्रस्य सैनिकान्।**
**सानुबन्धान्हनिष्यामि ये मां योत्स्यन्ति संयुगे ॥२१॥**
**इति तत् कुरु कौन्तेय सत्यं वाक्यमरिन्दम।**
**क्षत्रधर्ममनुस्मृत्य युध्यस्व विगतज्वरः ॥२२॥**

वीर! तात! पूर्वकाल में जब समस्त नरेश विराटनगर में एकत्र हुए थे, उनके सामने और सञ्जय के समीप तुमने जो यह कहा था कि 'मैं युद्ध में, जो मेरा सामना करने आएँगे, दुर्योधन के उन भीष्म, द्रोण आदि समस्त सैनिकों को, सगे-सम्बन्धियोंसहित मार डालूँगा।' शत्रुदमन कुन्ती-नन्दन! अब अपने उस कथन को सत्य सिद्ध कर दिखाओ। तुम क्षत्रियधर्म का स्मरण करके सारी चिन्ताएँ छोड़कर युद्ध करो।

अर्जुन उवाच

**अवध्यानां वधं कृत्वा राज्यं वा नरकोत्तरम्।**
**दुःखानि वनवासे वा किं नु मे सुकृतं भवेत् ॥२३॥**

**अर्जुन बोले**—प्रभो! मैं अवध्य महापुरुषों का वध करके नरक से भी बढ़कर निन्दनीय राज्य प्राप्त करूँ अथवा वनवास में रहकर कष्ट भोगूँ—इन दोनों में कौन-सी बात मेरे लिए पुण्यदायक होगी?

**नोदयाश्वान् यतो भीष्मः करिष्ये वचनं तव।**
**पातयिष्यामि दुर्धर्षं भीष्मं कुरुपितामहम् ॥२४॥**

अच्छा, जिधर भीष्म हैं उधर ही घोड़ों को बढ़ाइए। आज मैं आपकी आज्ञा का पालन करूँगा और कुरुकुल के वृद्ध पितामह, दुर्धर्ष वीर भीष्म को मार गिराऊँगा।

सञ्जय उवाच

**स चाश्वान् रजतप्रख्यान्नोदयामास माधवः।**
**यतो भीष्मस्ततो राजन् दुष्प्रेक्ष्यो रश्मिवानिव ॥२५॥**

**सञ्जय ने कहा**—राजन्! तब श्रीकृष्ण ने चाँदी के समान सफेद रंगवाले घोड़ों को उसी ओर हाँका, जहाँ अंशुमाली सूर्य के समान दुर्निरीक्ष्य भीष्म युद्ध कर रहे थे।

**ततस्तत् पुनरावृत्तं यौधिष्ठिरबलं महत्।**
**दृष्ट्वा पार्थं महाबाहुं भीष्मायोद्यतमाहवे ॥२६॥**

महाबाहु कुन्तीकुमार अर्जुन को भीष्म के साथ युद्ध करने के लिए उद्यत देख युधिष्ठिर की भागती हुई सेना पुनः लौट आई।

**ततो भीष्मः कुरुश्रेष्ठः सिंहवद् विनदन् मुहुः।**
**धनञ्जयरथं शीघ्रं शरवर्षैरवाकिरत् ॥२७॥**

उधर बारम्बार सिंहनाद करते हुए कुरुश्रेष्ठ भीष्म ने अर्जुन के रथ पर शीघ्र ही बाण-वृष्टि आरम्भ कर दी।

**क्षणेन स रथस्तस्य सहयश्च ससारथिः ।**
**शरवर्षेण महता न प्राज्ञायत भारत ॥२८॥**

हे भारत ! कुछ ही देर में बाणों की उस भीषण वर्षा के कारण सारथि और घोड़ोंसहित उनका वह रथ ऐसा अदृश्य हो गया कि उसका कुछ पता ही न चलता था ।

**वासुदेवस्त्वसम्भ्रान्तो धैर्यमास्थाय सत्वरः ।**
**प्रेरयामास तानश्वान् विनुन्नान् भीष्मसायकैः ॥२९॥**

परन्तु श्रीकृष्ण बिना किसी घबराहट के धैर्य धारण कर भीष्म के सायकों से क्षत-विक्षत हुए उन घोड़ों को शीघ्रतापूर्वक हाँक रहे थे ।

**ततः पार्थो धनुर्गृह्य दिव्यं जलदनिःस्वनम् ।**
**पातयामास भीष्मस्य धनुश्छित्वा शितैः शरैः ॥३०॥**

तब कुन्तीपुत्र अर्जुन ने मेघ के समान गम्भीर घोष करनेवाले अपने दिव्य धनुष को हाथ में लेकर तीखे बाणों द्वारा भीष्म के धनुष को काट गिराया ।

**स च्छिन्नधन्वा कौरव्यः पुनरन्यन्महद् धनुः ।**
**निमेषान्तरमात्रेण सज्यं चक्रे पिता तव ॥३१॥**

धनुष कट जाने पर आपके ताऊ कुरुकुलभूषण भीष्म ने पुनः दूसरा धनुष हाथ में ले पलक मारते-मारते उसपर प्रत्यञ्चा=डोरी चढ़ा दी ।

**चकर्ष च ततो दोर्भ्यां धनुर्जलदनिःस्वनम् ।**
**अथास्य तदपि क्रुद्धश्चिच्छेद धनुरर्जुनः ॥३२॥**

तत्पश्चात् मेघों के समान गम्भीर नाद करनेवाले उस धनुष को उन्होंने दोनों हाथों से खैंचा । इतने में ही कुपित हुए अर्जुन ने उनके उस धनुष को भी काट दिया ।

**तस्य तत् पूजयामास लाघवं शान्तनोः सुतः ।**
**साधु साधु महाबाहो गाङ्गेयस्त्वब्रवीदिति ॥३३॥**

राजन् ! उस समय शान्तनुकुमार गंगानन्दन भीष्म ने अर्जुन की उस फुर्ती के लिए उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा की और इस प्रकार कहा—"महाबाहो ! बहुत अच्छा, तुम्हें साधुवाद !"

**समाभाष्यैवमपरं प्रगृह्य रुचिरं धनुः ।**
**मुमोच समरे भीष्मः शरान् पार्थरथं प्रति ॥३४॥**

ऐसा कहकर भीष्म ने पुनः दूसरा सुन्दर धनुष लेकर रणभूमि में अर्जुन के रथ पर बाणों की वर्षा आरम्भ कर दी ।

**अदर्शयद् वासुदेवो हययाने परं बलम् ।**
**मोघान् कुर्वञ्शराँस्तस्य मण्डलानि निदर्शयन् ॥३५॥**

उस समय श्रीकृष्ण ने घोड़ों के हाँकने की कला में अपनी अद्भुत शक्ति दिखाई । वे अनेक प्रकार के पैंतरे दिखाते हुए भीष्म के बाणों को व्यर्थ करते जा रहे थे ।

**वासुदेवस्तु सम्प्रेक्ष्य पार्थस्य मृदुयुद्धताम् ।**
**नामृष्यत महाबाहुर्माधवः परवीरहा ॥३६॥**

शत्रुवीरों का नाश करनेवाले महाबाहु माधव श्रीकृष्ण ने जब देखा कि अर्जुन मन लगाकर युद्ध नहीं कर रहे हैं, अपितु वे भीष्म के प्रति कोमलता दिखा रहे हैं, तब वे उसे सहन न कर सके ।

**उत्सृज्य रजतप्रख्यान्हयान्पार्थस्य मारिष ।**
**वासुदेवस्ततो योगी प्रचस्कन्द महारथात् ॥३७॥**
**अभिदुद्राव भीष्मं स भुजप्रहरणो बली ।**
**प्रतोदपाणिस्तेजस्वी सिंहवद् विनदन् मुहुः ॥३८॥**

आर्य ! योगेश्वर श्रीकृष्ण चाँदी के समान श्वेत रंगवाले अर्जुन के घोड़ों को छोड़कर उस विशाल रथ से कूद पड़े और केवल भुजाओं को ही आयुध बनाये हुए हाथ में चाबुक उठाये, बारम्बार सिंहनाद करते हुए बलवान् एवं तेजस्वी कृष्ण भीष्म की ओर बड़े वेग से दौड़े ।

**दृष्ट्वा माधवमाक्रन्दे भीष्मायोद्यतमन्तिके ।**
**हतो भीष्मो हतो भीष्मस्तत्र तत्र वचो महत् ॥३९॥**

राजन् ! उस मार-काट में श्रीकृष्ण को समीप आकर भीष्म के वध के लिए उद्यत हुआ देख चारों ओर यह महान् कोलाहल सुनाई देने लगा कि—'भीष्म मारे गये, भीष्म मारे गये !'

**तमापतन्तं सम्प्रेक्ष्य पुण्डरीकाक्षमाहवे ।**
**उवाच भीष्मो गोविन्दमसम्भ्रान्तेन चेतसा ॥४०॥**

उस महासमर में कमलनयन श्रीकृष्ण को अपनी ओर आते देख भीष्मजी व्यग्रताशून्य मन से उन्हें सम्बोधित करते हुए बोले—

**मामद्य सात्वतश्रेष्ठ पातयस्व महाहवे ।**
**त्वया हि देव संग्रामे हतस्यापि ममानघ ॥४१॥**

**श्रेय एव परं कृष्ण लोके भवति सर्वतः ।**
**प्रहरस्व यथेष्टं वै दासोऽस्मि तव माधव ॥४२॥**

"सात्वतशिरोमणे ! इस महासमर में आज आप मुझे मार गिराइए । देव ! निष्पाप कृष्ण ! आपके द्वारा संग्राम में मारे जाने पर भी संसार में सब ओर मेरा परमकल्याण=यश ही होगा। माधव ! मैं आपका दास हूँ। आप अपनीइच्छानुसार मुझपर प्रहार कीजिए ।

**अन्वगेव ततः पार्थः समभिद्रुत्य केशवम् ।**
**निजग्राह महाबाहुर्बाहुभ्यां परिगृह्य वै ॥४३॥**

इधर महाबाहु अर्जुन श्रीकृष्ण के पीछे-पीछे दौड़ रहे थे । उन्होंने श्रीकृष्ण को अपनी दोनों भुजाओं से पकड़कर किसी प्रकार काबू में कर लिया ।

**निगृह्यमाणः पार्थेन कृष्णो राजीवलोचनः ।**
**जगामैवैनमादाय वेगेन पुरुषोत्तमः ॥४४॥**

अर्जुन के द्वारा पकड़े जाने पर भी कमलनयन पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण उन्हें घसीटते हुए ही वेगपूर्वक आगे बढ़ने लगे ।

**बलात् पार्थस्तु विष्टभ्य चरणौ परवीरहा ।**
**निजग्राह हृषीकेशं कथञ्चिद् दशमे पदे ॥४५॥**

तब शत्रुवीरों के संहारक अर्जुन ने बलपूर्वक श्रीकृष्ण के चरणों को पकड़ लिया और इस प्रकार दसवें पग तक जाते-जाते वे किसी प्रकार उन्हें रोकने में सफल हो गये ।

**तत एवमुवाचार्तः क्रोधपर्याकुलेक्षणम् ।**
**निवर्तस्व महाबाहो नानृतं कर्तुमर्हसि ॥४६॥**

उस समय श्रीकृष्ण के नेत्र क्रोध से व्याप्त हो रहे थे । उन्हें रोककर अर्जुन आर्तभाव से बोले—"महाबाहो ! लौटिए, अपनी प्रतीज्ञा को झूठी मत कीजिए ।

**यत् त्वया कथितं पूर्वं न योत्स्यामीति केशव ।**
**मिथ्यावादीति लोकास्त्वां कथयिष्यन्ति माधव ॥४७॥**

"केशव ! आपने पहले जो यह कहा था कि 'मैं युद्ध नहीं करूँगा,' अपने उस वचन की रक्षा कीजिए । अन्यथा हे माधव ! सब लोग आपको मिथ्यावादी कहेंगे ।

**ममैष भारः सर्वो हि हनिष्यामि पितामहम् ।**
**शपे केशव शस्त्रेण सत्येन सुकृतेन च ॥४८॥**

"केशव ! यह सारा भार मुझपर है । मैं अपने अस्त्र-शस्त्र, सत्य और पुण्यकर्मों की शपथ खाकर कहता हूँ कि मैं पितामह भीष्म का वध करूँगा ।

**अन्तं यथा गमिष्यामि शत्रूणां शत्रुसूदन ।**
**अद्यैव पश्य दुर्धर्षं पात्यमानं महारथम् ॥४९॥**

"शत्रुसूदन ! मैं सब शत्रुओं का संहार कर डालूँगा । देखिए, मैं आज ही दुर्जय वीर महारथी भीष्म को मार गिराता हूँ ।"

**माधवस्तु वचः श्रुत्वा फाल्गुनस्य महात्मनः ।**
**न किंचिदुक्त्वा सक्रोध आरुरोह रथं पुनः ॥५०॥**

महामना अर्जुन का यह वचन सुनकर श्रीकृष्ण कुछ भी न बोलकर पुनः क्रोधपूर्वक ही रथ पर जा बैठे ।

**तौ रथस्थौ नरव्याघ्रौ भीष्मः शान्तनवः पुनः ।**
**ववर्ष शरवर्षेण मेघो वृष्टया यथाचलौ ॥५१॥**

पुरुषसिंह श्रीकृष्ण और अर्जुन को रथ पर बैठे देख शान्तनुनन्दन भीष्म ने पुनः उनपर बाण-वृष्टि आरम्भ कर दी, मानो मेघ दो पर्वतों पर जल की धारा गिरा रहा हो ।

**प्राणानादत्त योधानां पिता देवव्रतस्तव ।**
**गभस्तिभिरिवादित्यस्तेजाँसि शिशिरात्यये ॥५२॥**

राजन् ! आपके ताऊ देवव्रत उसी प्रकार पाण्डव-योद्धाओं के प्राण लेने लगे, जैसे ग्रीष्म-ऋतु में सूर्य अपनी किरणों द्वारा सबका तेज हर लेते हैं ।

**यथा कुरूणां सैन्यानि बभञ्जुर्युधि पाण्डवाः ।**
**तथा पाण्डवसैन्यानि बभञ्ज युधि ते पिता ॥५३॥**

राजेन्द्र ! जैसे पाण्डवों ने युद्ध में कौरव-सेनाओं को खदेड़ा था, उसी प्रकार आपके ताऊ भीष्म ने भी पाण्डव-सेनाओं को मार भगाया ।

**युध्यतामेव तेषां तु भास्करेऽस्तमुपागते ।**
**सन्ध्या समभवद् घोरा नापश्याम ततो रणम् ॥५४॥**

कौरव और पाण्डवों के युद्ध करते-करते ही सूर्य अस्ताचल को चला गया तथा भयंकर संध्याकाल आ गया । फिर हम लोगों ने युद्ध नहीं देखा ।

**ततोऽवहारं सैन्यानां चक्रे राजा युधिष्ठिरः ।**
**तथैव तव सैन्यानामवहारो ह्यभूत् तदा ।।५५।।**

सूर्यास्त होने पर महाराज युधिष्ठिर ने अपनी सेना को पीछे लौटा लिया। इसी प्रकार आपकी सेना भी उस समय युद्धस्थल से शिबिर की ओर लौट चली।

**ततोऽवहारं सैन्यानां कृत्वा तत्र महारथाः ।**
**न्यविशन्त कुरुश्रेष्ठ संग्रामे क्षतविक्षताः ।।५६।।**

कुरुश्रेष्ठ ! इस प्रकार संग्राम में क्षत-विक्षत हुए वे सब महारथी सेना को लौटाकर शिबिरों में विश्राम करने लगे।

**इति महाभारते भीष्मपर्वणि पञ्चविंशोऽध्यायः ।।२५।।**

# षड्विंशोऽध्यायः

## पाण्डवों की गुप्त मन्त्रणा, श्रीकृष्णसहित पाण्डवों का भीष्मजी से मिलकर उनके वध का उपाय जानना

सञ्जय उवाच

**तस्मिन् रात्रिमुखे घोरे पाण्डवा वृष्णिभिः सह ।**
**सृञ्जयाश्च दुराधर्षा मन्त्राय समुपाविशन् ।।१।।**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! उस भयंकर रात्रि के आरम्भकाल में वृष्णिवंशियोंसहित दुर्धर्ष सृञ्जय और पाण्डव गुप्त मन्त्रणा के लिए एक-साथ बैठे।

**ततो युधिष्ठिरो राजा मन्त्रयित्वा चिरं नृप ।**
**वासुदेवं समुद्वीक्ष्य वचनं चेदमाददे ।।२।।**

उस समय राजा युधिष्ठिर ने दीर्घकाल तक मन्त्रणा करने के पश्चात् वासुदेवनन्दन श्रीकृष्ण की ओर देखकर यह बात कही—

**कृष्ण पश्य महात्मानं भीष्मं भीमपराक्रमम् ।**
**गजं नलवनानीव विमृद्नन्तं बलं मम ।।३।।**

"श्रीकृष्ण ! देखिए, भयंकर पराक्रमी महात्मा भीष्म हमारी सेना को उसी प्रकार कुचल रहे हैं, जैसे हाथी सरकण्डों के जंगलों को रौंद डालते हैं।

**सोऽहमेवंगते कृष्ण निमग्नः शोकसागरे ।**
**आत्मनो बुद्धिदौर्बल्याद् भीष्ममासाद्य संयुगे ।।४।।**

"श्रीकृष्ण ! ऐसी अवस्था में मैं अपनी बुद्धि की दुर्बलता के कारण रणभूमि में भीष्म को सामने देखकर शोक-सागर में डूबा जा रहा हूँ।

**यदि तेऽहमनुग्राह्यो भ्रातृभिः सह केशव ।**
**स्वधर्मस्याविरोधेन हितं व्याहर माधव ।।५।।**

"केशव ! माधव ! यदि भाइयोंसहित मुझपर आपका अनुग्रह है तो मुझे स्वधर्म के अनुकूल कोई हितकारक परामर्श दीजिए।"

कृष्ण उवाच

**धर्मपुत्र विषादं त्वं मा कृथाः सत्यसङ्गर ।**
**यस्य ते भ्रातरः शूरा दुर्जयाः शत्रुसूदनाः ।।६।।**

**श्रीकृष्ण बोले**—धर्मपुत्र ! सत्यप्रतिज्ञ युधिष्ठिर ! विषाद मत कीजिए। आपके भाई अत्यन्त शूरवीर, दुर्जय और शत्रुओं का संहार करने में समर्थ हैं।

**अर्जुनो भीमसेनश्च वाय्वग्निसमतेजसौ ।**
**माद्रीपुत्रौ च विक्रान्तौ त्रिदशानामिवेश्वरौ ।।७।।**

अर्जुन और भीमसेन वायु और अग्नि के समान तेजस्वी हैं। माद्रीकुमार नकुल और सहदेव भी पराक्रम में दो इन्द्रों के समान हैं।

**मां वा नियुङ्क्ष्व सौहार्दाद्योत्स्ये भीष्मेण पाण्डव ।**
**त्वत्प्रयुक्तो महाराज किं न कुर्यां महाहवे ।।८।।**

पाण्डुनन्दन ! महाराज ! आप सौहार्दवश मुझे भी आज्ञा दीजिए। मैं भीष्म से युद्ध करूँगा। भला आपका आदेश मिलने पर मैं इस महासमर में क्या नहीं कर सकता ?

**हनिष्यामि रणे भीष्ममाहूय पुरुषर्षभम् ।**
**पश्यतां धार्तराष्ट्राणां यदि नेच्छति फाल्गुनः ।।९।।**

यदि अर्जुन भीष्म को मारना नहीं चाहते तो मैं युद्ध में पुरुषश्रेष्ठ भीष्म को ललकारकर धृतराष्ट्र के पुत्रों के देखते-देखते मार डालूँगा।

**यः शत्रु पाण्डुपुत्राणां मच्छत्रुः स न संशयः ।**
**मदर्था भवदीया ये ये मदीयास्तवैव ते ।।१०।।**

जो पाण्डवों का शत्रु है, वह मेरा भी शत्रु है, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है। जो आपके सुहृद् हैं,

वे मेरे भी सुहृद् हैं और जो मेरे सुहृद् हैं, वे आपके ही हैं।

**तव भ्राता मम सखा सम्बन्धी शिष्य एव च।**
**मांसान्युत्कृत्य दास्यामि फाल्गुनार्थे महीपते ॥११॥**

राजन्! आपके भाई अर्जुन मेरे सखा, सम्बन्धी और शिष्य हैं। मैं अर्जुन के लिए अपना मांस भी काटकर दे दूँगा।

**एष चापि नरव्याघ्रो मत्कृते जीवितं त्यजेत्।**
**एष नः समयस्तात तारयेम परस्परम् ॥१२॥**

ये पुरुषसिंह अर्जुन भी मेरे लिए अपने प्राणों तक का परित्याग कर सकते हैं। तात! हम लोगों में यह प्रतिज्ञा हो चुकी है कि हम एक-दूसरे की संकट में रक्षा करेंगे।

युधिष्ठिर उवाच

**एवमेतन्महाबाहो यथा वदसि माधव।**
**सर्वे ह्येते न पर्याप्तास्तव वेगविधारणे ॥१३॥**

**युधिष्ठिर बोले**—महाबाहो! माधव! आप जैसा कहते हैं, ठीक वैसी ही बात है। ये समस्त कौरव भी आपका वेग धारण करने में समर्थ नहीं हैं।

**न तु त्वामनृतं कर्तुमुत्सहे स्वात्मगौरवात्।**
**अयुध्यमानः साहाय्यं यथोक्तं कुरु माधव ॥१४॥**

माधव! मैं अपनी गुरुता का प्रभाव डालकर आपको असत्यवादी नहीं बना सकता। आप युद्ध किये बिना ही पूर्वोक्त सहायता करते रहिए।

**समयस्तु कृतः कश्चिन्मम भीष्मेण संयुगे।**
**मन्त्रयिष्ये तवार्थाय न तु योत्स्ये कथञ्चन ॥१५॥**

मेरी भीष्मजी के साथ एक शर्त हो चुकी है। उन्होंने कहा था—'मैं युद्ध में तुम्हारे हित का परामर्श दे सकता हूँ, परन्तु तुम्हारी ओर से युद्ध किसी प्रकार भी न करूँगा।'

**तस्माद् देवव्रतं भूयो वधोपायार्थमात्मनः।**
**भवता सहिताः सर्वे प्रयाम मधुसूदन ॥१६॥**

अतः मधुसूदन! हम सब लोग आपके साथ देवव्रत भीष्म के पास उन्हीं से उनके वध का उपाय पूछने चलें।

सञ्जय उवाच

**ततोऽब्रवीन्महाराज वार्ष्णेयः कुरुनन्दनम्।**
**रोचते मे महाप्राज्ञ राजेन्द्र तव भाषितम् ॥१७॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज! तब श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर से कहा—"महामते राजेन्द्र! आपका कथन मुझे ठीक जान पड़ता है।

**गत्वा शान्तनवं वृद्धं मन्त्रं पृच्छाम भारत।**
**स वो दास्यति मन्त्रं यं तेन योत्स्यामहे परान् ॥१८॥**

"हे भारत! हम वहाँ चलकर वृद्ध शान्तनुनन्दन भीष्म से हितकारक मन्त्रणा पूछें। वे आपको ऐसी सलाह देंगे, जिससे हम लोग शत्रुओं के साथ युद्ध कर सकेंगे।

**एवमामन्त्र्य ते वीराः पाण्डवाः पाण्डुपूर्वजम्।**
**जग्मुस्ते सहिताः सर्वे वासुदेवश्च वीर्यवान् ॥१९॥**

वे वीर पाण्डव इस प्रकार परामर्श करके सब एक-साथ मिलकर अपने पिता पाण्डु के भी पितृतुल्य भीष्म पितामह के पास गये। उनके साथ पराक्रमी श्रीकृष्ण भी थे।

**विमुक्तशस्त्रकवचा भीष्मस्य सदनं प्रति।**
**प्रविश्य च तदा भीष्मं शिरोभिः प्रणिपेदिरे ॥२०॥**

उन सबने अस्त्र-शस्त्र और कवच रख दिये थे। वे सब भीष्म के शिबिर की ओर गये तथा उसके भीतर प्रवेश करके उन्होंने मस्तक झुकाकर भीष्म को प्रणाम किया।

**तानुवाच महाबाहुर्भीष्मः कुरुपितामहः।**
**स्वागतं तव वार्ष्णेय स्वागतं ते धनञ्जय ॥२१॥**
**स्वागतं धर्मपुत्राय भीमाय यमयोस्तथा।**
**किं वा कार्यं करोम्यद्य युष्माकं प्रीतिवर्धनम् ॥२२॥**

उस समय कुरुकुल के पितामह महाबाहु भीष्म ने उन सब लोगों से कहा—"वृष्णिनन्दन! आपका स्वागत है। धनञ्जय! तुम्हारा भी स्वागत है। धर्मपुत्र युधिष्ठिर, भीमसेन, नकुल और सहदेव सबका स्वागत है। आज मैं तुम सब लोगों की प्रसन्नता बढ़ानेवाला कौन-सा कार्य करूँ?"

**तथा ब्रुवाणं गाङ्गेयं प्रीतियुक्तं पुनः पुनः।**
**उवाच राजा दीनात्मा प्रीतियुक्तमिदं वचः ॥२३॥**

गङ्गानन्दन भीष्म जब बारम्बार इस प्रकार

प्रसन्नतापूर्वक कह रहे थे, उस समय राजा युधिष्ठिर ने दीन हृदय से प्रीतिपूर्वक यह बात कही—

**वर्षता शरवर्षाणि संयुगे वैशसं कृतम् ।**
**क्षयं नीता हि पृतना संयुगे महती मम ।।२४।।**

"पितामह ! आपने युद्धस्थल में बाणों की वर्षा करके भारी संहार मचा रखा है। रणभूमि में मेरी विशाल सेना आपके द्वारा नष्ट हो चुकी है।

**कथं जयेम सर्वज्ञ कथं राज्यं लभेमहि ।**
**भवान् हि नो वधोपायं ब्रवीतु स्वयमात्मनः ।।२५।।**

"सर्वज्ञ ! युद्ध में हमें विजय कैसे प्राप्त हो ? हम किस प्रकार राज्य प्राप्त करें ? आप स्वयं ही हमें अपने वध का उपाय बताइए।"

भीष्म उवाच

**न कथञ्चन कौन्तेय मयि जीवति संयुगे ।**
**जयो भवति सर्वज्ञ सत्यमेतद् ब्रवीमि ते ।।२६।।**

**भीष्मजी बोले**—कुन्तीकुमार ! मेरे जीते-जी युद्ध में किसी प्रकार तुम्हारी विजय नहीं हो सकती। सर्वज्ञ ! मैं तुमसे यह सच्ची बात कह सकता हूँ।

**निर्जिते मयि युद्धेन रणे जेष्यथ पाण्डवाः ।**
**क्षिप्रं मयि प्रहरध्वं यदीच्छथ रणे जयम् ।।२७।।**

पाण्डवो ! यदि युद्ध के द्वारा मैं किसी प्रकार जीत लिया जाऊँ, तभी युद्ध में तुम विजयी हो सकोगे, अतः युद्ध में विजय पाने के लिए मुझपर शीघ्र ही घातक प्रहार करो।

**य एष द्रौपदो राजँस्तव सैन्ये महारथः ।**
**शिखण्डी समरामर्षी शूरश्च समितिञ्जयः ।।२८।।**

राजन् ! तुम्हारी सेना में जो यह द्रुपदपुत्र महारथी शिखण्डी है, वह समरभूमि में अमर्षशील, शौर्यसम्पन्न और युद्धविजयी है।

**अर्जुनः समरे शूरः पुरस्कृत्य शिखण्डिनम् ।**
**मामेव विशिखैस्तीक्ष्णैरभिद्रवतु दंशितः ।।२९।।**

शूरवीर अर्जुन रणभूमि में कवच धारण करके और शिखण्डी को आगे रखकर मुझपर तीखे बाणों द्वारा आक्रमण करे।

**अमङ्गल्यध्वजे तस्मिन् स्त्रीपूर्वे च विशेषतः ।**
**न प्रहर्तुमभीप्सामि गृहीतेषुः कथञ्चन ।।३०।।**

शिखण्डी के रथ की ध्वजा अमाङ्गलिक चिह्न से युक्त है, विशेषतः वह पहले स्त्री रहा है, अतः मैं हाथ में बाण लिये रहने पर भी किसी प्रकार उसपर प्रहार नहीं करना चाहता।

**तदन्तरं समासाद्य पाण्डवो मां धनञ्जयः ।**
**शरैर्घातयतु क्षिप्रं समन्ताद् भरतर्षभ ।।३१।।**

भरतश्रेष्ठ ! इसी अवसर का लाभ उठाकर पाण्डुपुत्र अर्जुन मुझे चारों ओर से शीघ्रतापूर्वक बाणों द्वारा मार डालने का प्रयत्न करे।

सञ्जय उवाच

**ते तु ज्ञात्वा ततः पार्था जग्मुः स्वशिबिरं प्रति ।**
**अभिवाद्य महात्मानं भीष्मं कुरुपितामहम् ।।३२।।**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! यह सब जानकर कुन्ती के सभी पुत्र कुरुकुल के वृद्ध पितामह महात्मा भीष्म को प्रणाम करके अपने शिबिर की ओर चले गये।

**तथोक्तवति गाङ्गेये परलोकाय दीक्षिते ।**
**अर्जुनो दुःखसंतप्तः सव्रीडमिदमब्रवीत् ।।३३।।**

गङ्गानन्दन भीष्म परलोक की दीक्षा ले चुके थे। उन्होंने जब पूर्वोक्त बात बताई, तब अर्जुन दुःख से सन्तप्त एवं लज्जित होकर श्रीकृष्ण से इस प्रकार बोले—

अर्जुन उवाच

**गुरुणा कुरुवृद्धेन कृतप्रज्ञेन धीमता ।**
**पितामहेन संग्रामे कथं योद्धास्मि माधव ।।३४।।**

**अर्जुन बोले**—माधव ! कुरुकुल के वृद्ध गुरुजन विशुद्ध-बुद्धि, मतिमान् पितामह भीष्म से मैं रणभूमि में कैसे युद्ध करूँगा ?

**क्रीडता हि मया बाल्ये वासुदेव महामनाः ।**
**पांसुरूषितगात्रेण महात्मा परुषीकृतः ।।३५।।**

वासुदेव ! बचपन में खेलते समय मैंने अपने धूलि-धूसर शरीर से उन महामनस्वी महात्मा को सदा दूषित किया है।

**यस्याहमधिरुह्याङ्कं बालः किल गदाग्रज ।**
**तातेत्यवोचं पितरं पितुः पाण्डोर्महात्मनः ।।३६।।**
**नाहं तातस्तव पितुस्तातोऽस्मि तव भारत ।**
**इति मामब्रवीद् बाल्ये यः स वध्यः कथं मया ।।३७।।**

गदाग्रज ! कहते हैं, मैं बचपन में अपने पिता महात्मा पाण्डु के भी पितृतुल्य भीष्मजी की गोद में

चढ़कर जब उन्हें 'तात' कहकर पुकारता था, उस समय उस बाल्यावस्था में ही वे मुझसे कहते थे— "भरतनन्दन ! मैं तुम्हारा तात नहीं, तुम्हारे पिता का तात हूँ।" वे ही वृद्ध पितामह मेरे द्वारा मारने योग्य कैसे हो सकते हैं ?

**कामं वध्यतु सैन्यं मे नाहं योत्स्ये महात्मना ।**
**जयो वास्तु वधो वा मे कथं वा कृष्ण मन्यसे ।।३८।।**

भले ही वे मेरी सेना का नाश कर डालें, मेरी विजय हो अथवा मृत्यु, परन्तु मैं उन महात्मा भीष्म के साथ युद्ध नहीं करूँगा; अथवा कृष्ण ! आप क्या ठीक समझते हैं ?

वासुदेव उवाच

**प्रतिज्ञाय वधं जिष्णो पुरा भीष्मस्य संयुगे ।**
**क्षत्रधर्मे स्थितः पार्थ कथं नैनं हनिष्यसि ।।३९।।**

**श्रीकृष्ण बोले**—विजयी कुन्तीकुमार ! तुम क्षत्रियधर्म में स्थित हो । युद्ध में तुम पहले भीष्म के वध की प्रतिज्ञा करके अब उन्हें कैसे नहीं मारोगे ?

**पातयैनं रथात् पार्थ क्षत्रियं युद्धदुर्मदम् ।**
**नाहत्वा युधि गाङ्गेयं विजयस्ते भविष्यति ।।४०।।**

हे पार्थ ! तुम युद्धदुर्मद क्षत्रियप्रवर भीष्म को रथ से मार गिराओ । युद्धभूमि में गङ्गानन्दन भीष्म को मारे बिना तुम्हारी विजय नहीं हो सकेगी ।

**जहि भीष्मं स्थिरो भूत्वा शृणु चेदं वचो मम ।**
**यथोवाच पुरा शक्रं महाबुद्धिर्बृहस्पतिः ।।४१।।**

अर्जुन ! तुम स्थिरचित्त होकर भीष्म को मारो और मेरी यह बात सुनो, जिसे पूर्वकाल में महाबुद्धिमान् बृहस्पति ने देवराज इन्द्र को बताया था ।

**ज्यायाँसमपि चेद् वृद्धं गुणैरपि समन्वितम् ।□**
**आततायिनमायान्तं हन्याद् घातकमात्मनः ।।४२।।**

कोई बड़े-से-बड़े गुरुजन, वृद्ध और सर्वगुण-सम्पन्न पुरुष ही क्यों न हों, यदि शस्त्र उठाकर अपना वध करने के लिए आ रहे हों तो उस आततायी को अवश्य मार डालना चाहिए ।

**शाश्वतोऽयं स्थितो धर्मः क्षत्रियाणां धनञ्जय ।□**
**योद्धव्यं रक्षितव्यं च यष्टव्यं चानसूयुभिः ।।४३।।**

धनञ्जय ! यह क्षत्रियों का निश्चित सनातन धर्म है—उन्हें किसी के प्रति दोषदृष्टि न रखकर सदा युद्ध, प्रजाओं की रक्षा और यज्ञ करते रहना चाहिए ।

अर्जुन उवाच

**शिखण्डी निधनं कृष्ण भीष्मस्य भविता ध्रुवम् ।**
**दृष्ट्वैव हि सदा भीष्मः पाञ्चाल्यं विनिवर्तते ।।४४।।**

**अर्जुन ने कहा**—श्रीकृष्ण ! शिखण्डी निश्चय ही भीष्म की मृत्यु का कारण होगा, क्योंकि भीष्म उस पाञ्चाल-राजकुमार को देखते ही सदा युद्ध से निवृत्त हो जाते हैं ।

**ते वयं प्रमुखे तस्य पुरस्कृत्य शिखण्डिनम् ।**
**गाङ्गेयं पातयिष्याम उपायेनेति मे मतिः ।।४५।।**

अतः हम सब लोग उनके सामने शिखण्डी को खड़ा करके शस्त्रप्रहाररूप उपाय द्वारा गङ्गानन्दन भीष्म को मार गिराएँगे, यही मेरा विचार है ।

सञ्जय उवाच

**इत्येवं निश्चयं कृत्वा पाण्डवाः सहमाधवाः ।**
**शयनानि यथास्वानि भेजिरे पुरुषर्षभाः ।।४६।।**

**सञ्जय कहते हैं**—ऐसा निश्चय करके श्रीकृष्ण-सहित पुरुषशिरोमणि पाण्डवों ने भी अपनी-अपनी शय्याओं का आश्रय लिया ।

**इति महाभारते भीष्मपर्वणि षड्विंशोऽध्यायः ।।२६।।**

## सप्तविंशोऽध्यायः

**दसवें दिन का युद्ध—भीष्म और शिखण्डी का सामना, अर्जुन का भीष्म को रथ से गिराना, भीष्म का उत्तरायण की प्रतीक्षा करते हुए प्राण न त्यागना**

धृतराष्ट्र उवाच

**कथं शिखण्डी गाङ्गेयमभ्यवर्तत संयुगे ।**
**पाण्डवांश्च कथं भीष्मस्तन्ममाचक्ष्व सञ्जय ।।१।।**

**धृतराष्ट्र ने पूछा**—सञ्जय ! शिखण्डी ने युद्ध में गङ्गानन्दन भीष्म पर किस प्रकार आक्रमण किया तथा भीष्म ने भी पाण्डवों पर कैसे धावा बोला ? यह सब मुझे बताओ ।

सञ्जय उवाच

**ताड्यमानासु भेरीषु सूर्यस्योदयनं प्रति।**
**शिखण्डिनं पुरस्कृत्य निर्याताः पाण्डवा युधि ॥२॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! सूर्योदय होने पर जब रणभेरियाँ बज उठीं, उस समय समस्त पाण्डव शिखण्डी को आगे करके युद्ध के लिए शिविर से बाहर निकले।

**तथैव कुरवो राजन् भीष्मं कृत्वा महारथम्।**
**अग्रतः सर्वसैन्यानां प्रययुः पाण्डवान् प्रति ॥३॥**

राजन् ! इसी प्रकार कौरवों ने भी महारथी भीष्म को सब सेनाओं के आगे रखकर पाण्डवों पर आक्रमण किया।

**ततः प्रववृते युद्धं तव तेषां च भारत।**
**अन्योऽन्यं निघ्नतां राजन् यमराष्ट्रविवर्धनम् ॥४॥**

हे भारत ! फिर तो आपकी और पाण्डवों की सेनाओं में युद्ध आरम्भ हो गया। राजन् ! परस्पर घातक प्रहार करनेवाले उन वीरों का युद्ध यमराज के राज्य की वृद्धि करनेवाला था।

**अर्जुनप्रमुखाः पार्थाः पुरस्कृत्य शिखण्डिनम्।**
**भीष्मं युद्धेऽभ्यवर्तन्त किरन्तो विविधाञ्छरान् ॥५॥**

अर्जुन आदि कुन्तीकुमारों ने शिखण्डी को आगे करके युद्ध में अनेक प्रकार के बाणों की वर्षा करते हुए भीष्म पर आक्रमण किया।

**तं शिखण्डी त्रिभिर्बाणैरभ्यविध्यन्महोरसि।**
**आशीविषमिव क्रुद्धं कालसृष्टमिवान्तकम् ॥६॥**

कालप्रेरित मृत्यु तथा क्रोध में भरे हुए विषधर सर्प के समान प्रतीत होनेवाले भीष्म के विशाल वक्ष पर शिखण्डी ने तीन बाणों से प्रहार किया।

**स तेनातिभृशं विद्धः प्रेक्ष्य भीष्मः शिखण्डिनम्।**
**अनिच्छन्निव संक्रुद्धः प्रहसन्निदमब्रवीत् ॥७॥**

शिखण्डी के द्वारा अत्यन्त घायल हो भीष्म उसकी ओर देखकर अत्यन्त कुपित हो बिना इच्छा के ही हँसते हुए इस प्रकार बोले—

**काममभ्यस वा मा वा न त्वां योत्स्ये कथञ्चन।**
**यैव हि त्वं कृता धात्रा सैव हि त्वं शिखण्डिनी ॥८॥**

"अरे ! तू इच्छानुसार प्रहार कर या न कर, मैं तेरे साथ किसी प्रकार युद्ध नहीं करूँगा। विधाता ने तुझे जिस रूप में उत्पन्न किया था, तू वही शिखण्डिनी है।"

**तस्य तद् वचनं श्रुत्वा शिखण्डी क्रोधमूर्च्छितः।**
**उवाचैनं तथा भीष्मं सृक्किणी परिसंलिहन् ॥९॥**

उनकी यह बात सुनकर शिखण्डी क्रोध-मूर्च्छित-सा हो गया तथा अपने मुँह के दोनों कोनों को चाटता हुआ भीष्म से इस प्रकार बोला—

**जानामि त्वां महाबाहो क्षत्रियाणां क्षयंकर।**
**मया श्रुतं च ते युद्धं जामदग्न्येन वै सह ॥१०॥**

"क्षत्रियों का विनाश करनेवाले महाबाहु भीष्म ! मैं भी आपको जानता हूँ। मैंने सुना है कि आपने जमदग्निनन्दन परशुरामजी के साथ भी युद्ध किया था।

**दिव्यश्च ते प्रभावोऽयं मया च बहुशः श्रुतः।**
**जानन्नपि प्रभावं ते योत्स्येऽद्याहं त्वया सह ॥११॥**

"आपका यह दिव्य प्रभाव बहुत बार मेरे सुनने में आया है। आपके उस प्रभाव को जानकर भी मैं आज आपके साथ युद्ध करूँगा।

**पाण्डवानां प्रियं कुर्वन्नात्मनश्च नरोत्तम।**
**अद्य त्वां योधयिष्यामि रणे पुरुषसत्तम ॥१२॥**

"नरश्रेष्ठ ! पुरुषप्रवर ! आज मैं पाण्डवों का तथा अपना भी प्रिय कार्य करने के लिए युद्धभूमि में अच्छी प्रकार डटकर आपका सामना करूँगा।

**ध्रुवं च त्वां हनिष्यामि शपे सत्येन तेऽग्रतः।**
**एतत् श्रुत्वा च मद्वाक्यं यत्कृत्यं तत् समाचर ॥१३॥**

"मैं आपके समक्ष सत्य की शपथ खाकर कहता हूँ कि आज मैं आपको निश्चय ही मार डालूँगा। मेरी यह बात सुनकर आपको जो कुछ करना हो वह कीजिए।

**काममभ्यस वा मा वा न मे जीवन् प्रमोक्ष्यसे।**
**सुदृष्टः क्रियतां भीष्म लोकोऽयं समितिञ्जय ॥१४॥**

"युद्धविजेता भीष्म ! आप मुझपर इच्छानुसार प्रहार करो या न करो, परन्तु आज आप मेरे हाथ से जीवित नहीं छूटोगे, अतः इस संसार को अच्छी प्रकार देख लो।"

**एवमुक्त्वा ततो भीष्मं पञ्चभिर्नतपर्वभिः।**
**अविध्यत रणे राजन् प्रणुन्नं वाक्सायकैः ॥१५॥**

राजन्! ऐसा कहकर शिखण्डी ने, जिन्हें पहले वचनरूपी बाणों से पीड़ित किया था, उन्हीं भीष्म को झुकी हुई गाँठवाले पाँच बाणों से बींध डाला।

**तस्य तद् वचनं श्रुत्वा सव्यसाची महारथः।**
**कालोऽयमिति संचिन्त्य शिखण्डिनमनोदयत् ॥१६॥**

उसके उस कथन को सुनकर महारथी सव्यसाची अर्जुन ने यह सोचकर कि यही इसके उत्साह बढ़ाने का अवसर है, शिखण्डी से इस प्रकार कहा—

**अहं त्वामनुयास्यामि परान् विद्रावयञ्शरैः।**
**अभिद्रव सुसंरब्धो भीष्मं भीमपराक्रमम् ॥१७॥**

"वीर! मैं बाणों द्वारा शत्रुओं को भगाता हुआ निरन्तर तुम्हारा साथ दूँगा, अतः तुम भयंकर पराक्रमी भीष्म पर रोषपूर्वक आक्रमण करो।

**न हि ते संयुगे पीडां शक्तः कर्तुं महाबलः।**
**तस्मादद्य महाबाहो यत्नाद् भीष्ममभिद्रव ॥१८॥**

"महाबाहो! युद्ध में महाबली भीष्म तुम्हें पीड़ा नहीं दे सकते, अतः आज यत्नपूर्वक इनपर आक्रमण करो।

**अहत्वा समरे भीष्मं यदि यास्यसि मारिष।**
**अवहास्योऽस्य लोकस्य भविष्यसि मया सह ॥१९॥**

"आर्य! यदि आज तुम रणभूमि में भीष्म को मारे बिना लौट जाओगे तो मेरे साथ ही तुम इस संसार में उपहास के पात्र बनोगे।

**नावहास्या यथा वीर भवेम परमाहवे।**
**तथा कुरु रणे यत्नं साधयस्व पितामहम् ॥२०॥**

"वीर! इस महायुद्ध में जैसे भी हम लोग हँसी के पात्र न बनें, वैसा प्रयत्न करो। आज रणक्षेत्र में पितामह भीष्म को अवश्य मार गिराओ।

**अहं ते रक्षणं युद्धे करिष्यामि महाबलः।**
**वारयन् रथिनः सर्वान् साधयस्व पितामहम् ॥२१॥**

"महाबली वीर! इस युद्ध में मैं सब रथियों को रोककर निरन्तर तुम्हारी रक्षा करता रहूँगा। तुम पितामह को मारने का कार्य सिद्ध करो।"

**एवमुक्तस्तु पार्थेन शिखण्डी भरतर्षभ।**
**अभ्यद्रवत गाङ्गेयं श्रुत्वा पार्थस्य भाषितम् ॥२२॥**

भरतश्रेष्ठ! जब अर्जुन ने शिखण्डी से ऐसा कहा, तब उसने पार्थ के उस कथन को सुनकर गङ्गानन्दन भीष्म पर धावा किया।

**शिखण्डी तु समासाद्य भरतानां पितामहम्।**
**इषुभिस्तूर्णमव्यग्रो बहुभिः स समाचिनोत् ॥२३॥**

फिर शिखण्डी ने भरतकुल के पितामह भीष्म के सामने पहुँचकर स्वस्थ चित्त से अनेकों बाणों द्वारा तुरन्त ही उन्हें आच्छादित कर दिया।

**शिखण्डी तु महाबाणान् यान् मुमोच महारथः।**
**न चक्रुस्ते रुजं तस्य स्वर्णपुङ्खाः शिलासिताः ॥२४॥**

महारथी शिखण्डी द्वारा प्रयुक्त सभी बाण स्वर्णमय पंखों से युक्त और सान पर रगड़कर तेज किये गये थे तो भी वे भीष्मजी के शरीर में घाव या पीड़ा उत्पन्न नहीं कर सके।

**ततः किरीटी संरब्धो भीष्ममेवाभ्यधावत।**
**शिखण्डिनं पुरस्कृत्य धनुश्चास्य समाच्छिनत् ॥२५॥**

तब किरीटधारी अर्जुन ने कुपित हो शिखण्डी को आगे किये हुए ही भीष्म पर धावा किया और उनके धनुष को काट डाला।

**शिखण्डी तु रणे श्रेष्ठो रक्ष्यमाणः किरीटिना।**
**अविध्यद् दशभिर्भीष्मं छिन्नधन्वानमाहवे ॥२६॥**
**सारथिं दशभिश्चास्य ध्वजं चैकेन चिच्छिदे।**
**सोऽन्यत् कार्मुकमादाय गाङ्गेयो वेगवत्तरम् ॥२७॥**
**जघान निशितैर्बाणैरर्जुनं परवीरहा।**
**तदप्यस्य शितैर्बाणैस्त्रिभिश्चिच्छेद फाल्गुनः ॥२८॥**

भीष्मजी का धनुष कट गया था। उसी अवस्था में अर्जुन द्वारा सुरक्षित शिखण्डी ने दस बाणों से उन्हें तथा दस बाणों से सारथि को बींध डाला। फिर एक बाण से उनके ध्वज को काट गिराया। तब शत्रुवीरों का संहार करनेवाले गङ्गानन्दन भीष्म ने दूसरा अत्यन्त वेगशाली धनुष लेकर तीखे बाणों द्वारा अर्जुन को घायल करना आरम्भ किया। यह देख अर्जुन ने उस धनुष को भी तीन पैने बाणों द्वारा काट डाला।

**एवं स पाण्डवः क्रुद्ध आत्तमात्तं पुनः पुनः।**
**धनुश्चिच्छेद भीष्मस्य सव्यसाची परन्तपः ॥२९॥**

इस प्रकार क्रोध में भरे हुए शत्रुसन्तापी, सव्यसाची पाण्डुनन्दन अर्जुन जिस-जिस धनुष को भीष्मजी लेते, उसी-उसी को काट डालते थे।

**स छिन्नधन्वा संक्रुद्धः सृक्किणी परिसंलिहन् ।**
**जग्राह तरसा शक्तिं गिरीणामपि दारणीम् ॥३०॥**

धनुष कट जाने पर क्रोधपूर्वक अपने मुँह के दोनों कोनों को चाटते हुए भीष्म ने बलपूर्वक एक शक्ति हाथ में ली, जो पर्वतों को भी चूर्ण कर डालनेवाली थी।

**तां च चिक्षेप संक्रुद्धः फाल्गुनस्य रथं प्रति ।**
**तामापतन्तीं सम्प्रेक्ष्य ज्वलन्तीमशनीमिव ॥३१॥**
**समादत्त शितान् भल्लान् पञ्च पाण्डवनन्दनः ।**
**तस्य चिच्छेद तां शक्तिं पञ्चधा पञ्चभिः शरैः ॥३२॥**

फिर उन्होंने क्रोधपूर्वक उस शक्ति को अर्जुन के रथ की ओर चला दिया। प्रज्वलित वज्र के समान उस शक्ति को आते देख पाण्डवों को आनन्दित करनेवाले अर्जुन ने अपने हाथ में भल्लनामक पाँच तीखे बाण लिये और उन पाँच बाणों के द्वारा उस शक्ति के पाँच टुकड़े कर दिये।

**शिखण्डी तु महाराज भरतानां पितामहम् ।**
**आजघानोरसि क्रुद्धो नवभिर्निशितैः शरैः ॥३३॥**

महाराज! उस समय शिखण्डी ने क्रुद्ध होकर भरतवंशियों के पितामह भीष्म की छाती में नौ तीखे बाण मारे।

**ततः प्रहस्य बीभत्सुर्गाण्डिवं व्याक्षिपन् धनुः ।**
**गाङ्गेयं पञ्चविंशत्या क्षुद्रकाणां समार्पयत् ॥३४॥**

उधर अर्जुन ने भी हँसकर गाण्डीव धनुष की टंकार करते हुए गङ्गानन्दन भीष्म को क्षुद्रक नामक पच्चीस बाण मारे।

**पुनः शरशतैरेनं त्वरमाणो धनञ्जयः ।**
**सर्वगात्रेषु संक्रुद्धः सर्वमर्मस्वताडयत् ॥३५॥**

फिर उन्होंने अत्यन्त कुपित हो शीघ्रतापूर्वक सौ बाणों द्वारा भीष्म के सम्पूर्ण अङ्गों और सभी मर्मस्थानों में आघात किया।

**सोऽतिविद्धो महेष्वासो दुःशासनमभाषत ।**
**अर्जुनस्य इमे बाणा नेमे बाणाः शिखण्डिनः ॥३६॥**
**सर्वे ह्यपि न मे दुःखं कुर्युरन्ये नराधिपाः ।**
**वीरं गाण्डीवधन्वानमृते जिष्णुं कपिध्वजम् ॥३७॥**

इस प्रकार अत्यन्त घायल होने पर महाधनुर्धर भीष्म ने दुःशासन से कहा—"ये अर्जुन के बाण हैं, ये शिखण्डी के बाण नहीं हैं। गाण्डीवधारी वीर कपिध्वज अर्जुन को छोड़कर अन्य सभी नरेश अपने प्रहारों द्वारा मुझे इतनी पीड़ा नहीं दे सकते।"

**दशमेऽहनि राजेन्द्र भीष्मार्जुनसमागमे ।**
**आसीद् गाङ्ग इवावर्तो मुहूर्तमुदधेरिव ॥३८॥**

हे राजेन्द्र! दसवें दिन भीष्म और अर्जुन के उस संघर्ष में दो घड़ी तक ऐसा दृश्य दिखाई दिया, मानो समुद्र में गङ्गा के गिरते समय उसके जल में भारी भँवर उठ रहा हो।

**योधानामयुतं हत्वा तस्मिन् स दशमेऽहनि ।**
**अतिष्ठदाहवे भीष्मो भिद्यमानेषु मर्मसु ॥३९॥**

दसवें दिन के उस युद्ध में अपने मर्मस्थानों के विदीर्ण होते रहने पर भी भीष्मजी दस सहस्र योद्धाओं को मारकर वहाँ खड़े हुए थे।

**निहत्य समरे राजञ्शतशोऽथ सहस्रशः ।**
**न तस्यासीदनिर्भिन्नं गात्रे द्व्यङ्गुलमन्तरम् ॥४०॥**

राजन्! युद्ध में सैकड़ों और सहस्रों वीरों का संहार करके भीष्म स्वयं इस अवस्था में पहुँच गये थे कि उनके शरीर में दो अङ्गुल भी ऐसा स्थान नहीं रह गया था, जो बाणों से विद्ध न हुआ हो।

**एवंभूतस्तव पिता शरैर्विशकलीकृतः ।**
**शिताग्रैः फाल्गुनेनाजौ प्राक्शिराः प्रापतद् रथात् ॥४१**
**दिनकरे किञ्चिच्छेषे पुत्राणां तव पश्यताम् ।**
**धरणीं न स पस्पर्श शरसंघैः समावृतः ॥४२**

इस प्रकार आपके ताऊ भीष्म युद्धस्थल में अर्जुन के तीखे बाणों से अत्यन्त विद्ध हो गये थे—उनका शरीर छिदकर छलनी हो रहा था। वे उसी दशा में, जबकि दिन थोड़ा ही शेष था, आपके पुत्रों के देखते-देखते पूर्व दिशा की ओर शिर किये रथ से नीचे गिर पड़े। उनके सारे अङ्गों में सब ओर बाण बिंधे हुए थे, अतः गिरने पर भी उनका धरती से स्पर्श नहीं हुआ।

**सम्पतन्तमभिप्रेक्ष्य महात्मानं पितामहम् ।**
**सह भीष्मेण सर्वेषां प्रापतन् हृदयानि नः ॥४३॥**

महाराज! महात्मा पितामह भीष्म को रथ से नीचे गिरते देखकर हम सब लोगों के हृदय भी उनके साथ ही गिर पड़े [बैठ गये]।

**धारयामास च प्राणान् पतितोऽपि महीतले ।**
**उत्तरायणमन्विच्छन् भीष्मः कुरुपितामहः ॥४४॥**

उधर कुरुकुल के वृद्ध पितामह भीष्म पृथिवी पर [वस्तुतः शरशय्या पर] गिरकर भी उत्तरायण की प्रतीक्षा करते हुए अपने प्राणों को रोके हुए थे ।

**कुरूणां पतिते ह्येवं शृङ्गे भीष्मे महौजसि ।**
**पाण्डवाः सृञ्जयाश्चैव सिंहनादं प्रचक्रिरे ॥४५॥**

इस प्रकार कुरुकुल-शिरोमणि महापराक्रमी भीष्म के गिर जाने पर पाण्डव और सृञ्जय हर्ष से सिंहनाद करने लगे ।

**तस्मिन् हते महासत्त्वे भरतानां पितामहे ।**
**न किञ्चित् प्रत्यपद्यन्त पुत्रास्ते भरतर्षभ ॥४६॥**

भरतश्रेष्ठ ! उस महान् शक्तिशाली और भरतवंशियों के पितामह भीष्म के मारे जाने पर आपके पुत्रों को कुछ भी सूझ नहीं पड़ता था ।

**सम्मोहश्चैव तुमुलः कुरूणामभवत् तदा ।**
**कृपदुर्योधनमुखा निःश्वस्य रुरुदुस्ततः ॥४७॥**

उस समय कौरवों पर अत्यन्त भयंकर मोह छा गया । कृपाचार्य और दुर्योधन आदि सब लोग सिसक-सिसककर रोने लगे ।

**सेनयोरुभयोश्चापि गाङ्गेये निहते विभौ ।**
**वीराः सन्यस्य शस्त्राणि प्राध्यायन्त समन्ततः ॥४८॥**

शक्तिशाली गङ्गानन्दन भीष्म के मारे जाने पर सब ओर दोनों सेनाओं के सब वीर अपने अस्त्र-शस्त्र नीचे डालकर भारी चिन्ता में डूब गये ।

**प्राक्रोशन् प्राद्रवंश्चान्ये जग्मुर्मोहं तथापरे ।**
**क्षत्रं चान्येऽभ्यनिन्दन्त भीष्मं चान्येऽभ्यपूजयन् ॥४९॥**

कुछ फूट-फूटकर रोने लगे, कुछ इधर-उधर भागने लगे और कुछ लोग मूर्च्छित हो गये । कुछ लोग क्षात्रधर्म की निन्दा कर रहे थे और कुछ भीष्मजी की प्रशंसा कर रहे थे ।

**महोपनिषदं चैव योगमास्थाय वीर्यवान् ।**
**जपञ्शान्तनवो धीमान्कालकांक्षी स्थितोऽभवत् ॥५०॥**

उधर पराक्रमी एवं बुद्धिमान् भीष्म महान् उपनिषदों के सारभूत योग का आश्रय ले प्रणव का जप करते हुए उत्तरायणकाल की प्रतीक्षा में बाण-शय्या पर स्थित थे ।

**इति महाभारते भीष्मपर्वणि सप्तविंशोऽध्यायः ॥२७॥**

## अष्टाविंशोऽध्यायः

### अर्जुन द्वारा भीष्म को तकिया प्रदान करना और उभय-पक्ष की सेनाओं का अपने शिबिरों में जाना

सञ्जय उवाच

**भीष्मं शान्तनवं दृष्ट्वा विशीर्णकवचध्वजम् ।**
**अभिवाद्यावतिष्ठन्त पाण्डवाः कुरुभिः सह ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! जिनके कवच और ध्वज छिन्न-भिन्न हो गये थे, उन शान्तनुनन्दन भीष्म को उस अवस्था में देखकर कौरव और पाण्डव उन्हें प्रणाम करके खड़े हो गये ।

**अथ पाण्डून् कुरूंश्चैव प्रणिपत्याग्रतः स्थितान् ।**
**अभ्यभाषत धर्मात्मा भीष्मः शान्तनवस्तदा ॥२॥**

पाण्डव तथा कौरव जब प्रणाम करके उनके सामने खड़े हुए, तब शान्तनुनन्दन धर्मात्मा भीष्मजी ने उनसे इस प्रकार कहा—

**स्वागतं वो महाभागाः स्वागतं वो महारथाः ।**
**तुष्यामि दर्शनाच्चाहं युष्माकममरोपमाः ॥३॥**

"महाभाग नरेशगण ! आप लोगों का स्वागत है । देवोपम महारथियो ! आपका स्वागत है । मैं आप लोगों के दर्शनों से बहुत सन्तुष्ट हूँ ।"

**अभिमन्त्र्याथ तानेवं शिरसा लम्बताब्रवीत् ।**
**शिरो मे लम्बतेऽत्यर्थमुपधानं प्रदीयताम् ॥४॥**

इस प्रकार उन सब लोगों से स्वागत-भाषण करके वे अपने लटके हुए शिर द्वारा ही उनसे बोले —"भूपालो ! मेरा सिर बहुत लटक रहा है, अतः आप लोग मुझे तकिया दें ।"

**ततो नृपाः समाजह्रुस्तनूनि च मृदूनि च ।**
**उपधानानि मुख्यानि नैच्छत् तानि पितामहः ॥५॥**

तब राजा लोग तत्काल बढ़िया, कोमल और

महीन वस्त्र के बने हुए बहुत-से तकिये ले आये, परन्तु पितामह भीष्म ने उन्हें लेने की इच्छा नहीं की।

**अथाब्रवीन्नरव्याघ्रः प्रहसन्निव तान् नृपान्।**
**नैतानि वीरशय्यासु युक्तरूपाणि पार्थिवाः ॥६॥**

पुरुषसिंह भीष्म ने हँसते हुए-से उन राजाओं से कहा—"राजाओ! ये तकिये वीरशय्या के अनुरूप नहीं हैं।"

**ततो वीक्ष्य नरश्रेष्ठमभ्यभाषत पाण्डवम्।**
**धनञ्जयं दीर्घबाहुं सर्वलोकमहारथम् ॥७॥**

फिर वे सम्पूर्ण लोकों में विख्यात महारथी नरश्रेष्ठ महाबाहु पाण्डुपुत्र धनञ्जय की ओर देखकर इस प्रकार बोले—

**धनञ्जय महाबाहो शिरो मे तात लम्बते।**
**दीयतामुपधानं वै यद् युक्तमिह मन्यसे ॥८॥**

"महाबाहु धनञ्जय! मेरा सिर लटक रहा है। वत्स! इस लटकते हुए सिर के अनुरूप यहाँ जो तकिया तुम्हें उचित प्रतीत हो, वह ला दो।"

**फाल्गुनोऽपि तथेत्युक्त्वा गाण्डीवमभिमन्त्र्य च।**
**त्रिभिस्तीक्ष्णैर्महावेगैरन्वगृह्णाच्छिरः शरैः ॥९॥**

अर्जुन ने भी 'जो आज्ञा' कहकर और गाण्डीव धनुष को अभिमन्त्रित करके अत्यन्त वेगशाली तीन तीखे बाणों द्वारा उनके मस्तक को अनुगृहीत किया [कुछ ऊँचा करके स्थिर कर दिया]।

**अभिप्राये तु विदिते धर्मात्मा सव्यसाचिना।**
**अतुष्यद् भरतश्रेष्ठो भीष्मो धर्मार्थतत्त्ववित् ॥१०॥**

सव्यसाची अर्जुन ने उनके अभिप्राय को समझकर जब ठीक तकिया लगा दिया, तब धर्म और अर्थ के तत्त्वज्ञ धर्मात्मा भरतश्रेष्ठ भीष्मजी अति सन्तुष्ट हुए।

**उपधानेन दत्तेन प्रत्यनन्दद् धनञ्जयम्।**
**प्राह सर्वान् समुद्वीक्ष्य भरतान् भारतं प्रति ॥११॥**

उन्होंने वह तकिया देने से अर्जुन की प्रशंसा करके उन्हें प्रसन्न किया और समस्त भरतवंशियों की ओर देखकर भरतकुलभूषण अर्जुन से इस प्रकार कहा—

**शयनस्यानुरूपं मे पाण्डवोपहितं त्वया।**
**यद्यन्यथा प्रपद्येथाः शपेयं त्वामहं रुषा ॥१२॥**

"पाण्डुनन्दन! तुमने मुझे मेरी शय्या के अनुरूप तकिया प्रदान किया है। यदि इसके विपरीत तुमने कोई और तकिया दिया होता तो मैं कुपित होकर तुम्हें शाप दे देता।

**एवमेव महाबाहो धर्मेषु परितिष्ठता।**
**स्वप्तव्यं क्षत्रियेणाजौ शरतल्पगतेन वै ॥१३॥**

"महाबाहो! अपने धर्म में स्थित रहनेवाले क्षत्रिय को युद्धस्थल में इसी प्रकार शरशय्या पर शयन करना चाहिए।"

**एवमुक्त्वा तु बीभत्सुं सर्वांस्तानब्रवीद् वचः।**
**राज्ञश्च राजपुत्रांश्च पाण्डवानभिसंस्थितान् ॥१४॥**

अर्जुन से ऐसा कहकर भीष्मजी ने पाण्डवों के पास खड़े हुए उन समस्त राजाओं और राजपुत्रों से कहा—

**पश्यध्वमुपधानं मे पाण्डवेनाभिसंधितम्।**
**शिश्येऽहमस्यां शय्यायां यावदावर्तनं रवेः ॥१५॥**

"पाण्डुनन्दन अर्जुन ने मेरे सिर के नीचे जो तकिया लगाया है, आप लोग इसे देखें। मैं सूर्य के उत्तरायण में लौटने तक इस शरशय्या पर शयन करूँगा।

**परिखा खन्यतामत्र ममावसदने नृपाः।**
**उपारमध्वं संग्रामाद् वैरमुत्सृज्य पार्थिवाः ॥१६॥**

"नरेश्वरो! मेरे इस स्थान के चारों ओर खाई खोद दो। भूपालगणो! अब आप लोग आपस का वैर छोड़कर युद्ध से विरत हो जाओ।"

**उपातिष्ठन्नथो वैद्याः शल्योद्धरणकोविदाः।**
**सर्वोपकरणैर्युक्ताः कुशलैः साधु शिक्षिताः ॥१७॥**

उधर शरीर से बाणों को निकाल फेंकने की कला में कुशल वैद्य भीष्मजी की सेवा में उपस्थित हुए। वे समस्त आवश्यक उपकरणों से युक्त तथा कुशल पुरुषों द्वारा भली-भाँति शिक्षा पाये हुए थे।

**तान् दृष्ट्वा जाह्नवीपुत्रः प्रोवाच तनयं तव।**
**धनं दत्त्वा विसृज्यन्तां पूजयित्वा चिकित्सकाः ॥१८॥**
**एवंगते मयेदानीं वैद्यैः कार्यमिहास्ति किम्।**
**क्षत्रधर्मे प्रशस्तां हि प्राप्तोऽस्मि परमां गतिम् ॥१९॥**

**नैष धर्मो महीपालाः शरतल्पगतस्य मे ।**
**एभिरेव शरैश्चाहं दग्धव्योऽस्मि नराधिपाः ॥२०॥**

उन वैद्यों को देखकर गङ्गानन्दन भीष्म ने आपके पुत्र दुर्योधन से कहा—"वत्स ! इन चिकित्सकों को धन देकर सम्मानपूर्वक विदा कर दो। मुझे यहाँ इस अवस्था में अब इन वैद्यों से क्या प्रयोजन है? क्षत्रिय-धर्म में जिसकी प्रशंसा की गई है, मैं उसी उत्तम गति को प्राप्त हुआ हूँ। भूपालो ! मैं बाणशय्या पर लेटा हुआ हूँ। अब मेरा यह धर्म नहीं है कि मैं इन बाणों को निकलवाकर अपनी चिकित्सा कराऊँ। नरेश्वरो ! मेरे इस शरीर को इन बाणों के साथ ही दग्ध कर देना।"

**तत् श्रुत्वा वचनं तस्य पुत्रो दुर्योधनस्तव ।**
**वैद्यान् विसर्जयामास पूजयित्वा यथार्हतः ॥२१॥**

भीष्मजी का यह कथन सुनकर आपके पुत्र दुर्योधन ने यथायोग्य सम्मान करके उन वैद्यों को विदा कर दिया।

**ततस्ते विस्मयं जग्मुर्नानाजनपदेश्वराः ।**
**स्थितिं धर्मे परां दृष्ट्वा भीष्मस्यामिततेजसः ॥२२॥**

उस समय विभिन्न जनपदों के स्वामी नरेशगण अमित तेजस्वी भीष्म की यह धर्म-विषयक उत्तम निष्ठा देखकर अत्यन्त विस्मित हुए।

**उपधानं ततो दत्त्वा पितुस्ते मनुजेश्वराः ।**
**सहिताः पाण्डवाः सर्वे कुरवश्च महारथाः ॥२३॥**
**उपगम्य महात्मानं शयानं शयने शुभे ।**
**तेऽभिवाद्य ततो भीष्मं कृत्वा च त्रिः प्रदक्षिणम् ॥२४॥**
**विधाय रक्षां भीष्मस्य सर्व एव समन्ततः ।**
**वीराः स्वशिबिराण्येवोपागच्छन् परमातुराः ॥२५॥**

हे राजन् ! तत्पश्चात् आपके पितृतुल्य भीष्म को उपयुक्त तकिया देकर सभी नरेशों, पाण्डवों तथा महारथी कौरवों ने एक-साथ सुन्दर शरशय्या पर सोये हुए महात्मा भीष्म के पास जाकर उन्हें प्रणाम करके उनकी तीन बार प्रदक्षिणा की तथा सब ओर से भीष्म की रक्षा की व्यवस्था करके सभी वीर अत्यन्त आतुर होकर अपने शिबिरों की ओर चल दिये।

**इति महाभारते भीष्मपर्वणि अष्टाविंशोऽध्यायः ॥२८॥**

# एकोनत्रिंशोऽध्यायः

## अर्जुन का दिव्य जल प्रकट करके भीष्म की प्यास बुझाना तथा भीष्म का दुर्योधन को सन्धि के लिए समझाना

सञ्जय उवाच

**व्युष्टायां तु महाराज शर्वर्यां सर्वपार्थिवाः ।**
**पाण्डवा धार्तराष्ट्राश्च उपातिष्ठन् पितामहम् ॥१॥**
**तं वीरशयने वीरं शयानं कुरुसत्तम ।**
**अभिवाद्योपतस्थुर्वै क्षत्रियाः क्षत्रियर्षभम् ॥२॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज ! जब रात्रि व्यतीत हुई और प्रभात हुआ, उस समय सब नरेश, पाण्डव तथा आपके पुत्र [कौरव] पुनः वीर-शय्या पर सोये हुए वीर पितामह भीष्म की सेवा में उपस्थित हुए। कुरुश्रेष्ठ ! वे सब क्षत्रियश्रेष्ठ भीष्मजी को प्रणाम करके उनके समीप खड़े हो गये।

**भीष्मस्तु वेदनां धैर्यान्निगृह्य भरतर्षभ ।**
**अभितप्तः शरैश्चैव निःश्वसन्नुरगो यथा ॥३॥**
**शराभितप्तकायोऽपि शस्त्रसम्पातमूर्च्छितः ।**
**पानीयमिति सम्प्रेक्ष्य राज्ञस्तान् प्रत्यभाषत ॥४॥**

भरतश्रेष्ठ ! भीष्मजी बाणों से सन्तप्त होकर सर्प के समान लम्बी साँस खींच रहे थे। वे अपनी वेदना को धैर्यपूर्वक सह रहे थे। बाणों की जलन से उनका सारा शरीर जल रहा था। वे शस्त्रों के आघात से मूर्च्छित-से हो रहे थे। उस समय उन्होंने राजाओं की ओर देखकर केवल इतना ही कहा—"पानी।"

**ततस्ते क्षत्रिया राजन्नुपाजह्रुः समन्ततः ।**
**भक्ष्यानुच्चावचान् राजन्वारिकुम्भांश्च शीतलान् ॥५॥**

राजन् ! उस समय वे क्षत्रियनरेश चारों ओर से भोजन की उत्तमोत्तम सामग्री तथा शीतल जल से

भरे हुए घड़े ले आये।

**उपानीतं तु पानीयं दृष्ट्वा शान्तनवोऽब्रवीत्।**
**नाद्यातीता मया शक्या भोगाः केचन मानुषाः ॥६॥**
**अपक्रान्तो मनुष्येभ्यः शरशय्यां गतो ह्यहम्।**
**प्रतीक्षमाणस्तिष्ठामि निवृत्तिं शशिसूर्ययोः ॥७॥**

उनके द्वारा लाये हुए उस जल को देखकर भीष्मजी ने कहा—"अब मैं मनुष्यलोक का कोई भी भोग अपने उपयोग में नहीं ला सकता, मैं उन्हें छोड़ चुका हूँ। यद्यपि मैं यहाँ शरशय्या पर सो रहा हूँ, तथापि मनुष्यलोक से ऊपर उठ चुका हूँ। मैं केवल सूर्य-चन्द्रमा के उत्तरायण में आने की प्रतीक्षा में रुका हुआ हूँ।"

**एवमुक्त्वा शान्तनवो निन्दन् वाक्येन पार्थिवान्।**
**अर्जुनं द्रष्टुमिच्छामीत्यभ्यभाषत भारत ॥८॥**

हे भारत! ऐसा कहकर शान्तनुनन्दन भीष्म ने अपनी वाणी द्वारा अन्य राजाओं की निन्दा करते हुए कहा—"अब मैं अर्जुन को देखना चाहता हूँ।"

**अथोपेत्य महाबाहुरभिवाद्य पितामहम्।**
**अतिष्ठत् प्राञ्जलिः प्रह्वः किं करोमीति चाब्रवीत् ॥९**

तब महाबाहु अर्जुन पितामह भीष्म के पास जाकर उन्हें प्रणाम कर, हाथ जोड़कर खड़े हो गये और विनयपूर्वक बोले—"मेरे लिए क्या आज्ञा है? मैं कौन-सी सेवा करूँ?"

**तं दृष्ट्वा पाण्डवं राजन्नभिवाद्याग्रतः स्थितम्।**
**अभ्यभाषत धर्मात्मा भीष्मः प्रीतो धनञ्जयम् ॥१०॥**

राजन्! प्रणाम करके अपने समक्ष खड़े हुए पाण्डुपुत्र अर्जुन को देखकर धर्मात्मा भीष्म अति प्रसन्न हुए और इस प्रकार बोले—

**दह्यतीव शरीरं मे संवृतस्य तवेषुभिः।**
**मर्माणि परिदूयन्ते मुखं च परिशुष्यति ॥११॥**

"अर्जुन! तुम्हारे बाणों से मेरे सम्पूर्ण अङ्ग बिंधे हुए हैं, अतः मेरा यह शरीर दग्ध-सा हो रहा है। सारे मर्मस्थलों में अत्यन्त पीड़ा हो रही है। मुँह सूखता जा रहा है।

**वेदनार्तशरीरस्य प्रयच्छापो ममार्जुन।**
**त्वं हि शक्तो महेष्वास दातुमापो यथाविधि ॥१२॥**

"महाधनुर्धर अर्जुन! वेदना से पीड़ित शरीर-वाले मुझ वृद्ध को तुम पानी लाकर दो। तुम्हीं विधिपूर्वक मेरे लिए दिव्य जल प्रस्तुत करने में समर्थ हो।"

**अर्जुनस्तु तथेत्युक्त्वा रथमारुह्य वीर्यवान्।**
**संधाय च शरं दीप्तमभिमन्त्र्य स पाण्डवः ॥१३॥**
**पर्जन्यास्त्रेण संयोज्य सर्वलोकस्य पश्यतः।**
**अविध्यत् पृथिवीं पार्थः पार्श्वे भीष्मस्य दक्षिणे ॥१४॥**

तब 'बहुत अच्छा' कहकर पराक्रमी अर्जुन ने रथ पर आरूढ़ हो अपने गाण्डीव धनुष पर एक तेजस्वी बाण का सन्धान किया और सब मनुष्यों के देखते-देखते उस बाण को पर्जन्यास्त्र से संयुक्त करके भीष्म के दाहिने पार्श्व में पृथिवी पर चलाया।

**उत्पपात ततो धारा वारिणो विमला शुभा।**
**शीतस्यामृतकल्पस्य दिव्यगन्धरसस्य च ॥१५॥**
**अतर्पयत् ततः पार्थः शीतया जलधारया।**
**भीष्मं कुरूणामृषभं दिव्यकर्मपराक्रमम् ॥१६॥**

फिर तो शीतल, अमृत के समान मधुर तथा दिव्य सुगन्ध एवं दिव्यरस से संयुक्त जल की सुन्दर स्वच्छ धारा ऊपर की ओर उठ-[कर भीष्म के मुख में पड़]-ने लगी। उस शीतल जलधारा से अर्जुन ने दिव्यकर्म तथा पराक्रमवाले कुरुश्रेष्ठ भीष्म को तृप्त कर दिया।

**कर्मणा तेन पार्थस्य शक्रस्येव विकुर्वतः।**
**विस्मयं परमं जग्मुस्ततस्ते वसुधाधिपाः ॥१७॥**

इन्द्र के समान पराक्रमी अर्जुन के उस अद्भुत पराक्रम से वहाँ बैठे हुए समस्त नरेश अत्यन्त चकित हुए।

**तत् कर्म प्रेक्ष्य बीभत्सोरतिमानुषविक्रमम्।**
**सम्प्रावेपन्त कुरवो गावः शीतार्दिता इव ॥१८॥**

अर्जुन का वह अलौकिक कर्म देखकर समस्त कौरव सर्दी की सतायी हुई गौओं के समान थर-थर काँपने लगे।

**विस्मयाच्चोत्तरीयाणि व्याविध्यन् सर्वतो नृपाः।**
**शंखदुन्दुभिनिर्घोषस्तुमुलः सर्वतोऽभवत् ॥१९॥**

वहाँ बैठे हुए नरेशगण आश्चर्यचकित हो सब ओर अपने-अपने दुपट्टे हिलाने लगे। चारों ओर शंख और नगाड़ों की गम्भीर ध्वनि गूँज उठी।

**तृप्तः शान्तनवश्चापि राजन् बीभत्सुमब्रवीत् ।**
**सर्वपार्थिववीराणां सन्निधौ पूजयन्निव ॥२०॥**

राजन् ! उस जल से तृप्त होकर शान्तनुनन्दन भीष्म ने भी अर्जुन से समस्त वीर नरेशों के समक्ष उनकी प्रशंसा करते हुए इस प्रकार कहा—

**आदित्यस्तेजसां श्रेष्ठो गिरीणां हिमवान् वरः ।□**
**जातीनां ब्राह्मणः श्रेष्ठः श्रेष्ठस्त्वमसि धन्विनाम् ॥२१॥**

"तेजोमय पदार्थों में सूर्य श्रेष्ठ है, पर्वतों में हिमालय महान् है, जातियों में ब्राह्मण श्रेष्ठ है और तुम सम्पूर्ण धनुर्धरों में श्रेष्ठ हो।"

**दृष्टं दुर्योधनैतत् ते यथा पार्थेन धीमता ।**
**जलस्य धारा जनिता शीतस्यामृतगन्धिनः ॥२२॥**

[अर्जुन की प्रशंसा कर उन्होंने दुर्योधन से कहा—] "दुर्योधन ! बुद्धिमान् अर्जुन ने जिस प्रकार शीतल, अमृत के समान मधुर गन्धयुक्त जल की धारा प्रकट की है, उसे तुमने प्रत्यक्ष देख लिया है।

**अशक्यः पाण्डवस्तात युद्धे जेतुं कथञ्चन ।**
**अमानुषाणि कर्माणि यस्यैतानि महात्मनः ॥२३॥**
**तेन सत्त्ववता संख्ये शूरेणाहवशोभिना ।**
**कृतिना समरे राजन् सन्धिर्भवतु माचिरम् ॥२४॥**

"तात ! पाण्डुपुत्र अर्जुन को युद्ध में किसी प्रकार भी जीतना असम्भव है। जिस महामनस्वी पुरुष के ये अलौकिक कर्म प्रत्यक्ष दिखाई देते हैं, जो धैर्यवान्, युद्ध में वीरता दिखानेवाले और संग्राम में सुशोभित होनेवाले हैं, राजन् ! उन अस्त्र-शस्त्र-विद्या के पारङ्गत अर्जुन के साथ इस रणभूमि में तुम्हारी सन्धि हो जानी चाहिए। इस कार्य में विलम्ब नहीं होना चाहिए।

**यावन्न ते चमूः सर्वाः शरैः सन्नतपर्वभिः ।**
**नाशयत्यर्जुनस्तावत् सन्धिस्ते तात युज्यताम् ॥२५॥**

"तात ! जबतक अर्जुन झुकी हुई गाँठवाले बाणों द्वारा तुम्हारी सम्पूर्ण सेना का विनाश नहीं कर डालते हैं, तभी तक उनके साथ तुम्हारी सन्धि हो जानी चाहिए।

**न निर्दहति ते यावत् क्रोधदीप्तेक्षणश्चमूम् ।**
**युधिष्ठिरो रणे तावत् सन्धिस्ते तात युज्यताम् ॥२६**

"हे तात ! जबतक क्रोध के कारण लाल-लाल आँखोंवाला युधिष्ठिर युद्धभूमि में आपकी सेना को जलाकर भस्म नहीं कर देता, तभी तक तुम्हें सन्धि कर लेनी चाहिए।

**यावत् तिष्ठन्ति समरे हतशेषाः सहोदराः ।**
**नृपाश्च बहवो राजँस्तावत् सन्धिः प्रयुज्यताम् ॥२७॥**

"राजन् ! इस रणभूमि में मरने से बचे हुए तुम्हारे सहोदर भाई जबतक विद्यमान हैं, और बहुत-से नरेश भी जीवित हैं, तभी तक तुम अर्जुन के साथ सन्धि कर लो।

**एतत् तु रोचतां वाक्यं यदुक्तोऽसि मयानघ ।**
**एतत् क्षेममहं मन्ये तव चैव कुलस्य च ॥२८॥**

"निष्पाप नरेश ! मैंने जो बातें तुमसे कहीं हैं, वे तुम्हें रुचिकर प्रतीत होनी चाहिएँ। मैं सन्धि को ही तुम्हारे और कुरुकुल के लिए कल्याणकारी समझता हूँ।

**त्यक्त्वा मन्युं व्युपशाम्यस्व पार्थैः**
**पर्याप्तं तद् यत् कृतं फाल्गुनेन ।**
**भीष्मस्यान्तादस्तु वः सौहृदं च**
**जीवन्तु शेषास्त्वं प्रसीद राजन् ॥२९॥**

"राजन् ! तुम क्रोध छोड़कर कुन्तीपुत्रों के साथ सन्धि स्थापित कर लो। अर्जुन ने आज तक जो कुछ किया है, उतना ही उसके शौर्य के निदर्शन के लिए पर्याप्त है। मुझ भीष्म के जीवन का अन्त होने से [तुम्हारे वैर का भी अन्त हो जाए] तुम लोगों में प्रेम-सम्बन्ध स्थापित हो और जो लोग मरने से बचे हैं, वे अच्छी प्रकार जीवित रहें, इसके लिए तुम प्रसन्न हो जाओ।

**राज्यस्यार्धं दीयतां पाण्डवाना-**
**मिन्द्रप्रस्थं धर्मराजोऽभियातु ।**
**मा मित्रधुक् पार्थिवानां जघन्यः**
**पापां कीर्तिं प्राप्स्यसे कौरवेन्द्र ॥३०॥**

"तुम पाण्डवों का आधा राज्य दे दो। धर्मराज युधिष्ठिर इन्द्रप्रस्थ चले जाएँ। कौरवराज ! ऐसा करने से तुम राजाओं में मित्रद्रोही और नीच नहीं कहलाओगे और तुम्हें पापपूर्ण अपयश की प्राप्ति नहीं होगी।

**शान्तिः प्रजानां हि ममावसानात्**
**संगच्छन्तां पार्थिवाः प्रीतिमन्तः।**
**पुत्रं पिता मातुलं भागिनेयो**
**भ्राता चैव भ्रातरं प्रैतु राजन् ॥३१॥**

"राजन्! मेरे जीवन का अन्त होने से ही प्रजाओं में शान्ति हो जाए। समस्त नरेश एक-दूसरे से प्रीतिपूर्वक मिलें। पिता पुत्र से, भानजा मामा से तथा भाई भाई से मिले।

**न चेदेवं प्राप्तकालं वचो मे**
**मोहाविष्टः प्रतिपत्स्यस्यबुद्धया।**
**तप्स्यस्यन्ते एतदन्ताः स्थ सर्वे**
**सत्यामेतां भारतमीरयामि ॥३२॥**

"दुर्योधन! यदि तुम मोहवश अपनी मूर्खता के कारण मेरे इस समयोचित वचन को नहीं मानोगे तो अन्त में पछताओगे और इस युद्ध में ही तुम सब लोगों का अन्त हो जाएगा। यह मैं तुमसे सच्ची बात कह रहा हूँ।"

**एतद् वाक्यं सौहृदादापगेयो**
**मध्ये राज्ञां भारतं श्रावयित्वा।**
**तूष्णीमासीच्छल्यसंतप्तमर्मा**
**योज्यात्मानं वेदनां संनियम्य ॥३३॥**

गङ्गानन्दन भीष्म समस्त राजाओं के बीच सौहार्दवश दुर्योधन को यह सुनाकर मौन हो गये। बाणों से उनके मर्मस्थलों में अत्यन्त पीड़ा हो रही थी। उन्होंने उस वेदना को किसी प्रकार वश में करके अपने मन को परमात्मा के चिन्तन में लगा दिया।

**धर्मार्थसहितं वाक्यं श्रुत्वा हितमनामयम्।**
**नारोचयत पुत्रस्ते मुमूर्षुरिव भेषजम् ॥३४॥**

राजन्! जैसे मरणासन्न पुरुष को औषधि अच्छी नहीं लगती, उसी प्रकार महात्मा भीष्म का वह धर्म और अर्थ से युक्त परम हितकर तथा निर्दोष वचन भी आपके पुत्र को पसन्द नहीं आया।

**इति महाभारते भीष्मपर्वणि एकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥२९॥**

# त्रिंशोऽध्यायः

## भीष्म तथा कर्ण का रहस्यमय वार्तालाप

सञ्जय उवाच

**ततस्ते पार्थिवाः सर्वे जग्मुः स्वानालयान् पुनः।**
**तूष्णीम्भूते महाराज भीष्मे शान्तनुनन्दने ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज! शान्तनुनन्दन भीष्म के मौन हो जाने पर सब राजा वहाँ से उठकर अपने-अपने विश्रामस्थल को चले गये।

**श्रुत्वा तु निहतं भीष्मं राधेयः पुरुषर्षभः।**
**ईषदागतसन्त्रासस्त्वरयोपजगाम ह ॥२॥**

भीष्मजी को रथ से नीचे गिराये जाने का समाचार सुनकर पुरुषश्रेष्ठ राधानन्दन कर्ण के मन में कुछ भय समा गया, अतः वह बड़ी उतावली के साथ उनके पास आया।

**स ददर्श महात्मानं शरतल्पगतं तदा।**
**जन्मशय्यागतं वीरं कार्तिकेयमिव प्रभुम् ॥३॥**

उस समय उसने देखा, महात्मा भीष्म शरशय्या पर सो रहे हैं, ठीक उसी प्रकार जैसे वीर कार्तिकेय जन्म-अवसर पर शरशय्या [सरकण्डों के बिछावन] पर सो रहे थे।

**निमीलिताक्षं तं वीरं साश्रुकण्ठस्तदा वृषः।**
**भीष्म भीष्म महाबाहो इत्युवाच महाद्युतिः ॥४॥**
**राधेयोऽहं कुरुश्रेष्ठ नित्यमक्षिगतस्तव।**
**द्वेष्योऽहं तव सर्वत्र इति चैनमुवाच ह ॥५॥**

वीर भीष्म के नेत्र बन्द थे। उन्हें देखकर महातेजस्वी कर्ण की आँखों में आँसू छल-छला आये और रुँधे हुए गले से उसने कहा—भीष्म! भीष्म! महाबाहो! कुरुश्रेष्ठ! मैं वही राधापुत्र कर्ण हूँ, जो सदा आपकी आँखों में खटकता रहता था और

जिसे आप सर्वत्र द्वेषदृष्टि से देखते थे।" कर्ण ने यह बात उनसे कही।

**तत् श्रुत्वा कुरुवृद्धो हि बली संवृतलोचनः।**
**शनैरुद्वीक्ष्य सस्नेहमिदं वचनमब्रवीत् ॥६॥**
**रहितं धिष्ण्यमालोक्य समुत्सार्य च रक्षिणः।**
**पितेव पुत्रं गाङ्गेयः परिरभ्यैकपाणिना ॥७॥**

उनकी बात सुनकर बन्द नेत्रोंवाले बलवान् कुरुवृद्ध भीष्म ने धीरे से आँखें खोलकर देखा और उस स्थान को एकान्त देख पहरेदारों को हटाकर एक हाथ से कर्ण का उसी प्रकार सस्नेह आलिंगन किया, जैसे पिता अपने पुत्र को गले से लगाता है। तदनन्तर उन्होंने इस प्रकार कहा—

**एह्येहि मे विप्रतीप स्पर्धसे त्वं मया सह।**
**यदि मां नाधिगच्छेथा न ते श्रेयो ध्रुवं भवेत् ॥८॥**

"आओ आओ, कर्ण! तुम सदा मुझसे लाग-डाँट रखते रहे, सदा मेरे साथ स्पर्धा करते रहे। आज यदि तुम मेरे पास न आते तो निश्चय ही तुम्हारा कल्याण नहीं होता।

**कौन्तेयस्त्वं न राधेयो न तवाधिरथः पिता।**
**सूर्यजस्त्वं महाबाहो विदितो नारदान्मया ॥९॥**

"वत्स! तुम राधा के नहीं, कुन्ती के पुत्र हो। तुम्हारे पिता अधिरथ नहीं हैं। महाबाहो! तुम सूर्य के पुत्र हो। मैंने नारदजी से तुम्हारा परिचय प्राप्त किया था।

**तेजोवधनिमित्तं तु परुषं त्वाहमब्रुवम्।**
**अकस्मात् पाण्डवान् सर्वानवाक्षिपसि सुव्रत ॥१०॥**
**येनासि बहुशो राज्ञा नोदितः सूतनन्दन।**
**जातोऽसि धर्मलोपेन ततस्ते बुद्धिरीदृशी ॥११॥**
**नीचाश्रयान्मत्सरेण द्वेषिणी गुणिनामपि।**
**तेनासि बहुशो रूक्षं श्रावितः कुरुसंसदि ॥१२॥**

"उत्तम व्रत का पालन करनेवाले वीर! मैं कभी-कभी तुमसे जो कठोर वचन कह दिया करता था, उसका उद्देश्य था तुम्हारे उत्साह और तेज को नष्ट करना, क्योंकि सूतनन्दन! तुम राजा दुर्योधन के उकसाने से अकारण ही समस्त पाण्डवों पर बहुत बार आक्षेप किया करते थे। तुम्हारा जन्म [कन्यावस्था में ही कुन्ती के गर्भ से उत्पन्न होने के कारण] धर्मलोप से हुआ है, अतः नीच पुरुषों के आश्रय से तुम्हारी बुद्धि इस प्रकार ईर्ष्यावश गुणवान् पाण्डवों से भी द्वेष रखनेवाली हो गई है। इसीलिए मैंने कौरवसभा में तुम्हें अनेक बार कटुवचन सुनाये हैं।

**जानामि समरे वीर्यं शत्रुभिर्दुःसहं भुवि।**
**ब्रह्मण्यतां च शौर्यं च दाने च परमां स्थितिम् ॥१३॥**

"मैं जानता हूँ, तुम्हारा पराक्रम रणभूमि में शत्रुओं के लिए दुःसह है। तुम ब्राह्मणभक्त, शूरवीर तथा दान में उत्तम निष्ठा रखनेवाले हो।

**न त्वया सदृशः कश्चित् पुरुषेष्वमरोपम।**
**कुलभेदभयाच्चाहं सदा परुषमुक्तवान् ॥१४॥**

"देवोपम वीर! मनुष्यों में तुम्हारे समान कोई नहीं है। मैं सदा अपने कुल में फूट पड़ने के डर से तुम्हें कटुवचन सुनाता रहा।

**इष्वस्त्रे चास्त्रसंधाने लाघवेऽस्त्रबले तथा।**
**सदृशः फाल्गुनेनासि कृष्णेन च महात्मना ॥१५॥**

"बाण चलाने, दिव्यास्त्रों का सन्धान करने, फुर्ती दिखाने तथा अस्त्रबल में तुम अर्जुन तथा महात्मा श्रीकृष्ण के समान हो।

**ब्राह्मण्यः सत्त्वयोधी च तेजसा च बलेन च।**
**देवगर्भसमः संख्ये मनुष्यैरधिको युधि ॥१६॥**

"तुम ब्राह्मणभक्त, धैर्यपूर्वक युद्ध करनेवाले और तेज तथा बल से सम्पन्न हो। युद्धभूमि में तुम देवकुमारों के समान प्रतीत होते हो और प्रत्येक युद्ध में मनुष्यों से अधिक पराक्रमी हो।

**व्यपनीतोऽद्य मन्युर्मे यस्त्वां प्रति पुरा कृतः।**
**दैवं पुरुषकारेण न शक्यमतिवर्तितुम् ॥१७॥**

"मैंने पहले जो तुम्हारे प्रति क्रोध किया था, वह अब दूर हो गया है, क्योंकि प्रारब्ध के विधान को कोई पुरुषार्थ द्वारा नहीं टाल सकता।

**सोदर्याः पाण्डवा वीरा भ्रातरस्तेऽरिसूदन।**
**संगच्छ तैर्महाबाहो मम चेदिच्छसि प्रियम् ॥१८॥**

"शत्रुसंहारक! वीर पाण्डव तुम्हारे सगे भाई हैं। महाबाहो! यदि तुम मेरा प्रिय करना चाहते हो तो अपने उन भाइयों से मिल जाओ।

**मया भवतु निर्वृत्तं वैरमादित्यनन्दन।**
**पृथिव्यां सर्वराजानो भवन्त्वद्य निरामयाः ॥१९॥**

"सूर्यनन्दन ! मेरी मृत्यु के द्वारा ही यह वैर की अग्नि शान्त हो जाए और भूमण्डल के सारे नरेश अब दुःख-शोक से रहित तथा निर्भय हो जाएँ।"

कर्ण उवाच

**जानाम्येव महाबाहो सर्वमेतन्न संशयः।**
**यथा वदसि मे भीष्म कौन्तेयोऽहं न सूतजः ॥२०॥**

**कर्ण बोला**—महाबाहो भीष्म ! आप जो कुछ कह रहे हैं, उसे मैं भी जानता हूँ। यह सब ठीक है, इसमें संशय नहीं है। वस्तुतः ! मैं कुन्ती का ही पुत्र हूँ, सूतपुत्र नहीं हूँ।

**अवकीर्णस्त्वहं कुन्त्या सूतेन च विवर्धितः।**
**भुक्त्वा दुर्योधनैश्वर्यं न मिथ्या कर्तुमुत्सहे ॥२१॥**

माता कुन्ती ने तो मुझे पानी में बहा दिया और सूत ने मुझे पाल-पोषकर बड़ा किया। मैंने दुर्योधन का ऐश्वर्य भोगा। दुर्योधन का ऐश्वर्य भोगकर अब मैं उसे निष्फल नहीं कर सकता।

**वसुदेवसुतो यद्वत् पाण्डवाय दृढव्रतः।**
**वसु चैव शरीरं च पुत्रदारं तथा यशः ॥२२॥**
**सर्वं दुर्योधनस्यार्थे त्यक्तं मे भूरिदक्षिण।**
**मा चैतद् व्याधिमरणं क्षत्रं स्यादिति कौरव ॥२३॥**
**कोपिताः पाण्डवा नित्यं समाश्रित्य सुयोधनम्।**
**अवश्यभावी ह्यर्थोऽयं यो न शक्यो निवर्तितुम् ॥२४॥**

जैसे वसुदेवनन्दन श्रीकृष्ण पाण्डुपुत्र अर्जुन की सहायता के लिए दृढ़प्रतिज्ञ हैं, उसी प्रकार मेरा धन, शरीर, स्त्री, पुत्र तथा यश सब-कुछ दुर्योधन के लिए न्योछावर है। यज्ञों में प्रचुर दक्षिणा देनेवाले कुरुनन्दन भीष्म ! मैंने दुर्योधन का आश्रय लेकर पाण्डवों का क्रोध सदा इसलिए बढ़ाया है कि यह क्षत्रिय-जाति रोगों की शिकार होकर न मरे [युद्ध में वीरगति प्राप्त करे]। यह युद्ध अवश्यम्भावी है, इसे कोई टाल नहीं सकता।

**न च शक्यमवस्रष्टुं वैरमेतत् सुदारुणम्।**
**धनञ्जयेन योत्स्येऽहं स्वधर्मप्रीतमानसः ॥२५॥**

पाण्डवों के साथ हम लोगों का यह वैर अत्यन्त भयंकर हो गया है, अब इसे दूर नहीं किया जा सकता। मैं अपने धर्म के अनुसार प्रसन्नचित्त होकर अर्जुन के साथ युद्ध करूँगा।

**अनुजानीहि मां तात युद्धाय कृतनिश्चयम्।**
**अनुज्ञातस्त्वया वीर युद्ध्येयमिति मे मतिः ॥२६॥**

तात ! मैं युद्ध के लिए निश्चय कर चुका हूँ। वीर ! मेरा विचार है कि मैं आपकी आज्ञा लेकर युद्ध करूँ, अतः आप मुझे आज्ञा प्रदान करें।

**दुरुक्तं विप्रतीपं वा रभसाच्चापलात् तथा।**
**यन्मयेह कृतं किंचित् तन्मे त्वं क्षन्तुमर्हसि ॥२७॥**

मैंने क्रोध के आवेग से अथवा चपलता के कारण आपके प्रति जो कटुवचन कहा हो अथवा आपके प्रतिकूल आचरण किया हो, वह सब आप कृपापूर्वक क्षमा कर दें।

भीष्म उवाच

**न चेच्छक्यमवस्रष्टुं वैरमेतत् सुदारुणम्।**
**अनुजानामि कर्ण त्वां युद्ध्यस्व स्वर्गकाम्यया ॥२८॥**

**भीष्म बोले**—कर्ण ! यदि यह भयंकर वैर अब नहीं छोड़ा जा सकता तो मैं तुम्हें आज्ञा देता हूँ, तुम स्वर्ग-प्राप्ति की इच्छा से युद्ध करो।

**निर्मन्युर्गतसंरम्भः कृतकर्मा रणे स्म ह।**
**यथाशक्ति यथोत्साहं सतां वृत्तेषु वृत्तवान् ॥२९॥**

तुम दीनता और क्रोध छोड़कर अपनी शक्ति और उत्साह के अनुसार सत्पुरुषों के आचार में स्थित रहकर युद्ध करो। तुम रणभूमि में पराक्रम प्रकट कर चुके हो और आचारवान् तो हो ही।

**अहं त्वामनुजानामि यदिच्छसि तदाप्नुहि।**
**क्षत्रधर्मजिताँल्लोकानवाप्स्यसि धनञ्जयात् ॥३०॥**

कर्ण ! मैं तुम्हें आज्ञा देता हूँ। तुम जो चाहते हो, वह प्राप्त करो। धनञ्जय के हाथ से मारे जाने पर तुम्हें क्षत्रियधर्म के पालन से प्राप्त होनेवाले लोकों की प्राप्ति होगी।

**युध्यस्व निरहङ्कारो बलवीर्यव्यपाश्रयः।**
**धर्म्याद्धि युद्धात् श्रेयोऽन्यत् क्षत्रियस्य न विद्यते ॥३१॥**

तुम अभिमान-शून्य होकर बल और पराक्रम का सहारा लेकर युद्ध करो। क्षत्रिय के लिए धर्मानुकूल युद्ध से बढ़कर दूसरा कोई कल्याणकारी साधन नहीं है।

**प्रशमे हि कृतो यत्नः सुमहान् सुचिरं मया।**
**न चैव शकितः कर्तुं कर्ण सत्यं ब्रवीमि ते ॥३२॥**

कर्ण ! मैं तुमसे सत्य कहता हूँ कि मैंने कौरवों और पाण्डवों में शान्ति स्थापित करने के लिए दीर्घकाल तक महान् प्रयत्न किया, परन्तु मैं उसमें सफल न हो सका ।

सञ्जय उवाच

**इत्युक्तवति गाङ्गेये अभिवाद्योपमन्त्र्य च ।**
**राधेयो रथमारुह्य प्रायात् तव सुतं प्रति ॥३३॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! गङ्गानन्दन भीष्म के ऐसा कहने पर राधानन्दन कर्ण उन्हें प्रणाम करके तथा उनकी आज्ञा लेकर रथ पर आरूढ़ हो आपके पुत्र दुर्योधन के पास चला गया ।

**इति महाभारते भीष्मपर्वणि त्रिंशोऽध्यायः ॥३०॥**

**॥ इति भीष्मपर्व सम्पूर्णम् ॥**

# द्रोणपर्व

## प्रथमोऽध्यायः

### द्रोणाचार्य का सेनापति के पद पर अभिषेक

जनमेजय उवाच

**हतं देवव्रतं श्रुत्वा पाञ्चाल्येन शिखण्डिना ।**
**यदचेष्टत कौरव्यस्तन्मे ब्रूहि तपोधन ॥१॥**

**जनमेजय ने पूछा**—तपोधन ! देवव्रत भीष्म को पाञ्चालराजकुमार शिखण्डी के द्वारा मारा गया सुनकर कुरुवंशी दुर्योधन ने जो यत्न किया, वह सब मुझे बताइए ।

वैशम्पायन उवाच

**निहतं पितरं श्रुत्वा धृतराष्ट्रो जनाधिपः ।**
**लेभे न शान्ति कौरव्यश्चिन्ताशोकपरायणः ॥२॥**

**वैशम्पायनजी बोले**—जनमेजय ! ज्येष्ठ पिता को मारा गया सुनकर कुरुवंशी राजा धृतराष्ट्र चिन्ता और शोक में मग्न हो गये । उन्हें क्षणभर को भी शान्ति नहीं मिल रही थी ।

**तस्य चिन्तयतो दुःखमनिशं पार्थिवस्य तत् ।**
**आजगाम विशुद्धात्मा पुनर्गावल्गणिस्तदा ॥३॥**

वे नरेश निरन्तर उस दुःखदायिनी घटना का ही चिन्तन करते रहे । उसी समय विशुद्ध अन्तःकरण-वाला गवल्गण का पुत्र संजय पुनः उसके पास आया ।

**शिबिरात् संजयं प्राप्तं निशि नागाह्वयं पुरम् ।**
**आम्बिकेयो महाराज धृतराष्ट्रोऽन्वपृच्छत ॥४॥**

महाराज ! रात्रि के समय कुरुक्षेत्र के शिबिर से हस्तिनापुर में आये हुए सञ्जय से अम्बिकानन्दन धृतराष्ट्र ने वहाँ का समाचार पूछा ।

धृतराष्ट्र उवाच

**देवव्रते तु निहते कुरूणामृषभे तदा ।**
**किमकार्षुर्नृपतयस्तन्ममाचक्ष्व संजय ॥५॥**

**धृतराष्ट्र ने पूछा**—सञ्जय ! कुरुश्रेष्ठ देवव्रत के मारे जाने पर उस समय सब राजाओं ने कौन-सा कार्य किया ? यह मुझे बताइए ।

सञ्जय उवाच

**शृणु राजन्नेकमना वचनं ब्रुवतो मम ।**
**यत् ते पुत्रास्तदाकार्षुर्हते देवव्रते मृधे ॥६॥**

**सञ्जय ने कहा**—राजन् ! उस युद्ध में देवव्रत भीष्म के मारे जाने पर आपके पुत्रों ने जो कुछ किया, वह सब मैं बता रहा हूँ, आप मेरे कथन को ध्यानपूर्वक सुनें ।

**निहते तु तदा भीष्मे राजन् सत्यपराक्रमे ।**
**पुनर्युद्धाय निर्जग्मुः क्षत्रियाः कालनोदिताः ॥७॥**

राजन् ! सत्यपराक्रमी भीष्म के मारे जाने पर काल से प्रेरित क्षत्रिय पुनः युद्ध के लिए निकल पड़े ।

**मोहात् तव सपुत्रस्य वधाच्छान्तनवस्य च ।**
**कौरव्या मृत्युसाद्भूताः सहिताः सर्वराजभिः ॥८॥**

पुत्रसहित आपके मोह=अविवेक से और शान्तनुनन्दन भीष्म का वध हो जाने से उस समय समस्त राजाओंसहित सम्पूर्ण कुरुवंशी मृत्यु के अधीन हो रहे थे ।

**अजावय इवागोपा वने श्वापदसंकुले ।**
**भृशमुद्विग्नमनसो हीना देवव्रतेन ते ॥९॥**

जिस प्रकार हिंसक जन्तुओं से भरे वन में बिना रक्षक की भेड़ और बकरियाँ भय से उद्विग्न रहती हैं, उसी प्रकार आपके पुत्र और सैनिक देवव्रत से रहित होकर मन-ही-मन अत्यन्त दुःखी हो उठे थे।

**पतिते भरतश्रेष्ठे बभूव कुरुवाहिनी।**
**विधवेव वरारोहा शुष्कतोयेव निम्नगा ॥१०॥**

भरतशिरोमणि भीष्म के धराशायी हो जाने पर कौरव-सेना सुन्दरी विधवा के समान और जिसका पानी सूख गया हो ऐसी नदी के समान भयभीत, विचलित और श्रीहीन जान पड़ती थी।

**तस्मिंस्तु निहते शूरे सत्यसन्धे महौजसि।**
**त्वत्सुताः कर्णमस्मार्षुस्तर्तुकामा इव प्लवम् ॥११॥**

महापराक्रमी, सत्यप्रतिज्ञ, शूरवीर भीष्म के मारे जाने पर आपके पुत्रों ने कर्ण का वैसे ही स्मरण किया, जैसे पार जाने के इच्छुक मनुष्य नौका की इच्छा करते हैं।

**तावकास्तव पुत्राश्च सहिताः सर्वराजभिः।**
**हा कर्ण इति चाक्रन्दन् कालोऽयमिति चाब्रुवन् ॥१२॥**

समस्त राजाओंसहित आपके पुत्र और सैनिक 'हा कर्ण' कहकर विलाप करने लगे और बोले—"कर्ण ! इस समय तुम्हारे पराक्रम प्रकट करने का समय आया है।"

**हते तु भीष्मे रथसत्तमे परैर्-**
**निमज्जतीं नावमिवार्णवे कुरून्।**
**पितेव पुत्रांस्त्वरितोऽभ्ययात् ततः**
**संतारयिष्यंस्तव सुतस्य सेनाम् ॥१३॥**

उधर रथियों में श्रेष्ठ भीष्मजी के शत्रुओं द्वारा मारे जाने पर, जैसे पिता अपने पुत्रों को संकट से बचाने के लिए जाता हो, वैसे ही सूतपुत्र कर्ण डूबती हुई नौका के समान आपके पुत्र की सेना को संकट से बचाने के लिए बड़ी उतावली के साथ दुर्योधन के निकट आ पहुँचा।

**रथस्थं पुरुषव्याघ्रं दृष्ट्वा कर्णमवस्थितम्।**
**हृष्टो दुर्योधनो राजन्निदं वचनमब्रवीत् ॥१४॥**

राजन् ! पुरुषसिंह कर्ण को युद्ध के लिए रथ पर बैठा देख दुर्योधन ने प्रसन्न होकर इस प्रकार कहा—

दुर्योधन उवाच

**न विना नायकं सेना मुहूर्तमपि तिष्ठति।**
**आहवेष्वाहवश्रेष्ठ नेतृहीनेव नौर्जले ॥१५॥**

**दुर्योधन ने कहा**—समराङ्गण के श्रेष्ठ वीर ! सेनापति के बिना कोई सेना दो घड़ी भी संग्राम में नहीं टिक सकती, ठीक वैसे ही, जैसे नाविक के बिना नौका जल में स्थिर नहीं रह सकती।

**यथा ह्यकर्णधारा नौ रथश्चासारथिर्यथा।**
**द्रवेद् यथेष्टं तद्वत् स्यादृते सेनापतिं बलम् ॥१६॥**

जैसे बिना मल्लाह की नौका जल में इधर-उधर कहीं भी बह सकती है और बिना सारथि का रथ चाहे जहाँ भटक जाता है, उसी प्रकार सेनापति के बिना सेना भी चाहे जहाँ भाग सकती है।

**अदेशिको यथा सार्थः सर्वः कृच्छ्रं समर्च्छति।**
**अनायका तथा सेना सर्वान् दोषान् समर्च्छति ॥१७॥**

जैसे किसी मार्गदर्शक के न होने पर यात्रियों का सारा दल भारी संकट में पड़ जाता है, वैसे ही सेनापति के बिना सेना को सब प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

**स भवान् वीक्ष्य सर्वेषु मामकेषु महात्मसु।**
**पश्य सेनापतिं युक्तमनु शान्तनवादिह ॥१८॥**

अतः आप मेरे पक्ष के सब महामनस्वी वीरों पर दृष्टि डालकर यह देखो कि भीष्मजी के पश्चात् अब कौन उपयुक्त सेनापति हो सकता है ?

कर्ण उवाच

**सर्व एव महात्मान इमे पुरुषसत्तमाः।**
**सेनापतित्वमर्हन्ति नात्र कार्या विचारणा ॥१९॥**

**कर्ण बोला**—राजन् ! ये सभी महामनस्वी पुरुषप्रवर नरेश सेनापति होने के योग्य हैं। इस विषय में कोई अन्यथा विचार करने की आवश्यकता नहीं है।

**कुलसंहननज्ञानैर्बलविक्रमबुद्धिभिः।**
**युक्ताः श्रुतज्ञा धीमन्त आहवेष्वनिर्वर्तिनः ॥२०॥**

जो नरेश यहाँ विद्यमान हैं, वे सभी अपने कुल, शरीर, ज्ञान, बल, पराक्रम और बुद्धि की दृष्टि से सेनापति-पद के योग्य हैं। ये सभी वेदज्ञ, बुद्धिमान् और युद्ध से कभी पीछे न हटनेवाले हैं।

**युगपन्न तु ते शक्याः कर्तुं सर्वे पुरःसराः ।**
**एक एव तु कर्तव्यो यस्मिन् वैशेषिका गुणाः ॥२१॥**

परन्तु सब-के-सब एक ही समय तो सेनापति नहीं बनाये जा सकते, अतः जिस एक में सभी विशिष्ट गुण हों, उसी को अपनी सेना का नायक बनाना चाहिए ।

**अन्योन्यस्पर्धिनां ह्येषां यद्येकं यं करिष्यसि ।**
**शेषा विमनसो व्यक्तं न योत्स्यन्ति हितास्तव ॥२२॥**

किन्तु ये सभी नरेश एक-दूसरे से स्पर्धा रखनेवाले हैं । यदि तुम इनमें से किसी एक को सेनापति बना लोगे तो शेष सब राजा मन-ही-मन अप्रसन्न हो तुम्हारे हित की भावना से युद्ध नहीं करेंगे, यह बात अत्यन्त स्पष्ट है ।

**अयं च सर्वयोधानामाचार्यः स्थविरो गुरुः ।**
**युक्तः सेनापतिः कर्तुं द्रोणः शस्त्रभृतां वरः ॥२३॥**

अतः जो इन समस्त योद्धाओं के आचार्य, वयोवृद्ध, गुरु तथा शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ हैं, वे आचार्य द्रोण ही इस समय सेनापति-पद पर अभिषिक्त किये जाने योग्य हैं ।

**को हि तिष्ठति दुर्धर्षे द्रोणे शस्त्रभृतां वरे ।**
**सेनापतिः स्यादन्योऽस्माच्छुक्राङ्गिरसदर्शनात् ॥२४॥**

सम्पूर्ण शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ, दुर्जय वीर द्रोणाचार्य के रहते हुए, इन शुक्राचार्य और बृहस्पति के समान महानुभाव को छोड़कर दूसरा कौन सेनापति हो सकता है ? [अतः आचार्य द्रोण को शीघ्र सेनापति बनाओ ।]

सञ्जय उवाच

**कर्णस्य वचनं श्रुत्वा राजा दुर्योधनस्तदा ।**
**सेनामध्यगतं द्रोणमिदं वचनमब्रवीत् ॥२५॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! कर्ण का यह वचन सुनकर उस समय राजा दुर्योधन ने सेना के मध्यभाग में स्थित हुए द्रोणाचार्य से इस प्रकार कहा—

दुर्योधन उवाच

**वर्णश्रैष्ठ्यात् कुलोत्पत्त्या श्रुतेन वयसा धिया ।**
**तपसा च कृतज्ञत्वाद् वृद्धः सर्वगुणैरपि ॥२६॥**
**युक्तो भवत्समो गोप्ता राज्ञामन्यो न विद्यते ।**
**भवन्नेत्राः पराञ्जेतुमिच्छामो द्विजसत्तम ॥२७॥**

**दुर्योधन बोला**—द्विजश्रेष्ठ ! आप उत्तम वर्ण, श्रेष्ठ कुल में जन्म, शास्त्रज्ञान, अवस्था, बुद्धि, तपस्या, कृतज्ञता आदि समस्त गुणों के द्वारा सबसे बढ़े-चढ़े हैं । आपके समान योग्य संरक्षक इन राजाओं में दूसरा कोई भी नहीं है । हम आपके नेतृत्व में रहकर शत्रु पर विजय पाना चाहते हैं ।

**ध्रुवं युधिष्ठिरं संख्ये सानुबन्धं सबान्धवम् ।**
**जेष्यामि पुरुषव्याघ्र भवान् सेनापतिर्यदि ॥२८॥**

नरशार्दूल ! यदि आप मेरे सेनापति बन जाएँ तो मैं युद्ध में निश्चय ही भाइयों तथा सगे-सम्बन्धियों सहित युधिष्ठिर को जीत लूँगा ।

सञ्जय उवाच

**एवमुक्ते ततो द्रोणं जयेत्यूचुर्नराधिपाः ।**
**सिंहनादेन महता हर्षयन्तस्तवात्मजम् ॥२९॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! दुर्योधन के ऐसा कहने पर सब नरेश अपने महान् सिंहनाद से आपके पुत्र का हर्ष बढ़ाते हुए द्रोणाचार्य से बोले—"आचार्य ! आपकी जय हो ।"

द्रोण उवाच

**वेदं षडङ्गं वेदाहमर्थविद्यां च मानवीम् ।**
**त्रैयम्बकमथेष्वस्त्रं शस्त्राणि विविधानि च ॥३०॥**

**द्रोणाचार्य ने कहा**—राजन् ! मैं छहों अङ्गोंसहित वेद, मनुजी का कहा हुआ अर्थशास्त्र, महाराज शिव की दी हुई बाणविद्या और अनेक प्रकार के अस्त्रशस्त्र भी जानता हूँ ।

**ये चाप्युक्ता मयि गुणा भवद्भिर्जयकांक्षिभिः ।**
**चिकीर्षुस्तानहं सर्वान् योधयिष्यामि पाण्डवान् ॥३१॥**

विजय-अभिलाषी तुम लोगों ने मुझमें जो-जो गुण बताये हैं, उन सबको प्राप्त करने की इच्छा से मैं पाण्डवों के साथ युद्ध करूँगा ।

**पार्षतं तु रणे राजन् न हनिष्ये कथञ्चन ।**
**स हि सृष्टो वधार्थाय ममैव पुरुषर्षभः ॥३२॥**

परन्तु राजन् ! मैं द्रुपदकुमार धृष्टद्युम्न को युद्धभूमि में किसी प्रकार भी नहीं मारूँगा, क्योंकि वह पुरुषश्रेष्ठ धृष्टद्युम्न मेरे ही वध के संकल्प से उत्पन्न किया गया है ।

सञ्जय उवाच

**स एवमभ्यनुज्ञातश्चक्रे सेनापतिं ततः ।**
**द्रोणं तव सुतो राजन् विधिदृष्टेन कर्मणा ।।३३।।**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! इस प्रकार द्रोणाचार्य की अनुमति मिल जाने पर आपके पुत्र दुर्योधन ने उन्हें शास्त्रीय विधि के अनुसार सेनापति के पद पर अभिषिक्त कर दिया ।

**ततो वादित्रघोषेण शंखानां च महास्वनैः ।**
**प्रादुरासीत् कृते द्रोणे हर्षः सेनापतौ तदा ।।३४।।**

उस समय वाद्यों के घोष तथा शंखों की गम्भीर ध्वनि के साथ द्रोणाचार्य के सेनापति-पद पर अभिषिक्त हो जाने पर सब लोगों के हृदयों में महान् हर्ष प्रकट हुआ ।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि प्रथमोऽध्यायः ।।१।।**

# द्वितीयोऽध्यायः

## द्रोणाचार्य द्वारा युधिष्ठिर को जीवित पकड़ लाने की प्रतिज्ञा

सञ्जय उवाच

**सेनापतित्वं सम्प्राप्य भारद्वाजो महारथः ।**
**मध्ये सर्वस्य सैन्यस्य पुत्रं ते वाक्यमब्रवीत् ।।१।।**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज ! सेनापति का पद प्राप्त करके महारथी द्रोणाचार्य ने समस्त सेना के मध्य आपके पुत्र दुर्योधन से इस प्रकार कहा—

**यत् कौरवाणामृषभादापगेयादनन्तरम् ।**
**सैनापत्येन यद् राजन् मामद्य कृतवानसि ।।२।।**
**सदृशं कर्मणस्तस्य फलं प्राप्नुहि भारत ।**
**करोमि कामं कं तेऽद्य प्रवृणीष्व यमिच्छसि ।।३।।**

"राजन् ! तुमने कौरवश्रेष्ठ गङ्गानन्दन भीष्म के बाद जो आज मुझे सेनापति-पद पर अभिषिक्त किया है, भरतभूषण ! इस कार्य के अनुरूप कोई फल मुझसे प्राप्त करो । आज तुम्हारा कौन-सा मनोरथ पूर्ण करूँ ? तुम्हें जिस वस्तु की इच्छा हो, वही माँग लो ।"

दुर्योधन उवाच

**ददासि चेद् वरं मह्यं जीवग्राहं युधिष्ठिरम् ।**
**गृहीत्वा रथिनां श्रेष्ठं मत्समीपमिहानय ।।४।।**

**दुर्योधन बोला**—आचार्य, यदि आप मुझे वर दे रहे हैं तो रथियों में श्रेष्ठ युधिष्ठिर को जीवित पकड़कर मेरे पास ले आइए ।

द्रोण उवाच

**धन्यः कुन्तीसुतो राजन् यस्य ग्रहणमिच्छसि ।**
**न वधार्थं सुदुर्धर्षं वरमद्य प्रयाचसे ।।५।।**

**द्रोणाचार्य ने कहा**—राजन् ! कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर धन्य हैं, जिन्हें आप जीवित पकड़ना चाहते हैं । उस दुर्धर्ष वीर को मौत के घाट उतारने के लिए आज आप मुझसे याचना नहीं कर रहे हो ।

**किमर्थं च नरव्याघ्र न वधं तस्य कांक्षसे ।**
**नाशंससि क्रियामेतां मत्तो दुर्योधन ध्रुवम् ।।६।।**

पुरुषसिंह ! आपको उनके वध की इच्छा क्यों नहीं हो रही है ? दुर्योधन ! तुम मेरे द्वारा युधिष्ठिर का वध क्यों नहीं कराना चाहते हो ?

**अहोस्विद् धर्मराजस्य द्वेष्टा तस्य न विद्यते ।**
**यदीच्छसि त्वं जीवन्तं कुलं रक्षसि चात्मनः ।।७।।**

अथवा इसका कारण यह तो नहीं कि धर्मराज युधिष्ठिर से द्वेष रखनेवाला इस लोक में कोई है ही नहीं, अतः तुम उन्हें जीवित देखना और अपने कुल की रक्षा करना चाहते हो ?

**अथवा भरतश्रेष्ठ निर्जित्य युधि पाण्डवान् ।**
**राज्यं सम्प्रति दत्त्वा च सौभ्रात्रं कर्तुमिच्छसि ।।८।।**

अथवा भरतभूषण ! तुम युद्ध में पाण्डवों को जीतकर इस समय उनका राज्य उन्हें लौटाकर श्रेष्ठ भ्रातृभाव का आदर्श उपस्थित करना चाहते हो ।

**धन्यः कुन्तीसुतो राजा सुजातं चास्य धीमतः ।**
**अजातशत्रुता सत्या तस्य यत् स्निह्यते भवान् ।।९।।**

कुन्तीकुमार राजा युधिष्ठिर धन्य हैं । उन बुद्धिमान् नरेश का जन्म भी बहुत उत्तम है । वे जो

अजातशत्रु कहलाते हैं, वह भी ठीक है, क्योंकि तुम भी उनपर स्नेह रखते हो।

सञ्जय उवाच

**द्रोणेन चैवमुक्तस्य तव पुत्रस्य भारत।**
**सहसा निःसृतो भावो योऽस्य नित्यं हृदि स्थितः ॥१०॥**

**सञ्जय कहते हैं**—हे भारत ! द्रोणाचार्य के ऐसा कहने पर तुम्हारे पुत्र के मन का स्थिर भाव जो सदा उनके मन में बना रहता था, सहसा प्रकट हो गया।

**नाकारो गूहितं शक्यो बृहस्पतिसमैरपि।**
**तस्मात्तव सुतो राजन् प्रहृष्टो वाक्यमब्रवीत् ॥११॥**

राजन् ! बृहस्पति के समान बुद्धिमान् पुरुष भी अपने आकार को छिपा नहीं सकते, अतः आपका पुत्र अत्यन्त प्रसन्न होकर इस प्रकार बोला—

दुर्योधन उवाच

**वधे कुन्तिसुतस्याजौ नाचार्य विजयो मम।**
**हते युधिष्ठिरे पार्था हन्युः सर्वान् हि नो ध्रुवम् ॥१२॥**

**दुर्योधन बोला**—आचार्य ! युद्धभूमि में कुन्ती-कुमार युधिष्ठिर के मारे जाने से मेरी विजय नहीं हो सकती, क्योंकि युधिष्ठिर का वध होने पर कुन्ती के पुत्र हम सब लोगों को अवश्य ही मार डालेंगे।

**न च शक्या रणे सर्वे निहन्तुममरैरपि।**
**य एव तेषां शेषः स्यात् स एवास्मान् न शेषयेत् ॥१३॥**

समस्त देवता भी सारे पाण्डवों को रणक्षेत्र में नहीं मार सकते और पाण्डवों में से जो भी शेष रह जाएगा, वही हम लोगों को शेष नहीं रहने देगा।

**सत्यप्रतिज्ञे त्वानीते पुनर्द्यूतेन निर्जिते।**
**पुनर्यास्यन्त्यरण्याय पाण्डवास्तमनुव्रताः ॥१४॥**

सत्यप्रतिज्ञ राजा युधिष्ठिर को जीते-जी पकड़ ले आने पर यदि उन्हें पुनः जुए में जीत लिया जाए तो उनमें भक्ति रखनेवाले पाण्डव पुनः वन में चले जाएँगे।

**सोऽयं मम जयो व्यक्तं दीर्घकालं भविष्यति।**
**अतो न वधमिच्छामि धर्मराजस्य कर्हिचित् ॥१५॥**

इस प्रकार निश्चय ही मेरी विजय दीर्घकाल तक बनी रहेगी, अतः मैं कभी भी धर्मराज युधिष्ठिर का वध नहीं करना चाहता।

सञ्जय उवाच

**तस्य जिह्ममभिप्रायं ज्ञात्वा द्रोणोऽथ तत्त्ववित्।**
**तं वरं सान्तरं तस्मै ददौ संचिन्त्य बुद्धिमान् ॥१६॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! द्रोणाचार्य प्रत्येक बात के वास्तविक रहस्य को तुरन्त समझ लेनेवाले थे। दुर्योधन के उस कुटिल भाव को जानकर बुद्धिमान् द्रोण ने मन-ही-मन कुछ विचार किया और अन्तर [शर्त] रखकर उसे वर दिया—

द्रोण उवाच

**न चेद् युधिष्ठिरं वीरः पालयत्यर्जुनो युधि।**
**मन्यस्व पाण्डवश्रेष्ठमानीतं वशमात्मनः ॥१७॥**

**द्रोणाचार्य बोले**—राजन् ! यदि वीरवर अर्जुन युद्ध में युधिष्ठिर की रक्षा न करते हों, तब तुम पाण्डवश्रेष्ठ युधिष्ठिर को अपने वश में आया हुआ ही समझो।

**न हि शक्यो रणे पार्थः सेन्द्रैर्देवासुरैरपि।**
**प्रत्युद्यातुमतस्तात नैतदामर्षयाम्यहम् ॥१८॥**

तात ! युद्धभूमि में इन्द्रसहित सम्पूर्ण देवता और असुर भी अर्जुन का सामना नहीं कर सकते, अतः मुझमें भी उन्हें जीतने का उत्साह नहीं है।

**असंशयं स मे शिष्यो मत्पूर्वश्चास्त्रकर्मणि।**
**तरुणः सुकृतैर्युक्त एकायनगतश्च ह ॥१९॥**
**अस्त्राणीन्द्राच्च रुद्राच्च भूयः स समवाप्तवान्।**
**अमर्षितश्च ते राजँस्ततो नामर्षयाम्यहम् ॥२०॥**

निःसन्देह अर्जुन मेरा शिष्य है और सर्वप्रथम उसने मुझसे ही अस्त्रविद्या सीखी है, तथापि वह युवक है और अनेक प्रकार के पुण्यकर्मों से युक्त है। विजय अथवा मृत्यु—इन दोनों में से एक का वरण करने का दृढ़ निश्चय कर चुका है। इसके अतिरिक्त अर्जुन ने देवराज इन्द्र तथा भगवान् शिव से दिव्यास्त्रों [ऐन्द्र-पाशुपतादि] की सम्पूर्ण शिक्षासहित उपलब्धि की है, एवं तुमने अपने स्वार्थपूर्ण अनैतिक व्यापारों व व्यवहारों से अर्जुन को अत्यन्त क्रुद्ध किया हुआ है अतः मैं अपने किसी कार्य [अनुचित कार्य] से उसे और क्रुद्ध नहीं करना चाहता।

**स चापक्रम्यतां युद्धाद् येनोपायेन शक्यते।**
**अपनीते ततः पार्थे धर्मराजो जितस्त्वया ॥२१॥**

इसलिए जिस उपाय से भी सम्भव हो, तुम अर्जुन को युद्धभूमि से दूर हटा दो। कुन्तीपुत्र अर्जुन के रणभूमि से हट जाने पर समझ लो कि तुमने धर्मराज को जीत लिया।

सञ्जय उवाच

**सान्तरं तु प्रतिज्ञाते राज्ञो द्रोणेन निग्रहे।**
**गृहीतं तममन्यन्त तव पुत्राः सुबालिशाः ॥२२॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! द्रोणाचार्य ने शर्त के साथ जब राजा युधिष्ठिर को पकड़ लेने की प्रतिज्ञा कर ली, तब आपके मूर्ख पुत्र उन्हें बन्दी हुआ ही मानने लगे।

**पाण्डवेषु च सापेक्षं द्रोणं जानाति ते सुतः।**
**ततः प्रतिज्ञास्थैर्यार्थं स मन्त्रो बहुलीकृतः ॥२३॥**

आपका पुत्र दुर्योधन यह जानता था कि द्रोणाचार्य पाण्डवों के प्रति पक्षपात रखते हैं, अतः उसने उनकी प्रतिज्ञा को स्थिर रखने के लिए उस गुप्त बात को भी लोगों में फैला दिया।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥**

# तृतीयोऽध्यायः

## अर्जुन का युधिष्ठिर को समाश्वासन, द्रोणाचार्य का पराक्रम और अर्जुन की विजय

सञ्जय उवाच

**तत्तु सर्वं यथान्यायं धर्मराजेन भारत।**
**आप्तैराशु परिज्ञातं भारद्वाजचिकीर्षितम् ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—भरतभूषण! द्रोणाचार्य क्या करना चाहते हैं, धर्मराज युधिष्ठिर ने शीघ्र ही अपने विश्वसनीय गुप्तचरों द्वारा यथायोग्य सभी बातें पूर्णरूप से जान लीं।

**ततः सर्वान् समानाय्य भ्रातॄनन्यांश्च सर्वशः।**
**अब्रवीद् धर्मराजस्तु धनञ्जयमिदं वचः ॥२॥**

तब धर्मराज युधिष्ठिर ने अपने सब भाइयों और दूसरे राजाओं को सब ओर से बुलवाकर धनञ्जय अर्जुन से यह बात कही—

युधिष्ठिर उवाच

**श्रुतं ते पुरुषव्याघ्र द्रोणस्याद्य चिकीर्षितम्।**
**यथा तन्न भवेत् सत्यं तथा नीतिर्विधीयताम् ॥३॥**

**युधिष्ठिर ने कहा**—पुरुषसिंह! आज द्रोणाचार्य क्या करना चाहते हैं, यह तुमने सुना ही होगा, अतः तुम ऐसी नीति अपनाओ, जिससे उनकी इच्छा पूर्ण न हो।

**सान्तरं हि प्रतिज्ञातं द्रोणेनामित्रकर्षिणा।**
**तच्चान्तरं महेष्वास त्वयि तेन समाहितम् ॥४॥**

शत्रुनाशक द्रोणाचार्य ने कुछ शर्त रखकर प्रतिज्ञा की है। महाधनुर्धर अर्जुन! वह शर्त उन्होंने आप पर ही डाल रखी है।

**स त्वमद्य महाबाहो युध्यस्व मदनन्तरम्।**
**यथा दुर्योधनः कामं नेमं द्रोणादवाप्नुयात् ॥५॥**

अतः महाबाहो! आज तुम मेरे समीप रहकर ही युद्ध करो, जिससे दुर्योधन द्रोणाचार्य द्वारा अपने इस मनोरथ को पूर्ण न करा सके।

अर्जुन उवाच

**यथा मे न वधः कार्य आचार्यस्य कदाचन।**
**तथा तव परित्यागो न मे राजंश्चिकीर्षितः ॥६॥**

**अर्जुन बोले**—राजन्! जैसे मेरे लिए द्रोणाचार्य का किसी भी अवस्था में वध करना योग्य नहीं है, वैसे ही आपका परित्याग भी मुझे अभीष्ट नहीं है।

**प्रपतेद् द्यौः सनक्षत्रा पृथिवी शकली भवेत्।**
**न त्वां द्रोणो निगृह्णीयाज्जीवमाने मयि ध्रुवम् ॥७॥**

नक्षत्रोंसहित आकाश फट पड़े और पृथिवी के टुकड़े-टुकड़े हो जाएँ तो भी मेरे जीते-जी द्रोणाचार्य आपको पकड़ नहीं सकते, यह ध्रुव सत्य है।

**यदि तस्य रणे साह्यं कुरुते वज्रभृत् स्वयम्।**
**विष्णुर्वा सहितो देवैर्न त्वां प्राप्स्यत्यसौ मृधे ॥८॥**
**मयि जीवति राजेन्द्र न भयं कर्तुमर्हसि।**
**द्रोणादस्त्रभृतां श्रेष्ठात् सर्वशस्त्रभृतामपि ॥९॥**

हे राजेन्द्र! यदि युद्धभूमि में साक्षात् वज्रधारी इन्द्र अथवा समस्त देवताओंसहित विष्णु भी आकर दुर्योधन की सहायता करें, तो भी मेरे जीते-जी वह आपको पकड़ नहीं सकेगा, इसलिए आपको सम्पूर्ण

अस्त्र-शस्त्र धारियों में श्रेष्ठ द्रोणाचार्य से भयभीत नहीं होना चाहिए।

सञ्जय उवाच

**ततः शंखाश्च भेर्यश्च मृदङ्गाश्चानकैः सह।**
**प्रावाद्यन्त महाराज पाण्डवानां निवेशने ॥१०॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज ! तत्पश्चात् पाण्डवों के शिबिर में शंख, भेरी, मृदङ्ग और आणक आदि बाजे बजने लगे।

**श्रुत्वा शंखस्य निर्घोषं पाण्डवस्य महौजसः।**
**त्वदीयेष्वप्यनीकेषु वादित्राण्यभिजघ्निरे ॥११॥**

महातेजस्वी पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर की सेना में वह शंखध्वनि सुनकर आपकी सेना में भी भाँति-भाँति के बाजे बजने लगे।

**ततो व्यूढान्यनीकानि तव तेषां च भारत।**
**शनैरुपेयुरन्योन्यं योध्यमानानि संयुगे ॥१२॥**

भरतभूषण ! तत्पश्चात् आपकी और उनकी भी सेनाएँ व्यूहबद्ध होकर धीरे-धीरे युद्ध के लिए एक-दूसरे के समीप आने लगीं।

**ततः प्रववृते युद्धं तुमुलं लोमहर्षणम्।**
**पाण्डवानां कुरूणां च द्रोणपाञ्चाल्ययोरपि ॥१३॥**

तब कौरवों तथा पाण्डवों और द्रोणाचार्य एवं धृष्टद्युम्न में रोमाञ्चकारी भयंकर युद्ध होने लगा।

**यतमानाः प्रयत्नेन द्रोणानीकविशातने।**
**न शेकुः सृञ्जया युद्धे तद्धि द्रोणेन पालितम् ॥१४॥**

सृंजय योद्धा उस संग्राम में द्रोणाचार्य की सेना का विनाश करने के लिए यत्नपूर्वक चेष्टा करने लगे परन्तु सफल न हो सके, क्योंकि वह सेना आचार्य द्रोण द्वारा भली-भाँति सुरक्षित थी।

**तथैव तव पुत्रस्य रथोदाराः प्रहारिणः।**
**न शेकुः पाण्डवीं सेनां पाल्यमानां किरीटिना ॥१५॥**

इसी प्रकार आपके पुत्र की सेना के उदार महारथी, जो प्रहार करने में कुशल थे, पाण्डव सेना को परास्त न कर सके, क्योंकि किरीटधारी अर्जुन उसकी रक्षा कर रहे थे।

**ततः स पाण्डवानीके जनयन् सुमहद् भयम्।**
**व्यचरत् पृतनां द्रोणो दहन् कक्षमिवानलः ॥१६॥**

राजन् ! तब द्रोणाचार्य पाण्डव-दल में महान् भय उत्पन्न करते और घास-फूँस के समान सारी सेना को जलाते हुए सब ओर विचरणे लगे।

**तस्य विद्युदिवाभ्रेषु चापं हेमपरिष्कृतम्।**
**भ्रमद्रथाम्बुदे चास्मिन् दृश्यते स्म पुनः पुनः ॥१७॥**

उनके घूमते हुए रथरूपी मेघमण्डल में सुवर्ण-विभूषित धनुष विद्युत् के समान बारम्बार प्रकाशित दिखाई देता था।

**स वीरः सत्यवान् प्राज्ञो धर्मनित्यः सदा पुनः।**
**युगान्तकालवद् घोरां रौद्रां प्रावर्तयन्नदीम् ॥१८॥**

उन सत्यपरायण परम बुद्धिमान् तथा सदा धर्म में तत्पर रहनेवाले वीर द्रोणाचार्य ने उस युद्धभूमि में प्रलयकाल के समान अत्यन्त भयंकर रक्त की नदी बहा दी।

**ततो युधिष्ठिरानीकमुद्धतार्णवनिःस्वनम्।**
**त्वदीयमवधीत् सैन्यं सम्प्रद्रुतमहारथम् ॥१९॥**

उधर उत्ताल तरंगों से युक्त महासागर की भाँति गर्जना करती हुई युधिष्ठिर की वाहिनी आपकी सेना का संहार करने लगी। इससे कौरवसेना के बड़े-बड़े महारथी भाग खड़े हुए।

**तत्प्रभग्नं बलं दृष्ट्वा शत्रुभिर्भृशमर्दितम्।**
**अलं द्रुतेन वः शूरा इति द्रोणोऽभ्यभाषत ॥२०॥**

शत्रुओं द्वारा अच्छी प्रकार रौंदी गई आपकी सेना को भागती देख आचार्य द्रोण ने कहा—"शूर-वीरो ! तुम भागो मत तुम्हारे भागने से कोई लाभ नहीं होगा।"

**ततः शोणहयः क्रुद्धश्चतुर्दन्त इव द्विपः।**
**प्रविश्य पाण्डवानीकं युधिष्ठिरमुपाद्रवत् ॥२१॥**

ततः=सैनिकों से ऐसा कहकर लाल घोड़ोंवाले द्रोणाचार्य ने क्रुद्ध हो चार दाँतोंवाले गजराज के समान पाण्डवसेना में घुसकर युधिष्ठिर पर आक्रमण किया।

**तमाविध्यच्छितैर्बाणैः कङ्कपत्रैर्युधिष्ठिरः।**
**तस्य द्रोणो धनुश्छित्त्वा तं द्रुतं समुपाद्रवत् ॥२२॥**

युधिष्ठिर ने गिद्ध के पंखों के रंग के पैने बाणों द्वारा द्रोणाचार्य को बींध डाला। तब आचार्य द्रोण ने भी उनका धनुष काटकर बड़े वेग से उनपर आक्रमण किया।

**चक्ररक्षः कुमारस्तु पाञ्चालानां यशस्करः ।**
**दधार द्रोणमायान्तं वेलेव सरितां पतिम् ॥२३॥**

उस समय पाञ्चालों के यश को बढ़ानेवाले कुमार ने, जो युधिष्ठिर के रथचक्र की रक्षा कर रहा था, आते हुए द्रोणाचार्य को उसी प्रकार रोक दिया, जैसे तटभूमि समुद्र को रोक देती है ।

**द्रोणं निवारितं दृष्ट्वा कुमारेण द्विजर्षभम् ।**
**सिंहनादरवो ह्यासीत् साधु साध्विति भाषितम् ॥२४**

कुमार के द्वारा द्विजश्रेष्ठ आचार्य द्रोण को रोका गया देख पाण्डवसेना में जोर-जोर से सिंहनाद होने लगा और सब लोग कहने लगे—"बहुत अच्छा, वाह-वाह !"

**तं शूरमार्यव्रतिनं मन्त्रास्त्रेषु कृतश्रमम् ।**
**चक्ररक्षं परामृद्नात् कुमारं द्विजपुङ्गवः ॥२५॥**

परन्तु द्विजश्रेष्ठ द्रोणाचार्य ने शूरवीर, आर्यव्रती और मन्त्रास्त्र-विद्या में परिश्रम किये चक्र-रक्षक कुमार को परास्त कर दिया ।

**स मध्यं प्राप्य सेनायाः सर्वाः परिचरन् दिशः ।**
**तव सैन्यस्य गोप्ताऽऽसीद् भारद्वाजो द्विजर्षभः ॥२६॥**

हे राजन् ! भरद्वाजनन्दन विप्रवर द्रोणाचार्य आपकी सेना के संरक्षक थे । वे पाण्डवसेना के मध्य में घुसकर सम्पूर्ण दिशाओं में विचरने लगे ।

**व्यक्षोभयद् रणे योधान् यथा मुख्यमभिद्रवन् ।**
**अभ्यवर्तत सम्प्रेप्सुः कुन्तीपुत्रं युधिष्ठिरम् ॥२७॥**

राजन् ! उन्होंने युद्धभूमि में मुख्य-मुख्य योद्धाओं पर आक्रमण कर उन्हें क्षोभ में डाल दिया और कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर को पकड़ने के लिए उनपर वेग से धावा किया ।

**ततो विराटद्रुपदौ केकयाः सात्यकिः शिबिः ।**
**व्याघ्रदत्तश्च पाञ्चाल्यः सिंहसेनश्च वीर्यवान् ॥२८॥**
**एते चान्ये च बहवः परीप्सन्तो युधिष्ठिरम् ।**
**आववुस्तस्य पन्थानं किरन्तः सायकान् बहून् ॥२९॥**

यह देख विराट, द्रुपद, केकय, सात्यकि, शिबि, पाञ्चालदेशीय व्याघ्रदत्त और पराक्रमशाली सिंहसेन—ये तथा अन्य भी बहुत-से नरेश युधिष्ठिर की रक्षा के लिए बहुत-से सायकों की वर्षा करते हुए द्रोणाचार्य का मार्ग रोककर खड़े हो गये ।

**तान् प्रमथ्य शरव्रातैः पाण्डवानां महारथान् ।**
**युधिष्ठिररथाभ्याशे तस्थौ मृत्युरिवान्तकः ॥३०॥**

उन पाण्डव महारथियों को अपने बाणसमूह से मथित करके द्रोणाचार्य विनाशकारी यमराज के समान युधिष्ठिर के समीप खड़े हो गये ।

**ततोऽभवन्महाशब्दो राजन् यौधिष्ठिरे बले ।**
**हतो राजेति योधानां समीपस्थे यतव्रते ॥३१॥**

राजन् ! जब नियम एवं व्रत का पालन करनेवाले द्रोणाचार्य युधिष्ठिर के अति निकट पहुँच गये, तब उनकी सेना के सैनिकों में महान् हाहाकार मच गया । सब लोग कहने लगे—"हाय, राजा मारे गये ! "

**अब्रुवन् सैनिकास्तत्र दृष्ट्वा द्रोणस्य विक्रमम् ।**
**अद्य राजा धार्तराष्ट्रः कृतार्थो वै भविष्यति ॥३२॥**

वहाँ द्रोणाचार्य का पराक्रम देख कौरव-सैनिक कहने लगे—"आज राजा दुर्योधन अवश्य कृतार्थ हो जाएँगे ।

**अस्मिन् मुहूर्ते द्रोणस्तु पाण्डवं गृह्य हर्षितः ।**
**आगमिष्यति नो नूनं धार्तराष्ट्रस्य संयुगे ॥३३॥**

"इस मुहूर्त में द्रोणाचार्य युद्धभूमि में निश्चय ही राजा युधिष्ठिर को पकड़कर बड़े हर्ष के साथ हमारे राजा दुर्योधन के पास ले आएँगे ।"

**ततः किरीटी सहसा द्रोणानीकमुपाद्रवत् ।**
**छादयन्निषुजालेन महता मोहयन्निव ॥३४॥**

तभी किरीटधारी अर्जुन ने सहसा द्रोणाचार्य की सेना पर आक्रमण किया । वे अपने बाण-समूह से द्रोणाचार्य को मोह में डालते हुए-से आच्छादित करने लगे ।

**नादृश्यत तदा राजँस्तत्र किंचन संयुगे ।**
**बाणान्धकारे महति कृते गाण्डीवधन्वना ॥३५॥**

राजन् ! उस युद्धभूमि में गाण्डीवधारी अर्जुन ने बाणों के द्वारा महान् अन्धकार फैला दिया था, उसमें कुछ भी दिखाई नहीं देता था ।

**सूर्ये चास्तमनुप्राप्ते तमसा चाभिसंवृते ।**
**नाज्ञायत तदा शत्रुर्न सुहृन्न च कश्चन ॥३६॥**

सूर्यदेव अस्ताचल को चले गये, समस्त संसार अन्धकार से व्याप्त हो गया, उस समय न कोई शत्रु पहचाना जाता था और न मित्र ।

ततोऽवहारं चक्रुस्ते द्रोणदुर्योधनादयः ।
तान् विदित्वा पुनस्त्रस्तानयुद्धमनसः परान् ।।३७।।
स्वान्यनीकानि बीभत्सुः शनकैरवहारयत् ।
ततोऽभितुष्टुवुः पार्थं प्रहृष्टाः पाण्डुसृञ्जयाः ।।३८।।

तब द्रोणाचार्य और दुर्योधन आदि ने अपनी सेना को पीछे लौटा लिया । शत्रुओं का मन अब युद्ध से हट गया है और वे बहुत डर गये हैं, यह जानकर अर्जुन ने भी धीरे-धीरे अपनी सेनाओं को रणभूमि से हटा लिया । उस समय हर्ष में भरे हुए पाण्डव और सृञ्जय कुन्तीकुमार युधिष्ठिर का गुणगान करने लगे ।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि तृतीयोऽध्यायः ।।३।।**

# चतुर्थोऽध्याय:

## संशप्तकों की अर्जुन से युद्ध करने की प्रतिज्ञा और युधिष्ठिर को पकड़ने के लिए द्रोणाचार्य का प्रबल पुरुषार्थ

सञ्जय उवाच

**कृत्वावहारं सैन्यानां द्रोणः परमदुर्मनाः ।**
**दुर्योधनमभिप्रेक्ष्य सव्रीडमिदमब्रवीत् ।।१।।**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! सेनाओं को युद्धभूमि से लौटाकर द्रोणाचार्य मन-ही-मन अत्यन्त दुःखी हो दुर्योधन की ओर देखते हुए लज्जित होकर बोले—

द्रोण उवाच

**उक्तमेतन्मया पूर्वं न तिष्ठति धनञ्जये ।**
**शक्यो ग्रहीतुं संग्रामे देवैरपि युधिष्ठिरः ।।२।।**

**द्रोणाचार्य बोले**—राजन् ! मैंने पहले ही कह दिया था कि अर्जुन के रहते हुए सम्पूर्ण देवता भी युद्ध में युधिष्ठिर को नहीं पकड़ सकते ।

**इति तद् वः प्रयततां कृतं पार्थेन संयुगे ।**
**मा विशङ्कीर्वचो मह्यमजेयौ कृष्णपाण्डवौ ।।३।।**

तुम सब लोगों के प्रयत्न करने पर भी युद्धभूमि में अर्जुन ने मेरे पूर्वोक्त कथन को सत्य कर दिखाया है । तुम मेरी बात पर शङ्का मत करो । वास्तव में श्रीकृष्ण और अर्जुन युद्ध में मेरे लिए अजेय हैं ।

**अपनीते तु योगेन केनचिच्छ्वेत वाहने ।**
**तत एष्यति मे राजन् वशमेष युधिष्ठिरः ।।४।।**

राजन् ! यदि किसी उपाय से श्वेतवाहन अर्जुन दूर हटा दिये जाएँ तो ये राजा युधिष्ठिर मेरे वश में आ जाएँगे ।

**कश्चिदाहूय तं संख्ये देशमन्यं प्रकर्षतु ।**
**तमजित्वा न कौन्तेयो निवर्तेत कथञ्चन ।।५।।**

यदि कोई वीर अर्जुन को युद्ध के लिए ललकारकर खींच ले जाए तो वह कुन्तीपुत्र उसे परास्त किये बिना किसी प्रकार नहीं लौट सकता ।

**एतस्मिन्नन्तरे शून्ये धर्मराजमहं नृप ।**
**ग्रहीष्यामि चमूं भित्वा धृष्टद्युम्नस्य पश्यतः ।।६।।**

हे राजन् ! इस सूने अवसर में मैं धृष्टद्युम्न के देखते-देखते पाण्डव-सेना को विदीर्ण करके धर्मराज युधिष्ठिर को अवश्य पकड़ लूँगा ।

**अर्जुनेन विहीनस्तु यदि नोत्सृजते रणम् ।**
**मामुपायान्तमालोक्य ग्रहीतं विद्धि पाण्डवम् ।।७।।**

अर्जुन से रहित होने पर यदि पाण्डवनन्दन युधिष्ठिर मुझे निकट आते देख युद्धभूमि को छोड़कर भाग नहीं जाएँगे तो तुम निश्चय समझो, वे मेरी पकड़ में आ जाएँगे ।

सञ्जय उवाच

**द्रोणस्य तद् वचः श्रुत्वा त्रिगर्ताधिपतिस्तदा ।**
**भ्रातृभिः सहितो राजन्निदं वचनमब्रवीत् ।।८।।**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! द्रोणाचार्य का यह वचन सुनकर उस समय भाइयोंसहित त्रिगर्तराज सुशर्मा ने इस प्रकार कहा—

**वयं विनिकृता राजन् सदा गाण्डीवधन्वना ।**
**अनागःस्वपि चागस्तत् कृतमस्मासु तेन वै ।।९।।**

"महाराज ! गाण्डीवधारी अर्जुन ने सदा हम लोगों का अपमान किया है । यद्यपि हम सदा निरपराध रहे हैं तो भी उसके द्वारा सर्वदा हमारे प्रति अपराध किया गया है ।

**ते वयं स्मरमाणास्तान् विनिकारान् पृथग्विधान् ।**
**क्रोधाग्निना दह्यमाना न शेमहि सदा निशि ।।१०।।**

"हम विभिन्न प्रकारों से किये गये उन अपराधों

को याद करके क्रोधाग्नि से जलते रहते हैं और रात्रि में हमें कभी निद्रा नहीं आती।

**स नो दिष्टयास्त्रसम्पन्नश्चक्षुर्विषयमागतः।**
**कर्तारः स्म वयं कर्म यच्चिकीर्षाम हृद्गतम् ॥११॥**

"अब हमारे सौभाग्य से अर्जुन स्वयं ही अस्त्र-शस्त्र धारण करके हमारी आँखों के सामने आ गये हैं, अतः हम मन-ही-मन जो-कुछ करना चाहते थे, वह प्रतिशोधात्मक कार्य अवश्य करेंगे।

**भवतश्च प्रियं यत्स्यादस्माकं च यशस्करम्।**
**वयमेनं हनिष्यामो निकृष्यायोधनाद् बहिः ॥१२॥**

"उससे आपका तो प्रिय होगा ही, हम लोगों की कीर्ति भी बढ़ेगी। हम इसे युद्धभूमि से बाहर खींच ले जाएँगे और मार डालेंगे।

**अद्यास्त्वनर्जुना भूमिरत्रिगर्ताथ वा पुनः।**
**सत्यं ते प्रतिजानीमो नैतन्मिथ्या भविष्यति ॥१३॥**

"हम आपके सामने यह बात सत्य प्रतिज्ञापूर्वक कहते हैं कि आज यह भूमि या तो अर्जुन से सूनी हो जाएगी अथवा त्रिगर्तों में से कोई इस पृथिवी पर नहीं रह जाएगा। मेरा यह कथन कभी झूठा नहीं होगा।"

**परिणाम्य निशां तां तु भारद्वाजो महारथः।**
**उक्त्वा सुबहु राजेन्द्र वचनं वै सुयोधनम् ॥१४॥**
**विधाय योगं पार्थेन संशप्तकगणैः सह।**
**निष्क्रान्ते च तदा पार्थे संशप्तकवधं प्रति ॥१५॥**
**व्यूढानीकस्ततो द्रोणः पाण्डवानां महाचमूम्।**
**अभ्ययाद् भरतश्रेष्ठ धर्मराजजिघृक्षया ॥१६॥**

हे राजेन्द्र! तब महारथी द्रोणाचार्य ने वह रात बिताकर दुर्योधन से बहुत-कुछ बातें कहीं और संशप्तकों के साथ अर्जुन के युद्ध का योग लगा दिया। भरतभूषण! जब अर्जुन संशप्तकों का वध करने के लिए निकल गये, तब सेना की व्यूहरचना करके धर्मराज युधिष्ठिर को पकड़ने के लिए द्रोणाचार्य ने पाण्डवों की विशाल सेना पर आक्रमण किया।

**व्यूढं दृष्ट्वा सुपर्णं तु भारद्वाजकृतं तदा।**
**ततो युधिष्ठिरः संख्ये पार्षतं वाक्यमब्रवीत् ॥१७॥**
**ब्राह्मणस्य वशं नाहमियामद्य यथा प्रभो।**
**पारावतसवर्णाश्व तथा नीतिर्विधीयताम् ॥१८॥**

द्रोणाचार्य द्वारा निर्मित गरुड़व्यूह को देखकर युधिष्ठिर ने रणक्षेत्र में धृष्टद्युम्न से इस प्रकार कहा—"कबूतर के समान रंगवाले घोड़ों पर चलनेवाले वीर! आज तुम ऐसी नीति का प्रयोग करो, जिससे मैं उस ब्राह्मण के वश में न पड़ूँ।"

धृष्टद्युम्न उवाच

**द्रोणस्य यतमानस्य वशं नैष्यसि सुव्रत।**
**अहमावारयिष्यामि द्रोणमद्य सहानुगम् ॥१९॥**

**धृष्टद्युम्न ने कहा**—उत्तम व्रत के पालक भूपाल! द्रोणाचार्य कितना ही प्रयत्न क्यों न करें, आप उनके वश में नहीं होंगे। आज मैं सेवकोंसहित द्रोणाचार्य को रोकूँगा।

**मयि जीवति कौरव्य नोद्वेगं कर्तुमर्हसि।**
**न हि शक्तो रणे द्रोणो विजेतुं मां कथञ्चन ॥२०॥**

कुरुनन्दन! मेरे जीवित रहते हुए आपको किसी प्रकार का भय नहीं करना चाहिए। द्रोणाचार्य युद्धभूमि में मुझे किसी प्रकार जीत नहीं सकते।

सञ्जय उवाच

**एवमुक्त्वा किरन् बाणान् द्रुपदस्य सुतो बली।**
**पारावतसवर्णाश्वः स्वयं द्रोणमुपाद्रवत् ॥२१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! ऐसा कहकर कबूतर के समान रंग के घोड़ोंवाले महाबली द्रुपदकुमार ने बाणों का जाल-सा बिछाते हुए स्वयं द्रोणाचार्य पर आक्रमण किया।

**अनिष्टदर्शनं दृष्ट्वा धृष्टद्युम्नमवस्थितम्।**
**क्षणेनैवाभवद् द्रोणो नातिहृष्टमना इव ॥२२॥**

जिसका दर्शन अनिष्ट का सूचक था, उस धृष्टद्युम्न को सामने खड़ा देख द्रोणाचार्य क्षणभर में अत्यन्त दुःखी और उदास हो गये।

**तं तु सम्प्रेक्ष्य पुत्रस्ते दुर्मुखः शत्रुकर्षणः।**
**प्रियं चिकीर्षुर्द्रोणस्य धृष्टद्युम्नमवारयत् ॥२३॥**

राजन्! शत्रुसंहारक आपके पुत्र दुर्मुख ने द्रोणाचार्य को उदास देख धृष्टद्युम्न को आगे बढ़ने से रोक दिया। वह द्रोणाचार्य का प्रिय करना चाहता था।

**स सम्प्रहारस्तुमुलः सुघोरः समपद्यत।**
**पार्षतस्य च शूरस्य दुर्मुखस्य च भारत ॥२४॥**

भरतभूषण ! उस समय शूरवीर धृष्टद्युम्न और दुर्मुख में तुमुल युद्ध होने लगा। धीरे-धीरे उसने भयंकर रूप धारण कर लिया।

**गजाश्वरथयोधानां शरीरौघसमावृता।**
**बभूव पृथिवी राजन् मांसशोणितकर्दमा ॥२५॥**

राजन् ! हाथी, घोड़े और रथ-योद्धाओं की लाशों से ढकी हुई वहाँ की भूमि पर रक्त और मांस की कीच जम गई थी।

**वर्तमाने तथा युद्धे घोररूपे भयंकरे।**
**मोहयित्वा परान् द्रोणो युधिष्ठिरमुपाद्रवत् ॥२६॥**

इस प्रकार जब अत्यन्त भयंकर घोर युद्ध चल रहा था, उस समय शत्रुओं को मोहित करके द्रोणाचार्य ने युधिष्ठिर पर धावा किया।

**ततो युधिष्ठिरो द्रोणं दृष्ट्वाऽन्तिकमुपागतम्।**
**महता शरवर्षेण प्रत्यगृह्लादभीतवत् ॥२७॥**

तब युधिष्ठिर ने द्रोण को अपने समीप आया देख एक निर्भय वीर की भाँति बाणों की बड़ी भारी वर्षा करके उन्हें रोक दिया।

**दृष्ट्वा द्रोणं ततः शूरः सत्यजित् सत्यविक्रमः।**
**युधिष्ठिरमभिप्रेप्सुराचार्यं समुपाद्रवत् ॥२८॥**

आचार्य द्रोण को युधिष्ठिर पर धावा करते देख सत्यपराक्रमी शूरवीर सत्यजित् युधिष्ठिर की रक्षा के लिए द्रोणाचार्य पर टूट पड़ा।

**ततो द्रोणं महेष्वासः सत्यजित् सत्यविक्रमः।**
**अविध्यन्निशिताग्रेण परमास्त्रं विदर्शयन् ॥२९॥**

सत्यपराक्रमी महाधनुर्धर सत्यजित् ने अपने उत्तम अस्त्र का प्रदर्शन करते हुए तीखी धारवाले एक बाण से द्रोणाचार्य को घायल कर दिया।

**तस्याथ सारथेः पञ्च शरान् सर्पविषोपमान्।**
**अमुञ्चदन्तकप्रख्यान् सम्मुमोहास्य सारथिः ॥३०॥**

फिर उनके सारथि पर सर्पविष एवं यमराज के समान भयंकर पाँच बाणों का प्रहार किया। उन बाणों की चोट से द्रोणाचार्य का सारथि मूर्च्छित हो गया।

**द्रोणस्तु तत्समालोक्य चरितं तस्य संयुगे।**
**मनसा चिन्तयामास प्राप्तकालमरिन्दमः ॥३१॥**

तब शत्रुसंहारक द्रोणाचार्य ने रणक्षेत्र में उसका वह पराक्रम देख मन-ही-मन अपने समयोचित कर्तव्य का चिन्तन किया।

**ततः सत्यजितं तीक्ष्णैर्दशभिर्मर्मभेदिभिः।**
**अविध्यच्छीघ्रमाचार्यश्छित्वास्य सशरं धनुः ॥३२॥**

तब आचार्य ने सत्यजित् के बाणसहित धनुष को काटकर मर्मस्थल को विदीर्ण करनेवाले दस तीखे बाणों द्वारा उसे शीघ्र ही घायल कर दिया।

**स शीघ्रतरमादाय धनुरन्यत् प्रतापवान्।**
**द्रोणमभ्यहनद् राजँस्त्रिंशता कङ्कपत्रिभिः ॥३३॥**

हे राजन् ! धनुष के कट जाने पर प्रतापी वीर सत्यजित् ने शीघ्र ही दूसरा धनुष लेकर कंक की पाँख से युक्त तीस बाणों द्वारा द्रोणाचार्य को गहरी चोट पहुँचाई।

**स तन्न ममृषे द्रोणः पाञ्चाल्येनार्दितो मृधे।**
**ततस्तस्य विनाशाय सत्वरं व्यसृजच्छरान् ॥३४॥**

युद्ध में पाञ्चालराजकुमार सत्यजित् से पीड़ित होकर द्रोणाचार्य उसके पराक्रम को न सह सके, अतः उन्होंने उसके विनाश के लिए तुरन्त ही बाण-वृष्टि आरम्भ कर दी।

**हयान् ध्वजं धनुर्मुष्टिमुभौ च पार्ष्णिसारथी।**
**अवाकिरत् ततो द्रोणः शरवर्षैः सहस्रशः ॥३५॥**

द्रोणाचार्य ने सत्यजित् के घोड़ों, ध्वज, धनुष की मुष्टि और दोनों पार्श्वरक्षकों पर सहस्रों बाणों की वर्षा की।

**तथा संछिद्यमानेषु कार्मुकेषु पुनः पुनः।**
**पाञ्चाल्यः परमास्त्रज्ञः शोणाश्वं समयोधयत् ॥३६॥**

इस प्रकार बारम्बार धनुषों के कट जाने पर भी उत्तम अस्त्रों का ज्ञाता पाञ्चालवीर सत्यजित् लाल घोड़ोंवाले द्रोणाचार्य से युद्ध करता ही रहा।

**स सत्यजितमालोक्य तथोदीर्णं महाहवे।**
**अर्धचन्द्रेण चिच्छेद शिरस्तस्य महात्मनः ॥३७॥**

उस महायुद्ध में सत्यजित् को प्रचण्ड होते देख आचार्य द्रोण ने अर्धचन्द्राकार बाण के द्वारा उस महामनस्वी वीर का सिर धड़ से अलग कर दिया।

**तस्मिन् हते महामात्रे पाञ्चालानां महारथे।**
**अपायाज्जवनैरश्वैर्द्रोणात् त्रस्तो युधिष्ठिरः ॥३८॥**

उस महाबली महारथी पाञ्चालवीर के मारे

जाने पर युधिष्ठिर द्रोणाचार्य से अत्यन्त भयभीत होकर वेगशाली घोड़ों से जुते हुए रथ के द्वारा युद्ध-क्षेत्र से दूर चले गये ।

**पाञ्चालाः केकया मत्स्याश्चेदिकारूषकोसलाः ।**
**युधिष्ठिरमभीप्सन्तो दृष्ट्वा द्रोणमुपाद्रवन् ॥३९॥**

उस समय युधिष्ठिर की रक्षा के लिए पाञ्चाल, केकय, मत्स्य, चेदि कारूप और कोशल देशों के योद्धा द्रोणाचार्य को देखते ही उनपर टूट पड़े ।

**ततो युधिष्ठिरं प्रेप्सुराचार्यः शत्रुपूगहा ।**
**व्यधमत् तान्यनीकानि तूलराशिमिवानलः ॥४०॥**

तब शत्रुसमूह के नाशक द्रोणाचार्य ने युधिष्ठिर को पकड़ने के लिए उन समस्त सैनिकों का वैसे ही संहार कर डाला, जैसे अग्नि रूई के ढेर को जला देती है ।

**तान् दृष्ट्वा चलितान् संख्ये प्रणुन्नान् द्रोणसायकैः ।**
**दुर्योधनोऽब्रवीत् कर्णं प्रहृष्टः प्रहसन्निव ॥४१॥**

उन [पाञ्चाल, चेदि, कोसल आदि] योद्धाओं को युद्ध में द्रोणाचार्य के बाणों से पीड़ित और विचलित होते हुए देख राजा दुर्योधन ने अत्यन्त प्रसन्न होकर कर्ण से हँसते हुए-से कहा—

दुर्योधन उवाच

**पश्य राधेय पाञ्चालान् प्रणुन्नान् द्रोणसायकैः ।**
**सिंहेनेव मृगान् वन्यांस्त्रासितान् दृढधन्वना ॥४२॥**

**दुर्योधन बोला**—राधानन्दन ! देखो, सुदृढ़ धनुर्धारी द्रोणाचार्य के बाणों से ये पाञ्चाल सैनिक उसी प्रकार पीड़ित हो रहे हैं, जैसे सिंह वनचारी मृगों को त्रस्त कर देता है ।

**नैते जातु पुनर्युद्धमीहेयुरिति मे मतिः ।**
**यथा तु भग्ना द्रोणेन वातेनेव महाद्रुमाः ॥४३॥**

मेरा तो ऐसा विश्वास है कि ये फिर कभी युद्ध की इच्छा नहीं करेंगे । जैसे वायु बड़े-बड़े वृक्षों को उखाड़ फेंकती हैं, वैसे ही द्रोणाचार्य ने युद्ध में इनके पाँव उखाड़ दिये हैं ।

**एष भीमो महाक्रोधी हीनः पाण्डवसृञ्जयैः ।**
**मदीयैरावृतो योधैः कर्ण नन्दयतीव माम् ॥४४॥**

यह महाक्रोधी भीमसेन पाण्डव तथा सृञ्जयों से रहित हो मेरे योद्धाओं से घिर गया है । कर्ण ! इस दशा में भीमसेन मुझे आनन्दित-सा कर रहा है ।

**व्यक्तं द्रोणमयं लोकमद्य पश्यति दुर्मतिः ।**
**निराशो जीवितान्नूनमद्य राज्याच्च पाण्डवः ॥४५॥**

निश्चय ही आज अपने जीवन और राज्य से निराश हो यह दुर्बुद्धि पाण्डुपुत्र सारे संसार को द्रोणमय ही देख रहा होगा ।

कर्ण उवाच

**नैष जातु महाबाहुर्जीवन्नाहवमुत्सृजेत् ।**
**न चेमान् पुरुषव्याघ्र सिंहनादान् सहिष्यते ॥४६॥**

**कर्ण ने कहा**—राजन् ! यह महाबाहु भीमसेन जीते-जी कभी युद्ध से पीछे नहीं हट सकता । पुरुषसिंह ! तुम्हारे सैनिक जो ये सिंहनाद कर रहे हैं, इन्हें भीमसेन कभी नहीं सहेगा ।

**न चापि पाण्डवा युद्धे भज्येरन्निति मे मतिः ।**
**शूराश्च बलवन्तश्च कृतास्त्रा युद्धदुर्मदाः ॥४७॥**

पाण्डव शूरवीर, बलवान्, अस्त्रविद्या में निपुण और युद्ध में उन्मत्त होकर लड़नेवाले हैं । ये युद्धक्षेत्र से कभी भाग नहीं सकते, ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है ।

**विषाग्निद्यूतसंक्लेशान् वनवासं च पाण्डवाः ।**
**स्मरमाणा न हास्यन्ति संग्राममिति मे मतिः ॥४८॥**

पाण्डव तुम्हारे द्वारा दिये हुए विष, अग्निदाह, जुए के कष्टों और वनवास को याद करके कभी युद्धभूमि नहीं छोड़ेंगे, ऐसी मेरी दृढ़ धारणा है ।

**निवृत्तो हि महाबाहुरमितौजा वृकोदरः ।**
**वरान् वरान् हि कौन्तेयो रथोदारान् हनिष्यति ॥४९॥**

अमिततेजस्वी महाबाहु कुन्तीकुमार वृकोदर इधर ही लौट रहे हैं । वे बड़े-बड़े उदार महारथियों को चुन-चुनकर मारेंगे ।

**तमेनमनुवर्तन्ते सात्यकिप्रमुखा रथाः ।**
**पाञ्चालाः केकया मत्स्याः पाण्डवाश्च विशेषतः ॥५०॥**

देखो, भीमसेन के पीछे सात्यकि आदि महारथी तथा पाञ्चाल, केकय, मत्स्य और विशेषतः पाण्डव योद्धा भी आ रहे हैं ।

**असंशयं कृतास्त्राश्च पर्याप्ताश्चापि वारणे ।**
**अतिभारमहं मन्ये भारद्वाजे समाहितम् ॥५१॥**

इसमें सन्देह नहीं कि ये सभी योद्धा अस्त्र-विद्या में निपुण और द्रोणाचार्य की गति को रोकने में

समर्थ हैं। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि इस समय भरद्वाजनन्दन द्रोणाचार्य पर बहुत बड़ा भार आ पड़ा है।

**शीघ्रमनुगमिष्यामो यत्र द्रोणो व्यवस्थितः।**
**कोका इव महानागं मा वै हन्युर्यतव्रतम् ॥५२॥**

अतः हम लोग शीघ्र वहाँ चलें, जहाँ द्रोणाचार्य खड़े हैं। कहीं ऐसा न हो कि कुछ भेड़िये [जैसे पाण्डव सैनिक] महान् गजराज-जैसे व्रतधारी द्रोणाचार्य का वध कर डालें!

सञ्जय उवाच

**राधेयस्य वचः श्रुत्वा राजा दुर्योधनस्ततः।**
**भ्रातृभिः सहितो राजन् प्रायाद् द्रोणरथं प्रति ॥५३॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज! राधानन्दन कर्ण की बात सुनकर राजा दुर्योधन अपने भाइयों के साथ द्रोणाचार्य के रथ की ओर चल दिया।

**तत्रारावो महानासीदेकं द्रोणं जिघांसताम्।**
**पाण्डवानां निवृत्तानां नानावर्णैर्हयोत्तमैः ॥५४॥**

वहाँ नाना प्रकार के रंगवाले श्रेष्ठ घोड़ों से जुते हुए रथों पर आरूढ़ [सवार] एकमात्र द्रोणाचार्य को मार डालने की इच्छा से लौटे हुए पाण्डव-सैनिकों का महान् कोलाहल प्रकट हो रहा था।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥**

# पञ्चमोऽध्यायः

## भीमसेन का भगदत्त से युद्ध, अर्जुन द्वारा संशप्तकों का संहार और हाथीसहित भगदत्त का वध

धृतराष्ट्र उवाच

**तेष्वेवं संनिवृत्तेषु प्रत्युद्यातेषु भागशः।**
**कथं युयुधिरे पार्था मामकाश्च तरस्विनः ॥१॥**

**धृतराष्ट्र ने पूछा**—सञ्जय! इस प्रकार जब सैनिक पृथक्-पृथक् युद्ध के लिए लौटे और कौरव-योद्धा आगे बढ़कर सामना करने के लिए उद्यत हुए, उस समय मेरे और कुन्ती के पराक्रमी पुत्रों ने आपस में किस प्रकार युद्ध किया?

सञ्जय उवाच

**तथा तेषु निवृत्तेषु प्रत्युद्यातेषु भागशः।**
**स्वयमभ्यद्रवद् भीमं नागानीकेन ते सुतः ॥२॥**

**सञ्जय बोले**—राजन्! इस प्रकार जब पाण्डव-सैनिक पृथक्-पृथक् युद्ध के लिए लौटे और कौरव-योद्धा आगे बढ़कर सामना करने के लिए उद्यत हुए, उस समय आपके पुत्र दुर्योधन ने हाथियों की सेना साथ लेकर स्वयं ही भीमसेन पर आक्रमण किया।

**स नाग इव नागेन गोवृषेणेव गोवृषः।**
**समाहूतः स्वयं राज्ञा नागानीकमुपाद्रवत् ॥३॥**

जैसे हाथी से हाथी और साँड से साँड भिड़ जाता है, उसी प्रकार राजा दुर्योधन के ललकारने पर भीमसेन स्वयं ही हाथियों की सेना पर टूट पड़े।

**स युद्धकुशलः पार्थो बाहुवीर्येण चान्वितः।**
**अभिनत् कुञ्जरानीकमचिरेणैव मारिष ॥४॥**

आदरणीय नरेश! कुन्तीपुत्र भीमसेन युद्ध में कुशल और बाहुबल से सम्पन्न हैं। उन्होंने थोड़ी ही देर में हाथियों की उस सेना को विदीर्ण कर डाला।

**तथा गजानां कदनं कुर्वाणमनिलात्मजम्।**
**क्रुद्धो दुर्योधनोऽभ्येत्य प्रत्यविध्यच्छितैः शरैः ॥५॥**

इस प्रकार गजसेना का संहार करते हुए पवन-पुत्र भीमसेन के पास आकर क्रोध में भरे हुए दुर्योधन ने उन्हें तीखे बाणों से बींध डाला।

**ततः क्षणेन क्षितिपं क्षतजप्रतिमेक्षणः।**
**क्षयं निनीषुर्निशितैर्भीमो विव्याध पत्रिभिः ॥६॥**

यह देख भीमसेन की आँखें खून के समान लाल हो गईं। उन्होंने क्षणभर में राजा दुर्योधन का नाश करने की इच्छा से पंखयुक्त पैने बाणों द्वारा उसे बींध डाला।

**दुर्योधनं पीड्यमानं दृष्ट्वा भीमेन मारिष।**
**चुक्षोभयिषुरभ्यागादङ्गो मातङ्गमास्थितः ॥७॥**

आर्य! भीमसेन के द्वारा दुर्योधन को पीड़ित होते देख क्षोभ में डालने की इच्छा से मतवाले हाथी

पर बैठे हुए राजा अङ्ग उनका सामना करने के लिए आ गये।

**तमापतन्तं नागेन्द्रमम्बुदप्रतिमस्वनम्।**
**कुम्भान्तरे भीमसेनो नाराचैरार्दयद् भृशम् ॥८॥**

वह गजराज मेघ के समान गर्जना करनेवाला था। उसे अपनी ओर आते देख भीमसेन ने उसके कुम्भस्थल में नाराचों द्वारा गहरी चोट पहुँचाई।

**तस्य कायं विनिर्भिद्य न्यमज्जद् धरणीतले।**
**ततः पपात द्विरदो वज्राहत इवाचलः ॥९॥**

भीमसेन का नाराच[बाण]उस हाथी के शरीर को चीरकर पृथिवी में समा गया। इससे वह गजराज वज्र के मारे हुए पर्वत की भाँति पथिवी पर गिर पड़ा।

**तस्यावर्जितनागस्य म्लेच्छस्याधः पतिष्यतः।**
**शिरश्चिच्छेद भल्लेन क्षिप्रकारी वृकोदरः ॥१०॥**

वह म्लेच्छजातीय राजा अङ्ग हाथी से अलग नहीं हुआ था। उस हाथी के साथ-साथ वह नीचे गिरना ही चाहता था कि शीघ्रकारी भीमसेन ने एक भल्ल के द्वारा उसका सिर काट लिया।

**तस्मिन् निपतिते वीरे सम्प्राद्रवत् सा चमूः।**
**सम्भ्रान्ताश्वद्विपरथा पदातीनवमृद्नती ॥११॥**

उस वीर के धराशायी होते ही उसकी वह सारी सेना भागने लगी। घोड़े, हाथी और रथ सभी घबराहट में पड़कर इधर-उधर चक्कर काटने लगे। वह सेना अपने ही पैदल सैनिकों को रौंदती हुई भाग रही थी।

**तेष्वनीकेषु भग्नेषु विद्रवत्सु समन्ततः।**
**प्राग्ज्योतिषस्ततो भीमं कुञ्जरेण समाद्रवत् ॥१२॥**

इस प्रकार उन सेनाओं के व्यूह भंग होने और चारों ओर भागने पर प्राग्ज्योतिषपुर के राजा भगदत्त ने अपने हाथी के द्वारा भीमसेन पर आक्रमण किया।

**स नागप्रवरो भीमं सहसा समुपाद्रवत्।**
**चरणाभ्यामथो द्वाभ्यां संहतेन करेण च ॥१३॥**

वह गजराज अपने दो पैरों और सिकोड़ी हुई सूंड के द्वारा सहसा भीमसेन पर टूट पड़ा।

**व्यावृत्तनयनः क्रुद्धः प्रमथन्निव पाण्डवम्।**
**वृकोदररथं साश्वमविशेषमचूर्णयत् ॥१४॥**

उस हाथी के नेत्र सब ओर घूम रहे थे। वह क्रोध में भरकर पाण्डुपुत्र भीमसेन को मानो मथ डालेगा, इस भाव से भीमसेन के रथ की ओर दौड़ा और उसे घोड़ोंसहित पूर्णरूप से तोड़-फोड़ डाला।

**ततः सर्वस्य सैन्यस्य नादः समभवन्महान्।**
**अहो धिङ् निहतो भीमः कुञ्जरेणेति मारिष ॥१५॥**

आर्य! उस समय सारी सेना में बड़े जोर से कोलाहल होने लगा। उस समय सबके मुख से यही बात निकल रही थी—"अहो! इस हाथी ने भीमसेन को मार डाला, यह कितनी बुरी बात है!"

**ततो युधिष्ठिरो राजा हतं मत्वा वृकोदरम्।**
**भगदत्तं सपाञ्चाल्यः सर्वतः समवारयत् ॥१६॥**

उस समय महाराज युधिष्ठिर ने भीमसेन को मारा गया जानकर पाञ्चालदेशीय सैनिकों को साथ ले भगदत्त को चारों ओर से घेर लिया।

**ततः पाण्डवयोधास्ते नागराजं शरैर्द्रुतम्।**
**सिषिचुर्भैरवान् नादान् विनदन्तो जिघांसवः ॥१७॥**

तत्पश्चात् पाण्डव योद्धा उस गजराज को शीघ्रतापूर्वक मार डालने की इच्छा से भैरव गर्जना करते हुए अपने बाणों की वर्षा द्वारा उसे सींचने लगे।

**तमार्जुनिर्द्वादशभिर्युयुत्सुर्दशभिः शरैः।**
**त्रिभिस्त्रिभिर्द्रौपदेया धृष्टकेतुश्च विव्यधुः ॥१८॥**

अर्जुनकुमार अभिमन्यु ने बारह, युयुत्सु ने दस और द्रौपदी के पुत्रों एवं धृष्टकेतु ने तीन-तीन बाणों से भगदत्त के उस हाथी को घायल कर दिया।

**नियन्तुः शिल्पयत्नाभ्यां प्रेरितोऽरिशरार्दितः।**
**परिचिक्षेप तान् नागः स रिपून् सव्यदक्षिणम् ॥१९॥**

महावत के कौशल और प्रयत्न से प्रेरित होकर वह हाथी शत्रुओं के बाणों से पीड़ित होने पर भी उन विपक्षियों [विपक्षी योद्धाओं] को दाएँ-बाएँ उठा-उठाकर फेंकने लगा।

**क्षिप्रं श्येनाभिपन्नानां वायसानामिव स्वनः।**
**बभूव पाण्डवेयानां भृशं विद्रवतां स्वनः ॥२०॥**

जैसे बाज पक्षी के चंगुल में फँसे हुए अथवा

उसके आक्रमण से भयभीत हुए कौओं में शीघ्र ही काँव-काँव का कोलाहल होने लगता है, उसी प्रकार पाण्डव योद्धाओं का आर्तनाद जोर-जोर से सुनाई दे रहा था।

**रजो दृष्ट्वा समुद्धूतं श्रुत्वा च गजनिःस्वनम्।**
**भगदत्ते विकुर्वाणे कौन्तेयः कृष्णमब्रवीत् ॥२१॥**

भगदत्त के विचित्र रूप से युद्ध करते समय वहाँ धूल उड़ती देखकर तथा हाथी के चिंघाड़ने का शब्द सुनकर कुन्तीपुत्र अर्जुन ने श्रीकृष्ण से कहा—

**यथा प्राग्ज्योतिषो राजा गजेन मधुसूदन।**
**त्वरमाणो विनिष्क्रान्तो ध्रुवं तस्यैष निःस्वनः ॥२२॥**

"मधुसूदन! राजा भगदत्त अपने हाथी पर आरूढ़ होकर जिस उतावली के साथ युद्ध के लिए निकले थे, उससे जान पड़ता है, निश्चय ही यह महान् कोलाहल उन्हीं का है।

**इन्द्रादनवरः संख्ये गजयानविशारदः।**
**प्रथमो गजयोधानां पृथिव्यामिति मे मतिः ॥२३॥**

"मेरा तो यह विश्वास है कि वे युद्ध में इन्द्र से कम नहीं हैं। भगदत्त हाथी की सवारी में कुशल तथा गजारोही योद्धाओं में इस पृथिवी पर सबसे प्रधान [प्रथम] हैं।

**सहः शस्त्रनिपातानामग्निस्पर्शस्य चानघ।**
**स पाण्डवबलं सर्वमद्यैको नाशयिष्यति ॥२४॥**

"हे अनघ! वह सम्पूर्ण शस्त्रों के आघात और अग्नि के स्पर्श को भी सह सकनेवाला है। आज वह अकेला ही समस्त पाण्डव-सेना का विनाश कर डालेगा।

**न चावाभ्यामृतेऽन्योऽस्ति शक्तस्तं प्रतिबाधितुम्।**
**त्वरमाणस्ततो याहि यतः प्राग्ज्योतिषाधिपः ॥२५॥**

"हम दोनों के अतिरिक्त और कोई उसे बाधा देने में समर्थ नहीं है, अतः आप शीघ्रतापूर्वक वहीं चलिए, जहाँ प्राग्ज्योतिषनरेश भगदत्त विद्यमान हैं।"

**वचनादथ कृष्णस्तु प्रययौ सव्यसाचिनः।**
**दीर्यते भगदत्तेन यत्र पाण्डववाहिनी ॥२६॥**

सव्यसाची अर्जुन के ऐसा कहने पर श्रीकृष्ण उनके रथ को उस स्थान पर ले चले, जहाँ भगदत्त पाण्डवसेना का संहार कर रहे थे।

**तं प्रयान्तं ततः पश्चादाह्वयन्तो महारथाः।**
**संशप्तकाः समारोहन् सहस्राणि चतुर्दश ॥२७॥**

अर्जुन को भगदत्त की ओर प्रस्थान करते देख पीछे से चौदह सहस्र संशप्तक महारथी उन्हें ललकारते हुए चढ़ आये।

**स तु दोलायमानोऽभूद् द्वैधीभावेन पाण्डवः।**
**वधेन तु नराग्र्याणामकरोत् तां मृषा तदा ॥२८॥**

पाण्डुनन्दन अर्जुन एक बार दुविधा में पड़कर [भगदत्त की ओर जाऊँ या संशप्तकों से युद्ध करूँ] चञ्चल हो गये थे, तथापि नरश्रेष्ठ संशप्तक वीरों के वध का निश्चय करके उन्होंने उस दुविधा को भुला दिया।

**ततः शतसहस्राणि शराणां नतपर्वणाम्।**
**व्यसृजन्नर्जुने राजन् संशप्तकमहारथाः ॥२९॥**

राजन्! तदनन्तर संशप्तक महारथियों ने झुकी हुई गाँठवाले सैकड़ों सहस्रों बाणों की वर्षा की।

**नैव कुन्तीसुतः पार्थो नैव कृष्णो जनार्दनः।**
**न हया न रथो राजन् दृश्यन्ते स्म शरैश्चिताः ॥३०॥**

महाराज! उस समय न तो कुन्तीकुमार अर्जुन, न जनार्दन श्रीकृष्ण, न घोड़े और न रथ ही दिखाई देते थे। सब-के-सब वहाँ बाणों से ढक गये थे।

**तदा मोहमनुप्राप्तः सिष्विदे हि जनार्दनः।**
**ततस्तान्प्रायशः पार्थो ब्रह्मास्त्रेण निजघ्निवान् ॥३१॥**

उस अवस्था में श्रीकृष्ण पसीने-पसीने हो गये। उनपर मोह छा गया। यह देख अर्जुन ने ब्रह्मास्त्र से उन सब वीरों व बाणों को अधिकांश में नष्ट कर दिया।

**शतशः पाणयश्छिन्नाः सेषुज्यातलकार्मुकाः।**
**केतवो वाजिनः सूता रथिनश्चापतन् क्षितौ ॥३२॥**

सैकड़ों भुजाएँ बाण, प्रत्यञ्चा और धनुषसहित कट गईं। ध्वज, घोड़े, सारथि और रथी सभी धराशायी हो गये।

**दृष्ट्वा तत् कर्म पार्थस्य वासवस्येव माधवः।**
**विस्मयं परमं गत्वा प्राञ्जलिस्तमुवाच ह ॥३३॥**

इन्द्र के समान अर्जुन का वह पराक्रम देख श्रीकृष्ण अत्यन्त आश्चर्य में पड़कर हाथ जोड़े हुए बोले—

**कर्मैतत् पार्थ शक्रेण यमेन धनदेन च।**
**दुष्करं समरे यत्ते कृतमद्येति मे मतिः ॥३४॥**

"पार्थ ! मेरा ऐसा विश्वास है कि आज रण-भूमि में तुमने जो कार्य किया है, वह इन्द्र, यम और कुबेर के लिए भी दुष्कर है।

**युगपच्चैव संग्रामे शतशोऽथ सहस्रशः।**
**पतिता एव मे दृष्टाः संशप्तकमहारथाः ॥३५॥**

"इस युद्ध में मैंने सैकड़ों और सहस्रों संशप्तक महारथियों को एक साथ ही गिरते देखा है।"

**संशप्तकाँस्ततो हत्वा भूयिष्ठा ये व्यवस्थिताः।**
**भगदत्ताय याहीति कृष्णं पार्थोऽभ्यनोदयत् ॥३६॥**

इस प्रकार वहाँ खड़े हुए संशप्तक योद्धाओं में से अधिकांश का वध करके अर्जुन ने श्रीकृष्ण से कहा—"अब भगदत्त के पास चलिए।"

**यियासतस्ततः कृष्णः पार्थस्याश्वान् मनोजवान्।**
**सम्प्रैषीद्धेमसंछन्नान् द्रोणानीकाय सत्वरम् ॥३७॥**

तब द्रोणाचार्य की सेना के समीप जाने के इच्छुक अर्जुन के सुवर्णभूषित एवं मन के समान वेगशाली घोड़ों को श्रीकृष्ण ने बड़ी उतावली के साथ द्रोणाचार्य की सेना तक पहुँचने के लिए हाँका।

**तं प्रयान्तं कुरुश्रेष्ठं स्वान् भ्रातॄन् द्रोणतापितान्।**
**सुशर्मा भ्रातृभिः सार्धं युद्धार्थी पृष्ठतोऽन्वयात् ॥३८॥**

द्रोणाचार्य द्वारा सताये हुए अपने भाइयों के पास जाते हुए कुरुश्रेष्ठ अर्जुन को भाइयोंसहित सुशर्मा ने युद्ध की इच्छा से ललकारा और पीछे से उनपर आक्रमण किया।

**ततः श्वेतहयः कृष्णमब्रवीदजितं जयः।**
**एष मां भ्रातृभिः सार्धं सुशर्माऽऽह्वयतेऽच्युत ॥३९॥**

तब श्वेतवाहन अर्जुन ने अपराजित श्रीकृष्ण से इस प्रकार कहा—"हे अच्युत ! भाइयोंसहित यह सुशर्मा मुझे पुनः युद्ध के लिए बुला रहा है।

**दीर्यते चोत्तरेणैव तत् सैन्यं मधुसूदन।**
**द्वैधीभूतं मनो मेऽद्य कृतं संशप्तकैरिदम् ॥४०॥**

"उधर उत्तर दिशा की ओर अपनी सेना का विनाश किया जा रहा है। मधुसूदन ! इन संशप्तकों ने आज मेरे मन को दुविधा में डाल दिया है।

**किं नु संशप्तकान्हन्मि स्वान्रक्षाम्यहितार्दितान्।**
**इति मे त्वं मतं वेत्सि तत्र किं सुकृतं भवेत् ॥४१॥**

"क्या मैं संशप्तकों का वध करूँ अथवा शत्रुओं द्वारा पीड़ित हुए अपने सैनिकों की रक्षा करूँ ? इस प्रकार मेरा मन संकल्प-विकल्प के हिण्डोले में झूल रहा है, यह आप जानते ही हैं। बताइए, अब मेरे लिए क्या करना श्रेष्ठ होगा ?"

**एवमुक्तस्तु दाशार्हः स्यन्दनं प्रत्यवर्तयत्।**
**येन त्रिगर्ताधिपतिः पाण्डवं समुपाह्वयत् ॥४२॥**

अर्जुन के ऐसा कहने पर श्रीकृष्ण ने अपने रथ को उसी ओर लौटाया, जिस ओर त्रिगर्तराज सुशर्मा उन पाण्डुकुमार को युद्ध के लिए ललकार रहा था।

**ततोऽर्जुनः सुशर्माणं विद्ध्वा सप्तभिराशुगैः।**
**ध्वजं धनुस्तथा चास्य क्षुराभ्यां समकृन्तत ॥४३॥**

वहाँ पहुँचकर अर्जुन ने सुशर्मा को सात बाणों से घायल करके दो छुरों द्वारा उसके ध्वज और धनुष को काट डाला।

**त्रिगर्ताधिपतेश्चापि भ्रातरं षड्भिराशुगैः।**
**साश्वंससूतं त्वरितः पार्थः प्रैषीद् यमक्षयम् ॥४४॥**

साथ ही त्रिगर्तराज के भाई को भी छह बाण मारकर अर्जुन ने उसे घोड़ों और सारथिसहित तुरन्त यमलोक भेज दिया।

**ततो भुजगसंकाशां सुशर्मा शक्तिमायसीम्।**
**चिक्षेपार्जुनमादिश्य वासुदेवाय तोमरम् ॥४५॥**

तब सुशर्मा ने भी सर्प के समान आकृतिवाली लोहे की बनी हुई एक शक्ति को अर्जुन पर चलाया और श्रीकृष्ण पर तोमर से प्रहार किया।

**शक्तिं त्रिभिः शरैश्छित्त्वा तोमरं त्रिभिरर्जुनः।**
**सुशर्माणं शरव्रातैर्मोहयित्वा न्यवर्तयत् ॥४६॥**

अर्जुन ने तीन बाणों द्वारा शक्ति और तीन बाणों द्वारा तोमर को काटकर सुशर्मा को अपने बाण-समूह द्वारा मोहित करके पीछे लौटा दिया।

**संवेष्टयन्ननीकानि शरवर्षेण पाण्डवः।**
**सुपर्णपातवद् राजन्नायात् प्राग्ज्योतिषं प्रति ॥४७॥**

राजन् ! अर्जुन ने बाणों की वर्षा से कौरव-सेनाओं को आच्छादित करते हुए गरुड़ के समान वेग से भगदत्त पर आक्रमण किया।

**यथा नलवनं क्रुद्धः प्रभिन्नः षष्टिहायनः ।**
**मृद्नीयात् तद्वदायस्तः पार्थोऽमृद्नाच्चमूं तव ।।४८।।**

जैसे साठ वर्ष का मदस्रावी हाथी क्रोध में भरकर नरकुलों [सरकण्डों] के वन को रौंदकर धूल में मिला देता है, वैसे ही प्रयत्नशील पार्थ ने आपकी सेना को मटियामेट कर दिया ।

**तस्मिन् प्रमथिते सैन्ये भगदत्तो नराधिपः ।**
**सहसा तेन नागेन धनञ्जयमुपाद्रवत् ।।४९।।**

उस कौरव-सेना के मथे जाने पर राजा भगदत्त ने उस सुप्रतीक हाथी के द्वारा सहसा धनञ्जय पर आक्रमण किया ।

**तस्य पार्थो धनुश्छित्त्वा परीवारं निहत्य च ।**
**लालयन्निव राजानं भगदत्तमयोधयत् ।।५०।।**

तब अर्जुन ने राजा भगदत्त का धनुष काटकर उसके अनुचरों को भी मार डाला और लाड़ लड़ाते हुए-से उनके साथ युद्ध आरम्भ किया ।

**सोऽर्करश्मिनिभाँस्तीक्ष्णाँस्तोमरान् वै चतुर्दश ।**
**अप्रेषयत् सव्यसाची द्विधैकैकमथाच्छिनत् ।।५१।।**

भगदत्त ने सूर्य की किरणों के समान तीखे चौदह तोमर चलाये, परन्तु सव्यसाची अर्जुन ने उनमें से प्रत्येक के दो-दो टुकड़े कर डाले ।

**ततो नागस्य तद् वर्म व्यधमत् पाकशासनिः ।**
**शरजालेन महता तद् व्यशीर्यत भूतले ।।५२।।**

तब इन्द्रकुमार अर्जुन ने भारी बाण-वर्षा के द्वारा उस हाथी के कवच को काट डाला, जिससे वह कवच जीर्ण-शीर्ण होकर पृथिवी पर गिर पड़ा ।

**ततश्छत्रं ध्वजं चैव छित्त्वा राज्ञोऽर्जुनः शरैः ।**
**विव्याध दशभिस्तूर्णमुत्स्मयन् पर्वतेश्वरम् ।।५३।।**

तत्पश्चात् अर्जुन ने अपने बाणों द्वारा राजा भगदत्त के छत्र और ध्वज को काटकर मुस्कराते हुए दस बाणों द्वारा तुरन्त ही उस पर्वतेश्वर को बींध डाला ।

**विद्धस्ततोऽतिव्यथितो वैष्णवास्त्रमुदीरयन् ।**
**अभिमन्त्र्याङ्कुशं क्रुद्धो व्यसृजत् पाण्डवोरसि ।।५४।।**

उन बाणों से घायल हो अत्यन्त पीड़ित होकर भगदत्त ने वैष्णवास्त्र प्रकट किया । उसने कुपित हो अपने अंकुश को ही वैष्णवास्त्र से अभिमन्त्रित करके पाण्डुनन्दन अर्जुन की छाती पर छोड़ दिया ।

**विसृष्टं भगदत्तेन तदस्त्रं सर्वघाति वै ।**
**उरसा प्रतिजग्राह पार्थं संच्छाद्य केशवः ।।५५।।**

भगदत्त का छोड़ा हुआ वह अस्त्र सबका विनाश करनेवाला था । श्रीकृष्ण ने अर्जुन को ओट में करके स्वयं ही अपनी छाती पर उसकी चोट सह ली ।

**ततोऽर्जुनं वासुदेवः प्रत्युवाचार्थवद् वचः ।**
**विमुक्तं परमास्त्रेण जहि पार्थ महासुरम् ।।५६।।**

तब श्रीकृष्ण ने अर्जुन से ये रहस्यपूर्ण वचन कहे—"पार्थ ! अब यह महान् असुर उत्कृष्ट अस्त्र से वञ्चित हो गया है, अतः तुम उसे मार डालो ।"

**एवमुक्तस्तदा पार्थः केशवेन महात्मना ।**
**भगदत्तं शितैर्बाणैः सहसा समवाकिरत् ।।५७।।**

महात्मा केशव के ऐसा कहने पर कुन्तीपुत्र अर्जुन उसी समय भगदत्त पर सहसा पैने बाणों की वर्षा करने लगे ।

**ततः पार्थो महाबाहुरसम्भ्रान्तो महामनाः ।**
**कुम्भयोरन्तरे नागं नाराचेन समार्पयत् ।।५८।।**

तदनन्तर महाबाहु महामना पार्थ ने बिना किसी घबराहट के हाथी के कुम्भस्थल में एक नाराच का प्रहार किया ।

**स समासाद्य तं नागं बाणो वज्र इवाचलम् ।**
**अभ्यगात् सह पुङ्खेन वल्मीकमिव पन्नगः ।।५९।।**

वह नाराच उस हाथी के मस्तक पर पहुँचकर उसी प्रकार लगा, जैसे वज्र पर्वत पर चोट करता है । जैसे सर्प बांबी में समा जाता है, उसी प्रकार वह बाण हाथी के कुम्भस्थल में पंखसहित समा गया ।

**स तु विष्टभ्य गात्राणि दन्ताभ्यामवनिं ययौ ।**
**नदन्नार्तस्वनं प्राणानुत्ससर्ज महाद्विपः ।।६०।।**

उस आघात से उस महान् गजराज ने अपने अङ्गों को निश्चेष्ट करके दोनों दाँत धरती पर टेक दिये और आर्तस्वर से चीत्कार करके प्राण त्याग दिये ।

**ततो गाण्डीवधन्वानमभ्यभाषत केशवः ।**
**अयं महत्तरः पार्थ पलितेन समावृतः ।।६१।।**
**वलीसंछन्ननयनः शूरः परमदुर्जयः ।**
**अक्ष्णोरुन्मीलनार्थाय बद्धपट्टो ह्यसौ नृपः ।।६२।।**

हाथी के मारे जाने पर श्रीकृष्ण ने गाण्डीवधारी अर्जुन से कहा—"पार्थ ! यह भगदत्त बहुत बड़ी अवस्था का है। इसके सारे बाल पक गये हैं और ललाट आदि अङ्गों में झुर्रियाँ पड़ जाने के कारण पलकें झपी रहने से इसकी आँखें प्रायः बन्द-सी रहती हैं। यह शूरवीर तथा अत्यन्त दुर्जय है। इसने अपने दोनों नेत्रों को खुला रखने के लिए पलकों को कपड़े की पट्टी से ललाट में बाँध रखा है।"

**देववाक्यात् प्रचिच्छेद शरेण भृशमर्जुनः।**
**छिन्नमात्रेंऽशुके तस्मिन् रुद्धनेत्रो बभूव सः ॥६३॥**

श्रीकृष्ण के कहने से अर्जुन ने बाण मारकर भगदत्त के शिर की पट्टी अत्यन्त छिन्न-भिन्न कर दी। उस पट्टी के कटते ही भगदत्त की आँखें बन्द हो गईं।

**तमोमयं जगन्मेने भगदत्तः प्रतापवान्।**
**ततश्चन्द्रार्धबिम्बेन बाणेन नतपर्वणा ॥६४॥**
**बिभेद हृदयं राज्ञो भगदत्तस्य पाण्डवः।**
**शरासनं शराँश्चैव गतासुः प्रमुमोच सः ॥६५॥**

फिर तो प्रतापी भगदत्त को सारा संसार अन्धकारमय प्रतीत होने लगा। उस समय झुकी हुई गाँठवाले एक अर्धचन्द्राकार बाण द्वारा पाण्डुनन्दन अर्जुन ने राजा भगदत्त के वक्षःस्थल को विदीर्ण कर दिया। हृदय विदीर्ण हो जाने पर उस राजा भगदत्त ने प्राणशून्य हो अपने धनुष-बाण त्याग दिये।

**ततोऽर्जुनोऽस्त्रविच्छैघ्र्यं दर्शयन्नात्मनोऽरिषु।**
**अभ्यवर्षच्छरौघेण कौरवाणामनीकिनीम् ॥६६॥**

भगदत्त के वध के पश्चात् अस्त्रों के ज्ञाता अर्जुन शत्रुओं को अपनी फुर्ती दिखाते हुए कौरव-सेना पर बाण-समूहों की वर्षा करने लगे।

**सा हन्यमाना पार्थेन तव पुत्रस्य वाहिनी।**
**द्वैधीभूता महाराज गङ्गेवासाद्य पर्वतम् ॥६७॥**

महाराज ! अर्जुन द्वारा मारी जाती हुई आपके पुत्र की विशाल सेना उसी प्रकार दो भागों में बँट गई, जैसे गङ्गा किसी विशाल पर्वत के समीप पहुँचकर दो धाराओं में विभक्त हो गई हो।

**द्रोणमेवान्वपद्यन्त केचित् तत्र नरर्षभाः।**
**केचिद् दुर्योधनं राजन्नर्द्यमानाः किरीटिना ॥६८॥**

राजन् ! किरीटधारी अर्जुन द्वारा पीड़ित हो आपकी सेना के कितने ही नरश्रेष्ठ द्रोणाचार्य के पीछे जा छिपे और कितने ही सैनिक दुर्योधन के पास भाग गये।

**न च द्वितीयं व्यसृजत् कुञ्जराश्वनरेषु सः।**
**पृथगेकशरारुग्णा निपेतुस्ते गतासवः ॥६९॥**

हाथी, घोड़ों और मनुष्यों पर अर्जुन दूसरा बाण नहीं छोड़ते थे। वे सब-के-सब पृथक्-पृथक् एक ही बाण से घायल हो प्राणहीन होकर पृथिवी पर गिर पड़ते थे।

**पाण्डवानामनीकानि समासाद्य सहस्रशः।**
**द्रोणेन चरता संख्ये प्रभग्नानि शितैः शरैः ॥७०॥**

उधर युद्धभूमि में विचरते हुए द्रोणाचार्य ने पाण्डव-सेना में प्रविष्ट होकर अपने तीखे बाणों द्वारा सहस्रों सैनिकों के पाँव उखाड़ दिये।

**तेषु प्रमथ्यमानेषु द्रोणेनाद्भुतकर्मणा।**
**पर्यवारयदासाद्य द्रोणं सेनापतिः स्वयम् ॥७१॥**

अद्भुत पराक्रम दिखानेवाले द्रोणाचार्य द्वारा जब उन सेनाओं का मन्थन होने लगा, उस समय स्वयं सेनापति धृष्टद्युम्न ने द्रोण के पास पहुँचकर उन्हें रोका।

**तदद्भुतमभूद् युद्धं द्रोणपाञ्चालयोस्तथा।**
**नैव तस्योपमा काचिदिति मे निश्चिता मतिः ॥७२॥**

वहाँ द्रोणाचार्य और धृष्टद्युम्न में अद्भुत युद्ध हुआ। उस युद्ध की कोई उपमा नहीं दी जा सकती, यह मेरा निश्चित मत है।

**आसीच्छक्त्यासिसम्पातो युद्धमासीत् परश्वधैः।**
**प्रकृष्टमसियुद्धं च बभूव कटुकोदयम् ॥७३॥**

उस युद्ध में शक्ति और खड्गों के घातक प्रहार हो रहे थे। फरसों से मार-काट हो रही थी। तलवार खींचकर उसके द्वारा ऐसा भयंकर युद्ध हो रहा था कि जिसका कटु परिणाम प्रत्यक्ष सामने आ रहा था।

**रथो भग्नो ध्वजश्छिन्नश्छत्रमुर्व्यां निपातितम्।**
**युगार्धं छिन्नमादाय प्रदुद्राव तथा हयः ॥७४॥**

कितने ही रथ टूट गये, ध्वज कट गये, छत्र पृथिवी पर गिरा दिये गये और जुए खण्डित हो गये।

उन खण्डित हुए आधे जुओं को लेकर ही घोड़े तीव्र-गति से भाग रहे थे।

**ततो बलेऽतिलुलिते परस्परं**
**निरीक्षमाणे रुधिरौघसम्प्लुते।**
**दिवाकरेऽस्तंगिरिमास्थिते शनै-**
**रुभे प्रयाते शिबिराय भारत ॥७५॥**

हे भरतभूषण! दोनों ओर की सेनाएँ अत्यन्त आहत होकर रक्त से लथपथ हो एक-दूसरे की ओर देख रही थीं, इतने में ही भुवनभास्कर अस्ताचल को जा पहुँचे। फिर तो वे दोनों ही धीरे-धीरे अपने-अपने शिबिर की ओर चल दीं।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि पञ्चमोऽध्यायः ॥५॥**

# षष्ठोऽध्याय:

## द्रोणाचार्य की प्रतिज्ञा, चक्रव्यूह का निर्माण, अभिमन्यु का पराक्रम और उसका वध

सञ्जय उवाच

**ततः प्रभातसमये द्रोणं दुर्योधनोऽब्रवीत्।**
**प्रणयादभिमानाच्च द्विषद्वृद्धया च दुर्मनाः ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—अगले दिन प्रातःकाल दुर्योधन ने, जो शत्रुओं के अभ्युदय से अति खिन्न था, आचार्य के प्रति जिसके हृदय में प्रेम था और अपने शौर्य पर अभिमान भी, द्रोणाचार्य के पास जाकर उनसे कहा—

**नूनं वयं वध्यपक्षे भवतो द्विजसत्तम।**
**तथा हि नाग्रहीः प्राप्तं समीपेऽद्य युधिष्ठिरम् ॥२॥**

"द्विजश्रेष्ठ! निश्चय ही हम लोग आपकी दृष्टि में शत्रुवर्ग के अन्तर्गत हैं। यही कारण है कि अत्यन्त निकट आने पर भी आपने राजा युधिष्ठिर को नहीं पकड़ा।

**इच्छतस्ते न मुच्येत चक्षुःप्राप्तो रणे रिपुः।**
**जिघृक्षतो रक्ष्यमाणः सामरैरपि पाण्डवैः ॥३॥**

"युद्धभूमि में कोई भी शत्रु आपके नेत्रों के समक्ष आ जाए और आप उसे पकड़ना चाहें तब सम्पूर्ण देवताओं के साथ सारे पाण्डव उसकी रक्षा करें तो भी वह आपसे छूटकर नहीं जा सकता।

**वरं दत्त्वा मम प्रीतः पश्चाद् विकृतवानसि।**
**आशाभङ्गं न कुर्वन्ति भक्तस्यार्याः कथञ्चन ॥४॥**

"आपने प्रसन्न होकर पहले तो मुझे वर दिया और पीछे उसे उलट दिया, परन्तु आर्यपुरुष किसी प्रकार भी अपने भक्त की आशा भङ्ग नहीं करते हैं।"

**ततोऽप्रीतस्तथोक्तः सन् भारद्वाजोऽब्रवीन्नृपम्।**
**नार्हसे मां तथा ज्ञातुं घटमानं तव प्रिये ॥५॥**

दुर्योधन के ऐसा कहने पर द्रोणाचार्य को तनिक भी प्रसन्नता नहीं हुई। वे दुःखी होकर राजा दुर्योधन से इस प्रकार बोले—"राजन्! तुम्हें मुझे इस प्रकार प्रतिज्ञा भङ्ग करनेवाला नहीं समझना चाहिए। मैं अपनी सम्पूर्ण शक्ति से तुम्हारा प्रिय करने की चेष्टा कर रहा हूँ।

**ससुरासुरगन्धर्वाः सयक्षोरगराक्षसाः।**
**नालं लोका रणे जेतुं पाल्यमानं किरीटिना ॥६॥**

"परन्तु एक बात स्मरण रखो, किरीटधारी अर्जुन युद्धभूमि में जिसकी रक्षा कर रहे हों, उसे देवता, असुर, गन्धर्व, यक्ष, नाग तथा राक्षसोंसहित सम्पूर्ण लोक भी नहीं जीत सकते।

**सत्यं तात ब्रवीम्यद्य नैतज्जात्वन्यथा भवेत्।**
**अद्यैकं प्रवरं कञ्चित् पातयिष्ये महारथम् ॥७॥**

"तात! आज मैं एक सत्य बात कहता हूँ, यह कभी झूठी नहीं हो सकती। आज मैं पाण्डवपक्ष के किसी श्रेष्ठ महारथी को अवश्य मार गिराऊँगा।

**तं च व्यूहं विधास्यामि योऽभेद्यस्त्रिदशैरपि।**
**योगेन केनचिद् राजन्नर्जुनस्त्वपनीयताम् ॥८॥**

"राजन्! आज मैं उस व्यूह का निर्माण करूँगा, जिसे देवता भी नहीं तोड़ सकते, परन्तु किसी उपाय से अर्जुन को यहाँ से दूर हटा दो।

**न ह्यज्ञातमसाध्यं वा तस्य संख्येऽस्ति किञ्चन।**
**तेन ह्युपात्तं सकलं सर्वज्ञानमितस्ततः ॥९॥**

"युद्ध के सम्बन्ध में ऐसी कोई बात नहीं है, जो अर्जुन के लिए अज्ञात अथवा असाध्य हो। उन्होंने

इधर-उधर से युद्ध-विषयक सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर लिया है।"

**द्रोणेन व्याहृते त्वेवं संशप्तकगणाः पुनः ।**
**आह्वयन्नर्जुनं संख्ये दक्षिणामभितो दिशम् ॥१०॥**

द्रोणाचार्य के ऐसा कहने पर पुनः संशप्तकगणों ने दक्षिण दिशा में जा अर्जुन को युद्ध के लिए ललकारा।

**ततोऽर्जुनस्याथ परैः सार्धं समभवद् रणः ।**
**तादृशो यादृशो नान्यः श्रुतो दृष्टोऽपि वा क्वचित् ॥११**

वहाँ अर्जुन का शत्रुओं के साथ ऐसा घोर संग्राम हुआ, जैसा दूसरा कोई कहीं न तो देखा गया है और न सुना ही गया है।

**चक्रव्यूहो महाराज आचार्येणाभिकल्पितः ।**
**तत्र शक्रोपमाः सर्वे राजानो विनिवेशिताः ॥१२॥**

राजन्! इधर द्रोणाचार्य ने जिस चक्रव्यूह का निर्माण किया था, उसमें इन्द्र के समान पराक्रम प्रकट करनेवाले समस्त राजाओं का समावेश कर रखा था।

**ततः प्रववृते युद्धं तुमुलं लोमहर्षणम् ।**
**तावकानां परेषां च मृत्युं कृत्वा निवर्तनम् ॥१३॥**

व्यूह निर्माण हो जाने पर 'मरने पर ही युद्ध से निवृत्त होंगे'—ऐसा निश्चय करके आपके और शत्रु-पक्ष के योद्धाओं में अत्यन्त भयंकर युद्ध आरम्भ हुआ, जो रोंगटे खड़े कर देनेवाला था।

**तदनीकमनाधृष्यं भारद्वाजेन रक्षितम् ।**
**पार्थाः समभ्यवर्तन्त भीमसेनपुरोगमाः ॥१४॥**

राजन्! द्रोणाचार्य द्वारा सुरक्षित उस दुर्धर्ष सेना [चक्रव्यूह] का भीमसेन आदि कुन्तीपुत्रों ने डटकर सामना किया।

**पीड्यमानाः शरै राजन् द्रोणचापविनिःसृतैः ।**
**न शेकुः प्रमुखे स्थातुं भारद्वाजस्य पाण्डवाः ॥१५॥**

परन्तु राजन्! आचार्य द्रोण के धनुष से छूटे हुए बाणों से अत्यन्त पीड़ित होकर पाण्डववीर उनके सामने ठहर नहीं सके।

**तमायान्तमभिक्रुद्धं द्रोणं दृष्ट्वा युधिष्ठिरः ।**
**बहुधा चिन्तयामास द्रोणस्य प्रतिवारणम् ॥१६॥**

क्रोध में भरे हुए उन्हीं द्रोणाचार्य को आते देख राजा युधिष्ठिर ने उन्हें रोकने के उपाय पर बारम्बार विचार किया।

**अशक्यं तु तमन्येन द्रोणं मत्वा युधिष्ठिरः ।**
**अविषह्यं गुरुं भारं सौभद्रे समवासृजत् ॥१७॥**

इस समय द्रोणाचार्य का सामना करना दूसरे के लिए असम्भव जानकर युधिष्ठिर ने वह दुःसह एवं महान् भार सुभद्राकुमार अभिमन्यु पर डाल दिया।

**वासुदेवादनवरं फाल्गुनाच्चामितौजसम् ।**
**अब्रवीत् परवीरघ्नमभिमन्युमिदं वचः ॥१८॥**

महातेजस्वी अभिमन्यु वसुदेवनन्दन श्रीकृष्ण और अर्जुन से किसी बात में कम नहीं था। उस शत्रुवीरों के संहारक से युधिष्ठिर ने इस प्रकार कहा—

**एत्य नो नार्जुनो गर्हेद् यथा तात तथा कुरु ।**
**न वयं चक्रव्यूहस्य विद्मो भेदं कथञ्चन ॥१९॥**

"तात! संशप्तकों के साथ युद्ध करके लौटने पर अर्जुन जिस प्रकार हम लोगों की निन्दा न करें [हमें असमर्थ न बताएँ] वैसा कार्य करो। हम लोग तो किसी भी प्रकार चक्रव्यूह के भेदन की प्रक्रिया को नहीं जानते हैं।

**त्वं वार्जुनो वा कृष्णो वा भिन्द्यात् प्रद्युम्न एव वा ।**
**चक्रव्यूहं महाबाहो पञ्चमो नोपपद्यते ॥२०॥**

"महाबाहो! तुम, अर्जुन, श्रीकृष्ण अथवा प्रद्युम्न—ये चार पुरुष ही चक्रव्यूह का भेदन कर सकते हैं। पाँचवाँ कोई योद्धा इस कार्य के योग्य नहीं है।

**अभिमन्यो वरं तात याचतां दातुमर्हसि ।**
**पितॄणां मातुलानां च सैन्यानां चैव सर्वशः ॥२१॥**

"तात अभिमन्यो! तुम्हारे पिता और मामा के पक्ष के समस्त योद्धा और सभी सैनिक तुमसे याचना कर रहे हैं। तुम्हीं इन्हें वर देने के योग्य हो।"

अभिमन्युरुवाच

**द्रोणस्य दृढमत्युग्रमनीकप्रवरं युधि ।**
**पितॄणां जयमाकाङ्क्षन्नवगाहेऽविलम्बितम् ॥२२॥**

**अभिमन्यु ने कहा**—महाराज! मैं अपने पितृवर्ग की विजय की अभिलाषा से युद्धक्षेत्र में द्रोणाचार्य

की अत्यन्त भयंकर, सुदृढ़ एवं श्रेष्ठ सेना में शीघ्र ही प्रवेश करता हूँ।

**उपदिष्टो हि मे पित्रा योगोऽनीकविशातने।**
**नोत्सहे हि विनिर्गन्तुमहं कस्यांचिदापदि ॥२३॥**

पिताजी ने मुझे चक्रव्यूह के भेदन की विधि तो बताई है, परन्तु किसी आपत्ति में पड़ जाने पर मैं उस व्यूह से बाहर नहीं निकल सकता।

युधिष्ठिर उवाच

**भिन्ध्यनीकं युधां श्रेष्ठ द्वारं सञ्जनयस्व नः।**
**वयं त्वानुगमिष्यामो येन त्वं तात यास्यसि ॥२४॥**

**युधिष्ठिर बोले**—योद्धाओं में श्रेष्ठ वीर! तुम व्यूह का भेदन करो तथा हमारे लिए द्वार बना दो। तात! फिर तुम जिस मार्ग से जाओगे, उसी के द्वारा हम भी तुम्हारे पीछे-पीछे चलेंगे।

**धनञ्जयसमं युद्धे त्वां वयं तात संयुगे।**
**प्रणिधायानुयास्यामो रक्षन्तः सर्वतोमुखाः ॥२५॥**

तात! हम लोग युद्धभूमि में तुम्हें अर्जुन के समान मानते हैं। हम अपना ध्यान तुम्हारी ही ओर रखकर सब ओर से तुम्हारी रक्षा करते हुए तुम्हारे साथ ही चलेंगे।

सञ्जय उवाच

**सौभद्रस्तद् वचः श्रुत्वा धर्मराजस्य धीमतः।**
**अनोदयत यन्तारं द्रोणानीकाय भारत ॥२६॥**

**सञ्जय कहते हैं**—हे भारत! बुद्धिमान् युधिष्ठिर का पूर्वोक्त वचन सुनकर सुभद्राकुमार अभिमन्यु ने अपने सारथि को द्रोणाचार्य की सेना की ओर चलने का आदेश दिया।

**तेन संनोद्यमानस्तु याहि याहीति सारथिः।**
**प्रत्युवाच ततो राजन्नभिमन्युमिदं वचः ॥२७॥**

राजन्! 'चलो, चलो!' ऐसा कहकर अभिमन्यु के बारम्बार प्रेरित करने पर सारथि ने उससे इस प्रकार कहा—

**अतिभारोऽयमायुष्मन्नाहितस्त्वयि पाण्डवैः।**
**सम्प्रधार्य क्षणं बुद्ध्या ततस्त्वं योद्धुमर्हसि ॥२८॥**

"आयुष्मन्! पाण्डवों ने आपके कन्धे पर बहुत बड़ा भार डाल दिया है। पहले आप क्षणभर रुककर बुद्धिपूर्वक अपने कर्तव्य का निश्चय कर लो, बाद में युद्ध करना।

**आचार्यो हि कृती द्रोणः परमास्त्रे कृतश्रमः।**
**अत्यन्तसुखसंवृद्धस्त्वं चायुद्धविशारदः ॥२९॥**

"द्रोणाचार्य अस्त्रविद्या के पारङ्गत विद्वान् हैं और उत्तम अस्त्रों के अभ्यास में उन्होंने विशेष परिश्रम किया है। इधर आप अत्यन्त सुख और लाड़-प्यार में पले हैं। युद्ध-कला में आप उनके जैसे विज्ञ नहीं हैं।"

**ततोऽभिमन्युः प्रहसन् सारथिं वाक्यमब्रवीत्।**
**सारथे को न्वयं द्रोणः समग्रं क्षत्रमेव वा ॥३०॥**
**अपि विश्वजितं कृष्णं मातुलं प्राप्य सूतज।**
**पितरं चार्जुनं युद्धे न भीर्मामुपयास्यति ॥३१॥**

तब अभिमन्यु ने हँसते-हँसते सारथि से इस प्रकार कहा—"सारथे! इन द्रोणाचार्य अथवा सम्पूर्ण क्षत्रियमण्डल की तो बात ही क्या है, विश्वविजयी मामा श्रीकृष्ण और पिता अर्जुन को भी युद्ध में विपक्षी के रूप में सामने पाकर मुझे भय नहीं होगा।"

**अभिमन्युश्च तां वाचं कदर्थीकृत्य सारथेः।**
**याहीत्येवाब्रवीदेनं द्रोणानीकाय माचिरम् ॥३२॥**

अभिमन्यु ने सारथि के पूर्वोक्त कथन की अवहेलना करके उससे यही कहा—"तुम शीघ्र द्रोणाचार्य की सेना की ओर चलो।"

**ततः संनोदयामास हयानाशु त्रिहायनान्।**
**नातिहृष्टमनाः सूतो हेमभाण्डपरिच्छदान् ॥३३॥**

तब सारथि ने सुवर्णमय अलंकारों से अलंकृत तथा तीन वर्ष की अवस्थावाले घोड़ों को शीघ्र आगे बढ़ाया, परन्तु उस समय उसका मन अधिक प्रसन्न नहीं था।

**ते प्रेषिताः सुमित्रेण द्रोणानीकाय वाजिनः।**
**द्रोणमभ्यद्रवन् राजन् महावेगपराक्रमम् ॥३४॥**

राजन्! सारथि सुमित्र द्वारा द्रोणाचार्य की सेना की ओर हाँके हुए वे घोड़े महान् वेगशाली और पराक्रमी द्रोण की ओर दौड़े।

**तमुदीक्ष्य तथाऽऽयान्तं सर्वे द्रोणपुरोगमाः।**
**अभ्यवर्तन्त कौरव्याः पाण्डवाश्च तमन्वयुः ॥३५॥**

अभिमन्यु को इस प्रकार आते देख द्रोणाचार्य

आदि कौरव वीर उनके सामने आकर खड़े हो गये और पाण्डव योद्धा उसका अनुसरण करने लगे ।

**शूराणां युध्यमानानां निघ्नतामितरेतरम् ।**
**संग्रामस्तुमुलो राजन् प्रावर्तत सुदारुणः ॥३६॥**

राजन् ! फिर तो युद्ध में तत्पर हो एक-दूसरे पर घातक प्रहार करते हुए उन शूरवीरों में अति दारुण और भयंकर संघर्ष होने लगा ।

**प्रवर्तमाने संग्रामे तस्मिन्नतिभयंकरे ।**
**द्रोणस्य मिषतो व्यूहं भित्त्वा प्राविशदार्जुनिः ॥३७॥**

वह अति भयंकर संग्राम चल ही रहा था कि द्रोणाचार्य के देखते-देखते अर्जुन-कुमार अभिमन्यु व्यूह का भेदन कर अन्दर घुस गया ।

**तं प्रविष्टं विनिघ्नन्तं शत्रुसंघान् महाबलम् ।**
**हस्त्यश्वरथपत्यौघाः परिवव्रुरुदायुधाः ॥३८॥**

व्यूह में प्रविष्ट होकर शत्रुसमूहों का विनाश करते हुए महाबली अभिमन्यु को हाथ में अस्त्र-शस्त्र लिये गजारोही, घुड़सवार, रथी और पैदल योद्धाओं के भिन्न-भिन्न दलों ने चारों ओर से घेर लिया ।

**तेषामापततां वीरः शीघ्रयोधी महाबलः ।**
**क्षिप्रास्त्रो न्यवधीद् राजन् मर्मज्ञो मर्मभेदिभिः ॥३९**

राजन् ! महाबली वीर अभिमन्यु शीघ्रतापूर्वक युद्ध करने में कुशल, शीघ्रतापूर्वक अस्त्र चलानेवाला और शत्रुओं के मर्मस्थलों को जाननेवाला था, अतः वह अपनी ओर आते हुए शत्रु-सैनिकों को मर्मभेदी बाणों द्वारा मौत के घाट उतारने लगा ।

**ततस्तेषां शरीरैश्च शरीरावयवैश्च सः ।**
**संतस्तार क्षितिं क्षिप्रं कुशैर्वेदिमिवाध्वरे ॥४०॥**

जैसे यज्ञ में वेदी पर कुश बिछाये जाते हैं, उसी प्रकार अभिमन्यु ने तुरन्त ही शत्रुओं के शरीरों तथा भिन्न-भिन्न अवयवों से सारी युद्धभूमि को पाट दिया ।

**तथा निर्मथितं तेन त्र्यङ्गं तव बलं महत् ।**
**यथासुरबलं घोरं त्र्यम्बकेन महौजसा ॥४१॥**

जैसे रुद्र ने असुरों की सेना को मथ डाला था, उसी प्रकार अभिमन्यु ने रथ, हाथी, घोड़े—इन तीन अङ्गों से युक्त आपकी विशाल सेना को रौंद डाला ।

**कृत्वा कर्म रणेऽसह्यं परैरार्जुनिराहवे ।**
**अभिनच्च पदात्योघाँस्त्वदीयानेव सर्वशः ॥४२॥**

इस प्रकार अर्जुनकुमार अभिमन्यु ने युद्धभूमि में शत्रुओं के लिए असह्य पराक्रम करके आपके पैदल योद्धाओं के समूहों का सभी प्रकार से विनाश आरम्भ किया ।

**अभिमन्युः कृतोत्साहः कृतोत्साहानरिन्दमान् ।**
**रथस्थो रथिनः सर्वांस्तावकानभ्यवर्षयत् ॥४३॥**

अभिमन्यु युद्ध के लिए उत्साह से भरा था । वह रथ पर बैठकर आपके उत्साहभरे शत्रु-संहारक समस्त रथारोहियों पर बाणों की वर्षा करने लगा ।

**द्रोणं कर्णं कृपं शल्यं द्रौणिं भोजं महाबलम् ।**
**अलातचक्रवत् सर्वांश्चरन् बाणैः समार्पयत् ॥४४॥**

अभिमन्यु अलातचक्र की भाँति चारों ओर घूमकर द्रोण, कर्ण, कृपाचार्य, शल्य, अश्वत्थामा और महाबली भोज—इन सबपर बाणों का प्रहार कर रहा था ।

**अथाब्रवीन्महाप्राज्ञो भारद्वाजः प्रतापवान् ।**
**हर्षेणोत्फुल्लनयनः कृपमाभाष्य सत्वरम् ॥४५॥**
**घट्टयन्निव मर्माणि पुत्रस्य तव भारत ।**
**अभिमन्युं रणे दृष्ट्वा तदा रणविशारदम् ॥४६॥**

उस समय महाबुद्धिमान् और प्रतापी वीर द्रोणाचार्य के नेत्र हर्ष से खिल उठे । हे भारत ! उन्होंने युद्धविशारद अभिमन्यु को युद्ध में स्थित देखकर आपके पुत्र के मर्मस्थल पर चोट-सी करते हुए कृपाचार्य को सम्बोधित करते हुए कहा—

**एष गच्छति सौभद्रः पार्थानां प्रथितो युवा ।**
**नन्दयन् सुहृदः सर्वान् राजानं च युधिष्ठिरम् ॥४७॥**

"यह पार्थकुल का प्रसिद्ध तरुणवीर सुभद्राकुमार अभिमन्यु अपने समस्त सुहृदों और राजा युधिष्ठिर को आनन्द प्रदान करता हुआ जा रहा है ।

**नास्य युद्धे समं मन्ये कञ्चिदन्यं धनुर्धरम् ।**
**इच्छन् हन्यादिमां सेनां किमर्थमपि नेच्छति ॥४८॥**

"मैं दूसरे किसी धनुर्धर वीर को युद्धक्षेत्र में इसके समान नहीं मानता । यदि यह चाहे तो इस सारी सेना को नष्ट कर सकता है, परन्तु यह न जाने ऐसा चाहता क्यों नहीं है !"

**द्रोणस्य प्रीतिसंयुक्तं श्रुत्वा वाक्यं तवात्मजः।**
**आर्जुनिं प्रति संक्रुद्धो द्रोणं दृष्ट्वा स्मयन्निव ॥४९॥**
**अथ दुर्योधनः कर्णमब्रवीद् बाह्लिकं नृपः।**
**दुःशासनं मद्रराजं तांस्तथान्यान् महारथान् ॥५०॥**

अभिमन्यु के सम्बन्ध में द्रोणाचार्य का यह प्रीति-युक्त वचन सुनकर आपका पुत्र राजा दुर्योधन क्रोध में भर गया और द्रोणाचार्य की ओर देखकर मुस्कराता हुआ-सा कर्ण, बाह्लिक, दुःशासन, मद्रराज शल्य और अन्य महारथियों से बोला—

**सर्वमूर्धाभिषिक्तानामाचार्यो ब्रह्मवित्तमः।**
**अर्जुनस्य सुतं मूढं नायं हन्तुमिहेच्छति ॥५१॥**

"सम्पूर्ण मूर्धाभिषिक्त राजाओं के आचार्य तथा सर्वश्रेष्ठ ब्रह्मवेत्ता ये द्रोणाचार्य अर्जुन के इस मूढ़ पुत्र को मारना नहीं चाहते हैं।

**अर्जुनस्य सुतं त्वेष शिष्यत्वादभिरक्षति।**
**शिष्याः पुत्राश्च दयितास्तदपत्यं च धर्मिणाम् ॥५२॥**

"ये अर्जुन के पुत्र की रक्षा करते हैं, क्योंकि अर्जुन इनके शिष्य हैं। शिष्य और पुत्र तो प्रिय होते ही हैं, उनकी सन्तानें भी धर्मात्माओं को प्रिय जान पड़ती हैं।

**संरक्ष्यमाणो द्रोणेन मन्यते वीर्यमात्मनः।**
**आत्मसम्भावितो मूढस्तं प्रमथ्नीत माचिरम् ॥५३॥**

"यह द्रोणाचार्य से रक्षित होने के कारण अपने बल और पराक्रम पर अभिमान कर रहा है। यह मूर्ख अभिमन्यु आत्म-प्रशंसा करनेवाला है। तुम सब मिलकर इसे मथ डालो।"

**दुःशासनस्तु तत् श्रुत्वा दुर्योधनवचस्तदा।**
**अब्रवीत् कुरुशार्दूल दुर्योधनमिदं वचः ॥५४॥**

कुरुकुलभूषण! उस समय दुर्योधन के उपर्युक्त वचन को सुनकर दुःशासन ने उससे यह बात कही—

**अहमेनं हनिष्यामि महाराज ब्रवीमि ते।**
**मिषतां पाण्डुपुत्राणां पाञ्चालानां च पश्यताम् ॥५५**

"महाराज! मैं आपसे [प्रतिज्ञापूर्वक] कहता हूँ कि मैं पाञ्चालों और पाण्डवों के देखते-देखते इस अभिमन्यु को मार डालूँगा।"

**एवमुक्त्वानदद् राजन् पुत्रो दुःशासनस्तव।**
**सौभद्रमभ्ययात् क्रुद्धः शरवर्षैरवाकिरन् ॥५६॥**

महाराज! ऐसा कहकर आपका पुत्र दुःशासन जोर-जोर से गर्जना करने लगा। वह क्रोध में भरकर अभिमन्यु पर बाणों की वर्षा करता हुआ उसके सामने गया।

**तमतिक्रुद्धमायान्तं तव पुत्रमरिन्दमः।**
**अभिमन्युः शरैस्तीक्ष्णैः षड्विंशत्या समार्पयत् ॥५७॥**

आपके पुत्र को अत्यन्त कुपित हो अपनी ओर आते देख शत्रुहन्ता अभिमन्यु ने छब्बीस पैने बाणों द्वारा उसे घायल कर दिया।

**स गाढविद्धो व्यथितो रथोपस्थ उपाविशत्।**
**दुःशासनो महाराज कश्मलं चाविशन्महत् ॥५८॥**

बाणों की गहरी चोट खाकर दुःशासन व्यथित हो रथ की बैठक में बैठ गया। महाराज! उस समय उसे भारी मूर्च्छा आ गई।

**सारथिस्त्वरमाणस्तु दुःशासनमचेतनम्।**
**रणमध्यादपोवाह सौभद्रशरपीडितम् ॥५९॥**

तब अभिमन्यु के बाणों से पीड़ित तथा अचेत हुए दुःशासन को उसका सारथि बड़ी उतावली के साथ रणभूमि से बाहर हटा ले गया।

**ततः कर्णः शरैस्तीक्ष्णैरभिमन्युं दुरासदम्।**
**अभ्यवर्षत संक्रुद्धः पुत्रस्य हितकृत् तव ॥६०॥**

तब आपके पुत्र का हित करनेवाला कर्ण अत्यन्त क्रोध में भरकर दुर्धर्ष वीर अभिमन्यु पर तीखे बाणों की वर्षा करने लगा।

**ततो मुहूर्तात् कर्णस्य बाणेनैकेन वीर्यवान्।**
**सध्वजं कार्मुकं वीरश्छित्त्वा भूमावपातयत् ॥६१॥**

तब दो ही घड़ी में महापराक्रमी वीर अभिमन्यु ने एक बाण मारकर कर्ण के ध्वज और धनुष को काटकर पृथिवी पर गिरा दिया।

**ततः कृच्छ्रगतं कर्णं दृष्ट्वा कर्णादनन्तरः।**
**सौभद्रमभ्ययात् तूर्णं दृढमुद्यम्य कार्मुकम् ॥६२॥**

कर्ण को संकट में पड़ा देख उसका छोटा भाई सुदृढ़ धनुष हाथ में लेकर तुरन्त ही सुभद्राकुमार का सामना करने के लिए आ पहुँचा।

**तस्याभिमन्युरायम्य स्मयन्नेकेन पत्रिणा।**
**शिरः प्रच्यावयामास तद्रथात् प्रापतद् भुवि ॥६३॥**

तब अभिमन्यु ने मुस्कराते हुए-से अपने धनुष

को खींचकर एक ही बाण से कर्ण के भाई का मस्तक काट दिया। उसका वह सिर रथ से नीचे भूमि पर गिर पड़ा।

**विमुखीकृत्य कर्णं तु सौभद्रः कङ्कपत्रिभिः।**
**अन्यानपि महेष्वासाँस्तूर्णमेवाभिदुद्रुवे ।।६४।।**

फिर सुभद्राकुमार अभिमन्यु ने गीध की पाँखवाले बाणों द्वारा कर्ण को युद्ध से भगाकर अन्य महाधनुर्धर वीरों पर भी तुरन्त आक्रमण किया।

धृतराष्ट्र उवाच

**गाहमानमनीकानि सदश्वैश्च त्रिहायनैः।**
**अपि यौधिष्ठिरात् सैन्यात् कश्चिदन्वपतद् बली ।।६५।।**

**धृतराष्ट्र ने पूछा**—सञ्जय! जिस समय अभिमन्यु तीन वर्ष की अवस्थावाले उत्तम घोड़ों के द्वारा मेरी सेनाओं में प्रवेश कर रहा था, उस समय युधिष्ठिर की सेना से क्या कोई बलवान् वीर उसके पीछे-पीछे व्यूह के भीतर घुस सका था?

सञ्जय उवाच

**युधिष्ठिरो भीमसेनः शिखण्डी सात्यकिर्यमौ।**
**धृष्टद्युम्नो विराटश्च मत्स्याश्चाभ्यपतन् रणे ।।६६।।**
**तेनैव तु पथा यान्तः पितरो मातुलैः सह।**
**अभ्यद्रवन् परीप्सन्तो व्यूढानीकाः प्रहारिणः ।।६७।।**

**सञ्जय बोला**—राजन्! युधिष्ठिर, भीमसेन, शिखण्डी, सात्यकि, नकुल-सहदेव, धृष्टद्युम्न, विराट और मत्स्यदेशीय योद्धा—ये सभी युद्धभूमि में आगे बढ़े। अभिमन्यु के ताऊ, चाचा और मामागण अपनी सेना को व्यूह द्वारा संगठित करके प्रहार करने के लिए उद्यत हो अभिमन्यु की रक्षा के लिए उसी के बनाये मार्ग से व्यूह में प्रविष्ट होने के लिए एक-साथ दौड़ पड़े।

**तान् दृष्ट्वा द्रवतः शूराँस्त्वदीया विमुखाऽभवन्।**
**जामाता तव तेजस्वी संस्तम्भयिषुराद्रवत् ।।६८।।**

उन शूरवीरों को आक्रमण करते देख आपके सैनिक भाग खड़े हुए, परन्तु आपका जामाता तेजस्वी जयद्रथ उन्हें स्थिरतापूर्वक स्थापित करने की इच्छा से वहाँ दौड़ा हुआ आया।

**संक्रुद्धान् पाण्डवानेको यद् दधारास्त्रतेजसा।**
**तत् तस्य कर्म भूतानि सर्वाण्येवाभ्यपूजयन् ।।६९।।**

जयद्रथ ने अकेले ही अपने अस्त्रों के तेज से क्रोध में भरे हुए पाण्डवों को रोक लिया, उसके इस पराक्रम की सभी वीर प्रशंसा करने लगे।

**सौभद्रेण हतैः पूर्वं सोत्तरायोधिभिर्द्विपैः।**
**पाण्डूनां दर्शितः पन्थाः सैन्धवेन निवारितः ।।७०।।**

सुभद्राकुमार अभिमन्यु ने पहले गजारोहियोंसहित बहुत-से गजराजों को मारकर चक्रव्यूह में प्रविष्ट होने के लिए पाण्डवों के लिए जो मार्ग दिखाया था, उसे जयद्रथ ने बन्द कर दिया।

**यो यो हि यतते भेत्तुं द्रोणानीकं तवाहितः।**
**तं तमेव वरं प्राप्य सैन्धवः प्रत्यवारयत् ।।७१।।**

आपका जो-जो शत्रु द्रोणाचार्य के व्यूह को तोड़ने का प्रयत्न करता, उसी-उसी श्रेष्ठ वीर के पास पहुँचकर जयद्रथ उसे रोक देता था।

**प्रविश्याथार्जुनिः सेनां सत्यसन्धो दुरासदः।**
**व्यक्षोभयत तेजस्वी मकरः सागरं यथा ।।७२।।**

उधर सत्यप्रतिज्ञ, दुर्धर्ष और तेजस्वी वीर अभिमन्यु ने आपकी सेना में घुसकर ऐसा तहलका मचा दिया, जैसे बड़ा भारी मगर समुद्र में हलचल पैदा कर देता है।

**ये केचन गतास्तस्य समीपमपलायिनः।**
**न ते प्रतिन्यवर्तन्त समुद्रादिव सिन्धवः ।।७३।।**

युद्ध से न भागनेवाले जो कोई शूरवीर उस समय अभिमन्यु के पास गये, वे फिर नहीं लौटे, जैसे समुद्र में मिली हुई नदियाँ फिर वहाँ से नहीं लौट पातीं।

**अथ रुक्मरथो नाम मद्रेश्वरसुतो बली।**
**त्रस्तामाश्वासयन् सेनामत्रस्तो वाक्यमब्रवीत् ।।७४।।**

इसी समय मद्रराज का शूरवीर पुत्र रुक्मरथ आकर अपनी डरी हुई सेना को आश्वासन देता हुआ निर्भय होकर बोला—

**अलं त्रासेन वः शूरा नैष कश्चिन्मयि स्थिते।**
**अहमेनं ग्रहीष्यामि जीवग्राहं न संशयः ।।७५।।**

"शूरवीरो! तुम्हें डरने की कोई आवश्यकता नहीं। यह अभिमन्यु मेरे रहते कुछ भी नहीं है। मैं अभी इसे जीते-जी पकड़ लूँगा, इसमें संशय नहीं है।"

**एवमुक्त्वा तु सौभद्रमभिदुद्राव वीर्यवान्।**
**सुकल्पितेनोह्यमानः स्यन्दनेन विराजता ।।७६।।**

ऐसा कहकर पराक्रमी रुक्मरथ सुन्दर, सुसज्जित तेजस्वी रथ पर आरूढ़ हो सुभद्राकुमार अभिमन्यु की ओर दौड़ा।

**सोऽभिमन्युं त्रिभिर्बाणैर्विद्ध्वा वक्षस्यथानदत्।**
**त्रिभिश्च दक्षिणे बाहौ सव्ये च निशितैस्त्रिभिः ॥७७॥**

उसने अभिमन्यु की छाती में तीन बाण मारकर सिंहनाद किया। फिर तीन बाण दाहिनी और तीन तीखे बाण बायीं भुजा में मारे।

**स तस्येष्वसनं छित्त्वा फाल्गुनिः सव्यदक्षिणौ।**
**भुजौ शिरश्च स्वक्षिभ्रु क्षितौ क्षिप्रमपातयत् ॥७८॥**

तब अर्जुनकुमार अभिमन्यु ने रुक्मरथ का धनुष काटकर उसकी बायीं-दायीं भुजाओं को और सुन्दर नेत्र तथा भौंहों से सुशोभित मस्तक को भी तुरन्त ही काटकर पृथिवी पर गिरा दिया।

**एकधा शतधा राजन् दृश्यते स्म सहस्रधा।**
**अलातचक्रवत् संख्ये क्षिप्रमस्त्राणि दर्शयन् ॥७९॥**

राजन्! फिर वह शीघ्रतापूर्वक अस्त्र-संचालन का कौशल दिखाता हुआ युद्ध में अलातचक्र की भाँति एक, सौ और सहस्रों रूपों में दृष्टिगोचर होता था।

**रथचर्यास्त्रमायाभिर्मोहयित्वा परन्तपः।**
**बिभेद शतधा राजञ्शरीराणि महीक्षिताम् ॥८०॥**

महाराज! शत्रुओं को सन्ताप देनेवाले अभिमन्यु ने रथचर्या और अस्त्रों की माया से मोहित करके राजाओं के शरीरों के सौ-सौ टुकड़े कर दिये।

**प्राणाः प्राणभृतां संख्ये प्रेषिता निशितैः शरैः।**
**राजन् प्रापुरमुं लोकं शरीराण्यवनिं ययुः ॥८१॥**

राजन्! उस युद्धस्थल में उसके पैने बाणों से प्रेरित हुए प्राणधारियों के शरीर तो पृथिवी पर गिर पड़े, परन्तु प्राण परलोक में जा पहुँचे।

**धनूंष्यश्वान् नियन्तृंश्च ध्वजान् बाहूंश्च साङ्गदान्।**
**शिरांसि च शितैर्बाणैस्तेषां चिच्छेद फाल्गुनिः ॥८२**

अर्जुनपुत्र अभिमन्यु ने अपने तीखे तीरों द्वारा उनके धनुष, घोड़े, सारथि, ध्वज, अङ्गदयुक्त बाहु और मस्तक भी काट डाले।

**रथिनः कुञ्जरानश्वान् पदातींश्चापि मज्जतः।**
**दृष्ट्वा दुर्योधनः क्षिप्रमुपायात् तममर्षितः ॥८३॥**

रथियों, हाथियों, घोड़ों और पैदल—सभी को अभिमन्युरूपी समुद्र में डूबते देख अमर्ष में भरे हुए दुर्योधन ने शीघ्र ही उसपर आक्रमण किया।

**तयोः क्षणमिवापूर्णः संग्रामः समपद्यत।**
**अथाभवत् ते विमुखः पुत्रः शरशताहतः ॥८४॥**

उन दोनों में एक क्षण तक अधूरा-सा युद्ध हुआ। इतने में ही आपका पुत्र दुर्योधन सैकड़ों बाणों से आहत होकर वहाँ से भाग गया।

धृतराष्ट्र उवाच

**दुर्योधने च विमुखे राजपुत्रशते हते।**
**सौभद्रे प्रतिपत्तिं कां प्रत्यपद्यन्त मामकाः ॥८५॥**

**धृतराष्ट्र ने पूछा**—सञ्जय! जब दुर्योधन भाग गया और सैकड़ों राजकुमार मौत के घाट उतार दिये गये, उस समय मेरे पुत्रों ने सुभद्राकुमार का सामना करने के लिए क्या उपाय किया?

सञ्जय उवाच

**संशुष्कास्याश्चलन्नेत्राः प्रस्विन्ना लोमहर्षणाः।**
**पलायने कृतोत्साहा निरुत्साहा द्विषज्जये ॥८६॥**

**सञ्जय बोले**—महाराज! आपके सभी सैनिकों के मुँह सूख गये थे, आँखें भय से चञ्चल हो रही थीं, सारे अङ्ग पसीने-पसीने हो रहे थे और रोंगटे खड़े हो गये थे। वे भागने में ही उत्साह दिखा रहे थे। उनके मन में शत्रुओं को जीतने का उत्साह तनिक भी नहीं था।

**हतान् भ्रातॄन् पितॄन् पुत्रान् सुहृत्सम्बन्धिबान्धवान्।**
**उत्सृज्योत्सृज्य संजग्मुस्त्वरयन्तो हयद्विपान् ॥८७**

वे युद्ध में मारे गये भाइयों, पितरों, पुत्रों, सुहृदों, सम्बन्धियों और बन्धु-बान्धवों को छोड़-छोड़कर अपने घोड़े और हाथियों को उतावली के साथ हाँकते हुए भाग रहे थे।

**एकस्तु सुखसंवृद्धो बाल्याद् दर्पाच्च निर्भयः।**
**इष्वस्त्रविन्महातेजा लक्ष्मणोऽर्जुनिमभ्ययात् ॥८८॥**

उस समय सुख में पला हुआ, धनुर्वेद का ज्ञाता, एकमात्र महातेजस्वी लक्ष्मण अपने बालस्वभाव और अभिमान के कारण निर्भय हो अभिमन्यु के सामने आया।

**अत्यन्तसुखसंवृद्धं धनेश्वरसुतोपमम्।**
**आससाद रणे कार्ष्णिर्मत्तो मत्तमिव द्विपम् ॥८९॥**

अत्यन्त सुख में पला हुआ वह वीर लक्ष्मण कुबेर के पुत्र के समान जान पड़ता था। जैसे मतवाला हाथी किसी मदोन्मत्त गजराज से भिड़ जाए, वैसे ही अभिमन्यु ने लक्ष्मण पर आक्रमण किया।

**लक्ष्मणेन तु संगम्य सौभद्रः परवीरहा।**
**पौत्रस्तव महाराज तव पौत्रमभाषत ॥९०॥**

लक्ष्मण से भिड़ जाने पर शत्रुवीरों का संहार करनेवाले आपके पौत्र सुभद्राकुमार अभिमन्यु ने आपके दूसरे पौत्र लक्ष्मण से कहा—

**सुदृष्टः क्रियतां लोको ह्यमुं लोकं गमिष्यसि।**
**पश्यतां बान्धवानां त्वां नयामि यमसादनम् ॥९१॥**

"लक्ष्मण! इस संसार को अच्छी प्रकार देख ले। तुम अब शीघ्र ही परलोक की यात्रा करोगे। इन बन्धु-बान्धवों के देखते-देखते मैं तुम्हें यमलोक पठा दूँगा।"

**एवमुक्त्वा ततो भल्लं सौभद्रः परवीरहा।**
**उद्बबर्ह महाबाहुर्निर्मुक्तोरगसन्निभम् ॥९२॥**

ऐसा कहकर शत्रुवीरों का संहार करनेवाले महाबाहु अभिमन्यु ने केंचुली से निकले हुए सर्प के समान एक भल्ल को तरकस से निकाला।

**स तस्य भुजनिर्मुक्तो लक्ष्मणस्य सुदर्शनम्।**
**सुनसं सुभ्रुकेशान्तं शिरोऽहार्षीत् सकुण्डलम् ॥९३॥**

अभिमन्यु के हाथ से छूटे हुए उस भल्ल ने लक्ष्मण के देखने में सुन्दर-सुघड़ नासिका, मनोहर भौंह, सुन्दर केशान्तभाग और रुचिकर कुण्डलों से युक्त मस्तक को धड़ से अलग कर दिया।

**ततो दुर्योधनः क्रुद्धः प्रिये पुत्रे निपातिते।**
**घ्नतैनमिति चुक्रोश क्षत्रियान् क्षत्रियर्षभः ॥९४॥**

अपने प्रियपुत्र लक्ष्मण के मारे जाने पर क्षत्रिय-शिरोमणि दुर्योधन कुपित हो उठा और समस्त क्षत्रियों से बोला—"अहो! इस अभिमन्यु को मार डालो।"

**ततः द्रोणः कृपः कर्णो द्रोणपुत्रो बृहद्बलः।**
**कृतवर्मा च हार्दिक्यः षड् रथाः पर्यवारयन् ॥९५॥**

तब आचार्य द्रोण, कृपाचार्य, कर्ण, अश्वत्थामा, बृहद्बल और हृदिकपुत्र कृतवर्मा—इन छह महारथियों ने अभिमन्यु को घेर लिया।

**ताँस्तु सर्वान् महेष्वासान् सर्वविद्यासु निष्ठितान्।**
**व्यष्टम्भयद् रणे बाणैः सौभद्रः परवीरहा ॥९६॥**

परन्तु शत्रुवीरों का संहार करनेवाले सुभद्रापुत्र अभिमन्यु ने सम्पूर्ण विद्याओं में प्रवीण उन सभी महाधनुर्धरों को युद्धभूमि में अपने बाणों द्वारा स्तब्ध कर दिया।

**ततो वृन्दारकं वीरं कुरूणां कीर्तिवर्धनम्।**
**पुत्राणां तव वीराणां पश्यतामवधीद् बली ॥९७॥**

फिर बलवान् अभिमन्यु ने कुरुकुल की कीर्ति बढ़ानेवाले वीर विन्दारक को आपके वीर पुत्रों के देखते-देखते मार डाला।

**तं कोसलानामधिपः कर्णिनाताडयद्धृदि।**
**स तस्याश्वान् ध्वजं चापं सूतं चापातयत् क्षितौ ॥९८॥**

तब कोसलराज बृहद्बल ने एक बाण द्वारा अभिमन्यु की छाती में चोट पहुँचायी। यह देख अभिमन्यु ने उसके चारों घोड़ों तथा ध्वज और सारथि को भी पृथिवी पर मार गिराया।

**अथ कोसलराजस्तु विरथः खड्गचर्मभृत्।**
**इयेष फाल्गुनेः कायाच्छिरो हर्तुं सकुण्डलम् ॥९९॥**

रथहीन होने पर कोसलनरेश ने हाथ में ढाल तथा तलवार ले ली और अभिमन्यु के शरीर से उसके कुण्डलयुक्त मस्तक को काट डालने का विचार किया।

**स कोसलानामधिपं राजपुत्रं बृहद्बलम्।**
**हृदि विव्याध बाणेन स भिन्नहृदयोऽपतत् ॥१००॥**

इसी बीच में अभिमन्यु ने एक बाण द्वारा कोसलनरेश राजपुत्र बृहद्बल के हृदय में गहरा आघात किया। इससे उसका वक्षःस्थल विदीर्ण हो गया और वह भूमि पर गिर पड़ा।

**तथा बृहद्बलं हत्वा सौभद्रो व्यचरद् रणे।**
**व्यष्टम्भयन्महेष्वासो योधाँस्तव शराम्बुभिः ॥१०१॥**

इस प्रकार बृहद्बल का वध करके महाधनुर्धर अभिमन्यु आपके योद्धाओं को अपने बाणरूपी जल की वर्षा से स्तब्ध करता हुआ रणक्षेत्र में विचरने लगा।

**अथाब्रवीत् पुनर्द्रोणं कर्णो वैकर्तनो रणे।**
**पुरा सर्वान् प्रमथ्नाति ब्रूह्यस्य वधमाशु नः ॥१०२॥**

तब विकर्तनपुत्र कर्ण ने युद्धभूमि में द्रोणाचार्य से पूछा—"आचार्य ! अभिमन्यु हम लोगों को मार डाले—इससे पूर्व ही हमें शीघ्र यह बताइए कि इसका वध किस प्रकार होगा।"

**तमाचार्योऽब्रवीत् कर्णं शनकैः प्रहसन्निव ।**
**अभेद्यमस्य कवचं युवा चाशुपराक्रमः ॥१०३॥**

यह सुनकर द्रोणाचार्य ठहाका मारकर हंसते हुए-से धीरे-धीरे कर्ण से इस प्रकार बोले—"कर्ण ! अभिमन्यु का कवच अभेद्य है और यह तरुण वीर शीघ्रतापूर्वक पराक्रम प्रकट करनेवाला है।

**शक्यं त्वस्य धनुश्छेत्तुं ज्यां च बाणैः समाहितैः ।**
**अभीषूंश्च हयांश्चैव तथोभौ पार्ष्णिसारथी ॥१०४॥**
**एतत् कुरु महेष्वास राधेय यदि शक्यते ।**
**अथैनं विमुखीकृत्य पश्चात् प्रहरणं कुरु ॥१०५॥**

"[इसका कवच तो अभेद्य है] परन्तु मनोयोग-पूर्वक चलाये गये बाणों से इसके धनुष और प्रत्यञ्चा को काटा जा सकता है। साथ ही इसके घोड़ों की बागडोरों को, घोड़ों को और दोनों पार्श्वरक्षों को भी नष्ट किया जा सकता है। महाधनुर्धर राधापुत्र ! यदि कर सको तो यही करो। अभिमन्यु को युद्ध से विमुख करके फिर इसपर प्रहार करो।

**सधनुष्को न शक्योऽयमपि जेतुं सुरासुरैः ।**
**विरथं विधनुष्कं च कुरुष्वैनं यदीच्छसि ॥१०६॥**

"धनुष हाथ में लिये रहने पर तो इसे सम्पूर्ण देवता और असुर भी नहीं जीत सकते। यदि तुम इसे परास्त करना चाहते हो तो इसके रथ और धनुष को नष्ट कर दो।"

**तदाचार्यवचः श्रुत्वा कर्णो वैकर्तनस्त्वरन् ।**
**अस्यतो लघुहस्तस्य पृषत्कैर्धनुराच्छिनत् ॥१०७॥**
**अश्वानस्यावधीद् भोजो गौतमः पार्ष्णिसारथी ।**
**शेषास्तु छिन्नधन्वानं शरवर्षैरवाकिरन् ॥१०८॥**

आचार्य की यह बात सुनकर विकर्तनपुत्र ने बड़ी उतावली के साथ अपने बाणों द्वारा शीघ्रतापूर्वक हाथ चलाते हुए अस्त्रों का प्रयोग करनेवाले अभिमन्यु के धनुष को काट डाला। भोजवंशी कृतवर्मा ने उसके घोड़े मार डाले और कृपाचार्य ने दोनों पार्श्वरक्षकों का काम तमाम कर दिया। शेष महारथी धनुष कट जाने पर अभिमन्यु पर बाणों की वर्षा करने लगे।

**त्वरमाणास्त्वराकाले विरथं षण्महारथाः ।**
**शरवर्षैरकरुणा युवानस्तमवाकिरन् ॥१०९॥**

इस प्रकार शीघ्रता करने के अवसर पर शीघ्रता करनेवाले छह निर्दयी महारथी एक रथहीन युवक पर बाणों की वृष्टि करने लगे।

**स छिन्नधन्वा विरथः स्वधर्ममनुपालयन् ।**
**खड्गचर्मधरः श्रीमानुत्पपात विहायसा ॥११०॥**

धनुष के कट जाने और रथ नष्ट हो जाने पर तेजस्वी वीर अभिमन्यु अपने क्षात्रधर्म का पालन करते हुए ढाल और तलवार हाथ में लेकर आकाश में उछल पड़ा।

**तस्य द्रोणोऽच्छिनन्मुष्टौ खड्गं मणिमयत्सरम् ।**
**क्षुरप्रेण महातेजास्त्वरमाणः सपत्नजित् ॥१११॥**

उस समय शत्रुओं पर विजय पानेवाले महा-तेजस्वी द्रोणाचार्य ने शीघ्रता करते हुए एक क्षुरप्र के द्वारा अभिमन्यु की मुट्ठी में स्थित मणिमय मूठ से युक्त खड्ग को काट दिया।

**राधेयो निशितैर्बाणैर्व्यधमच्चर्म चोत्तमम् ।**
**विखड्गे चक्रमुद्यम्य द्रोणं क्रुद्धोऽभ्यधावत ॥११२॥**

राधानन्दन कर्ण ने अपने तीखे तीरों द्वारा उसकी उत्तम ढाल के टुकड़े-टुकड़े कर डाले। खड्ग [और ढाल] से रहित हो जाने पर अभिमन्यु चक्र हाथ में ले कुपित हो द्रोणाचार्य की ओर दौड़ा।

**वपुः समीक्ष्य पृथ्वीशा दुःसमीक्ष्यं सुरैरपि ।**
**तच्चक्रं भृशमुद्विग्नाः सञ्चिच्छिदुरनेकधा ॥११३॥**

उस समय उसके शरीर और उस चक्र को—जिसकी ओर दृष्टिपात करना देवताओं के लिए भी अति कठिन था—देखकर समस्त नरेश उद्विग्न हो उठे और उन सबने मिलकर उस चक्र के टुकड़े-टुकड़े कर दिये।

**विधनुः स्यन्दनासिस्तैर्विचक्रश्चारिभिः कृतः ।**
**अभिमन्युर्गदापाणिरश्वत्थामानमार्दयत् ॥११४॥**

शत्रुओं ने उसे धनुष, रथ, खड्ग और चक्र से वञ्चित कर दिया था, अतः वह गदा हाथ में लेकर अश्वत्थामा पर टूट पड़ा।

**स गदामुद्यतां दृष्ट्वा ज्वलन्तीमशनीमिव ।**
**अपाक्रमद् रथोपस्थाद् विक्रमाँस्त्रीन् नरर्षभः ॥११५॥**

प्रज्वलित वज्र के समान उस गदा को ऊपर उठी हुई देख नरश्रेष्ठ अश्वत्थामा अपने रथ की बैठक से तीन पग पीछे हट गया ।

**तस्याश्वान् गदया हत्वा तथोभौ पार्ष्णिसारथी ।**
**शराचिताङ्गः सौभद्रः श्वाविद्वत् समदृश्यत ॥११६॥**

उस गदा से अश्वत्थामा के चारों घोड़ों और दोनों पार्श्वरक्षकों को मारकर बाणों से भरे हुए शरीरवाला सुभद्राकुमार साही के समान दृष्टिगोचर होने लगा ।

**ततः सुबलदायादं कालिकेयमपोथयत् ।**
**पुनश्चैव वसातीयाञ्जघान रथिनो दश ॥११७॥**

तत्पश्चात् उसने सुबलपुत्र कालिकेय को मार गिराया । फिर दस वसातीय रथियों को मार डाला ।

**केकयानां रथान् सप्त हत्वा च दशकुञ्जरान् ।**
**दौःशासनिरथं साश्वं गदया समपोथयत् ॥११८॥**

इसके बाद केकयों के सात रथों और दस हाथियों को मारकर दुःशासनकुमार के घोड़ोंसहित रथ को भी गदा के आघात से चूर-चूर कर दिया ।

**ततो दौःशासनिः क्रुद्धो गदामुद्यम्य मारिष ।**
**अभिदुद्राव सौभद्रं तिष्ठ तिष्ठेति चाब्रवीत् ॥११९॥**

आर्य ! इससे दुःशासनपुत्र कुपित हो गदा हाथ में लेकर अभिमन्यु की ओर दौड़ा और इस प्रकार बोला—"अरे ! खड़ा रह, खड़ा रह ।"

**तावुद्यतगदौ वीरावन्योन्यवधकांक्षिणौ ।**
**भ्रातृव्यौ सम्प्रजह्राते पुरेव त्र्यम्बकान्धकौ ॥१२०॥**

चचेरे भाई होकर भी वे दोनों वीर एक-दूसरे के शत्रु थे, अतः वे गदा हाथ में लेकर एक-दूसरे का काम तमाम करने की इच्छा से परस्पर प्रहार करने लगे । ठीक वैसे ही जैसे पूर्वकाल में शिव और अन्धकासुर परस्पर गदा का आघात करते थे ।

**तावन्योन्यं गदाग्राभ्यामाहत्य पतितौ क्षितौ ।**
**दौःशासनिरथोत्थाय कुरूणां कीर्तिवर्धनः ॥१२१॥**
**उत्तिष्ठमानं सौभद्रं गदया मूर्ध्न्यताडयत् ।**
**गदावेगेन महता व्यायामेन च मोहितः ॥१२२॥**
**विचेता न्यपतद् भूमौ सौभद्रः परवीरहा ।**
**एवं विनिहितो राजन्नेको बहुभिराहवे ॥१२३॥**

वे दोनों वीर गदा के अग्रभाग से एक-दूसरे को चोट पहुँचाकर पृथिवी पर गिर पड़े । तत्पश्चात् कुरुकुल की कीर्ति बढ़ानेवाले दुःशासनपुत्र ने पहले उठते हुए सुभद्राकुमार के मस्तक पर गदा का प्रहार किया । गदा के उस महान् वेग और परिश्रम से मूर्च्छित होकर शत्रुवीरों का संहारक अभिमन्यु पृथिवी पर गिर पड़ा । राजन् ! इस प्रकार उस युद्धस्थल में बहुत-से योद्धाओं ने मिलकर एकाकी अभिमन्यु को मार डाला ।

**तं भूमौ पतितं दृष्ट्वा तावकास्ते महारथाः ।**
**मुदा परमया युक्ताश्चुक्रुशुः सिंहवन्मुहुः ॥१२४॥**

अभिमन्यु को भूमि पर पड़ा हुआ देखकर आपके महारथी अति प्रसन्नता से बारम्बार सिंहनाद करने लगे ।

**आसीत् परमको हर्षस्तावकानां विशाम्पते ।**
**इतरेषां तु वीराणां नेत्रेभ्यः प्रापतज्जलम् ॥१२५॥**

नरेश्वर ! आपके पुत्र तो अभिमन्यु की मृत्यु से अत्यन्त हर्षित हुए, परन्तु पाण्डव वीरों के नेत्रों से आँसू बहने लगे ।

**दीर्यमाणं बलं दृष्ट्वा सौभद्रे विनिपातिते ।**
**अजातशत्रुस्तान् वीरानिदं वचनमब्रवीत् ॥१२६॥**

सुभद्राकुमार के धराशायी हो जाने पर अपनी सेना में भगदड़ मची देख अजातशत्रु युधिष्ठिर ने अपने पक्ष के उन वीरों से यह वचन कहा—

**स्वर्गमेष गतः शूरो यो हतो न पराङ्मुखः ।**
**संस्तम्भयत मा भैष्ट विजेष्यामो रणे रिपून् ॥१२७॥**

"युद्ध में पीठ न दिखानेवाला शूरवीर अभिमन्यु मारा जाकर निश्चय ही स्वर्गलोक में गया है । तुम सब लोग धैर्य धारण करो, भयभीत मत होओ । हम लोग युद्धभूमि में शत्रु को अवश्य जीतेंगे ।"

**इत्येवं स महातेजा दुःखितेभ्यो महाद्युतिः ।**
**धर्मराजो युधां श्रेष्ठो ब्रुवन् दुःखमपानुदत् ॥१२८॥**

महातेजस्वी, परमकान्तिमान् और योद्धाओं में श्रेष्ठ धर्मराज युधिष्ठिर ने अपने दुःखी सैनिकों से इस प्रकार कहकर उनका दुःख-निवारण किया ।

**वयं तु प्रवरं हत्वा तेषां तैः शरपीडिताः ।**
**निवेशायाभ्युपायामः सायाह्ने रुधिरोक्षिताः ।।१२६।।**

राजन् ! हम लोग शत्रुओं के उस प्रमुख वीर का वध करके उनके बाणों से पीड़ित हो सन्ध्या के समय शिबिर में विश्राम के लिए चले आये। उस समय हम लोगों के शरीर रक्त से भीग गये थे।

**निरीक्षमाणास्तु वयं परे चायोधनं शनैः ।**
**अपयाता महाराज ग्लानिं प्राप्ता विचेतसः ।।१३०।।**

महाराज ! हम और शत्रुपक्ष के लोग रणभूमि को देखते हुए धीरे-धीरे वहाँ से हट गये। पाण्डवपक्ष के लोग अत्यन्त शोकग्रस्त हो अचेत हो रहे थे।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि षष्ठोऽध्यायः ।।६।।**

# सप्तमोऽध्यायः

## युधिष्ठिर का विलाप और व्यासजी का उन्हें आश्वासन देना

सञ्जय उवाच

**हते तस्मिन् महावीर्ये सौभद्रे रथयूथपे ।**
**विमुक्तरथसंनाहाः सर्वे निक्षिप्तकार्मुकाः ।।१।।**
**उपोपविष्टा राजानं परिवार्य युधिष्ठिरम् ।**
**तदेव युद्धं ध्यायन्तः सौभद्रगतमानसाः ।।२।।**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! महापराक्रमी रथ-यूथपति सुभद्राकुमार अभिमन्यु के मारे जाने पर समस्त पाण्डव महारथी रथ और कवच को त्यागकर तथा धनुष को नीचे डालकर राजा युधिष्ठिर को चारों ओर से घेरकर उनके पास बैठ गये। उन सबका मन सुभद्राकुमार अभिमन्यु में ही लगा था और वे उसी युद्ध का चिन्तन कर रहे थे।

**ततो युधिष्ठिरो राजा विललाप सुदुःखितः ।**
**अभिमन्यौ हते वीरे भ्रातुः पुत्रे महारथे ।।३।।**

उस समय महाराज युधिष्ठिर अपने भाई के वीर पुत्र महारथी अभिमन्यु के मारे जाने के कारण अत्यन्त दुःखी हो विलाप करने लगे—

**कथं द्रक्ष्यामि कौन्तेयं सौभद्रे निहतेऽर्जुनम् ।**
**सुभद्रां वा महाभागां प्रियं पुत्रमपश्यतीम् ।।४।।**

"सुभद्राकुमार अभिमन्यु के मार दिये जाने पर अब मैं कुन्तीपुत्र अर्जुन से आँखें कैसे मिला सकूँगा ? अथवा अपने प्रिय पुत्र को अब न देख पानेवाली महाभागा सुभद्रा के सामने कैसे जाऊँगा ?

**किंस्विद् वयमपेतार्थमश्लिष्टमसमञ्जसम् ।**
**तावुभौ प्रतिवक्ष्यामो हृषीकेशधनञ्जयौ ।।५।।**

"हाय ! हम लोग श्रीकृष्ण और अर्जुन—दोनों के सामने किस प्रकार यह अनर्थपूर्ण, असंगत और अनुचित वृत्तान्त कह सकेंगे ?

**अहमेव सुभद्रायाः केशवार्जुनयोरपि ।**
**प्रियकामो जयाकांक्षी कृतवानिदमप्रियम् ।।६।।**

"मैंने ही अपने प्रिय कार्य की इच्छा तथा विजय की अभिलाषा रखकर सुभद्रा, श्रीकृष्ण और अर्जुन का यह अप्रिय कार्य किया है।

**न लुब्धो बुध्यते दोषाँल्लोभान्मोहात् प्रवर्तते ।**
**मधुलिप्सुर्हि नापश्यं प्रपातमहमीदृशम् ।।७।।**

"लोभी मनुष्य किसी कार्य के दोष को नहीं समझता। वह लोभ और मोह के वशीभूत होकर उसमें संलग्न हो जाता है। मैंने मधु के समान मधुर लगनेवाले राज्य को पाने की इच्छा रखकर यह नहीं देखा कि इसमें ऐसे भयंकर पतन का भय है।

**यो हि भोज्ये पुरस्कार्यो यानेषु शयनेषु च ।**
**भूषणेषु च सोऽस्माभिर्युवा युधि पुरस्कृतः ।।८।।**

"हाय ! जिसको भोजन और शयन करने, सवारी पर चलने तथा आभूषण एवं वस्त्र पहनने में आगे रखना चाहिए था, उसे हम लोगों ने युद्ध में आगे कर दिया।

**न मम जयः प्रीतिकरो न राज्यं**
**न चामरत्वं न सुरैः सलोकता ।**
**इमं समीक्ष्याप्रतिवीर्यपौरुषं**
**निपातितं देववरात्मजात्मजम् ।।९।।**

"जिसके बल और पुरुषार्थ की कहीं तुलना नहीं थी, देवेन्द्रकुमार अर्जुन के पुत्र इस अभिमन्यु को

रणक्षेत्र में मारा गया देख अब मुझे विजय, राज्य, अमरत्व और देवलोक की प्राप्ति भी प्रसन्न नहीं कर सकती।"

**अथैनं विलपन्तं तं कुन्तीपुत्रं युधिष्ठिरम्।**
**कृष्णद्वैपायनस्तत्र आजगाम महानृषिः ॥१०॥**

राजन्! इस प्रकार विलाप करते हुए कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर के पास वहाँ महर्षि श्रीकृष्ण-द्वैपायन व्यास-जी आये।

व्यास उवाच

**युधिष्ठिर महाप्राज्ञ सर्वशास्त्रविशारद।**
**व्यसनेषु न मुह्यन्ति त्वादृशा भरतर्षभ ॥११॥**

**व्यासजी बोले**—सम्पूर्ण शास्त्रों के ज्ञाता, परम बुद्धिमान्, भरतकुलभूषण युधिष्ठिर! तुम्हारे जैसे पुरुष संकट के समय मोहित नहीं होते।

**स्वर्गमेष गतः शूरः शत्रून् हत्वा बहून् रणे।**
**अबालसदृशं कर्म कृत्वा वै पुरुषोत्तमः ॥१२॥**

यह पुरुषोत्तम अभिमन्यु शूरवीर था। इसने युद्ध में युवकों जैसा पराक्रम प्रदर्शित करके और बहुत-से शत्रुओं को मारकर स्वर्गलोक की यात्रा की है।

**अनतिक्रमणीयो वै विधिरेष युधिष्ठिर।**
**देवदानवगन्धर्वान् मृत्युर्हरति भारत ॥१३॥**

भरतभूषण! युधिष्ठिर! विधाता के विधान का कोई भी उल्लंघन नहीं कर सकता। मृत्यु देवताओं, दानवों और गन्धर्वों का भी प्राण हर लेती है।

**शूरो वीरः कृतार्थश्च प्रताप्यारीन् सहस्रशः।**
**अभिमन्युर्गतो वीरः पृतनाभिमुखो हतः ॥१४॥**

शूरवीर अभिमन्यु तो कृतार्थ हो चुका है। वह वीर शत्रुसेना के सम्मुख युद्ध में तत्पर हो सहस्रों वैरियों को संतप्त करके मारा गया और स्वर्गलोक में जा पहुँचा है।

**एवं ज्ञात्वा स्थिरो भूत्वा जह्यरीन् धैर्यमाप्नुहि।**
**जीवन्त एव नः शोच्या न तु स्वर्गगतोऽनघ ॥१५॥**

राजन्! ऐसा जानकर स्थिरचित्त होकर धैर्य का आश्रय लो और उत्साहपूर्वक शत्रुओं का वध करो। निष्पाप नरेश! हमें इस संसार में जीवित पुरुषों के लिए ही शोक [चिन्ता] करना चाहिए। स्वर्गवासी के लिए शोक करना उचित नहीं है।

**शोचतो हि महाराज अघमेवाभिवर्धते।**
**तस्माच्छोकं परित्यज्य श्रेयसे प्रयतेद् बुधः ॥१६॥**

महाराज! शोक करने से केवल दुःख ही बढ़ता है, अतः विद्वान् पुरुष शोक का परित्याग करके अपने कल्याण के लिए ही प्रयत्न करे।

सञ्जय उवाच

**गते भगवति व्यासे समाश्वास्य युधिष्ठिरम्।**
**पुनश्चाचिन्तयद् दीनः किंस्विद्वक्ष्ये धनञ्जयम् ॥१७॥**

**सञ्जय कहते हैं**—भगवान् व्यास जब युधिष्ठिर को आश्वासन देकर चले गये, तब युधिष्ठिर दीन-भाव से पुनः यह सोचने लगे कि मैं अर्जुन से क्या कहूँगा?

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि सप्तमोऽध्यायः ॥७॥**

## अष्टमोऽध्यायः

### अभिमन्यु की मृत्यु का समाचार सुनकर अर्जुन द्वारा जयद्रथ-वध की प्रतिज्ञा

सञ्जय उवाच

**हत्वा संशप्तकव्रातान् दिव्यैरस्त्रैः कपिध्वजः।**
**प्रायात स शिबिरं जिष्णुर्जैत्रमास्थाय तं रथम् ॥१॥**
**गच्छन्नेव स गोविन्दं साश्रुकण्ठोऽभ्यभाषत।**
**किं नु मे हृदयं त्रस्तं वाक् च सज्जति केशव ॥२॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज! उधर विजयशील कपिध्वज अर्जुन अपने दिव्य-अस्त्रों द्वारा संशप्तक-समूहों का वध करके अपने विजयी रथ पर बैठे हुए शिबिर की ओर चले। चलते-चलते वे आँखों से आँसू बहाते हुए गद्‌गद कण्ठ हो श्रीकृष्ण से बोले—"केशव! न जाने क्यों आज मेरा हृदय धड़क रहा है और वाणी लड़खड़ा रही है!

**अनिष्टं चैव मे श्लिष्टं हृदयान्नापसर्पति।**
**भुवि ये दिक्षु चात्युग्रा उत्पातास्त्रासयन्ति माम् ॥३॥**

"मेरे हृदय में अनिष्ट की चिन्ता घुसी हुई है, जो किसी भी प्रकार वहाँ से निकलती नहीं है। पृथिवी

पर और सम्पूर्ण दिशाओं में होनेवाले उत्पात मुझे डरा रहे हैं।

**बहुप्रकारा दृश्यन्ते सर्व एवाघशंसिनः।**
**अपि स्वस्ति भवेद् राज्ञः सामात्यस्य गुरोर्मम ॥४॥**

"जो अनेक प्रकार के उत्पात दिखाई देते हैं, वे सब-के-सब भारी अमङ्गल की सूचना देनेवाले हैं। क्या मेरे पूज्य भ्राता महाराज युधिष्ठिर अपने मन्त्रियोंसहित सकुशल होंगे?"

वासुदेव उवाच

**व्यक्तं शिवं तव भ्रातुः सामात्यस्य भविष्यति।**
**मा शुचः किञ्चिदेवान्यत् तत्रानिष्टं भविष्यति ॥५॥**

**श्रीकृष्ण बोले**—अर्जुन! शोक न करो। मुझे स्पष्ट ज्ञात होता है कि मन्त्रियोंसहित तुम्हारे भाई का कल्याण ही होगा। इन अपशकुनों के अनुसार कोई अन्य ही अनिष्ट हुआ होगा।

सञ्जय उवाच

**ततः सन्ध्यामुपास्यैव वीरौ वीरावसादने।**
**कथयन्तौ रणे वृत्तं प्रयातौ रथमास्थितौ ॥६॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! तत्पश्चात् वे दोनों वीर उस वीरसंहारक युद्धभूमि में सन्ध्यावन्दन करके पुनः रथ में बैठकर युद्ध-सम्बन्धी वार्तालाप करते हुए आगे बढ़े।

**ततः स्वशिबिरं प्राप्तौ हतानन्दं हतत्विषम्।**
**वासुदेवोऽर्जुनश्चैव कृत्वा कर्म सुदुष्करम् ॥७॥**

फिर श्रीकृष्ण और अर्जुन जो अत्यन्त दुष्कर कर्म करके लौट रहे थे, अपने शिबिर के निकट आ पहुँचे। उस समय वह शिबिर आनन्दशून्य और श्रीहीन दृष्टिगोचर हो रहा था।

**ध्वस्ताकारं समालक्ष्य शिबिरं परवीरहा।**
**बीभत्सुरब्रवीत् कृष्णमस्वस्थहृदयस्ततः ॥८॥**

अपनी छावनी को विध्वस्त हुई-सी देखकर शत्रु-वीरों के संहारक अर्जुन का हृदय चिन्तित हो उठा, अतः वे श्रीकृष्ण से इस प्रकार बोले—

**नदन्ति नाद्य तूर्याणि मङ्गल्यानि जनार्दन।**
**मिश्रा दुन्दुभिनिर्घोषैः शंखाश्चाडम्बरैः सह ॥९॥**

"जनार्दन! आज इस शिबिर में माङ्गलिक बाजे नहीं बज रहे हैं। दुन्दुभि-नाद और तुरही के शब्दों के साथ मिली हुई शंखध्वनि भी सुनाई नहीं दे रही है।

**योधाश्चापि हि मां दृष्ट्वा निवर्तन्ते ह्यधोमुखाः।**
**कर्माणि च यथापूर्वं कृत्वा नाभिवदन्ति माम् ॥१०॥**

"मेरे सैनिक मुझे देखकर नीचे मुख किये लौट जाते हैं। वे पहले की भाँति अभिवादन करके मुझे युद्ध का समाचार नहीं बता रहे हैं।

**न च मामद्य सौभद्रः प्रहृष्टो भ्रातृभिः सह।**
**रणादायान्तमुचितं प्रत्युद्याति हसन्निव ॥११॥**

"आज प्रतिदिन की भाँति अभिमन्यु अपने भाइयों के साथ हर्ष में भरकर हँसता हुआ-सा युद्ध से लौटते हुए मेरी उचित अगवानी करने क्यों नहीं आ रहा है?"

**एवं संकथयन्तौ तौ प्रविष्टौ शिबिरं स्वकम्।**
**ददृशाते भृशास्वस्थान् पाण्डवान् नष्टचेतसः ॥१२॥**

राजन्! इस प्रकार बातें करते हुए उन दोनों ने शिबिर में पहुँचकर देखा कि पाण्डव अत्यन्त व्याकुल और हतोत्साह हो रहे हैं।

**दृष्ट्वा भ्रातॄंश्च पुत्रांश्च विमना वानरध्वजः।**
**अपश्यंश्चैव सौभद्रमिदं वचनमब्रवीत् ॥१३॥**

भाइयों तथा पुत्रों को इस अवस्था में देख और सुभद्राकुमार को वहाँ न पाकर कपिध्वज अर्जुन का मन उदास हो गया और वे इस प्रकार बोले—

**मुखवर्णोऽप्रसन्नो वः सर्वेषामेव लक्ष्यते।**
**न चाभिमन्युं पश्यामि न च मां प्रतिनन्दथ ॥१४॥**

"आज आप सभी लोगों के मुख की कान्ति अप्रसन्न दिखाई देती है, उधर अभिमन्यु भी दिखाई नहीं देता और आप लोग भी मुझसे प्रसन्नतापूर्वक वार्तालाप नहीं कर रहे हैं।

**मया श्रुतश्च द्रोणेन चक्रव्यूहो विनिर्मितः।**
**न कश्चित्तस्य भेत्तास्ति विना सौभद्रमर्भकम् ॥१५॥**

"मैंने सुना है कि आचार्य द्रोण ने चक्रव्यूह की रचना की थी। आप लोगों में से अभिमन्युकुमार के सिवा दूसरा कोई उस [illegible] का भेदन नहीं कर सकता था।

**न चोपदिष्टस्तस्यासीन्मयानीकाद् विनिर्गमः।**
**कच्चिन्न बालो युष्माभिः परानीकं प्रवेशितः ॥१६॥**

"मैंने उसे व्यूह से निकलने का ढंग अभी नहीं बताया था। कहीं ऐसा तो नहीं हुआ कि आप लोगों ने उस बालक को शत्रु के व्यूह में भेज दिया हो ?

**भित्त्वानीकं महेष्वासः परेषां बहुशो युधि ।**
**कच्चिन्न निहतः संख्ये सौभद्रः परवीरहा ॥१७॥**

"शत्रुवीरों का संहारक, महाधनुर्धर सुभद्राकुमार अभिमन्यु युद्ध में शत्रुओं के उस व्यूह का अनेक बार भेदन करके अन्त में वहीं मारा तो नहीं गया ?

**वार्ष्णेयीदयितं शूरं मया सततलालितम् ।**
**यदि पुत्रं न पश्यामि यास्यामि यमसादनम् ॥१८॥**

"सुभद्रा के प्राणप्यारे शूरवीर पुत्र को, जिसको मैंने सदा लाड़-प्यार किया है, यदि नहीं देखूँगा तो मैं भी यमलोक चला जाऊँगा ।

**अभिवादनदक्षं तं पितॄणां वचने रतम् ।**
**नाद्याहं यदि पश्यामि का शान्तिर्हृदयस्य मे ॥१९॥**

"अभिवादन करने में कुशल और पितृवर्ग की आज्ञा का पालन करने में तत्पर अभिमन्यु को यदि आज मैं नहीं देखता हूँ तो मेरे हृदय को क्या शान्ति मिलेगी ?"

**एवं विलप्य बहुधा भिन्नपोतो वणिग् यथा ।**
**दुःखेन महताऽऽविष्टो युधिष्ठिरमपृच्छत ॥२०॥**

इस प्रकार बारम्बार विलाप करके टूटे हुए जलयानवाले व्यापारी की भाँति महान् दुःख से व्याप्त हो अर्जुन ने युधिष्ठिर से इस प्रकार पूछा—

**कच्चित्स कदनं कृत्वा परेषां कुरुनन्दन ।**
**स्वर्गतोऽभिमुखः संख्ये युद्धमानो नरर्षभः ॥२१॥**

"कुरुनन्दन ! क्या शत्रुवीरों के साथ युद्ध करता हुआ अभिमन्यु युद्धभूमि में शत्रुओं का संहार करके पीठ न दिखाता हुआ मारा जाकर स्वर्गलोक में गया है ?

**स नूनं बहुभिर्यत्तैर्युध्यमानो नरर्षभः ।**
**असहायः सहायार्थी मामनुध्यातवान् ध्रुवम् ॥२२॥**

"निश्चय ही बहुत-से श्रेष्ठ और सावधानतापूर्वक युद्ध करनेवाले योद्धाओं के साथ अकेले लड़ते हुए अभिमन्यु ने सहायता की इच्छा से मेरा बारम्बार स्मरण किया होगा ।

**वज्रसारमयं नूनं हृदयं सुदृढं मम ।**
**अपश्यतो दीर्घबाहुं रक्ताक्षं यन्न दीर्यते ॥२३॥**

"निश्चय ही मेरा यह हृदय अति कठोर और वज्रसार का बना हुआ है, तभी तो लाल नेत्रोंवाले महाबाहु अभिमन्यु को न देखने पर भी यह फट नहीं जाता है ।

**यो मां नित्यमदीनात्मा प्रत्युद्गम्याभिनन्दति ।**
**उपायान्तं रिपून् हत्वा सोऽद्य मां किं न पश्यति ॥२४॥**

"जब मैं शत्रुओं का संहार करके शिबिर को लौटता था, उस समय जो प्रतिदिन प्रसन्नचित्त हो आगे बढ़कर मेरा अभिनन्दन करता था, वह अभिमन्यु आज मुझे क्यों नहीं देख रहा है ?

**नूनं स पतितः शेते धरण्यां रुधिरोक्षितः ।**
**शोभयन् मेदिनीं गात्रैरादित्य इव पातितः ॥२५॥**

"निश्चय ही शत्रुओं ने उसे मार गिराया है और वह खून से लथपथ होकर धरती पर पड़ा सो रहा है तथा आकाश से नीचे गिराये हुए सूर्य की भाँति अपने अङ्गों से पृथिवी की शोभा बढ़ा रहा है ।

**सुभद्रामनुशोचामि या पुत्रमपलायिनम् ।**
**रणे विनिहतं श्रुत्वा शोकार्ता वै विनङ्क्ष्यति ॥२६॥**

"मुझे बारम्बार सुभद्रा के लिए शोक हो रहा है, जो युद्ध से मुँह न मोड़नेवाले अपने वीर पुत्र को रणक्षेत्र में मारा गया सुनकर शोकातुर हो अपने प्राण गँवा देगी ।

**सुभद्रा वक्ष्यते किं मामभिमन्युमपश्यती ।**
**द्रौपदी चैव दुःखार्ते ते च वक्ष्यामि किं न्वहम् ॥२७॥**

"अभिमन्यु को न देखकर सुभद्रा मुझे क्या कहेगी ? द्रौपदी भी मुझसे किस प्रकार वार्तालाप करेगी ? इन दोनों दुखिया देवियों को मैं क्या उत्तर दूँगा ?"

**निगृह्य वासुदेवस्तं पुत्राधिभिरभिप्लुतम् ।**
**मैवमित्यब्रवीत् कृष्णस्तीव्रशोकसमन्वितम् ॥२८॥**

राजन् ! पुत्रशोक के कारण होनेवाली गहरी मनोव्यथा में डूबे हुए और तीव्र शोक से सन्तप्त अर्जुन को श्रीकृष्ण ने पकड़कर सँभाला और उससे बोले—"मित्र ! ऐसे व्याकुल मत होओ ।

**सर्वेषामेष वै पन्थाः शूराणामनिवर्तिनाम् ।**
**क्षत्रियाणां विशेषेण येषां युद्धेन जीविका ॥२९॥**

"युद्ध में पीठ न दिखानेवाले सभी शूरवीरों का यही मार्ग है। विशेषरूप से उन क्षत्रियों को, जिनकी आजीविका युद्ध से चलती है, इसी मार्ग से जाना पड़ता है।

**ध्रुवं हि युद्धे मरणं शूराणामनिवर्तिनाम्।**
**गतः पुण्यकृतां लोकानभिमन्युर्न संशयः ॥३०॥**

"पीछे पैर न हटानेवाले शूरवीरों का युद्ध में प्राण त्यागना अवश्यम्भावी है। अभिमन्यु पुण्यात्मा पुरुषों के लोक में गया है, इसमें संशय नहीं है।

**मा शुचः पुरुषव्याघ्र पूर्वैरेष सनातनः।**
**धर्मकृद्भिः कृतो धर्मः क्षत्रियाणां रणे क्षयः ॥३१॥**

"पुरुषसिंह! शोक न करो! प्राचीन धर्मशास्त्रकारों ने संग्राम में वध होना ही क्षत्रियों का सनातन-धर्म नियत किया है।

**इमे ते भ्रातरः सर्वे दीना भरतसत्तम।**
**त्वयि शोकसमाविष्टे नृपाश्च सुहृदस्तव ॥३२॥**

"भरतकुलभूषण! तुम्हारे शोकाकुल हो जाने से ये तुम्हारे सभी भाई, भूपाल और मित्रगण दीन हो रहे हैं।

**एतांश्च वचसा साम्ना समाश्वासय मानद।**
**विदितं वेदितव्यं ते न शोकं कर्तुमर्हसि ॥३३॥**

"मानद! इन सबको अपने शान्तिपूर्ण वचनों से आश्वासन दो। तुम्हें जानने योग्य तत्त्व का ज्ञान हो चुका है, अतः तुम्हें शोक नहीं करना चाहिए।"

**एवमाश्वासितः पार्थः कृष्णेनाद्भुतकर्मणा।**
**ततोऽब्रवीत् तदा भ्रातॄन् सर्वान् पार्थः सगद्गदान् ॥३४**

अद्भुत कर्म करनेवाले श्रीकृष्ण के इस प्रकार समझाने-बुझाने पर अर्जुन उस समय वहाँ गद्गद कण्ठवाले अपने सब भाइयों से बोले—

**स दीर्घबाहुः पृथ्वंसो दीर्घराजीवलोचनः।**
**अभिमन्युर्यथा वृत्तः श्रोतुमिच्छाम्यहं तथा ॥३५॥**

"विशाल कन्धों, दीर्घ बाहुओं और कमल के समान विशाल नेत्रोंवाला अभिमन्यु युद्ध में जिस प्रकार लड़ा था, वह सब वृत्तान्त मैं सुनना चाहता हूँ।

**सनागस्यन्दनहयान् द्रक्ष्यध्वं निहतान् मया।**
**संग्रामे सानुबन्धांस्तान् मम पुत्रस्य वैरिणः ॥३६॥**

"कल आप लोग देखेंगे कि मेरे पुत्र के वैरी अपने हाथी, रथ, घोड़े और सगे-सम्बन्धियोंसहित युद्ध में मेरे द्वारा मार डाले गये हैं।"

**एवमुक्त्वा ततो वाक्यं तिष्ठंश्चापवरासिमान्।**
**न स्माशक्यत बीभत्सुः केनचित्प्रसमीक्षितुम् ॥३७॥**

ऐसा कहकर अर्जुन धनुष और उत्तम तलवार लेकर खड़े हो गये। उस समय कोई उनकी ओर आँख उठाकर भी न देख सका।

**ततस्तं पुत्रशोकेन भृशं पीडितमानसम्।**
**राजीवलोचनं क्रुद्धं राजा वचनमब्रवीत् ॥३८॥**

तत्पश्चात् मन-ही-मन पुत्रशोक से अत्यन्त व्याकुल हुए और क्रोध में भरे हुए कमलनयन अर्जुन से राजा युधिष्ठिर ने इस प्रकार कहा—

युधिष्ठिर उवाच

**त्वयि याते महाबाहो संशप्तकबलं प्रति।**
**प्रयत्नमकरोत् तीव्रमाचार्यो ग्रहणे मम ॥३९॥**

**युधिष्ठिर बोले**—महाबाहो! जब तुम संशप्तक सेना के साथ युद्ध के लिए चले गये, तब आचार्य द्रोण ने मुझे पकड़ने के लिए घोर प्रयत्न किया।

**व्यूढानीका वयं द्रोणं वारयामः स्म सर्वशः।**
**प्रतिव्यूह्य रथानीकं यतमानं तथा रणे ॥४०॥**

वे रथ-सेना का व्यूह बनाकर बारम्बार उद्योग करते थे तथा हम लोग युद्धभूमि में अपनी सेना को व्यूह में संगठित करके सब प्रकार से द्रोणाचार्य को आगे बढ़ने से रोक देते थे।

**स वार्यमाणो रथिभिर्मयि चापि सुरक्षिते।**
**अस्मानभिजगामाशु पीडयन् निशितैः शरैः ॥४१॥**

"जब रथियों द्वारा द्रोणाचार्य रोक दिये गये एवं मैं सुरक्षित रह गया, तब उन्होंने अपने तीखे बाणों द्वारा हमें पीड़ा देते हुए हम लोगों पर तीव्र वेग से आक्रमण किया।

**ते पीड्यमाना द्रोणेन द्रोणानीकं न शक्नुमः।**
**प्रतिवीक्षितुमप्याजौ भेत्तुं तत् कुत एव तु ॥४२॥**

"द्रोणाचार्य से पीड़ित होने के कारण हम लोग उनके सैन्यव्यूह की ओर आँख उठाकर देख भी नहीं सकते थे, फिर रणभूमि में उसका भेदन तो कर ही कैसे सकते थे?

**वयं त्वप्रतिमं वीर्ये सर्वे सौभद्रमात्मजम् ।**
**उक्तवन्तः स्म तं तात भिन्ध्यनीकमिति प्रभो ॥४३॥**

तब हम सब लोग अनुपम पराक्रमी आपके पुत्र सुभद्राकुमार अभिमन्यु से बोले, 'तात ! तुम इस व्यूह का भेदन करो, क्योंकि तुम ऐसा करने में समर्थ हो।'

**स तथा नोदितोऽस्माभिः सदश्व इव वीर्यवान् ।**
**असह्यमपि तं भारं वोढुमेवोपचक्रमे ॥४४॥**

हमारे इस प्रकार आज्ञा देने पर उस पराक्रमी वीर ने अच्छे घोड़े की भाँति उस असह्य भार को भी वहन करने का भरसक प्रयत्न किया ।

**स तवास्त्रोपदेशेन वीर्येण च समन्वितः ।**
**प्राविशत्तद्बलं बालः सुपर्ण इव सागरम् ॥४५॥**

तुम्हारे द्वारा दिये हुए अस्त्र-शस्त्र-विद्या के उपदेश और पराक्रम से सम्पन्न बालक अभिमन्यु ने उस सेना में उसी प्रकार प्रवेश किया जैसे गरुड़ सागर में घुसता है ।

**तेऽनुयाता वयं वीरं सात्वतीपुत्रमाहवे ।**
**ततः सैन्धवकस्तात सर्वान् नः समवारयत् ॥४६॥**

तदनन्तर हम लोग युद्धभूमि में सुभद्राकुमार अभिमन्यु के पीछे उस व्यूह में प्रविष्ट होने की इच्छा से चले । तात ! ठीक उसी समय सिन्धुनरेश जयद्रथ ने हम सबको अन्दर प्रविष्ट होने से रोक दिया ।

**ततो द्रोणः कृपः कर्णो द्रौणिः कौसल्य एव च ।**
**कृतवर्मा च सौभद्रं षड् रथाः पर्यवारयन् ॥४७॥**

तत्पश्चात् द्रोण, कृपाचार्य, कर्ण, अश्वत्थामा, बृहद्बल और कृतवर्मा इन छह महारथियों ने सुभद्रा कुमार को चारों ओर से घेर लिया ।

**परिवार्य तु तैः सर्वैर्युधि बालो महारथैः ।**
**यतमानः परं शक्त्या बहुभिर्विरथीकृतः ॥४८॥**

घिरा होने पर भी वह बालक पूरी शक्ति लगाकर उन सबपर विजय पाने का प्रयत्न करता रहा, तथापि वे संख्या में अधिक थे, अतः उन समस्त महारथियों ने उसे घेरकर रथहीन कर दिया ।

**ततो दौःशासनिः क्षिप्रं तथा तैर्विरथीकृतम् ।**
**संशयं परमं प्राप्य दिष्टान्तेनाभ्ययोजयत् ॥४९॥**

तब दुःशासनपुत्र लक्ष्मण ने अभिमन्यु के प्रहार से भारी प्राणसंकट में पड़कर पूर्वोक्त महारथियों द्वारा रथहीन किये हुए अभिमन्यु को शीघ्र ही [गदा के प्रहार से] मार डाला ।

सञ्जय उवाच

**ततोऽर्जुनो वचः श्रुत्वा धर्मराजेन भाषितम् ।**
**हा पुत्र इति निःश्वस्य व्यथितो न्यपतद् भुवि ॥५०॥**

**सञ्जय बोले**—धर्मराज युधिष्ठिर की कही हुई यह बात सुनकर अर्जुन व्यथा से पीड़ित हो लम्बी साँस खींचते हुए 'हा पुत्र' कहकर पृथिवी पर गिर पड़े ।

**प्रतिलभ्य ततः संज्ञां वासविः क्रोधमूर्च्छितः ।**
**कम्पमानो ज्वरेणेव निःश्वसंश्च मुहुर्मुहुः ॥५१॥**
**पाणिं पाणौ विनिष्पिष्य श्वसमानोऽश्रुनेत्रवान् ।**
**उन्मत्त इव विप्रेक्षन्निदं वचनमब्रवीत् ॥५२॥**

फिर इन्द्रकुमार अर्जुन होश में आकर क्रोध से व्यकुल हो मानो ज्वर से काँप रहे हों—इस प्रकार बारम्बार दीर्घ निःश्वास छोड़ते और हाथ पर हाथ मलते हुए नेत्रों से आँसू बहाने लगे और उन्मत्त के समान देखते हुए इस प्रकार बोले—

अर्जुन उवाच

**सत्यं वः प्रतिजानामि श्वोऽस्मि हन्ता जयद्रथम् ।**
**न चेद् वधभयाद् भीतो धार्तराष्ट्रान् प्रहास्यति ॥५३॥**
**न चास्मान्शरणं गच्छेत् कृष्णं वा पुरुषोत्तमम् ।**
**भवन्तं वा महाराज श्वोऽस्मि हन्ता जयद्रथम् ॥५४॥**

**अर्जुन बोले**—मैं आप लोगों के समक्ष सत्य प्रतिज्ञा करके कहता हूँ, कल जयद्रथ को अवश्य मार डालूँगा । महाराज ! यदि वह मारे जाने के भय से डरकर धृतराष्ट्र के पुत्रों को छोड़ नहीं देगा, मेरी, पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण की अथवा आपकी शरण में नहीं आ जाएगा तो कल उसे अवश्य मार डालूंगा ।

**धार्तराष्ट्रप्रियकरं मयि विस्मृतसौहृदम् ।**
**पापं बालवधे हेतुं श्वोऽस्मि हन्ता जयद्रथम् ॥५५॥**

जो धृतराष्ट्र के पुत्रों का प्रिय कर रहा है, जिसने मेरे प्रति अपना सौहार्द भुला दिया है और जो बालक अभिमन्यु के वध में प्रमुख कारण बना है, मैं उस पापी जयद्रथ को कल अवश्य मार डालूँगा ।

**रक्षमाणाश्च तं संख्ये यो मां योत्स्यन्ति केचन ।**
**अपि द्रोणकृपौ राजन् छादयिष्यामि ताञ्शरैः ॥५६॥**

राजन् ! युद्ध में जयद्रथ की रक्षा करते हुए जो

कोई भी मेरे साथ युद्ध करेंगे, चाहे वे द्रोणाचार्य और कृपाचार्य ही क्यों न हों, मैं उन्हें अपने बाणसमूह से ढक दूंगा।

**यद्येतदेवं संग्रामे न कुर्यां पुरुषर्षभाः।**
**मा स्म पुण्यकृतांल्लोकान्प्राप्नुयां शूरसम्मतान् ॥५७॥**

पुरुषश्रेष्ठ वीरो! यदि संग्रामभूमि में मैं ऐसा न कर सकूं तो पुण्यात्मा पुरुषों के उन लोकों को, जो शूरवीरों को प्रिय हैं, प्राप्त न करूँ।

**इमां चाप्यपरां भूयः प्रतिज्ञां मे निबोधत।**
**यद्यस्मिन्न हते पापे सूर्योऽस्तमुपयास्यति।**
**इहैव सम्प्रवेष्टाहं ज्वलितं जातवेदसम् ॥५८॥**

अब आप लोग पुनः मेरी यह दूसरी प्रतिज्ञा भी सुन लें। यदि इस पापी जयद्रथ के मारे जाने से पूर्व ही सूर्य अस्त हो जाएगा तो मैं यहीं प्रज्वलित अग्नि में प्रविष्ट हो जाऊँगा।

सञ्जय उवाच

**अर्जुनेन प्रतिज्ञाते पाञ्चजन्यं जनार्दनः।**
**प्रदध्मौ तत्र संक्रुद्धो देवदत्तं च फाल्गुनः ॥५९॥**

**सञ्जय कहते हैं**—अर्जुन के इस प्रकार प्रतिज्ञा कर लेने पर श्रीकृष्ण ने भी अत्यन्त क्रुद्ध होकर पाञ्चजन्य शंख बजाया। इधर अर्जुन ने भी देवदत्त नामक शंख फूँका।

**ततो वादित्रघोषाश्च प्रादुरासन् सहस्रशः।**
**सिंहनादश्च पाण्डूनां प्रतिज्ञाते महात्मना ॥६०॥**

महामना अर्जुन ने जब उक्त प्रतिज्ञा कर ली, तब पाण्डवों के शिबिर में अनेक बाजों के सहस्रों शब्द और पाण्डव वीरों का सिंहनाद भी सब ओर गूँजने लगा।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि अष्टमोऽध्यायः ॥८॥**

# नवमोऽध्यायः

## जयद्रथ का भय और दुर्योधन तथा द्रोणाचार्य का उसे आश्वासन देना

सञ्जय उवाच

**श्रुत्वा तु तं महाशब्दं पाण्डवानां जयैषिणाम्।**
**चारैः प्रवेदिते तत्र समुत्थाय जयद्रथः ॥१॥**
**शोकसम्मूढहृदयो दुःखेनाभिपरिप्लुतः।**
**जगाम समितिं राज्ञां सव्रीडो वाक्यमब्रवीत् ॥२॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! सिन्धुराज जयद्रथ ने जब विजयाभिलाषी पाण्डवों का वह महान् शब्द सुना और गुप्तचरों ने आकर जब अर्जुन की प्रतिज्ञा का समाचार निवेदन किया, तब वह सहसा उठकर खड़ा हो गया, उसका हृदय शोक से व्याकुल हो गया। वह दुःख से परिपूर्ण हो राजाओं की सभा में गया और लज्जित होकर बोला—

जयद्रथ उवाच

**वधो नूनं प्रतिज्ञातो मम गाण्डीवधन्वना।**
**तथा हि हृष्टाः क्रोशन्ति शोककाले स्म पाण्डवाः ॥३॥**

**जयद्रथ बोला**—राजाओ! निश्चय ही गाण्डीवधारी अर्जुन ने मेरे वध की प्रतिज्ञा कर ली है, तभी शोक के समय भी पाण्डव योद्धा बड़े हर्ष के साथ गर्जना कर रहे हैं।

**तन्न देवा न गन्धर्वा नासुरोरगराक्षसाः।**
**उत्सहन्तेऽन्यथा कर्तुं कुत एव नराधिपाः ॥४॥**

अर्जुन की इस प्रतिज्ञा को देवता, गन्धर्व, असुर, नाग और राक्षस भी नहीं बदल सकते, फिर ये नरेश तो उसे पलट ही कैसे सकते हैं?

**तस्मान्मामनुजानीत भद्रं वोऽस्तु नरर्षभाः।**
**अदर्शनं गमिष्यामि न मां द्रक्ष्यन्ति पाण्डवाः ॥५॥**

अतः नरश्रेष्ठ वीरो! आपका कल्याण हो। आप लोग मुझे जाने की आज्ञा दें। मैं अदृश्य हो जाऊँगा। पाण्डव मुझे देख नहीं सकेंगे।

सञ्जय उवाच

**एवं विलपमानं तं भयाद् व्याकुलचेतसम्।**
**आत्मकार्यगरीयस्त्वाद् राजा दुर्योधनोऽब्रवीत् ॥६॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! भय से व्याकुलचित्त होकर विलाप करते हुए जयद्रथ से राजा दुर्योधन ने अपने कार्य की गुरुता का विचार करके इस प्रकार कहा—

**न भेतव्यं नरव्याघ्र को हि त्वां पुरुषर्षभ।**
**मध्ये क्षत्रियवीराणां तिष्ठन्तं प्रार्थयेद् युधि ॥७॥**

"पुरुषसिंह! नरश्रेष्ठ! तुम्हें भयभीत नहीं होना चाहिए। युद्धस्थल में क्षत्रिय वीरों के मध्य में खड़े रहने पर कौन तुम्हें मारने की इच्छा कर सकता है?

**अहं वैकर्तनः कर्णश्चित्रसेनो विविंशतिः।**
**भूरिश्रवाः शलः शल्यो वृषसेनो दुरासदः॥८॥**
**दुःशासनः सुबाहुश्च द्रोणो द्रौणिश्च सौबलः।**
**एते चान्ये च बहवो नानाजनपदेश्वराः।**
**ससैन्यास्त्वाभियास्यन्ति व्येतु ते मानसो ज्वरः॥९॥**

"मैं, सूर्यपुत्र कर्ण, चित्रसेन, विविंशति, भूरिश्रवा, शल, शल्य, दुर्धर्ष वीर वृषसेन, दुःशासन, सुबाहु, द्रोणाचार्य, अश्वत्थामा और शकुनि—ये तथा और भी बहुत-से भूपाल जो विभिन्न देशों के अधिपति हैं, अपनी सेना के साथ तुम्हारी रक्षा के लिए चलेंगे, अतः तुम्हारी मानसिक चिन्ता दूर हो जानी चाहिए।

**त्वं चापि रथिनां श्रेष्ठः स्वयं शूरोऽमितद्युते।**
**स कथं पाण्डवेभ्यो हि भयं पश्यसि सैन्धव॥१०॥**

"अमित तेजस्वी सिन्धुराज! तुम स्वयं भी तो रथियों में श्रेष्ठ शूरवीर हो, फिर पाण्डु के पुत्रों से अपने लिए भय क्यों देख रहे हो?

**अक्षौहिण्यो दशैका च मदीयास्तव रक्षणे।**
**यत्ता योत्स्यन्ति मा भैस्त्वं सैन्धव व्येतु ते भयम्॥११॥**

"मेरी ग्यारह अक्षौहिणी सेनाएँ तुम्हारी रक्षा के लिए उद्यत होकर युद्ध करेंगी, अतः सिन्धुराज! तुम भयभीत मत होओ। तुम्हारा भय दूर हो जाना चाहिए।"

द्रोण उवाच

**न तु ते युधि संत्रासः कार्यः पार्थात् कथञ्चन।**
**अहं हि रक्षिता तात भयात्त्वां नात्र संशयः॥१२॥**
**न हि मद्बाहुगुप्तस्य प्रभवन्त्यमरा अपि।**
**व्यूहयिष्यामि तं व्यूहं यं पार्थो न तरिष्यति॥१३॥**

**द्रोणाचार्य बोले**—वत्स! तुम्हें युद्ध में किसी प्रकार भी अर्जुन से भयभीत नहीं होना चाहिए, क्योंकि मैं उनके भय से तुम्हारी रक्षा करनेवाला हूँ—इसमें संशय नहीं है। मेरी भुजाएँ जिसकी रक्षा करती हों, उसपर देवताओं का भी जोर नहीं चल सकता। मैं ऐसे व्यूह की रचना करूँगा, जिसे अर्जुन पार नहीं कर सकेंगे।

**तस्माद् युद्धचस्व मा भैस्त्वं स्वधर्ममनुपालय।**
**पितृपैतामहं मार्गमनुयाहि महारथ॥१४॥**

अतः तुम डरो मत। उत्साहपूर्वक युद्ध करो और अपने क्षत्रिय-धर्म का पालन करो। महारथी वीर! अपने बाप-दादाओं के मार्ग पर चलो।

सञ्जय उवाच

**एवमाश्वासितो राजा भारद्वाजेन सैन्धवः।**
**अपानुदद् भयं पार्थाद् युद्धाय च मनो दधे॥१५॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! द्रोणाचार्य के इस प्रकार आश्वासन देने पर राजा जयद्रथ ने अर्जुन का भय त्याग दिया और युद्ध करने का विचार किया।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि नवमोऽध्यायः॥९॥**

## दशमोऽध्यायः

### अर्जुन के वीरोचित वचन, श्रीकृष्ण द्वारा सुभद्रा को आश्वासन

सञ्जय उवाच

**प्रतिज्ञाते तु पार्थेन सिन्धुराजवधे तदा।**
**वासुदेवो महाबाहुर्धनञ्जयमभाषत॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! जब अर्जुन ने सिन्धुराज जयद्रथ के वध की प्रतिज्ञा कर ली, उस समय महाबाहु श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा—

**भ्रातॄणां मतमज्ञाय त्वया वाचा प्रतिश्रुतम्।**
**सैन्धवं चास्मि हन्तेति तत्साहसमिदं कृतम्॥२॥**

"धनञ्जय! तुमने अपने भाइयों का मत जाने बिना ही जो वाणी द्वारा यह प्रतिज्ञा कर ली कि कल मैं सिन्धुराज का वध करूँगा, यह तुमने दुःसाहस-पूर्ण कार्य किया है।

**धार्तराष्ट्रस्य शिबिरे मया प्रणिहिताश्चराः।**
**त इमे शीघ्रमागम्य प्रवृत्तिं वेदयन्ति नः॥३॥**

"मैंने दुर्योधन के शिविर में अपने गुप्तचर भेजे थे। वे शीघ्र ही वहाँ से लौटकर अभी-अभी वहाँ का समाचार मुझे बता गये हैं।

**कर्णो भूरिश्रवा द्रौणिर्वृषसेनश्च दुर्जयः।**
**कृपश्च मद्रराजश्च षडेतेऽस्य पुरोगमाः ॥४॥**

"कल के युद्ध में कर्ण, भूरिश्रवा, अश्वत्थामा, दुर्जय वीर वृषसेन, कृपाचार्य और मद्रराज शल्य—ये छह महारथी जयद्रथ के आगे रहकर उसकी रक्षा करेंगे।

**शकटः पद्मपश्चार्धो व्यूहो द्रोणेन निर्मितः।**
**पद्मकर्णिकमध्यस्थः सूचीपार्श्वे जयद्रथः।**
**स्थास्यते रक्षितो वीरैः सिन्धुराट् स सुदुर्मदः ॥५॥**

"द्रोणाचार्य ने ऐसा व्यूह बनाया है, जिसका अगला आधा भाग शकट के आकार का है और पिछला कमल के समान। कमलव्यूह के बीच की कणिका के मध्य सूचीव्यूह के पार्श्वभाग में युद्ध-दुर्मद सिन्धुराज जयद्रथ खड़ा होगा और अन्यान्य वीर उसकी रक्षा करेंगे।

**अविषह्यतमा ह्येते निश्चिताः पार्थ षड् रथाः।**
**एतानजित्वा षड् रथान् नैव प्राप्यो जयद्रथः ॥६॥**

"पार्थ! ये पूर्वनिश्चित छह महारथी अत्यन्त असह्य माने गये हैं। इन छह महारथियों को परास्त किये बिना जयद्रथ को प्राप्त करना असम्भव है।

**तेषामेकैकशो वीर्यं षण्णां त्वमनुचिन्तय।**
**सहिता हि नरव्याघ्र न शक्या जेतुमञ्जसा ॥७॥**

"पुरुषसिंह! पहले तुम इन छह महारथियों में से प्रत्येक के बल-पराक्रम का विचार करो। फिर जब वे छहों एक-साथ होंगे, उस समय उन्हें सरलता से नहीं जीता जा सकता।"

अर्जुन उवाच

**षड् रथान् धार्तराष्ट्रस्य मन्यसे यान् बलाधिकान्।**
**तेषां वीर्यं ममार्धेन न तुल्यमिति मे मतिः ॥८॥**
**अस्त्रमस्त्रेण सर्वेषामेतेषां मधुसूदन।**
**मया द्रक्ष्यसि निर्भिन्नं जयद्रथवधैषिणा ॥९॥**

अर्जुन बोला—मधुसूदन! दुर्योधन के जिन छह महारथियों को आप बल में अधिक मानते हैं, उनका पराक्रम मेरे आधे के बराबर भी नहीं है, ऐसा मेरा विश्वास है। जयद्रथ के वध की इच्छा से मुझे युद्ध करते समय आप देखेंगे कि मैंने इन सबके अस्त्रों को अपने अस्त्रों से काट दिया है।

**द्रोणस्य मिषतश्चाहं सगणस्य विलप्यतः।**
**मूर्धानं सिन्धुराजस्य पातयिष्यामि भूतले ॥१०॥**

मैं द्रोणाचार्य के देखते-देखते अपने सैनिकोंसहित विलाप करते हुए सिन्धुराज जयद्रथ का मस्तक काटकर पृथिवी पर गिरा दूँगा।

**यस्तु गोप्ता महेष्वासस्तस्य पापस्य दुर्मतेः।**
**तमेव प्रथमं द्रोणमभियास्यामि केशव ॥११॥**

केशव! उस दुर्बुद्धि पापी जयद्रथ की रक्षा का बीड़ा उठाये हुए जो महाधनुर्धर आचार्य द्रोण हैं, मैं पहले उन्हीं पर आक्रमण करूँगा।

**द्रष्टासि श्वो महेष्वासान् नाराचैस्तिग्मतेजितैः।**
**शृङ्गाणीव गिरेर्वज्रैर्दार्यमाणान् मया युधि ॥१२॥**

जैसे इन्द्र अपने वज्र द्वारा पर्वतों के शिखरों को विदीर्ण कर देते हैं, वैसे ही कल युद्ध में मैं अच्छी प्रकार तेज किये हुए नाराचों द्वारा बड़े-बड़े धनुर्धरों को चीर डालूँगा, यह आप देखेंगे।

**गाण्डीवप्रेषिता बाणा मनोऽनिलसमा जवे।**
**नृनागाश्वान् विदेहासून् कर्तारश्च सहस्रशः ॥१३॥**

गाण्डीव धनुष से छूटे हुए बाण मन और वायु के समान वेगशाली होते हैं। वे शत्रुओं के सहस्रों हाथी-घोड़े और मनुष्यों को शरीर और प्राणों से शून्य कर देंगे।

**तथा प्रभाते कर्तास्मि यथा कृष्ण सुयोधनः।**
**नान्यं धनुर्धरं लोके मंस्यते मत्समं युधि ॥१४॥**

श्रीकृष्ण! मैं कल प्रातः ऐसा युद्ध करूँगा जिससे दुर्योधन रणक्षेत्र के भीतर संसार के दूसरे किसी धनुर्धर को मेरे समान नहीं मानेगा।

**गाण्डीवं च धनुर्दिव्यं योद्धा चाहं नरर्षभ।**
**त्वं च यन्ता हृषीकेश किं नु स्यादजितं मया ॥१५॥**

नरश्रेष्ठ हृषीकेश! जहाँ गाण्डीव जैसा दिव्य धनुष है, मेरे जैसा योद्धा है और आप सारथि हैं, वहाँ मैं किसको नहीं जीत सकता!

**ध्रुवं वै ब्राह्मणे सत्यं ध्रुवा साधुषु संनतिः।**
**श्रीर्ध्रुवापि च यज्ञेषु हृषीकेशे ध्रुवो जयः ॥१६॥**

जैसे ब्रह्मनिष्ठ ब्राह्मण में सत्य, साधुपुरुषों में नम्रता और यज्ञों में लक्ष्मी का होना ध्रुव सत्य है, वैसे ही जहाँ जितेन्द्रिय श्रीकृष्ण विद्यमान हैं, वहाँ विजय भी निश्चित है।

**आश्वासय सुभद्रां त्वं भगिनीं स्नुषया सह।**
**स्नुषां चास्या वयस्याश्च विशोका कुरु माधव ॥१७॥**

माधव ! अब आप पुत्रवधू उत्तरासहित अपनी बहिन सुभद्रा को धीरज बँधाइए। उत्तरा और उसकी सखियों का शोक भी दूर कीजिए।

सञ्जय उवाच

**ततोऽर्जुनगृहं गत्वा वासुदेवः सुदुर्मनाः।**
**भगिनीं पुत्रशोकार्तामाश्वासयत दुःखिताम् ॥१८॥**

**सञ्जय कहते हैं**—तब श्रीकृष्ण अत्यन्त उदास मन से अर्जुन के शिबिर में गये और पुत्रशोक से पीड़ित हुई अपनी दुखिया बहिन को आश्वासन देने लगे—

वासुदेव उवाच

**मा शोकं कुरु वार्ष्णेयि कुमारं प्रति सस्नुषा।**
**सर्वेषां प्राणिनां भीरु निष्ठैषा कालनिर्मिता ॥१९॥**

**श्रीकृष्ण बोले**—वृष्णिनन्दिनी ! तुम और पुत्र-वधू उत्तरा कुमार अभिमन्यु के लिए शोक मत करो। भीरु ! काल एक दिन सभी प्राणियों की ऐसी ही अवस्था कर देता है।

**तपसा ब्रह्मचर्येण श्रुतेन प्रज्ञयापि च।**
**सन्तो यां गतिमिच्छन्ति तां प्राप्तस्तव पुत्रकः ॥२०॥**

तपस्या, ब्रह्मचर्य, शस्त्रज्ञान और सद्बुद्धि के द्वारा साधु पुरुष जिस गति को पाना चाहते हैं, वही गति तुम्हारे पुत्र को भी प्राप्त हुई है।

**वीरसूर्वीरपत्नी त्वं वीरजा वीरबान्धवा।**
**मा शुचस्तनयं भद्रे गतः स परमां गतिम् ॥२१॥**

सुभद्रे ! तुम वीर-माता, वीर-पत्नी, वीर-कन्या और वीर भाइयों की बहन हो। तुम पुत्र के लिए शोक न करो। वह श्रेष्ठ गति को प्राप्त हुआ है।

**श्वः शिरः श्रोष्यसे तस्य सैन्धवस्य रणे हृतम्।**
**समन्तपञ्चकाद् बाह्यं विशोका भव मा रुदः ॥२२॥**

तुम कल ही सुनोगी कि युद्धभूमि में जयद्रथ का मस्तक काट लिया गया है और वह समन्तपञ्चक-क्षेत्र से बाहर जा गिरा है, अतः शोक त्यागकर रोना-धोना बन्द करो।

सञ्जय उवाच

**एतत् श्रुत्वा वचस्तस्य केशवस्य महात्मनः।**
**सुभद्रा पुत्रशोकार्ता विललाप सुदुःखिता ॥२३॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! महात्मा केशव का यह वचन सुनकर पुत्रशोक से व्याकुल और अत्यन्त दुःखित हुई सुभद्रा इस प्रकार विलाप करने लगी—

**हा वीर दृष्टो नष्टश्च धनं स्वप्न इवासि मे।**
**अहो ह्यनित्यं मानुष्यं जलबुद्बुदचञ्चलम् ॥२४॥**

"हा वीर ! तुम स्वप्न में मिले हुए धन की भाँति मुझे दिखाई दिये और नष्ट हो गये। अहो ! यह मनुष्य-जीवन पानी के बुलबुले के समान चञ्चल और अनित्य है।

**मधुमांसनिवृत्तानां मदाद् दम्भात्तथानृतात्।**
**परोपतापत्यक्तानां तां गतिं व्रज पुत्रक ॥२५॥**

"पुत्र ! जो मद्य और मांस का सेवन नहीं करते, मद=अभिमान, दम्भ और असत्य से अलग रहते तथा दूसरों को सन्ताप नहीं देते, उन्हें मिलनेवाली सद्गति तुम्हें भी प्राप्त हो।"

**विसंज्ञकल्पां रुदतीं मर्मविद्धां प्रवेपतीम्।**
**भगिनीं पुण्डरीकाक्ष इदं वचनमब्रवीत् ॥२६॥**

पुत्रशोक से मर्माहत रोती और काँपती हुई अपनी बहिन सुभद्रा से कमलनयन श्रीकृष्ण ने यह वचन कहा—

**सुभद्रे मा शुचः पुत्रं पाञ्चाल्याश्वासयोत्तराम्।**
**गतोऽभिमन्युः प्रथितां गतिं क्षत्रियपुङ्गवः ॥२७॥**

"सुभद्रे ! तुम पुत्र के लिए शोक मत करो। द्रुपदकुमारी ! तुम उत्तरा को सान्त्वना प्रदान करो। क्षत्रिय-शिरोमणि अभिमन्यु ने श्रेष्ठ गति प्राप्त की है।

इति महाभारते द्रोणपर्वणि दशमोऽध्यायः ॥१०॥

# एकादशोऽध्याय।

## अर्जुन का द्रोणाचार्य द्वारा निर्मित चक्रशकट व्यूह में प्रवेश

सञ्जय उवाच

**तस्यां निशायां व्युष्टायां द्रोणः शस्त्रभृतां वरः ।**
**स्वान्यनीकानि सर्वाणि प्राक्रामद् व्यूहितं ततः ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! वह रात्रि व्यतीत होने पर प्रातःकाल शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ द्रोणाचार्य ने अपनी सारी सेनाओं का व्यूह बनाना आरम्भ किया।

**तेष्वनीकेषु सर्वेषु स्थितेष्वाहवनन्दिषु ।**
**भारद्वाजो महाराज जयद्रथमथाब्रवीत् ॥२॥**

महाराज ! युद्ध से आनन्दित होनेवाले उन समस्त सैनिकों के व्यूहबद्ध हो जाने पर द्रोणाचार्य ने जयद्रथ से कहा—

**त्वं चैव सौमदत्तिश्च कर्णश्चैव महारथः ।**
**अश्वत्थामा च शल्यश्च वृषसेनः कृपस्तथा ॥३॥**
**शतं चाश्वसहस्राणां रथानामयुतानि षट् ।**
**द्विरदानां प्रभिन्नानां सहस्राणि चतुर्दश ॥४॥**
**पदातीनां सहस्राणि दंशितान्येकविंशतिः ।**
**गव्यूतिषु त्रिमात्रासु मामनासाद्य तिष्ठत ॥५॥**

"राजन् ! तुम, भूरिश्रवा, महारथी कर्ण, अश्वत्थामा, शल्य, वृषसेन और कृपाचार्य एक लाख घुड़सवार, साठ सहस्र रथ, चौदह सहस्र मदस्रावी हाथी और इक्कीस सहस्र कवचधारी पैदल सैनिकों को साथ लेकर मुझसे छह कोस की दूरी पर जाकर डटे रहो।

**तत्रस्थं त्वां न संसोढुं शक्ता देवाः सवासवाः ।**
**किं पुनः पाण्डवाः सर्वे समाश्वसिहि सैन्धव ॥६॥**

"सिन्धुराज ! वहाँ रहने पर इन्द्र आदि सम्पूर्ण देवता भी तुम्हारा सामना नहीं कर सकते, फिर समस्त पाण्डव तो कर ही कैसे सकते हैं ? अतः तुम धैर्य धारण करो।"

**एवमुक्तः समाश्वस्तः सिन्धुराजो जयद्रथः ।**
**सम्प्रायात् सह गान्धारैर्वृतस्तैश्च महारथैः ॥७॥**

आचार्य के ऐसा कहने पर सिन्धुराज जयद्रथ को बड़ा आश्वासन मिला। फिर वह गान्धार महारथियों से घिरा हुआ युद्ध के लिए चल दिया।

**दीर्घो द्वादश गव्यूतिः पश्चार्धे पञ्च विस्तृतः ।**
**व्यूहस्तु चक्रशकटो भारद्वाजेन निर्मितः ॥८॥**

आचार्य द्रोण ने चक्रगर्भ शकटव्यूह का निर्माण किया था, जिसकी लम्बाई चौबीस कोस और पिछले भाग की चौड़ाई दस कोस थी।

**पश्चार्धे तस्य पद्मस्तु गर्भव्यूहः सुदुर्भिदः ।**
**सूची पद्मस्य गर्भस्थो गूढो व्यूहः कृतः पुनः ॥९॥**

उस चक्रशकटव्यूह के पिछले भाग में पद्मनामक एक गर्भव्यूह बनाया गया था, जो अति दुर्भेद्य था। उस पद्मव्यूह के मध्यभाग में सूची नामक एक गूढ़ व्यूह और बनाया गया था।

**जयद्रथस्ततो राजा सूचीपार्श्वे व्यवस्थितः ।**
**शकटस्य तु राजेन्द्र भारद्वाजो मुखे स्थितः ॥१०॥**

हे राजेन्द्र ! राजा जयद्रथ सूचीव्यूह के पार्श्व-भाग में था और उस शकटव्यूह के मुहाने पर भरद्वाजनन्दन द्रोणाचार्य स्वयं विराजमान थे।

**ततो व्यूढेष्वनीकेषु समुत्क्रुष्टेषु मारिष ।**
**ताड्यमानासु भेरीषु मृदङ्गेषु नदत्सु च ॥११॥**
**अनीकानां च संह्रादे वादित्राणां च निःस्वने ।**
**रौद्रे मुहूर्ते सम्प्राप्ते सव्यसाची व्यदृश्यत ॥१२॥**

आर्य ! जब इस प्रकार कौरव-सेनाओं की व्यूह-रचना हो गई, युद्ध के लिए उत्सुक सैनिक कोलाहल करने लगे, नगाड़े पीटे जाने लगे, मृदङ्ग बजने लगे, सैनिकों की गर्जना के साथ-साथ रणवाद्यों की तुमुल ध्वनि फैलने लगी, उस समय उग्र मुहूर्त आने पर रणक्षेत्र में सव्यसाची अर्जुन दिखाई दिये।

**सोऽग्रानीकस्य महत इषुपाते धनञ्जयः ।**
**व्यवस्थाप्य रथं राजञ्शंखं दध्मौ प्रतापवान् ॥१३॥**

राजन् ! प्रतापी अर्जुन ने अपने सामने खड़ी हुई विशाल शत्रुसेना के सम्मुख, जितनी दूर से बाण मारा जा सके उतनी ही दूरी पर अपने रथ को खड़ा करके शंख बजाया।

**अथ कृष्णोऽप्यसम्भ्रान्तः पार्थेन सह मारिष ।**
**प्राध्मापयत् पाञ्चजन्यं शंखं प्रवरमोजसा ॥१४॥**

आर्य ! तब श्रीकृष्ण ने भी अर्जुन के साथ बिना

किसी घबराहट के अपने श्रेष्ठ शंख पाञ्चजन्य को बड़े जोर से फूंका।

**यथा त्रस्यन्ति भूतानि सर्वाण्यशनिनिःस्वनात्।**
**तथा शंखप्रणादेन वित्रेसुस्तव सैनिकाः ॥१५॥**

जैसे वज्र की गड़गड़ाहट से सारे प्राणी थर्रा उठते हैं, वैसे ही उन दोनों वीरों की शंखध्वनि से आपके समस्त सैनिक संत्रस्त हो उठे।

**प्रसुस्रुवुः शकृन्मूत्रं वाहनानि च सर्वशः।**
**एवं सवाहनं सर्वमाविग्नमभवद् बलम् ॥१६॥**

सेना के सभी वाहन भय के मारे मल-मूत्र त्यागने लगे। इस प्रकार आरोहियोंसहित सारी सेना उद्विग्न हो गई।

**सीदन्ति स्म नरा राजञ्शंखशब्देन मारिष।**
**विसंज्ञाश्चाभवन्केचित्केचिद् राजन्वितत्रसुः ॥१७॥**

आर्य! अपनी सेना के सब मनुष्य उस शंखनाद को सुनकर शिथिल हो गये। नरेश्वर! कितने ही तो मूर्च्छित हो गये और कितने ही भय से थर्रा उठे।

**ततः सायकवर्षेण पर्जन्य इव वृष्टिमान्।**
**परानवाकिरत् पार्थः पर्वतानिव नीरदः ॥१८॥**

शंखनाद करके अर्जुन बाणों की वृष्टि करते हुए जल बरसानेवाले मेघ के समान प्रतीत होने लगे। जैसे मेघ पानी की वर्षा करके पर्वतों को आच्छादित कर देता है, वैसे ही अर्जुन ने अपनी बाणवर्षा से शत्रुओं को ढक दिया।

**ते चापि रथिनः सर्वे त्वरिताः कृतहस्तवत्।**
**अवाकिरन् बाणजालैस्तत्र कृष्णधनञ्जयौ ॥१९॥**

उधर उन समस्त कौरव रथियों ने भी सिद्धहस्त पुरुषों की भाँति शीघ्रतापूर्वक बाण चलाते हुए अपने बाणसमूह से श्रीकृष्ण और अर्जुन को आच्छादित कर दिया।

**ततः क्रुद्धो महाबाहुर्वार्यमाणः परैर्युधि।**
**शिरांसि रथिनां पार्थः कायेभ्योऽपाहरच्छरैः ॥२०॥**

उस समय रणभूमि में शत्रुओं द्वारा रोके जाने पर महाबाहु अर्जुन क्रुद्ध हो उठे और अपने बाणों द्वारा रथियों के शिरों [मस्तकों] को उनके शरीर से काट-काटकर गिराने लगे।

**ततः कबन्धं किंचित् तु धनुरालम्ब्य तिष्ठति।**
**किंचित् खड्गं विनिष्कृष्य भुजेनोद्यम्य तिष्ठति ॥२१॥**

अर्जुन के बाणों द्वारा सिर कट जाने पर कोई-कोई कबन्ध [बिना सिर का धड़] धनुष लेकर खड़ा था और कोई तलवार खींचकर उसे हाथ में उठाये हुए खड़ा था।

**अयं पार्थः कुतः पार्थ एष पार्थ इति प्रभो।**
**तव सैन्येषु योधानां पार्थभूतमिवाभवत् ॥२२॥**

प्रभो! आपकी सेनाओं के समस्त योद्धाओं की दृष्टि में सब ओर अर्जुनभय-सा हो रहा था। वे बार-बार 'यह अर्जुन है, अर्जुन कहाँ है, अर्जुन यह है'—इस प्रकार चिल्ला उठते थे।

**यो यः स्म समरे पार्थं प्रतिसंचरते नरः।**
**तस्य तस्यान्तको बाणः शरीरमुपसर्पति ॥२३॥**

जो-जो मनुष्य उस रणभूमि में अर्जुन का सामना करने के लिए चलता था, उस-उसके शरीर पर प्राणान्तकारी बाण आ गिरता था।

**तत्तथा तव पुत्रस्य सैन्यं युधि परन्तप।**
**प्रभग्नं द्रुतमाविग्नमतीव शरपीडितम् ॥२४॥**

शत्रुसंतापक नरेश! इस प्रकार उस समराङ्गण में अर्जुन के बाणों से पीड़ित हुई आपके पुत्र की सेना के पाँव उखड़ गये और वह अत्यन्त उद्विग्न हो तुरन्त ही वहाँ से भाग खड़ी हुई।

**ततस्तव सुतो राजन् दृष्ट्वा सैन्यं तथागतम्।**
**दुःशासनो भृशं क्रुद्धो युद्धायार्जुनमभ्यगात् ॥२५॥**

राजन्! सेना की ऐसी दुर्दशा देखकर आपके पुत्र दुःशासन को बड़ा क्रोध हुआ और वह युद्ध के लिए अर्जुन के सामने जा पहुँचा।

**नागानीकेन महता ग्रसन्निव महीमिमाम्।**
**दुःशासनो महाराज सव्यसाचिनमावृणोत् ॥२६॥**

महाराज! दुःशासन ने अपनी विशाल गजसेना द्वारा अर्जुन को चारों ओर से इस प्रकार घेर लिया, मानो वह सम्पूर्ण वसुन्धरा को ग्रस लेने के लिए उद्यत हो।

**तान् दृष्ट्वा पततस्तूर्णमङ्कुशैरभिनोदितान्।**
**सिंहनादेन महताभीतो स व्यधमच्छरैः ॥२७॥**

महावतों द्वारा अंकुशों से हाँके जानेवाले उन हाथियों को बड़े वेग से अपने ऊपर आक्रमण करते

देख पराक्रमी अर्जुन ने जोर से सिंहनाद करके बिना किसी भय के बाणों द्वारा उन हाथियों का संहार कर डाला।

**निहतैर्वारणैरश्वैः क्षत्रियैश्च निपातितैः।**
**अदृश्यत मही तत्र दारुणप्रतिदर्शना ॥२८॥**

अनेक हाथी, घोड़े और क्षत्रियों के धराशायी कर दिये जाने के कारण वहाँ की भूमि देखने में अत्यन्त भयंकर जान पड़ती थी।

**एवं दुःशासनबलं वध्यमानं किरीटिना।**
**सम्प्राद्रवन्महाराज व्यथितं सहनायकम् ॥२९॥**

महाराज! इस प्रकार किरीटधारी अर्जुन की मार खाकर अत्यन्त व्यथित हुई दुःशासन की सेना अपने नायकसहित भाग गई।

**ततो दुःशासनस्त्रस्तः सहानीकः शरार्दितः।**
**द्रोणं त्रातारमाकांक्षञ्शकटव्यूहमभ्यगात् ॥३०॥**

अर्जुन के बाणों से अत्यन्त पीड़ित और भयभीत हो सेनाओंसहित दुःशासन अपने रक्षक द्रोणाचार्य के आश्रय में जाने की इच्छा रखकर शकटव्यूह में घुस गया।

**दुःशासनबलं हत्वा सव्यसाची महारथः।**
**सिन्धुराजं परीप्सन् वै द्रोणानीकमुपाद्रवत् ॥३१॥**

राजन्! दुःशासन की सेना का संहार करके सव्यसाची महारथी अर्जुन ने सिन्धुराज जयद्रथ को पाने की इच्छा रखकर द्रोणाचार्य की सेना पर धावा किया।

**स तु द्रोणं समासाद्य व्यूहस्य प्रमुखे स्थितम्।**
**कृताञ्जलिरिदं वाक्यं कृष्णस्यानुमतेऽब्रवीत् ॥३२॥**

व्यूह के मुहाने पर खड़े हुए आचार्य द्रोण के पास पहुँचकर अर्जुन ने श्रीकृष्ण की अनुमति ले हाथ जोड़ इस प्रकार कहा—

**शिवेन ध्याहि मां ब्रह्मन् स्वस्ति चैव वदस्व मे।**
**भवत्प्रसादादिच्छामि प्रवेष्टुं दुर्भिदां चमूम् ॥३३॥**

"ब्रह्मन्! आप मेरा कल्याण चिन्तन कीजिए। मुझे स्वस्ति कहकर आशीर्वाद दीजिए। मैं आपकी कृपा से ही इस दुर्भेद्य सेना के भीतर प्रवेश करना चाहता हूँ।

**भवान् पितृसमो मह्यं धर्मराजसमोऽपि च।**
**तथा कृष्णसमश्चैव सत्यमेतद् ब्रवीमि ते ॥३४॥**

"आप मेरे लिए पिता पाण्डु, भ्राता धर्मराज युधिष्ठिर और सखा श्रीकृष्ण के समान हैं। यह मैं आपसे सच्ची बात कहता हूँ।

**अश्वत्थामा यथा तात रक्षणीयस्त्वयानघ।**
**तथाहमपि ते रक्ष्यः सदैव द्विजसत्तम ॥३५॥**

"तात! निष्पाप द्विजश्रेष्ठ! जैसे अश्वत्थामा आपके लिए रक्षणीय हैं, वैसे ही मैं भी सदा आपसे संरक्षण पाने का अधिकारी हूँ।

**तव प्रसादादिच्छेयं सिन्धुराजमिहाहवे।**
**निहन्तुं द्विपदां श्रेष्ठ प्रतिज्ञां रक्ष मे प्रभो ॥३६॥**

"नरश्रेष्ठ! मैं आपके प्रसाद से इस युद्ध में सिन्धुराज जयद्रथ को मारना चाहता हूं। प्रभो! आप मेरी इस प्रतिज्ञा की रक्षा कीजिए।"

**एवमुक्तस्तदाचार्यः प्रत्युवाच स्मयन्निव।**
**मामजित्वा न बीभत्सो शक्यो जेतुं जयद्रथः ॥३७॥**

महाराज! अर्जुन के ऐसा कहने पर उस समय द्रोणाचार्य ने उन्हें हँसते हुए-से उत्तर दिया—"अर्जुन! मुझे पराजित किये बिना जयद्रथ को जीतना असम्भव है।"

**एतावदुक्त्वा तं द्रोणः शरव्रातैरवाकिरत्।**
**सरथाश्वध्वजं तीक्ष्णैः प्रहसन् वै ससारथिम् ॥३८॥**

अर्जुन से इतना कहकर द्रोणाचार्य ने हँसते-हँसते रथ, घोड़े, ध्वज तथा सारथिसहित उनपर तीखे बाणसमूहों की वर्षा आरम्भ कर दी।

**ततोऽर्जुनः शरव्रातान् द्रोणस्यावार्य सायकैः।**
**द्रोणमभ्यद्रवद् बाणैर्घोररूपैर्महत्तरैः ॥३९॥**

तब अर्जुन ने अपने बाणों द्वारा द्रोणाचार्य के बाणसमूहों का निवारण करके बड़े-बड़े भयंकर बाणों द्वारा उनपर आक्रमण किया।

**अथात्यर्थं विसृष्टेन द्विषतामसुभोजिना।**
**आजघ्ने वक्षसि द्रोणो नाराचेन धनञ्जयम् ॥४०॥**

तब तो द्रोणाचार्य ने भी शत्रुओं का प्राण हरण कर लेनेवाले एक नाराच का प्रहार करके अर्जुन की छाती में गहरी चोट पहुँचाई।

**स विह्वलितसर्वाङ्गः क्षितिकम्पे यथाचलः।**
**धैर्यमालम्ब्य बीभत्सुर्द्रोणं विव्याध पत्रिभिः ॥४१॥**

जैसे भूकम्प होने पर पर्वत हिल उठता है, वैसे ही उस आघात से अर्जुन का सारा शरीर विह्वल हो गया, तथापि अर्जुन ने धैर्य धारण करके पंखयुक्त बाणों द्वारा आचार्य द्रोण को घायल कर दिया।

**द्रोणस्तु पञ्चभिर्बाणैर्वासुदेवमताडयत्।**
**अर्जुनं च त्रिसप्तत्या ध्वजं चास्य त्रिभिः शरैः ॥४२॥**

फिर द्रोण ने भी पाँच बाणों से श्रीकृष्ण को, तिहत्तर बाणों से अर्जुन को और तीन बाणों द्वारा उनके ध्वज को भी चोट पहुँचायी।

**तद् दृष्ट्वा तादृशं युद्धं द्रोणपाण्डवयोस्तदा।**
**वासुदेवो महाबुद्धिरर्जुनमब्रवीद् वचः ॥४३॥**

उस समय द्रोणाचार्य और अर्जुन का वैसा युद्ध देखकर परम बुद्धिमान् वसुदेवनन्दन श्रीकृष्ण ने अर्जुन से यह वचन कहा—

**पार्थ पार्थ महाबाहो न नः कालात्ययो भवेत्।**
**द्रोणमुत्सृज्य गच्छामः कृत्यमेतन्महत्तरम् ॥४४॥**

"अर्जुन! पार्थ! महाबाहो! हमारा अधिक समय यहीं व्यतीत न हो जाए, अतः हम द्रोणाचार्य को छोड़कर आगे चलें, यही इस समय सबसे महान् कार्य है।"

**पार्थश्चाप्यब्रवीत् कृष्णं यथेष्टमिति केशवम्।**
**ततः प्रदक्षिणं कृत्वा द्रोणं प्रायान्महाभुजम् ॥४५॥**

तब अर्जुन ने भी श्रीकृष्ण से कहा—"प्रभो! आपकी जैसी इच्छा हो, वैसा कीजिए।" तत्पश्चात् अर्जुन महाबाहु द्रोणाचार्य की परिक्रमा करके लौट पड़े।

**ततोऽब्रवीत् स्वयं द्रोणः क्वेदं पाण्डव गम्यते।**
**ननु नाम रणे शत्रुमजित्वा न निवर्तसे ॥४६॥**

यह देख द्रोणाचार्य ने स्वयं कहा—"पाण्डुनन्दन! तुम इस प्रकार कहाँ चले जा रहे हो? तुम तो युद्ध-भूमि में शत्रुओं को पराजित किये बिना कभी नहीं लौटते थे।"

अर्जुन उवाच

**गुरुर्भवान् न मे शत्रुः शिष्यः पुत्रसमोऽस्मि ते।**
**न चास्ति स पुमाँल्लोके यस्त्वां युधि पराजयेत् ॥४७॥**

**अर्जुन ने कहा**—ब्रह्मन्! आप मेरे शत्रु नहीं अपितु गुरु हैं। मैं आपका पुत्र के समान प्रिय शिष्य हूँ। इस संसार में ऐसा कोई मनुष्य नहीं है, जो युद्ध में आपको पराजित कर सके।

सञ्जय उवाच

**एवं ब्रुवाणो बीभत्सुर्जयद्रथवधोत्सुकः।**
**त्वरायुक्तो महाबाहुस्त्वत्सैन्यं समुपाद्रवत् ॥४८॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! ऐसा कहते हुए महाबाहु अर्जुन ने जयद्रथ-वध के लिए उत्सुक हो बड़ी उतावली के साथ आपकी सेना पर आक्रमण किया।

**तं चक्ररक्षौ पाञ्चाल्यौ युधामन्यूत्तमौजसौ।**
**अन्वयातां महात्मानौ विशन्तं तावकं बलम् ॥४९॥**

आपकी सेना में प्रविष्ट होते समय पाञ्चाल वीर महामना युधामन्यु और उत्तमौजा चक्ररक्षक होकर उनके पीछे-पीछे गये।

**ततो जयो महाराज कृतवर्मा च सात्वतः।**
**काम्बोजश्च श्रुतायुश्च धनञ्जयमवारयन् ॥५०॥**

महाराज! उस समय जय, सात्वत-वंशी कृतवर्मा, काम्बोजनरेश और श्रुतायु ने सम्मुख आकर अर्जुन को रोका।

**ततः प्रववृते युद्धं तुमुलं लोमहर्षणम्।**
**अन्योन्यं वै प्रार्थयतां योधानामर्जुनस्य च ॥५१॥**

तत्पश्चात् एक-दूसरे को ललकारते हुए कौरव योद्धाओं और अर्जुन में रोमाञ्चकारी तथा भयंकर युद्ध छिड़ गया।

**किरन्निषुगणाँस्तीक्ष्णान् स रश्मीनिव भास्करः।**
**तापयामास तत् सैन्यं देहं व्याधिगणो यथा ॥५२॥**

जैसे रोगों का समुदाय शरीर को सन्तप्त कर देता है, उसी प्रकार अर्जुन ने कौरवों की सेना को अत्यन्त सन्ताप दिया। जैसे सूर्य अपनी प्रचण्ड किरणों का प्रसार करते हैं, उसी प्रकार वे तीखे बाणसमूहों की वर्षा करने लगे।

**अश्वो विद्धो रथश्छिन्नः सारोहः पातितो गजः।**
**छत्राणि चापविद्धानि रथाश्चक्रैर्विना कृताः ॥५३॥**

उन्होंने घोड़ों को घायल कर दिया, रथों के टुकड़े-टुकड़े कर डाले, गजारोहियोंसहित हाथियों को मार गिराया, छत्र इधर-उधर बिखेर दिये और रथों को पहियों से सूना कर दिया।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि एकादशोऽध्यायः ॥११॥**

# द्वादशोऽध्यायः

## द्रोणाचार्य का दुर्योधन के शरीर में दिव्य कवच बाँधकर अर्जुन के साथ युद्ध के लिए भेजना

सञ्जय उवाच

**प्रभग्नं स्वबलं दृष्ट्वा पुत्रस्ते द्रोणमभ्ययात् ।**
**त्वरन्नेकरथेनैव समेत्य द्रोणमब्रवीत् ।।१।।**

**सञ्जय कहते हैं**—अपनी सम्पूर्ण सेना में भगदड़ मची देख आपका पुत्र दुर्योधन बड़ी उतावली के साथ एकमात्र रथ के द्वारा द्रोणाचार्य के पास गया और उनसे मिलकर इस प्रकार बोला—

**गतः स पुरुषव्याघ्रः प्रमथ्यैतां महाचमूम् ।**
**अथ बुद्ध्या समीक्षस्व दारुणेऽस्मिञ्जनक्षये ।।२।।**
**यथा स पुरुषव्याघ्रो न हन्येत जयद्रथः ।**
**तथा विधत्स्व भद्रं ते त्वं हि नः परमा गतिः ।।३।।**

"गुरुदेव ! पुरुषसिंह अर्जुन हमारी इस विशाल सेना को मथकर व्यूह में प्रविष्ट हो गया । अब आप बुद्धि से विचार कीजिए और इस भयंकर नरसंहार में जिस प्रकार भी पुरुषसिंह जयद्रथ न मारा जाए, वैसा उपाय कीजिए । आपका कल्याण हो । हमारा सबसे बड़ा आश्रय आप ही हैं ।

**अतिक्रान्ते हि कौन्तेय भित्त्वा सैन्यं परन्तप ।**
**जयद्रथस्य गोप्तारः संशयं परमं गताः ।।४।।**

"शत्रुसन्तापक आचार्य ! जब से कुन्तीपुत्र अर्जुन आपकी सेना का व्यूह भेदकर और आपको भी लाँघकर आगे चले गये हैं, तब से जयद्रथ की रक्षा करनेवाले योद्धा महान् संशय में पड़ गये हैं ।

**स्थिरा बुद्धिर्नरेन्द्राणामासीद् ब्रह्मविदां वर ।**
**नातिक्रमिष्यति द्रोणं जातु जीवं धनञ्जयः ।।५।।**

"ब्रह्मवेत्ताओं में श्रेष्ठ आचार्य ! हमारे पक्ष के राजाओं का यह दृढ़ विश्वास था कि अर्जुन द्रोणाचार्य के जीते-जी उन्हें लाँघकर सेना के भीतर प्रविष्ट नहीं हो सकेगा ।

**जानामि त्वां महाभाग पाण्डवानां हिते रतम् ।**
**तथा मुह्यामि च ब्रह्मन् कार्यवत्तां विचिन्तयन् ।।६।।**

"ब्रह्मन् ! महाभाग ! मैं यह जानता हूँ कि आप पाण्डवों के हित में तत्पर रहनेवाले हैं, अतः मैं अपने कार्य की गुरुता का विचार करके मोहित हो रहा हूँ ।

**अस्मान्न त्वं सदा भक्तानिच्छस्यमितविक्रम ।**
**पाण्डवान् सततं प्रीणास्यस्माकं विप्रिये रतान् ।।७।।**

"अमित पराक्रमी आचार्य ! आपके चरणों में भक्ति रखनेवाले हमें तो आप चाहते नहीं हैं और सदा हम लोगों का अप्रिय करने में तत्पर पाण्डवों को आप निरन्तर प्रसन्न रखते हैं ।

**अस्मानेवोपजीवंस्त्वमस्माकं विप्रिये रतः ।**
**न ह्ययं त्वां विजानामि मधुदिग्धमिव क्षुरम् ।।८।।**

"हमसे ही आपकी आजीविका चलती है तो भी आप हमारा ही अप्रिय करने में लगे रहते हैं । मैं नहीं जानता था कि आप मधु में डुबोये हुए छुरे के समान हैं ।

**नादास्यच्चेद् वरं मह्यं भवान् पाण्डवनिग्रहे ।**
**नावारयिष्यं गच्छन्तमहं सिन्धुपतिं गृहान् ।।९।।**

"यदि आप मुझे अर्जुन को रोके रखने का वर न देते तो मैं सिन्धुराज जयद्रथ को अपने घर को जाते हुए कभी मना नहीं करता ।

**मया त्वाशंसमानेन त्वत्तस्त्राणमबुद्धिना ।**
**आश्वासितः सिन्धुपतिर्मोहाद् दत्तश्च मृत्यवे ।।१०।।**

"मुझ मूर्ख ने आपसे संरक्षण पाने का भरोसा करके सिन्धुराज जयद्रथ को समझा-बुझाकर यहीं रोक लिया और इस प्रकार मोहवश मैंने उसे मृत्यु को सौंप दिया ।

**यमदंष्ट्रान्तरं प्राप्तो मुच्येतापि हि मानवः ।**
**नार्जुनस्य वशं प्राप्तो मुच्येताजौ जयद्रथः ।।११।।**

"मनुष्य यमराज की दाढ़ों में पड़कर भले ही बच जाए परन्तु समराङ्गण में अर्जुन के वश में पड़े हुए जयद्रथ के प्राण नहीं बच सकते ।

**स तथा कुरु शोणाश्व यथा मुच्येत सैन्धवः ।**
**मम चार्तप्रलापानां मा क्रुधः पाहि सैन्धवम् ।।१२।।**

"लाल घोड़ोंवाले आचार्य ! आप कोई ऐसा प्रयत्न कीजिए, जिससे सिन्धुराज जयद्रथ मृत्यु के मुख से छूट जाए । मैंने दुःखी होने के कारण जो प्रलाप किये हैं, उनके लिए क्रोध न कीजिए, जैसे भी हो सिन्धुराज की रक्षा कीजिए ।"

द्रोण उवाच

**नाभ्यसूयामि ते वाक्यमश्वत्थाम्नासि मे समः ।**
**सत्यं तु ते प्रवक्ष्यामि तज्जुषस्व विशाम्पते ॥१३॥**

**द्रोणाचार्य बोले**—राजन् ! तुमने जो कुछ कहा है, उसके लिए मैं बुरा नहीं मानता, क्योंकि तुम मेरे लिए अश्वत्थामा के समान हो, परन्तु जो सच्ची बात है, वह तुम्हें बता रहा हूँ, उसे ध्यानपूर्वक सुनो ।

**सारथिः प्रवरः कृष्णः शीघ्राश्चास्य हयोत्तमाः ।**
**अल्पं च विवरं कृत्वा तूर्णं याति धनञ्जयः ॥१४॥**

श्रीकृष्ण अर्जुन के श्रेष्ठ सारथि हैं और उनके उत्तम घोड़े भी तीव्रगामी हैं, अतः थोड़ा-सा भी अवकाश बनाकर अर्जुन तत्काल सेना में घुस जाते हैं ।

**न चाहं शीघ्रयानेऽद्य समर्थो वयसान्वितः ।**
**सेनामुखे च पार्थानामेतद् बलमुपस्थितम् ॥१५॥**

मैं वृद्ध हो गया हूँ, अतः मैं शीघ्रतापूर्वक रथ चलाने में असमर्थ हूँ । इधर मेरी सेना के सामने यह कुन्तीपुत्रों की भारी सेना उपस्थित है ।

**युधिष्ठिरश्च मे ग्राह्यो मिषतां सर्वधन्विनाम् ।**
**एवं मया प्रतिज्ञातं क्षत्रमध्ये महाभुज ॥१६॥**

महाबाहो ! मैंने क्षत्रियों के मध्य में यह प्रतिज्ञा की है कि समस्त धनुर्धरों के देखते-देखते मैं युधिष्ठिर को कैद कर लूँगा ।

**धनञ्जयेन चोत्सृष्टो वर्तते प्रमुखे नृप ।**
**तस्माद् व्यूहमुखं हित्वा नाहं योत्स्यामि फाल्गुनम् ॥१७**

राजन् ! इस समय युधिष्ठिर अर्जुन से रहित होकर मेरे सम्मुख खड़े हैं, ऐसी दशा में मैं व्यूह का द्वार छोड़कर अर्जुन के साथ युद्ध करने के लिए नहीं जाऊँगा ।

**राजा शूरः कृती दक्षो वैरमुत्पाद्य पाण्डवैः ।**
**वीर स्वयं प्रयाह्यत्र यत्र पार्थो धनञ्जयः ॥१८॥**

तुम राजा, शूरवीर, विद्वान् और युद्ध-कुशल हो । वीर ! तुमने ही पाण्डवों के साथ वैर बाँधा है, अतः जहाँ अर्जुन गये हैं, वहाँ उनसे युद्ध करने के लिए स्वयं ही शीघ्रतापूर्वक जाओ ।

दुर्योधन उवाच

**कथं त्वामप्यतिक्रान्तः सर्वशास्त्रभृतां वरम् ।**
**धनञ्जयो मया शक्य आचार्य प्रतिबाधितुम् ॥१९॥**

**दुर्योधन बोला**—आचार्य ! जो सम्पूर्ण शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ आपको भी लाँघकर आगे बढ़ गया, वह अर्जुन मेरे द्वारा कैसे रोका जा सकता है ?

**अपि शक्यो रणे जेतुं वज्रहस्तः पुरन्दरः ।**
**नार्जुनः समरे शक्यो जेतुं परपुरञ्जयः ॥२०॥**

युद्ध में वज्रधारी इन्द्र को भी जीता जा सकता है, परन्तु युद्ध-भूमि में शत्रुओं की राजधानी पर विजय पानेवाले अर्जुन को जीतना असम्भव है ।

**येन भोजश्च हार्दिक्यो भवाँश्च त्रिदशोपमः ।**
**अस्त्रप्रतापेन जितौ श्रुतायुश्च निबर्हितः ॥२१॥**
**तं कथं पाण्डवं युद्धे दहन्तमिव पावकम् ।**
**प्रतियोत्स्यामि दुर्धर्षं तमहं शस्त्रकोविदम् ॥२२॥**

जिसने भोजवंशी कृतवर्मा और देवताओं के समान तेजस्वी आपको भी अपने अस्त्र के प्रताप से परास्त कर दिया, श्रुतायु और अनेक राजाओं का संहार कर डाला, युद्ध में अग्नि के समान शत्रुओं को दग्ध करनेवाले और अस्त्र-शस्त्रों के ज्ञाता उस दुर्धर्ष वीर पाण्डुपुत्र अर्जुन के साथ मैं कैसे युद्ध कर सकूँगा ?

**क्षमं च मन्यसे युद्धं मम तेनाद्य संयुगे ।**
**परवानस्मि भवति प्रेष्यवद् रक्ष मद्यशः ॥२३॥**

यदि आज समर-भूमि में आप अर्जुन के साथ मेरा युद्ध करना उचित मानते हैं, तो मैं एक सेवक की भाँति आपकी आज्ञा के अधीन हूँ । आप मेरे यश की रक्षा कीजिए ।

द्रोण उवाच

**सत्यं वदसि कौरव्य दुराधर्षो धनञ्जयः ।**
**अहं तु तत्करिष्यामि यथैनं प्रसहिष्यसि ॥२४॥**

**द्रोणाचार्य ने कहा**—कुरुनन्दन ! तुम सत्य कहते हो । अर्जुन निश्चय ही दुर्जय वीर है, परन्तु मैं एक ऐसा उपाय कर दूँगा, जिससे तुम उसका वेग सह सकोगे ।

**अद्भुतं चाद्य पश्यन्तु लोके सर्वधनुर्धराः ।**
**विषक्तं त्वयि कौन्तेयं वासुदेवस्य पश्यतः ॥२५॥**

आज संसार के समस्त धनुर्धर श्रीकृष्ण के समक्ष ही कुन्तीपुत्र अर्जुन को तुम्हारे साथ युद्ध में उलझे रहने की अद्भुत घटना देखेंगे ।

**एष ते कवचं राजँस्तथा बध्नामि काञ्चनम् ।**
**यथा न बाणा नास्त्राणि प्रहरिष्यन्ति ते रणे ॥२६॥**

राजन् ! मैं यह सुवर्णमय कवच तुम्हारे शरीर में इस प्रकार बाँध देता हूँ, जिससे रणभूमि में छूटनेवाले बाण और अन्य अस्त्र तुम्हें चोट नहीं पहुँचा सकेंगे ।

सञ्जय उवाच

**एवमुक्त्वा त्वरन् द्रोणः स्पृष्ट्वाम्भो वर्म भास्वरम् ।**
**आबबन्धाद्भुततमं जपन् मन्त्रं यथाविधि ॥२७॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! ऐसा कहकर द्रोणाचार्य ने तुरन्त आचमन करके दुर्योधन के शरीर में विधिपूर्वक मन्त्रजप के साथ-साथ वह अत्यन्त तेजस्वी अद्भुत कवच बाँध दिया ।

**बद्ध्वा तु कवचं तस्य मन्त्रेण विधिपूर्वकम् ।**
**प्रेषयामास राजानं युद्धाय महते द्विजः ॥२८॥**

मन्त्र द्वारा राजा दुर्योधन के शरीर में विधिपूर्वक कवच बाँधकर विप्रवर द्रोणाचार्य ने उसे महान् युद्ध के लिए भेज दिया ।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि द्वादशोऽध्यायः ॥१२॥**

# त्रयोदशोऽध्यायः

## द्रोणाचार्य और सात्यकि का अद्भुत युद्ध

सञ्जय उवाच

**प्रविष्टयोर्महाराज पार्थवार्ष्णेययो रणे ।**
**दुर्योधने प्रयाते च पृष्ठतः पुरुषर्षभे ॥१॥**
**जवेनाभ्यद्रवन् द्रोणं महता निःस्वनेन च ।**
**पाण्डवाः सोमकैः सार्धं ततो युद्धमवर्तत ॥२॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज ! उस युद्धभूमि में जब श्रीकृष्ण तथा अर्जुन कौरव-सेना में घुस गये और पुरुषप्रवर दुर्योधन उनका पीछा करता हुआ आगे बढ़ गया, तब सोमकोंसहित पाण्डवों ने बड़ी भारी गर्जना के साथ द्रोणाचार्य पर वेगपूर्वक धावा किया, फिर तो वहाँ बड़े जोर से युद्ध होने लगा ।

**रक्षमाणः स्वकं व्यूहं द्रोणोऽपि सह सैनिकैः ।**
**रुक्मपुंखाञ्शरानस्यन् युयुधानमुपाद्रवत् ॥३॥**

द्रोणाचार्य ने भी अपने व्यूह की रक्षा करते हुए बहुत-से सैनिकों को साथ लेकर सुवर्णमय पंखवाले बाणों की वर्षा करते हुए वहाँ युयुधान [सात्यकि] पर आक्रमण किया ।

**ततस्तौ द्रोणशैनेयौ युयुधाते परन्तपौ ।**
**शरैरनेकसाहस्रैस्ताडयन्तौ परस्परम् ॥४॥**

फिर तो शत्रुओं को सन्ताप देनेवाले द्रोणाचार्य और सात्यकि एक-दूसरे पर सहस्रों बाणों का प्रहार करते हुए युद्ध करने लगे ।

**उभयोः पतिते छत्रे तथैव पतितौ ध्वजौ ।**
**उभौ रुधिरसिक्ताङ्गावुभौ च विजयैषिणौ ॥५॥**

युद्ध करते-करते दोनों के छत्र कटकर गिर गये, ध्वज धराशायी हो गये और दोनों ही विजय की अभिलाषा रखते हुए खून से लथपथ हो रहे थे ।

**स्रवद्भिः शोणितं गात्रैः प्रस्रुताविव वारणौ ।**
**अन्योन्यमभ्यविध्येतां जीवितान्तकरैः शरैः ॥६॥**

सारे अङ्गों से रक्त की धारा बहने के कारण वे दोनों वीर मदवर्षी गजराजों के समान प्रतीत होते थे । वे एक-दूसरे को प्राणघातक बाणों से वेध रहे थे ।

**यदस्त्रमस्यति द्रोणस्तदेवास्यति सात्यकिः ।**
**तन्नाचार्योऽप्यसम्भ्रान्तोऽयोधयच्छत्रुतापनः ॥७॥**

द्रोणाचार्य जिस अस्त्र का प्रयोग करते, उसी का सात्यकि भी करते थे । शत्रुसन्तापक आचार्य द्रोण भी घबराहट छोड़कर सात्यकि से युद्ध करते रहे ।

**ततः क्रुद्धो महाराज धनुर्वेदस्य पारगः ।**
**वधाय युयुधानस्य दिव्यमस्त्रमुदैरयत् ॥८॥**

महाराज ! तत्पश्चात् धनुर्वेद के पारंगत विद्वान् द्रोणाचार्य ने क्रुद्ध होकर सात्यकि के वध के लिए एक दिव्यास्त्र प्रकट किया ।

**तदाग्नेयं महाघोरं रिपुघ्नमुपलक्ष्य सः ।**
**दिव्यमस्त्रं महेष्वासो वारुणं समुदैरयत् ॥९॥**

शत्रुओं का नाश करनेवाले उस अति भयंकर

आग्नेयास्त्र को देखकर महाधनुर्धर सात्यकि ने भी वारुण नामक दिव्यास्त्र का प्रयोग किया ।

**ततो युधिष्ठिरो राजा भीमसेनश्च पाण्डवः ।**
**नकुलः सहदेवश्च पर्यरक्षन्त सात्यकिम् ॥१०॥**

फिर तो राजा युधिष्ठिर, पाण्डुकुमार भीमसेन, नकुल और सहदेव सब ओर से सात्यकि की रक्षा करने लगे ।

**दुःशासनं पुरस्कृत्य राजपुत्राः सहस्रशः ।**
**द्रोणमभ्युपपद्यन्त सपत्नैः परिवारितम् ॥११॥**

उधर से सहस्रों राजकुमार दुःशासन को आगे करके शत्रुओं से घिरे हुए द्रोणाचार्य के पास उनकी रक्षा के लिए जा पहुँचे ।

**ततो युद्धमभूद् राजँस्तेषां तव च धन्विनाम् ।**
**रजसा संवृते लोके शरजालसमावृते ॥१२॥**

राजन् ! तत्पश्चात् पाण्डवों के और आपके धनुर्धरों का परस्पर युद्ध होने लगा । उस समय सब लोग धूल से आवृत और बाणसमूह से आच्छादित हो गये ।

**सर्वमाविग्नमभवन्न प्राज्ञायत किञ्चन ।**
**सैन्येन रजसा ध्वस्ते निर्मर्यादमवर्तत ॥१३॥**

वहाँ का सब-कुछ उद्विग्न हो रहा था । सेना द्वारा उड़ाई हुई धूल से ध्वस्त होने के कारण किसी को कुछ ज्ञात नहीं होता था, इस प्रकार वहाँ मर्यादा-शून्य युद्ध चल रहा था ।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि त्रयोदशोऽध्यायः ॥१३॥**

# चतुर्दशोऽध्यायः

## अर्जुन द्वारा अद्भुत जलाशय का निर्माण और श्रीकृष्ण द्वारा अश्व-परिचर्या

सञ्जय उवाच

**तथा तेषु विषवतेषु सैन्येषु जयगृद्धिषु ।**
**अर्जुनो वासुदेवश्च सैन्धवायैव जग्मतुः ॥१॥**

विजय-अभिलाषी वे समस्त सेनाएँ जब युद्ध में इस प्रकार जूझ रही थीं तब अर्जुन और श्रीकृष्ण सिन्धुराज जयद्रथ को प्राप्त करने के लिए ही आगे बढ़ते चले गये ।

**यत्र यत्र रथो याति पाण्डवस्य महात्मनः ।**
**तत्र तत्रैव दीर्यन्ते सेनास्तव विशाम्पते ॥२॥**

नरेश्वर ! महामना पाण्डुपुत्र अर्जुन का रथ जहाँ-जहाँ जाता था, वहीं-वहीं आपकी सेना में दरार पड़ जाती थी ।

**प्रविश्य तु रणे राजन् केशवः परवीरहा ।**
**सेनामध्ये हयाँस्तूर्णं नोदयामास भारत ॥३॥**

राजन् ! भरतनन्दन ! शत्रु वीरों का संहार करनेवाले श्रीकृष्ण ने युद्धभूमि में सेना में प्रविष्ट होकर अपने घोड़ों को तीव्र गति से हाँका ।

**ततस्तस्य रथौघस्य मध्यं प्राप्य हयोत्तमाः ।**
**कृच्छ्रेण रथमूहुस्तं क्षुत्पिपासासमन्विताः ॥४॥**

तत्पश्चात् रथियों के समूह के मध्यभाग में पहुँचकर भूख और प्यास से पीड़ित हुए वे घोड़े बड़ी कठिनाई से उस रथ को खेंच पा रहे थे ।

**एतस्मिन्नन्तरे वीरावावन्त्यौ भ्रातरौ नृप ।**
**सहसेनौ समाच्छेतां पाण्डवं क्लान्तवाहनम् ॥५॥**

प्रजेश्वर ! इसी समय अवन्ती के वीर राजकुमार दोनों भाई विन्द और अनुविन्द थके हुए घोड़ोंवाले पाण्डुपुत्र अर्जुन का सामना करने के लिए अपनी सेना के साथ आये ।

**तयोस्तु धनुषी चित्रे भल्लाभ्यां श्वेतवाहनः ।**
**चिच्छेद समरे तूर्णं ध्वजौ च कनकोज्ज्वलौ ॥६॥**

श्वेत घोड़ोंवाले अर्जुन ने युद्धभूमि में दो बाणों द्वारा उनके दोनों विचित्र धनुषों और सुवर्ण के समान प्रकाशित होनेवाले दोनों ध्वजों को भी तुरन्त ही काट डाला ।

**ज्येष्ठस्य च शिरः कायात् क्षुरप्रेण न्यकृन्तत ।**
**स पपात हतः पृथ्व्यां वातरुग्ण इव द्रुमः ॥७॥**

तत्पश्चात् एक क्षुरप्र द्वारा बड़े भाई विन्द का मस्तक धड़ से काट दिया । विन्द आँधी द्वारा उखाड़े हुए वृक्ष के समान मरकर पृथिवी पर गिर पड़ा ।

**विन्दं तु निहतं दृष्ट्वा ह्यनुविन्दः प्रतापवान् ।**
**अभ्यवर्तत संग्रामे गदां गृह्य महाबलः ॥८॥**

विन्द को मारा गया देख महाबली और प्रतापी अनुविन्द हाथ में गदा लेकर रणभूमि में डटा रहा ।

**तस्यार्जुनः शरैः षड्भिर्ग्रीवां पादौ भुजौ शिरः ।**
**निचकर्त स संछिन्नः पपाताद्रिचयो यथा ॥९॥**

तब अर्जुन ने छह बाणों द्वारा उसकी गर्दन, दोनों पैरों, दोनों भुजाओं और सिर को भी काट डाला । इस प्रकार छिन्न-भिन्न होकर वह पर्वत-समूह के समान धराशायी हो गया ।

**ततस्तौ निहतौ दृष्ट्वा तयो राजन् पदानुगाः ।**
**अभ्यद्रवन्त संक्रुद्धाः किरन्तः शतशः शरान् ॥१०॥**

राजन् ! तब उन दोनों भाइयों को मारा गया देख उनके सेवकगण अत्यन्त क्रुद्ध हो सैकड़ों बाणों की वर्षा करते हुए अर्जुन पर टूट पड़े ।

**तानर्जुनः शरैस्तूर्णं निहत्य भरतर्षभ ।**
**व्यरोचत यथा वह्निर्दावं दग्ध्वा हिमात्यये ॥११॥**

भरतभूषण ! अर्जुन बाणों द्वारा शीघ्र ही उन सबका संहार करके ग्रीष्म-ऋतु में वन को जलाकर प्रकाशित होनेवाले अग्निदेव के समान सुशोभित हुए ।

**तं दृष्ट्वा कुरवस्त्रस्ताः प्रहृष्टाश्चाभवन् पुनः ।**
**अभ्यवर्तन्त पार्थं च समन्ताद् भरतर्षभ ॥१२॥**

भरतभूषण ! उन्हें देखकर कौरव-सैनिक पहले तो भयभीत हुए, फिर प्रसन्न हो गये । वे चारों ओर से कुन्तीपुत्र का सामना करने के लिए डट गये ।

**श्रान्तं चैनं समालक्ष्य ज्ञात्वा दूरे च सैन्धवम् ।**
**सिंहनादेन महता सर्वतः पर्यवारयन् ॥१३॥**

अर्जुन को थका हुआ देख और सिन्धुराज जयद्रथ को उनसे बहुत दूर जानकर आपके सैनिकों ने महान् सिंहनाद करते हुए उन्हें सब ओर से घेर लिया ।

**तांस्तु दृष्ट्वा सुसंरब्धानुत्स्मयन् पुरुषर्षभः ।**
**शनकैरिव दाशार्हमर्जुनो वाक्यमब्रवीत् ॥१४॥**

उन सबको क्रोध में भरा हुआ देख पुरुष शिरोमणि अर्जुन ने मुस्कराते हुए धीरे-धीरे श्रीकृष्ण से कहा—

**शरार्दिताश्च ग्लानाश्च हया दूरे च सैन्धवः ।**
**किमिहानन्तरं कार्यं ज्यायिष्ठं तव रोचते ॥१५॥**

"मेरे घोड़े बाणों से पीड़ित हो बहुत थक गये हैं और सिन्धुराज जयद्रथ अभी बहुत दूर है, अतः इस समय यहाँ कौन-सा कार्य आपको श्रेष्ठ प्रतीत होता है ?

**मम त्वनन्तरं कृत्यं यद् वै तत् त्वं निबोध मे ।**
**हयान् विमुच्य हि सुखं विशल्यान् कुरु माधव ॥१६॥**

"माधव ! मेरी दृष्टि में इस समय जो कर्तव्य है, वह बताता हूँ, आप मुझसे सुनिए । आप घोड़ों को खोलकर इन्हें सुख पहुँचाने के लिए इनके शरीर से बाण निकाल दीजिए ।"

**एवमुक्तस्तु पार्थेन केशवः प्रत्युवाच तम् ।**
**ममाप्येतन्मतं पार्थ यदिदं ते प्रभाषितम् ॥१७॥**

अर्जुन के ऐसा कहने पर श्रीकृष्ण ने उन्हें इस प्रकार उत्तर दिया—"पार्थ ! तुमने इस समय जो बात कही है, वही मुझे भी अभीष्ट है ।"

अर्जुन उवाच

**अहमावारयिष्यामि सर्वसैन्यानि केशव ।**
**त्वमप्यत्र यथान्यायं कुरु कार्यमनन्तरम् ॥१८॥**

**अर्जुन ने कहा**—केशव ! मैं इन समस्त सेनाओं को रोक रखूँगा । आप भी यहाँ इस समय करने योग्य यथोचित कार्य को सम्पन्न करें ।

सञ्जय उवाच

**सोऽवतीर्य रथोपस्थादसम्भ्रान्तो धनञ्जयः ।**
**गाण्डीवं धनुरादाय तस्थौ गिरिरिवाचलः ॥१९॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! अर्जुन बिना किसी घबराहट के रथ की बैठक से उतर पड़े और गाण्डीव धनुष हाथ में लेकर पर्वत के समान अविचल भाव से खड़े हो गये ।

धृतराष्ट्र उवाच

**अर्जुने धरणीं प्राप्ते हयहस्ते च केशवे ।**
**एतदन्तरमासाद्य कथं पार्थो न घातितः ॥२०॥**

**धृतराष्ट्र ने पूछा**—सञ्जय ! जब अर्जुन धरती पर खड़े हो गये और श्रीकृष्ण ने घोड़ों की चिकित्सा में हाथ लगाया, तब यह अवसर पाकर मेरे सैनिकों ने पृथापुत्र का वध क्यों नहीं कर डाला ?

सञ्जय उवाच

**सद्यः पार्थिव पार्थेन निरुद्धाः सर्वपार्थिवाः ।**
**रथस्था धरणीस्थेन वाक्यमच्छान्दसं यथा ।।२१।।**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज ! उस समय अर्जुन ने पृथिवी पर खड़े होकर रथ पर बैठे हुए समस्त राजाओं को सहसा उसी प्रकार रोक दिया, जैसे वेदविरुद्ध वाक्य अग्राह्य कर दिया जाता है ।

**स पार्थः पार्थिवान्सर्वान्भूमिस्थोऽपि रथस्थितान् ।**
**एको निवारयामास लोभः सर्वगुणानिव ।।२२।।**

अर्जुन ने अकेले ही पृथिवी पर खड़े रहकर भी रथ पर बैठे हुए समस्त राजाओं को वैसे ही रोक दिया, जैसे लोभ सम्पूर्ण गुणों का निवारण कर देता है ।

**ततो जनार्दनः संख्ये प्रियं पुरुषसत्तमम् ।**
**असम्भ्रान्तो महाबाहुरर्जुनं वाक्यमब्रवीत् ।।२३।।**

तत्पश्चात् सम्भ्रमरहित महाबाहु श्रीकृष्ण ने युद्धस्थल में अपने प्रिय सखा पुरुषप्रवर अर्जुन से यह बात कही—

**उदपानमिहाश्वानां नालमस्ति रणेऽर्जुन ।**
**परीप्सन्ते जलं चेमे पेयं न त्ववगाहनम् ।।२४।।**

"अर्जुन ! यहाँ घोड़ों को पीने के लिए पर्याप्त जल नहीं है । ये पीने योग्य जल चाहते हैं । इन्हें स्नान की इच्छा नहीं है ।"

**इदमस्तीत्यसम्भ्रान्तो ब्रुवन्नस्त्रेण मेदिनीम् ।**
**अभिहत्यार्जुनश्चक्रे वाजिपानं सरः शुभम् ।।२५।।**

'यह रहा इनके पीने के लिए जल'—ऐसा कहकर अर्जुन ने बिना किसी घबराहट के अस्त्र द्वारा पृथिवी पर आघात करके घोड़ों के लिए पीने योग्य जल से भरा हुआ सुन्दर सरोवर उत्पन्न कर दिया ।

**वासुदेवो रथात् तूर्णमवतीर्य महाद्युतिः ।**
**मोचयामास तुरगान् विनुन्नान् कङ्कपत्रिभिः ।।२६।।**

सरोवर के निर्माण हो जाने पर महातेजस्वी श्रीकृष्ण ने तुरन्त ही रथ से उतरकर कंकपत्रयुक्त बाणों से क्षत-विक्षत हुए घोड़ों को खोल दिया ।

**शल्यानुद्धृत्य पाणिभ्यां परिमृज्य च तान् हयान् ।**
**उपावर्त्य यथान्यायं पाययामास वारि सः ।।२७**

उन्होंने अपने दोनों हाथों से बाण निकालकर उन घोड़ों को मला और यथोचित रूप से टहलाकर उन्हें पानी पिलाया ।

**स ताँल्लब्धोदकान्स्नाताञ्जग्धान्नान्विगतक्लमान् ।**
**योजयामास संहृष्टः पुनरेव रथोत्तमे ।।२८।।**

श्रीकृष्ण ने पानी पिलाकर उन्हें नहलाया, घास चरायी, दाना खिलाया और जब उनकी सारी थकावट दूर हो गई, तब पुनः उन्हें उस उत्तम रथ में बड़ी प्रसन्नता के साथ जोत दिया ।

**स तं रथवरं शौरिः सर्वशस्त्रभृतां वरः ।**
**समास्थाय महातेजाः सार्जुनः प्रययौ द्रुतम् ।।२९।।**

तब समस्त शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ महातेजस्वी श्रीकृष्ण अर्जुनसहित उस उत्तम रथ पर सवार होकर बड़े वेग के साथ आगे बढ़े ।

**रथं रथवरस्याजौ युक्तं लब्धोदकैर्हयैः ।**
**दृष्ट्वा कुरुबलश्रेष्ठाः पुनर्विमनसोऽभवन् ।।३०।।**

रथियों में श्रेष्ठ अर्जुन के उस रथ को युद्धभूमि में पानी पीकर सुस्ताये हुए घोड़ों से जुता हुआ देख कौरव-सेना के श्रेष्ठ वीर पुनः उदास हो गये ।

**विनिःश्वसन्तस्ते राजन् भग्नदंष्ट्रा इवोरगाः ।**
**धिगहो धिग्गतः पार्थः कृष्णश्चेत्यब्रुवन् पृथक् ।।३१।।**

राजन् ! टूटे दाँतवाले सर्पों के समान लम्बे-लम्बे श्वास लेते हुए वे पृथक्-पृथक् कहने लगे—"अहो ! हमें धिक्कार है ! धिक्कार है, अर्जुन और श्रीकृष्ण तो चले गये ।"

**तौ दृष्ट्वा तु व्यतिक्रान्तौ हृषीकेशधनञ्जयौ ।**
**सिन्धुराजस्य रक्षार्थं पराक्रान्तः सुतस्तव ।।३२।।**

श्रीकृष्ण और अर्जुन सारी सेना को लाँघते हुए आगे बढ़े जा रहे हैं, यह देख आपके पुत्र दुर्योधन ने जयद्रथ की रक्षा के लिए पराक्रम दिखाना आरम्भ किया ।

**द्रोणेनाबद्धकवचो राजा दुर्योधनस्ततः ।**
**ययावेकरथेनाजौ हयसंस्कारवित् प्रभो ।।३३।।**

प्रभो ! घोड़ों के संस्कार को जाननेवाला राजा दुर्योधन उस समय आचार्य द्रोण के बाँधे हुए कवच को धारण करके एकमात्र रथ की सहायता से रण-भूमि में गया था ।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि चतुर्दशोऽध्यायः ।।१४।।**

# पञ्चदशोऽध्यायः

## अर्जुन तथा दुर्योधन का युद्ध और दुर्योधन की पराजय

सञ्जय उवाच

**दृष्ट्वा दुर्योधनं कृष्णो व्यतिक्रान्तं सहानुगम् ।**
**अब्रवीदर्जुनं राजन् प्राप्तकालमिदं वचः ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! सेवकोंसहित दुर्योधन सबको लाँघकर सामने आ गया—यह देखकर श्रीकृष्ण ने अर्जुन से यह समयोचित वचन कहा—

वासुदेव उवाच

**दुर्योधनमतिक्रान्तमेनं पश्य धनञ्जय ।**
**अत्यद्भुतमिमं मन्ये नास्त्यस्य सदृशो रथः ॥२॥**

**श्रीकृष्ण बोले**—धनञ्जय ! सबको लाँघकर सामने आये हुए इस दुर्योधन को देखो । मैं तो इसे अत्यद्भुत योद्धा मानता हूँ । इस जैसा दूसरा कोई रथी नहीं है ।

**दूरपातो महेष्वासः कृतास्त्रो युद्धदुर्मदः ।**
**दृढास्त्रश्चित्रयोधी च धार्तराष्ट्रो महाबलः ॥३॥**

यह महाबली धृतराष्ट्रपुत्र दूर तक लक्ष्य को मार गिरानेवाला, महान् धनुर्धर, अस्त्रविद्या में निपुण और युद्ध-दुर्मद है । इसके अस्त्रशस्त्र सुदृढ़ हैं और यह विचित्र रीति से युद्ध करनेवाला है ।

**तेन युद्धमहं मन्ये प्राप्तकालं तवानघ ।**
**अत्र वो द्यूतमायत्तं विजयायेतराय वा ॥४॥**

निष्पाप अर्जुन ! मैं समझता हूँ, इस समय इसी के साथ युद्ध करने का समय है । यहाँ तुम दोनों में जो रणद्यूत होनेवाला है, वही विजय अथवा पराजय का कारण होगा ।

**अत्र क्रोधविषं पार्थ विमुञ्च चिरसम्भृतम् ।**
**एषमूलमनर्थानां पाण्डवानां महारथः ॥५॥**

पार्थ ! तुम बहुत दिनों से सँजोकर रखे हुए अपने क्रोधरूपी विष को इसपर छोड़ो । महारथी दुर्योधन ही पाण्डवों के लिए सारे अनर्थों की जड़ है ।

**दिष्ट्या त्विदानीं सम्प्राप्त एष ते बाणगोचरम् ।**
**यथायं जीवितं जह्यात् तथा कुरु धनञ्जय ॥६॥**

धनञ्जय ! सौभाग्यवश यह दुर्योधन इस समय तुम्हारे बाणों के पथ में आ गया है । तुम ऐसा प्रयत्न करो जिससे यह अपने प्राणों को त्याग दे ।

सञ्जय उवाच

**तं तथेत्यब्रवीत् पार्थः कृत्यरूपमिदं मम ।**
**सर्वमन्यदनादृत्य गच्छ यत्र सुयोधनः ॥७॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! तब कुन्तीपुत्र अर्जुन ने बहुत अच्छा कहकर श्रीकृष्ण से कहा—"यह मेरे लिए सबसे बड़ा कर्तव्य प्राप्त हुआ है । अन्य सब [योद्धाओं] की अवहेलना करके आप वहीं चलिए, जहाँ दुर्योधन खड़ा है ।

**येनैतद् दीर्घकालं नो भुक्तं राज्यमकण्टकम् ।**
**अप्यस्य युधि विक्रम्य छिन्द्यां मूर्धानमाहवे ॥८॥**

"जिसने दीर्घकाल तक हमारे इस अकण्टक राज्य का उपभोग किया है, मैं युद्ध में पराक्रम करके उस दुर्योधन के सिर को धड़ से अलग कर दूँगा ।"

**इत्येवं वादिनौ कृष्णौ हृष्टौ श्वेतान् हयोत्तमान् ।**
**प्रेषयामासतुः संख्ये प्रेप्सन्तौ तं नराधिपम् ॥९॥**

इस प्रकार की बातें करते हुए उन दोनों कृष्णों [कृष्ण और अर्जुन] ने युद्धभूमि में राजा दुर्योधन को अपना लक्ष्य बनाने के लिए हर्षपूर्वक अपने उत्तम सफेद घोड़ों को उसकी ओर बढ़ाया ।

**दृष्ट्वा तु पार्थं संरब्धं वासुदेवं च मारिष ।**
**प्रहसन्नेव पुत्रस्ते योद्धुकामः समाह्वयत् ॥१०॥**

आर्य ! अर्जुन और श्रीकृष्ण को अत्यन्त रोष में भरे देख आपके पुत्र दुर्योधन ने जोर-जोर से हँसते हुए ही युद्ध की इच्छा से उन दोनों को ललकारा ।

**ततः प्रहृष्टो दाशार्हः पाण्डवश्च धनञ्जयः ।**
**व्यक्रोशेतां महानादं दध्मतुश्चाम्बुजोत्तमौ ॥११॥**

तब हर्ष में भरे हुए श्रीकृष्ण और पाण्डुपुत्र धनञ्जय ने बड़े जोर से सिंहनाद किया और अपने उत्तम शंखों को बजाया ।

**तथा तु दृष्ट्वा योधास्ते प्रहृष्टौ कृष्णपाण्डवौ ।**
**हतो राजा हतो राजेत्यूचिरे च भयार्दिताः ॥१२॥**

श्रीकृष्ण और अर्जुन को इस प्रकार हर्षमग्न देख आपके समस्त सैनिक भय से पीड़ित हो—"हाय !

राजा दुर्योधन मारे गये, मारे गये"—ऐसा कहते हुए कोलाहल करने लगे।

**जनस्य संनिनादं तु श्रुत्वा दुर्योधनोऽब्रवीत्।**
**व्येतु वो भीरहं कृष्णौ प्रेषयिष्यामि मृत्यवे ॥१३॥**

लोगों का वह आर्तनाद सुनकर दुर्योधन बोला—"मैं इन दोनों कृष्णों को मौत के घाट उतार दूँगा, अतः तुम लोगों का भय दूर हो जाना चाहिए।"

**इत्युक्त्वा सैनिकान् सर्वाञ्जयापेक्षी नराधिपः।**
**पार्थमाभाष्य संरम्भादिदं वचनमब्रवीत् ॥१४॥**

अपने समस्त सैनिकों से ऐसा कहकर विजय की अभिलाषा रखनेवाले राजा दुर्योधन ने कुन्तीपुत्र अर्जुन को सम्बोधित करके क्रोधपूर्वक यह वचन कहा—

**पार्थ यच्छिक्षितं तेऽस्त्रं दिव्यं पार्थिवमेव च।**
**तद् दर्शय मयि क्षिप्रं यदि जातोऽसि पाण्डुना ॥१५॥**

"पार्थ ! यदि तुम पाण्डु के पुत्र हो तो तुमने जो लौकिक और दिव्य-अस्त्रों की शिक्षा प्राप्त की है, उन सबका मुझपर शीघ्र प्रयोग करो।"

**एवमुक्त्वार्जुनं राजा त्रिभिर्मर्मातिगैः शरैः।**
**अभ्यविध्यन्महावेगैश्चतुर्भिश्चतुरो हयान् ॥१६॥**

राजन् ! अर्जुन से ऐसा कहकर राजा दुर्योधन ने तीन अति वेगशाली मर्मभेदी बाणों द्वारा उन्हें बींध डाला और चार बाणों द्वारा उनके चारों घोड़ों को भी घायल कर दिया।

**वासुदेवं च दशभिः प्रत्यविध्यत् महोरसि।**
**प्रतोदं चास्य भल्लेन छित्वा भूमावपातयत् ॥१७॥**

इस प्रकार दस बाण मारकर उसने श्रीकृष्ण की छाती को बींध डाला और एक भल्ल से उनके चाबुक को काटकर पृथिवी पर गिरा दिया।

**तं चतुर्दशभिः पार्थश्चित्रपुङ्खैः शिलाशितैः।**
**अविध्यत् तूर्णमव्यग्रस्ते चाभ्रश्यन्त वर्मणः ॥१८॥**

तब अर्जुन ने बिना किसी घबराहट के सान पर चढ़ाकर तेज किये हुए विचित्र पंखवाले चौदह बाणों द्वारा तुरन्त उसे घायल कर दिया, परन्तु वे बाण दुर्योधन के कवच पर जाकर फिसल गये।

**तेषां नैष्फल्यमालोक्य पुनर्नव च पञ्च च।**
**प्राहिणोन्निशितान् बाणाँस्ते चाभ्रश्यन्तवर्मणः ॥१९॥**

अपने बाणों को निष्फल हुआ देख अर्जुन ने फिर चौदह तीखे बाण चलाये, परन्तु वे भी कवच से फिसल गये।

**अष्टाविंशाँस्तु तान्बाणानस्तान्विप्रेक्ष्य निष्फलान्।**
**अब्रवीत् परवीरघ्नः कृष्णोऽर्जुनमिदं वचः ॥२०॥**

अर्जुन द्वारा चलाये गये उन अट्ठाईस बाणों को व्यर्थ हुआ देख शत्रुवीरों के संहारक श्रीकृष्ण ने कहा—

**अदृष्टपूर्वं पश्यामि शिलानामिव सर्पणम्।**
**त्वया सम्प्रेषिताः पार्थ नार्थं कुर्वन्ति पत्रिणः ॥२१॥**

"पार्थ ! आज तो मैं पत्थरों के चलने के समान ऐसी बात देख रहा हूँ, जिसे पहले कभी नहीं देखा था। तुम्हारे चलाये हुए बाण तो कोई काम ही नहीं कर रहे हैं।

**कच्चिद् गाण्डीवजः प्राणस्तथैव भरतर्षभ।**
**मुष्टिश्च ते यथापूर्वं भुजयोश्च बलं तव ॥२२॥**

"भरतभूषण ! तुम्हारे गाण्डीव-धनुष की शक्ति पहले जैसी ही है न ? तुम्हारी मुट्ठी और बाहुबल भी पूर्ववत् ही हैं न ?

**विस्मयो मे महान् पार्थ तव दृष्ट्वा शरानिमान्।**
**व्यर्थान् निपतितान् संख्ये दुर्योधनरथं प्रति ॥२३॥**

"कुन्तीकुमार ! आज रणभूमि में दुर्योधन के रथ के पास व्यर्थ होकर गिरे हुए तुम्हारे इन बाणों को देखकर मुझे महान् आश्चर्य हो रहा है।

**वज्राशनिसमा घोराः परकायावभेदिनः।**
**शराः कुर्वन्ति ते नार्थं पार्थ काद्य विडम्बना ॥२४॥**

"पार्थ ! वज्र तथा विद्युत् के समान भयंकर और शत्रुओं के शरीर को विदीर्ण कर देनेवाले तुम्हारे ये तीर आज कुछ काम नहीं कर रहे हैं, यह कैसी विडम्बना है ?"

अर्जुन उवाच

**द्रोणेनैषा मतिः कृष्ण धार्तराष्ट्रे निवेशिता।**
**अभेद्या हि ममास्त्राणामेषा कवचधारणा ॥२५॥**

**अर्जुन ने कहा**—श्रीकृष्ण ! मेरा तो ऐसा विश्वास है कि दुर्योधन को द्रोणाचार्य ने अभेद्य कवच बाँधकर उसमें यह अद्भुत शक्ति स्थापित कर दी है। यह कवचधारणा मेरे अस्त्रों के लिए अभेद्य है।

**एष दुर्योधनः कृष्ण द्रोणेन विहितामिमाम् ।**
**तिष्ठत्यभीतवत् संख्ये बिभ्रत् कवचधारणाम् ।।२६।।**

श्रीकृष्ण ! आचार्य द्रोण द्वारा विधिपूर्वक धारण कराई हुई इस कवचधारणा को ग्रहण करके यह दुर्योधन रणभूमि में निर्भय-सा खड़ा है ।

**यस्त्वत्र विहितं कार्यं नैष तद् वेत्ति माधव ।**
**स्त्रीवदेष बिभर्त्येतां युक्तां कवचधारणाम् ।।२७।।**

माधव ! इसे धारण करने पर जिस कर्तव्य के पालन का विधान किया गया है, उससे यह अनभिज्ञ है । जैसे स्त्रियाँ आभूषण पहन लेती हैं, वैसे ही यह दूसरे के द्वारा दी हुई इस कवचधारणा को अपनाये हुए है ।

**पश्य बाह्वोश्च मे वीर्यं धनुषश्च जनार्दन ।**
**पराजयिष्ये कौरव्यं कवचेनापि रक्षितम् ।।२८।।**

जनार्दन ! अब आप मेरी भुजाओं और धनुष का बल देखिए । मैं कवच द्वारा सुरक्षित होने पर भी दुर्योधन को परास्त कर दूँगा ।

सञ्जय उवाच

**एवमुक्त्वार्जुनो बाणमभिमन्त्र्य व्यकर्षयत् ।**
**मानवास्त्रेण मानार्हस्तीक्ष्णावरणभेदिना ।।२९।।**

**सञ्जय कहते हैं**—हे राजन् ! ऐसा कहकर पूजनीय अर्जुन ने कठोर आवरण का भेदन करनेवाले मानवास्त्र से अपने बाणों को अभिमन्त्रित करके धनुष की डोरी खींची ।

**विकृष्यमाणांस्तेनैव धनुर्मध्यगताञ्शरान् ।**
**तानस्यास्त्रेण चिच्छेद द्रौणिः सर्वास्त्रघातिना ।।३०।।**

धनुष के बीच में रखकर अर्जुन द्वारा खींचे जानेवाले उन बाणों को अश्वत्थामा ने सर्वास्त्रघातक नामक अस्त्र द्वारा काट डाला ।

**तान्निकृत्तानिषून्दृष्ट्वा दूरतो ब्रह्मवादिना ।**
**न्यवेदयत् केशवाय विस्मितः श्वेतवाहनः ।।३१।।**

ब्रह्मवादी अश्वत्थामा द्वारा दूर से ही काट दिये गये उन बाणों को देखकर श्वेतवाहन अर्जुन चकित हो गये और श्रीकृष्ण से निवेदन किया—

**नैतदस्त्रं मया शक्यं द्विः प्रयोक्तुं जनार्दन ।**
**अस्त्रं मामेव हन्याद्धि हन्याच्चापि बलं मम ।।३२।।**

"जनार्दन ! इस अस्त्र का मैं दो बार प्रयोग नहीं कर सकता, क्योंकि ऐसा करने पर यह मुझे ही मार डालेगा और मेरी सेना का भी संहार कर देगा ।"

**ततो दुर्योधनः कृष्णौ नवभिर्नवभिः शरैः ।**
**अविध्यत रणे राजञ्शरैराशीविषोपमैः ।।३३।।**

राजन् ! इसी समय दुर्योधन ने युद्धभूमि में विषधर सर्प के समान भयंकर नौ-नौ बाणों से श्रीकृष्ण और अर्जुन को घायल कर दिया ।

**भूय एवाभ्यवर्षच्च समरे कृष्णपाण्डवौ ।**
**शरवर्षेण महता ततोऽहृष्यन्त तावकाः ।।३४।।**

उसने रणक्षेत्र में भीषण बाण-वृष्टि करके श्रीकृष्ण और पाण्डुपुत्र अर्जुन पर पुनः बाणों की झड़ी लगा दी । इससे आपके सैनिक अति प्रसन्न हुए ।

**ततः क्रुद्धो रणे पार्थः सृक्किणी परिसंलिहन् ।**
**नापश्यच्च ततोऽस्याङ्गं यन्न स्याद्वर्मरक्षितम् ।।३५।।**

तब तो युद्धभूमि में कुपित हुए अर्जुन अपने मुँह के कोने चाटने लगे । उन्हें दुर्योधन का कोई भी ऐसा अङ्ग दिखाई न दिया, जो कवच से सुरक्षित न हो ।

**ततोऽस्य निशितैर्बाणैः सुमुक्तैरन्तकोपमैः ।**
**हयांश्चकार निर्देहानुभौ च पार्ष्णिसारथी ।।३६।।**

तत्पश्चात् अर्जुन ने सम्यक् छोड़े हुए कालोपम तीखे बाणों द्वारा दुर्योधन के चारों घोड़ों और दोनों पृष्ठ-रक्षकों को मार डाला ।

**धनुरस्याच्छिनत् तूर्णं हस्तवापं च वीर्यवान् ।**
**रथं च शकलीकर्तुं सव्यसाची प्रचक्रमे ।।३७।।**

फिर पराक्रमी सव्यसाची अर्जुन ने तुरन्त ही उसके धनुष तथा दस्ताने को काट दिया और उसके रथ के टुकड़े-टुकड़े करना आरम्भ किया ।

**दुर्योधनं च बाणाभ्यां तीक्ष्णाभ्यां विरथीकृतम् ।**
**आविध्यद्धस्ततलयोरुभयोरर्जुनस्तदा ।।३८।।**

उस समय अर्जुन ने रथहीन हुए दुर्योधन की दोनों हथेलियों में दो पैने बाणों द्वारा गहरी चोट पहुँचाई ।

**प्रयत्नज्ञो हि कौन्तेयो नखमांसान्तरेषुभिः ।**
**स वेदनाभिराविग्नः पलायनपरायणः ।।३९।।**

उपाय के ज्ञाता कुन्तीपुत्र ने अपने तीरों द्वारा दुर्योधन के नखों के मांस में प्रहार किया। तब वह वेदना से व्याकुल हो युद्धभूमि से भाग चला।

**तं कृच्छ्रामापदं प्राप्तं दृष्ट्वा परमधन्विनः।**
**समापेतुः परीप्सन्तो धनञ्जयशरार्दितम् ॥४०॥**

अर्जुन के बाणों से पीड़ित हुए दुर्योधन को भारी संकट में पड़ा हुआ देख श्रेष्ठ धनुर्धर योद्धा उसकी रक्षा के लिए आ पहुँचे।

**तं रथैर्बहुसाहस्रैः कल्पितैः कुञ्जरैर्हयैः।**
**पदात्योघैश्च संरब्धैः परिवव्रुर्धनञ्जयम् ॥४१॥**

उन्होंने कई सहस्र रथों, समलंकृत हाथियों, घोड़ों और क्रोध में भरे हुए पैदल सैनिकों द्वारा अर्जुन को चारों ओर से घेर लिया।

**ततोऽर्जुनोऽस्त्रवीर्येण निजघ्ने तां वरूथिनीम्।**
**तत्र व्यङ्गीकृताः पेतुः शतशोऽथ रथद्विपाः ॥४२॥**

फिर तो अर्जुन भी अपने अस्त्रबल से उस कौरव-सेना को यमलोक पठाने लगे। वहाँ सैकड़ों रथ और हाथी अङ्ग-भङ्ग होने के कारण धराशायी हो गये।

**तैर्विमुक्तो रथो रेजे वाय्वीरित इवाम्बुदः।**
**जयद्रथस्य गोप्तारस्ततः क्षुब्धाः सहानुगाः ॥४३॥**

उनके घेरे से मुक्त हुआ अर्जुन का रथ वायु द्वारा संचालित मेघ के समान शोभा पाने लगा। इससे जयद्रथ के रक्षक सेवकोंसहित क्षुब्ध हो उठे।

**ते दृष्ट्वा सहसा पार्थं गोप्तारः सैन्धवस्य तु।**
**चक्रुर्नादान् महेष्वासाः कम्पयन्तो वसुन्धराम् ॥४४॥**

जयद्रथ की रक्षा में नियुक्त हुए महाधनुर्धर वीर सहसा अर्जुन को वहाँ उपस्थित देख पृथिवी को कँपाते हुए जोर-जोर से गर्जना करने लगे।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि पञ्चदशोऽध्यायः ॥१५॥**

# षोडशोऽध्यायः

## युधिष्ठिर का सात्यकि को अर्जुन की सहायतार्थ भेजना

धृतराष्ट्र उवाच

**अर्जुने सैन्धवं प्राप्ते भारद्वाजेन संवृताः।**
**पञ्चालाः कुरुभिः सार्धं किमकुर्वत सञ्जयः ॥१॥**

**धृतराष्ट्र ने पूछा**—सञ्जय! जब अर्जुन सिन्धुराज जयद्रथ के निकट पहुँच गये, तब द्रोणाचार्य द्वारा रोके हुए पाञ्चाल सैनिकों ने कौरवों के साथ क्या किया?

सञ्जय उवाच

**अपराह्णे महाराज संग्रामे लोमहर्षणे।**
**पाञ्चालानां कुरूणां च द्रोणद्यूतमवर्तत ॥२॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज! उस दिन दोपहर-पश्चात् रोमाञ्चकारी युद्ध चल रहा था, पाञ्चालों और कौरवों में द्रोणाचार्य को दाँव पर रखकर द्यूत-सा होने लगा।

**पाञ्चाला हि जिघांसन्तो द्रोणं संहृष्टचेतसः।**
**अभ्यमुञ्चन्त गर्जन्तः शरवर्षाणि मारिष ॥३॥**

आर्य! पाञ्चाल-सैनिक द्रोणाचार्य को मार डालने की इच्छा से प्रसन्नचित्त होकर गर्जना करते हुए उनपर बाणों की वर्षा करने लगे।

**ततस्तु तुमुलस्तेषां संग्रामोऽवर्ततादभुतः।**
**पाञ्चालानां कुरूणां च घोरो देवासुरोपमः ॥४॥**

तत्पश्चात् उन पाञ्चालों और कौरवों में घोर देवासुर-संग्राम के समान अद्भुत एवं भयंकर युद्ध होने लगा।

**वर्तमाने तथा रौद्रे तस्मिन् वीरवरक्षये।**
**अशृणोत् सहसा पार्थः पाञ्चजन्यस्य निःस्वनम् ॥५॥**

बड़े-बड़े वीरों का संहार करनेवाला वह भयंकर युद्ध चल ही रहा था कि सहसा कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर ने पाञ्चजन्य की ध्वनि सुनी।

**कश्मलाभिहतो राजा चिन्तयामास पाण्डवः।**
**न नूनं स्वस्ति पार्थाय यथा नदति शंखराट् ॥६॥**

तब पाण्डुपुत्र राजा युधिष्ठिर मोह के वशीभूत होकर इस प्रकार चिन्ता करने लगे—'जिस प्रकार शंखराज पाञ्चजन्य की ध्वनि हो रही है, उससे प्रतीत होता है, निश्चय ही अर्जुन की कुशल नहीं है।'

**एवं स चिन्तयित्वा तु व्याकुलेनान्तरात्मना।**
**अजातशत्रुः कौन्तेयः सात्वतं प्रत्यभाषत ॥७॥**

ऐसा सोचकर अजातशत्रु कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर का हृदय व्याकुल हो उठा। फिर वे सात्यकि को सम्बोधित करते हुए बोले—

युधिष्ठिर उवाच

**यः स धर्मः पुरा दृष्टः सद्भिः शैनेय शाश्वतः।**
**साम्पराये सुहृत्कृत्ये तस्य कालोऽयमागतः ॥८॥**

**युधिष्ठिर बोले**—शैनेय! सज्जनों ने पूर्वकाल में संकट के समय एक मित्र के कर्तव्य के विषय में जिस सनातन धर्म का साक्षात्कार किया है, आज उसी के पालन का अवसर उपस्थित हुआ है।

**यो हि प्रीतमना नित्यं यश्च नित्यमनुव्रतः।**
**स कार्ये साम्पराये तु नियोज्य इति मे मतिः ॥९॥**

जो सदा प्रसन्नचित्त रहता हो, जो सदा अपने प्रति अनुराग रखता हो, उसी को विपत्ति में किसी महत्त्वपूर्ण कार्य का सम्पादन करने के लिए नियुक्त करना चाहिए, ऐसा मेरा मत है।

**स त्वं भ्रातुर्वयस्यस्य गुरोरपि च संयुगे।**
**कुरु कृच्छ्रे सहायार्थमर्जुनस्य नरर्षभ ॥१०॥**

नरश्रेष्ठ! अर्जुन तुम्हारा भाई, मित्र एवं गुरु है। वह रणक्षेत्र में संकट में पड़ा हुआ है, अतः तुम उसकी सहायता के लिए प्रयत्न करो।

**पुरस्तात् सैन्धवानीकं द्रोणानीकं च पृष्ठतः।**
**बहुत्वाद्धि नरव्याघ्र देवेन्द्रमपि पीडयेत् ॥११॥**

नरव्याघ्र! अर्जुन के आगे तो सिन्धुराज की सेना है और पीछे द्रोणाचार्य की। इसकी संख्या इतनी अधिक है कि वह देवराज इन्द्र को भी पीड़ित कर सकती है।

**अपर्यन्ते बले मग्नो जह्यादपि च जीवितम्।**
**तस्मिंश्च निहते युद्धे कथं जीवेत मादृशः ॥१२॥**

इस अनन्त सैन्यसागर में डूबकर अर्जुन अपने प्राणों का भी परित्याग कर देगा। युद्ध में उसके मारे जाने पर मेरे-जैसा मनुष्य कैसे जीवित रह सकता है?

**श्यामो युवा गुडाकेशो प्रविष्टस्तात भारतीम्।**
**तन्न जानामि वार्ष्णेय यदि जीवति वा न वा ॥१३॥**

तात! निद्राविजयी अर्जुन श्यामवर्ण वाला और तरुण है। उसने कौरवी सेना में प्रवेश किया था। वार्ष्णेय! पता नहीं इस समय तक अर्जुन जीवित भी है या नहीं।

**तस्य त्वं पदवीं गच्छ मादृशेनाभिनोदितः।**
**परित्यज्य प्रियान्प्राणान् रणे चर विभीतवत् ॥१४॥**

तुम मुझ-जैसे मनुष्य द्वारा प्रेरित होकर अर्जुन के पथ का अनुसरण करो। तुम युद्धभूमि में प्रिय प्राणों का मोह छोड़कर निर्भय के समान विचरो।

**अयुद्धमनवस्थानं संग्रामे च पलायनम्।**
**भीरूणामसतां मार्गो नैष दाशार्हसेवितः ॥१५॥**

शैनेय! युद्ध से मुँह मोड़ना, रणक्षेत्र में डटे न रहना और युद्धभूमि में पीठ दिखाकर भागना यह कायर और नीच पुरुषों का मार्ग है। दशार्हकुल के वीर इससे दूर रहते हैं।

सञ्जय उवाच

**धर्मराजस्य तद् वाक्यं निशम्य शिनिपुङ्गवः।**
**सात्यकिर्भरतश्रेष्ठ प्रत्युवाच युधिष्ठिरम् ॥१६॥**

**सञ्जय कहते हैं**—भरतभूषण! धर्मराज का वह वचन सुनकर शिनिप्रवर सात्यकि ने युधिष्ठिर को इस प्रकार उत्तर दिया—

**अनुयास्यामि बीभत्सुं करिष्ये वचनं तव।**
**न मे प्रियतरोऽर्जुनात् त्रिषु लोकेषु विद्यते ॥१७॥**

"मैं अर्जुन के पास जाऊँगा और आपकी आज्ञा का पालन करूँगा। मुझे तीनों लोकों में अर्जुन से अधिक प्रिय और कोई पुरुष नहीं है।

**तवाज्ञां शिरसाऽऽगृह्य पाण्डवार्थमहं प्रभो।**
**भित्त्वेदं दुर्भिदं सैन्यं प्रयास्ये नरपुङ्गव ॥१८॥**

"प्रभो! नरश्रेष्ठ! मैं आपकी आज्ञा शिरोधार्य करके पाण्डुपुत्र अर्जुन के लिए इस दुर्भेद्य सैन्यव्यूह का भेदन करके उनके पास जाऊँगा।"

**ततः प्रयातः सहसा तव सैन्यं स सात्यकिः।**
**दिदृक्षुरर्जुनं राजन् धर्मराजस्य शासनात् ॥१९॥**

राजन्! तत्पश्चात् धर्मराज की आज्ञा के अनुसार सात्यकि अर्जुन से मिलने के लिए आपकी सेना की ओर वेगपूर्वक बढ़े।

**प्रविष्टे तव सैन्यं तु शैनेये सत्यविक्रमे ।**
**अक्रुद्धचत रणे राजन् जलसंधो महाबलः ॥२०॥**

जब सत्यपराक्रमी सात्यकि कौरव-सेना में प्रविष्ट हो गये, तब महाबली जलसंध रणभूमि में कुपित हो उठा ।

**ततः क्रुद्धो महाराज मार्गणैर्भारसाधनैः ।**
**अविध्यत शिनेः पौत्रं जलसंधो महोरसि ॥२१॥**

महाराज ! फिर तो कुपित हुए जलसंध ने भार सहन करने में समर्थ बाणों द्वारा शिनिपौत्र सात्यकि की विशाल छाती पर गहरा आघात किया ।

**ततः साभरणौ बाहू क्षुराभ्यां माधवोत्तमः ।**
**सात्यकिर्जलसंधस्य चिच्छेद प्रहसन्निव ॥२२॥**

तब मधुवंश-शिरोमणि सात्यकि ने हँसते हुए-से दो छुरों का प्रहार करके जलसंध की आभूषण-भूषित दोनों भुजाओं को काट दिया ।

**ततः सुदंष्ट्रं सुमहच्चारुकुण्डलमण्डितम् ।**
**क्षुरेणास्य तृतीयेन शिरश्चिच्छेद सात्यकिः ॥२३॥**

तत्पश्चात् सात्यकि ने तीसरे छुरे से उसके सुन्दर दाँतोंवाले और मनोहर कुण्डलों से अलंकृत विशाल मस्तक को भी काट गिराया ।

**जलसंधं हतं दृष्ट्वा वृष्णीनामृषभेण तु ।**
**हाहाकारो महानासीत् तव सैन्यस्य मारिष ॥२४॥**

पूजनीय नरेश ! वृष्णिप्रवर सात्यकि के द्वारा जलसंध को मारा गया देख आपकी सेना में महान् हाहाकार मच गया ।

**विमुखाश्चाभ्यधावन्त तव योधाः समन्ततः ।**
**पलायनकृतोत्साहा निरुत्साहा द्विषज्जये ॥२५॥**

आपके योद्धा शत्रुओं पर विजय पाने का उत्साह खो बैठे । अब वे भाग निकलने में ही उत्साह दिखाने लगे और युद्ध से मुख मोड़कर चारों ओर भाग गये ।

**ततः स पुरुषव्याघ्रः सात्यकिः सत्यविक्रमः ।**
**प्रविष्टस्तावकाञ्जित्वा सूतं याहीत्यनोदयत् ॥२६॥**

हे राजन् ! सत्यपराक्रमी, पुरुषसिंह सात्यकि आपके सैनिकों पर विजयी हो कौरव-सेना में घुस गये और सारथि को आदेश देते हुए बोले—'आगे बढ़ो ।'

**ततो दुःशासनो राजञ्शैनेयं समुपाद्रवत् ।**
**किरञ्शतसहास्राणि पर्जन्य इव वृष्टिमान् ॥२७॥**

राजन् ! तब दुःशासन ने वर्षा करनेवाले मेघ के समान बहुत-से बाण चलाते हुए वहाँ शिनिपौत्र सात्यकि पर आक्रमण किया ।

**सात्वतोऽपि महाराज तं विव्याध महोरसि ।**
**त्रिभिरेव महाभागः शरैः संनतपर्वभिः ॥२८॥**

महाराज ! इधर महाभाग सात्यकि ने भी झुकी हुई गाँठवाले तीन बाणों द्वारा दुःशासन की छाती में चोट पहुँचाई ।

**ततोऽस्य वाहान् निशितैः शरैर्जघ्ने महारथः ।**
**सारथिं च सुसंक्रुद्धः शरैः संनतपर्वभिः ॥२९॥**

तत्पश्चात् महारथी युयुधान ने अत्यन्त क्रुद्ध हो तीखे तीरों से उसके चारों घोड़ों को मार डाला । फिर झुकी हुई गाँठवाले बाणों से उसके सारथि को भी यमलोक पठा दिया ।

**धनुरेकेन भल्लेन हस्तवापं च पञ्चभिः ।**
**चिच्छेद विशिखैस्तीक्ष्णैस्तथोभौ पार्ष्णिसारथी ॥३०**

फिर सात्यकि ने एक भल्ल से दुःशासन के धनुष और पाँच भल्लों से उसके दस्तानों के टुकड़े-टुकड़े कर दिये । इतना ही नहीं, उन्होंने तीखे तीरों द्वारा उसके दोनों पार्श्व-रक्षकों को भी मार डाला ।

**स च्छिन्नधन्वा विरथो हताश्वो हतसारथिः ।**
**त्रिगर्तसेनापतिना स्वरथेनापवाहितः ॥३१॥**

धनुष कट जाने पर रथ, घोड़े और सारथि से हीन हुए दुःशासन को त्रिगर्त-सेनापति ने अपने रथ पर बैठाकर वहाँ से दूर हटा दिया ।

**ततो दुःशासनं जित्वा सात्यकिः संयुगे प्रभो ।**
**जगाम त्वरितो राजन् येन यातो धनञ्जयः ॥३२॥**

प्रभो ! राजन् ! इस प्रकार रणभूमि में दुःशासन पर विजय पाकर सात्यकि तत्काल ही उस मार्ग पर चल दिये, जिससे अर्जुन गये थे ।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि षोडशोऽध्यायः ॥१६॥**

# सप्तदशोऽध्यायः

## द्रोणाचार्य द्वारा अनेक वीरों का वध

सञ्जय उवाच

**अपराह्णे महाराज संग्रामः सुमहानभूत् ।**
**पर्जन्यसमनिर्घोषः पुनर्द्रोणस्य सोमकैः ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज ! अपराह्णकाल में सोमकों के साथ द्रोणाचार्य का पुनः महान् युद्ध छिड़ गया, जिसमें मेघों की गर्जना के समान गम्भीर सिंहनाद हो रहा था ।

**शोणाश्वं रथमास्थाय नरवीरः समाहितः ।**
**समरेऽभ्यद्रवत् पाण्डूञ्जवमास्थाय मध्यमम् ॥२॥**

नरवीर द्रोणाचार्य लाल घोड़ोंवाले रथ पर आरूढ़ हो चित्त को एकाग्र करके मध्यम वेग का आश्रय ले युद्धक्षेत्र में पाण्डवों पर टूट पड़े ।

**तमभ्ययाद् बृहत्क्षत्रः केकयानां महारथः ।**
**भ्रातॄणां नृप पञ्चानां श्रेष्ठः समरकर्कशः ॥३॥**

प्रजानाथ ! उस समय युद्धदुर्मद केकय महारथी बृहत्क्षत्र, जो अपने पाँचों भाइयों में सबसे बड़े थे, द्रोणाचार्य का सामना करने के लिए आगे बढ़े ।

**द्रोणस्तु बहुभिर्विद्धो बृहत्क्षत्रेण मारिष ।**
**असृजद् विशिखाँस्तीक्ष्णान् कैकयस्य रथं प्रति ॥४॥**

समादरणीय नरेश ! जब बृहत्क्षत्र ने बहुत सारे बाण मारकर द्रोणाचार्य को क्षत-विक्षत कर दिया, तब उन्होंने केकयनरेश के रथ पर तीखे सायकों की वृष्टि आरम्भ की ।

**व्याकुलीकृत्य तं द्रोणो बृहत्क्षत्रं महारथम् ।**
**अश्वांश्चतुर्भिर्न्यवधीच्चतुरोऽस्य पतत्त्रिभिः ॥५॥**

आचार्य द्रोण ने महारथी बृहत्क्षत्र को व्याकुल करके अपने चार बाणों द्वारा उनके चारों घोड़ों को मार डाला ।

**सूतं चैकेन बाणेन रथनीडादपातयत् ।**
**द्वाभ्यां ध्वजं च छत्रं च छित्त्वा भूमावपातयत् ॥६**

फिर एक बाण मारकर उसके सारथि को रथ की बैठक से नीचे गिरा दिया और दो बाणों से उसके ध्वज और छत्र को भी काटकर भूमि पर गिरा दिया ।

**ततः साधुविसृष्टेन नाराचेन द्विजर्षभः ।**
**हृद्यविध्यद् बृहत्क्षत्रं स छिन्नहृदयोऽपतत् ॥७॥**

तत्पश्चात् सम्यक् चलाये हुए नाराच से द्विजश्रेष्ठ द्रोण ने बृहत्क्षत्र की छाती छेद डाली । वक्षस्थल विदीर्ण होने के कारण बृहत्क्षत्र धरती पर गिर पड़े ।

**धृष्टकेतुश्च चेदीनामृषभोऽतिबलोदितः ।**
**वधायाभ्यद्रवद् द्रोणं पतङ्ग इव पावकम् ॥८॥**

[बृहत्क्षत्र के मारे जाने पर] अत्यन्त बलसम्पन्न चेदिराज धृष्टकेतु द्रोणाचार्य का वध करने के लिए उनकी ओर वैसे ही दौड़ा जैसे पतंगा आग पर टूट पड़ता है ।

**ततोऽस्य विशिखं तीक्ष्णं वधार्थं वधकांक्षिणः ।**
**प्रेषयामास समरे भारद्वाजः प्रतापवान् ॥९॥**

तब अपने वध की इच्छा रखनेवाले धृष्टकेतु के वध के लिए प्रतापी द्रोणाचार्य ने रणभूमि में उसपर एक बाण का प्रहार किया ।

**स तस्य कवचं भित्त्वा हृदयं चामितौजसः ।**
**अभ्यगाद् धरणीं बाणो हंसः पद्मवनं यथा ॥१०॥**

वह बाण अमित तेजस्वी धृष्टकेतु के कवच और वक्षस्थल को विदीर्ण करके धरती में ऐसे समा गया, जैसे हंस कमलवन में प्रवेश करता है ।

**निहते चेदिराजे तु तत् खण्डं पित्र्यमाविशत् ।**
**अमर्षवशमापन्नः पुत्रोऽस्य परमास्त्रवित् ॥११॥**

चेदिराज के मारे जाने पर उत्तम अस्त्रों का ज्ञाता उसका पुत्र क्रोध के वशीभूत हो अपने पिता के स्थान पर आकर डट गया ।

**तमपि प्रहसन् द्रोणः शरैर्निन्ये यमक्षयम् ।**
**महाव्याघ्रो महारण्ये मृगशावं यथा बली ॥१२॥**

परन्तु हँसते हुए द्रोणाचार्य ने उसे भी अपने बाणों द्वारा उसी प्रकार यमलोक पठा दिया, जैसे बलवान् महाव्याघ्र विशाल वन में किसी हिरण के बच्चे को दबोच लेता है ।

**तेषु प्रक्षीयमाणेषु पाण्डवेषु च भारत ।**
**जरासन्धसुतो वीरः स्वयं द्रोणमुपाद्रवत् ॥१३॥**

भरतभूषण ! उन पाण्डव योद्धाओं के इस प्रकार मारे जाने पर जरासन्ध के वीर पुत्र सहदेव ने स्वयं ही द्रोणाचार्य पर आक्रमण किया ।

**छादयित्वा रणे द्रोणो रथस्थं रथिनां वरम् ।**
**जारासन्धिं जघानाशु मिषतां सर्वधन्विनाम् ॥१४॥**

परन्तु द्रोणाचार्य ने समस्त धनुर्धरों के देखते-देखते रणभूमि में रथ पर बैठे हुए रथियों में श्रेष्ठ जरासन्धकुमार को अपने बाणों द्वारा आच्छादित करके शीघ्र ही मौत के घाट उतार दिया ।

**यो यः स्म नीयते तत्र तं द्रोणो ह्यन्तकोपमः ।**
**आदत्त सर्वभूतानि प्राप्ते काले यथान्तकः ॥१५॥**

जैसे समय आने पर यमराज समस्त प्राणियों को ग्रस लेता है, उसी प्रकार काल के समान द्रोणाचार्य ने जो-जो वीर उनके सामने पहुँचा, उसे-उसे मृत्यु को सौंप दिया ।

**ततो द्रोणो महाराज नाम विश्राव्य संयुगे ।**
**शरैरनेकसाहस्रैः पाण्डवेयान् समावृणोत् ॥१६॥**

महाराज ! तत्पश्चात् द्रोणाचार्य ने युद्धभूमि में अपना नाम सुना-सुनाकर अनेक सहस्र बाणों द्वारा पाण्डव-सैनिकों को ढक दिया ।

**आकर्णपलितः श्यामो वयसाशीतिपञ्चकः ।[1]**
**रणे पर्यचरद् द्रोणो वृद्धः षोडशवर्षवत् ॥१७॥**

जिनके कान तक के बाल पक गये थे, श्याम वर्ण था और जो चार सौ वर्ष के वृद्ध थे, वे द्रोणाचार्य रणभूमि में सोलह वर्ष के नवयुवक की भाँति विचर रहे थे ।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि सप्तदशोऽध्यायः ॥१७॥**

# अष्टादशोऽध्यायः

## युधिष्ठिर का भीमसेन को अर्जुन और सात्यकि का पता लगाने के लिए भेजना

सञ्जय उवाच

**वर्तमाने तथा रौद्रे संग्रामे लोमहर्षणे ।**
**नापश्यच्छरणं किञ्चिद् धर्मराजो युधिष्ठिरः ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! जिस समय वह रोमाञ्चकारी भयंकर संग्राम चल रहा था, उस समय धर्मराज युधिष्ठिर को कोई भी अपना आश्रय या रक्षक दिखाई नहीं दिया ।

**ततो वीक्ष्य दिशः सर्वाः सव्यसाचिदिदृक्षया ।**
**युधिष्ठिरो ददर्शाथ नैव पार्थं न माधवम् ॥२॥**

तब युधिष्ठिर ने सव्यसाची अर्जुन को देखने की इच्छा से सम्पूर्ण दिशाओं में दृष्टि दौड़ाई, परन्तु उन्हें कहीं भी अर्जुन और सात्यकि दिखाई नहीं दिये ।

**सोऽपश्यन् नरशार्दूलं वानरर्षभलक्षणम् ।**
**गाण्डीवस्य च निर्घोषमशृण्वन् व्यथितेन्द्रियः ॥३॥**

वानरश्रेष्ठ हनुमान् के चिह्न से युक्त ध्वजावाले पुरुषसिंह अर्जुन को न देखकर और उनके गाण्डीव का गम्भीर घोष न सुनकर उनकी सारी इन्द्रियाँ व्याकुल हो गईं ।

**अपश्यन् सात्यकिं चापि वृष्णीनां प्रवरं रथम् ।**
**चिन्तयाभिपरीताङ्गो धर्मराजो युधिष्ठिरः ॥४॥**

वृष्णिवंश के प्रमुख महारथी सात्यकि को भी न देखने के कारण धर्मराज युधिष्ठिर का एक-एक अङ्ग चिन्ता की ज्वाला से संतप्त हो उठा ।

---

१. 'अशीतिपञ्चकः' पद का अर्थ हमने चारसौ वर्ष किया है और यही समीचीन भी है । युद्ध के समय अर्जुन की आयु अस्सी वर्ष की थी, तो क्या द्रोणाचार्य अर्जुन से पाँच वर्ष ही बड़े थे ? चार सौ वर्ष की आयु असम्भव नहीं है ।

प्रश्न हो सकता है कि युद्ध के समय अर्जुन की आयु ८० वर्ष की थी, इसका क्या प्रमाण है ? हमारा उत्तर यह है कि युद्ध के पश्चात् युधिष्ठिर ने ३६ वर्ष तक राज्य किया है । श्रीकृष्ण ने १२५ वर्ष की अवस्था में परमगति पाई थी । पाण्डवों ने श्रीकृष्ण की मृत्यु के पश्चात् स्वर्गारोहण किया है, अतः अर्जुन युद्ध के अवसर पर ८० वर्ष से कम नहीं थे ।

यदि द्रोणाचार्य की अवस्था युद्ध के अवसर पर ८५ वर्ष की होती तो व्यासजी 'पञ्चाशीतिः' पद का प्रयोग करते ।

**अचिन्तयन्महाबाहुः शैनेयस्य रथं प्रति ।**
**पदवीं प्रेषितश्चैव फाल्गुनस्य मया रणे ॥५॥**
**शैनेयः सात्यकिः सत्यो मित्राणामभयंकरः ।**
**तदिदं ह्येकमेवासीद् द्विधा जातं ममाद्य वै ।**
**सात्यकिश्च हि विज्ञेयः पाण्डवश्च धनञ्जयः ॥६॥**

महाबाहु युधिष्ठिर सात्यकि के रथ के सम्बन्ध में मन-ही-मन इस प्रकार चिन्ता करने लगे—'अहो ! मैंने ही युद्धभूमि में मित्रों को अभय प्रदान करनेवाले, सत्यवादी शिनिपौत्र सात्यकि को अर्जुन के अन्वेषण के लिए भेजा था, अतः यह मेरा मन जो पहले एक की ही चिन्ता में निमग्न था, अब दो व्यक्तियों के लिए चिन्तित होकर दो भागों में बट गया है। इस समय मुझे सात्यकि का भी पता लगाना चाहिए और अर्जुन का भी ।

**सात्यकिं प्रेषयित्वा तु पाण्डवस्य पदानुगम् ।**
**सात्वतस्यापि कं युद्धे प्रेषयिष्ये पदानुगम् ॥७॥**

'मैंने पाण्डुपुत्र अर्जुन के पीछे तो सात्यकि को भेज दिया। अब सात्यकि के पीछे किसको रणभूमि में भेजूंगा ?

**करिष्यामि प्रयत्नेन भ्रातुरन्वेषणं यदि ।**
**युयुधानमनन्विष्य लोको मां गर्हयिष्यति ॥८॥**

'यदि मैं युयुधान का अन्वेषण न कराकर प्रयत्न-पूर्वक केवल अपने भाई अर्जुन की ही खोज कराऊँगा तो संसार मेरी निन्दा करेगा ।

**लोकापवादभीरुत्वात् सोऽहं पार्थं वृकोदरम् ।**
**पदवीं प्रेषयिष्यामि माधवस्य महात्मनः ॥९॥**

'मुझे लोकनिन्दा से बड़ा भय लगता है, अतः मैं कुन्तीनन्दन भीम को महामनस्वी सात्यकि का पता लगाने के लिए भेजता हूँ।'

**एवं निश्चित्य मनसा भीममाहूय पार्थिवः ।**
**अब्रवीद् वचनं राजन् कुन्तीपुत्रो युधिष्ठिरः ॥१०॥**

मन-ही-मन ऐसा निश्चय कर और भीम को अपने पास बुलाकर कुन्तीकुमार राजा युधिष्ठिर ने उनसे इस प्रकार कहा—

**यथा शंखस्य निर्घोषः पाञ्चजन्यस्य श्रूयते ।**
**पूरितो वासुदेवेन संरब्धेन यशस्विना ॥११॥**
**नूनमद्य हतः शेते तव भ्राता धनञ्जयः ।**
**तस्मिन् विनिहते नूनं युध्यतेऽसौ जनार्दनः ॥१२॥**

"भैया ! इस समय पाञ्चजन्य शंख की जैसी ध्वनि सुनाई देती है और यशस्वी श्रीकृष्ण ने क्रोध में भरकर उस शंख को जिस प्रकार बजाया है, उससे प्रतीत होता है, आज तुम्हारा भाई अर्जुन निश्चय ही मारा जाकर युद्धभूमि में सो रहा है और उसके मारे जाने पर स्वयं श्रीकृष्ण ही युद्ध कर रहे हैं ।

**अर्जुनार्थे महाबाहो सात्वतस्य च कारणात् ।**
**वर्धते हविषेवाग्निरिध्यमानः पुनः पुनः ॥१३॥**

"भीम ! अर्जुन और सात्यकि के लिए ही मैं दुःखी हो रहा हूँ । जैसे बारम्बार घी डालने से अग्नि प्रज्वलित हो उठती है, उसी प्रकार मेरी शोकाग्नि भी बढ़ती जाती है ।

**न हि मे शुध्यते भावस्तयोरेव परन्तप ।**
**स तत्र गच्छ कौन्तेय यत्र यातो धनञ्जयः ॥१४॥**
**सात्यकिश्च महावीर्यः कर्तव्यं यदि मन्यसे ।**
**वचनं मम धर्मज्ञ भ्राता ज्येष्ठो भवामि ते ॥१५॥**
**न तेऽर्जुनस्तथा ज्ञेयो ज्ञातव्यः सात्यकिर्यथा ।**
**चिकीर्षुर्मत्प्रियं पार्थ स यातः सव्यसाचिनः ॥१६॥**

"परन्तप ! अर्जुन और सात्यकि के जीवन के विषय में जो मेरे मन में संशय उत्पन्न हो गया है, वह दूर नहीं हो रहा है, अतः कुन्तीकुमार ! तुम वहीं जाओ, जहाँ अर्जुन और महापराक्रमी सात्यकि गये हैं। धर्मज्ञ ! मैं तुम्हारा बड़ा भाई हूँ। यदि तुम मेरी आज्ञा का पालन करना उचित मानते हो तो ऐसा ही करो। तुम्हें अर्जुन की उतनी खोज नहीं करनी है जितनी सात्यकि की। पार्थ ! सात्यकि ने मेरा प्रिय करने की इच्छा से सव्यसाची अर्जुन के पथ का अनुसरण किया है ।

**दृष्ट्वा कुशलिनौ कृष्णौ सात्वतं चैव सात्यकिम् ।**
**संविदं चैव कुर्यास्त्वं सिंहनादेन पाण्डव ॥१७॥**

"पाण्डुकुमार ! जब तुम श्रीकृष्ण, अर्जुन और सात्वतवंशी वीर सात्यकि को सकुशल देख लो, तब उच्च स्वर से सिंहनाद करके मुझे इसकी सूचना दे देना ।"

इति महाभारते द्रोणपर्वणि अष्टादशोऽध्यायः ॥१८॥

# एकोनविंशोऽध्यायः

## भीमसेन का पराक्रम, धृतराष्ट्र के अनेक पुत्रों का वध और द्रोणाचार्य के रथों को तोड़कर श्रीकृष्ण और अर्जुन के पास पहुँच सिंहगर्जना करना

भीमसेन उवाच

**ब्रह्मेशानेन्द्रवरुणानवहद् यः पुरः रथः ।**
**तमस्थाय गतौ कृष्णौ न तयोर्विद्यते भयम् ॥१॥**

**भीमसेन ने कहा**—महाराज ! जो रथ पहले ब्रह्मा, महादेव, इन्द्र और वरुण की सवारी में आ चुका है, उसी रथ पर बैठकर श्रीकृष्ण और अर्जुन युद्ध के लिए गये हैं, अतः उनके लिए तनिक भी भय नहीं है ।

**आज्ञां तु शिरसा बिभ्रदेष गच्छामि मा शुचः ।**
**समेत्य तान् नरव्याघ्रांस्तव दास्यामि संविदम् ॥२॥**

परन्तु आपकी आज्ञा शिरोधार्य करके मैं जा रहा हूँ । आप चिन्ता न करें । मैं उन पुरुषसिंहों से मिलकर आपको सूचना दूंगा ।

सञ्जय उवाच

**ततो निक्षिप्य राजानं धृष्टद्युम्ने च पाण्डवम् ।**
**अभिवाद्य गुरुं ज्येष्ठं प्रययौ येन फाल्गुनः ॥३॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! भीम ऐसा कह और पाण्डुपुत्र राजा युधिष्ठिर को धृष्टद्युम्न के हाथों में सौंपकर अपने बड़े भाई को प्रणाम करके जिस मार्ग से अर्जुन गये थे, उसी मार्ग पर चल दिये ।

**तं प्रयान्तं महाबाहुं पाञ्चालाः सहसोमकाः ।**
**पृष्ठतोऽनुययुः शूरा मघवन्तमिवामराः ॥४॥**

यात्रा करते हुए महाबाहु भीमसेन के पीछे पाञ्चाल एवं सोमक वीर भी ऐसे चले, मानो देवगण देवराज इन्द्र का अनुगमन कर रहे हों ।

**तं समेत्य महाराज तावकाः पर्यवारयन् ।**
**छादयन्तः शरैर्भीमं मेघाः सूर्यमिवोदितम् ॥५॥**

महाराज ! उस समय आपके पुत्रों ने भीमसेन को घेर लिया और वे बाणों द्वारा उसे ऐसे ही आच्छादित करने लगे जैसे बादल उदय होते हुए सूर्य को ढक लेते हैं ।

**स तानतीत्य वेगेन द्रोणानीकमुपाद्रवत् ।**
**तमवारयदाचार्यो वेलोद्वृत्तमिवार्णवम् ॥६॥**

परन्तु भीमसेन अपने वेग से उन सबको लाँघकर द्रोणाचार्य की सेना पर टूट पड़े । उस समय द्रोणाचार्य ने भीमसेन को उसी प्रकार रोका, जैसे उत्ताल तरङ्गों के साथ उठे हुए महासागर को तट की भूमि रोक देती है ।

**स मन्यमानस्त्वाचार्यो ममायं फाल्गुनो यथा ।**
**भीमः करिष्यते पूजामित्युवाच वृकोदरम् ॥७॥**

अर्जुन की भाँति भीम भी मेरा आदर-सम्मान करेगा, ऐसा समझकर द्रोणाचार्य ने भीम से इस प्रकार कहा—

**भीमसेन न ते शक्या प्रवेष्टुमरिवाहिनी ।**
**मामनिर्जित्य समरे शत्रुमद्य महाबल ॥८॥**

"महाबली भीमसेन ! तुम रणभूमि में आज मुझ शत्रु को पराजित किये बिना इस शत्रुसेना में प्रवेश नहीं कर सकोगे ।

**यदि ते सोऽनुजः कृष्णः प्रविष्टोऽनुमते मम ।**
**अनीकं न तु शक्यं मे प्रवेष्टुमिह वै त्वया ॥९॥**

"तुम्हारे छोटे भाई अर्जुन मेरी अनुमति से इसमें प्रविष्ट हुए हैं । यदि इच्छा हो तो तुम भी उसी प्रकार जा सकते हो, अन्यथा मेरे इस सैन्यसमूह में प्रवेश नहीं कर सकोगे ।"

**अथ भीमस्तु तत् श्रुत्वा गुरोर्वाक्यमपेतभीः ।**
**क्रुद्धः प्रोवाच वै द्रोणं रक्तताम्रेक्षणस्त्वरन् ॥१०॥**

गुरु की यह बात सुनकर भीमसेन के नेत्र क्रोध से लाल हो गये । वे बड़ी उतावली के साथ द्रोणाचार्य से निर्भय होकर बोले—

**तवार्जुनो नानुमते ब्रह्मबन्धो रणाजिरम् ।**
**प्रविष्टः स हि दुर्धर्षः शक्रस्यापि विशेद् बलम् ॥११॥**

"ब्रह्मबन्धो ! अर्जुन आपकी अनुमति से इस रणभूमि में प्रविष्ट नहीं हुए हैं । वे तो दुर्जय हैं । वे तो देवराज इन्द्र की सेना में भी घुस सकते हैं ।

**तेन वै परमां पूजां कुर्वता मानितो ह्यसि ।**
**नार्जुनोऽहं घृणी द्रोण भीमसेनोऽस्मि ते रिपुः ॥१२॥**

"उन्होंने आपकी प्रभूत पूजा कर निश्चय ही आपको सम्मान दिया है, परन्तु द्रोण ! मैं दयालु अर्जुन नहीं हूँ, मैं तो तुम्हारा शत्रु भीमसेन हूँ ।

**पिता नस्त्वं गुरुर्बन्धुस्तथा पुत्रास्तु ते वयम् ।**
**इति मन्यामहे सर्वे भवन्तं प्रणताः स्थिताः ।।१३।।**

"आप हमारे पिता, गुरु और बन्धु हो और हम आपके पुत्र के तुल्य हैं—यही हम सब लोग मानते हैं और सदा आपके समक्ष प्रणतभाव से खड़े होते हैं ।

**अद्य तद्विपरीतं ते वदतोऽस्मासु दृश्यते ।**
**यदि त्वं शत्रुमात्मानं मन्यसे तत्तथास्त्विह ।।१४।।**

"परन्तु आज आपके मुख से जो बात निकल रही है, उससे हम लोगों पर आपका विपरीत भाव लक्षित होता है । यदि आप अपने को शत्रु समझते हो तो ऐसा ही सही ।"

**अथोद्भ्राम्य गदां भीमः कालदण्डमिवान्तकः ।**
**द्रोणाय व्यसृजद् राजन् स रथादवपुप्लुवे ।।१५।।**

राजन् ! ऐसा कहकर भीमसेन ने गदा उठा ली, मानो यमराज ने कालदण्ड हाथ में उठा लिया हो । उन्होंने उस गदा को घुमाकर द्रोणाचार्य पर दे मारा, परन्तु वे शीघ्र ही रथ से कूद पड़े ।

**साश्वसूतध्वजं यानं द्रोणस्यापोथयत् तदा ।**
**प्रामृद्नाच्च बहून् योधान् वायुर्वृक्षानिवौजसा ।।१६।।**

जैसे वायु अपने वेग से वृक्षों को धराशायी कर देती है, उसी प्रकार गदा ने उस समय घोड़े, सारथि और ध्वजसहित द्रोणाचार्य के रथ को चूर-चूर कर दिया तथा बहुत-से योद्धाओं को भी धूल में मिला दिया ।

**अन्यं तु रथमास्थाय द्रोणः प्रहरतां वरः ।**
**व्यूहद्वारं समासाद्य युद्धाय समुपस्थितः ।।१७।।**

योद्धाओं में श्रेष्ठ द्रोणाचार्य दूसरे रथ पर बैठकर व्यूह के द्वार पर आ पहुँचे और युद्ध के लिए उद्यत हो गये ।

**ततः क्रुद्धो महाराज भीमसेनः पराक्रमी ।**
**अग्रतः स्यन्दनानीकं शरवर्षैरवाकिरत् ।।१८।।**

महाराज ! तब कुपित हुए पराक्रमी भीमसेन ने सामने खड़ी हुई रथसेना पर बाण-वृष्टि आरम्भ कर दी ।

**ततो दुःशासनः क्रुद्धो रथशक्तिं समाक्षिपत् ।**
**सर्वपारसवीं तीक्ष्णां जिघांसुः पाण्डुनन्दनम् ।।१९।।**

तब क्रुद्ध हुए दुःशासन ने पाण्डुकुमार भीमसेन को मार डालने की इच्छा से उनपर एक तीखी रथशक्ति फेंकी, जो पूर्णरूप से लोहे की बनी हुई थी ।

**आपतन्तीं महाशक्तिं तव पुत्रप्रणोदिताम् ।**
**द्विधा चिच्छेद तां भीमस्तदद्भुतमिवाभवत् ।।२०।।**

आपके पुत्र द्वारा चलाई गई उस महाशक्ति को अपने ऊपर आती देख भीमसेन ने उसके दो टुकड़े कर दिये । वह अद्भुत-सी बात हुई ।

**अथान्यैर्विशिखैस्तीक्ष्णैः संक्रुद्धः कुण्डभेदिनम् ।**
**सुषेणं दीर्घनेत्रं च त्रिभिस्त्रीनवधीद् बली ।।२१।।**

फिर अत्यन्त कुपित हुए महाबली भीम ने दूसरे तीन तीखे तीरों द्वारा कुण्डभेदी, सुषेण और दीर्घलोचन [दीर्घरोमा] आपके इन तीन पुत्रों को मार डाला ।

**ततो वृन्दारकं वीरं कुरूणां कीर्तिवर्धनम् ।**
**पुत्राणां तव वीराणां युध्यतामवधीत् पुनः ।।२२।।**

तदनन्तर आपके अन्य वीर पुत्रों के युद्ध करते रहने पर भी उन्होंने पुनः कुरुकुल की कीर्ति बढ़ानेवाले वीर वृन्दारक का वध कर दिया ।

**अभयं रौद्रकर्माणं दुर्विमोचनमेव च ।**
**त्रिभिस्त्रीनवधीद् भीमः पुनरेव सुतांस्तव ।।२३।।**

तत्पश्चात् भीम ने पुनः तीन बाण मारकर अभय, रौद्रकर्मा और दुर्विमोचन [दुर्विरोचन]—आपके इन तीन पुत्रों को भी यमलोक की राह दिखा दी ।

**बिन्दानुबिन्दौ सहितौ सुवर्माणं च ते सुतम् ।**
**प्रहसन्नेव कौन्तेयः शरैर्निन्ये यमक्षयम् ।।२४।।**

कुन्तीपुत्र भीम ने हँसते हुए ही अपने बाणों द्वारा एक-साथ आये हुए दोनों भाई विन्द और अनुविन्द को एवं आपके पुत्र सुवर्मा को भी यमलोक पठा दिया ।

**ततः सुदर्शनं वीरं पुत्रं ते भरतर्षभ ।**
**विव्याध समरे तूर्णं स पपात ममार च ।।२५।।**

भरतभूषण ! इसके पश्चात् उन्होंने रणभूमि में आपके वीर पुत्र सुदर्शन [उर्णनाभ] को घायल कर दिया । इससे वह तुरन्त ही गिरा और मर गया ।

**सोऽचिरेणैव कालेन तद्रथानीकमाशुगैः।**
**दिशः सर्वाः समालोक्य व्यधमत् पाण्डुनन्दनः ॥२६॥**

इस प्रकार पाण्डुकुमार भीमसेन ने समस्त दिशाओं में दृष्टिपात करके अपने बाणों द्वारा थोड़े ही समय में उस रथसेना को नष्ट कर दिया।

**भीषयित्वा रथानीकं हत्वा योधान्वरान्वरान्।**
**व्यतीत्य रथिनश्चापि द्रोणानीकमुपाद्रवत् ॥२७॥**

समस्त रथसेना को भयभीत करके तथा श्रेष्ठ-श्रेष्ठ योद्धाओं को चुन-चुनकर मारकर और समस्त सैनिकों को लाँघकर भीम ने द्रोणाचार्य की सेना पर आक्रमण किया।

**समुत्तीर्णं रथानीकं पाण्डवं विहसन् रणे।**
**विवारयिषुराचार्यः शरवर्षैरवाकिरत् ॥२८॥**

महाराज! रथसेना को पार करके आये हुए पाण्डुपुत्र भीमसेन को युद्ध में रोकने की इच्छा से द्रोणाचार्य ने हँसते-हँसते उनपर बाण-वृष्टि आरम्भ कर दी।

**स वध्यमानः समरे रथं द्रोणस्य मारिष।**
**ईषायां पाणिना गृह्य प्रचिक्षेप महाबलः ॥२९॥**

आर्य! युद्धभूमि में बाणों से आहत होते हुए महाबली भीम ने द्रोणाचार्य के रथ के जुए को हाथ से पकड़कर सम्पूर्ण रथ को दूर फेंक दिया।

**द्रोणस्तु सत्वरो राजन् क्षिप्तो भीमेन संयुगे।**
**रथमन्यं समारुह्य व्यूहद्वारं ययौ पुनः ॥३०॥**

राजन्! उस युद्धस्थल में भीम द्वारा फेंके गये द्रोणाचार्य तुरन्त ही दूसरे रथ पर सवार हो पुनः व्यूह के द्वार पर जा पहुँचे।

**तमायान्तं तथा दृष्ट्वा भग्नोत्साहं गुरुं तदा।**
**गत्वा वेगात् पुनर्भीमो धुरं गृह्य रथस्य तु ॥३१॥**
**तमप्यतिरथं भीमश्चिक्षेप भृशरोषितः।**
**एवमष्टौ रथाः क्षिप्ता भीमसेनेन लीलया ॥३२॥**

जिनका उत्साह भंग हो गया था, ऐसे द्रोणाचार्य को आते देख भीमसेन ने पुनः वेगपूर्वक आगे बढ़कर उनके रथ की धुरी पकड़ ली और अत्यन्त क्रुद्ध होकर उन अतिरथी वीर द्रोणाचार्य को भी पुनः रथ के साथ ही फेंक दिया। इस प्रकार भीमसेन ने खेल-सा करते हुए आठ रथ फेंके।

**ततः स्वरथमास्थाय भीमसेनो महाबलः।**
**अभ्यद्रवत वेगेन तव पुत्रस्य वाहिनीम् ॥३३॥**

तत्पश्चात् महाबली भीमसेन पुनः अपने रथ पर आरूढ़ हो आपके पुत्र की सेना पर वेगपूर्वक टूट पड़े।

**स मृद्नन् क्षत्रियानाजौ वातो वृक्षानिवोद्धतः।**
**आगच्छद् दारयन् सेनां सिन्धुवेगो नगानिव ॥३४॥**

जैसे उठी हुई आँधी वृक्षों को उखाड़ फेंकती है और सिन्धु [नदी] का वेग पर्वतों को विदीर्ण कर देता है, वैसे ही युद्धभूमि में क्षत्रियों को रौंदते और कौरव सेना को विदीर्ण करते हुए भीमसेन आगे गये।

**भोजानीकमतिक्रम्य दरदानां च वाहिनीम्।**
**तथा म्लेच्छगणानन्यान् बहून् युद्धविशारदान् ॥३५॥**
**सात्यकिं चैव सम्प्रेक्ष्य युध्यमानं महारथम्।**
**रथेन यत्तः कौन्तेयो वेगेन प्रययौ तदा ॥३६॥**

उस समय कुन्तीपुत्र भीमसेन भोजवंशियों को लाँघकर दरदों की विशाल वाहिनी को पार कर गये और बहुत-से युद्धविशारद म्लेच्छों को परास्त करके महारथी सात्यकि को शत्रुओं के साथ युद्ध करते देख सावधान हो रथ के द्वारा वेगपूर्वक आगे बढ़े।

**भीमसेनो महाराज द्रष्टुकामो धनञ्जयम्।**
**अतीत्य समरे योधाँस्तावकान् पाण्डुनन्दनः ॥३७॥**

महाराज! अर्जुन को देखने की इच्छा लिये पाण्डुनन्दन भीमसेन रणभूमि में आपके योद्धाओं को लाँघते हुए वहाँ पहुँचे थे।

**सोऽपश्यदर्जुनं तत्र युध्यमानं महारथम्।**
**सैन्धवस्य वधार्थं हि पराक्रान्तं पराक्रमी ॥३८॥**

पराक्रमी भीमसेन ने वहाँ सिन्धुराज के वध के लिए पराक्रम करते हुए युद्ध में तत्पर महारथी अर्जुन को देखा।

**तं दृष्ट्वा पुरुषव्याघ्रश्चुक्रोश महतो रवान्।**
**प्रावृट्काले महाराज नर्दन्निव बलाहकः ॥३९॥**

महाराज! उन्हें देखते ही पुरुषसिंह भीमसेन ने वर्षाकाल में गर्जते हुए मेघ के समान बहुत उच्चस्वर से सिंहनाद किया।

**तं तस्य निनदं घोरं पार्थः शुश्राव नर्दतः।**
**वासुदेवश्च कौरव्य भीमसेनस्य संयुगे ॥४०॥**

कुरुकुलनन्दन ! गर्जते हुए भीमसेन के उस भयंकर सिंहनाद को रणक्षेत्र में कुन्तीपुत्र अर्जुन और श्रीकृष्ण ने सुना ।

**तौ श्रुत्वा युगपद् वीरौ निनदं तस्य शुष्मिणः ।**
**पुनः पुनः प्रणदतां दिदृक्षन्तौ वृकोदरम् ॥४१॥**

उस महाबली वीर के सिंहनाद को एक ही साथ सुनकर उन दोनों वीरों ने भीम को देखने की इच्छा प्रकट करते हुए बारम्बार गर्जना की ।

**भीमसेनरवं श्रुत्वा फाल्गुनस्य च धन्विनः ।**
**अप्रीयत महाराज धर्मपुत्रो युधिष्ठिरः ॥४२॥**

प्रजेश्वर ! भीमसेन और धनुर्धर अर्जुन की गर्जना सुनकर धर्मपुत्र युधिष्ठिर अति प्रसन्न हुए ।

**तथा तु नर्दमाने वै भीमसेने मदोत्कटे ।**
**हृद्गतं मनसा प्राह ध्यात्वा धर्मभृतां वरः ॥४३॥**

मदोन्मत्त भीमसेन के बारम्बार गर्जना करने पर धर्मात्माओं में श्रेष्ठ युधिष्ठिर मन-ही-मन कुछ सोचते हुए अपने हृदय की बात इस प्रकार कहने लगे—

**दत्ता भीम त्वया संवित् कृतं गुरुवचस्तथा ।**
**न हि तेषां जयो युद्धे येषां द्वेष्टासि पाण्डव ॥४४॥**
**दिष्टया जीवति संग्रामे सव्यसाची धनञ्जयः ।**
**दिष्टया च कुशली वीरः सात्यकिः सत्यविक्रमः ॥४५॥**

'भीम ! तुमने सूचना दे दी और गुरु की आज्ञा का पालन कर दिया । पाण्डुकुमार ! जिनके शत्रु तुम हो, उन्हें युद्ध में विजय प्राप्त नहीं हो सकती । सौभाग्य की बात है कि रणक्षेत्र में सव्यसाची अर्जुन जीवित है । यह भी आनन्द की बात है कि सत्यपराक्रमी वीर सात्यकि सकुशल हैं ।

**कच्चित् तीर्णप्रतिज्ञं हि वासुदेवेन रक्षितम् ।**
**अनस्तमित आदित्ये समेष्याम्यहमर्जुनम् ॥४६॥**

'क्या सूर्यास्त होने से पूर्व ही प्रतिज्ञा पूर्ण करके लौटे हुए श्रीकृष्ण द्वारा सुरक्षित अर्जुन से मैं मिल सकूँगा ?

**कच्चिद् दुर्योधनो राजा फाल्गुनेन निपातितम् ।**
**दृष्ट्वा सैन्धवकं संख्ये शममस्मासु धास्यति ॥४७॥**

'क्या युद्ध में सिन्धुराज को अर्जुन के हाथ से मारा गया देखकर राजा दुर्योधन हमारे साथ सन्धि कर लेगा ?

**दृष्ट्वा चान्यान्महायोधान्पातितान् धरणीतले ।**
**कच्चिद् दुर्योधनो मन्दः पश्चात्तापं गमिष्यति ॥४८॥**

'अन्य अनेक योद्धाओं को भी धराशायी किये गये देखकर क्या मन्दबुद्धि दुर्योधन को पश्चात्ताप होगा ?'

**एवं बहुविधं तस्य राज्ञश्चिन्तयतस्तदा ।**
**कृपयाभिपरीतस्य घोरं युद्धमवर्तत ॥४९॥**

इस प्रकार राजा युधिष्ठिर जब दया से द्रवित होकर भाँति-भाँति की बातें सोच रहे थे, उस समय दूसरी ओर घोर युद्ध हो रहा था ।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि एकोनविंशोऽध्यायः ॥१९॥**

## विंशोऽध्यायः

### सात्यकि का अद्भुत पराक्रम, अर्जुन द्वारा भूरिश्रवा की भुजा का उच्छेद और सात्यकि द्वारा भूरिश्रवा का वध

सञ्जय उवाच

**तरन्निव जले श्रान्तो यथा स्थलमुपेयिवान् ।**
**तं दृष्ट्वा पुरुषव्याघ्रं युयुधानः समाश्वसत् ॥१॥**

सञ्जय कहते हैं—जैसे जल में तैरते-तैरते थका हुआ मनुष्य स्थल में पहुँच जाए, उसी प्रकार पुरुषसिंह अर्जुन को देखकर युयुधान [सात्यकि] को बड़ा आश्वासन मिला ।

**तमायान्तमभिप्रेक्ष्य केशवः पार्थमब्रवीत् ।**
**असावायाति शैनेयस्तव पार्थ पदानुगः ॥२॥**

सात्यकि को आते देख श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा—"पार्थ ! देखो, यह तुम्हारे चरणों का अनुगामी शिनिपौत्र सात्यकि आ रहा है ।

**एष शिष्यः सखा चैव तव सत्यपराक्रमः ।**
**सर्वान् योधांस्तृणीकृत्य विजिग्ये पुरुषर्षभः ॥३॥**

"यह सत्यपराक्रमी वीर तुम्हारा शिष्य और मित्र भी है। इस पुरुषसिंह ने सम्पूर्ण योद्धाओं को तिनके के समान समझकर परास्त कर दिया है।

**कृत्वा सुदुष्करं कर्म सैन्यमध्ये महाबलः ।**
**तव दर्शनमन्विच्छन् पाण्डवाभ्येति सात्यकिः ॥४॥**

"पाण्डुनन्दन ! महाबली सात्यकि कौरव-सेना के भीतर अत्यन्त दुष्कर पराक्रम करके तुम्हें देखने की इच्छा से यहाँ आ रहा है।"

**ततोऽप्रहृष्टः कौन्तेयः केशवं वाक्यमब्रवीत् ।**
**न मे प्रियं महाबाहो यन्मामभ्येति सात्यकिः ॥५॥**

श्रीकृष्ण की बात सुनकर खिन्न-से हुए कुन्ती-पुत्र अर्जुन ने केशव से कहा—"महाबाहो ! सात्यकि जो मेरे पास आ रहे हैं, यह बात मुझे प्रिय नहीं है।

**न हि जानामि वृत्तान्तं धर्मराजस्य केशव ।**
**सात्वतेन विहीनः स यदि जीवति वा न वा ॥६॥**

"केशव ! पता नहीं धर्मराज का क्या हाल है ! सात्यकि से रहित होकर वे जीवित भी हैं या नहीं !

**एतेन हि महाबाहो रक्षितव्यः स पार्थिवः ।**
**तमेष कथमुत्सृज्य मम कृष्ण पदानुगः ॥७॥**

"महाबाहो ! सात्यकि को तो उन्हीं की रक्षा करनी चाहिए थी। श्रीकृष्ण ! उन्हें छोड़कर ये मेरे पीछे कैसे चले आये ?

**राजा द्रोणाय चोत्सृष्टः सैन्धवश्चानिपातितः ।**
**प्रत्युद्याति च शैनेयमेष भूरिश्रवा रणे ॥८॥**

"इन्होंने राजा युधिष्ठिर को द्रोणाचार्य के लिए छोड़ दिया और सिन्धुराज जयद्रथ भी अभी मारा नहीं गया। इसके अतिरिक्त ये भूरिश्रवा युद्धभूमि में शिनिपौत्र सात्यकि की ओर बढ़ रहे हैं।

**सोऽयं गुरुतरो भारः सैन्धवार्थे समाहितः ।**
**ज्ञातव्यश्च हि मे राजा रक्षितव्यश्च सात्यकिः ॥९॥**

"इस समय सिन्धुराज जयद्रथ के कारण मुझ-पर बहुत बड़ा भार आ गया है। एक तो मुझे राजा युधिष्ठिर की कुशलता का वृत्तान्त जानना है, दूसरे सात्यकि की भी रक्षा करनी है।

**जयद्रथश्च हन्तव्यो लम्बते च दिवाकरः ।**
**श्रान्तश्चैष महाबाहुरल्पप्राणश्च साम्प्रतम् ॥१०॥**
**परिश्रान्ता हयाश्चास्य हययन्ता च माधव ।**
**न च भूरिश्रवाः श्रान्तः ससहायश्च केशव ॥११॥**

"इसके सिवा जयद्रथ का भी वध करना है। इधर सूर्य अस्ताचल को जा रहा है। माधव ! ये महाबाहु सात्यकि इस समय थककर अल्पप्राण हो रहे हैं। इनके घोड़े और सारथि भी थक गये हैं, किन्तु केशव ! भूरिश्रवा और उनके सहायक थके नहीं हैं।

**अपीदानीं भवेदस्य क्षेममस्मिन् समागमे ।**
**कच्चिन्न सागरं तीर्त्वा सात्यकिः सत्यविक्रमः ।**
**गोष्पदं प्राप्य सीदेत महौजाः शिनिपुङ्गवः ॥१२॥**

"क्या इन दोनों के इस संघर्ष में इस समय सात्यकि सकुशल विजयी हो सकेंगे ? कहीं ऐसा तो नहीं होगा कि सत्यपराक्रमी शिनिप्रवर महाबली सात्यकि समुद्र को पार करके गाय की खुरी के बरा-बर जल में डूबने लगें।

**व्यतिक्रममिमं मन्ये धर्मराजस्य केशव ।**
**आचार्याद् भयमुत्सृज्य यः प्रैषयत् सात्यकिम् ॥१३॥**

"केशव ! मैं तो धर्मराज युधिष्ठिर के इस कार्य को विपरीत समझता हूँ, जिन्होंने द्रोणाचार्य का भय छोड़कर सात्यकि को इधर भेज दिया।

**ग्रहणं धर्मराजस्य खगः श्येन इवामिषम् ।**
**नित्यमाशंसते द्रोणः कच्चित्स्यात्कुशली नृपः ॥१४॥**

"जैसे बाज पक्षी मांस पर झपट्टा मारता है, उसी प्रकार द्रोणाचार्य प्रतिदिन धर्मराज को बन्दी बनाना चाहते हैं। ऐसी दशा में क्या राजा युधिष्ठिर कुशल होंगे ?"

**तमापतन्तं सम्प्रेक्ष्य सात्वतं युद्धदुर्मदम् ।**
**क्रोधाद् भूरिश्रवा राजन् सहसा समुपाद्रवत् ॥१५॥**

राजन् ! [इधर अर्जुन और श्रीकृष्ण में यह वार्तालाप हो रहा था उधर] युद्धदुर्मद सात्यकि को आते देख भूरिश्रवा ने क्रोधपूर्वक सहसा उनपर आक्र-मण किया।

**तमब्रवीन्महाराज कौरव्यः शिनिपुङ्गवम् ।**
**अद्य प्राप्तोऽसि दिष्टया मे चक्षुर्विषयमित्युत ॥१६॥**
**चिराभिलषितं काममहं प्राप्स्यामि संयुगे ।**
**न हि मन्मोक्ष्यसे जीवन् यदि नोत्सृजसे रणम् ॥१७॥**

महाराज ! कुरुनन्दन भूरिश्रवा ने उस समय शिनिप्रवर सात्यकि से इस प्रकार कहा—"युयुधान !

बड़े सौभाग्य की बात है कि आज तुम मेरी आँखों के सामने आ गये। आज युद्ध में मैं अपनी बहुत दिनों की इच्छा पूरी करूँगा। यदि तुम मैदान छोड़कर भाग नहीं गये तो आज मेरे हाथों से जीवित नहीं बचोगे।

**अद्य त्वां समरे हत्वा नित्यं शूराभिमानिनम्।**
**नन्दयिष्यामि दाशार्ह कुरुराजं सुयोधनम् ॥१८॥**

"दाशार्ह! तुम सदा अपने को बड़ा शूरवीर समझते हो। आज मैं रणभूमि में तुम्हारा वध करके कुरुराज दुर्योधन को आनन्दित करूँगा।

**अद्य मद्बाणनिर्दग्धं पतितं धरणीतले।**
**द्रक्ष्यतस्त्वां रणे वीरौ सहितौ केशवार्जुनौ ॥१९॥**

"आज युद्ध में वीर श्रीकृष्ण और अर्जुन दोनों एक-साथ तुम्हें मेरे बाणों से दग्ध होकर पृथिवी पर पड़ा हुआ देखेंगे।

**अद्य संयमनीं याता मया त्वं निहतो रणे।**
**यथा रामानुजेनाजौ रावणिर्लक्ष्मणेन ह ॥२०॥**

"जैसे पूर्वकाल में श्रीराम के भाई लक्ष्मण द्वारा युद्ध में रावणपुत्र इन्द्रजित् मारा गया था, वैसे ही इस रणभूमि में मेरे द्वारा मारे जाकर तुम आज ही यमराज की संयमनीपुरी की ओर यात्रा करोगे।"

**युयुधानस्तु तं राजन् प्रत्युवाच हसन्निव।**
**कौरवेय न संत्रासो विद्यते मम संयुगे ॥२१॥**

राजन्! युयुधान ने भूरिश्रवा की ये बातें सुनकर हँसते हुए-से यह उत्तर दिया—"कुरुनन्दन! युद्ध में मुझे कभी किसी से भय नहीं होता।

**किं वृथोक्तेन बहुना कर्मणा तत् समाचर।**
**शारदस्येव मेघस्य गर्जितं निष्फलं हि ते ॥२२॥**

"व्यर्थ ही बहुत-सी बातें बनाने से क्या लाभ? तुमने जो कुछ कहा है, उसे करके दिखाओ। शरत्काल के मेघ के समान तुम्हारे इस गर्जन-तर्जन का कुछ फल नहीं है।

**चिरकालेप्सितं लोके युद्धमद्यास्तु कौरव।**
**नाहत्वाहं निवर्तिष्ये त्वामद्य पुरुषाधम ॥२३॥**

"कौरव! इस लोक में मेरी भी तुम्हारे साथ युद्ध करने की बहुत समय से अभिलाषा थी; वह आज पूरी हो जाए। पुरुषाधम! आज तुम्हारा वध किये बिना मैं पीछे नहीं हटूँगा।"

**अन्योन्यं तौ तथा वाग्भिस्तक्षन्तौ नरपुङ्गवौ।**
**जिघांसू परमक्रुद्धावभिजघ्नतुराहवे ॥२४॥**

इस प्रकार एक-दूसरे को मार डालने की इच्छावाले वे दोनों नरश्रेष्ठ वीर परस्पर वाग्बाणों का प्रहार करते हुए उस रणभूमि में अत्यन्त क्रुद्ध हो बाणों द्वारा आघात करने लगे।

**तौ नखैरिव शार्दूलौ दन्तैरिव महाद्विपौ।**
**रथशक्तिभिरन्योन्यं विशिखैश्चाप्यकृन्तताम् ॥२५॥**

जैसे दो सिंह नखों से और दो बड़े-बड़े गजराज दाँतों से परस्पर प्रहार करते हैं, उसी प्रकार वे दोनों वीर रथशक्तियों तथा बाणों द्वारा एक-दूसरे को क्षत-विक्षत करने लगे।

**अन्योन्यस्य हयान् हत्वा धनुषी विनिकृत्य च।**
**विरथावसियुद्धाय समेयातां महारणे ॥२६॥**

दोनों ने दोनों के घोड़े मारकर धनुष काट दिये और उस महायुद्ध में दोनों ही रथहीन होकर खड्ग-युद्ध के लिए एक-दूसरे के सामने आ गये।

**आर्षभे चर्मणी चित्रे प्रगृह्य विपुले शुभे।**
**विकोशौ चाप्यसी कृत्वा समरे तौ विचेरतुः ॥२७॥**

बैल के चमड़े से बनी हुई दो विचित्र, सुन्दर एवं विशाल ढालें लेकर और तलवारों को म्यान से बाहर निकालकर वे दोनों रणभूमि में विचरने लगे।

**दर्शयन्तावुभौ शिक्षां लाघवं सौष्ठवं तथा।**
**रणे रणकृतां श्रेष्ठावन्योन्यं पर्यकर्षताम् ॥२८॥**

वे दोनों ही अपनी शिक्षा, स्फूर्ति [फुर्ती] और युद्ध-कौशल दिखाते हुए रणक्षेत्र में एक-दूसरे को खींच रहे थे। वे दोनों ही योद्धाओं में श्रेष्ठ थे।

**असिभ्यां चर्मणी चित्रे शतचन्द्रे नराधिप।**
**निकृत्य पुरुषव्याघ्रौ बाहुयुद्धं प्रचक्रतुः ॥२९॥**

एक-दूसरे पर तलवारों की चोट करके दोनों ने दोनों की सौ चन्द्राकार चिह्नों से सुशोभित विचित्र ढालें काट डालीं। प्रजेश्वर! फिर वे दोनों पुरुषसिंह भुजाओं द्वारा मल्लयुद्ध करने लगे।

**द्वात्रिंशत् करणानि स्युर्यानि युद्धानि भारत।**
**तान्यदर्शयतां तत्र युद्धमानौ महाबलौ ॥३०॥**

भरतभूषण! इस प्रकार वे दोनों महाबली वीर

परस्पर जूझते हुए मल्ल-युद्ध की जो बत्तीस कलाएँ हैं, उनका प्रदर्शन करने लगे ।

**ततो भूरिश्रवाः क्रुद्धः सात्यकिं युद्धदुर्मदः ।**
**उद्यम्याभ्याहनद् राजन् मत्तो मत्तमिव द्विपम् ॥३१॥**

राजन् ! इसी समय क्रोध में भरे हुए युद्धदुर्मद भूरिश्रवा ने उद्योग करके सात्यकि पर उसी प्रकार आघात किया, जैसे एक मतवाला गजराज दूसरे मदोन्मत्त हाथी पर चोट करता है ।

**अथ कृष्णो महाबाहुरर्जुनं प्रत्यभाषत ।**
**पश्य वृष्ण्यन्धकव्याघ्रं सौमदत्तिवशं गतम् ॥३२॥**

तब महाबाहु श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा—"पार्थ ! देखो ! वृष्णि और अन्धकवंश का वह श्रेष्ठ वीर सात्यकि भूरिश्रवा के वश में हो गया है ।

**परिश्रान्तं गतं भूमौ कृत्वा कर्म सुदुष्करम् ।**
**तवान्तेवासिनं वीरं पालयार्जुन सात्यकिम् ॥३३॥**

"वह अत्यन्त दुष्कर कर्म करके परिश्रम से चूर-चूर हो पृथिवी पर गिर गया है । अर्जुन ! वीर सात्यकि तुम्हारा ही शिष्य है, उसकी रक्षा करो ।"

**इत्येवं भाषमाणे तु पाण्डवं वै धनञ्जयम् ।**
**तदुद्यम्य महाबाहुः सात्यकिं न्यहनद् भुवि ॥३४॥**

भरतभूषण ! श्रीकृष्ण पाण्डुनन्दन अर्जुन से इस प्रकार कह ही रहे थे कि महाबाहु भूरिश्रवा ने सात्यकि को उठाकर धरती पर पटक दिया ।

**अथकोशाद् विनिष्कृष्य खड्गं भूरिश्रवा रणे ।**
**मूर्धजेषु निजग्राह पदा चोरस्यताडयत् ॥३५॥**

तत्पश्चात् भूरिश्रवा ने रणक्षेत्र में तलवार को म्यान से बाहर निकालकर सात्यकि के केशों को पकड़ लिया और उसकी छाती में लात मारी ।

**ततोऽस्य छेत्तुमारब्धः शिरः कायात् सकुण्डलम् ।**
**तावत्क्षणात् सात्वतोऽपि शिरः सम्भ्रमयंस्त्वरन् ।३६**

फिर उसने सात्यकि के कुण्डलभूषित मस्तक को धड़ से अलग कर देने का उद्योग आरम्भ किया । उस समय सात्यकि भी बड़ी शीघ्रता के साथ अपने मस्तक को घुमाने लगे ।

**यथा चक्रं तु कौलालो दण्डविद्धं तु भारत ।**
**सहैव भूरिश्रवसो बाहुना केशधारिणा ॥३७॥**

भरतभूषण ! जैसे कुम्हार छेद में डण्डा डालकर अपने चाक को घुमाता है वैसे ही केश पकड़े हुए भूरिश्रवा के बाँह के साथ ही सात्यकि अपने सिर को घुमाने लगे ।

**तं तथा परिकृष्यन्तं दृष्ट्वा सात्वतमाहवे ।**
**वासुदेवस्ततो राजन् भूयोऽर्जुनमभाषत ॥३८॥**

राजन् ! इस प्रकार युद्धभूमि में केश खींचे जाने के कारण सात्यकि को कष्ट पाते देख श्रीकृष्ण अर्जुन से पुनः इस प्रकार बोले—

**पश्य वृष्ण्यन्धकव्याघ्रं सौमदत्तिवशं गतम् ।**
**तव शिष्यं महाबाहो धनुष्यनवरं त्वया ॥३९॥**

"महाबाहो ! देखो, वृष्णि और अन्धकवंश का वह सिंह भूरिश्रवा के वश में पड़ गया है । यह तुम्हारा शिष्य है और धनुर्विद्या में तुमसे कम नहीं है ।"

अर्जुन उवाच

**सैन्धवे सक्तदृष्टित्वान्नैनं पश्यामि माधवम् ।**
**एतत् त्वसुकरं कर्म यादवार्थे करोम्यहम् ॥४०॥**

**अर्जुन बोले**—प्रभो ! मेरी दृष्टि सिन्धुराज जयद्रथ पर लगी हुई थी, अतः मैं सात्यकि को देख नहीं रहा था, परन्तु अब मैं इस यदुवंशी वीर की रक्षा के लिए यह दुष्कर्म करता हूँ ।

सञ्जय उवाच

**इत्युक्त्वा वचनं कुर्वन् वासुदेवस्य पाण्डवः ।**
**ततः क्षुरप्रं निशितं गाण्डीवं समयोजयत् ॥४१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! ऐसा कहकर श्रीकृष्ण की आज्ञा का पालन करते हुए पाण्डुनन्दन अर्जुन ने गाण्डीव धनुष पर एक तीखा क्षुरप्र रखा ।

**पार्थबाहुविसृष्टः स महोल्केव नभश्च्युता ।**
**सखड्गं यज्ञशीलस्य साङ्गदं बाहुमच्छिनत् ॥४२॥**

अर्जुन की भुजाओं से छोड़े गये उस क्षुरप्र ने आकाश से गिरी हुई बड़ी भारी उल्का के समान उस यज्ञशील भूरिश्रवा के बाजूबन्दमण्डित [दाहिनी] भुजा को खड्गसहित काट गिराया ।

**स मोघं कृतमात्मानं दृष्ट्वा पार्थेन कौरवः ।**
**उत्सृज्य सात्यकिं क्रोधाद् गर्हयामास पाण्डवम् ॥४३॥**

कुन्तीपुत्र अर्जुन के द्वारा अपने को असफल किया हुआ देख कुरुवंशी भूरिश्रवा ने क्रुद्ध हो सात्यकि

को छोड़ पाण्डुकुमार अर्जुन की निन्दा करते हुए कहा—

भूरिश्रवा उवाच

**नृशंसं बत कौन्तेय कर्मेदं कृतवानसि ।**
**अपश्यतो विषक्तस्य यन्मे बाहुमचिच्छिदः ॥४४॥**

**भूरिश्रवा ने कहा**—कुन्तीपुत्र ! तुमने यह अति निर्दयतापूर्ण कर्म किया है, क्योंकि मैं तुम्हें देख नहीं पा रहा था और दूसरे से युद्ध करने में लगा था, उस अवस्था में तुमने मेरी भुजा काट दी ।

**किं नु वक्ष्यसि राजानं धर्मपुत्रं युधिष्ठिरम् ।**
**किं कुर्वाणो मया संख्ये हतो भूरिश्रवा रणे ॥४५॥**

तुम धर्मपुत्र राजा युधिष्ठिर से क्या कहोगे ? यही न कि 'भूरिश्रवा किसी और कार्य में लगे थे और मैंने उसी अवस्था में उन्हें युद्ध में मार डाला ?'

**इदमिन्द्रेण ते साक्षदुपदिष्टं महात्मना ।**
**अस्त्रं रुद्रेण वा पार्थ द्रोणेनाथ कृपेण वा ॥४६॥**

कुन्तीकुमार ! इस अस्त्र-विद्या का उपदेश तुम्हें साक्षात् महात्मा इन्द्र ने दिया है, अथवा रुद्र, द्रोण या कृपाचार्य ने ?

**ननु नामास्त्रधर्मज्ञस्त्वं लोकेऽभ्यधिकः परैः ।**
**सोऽयुध्यमानस्य कथं रणे प्रहृतवानसि ॥४७॥**

अर्जुन ! तुम तो इस संसार में दूसरों से अधिक अस्त्र-धर्म के ज्ञाता हो, फिर जो तुम्हारे साथ युद्ध नहीं कर रहा था, तुमने युद्ध में उसपर प्रहार कैसे किया ?

**न प्रमत्ताय भीताय विरथाय प्रयाचते ।**
**व्यसने वर्तमानाय प्रहरन्ति मनस्विनः ॥४८॥**

मनस्वी पुरुष असावधान, डरे हुए, रथहीन, प्राणों की भीख माँगनेवाले और संकट में पड़े हुए मनुष्य पर प्रहार नहीं करते हैं ।

**इदं तु नीचाचरितमसत्पुरुषसेवितम् ।**
**कथमाचरितं पार्थ पापकर्म सुदुष्करम् ॥४९॥**

कुन्तीपुत्र ! यह नीच पुरुषों द्वारा आचरित और दुष्ट पुरुषों द्वारा सेवित अत्यन्त दुष्कर पापकर्म तुमने कैसे कर डाला ?

**आर्येण सुकरं त्वाहुरार्यकर्म धनञ्जय ।**
**अनार्यकर्म त्वार्येण सुदुष्करतमं भुवि ॥५०॥**

धनञ्जय ! श्रेष्ठ पुरुष के लिए उत्तम कर्म ही सुकर बताया गया है । नीच कर्म का आचरण तो इस पृथिवी पर उसके लिए अत्यन्त दुष्कर माना गया है ।

**येषु येषु नरव्याघ्र यत्र यत्र च वर्तते ।**
**आशु तच्छीलतामेति तदिदं त्वयि दृश्यते ॥५१॥**

नरसिंह ! मनुष्य जहाँ-जहाँ, जिन-जिन लोगों के समीप रहता है, उसमें शीघ्र ही उन लोगों का शील स्वभाव आ जाता है, यही बात तुममें भी देखी जाती है ।

**कथं हि राजवंश्यस्त्वं कौरवेयो विशेषतः ।**
**क्षत्रधर्मादपक्रान्तः सुवृत्तश्चरितव्रतः ॥५२॥**

अन्यथा राजा के वंशज और विशेषतः कुरुकुल में उत्पन्न होकर भी तुम क्षत्रियधर्म से कैसे गिर जाते ? तुम्हारा शील-स्वभाव तो अत्युत्तम था और तुमने श्रेष्ठ व्रतों का पालन भी किया था ।

**इदं तु यदतिक्षुद्रं वार्ष्णेयार्थे कृतं त्वया ।**
**वासुदेवमतं नूनं नैतत् त्वय्युपपद्यते ॥५३॥**

तुमने सात्यकि को बचाने के लिए जो यह अत्यन्त नीच कर्म किया है, यह निश्चय ही वसुदेवनन्दन श्रीकृष्ण का मत है, तुममें यह विचार सम्भव नहीं है।

अर्जुन उवाच

**व्यक्तं हि जीर्यमाणोऽपि बुद्धिं जरयते नरः ।**
**अनर्थकमिदं सर्वं यत् त्वया व्याहृतं प्रभो ॥५४॥**

**अर्जुन बोले**—प्रभो ! यह स्पष्ट है कि मनुष्य के वृद्ध होने के साथ-साथ उसकी बुद्धि भी बूढ़ी हो जाती है । तुमने इस समय जो कुछ कहा है, वह सब व्यर्थ है ।

**संग्रामाणां हि धर्मज्ञः सर्वशास्त्रार्थपारगः ।**
**न चाधर्ममहं कुर्यां जानंश्चैव हि मुह्यसे ॥५५॥**

मैं युद्ध के नियमों को जानता हूँ और सम्पूर्ण वेद-शास्त्रों के अर्थज्ञान में पारंगत हूँ । मैं किसी प्रकार अधर्म नहीं कर सकता, यह जानते हुए भी तुम मेरे विषय में मोहित हो रहे हो ।

**युध्यन्ति क्षत्रियाः शत्रून्स्वैः स्वैः परिवृता नराः ।**
**भ्रातृभिः पितृभिः पुत्रैस्तथा सम्बन्धिबान्धवैः ।**
**वयस्यैरथ मित्रैश्च ते च बाहुं समाश्रिताः ॥५६।**

क्षत्रिय लोग अपने-अपने भाई, पिता, पुत्र, सम्बन्धी, बन्धु-बान्धवों, समान अवस्थावाले साथी और मित्रों से घिरकर शत्रु के साथ युद्ध करते हैं। वे सब लोग उस प्रधान योद्धा के बाहुबल के आश्रित होते हैं।

**न चात्मा रक्षितव्यो वै राजन् रणगतेन हि।**
**यो यस्य युज्यतेऽर्थेषु स वै रक्ष्यो नराधिप ॥५७॥**

राजन्! रणभूमि में गये हुए वीर के लिए केवल अपनी ही सुरक्षा उचित नहीं है। प्रजेश्वर! जो जिसके कार्य में संलग्न होता है, वह अवश्य ही उसके द्वारा रक्षणीय हुआ करता है।

**यद्यहं सात्यकिं पश्ये वध्यमानं महारणे।**
**ततस्तस्य वियोगेन पापं मेऽनर्थतो भवेत् ॥५८॥**

यदि मैं इस महायुद्ध में सात्यकि को अपने सामने मरता देखता तो उसके वियोग से मुझे अनर्थकारी पाप लगता।

**यच्च मे गर्हसे राजन्नन्येन सह संगतम्।**
**अहं त्वया विनिकृतस्तत्र मे बुद्धिविभ्रमः ॥५९॥**

राजन्! आप जो यह कहकर मेरी निन्दा कर रहे हैं कि 'अर्जुन! मैं दूसरे के साथ युद्ध में लगा हुआ था, उस अवस्था में तुमने मेरे साथ छल किया'—आपकी इस बात से मेरी बुद्धि में भ्रम उत्पन्न हो गया है।

**स्वैः परैश्च समेतेभ्यो गम्भीरे सैन्यसागरे।**
**एकस्यैकेन हि कथं संग्रामः सम्भविष्यति ॥६०॥**

गम्भीर सैन्य-समुद्र में जहाँ अपने और शत्रुपक्ष के एकत्र हुए लोगों का परस्पर युद्ध चल रहा था, ऐसे तुमुल युद्ध में किसी भी एक योद्धा का एक ही योद्धा के साथ संग्राम कैसे माना जा सकता है?

**बहुभिः सह संगम्य निर्जित्य च महारथान्।**
**श्रान्तश्च श्रान्तवाहश्च विमनाः शस्त्रपीडितः ॥६१॥**
**ईदृशं सात्यकिं संख्ये निर्जित्य च महारथम्।**
**अधिकस्त्वं विजानीषे स्ववीर्यवशमागतम् ॥६२॥**

सात्यकि बहुत-से योद्धाओं के साथ युद्ध करके कितने ही महारथियों को परास्त करने के पश्चात् थक गया था। उनके घोड़े भी थक गये थे और वह स्वयं अस्त्र-शस्त्रों से पीड़ित हो खिन्नचित्त हो गया था। ऐसी दशा में महारथी सात्यकि को युद्ध में जीतकर तुम यह समझने लगे कि मैं सात्यकि से बड़ा वीर हूँ और वह मेरे पराक्रम से वश में आ गया है।

**यदिच्छसि शिरश्चास्य असिना हन्तुमाहवे।**
**तथा कृच्छ्रगतं चैव सात्यकिं कः क्षमिष्यति ॥६३॥**

इसलिए तुम रणभूमि में तलवार से उसका सिर काट लेना चाहते थे। सात्यकि को वैसे संकट में देखकर मेरे पक्ष का कौन वीर इसको सहन कर सकता था?

**त्वं वैऽवगर्हयात्मानमात्मानं यो न रक्षसि।**
**कथं करिष्यसे वीर यो वा त्वां संश्रयेज्जनः ॥६४॥**

वीरवर! तुम अपनी ही निन्दा करो, जो तुम अपनी भी रक्षा नहीं कर सके, फिर जो तुम्हारे आश्रय में होगा, उसकी रक्षा कैसे कर सकोगे?

सञ्जय उवाच

**एवमुक्तो महाबाहुर्यूपकेतुर्महायशाः।**
**युयुधानं समुत्सृज्य रणे प्रायमुपाविशत् ॥६५॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! अर्जुन के ऐसा कहने पर यूप-चिह्न से युक्त ध्वजावाले महायशस्वी, महाबाहु भूरिश्रवा सात्यकि को छोड़कर युद्धभूमि में आमरण अनशन का व्रत लेकर बैठ गये।

**शरानास्तीर्य सव्येन पाणिना पुण्यलक्षणः।**
**यियासुर्ब्रह्मलोकाय प्राणान् प्राणेष्वथाजुहोत् ॥६६॥**

शुभ लक्षणोंवाले भूरिश्रवा ने बाएँ हाथ से बाण बिछाकर ब्रह्मलोक में जाने की इच्छा से प्राणायाम के द्वारा प्राणों को प्राणों में ही होम दिया।

**सूर्ये चक्षुः समाधाय प्रसन्नं सलिले मनः।**
**ध्यायन् महोपनिषदं योगयुक्तोऽभवन्मुनिः ॥६७॥**

वे नेत्रों को सूर्य में और प्रसन्न मन को जल में समाहित करके महोपनिषत्-प्रतिपादित परब्रह्म का चिन्तन करते हुए योगयुक्त मुनि हो गये।

**ततः स सर्वसेनायां जनः कृष्णधनञ्जयौ।**
**गर्हयामास तं चापि शशंस पुरुषर्षभम् ॥६८॥**

उस समय सारी सेना के लोग श्रीकृष्ण और अर्जुन की निन्दा और नरश्रेष्ठ भूरिश्रवा की प्रशंसा करने लगे।

**तांस्तथा वादिनो राजन् पुत्रांस्तव धनञ्जय ।**
**उवाच पाण्डुतनयः स्मारयन्निव भारत ।।६६।।**

हे भारत ! आपके पुत्र जब भूरिश्रवा की ही भाँति निन्दा की बातें कहने लगे, तब पाण्डुपुत्र अर्जुन ने पुरानी बातों का स्मरण कराते हुए कहा—

**मम सर्वेऽपि राजानो जानन्त्येव महाव्रतम् ।**
**न शक्यो मामको हन्तुं यो मे स्याद् बाणगोचरे ।।७०।।**

"सब भूपाल मेरे इस महान् व्रत को जानते ही हैं कि जो कोई मेरा आत्मीयजन मेरे बाणों की पहुँच के भीतर होगा, वह किसी शत्रु के द्वारा मारा नहीं जा सकता ।

**आत्तशस्त्रस्य हि रणे वृष्णिवीरं जिघांसतः ।**
**यदहं बाहुमच्छैत्सं न स धर्मो विगर्हितः ।।७१।।**

"भूरिश्रवा तलवार हाथ में लेकर युद्धभूमि में वृष्णिवीर सात्यकि का वध करना चाहते थे। उस अवस्था में यदि मैंने उनकी भुजा काट डाली, तो यह आश्रित-रक्षारूप धर्म निन्दित नहीं है ।

**न्यस्तशस्त्रस्य बालस्य विरथस्य विवर्मणः ।**
**अभिमन्योर्वधं तात धार्मिकः को नु पूजयेत् ।।७२।।**

"तात ! भूरिश्रवाजी ! बालक अभिमन्यु शस्त्र, कवच और रथ से हीन हो चुका था, उस अवस्था में जो उसका वध किया गया, उसकी कौन धार्मिक पुरुष प्रशंसा कर सकता है ?"

**एतत् पार्थस्य तु वचस्ततः श्रुत्वा महाद्युतिः ।**
**यूपकेतुर्महाराज तूष्णीमासीदवाङ्मुखः ।।७३।।**

महाराज ! अर्जुन की उपर्युक्त बात सुनकर यूप-चिह्न से युक्त ध्वजावाले महा-तेजस्वी भूरिश्रवा मुँह नीचा किये हुए मौन रह गये ।

**उत्थितः स तु शैनेयो विमुक्तः सौमदत्तिना ।**
**खड्गमादाय चिच्छित्सुः शिरस्तस्य महात्मनः ।।७४।।**

राजन् ! उधर सोमदत्तकुमार भूरिश्रवा के छोड़ देने पर शिनिपौत्र सात्यकि उठकर खड़े हो गये, फिर उन्होंने तलवार लेकर महामना भूरिश्रवा का सिर काट लेने का निश्चय किया ।

**इयेष सात्यकिर्हन्तुं शलाग्रजमकल्मषम् ।**
**निकृत्तभुजमासीनं छिन्नहस्तमिव द्विपम् ।।७५।।**

सात्यकि ने शल के बड़े भाई, प्रचुर दक्षिणा देनेवाले, सर्वथा निष्पाप और बाँह कट जाने से सूँड़-कटे हाथी के समान बैठे हुए भूरिश्रवा को मार डालने की इच्छा की ।

**वार्यमाणः स कृष्णेन पार्थेन च महात्मना ।**
**विक्रोशतां च सैन्यानामवधीत् तं धृतव्रतम् ।।७६।।**

श्रीकृष्ण और अर्जुन के द्वारा रोके जाने और समस्त सैनिकों के चीखने-चिल्लाने पर भी सात्यकि ने उस व्रतधारी भूरिश्रवा का काम तमाम कर डाला ।

**नाभ्यनन्दन्त सैन्यानि सात्यकिं तेन कर्मणा ।**
**पक्षवादांश्च सुबहून् प्रावदंस्तव सैनिकाः ।।७७।।**
**न वार्ष्णेयस्यापराधो भवितव्यं हि तत् तथा ।**
**तस्मान्मन्युर्न वः कार्यः क्रोधो दुःखतरो नृणाम् ।।७८।।**

सात्यकि के उस कर्म से सैनिकों ने उसका अभिनन्दन नहीं किया । आपके सैनिकों ने सात्यकि के पक्ष और विपक्ष में बहुत-सी बातें कहीं । वे कहते थे—"इसमें सात्यकि का कोई अपराध नहीं है । होनहार ही ऐसी थी, अतः आप लोगों को अपने मन में क्रोध नहीं करना चाहिए, क्योंकि क्रोध मनुष्यों के लिए अत्यन्त दुःखदायी होता है ।"

सात्यकिरुवाच

**न हन्तव्यो न हन्तव्य इति यन्मां प्रभाषत ।**
**धर्मवादैरधर्मिष्ठा धर्मकञ्चुकमास्थिताः ।।७९।।**

**सात्यकि बोले**—धर्म का चोला पहने खड़े हुए अधर्मपरायण पापात्माओ ! इस समय धर्म की बातें बनाते हुए तुम लोग जो मुझसे बार-बार कह रहे हो कि 'न मारो, न मारो' इसका उत्तर मुझसे सुन लो ।

**यदा बालः सुभद्रायाः सुतः शस्त्रविनाकृतः ।**
**युष्माभिर्निहतो युद्धे तदा धर्मः क्व वो गतः ।।८०।।**

जब तुम लोगों ने सुभद्रा के बालपुत्र अभिमन्यु को युद्ध में शस्त्रविहीन करके मार डाला था, उस समय तुम्हारा धर्म कहाँ चला गया था ?

**मया त्वेतत्प्रतिज्ञातं क्षेपे कस्मिंश्चिदेव हि ।**
**यो मां निष्पिष्य संग्रामे जीवन्हन्यात्पदा रुषा ।**
**स मे वध्यो भवेच्छत्रुर्यद्यपि स्यान्मुनिव्रतः ।।८१।।**

मैंने तो पहले से ही यह प्रतिज्ञा कर रखी है कि जिसके द्वारा कभी भी मेरा तिरस्कार हो जाएगा

अथवा जो संग्राम-भूमि में मुझे पटककर जीते-जी क्रोधपूर्वक लात मारेगा, वह शत्रु चाहे मुनिव्रत धारण करके बैठा हो, अवश्य मेरा वध्य होगा।

**भवितव्यं हि यद् भावि दैवं चेष्टयतीव च।**
**सोऽयं हतो विमर्देऽस्मिन् किमत्राधर्मचेष्टितम् ॥८२॥**

जो होनहार होती है, उसके अनुकूल ही दैव चेष्टा कराता है। इसी के अनुसार इस युद्ध में भूरिश्रवा मारे गये हैं। इसमें अधर्मपूर्ण चेष्टा क्या है?

**अपि चायं पुरा गीतः श्लोको वाल्मीकिना भुवि।**
**न हन्तव्याः स्त्रिय इति यद् ब्रवीषि प्लवङ्गम ॥८३॥**
**सर्वकालं मनुष्येण व्यवसायवता सदा।**
**पीडाकरममित्राणां यत् स्यात् कर्तव्यमेव तत् ॥८४॥**

महर्षि वाल्मीकि ने पूर्वकाल में इस भूतल पर निम्न श्लोक का गान किया है—'वानर! तुम जो यह कहते हो कि स्त्रियों का वध नहीं करना चाहिए, उसके उत्तर में मेरा [इन्द्रजित् का] कहना यह है कि उद्योगी मनुष्य द्वारा सदा वह कार्य करने योग्य माना गया है, जो शत्रुओं को पीड़ा देनेवाला हो।

सञ्जय उवाच

**एवमुक्ते महाराज सर्वे कौरवपुङ्गवाः।**
**न स्म किंचिदभाषन्त मनसा समपूजयन् ॥८५॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज! सात्यकि के ऐसा कहने पर समस्त श्रेष्ठ कौरवों ने उसके उत्तर में कुछ नहीं कहा। वे मन-ही-मन उसकी प्रशंसा करने लगे।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि विंशोऽध्यायः ॥२०॥**

# एकविंशोऽध्यायः

## अर्जुन का जयद्रथ पर आक्रमण और उसका वध

धृतराष्ट्र उवाच

**तदवस्थे हते तस्मिन् भूरिश्रवसि कौरवे।**
**यथा भूयोऽभवद् युद्धं तन्ममाचक्ष्व सञ्जय ॥१॥**

**धृतराष्ट्र ने पूछा**—सञ्जय! उस अवस्था में कुरुवंशी भूरिश्रवा के मारे जाने पर पुनः जिस प्रकार युद्ध हुआ, वह मुझे बताओ।

सञ्जय उवाच

**भूरिश्रवसि संक्रान्ते परलोकाय भारत।**
**वासुदेवं महाबाहुरर्जुनः समनूनुदत् ॥२॥**

**सञ्जय कहते हैं**—भरतभूषण! भूरिश्रवा के परलोकगामी हो जाने पर महाबाहु अर्जुन ने श्रीकृष्ण को प्रेरित करते हुए कहा—

**नोदयाश्वान् भृशं कृष्ण यतो राजा जयद्रथः।**
**अस्तमेति महाबाहो त्वरमाणो दिवाकरः ॥३॥**

"महाबाहो! सूर्य तीव्रगति से अस्ताचल की ओर जा रहा है, अतः श्रीकृष्ण! जहाँ राजा जयद्रथ खड़ा है, आप इन घोड़ों को शीघ्रतापूर्वक उधर ही हाँकिए।"

**ततः कृष्णो महाबाहू रजतप्रतिमान् हयान्।**
**हयज्ञो नोदयामास जयद्रथवधं प्रति ॥४॥**

तब अश्वविद्या के ज्ञाता महाबाहु श्रीकृष्ण ने जयद्रथ का वध करने के उद्देश्य से चाँदी के समान श्वेत घोड़ों को उसकी ओर हाँका।

**तं प्रयान्तममोघेषुमुत्पतद्भिरिवाशुगैः।**
**त्वरमाणा महाराज सेनामुख्याः समाद्रवन् ॥५॥**

महाराज! जिनके बाण कभी व्यर्थ नहीं जाते, उस अर्जुन को धनुष से छूटे हुए बाणों के समान उड़ते हुए-से अश्वों द्वारा जयद्रथ की ओर जाते देख कौरव सेना के प्रधान-प्रधान वीर बड़े वेग से दौड़े।

**स तान् रथवरान् राजन्नत्याक्रामत् तदार्जुनः।**
**मोहयन्निव नाराचैर्जयद्रथवधेप्सया ॥६॥**
**विसृजन् दिक्षु सर्वासु शरानसितसारथिः।**
**सरथो व्यचरत् तूर्णं प्रेक्षणीयो धनञ्जयः ॥७॥**

राजन्! उस समय जयद्रथ के वध की इच्छा से अर्जुन नाराचों द्वारा उन महारथियों को मोहित करते हुए-से लाँघ गये। श्रीकृष्ण जिनके सारथि हैं, वे धनञ्जय सम्पूर्ण दिशाओं में बाणों की वृष्टि करते हुए

रथसहित तुरन्त वहाँ विचरने लगे। उस समय उनकी शोभा देखने ही योग्य थी।

**आददानं महेष्वासं संदधानं च सायकम्।**
**विसृजन्तं च कौन्तेयं नानुपश्याम वै तदा ॥८॥**

उस समय हम कुन्तीपुत्र महाधनुर्धर अर्जुन को बाण लेते, चढ़ाते और छोड़ते समय देख नहीं पाते थे।

**यो योऽभ्यधावदाक्रन्दे तावकः पाण्डवं रणे।**
**तस्य तस्यान्तगा बाणाः शरीरे न्यपतन् प्रभो ॥९॥**

प्रभो! उस घोर संग्राम में आपके पक्ष का जो-जो योद्धा पाण्डुनन्दन अर्जुन की ओर बढ़ा, उस-उसके शरीर पर प्राणान्तकारी बाण पड़ने लगे।

**एतस्मिन्नेव काले तु द्रुतं गच्छति भास्करे।**
**अब्रवीत् पाण्डवं राजंस्त्वरमाणो जनार्दनः ॥१०॥**

राजन्! इस समय जबकि सूर्यदेव तीव्रगति से अस्ताचल की ओर जा रहे थे, उतावले हुए श्रीकृष्ण ने पाण्डुपुत्र अर्जुन से कहा—

**एष मध्ये कृतः षड्भिः पार्थ वीरैर्महारथैः।**
**जीवितेप्सुर्महाबाहो भीतस्तिष्ठति सैन्धवः ॥११॥**

"महाबाहु पार्थ! यह सिन्धुराज जयद्रथ प्राण बचाने की इच्छा से भयभीत होकर खड़ा है और उसे छह वीर महारथियों ने अपने बीच में कर रखा है।

**रणे ह्येतानर्निजित्य षड् रथान् पुरुषर्षभ।**
**न शक्यः सैन्धवो हन्तुं यतो निर्व्याजमर्जुन ॥१२॥**

"नरश्रेष्ठ अर्जुन! युद्धभूमि में इन छह महारथियों को पराजित किये बिना सिन्धुराज को बिना माया के जीता नहीं जा सकता।

**योगमत्र विधास्यामि सूर्यस्यावरणं प्रति।**
**अस्तंगत इति व्यक्तं द्रक्ष्यत्येकः स सिन्धुराट् ॥१३॥**

"अतः मैं इस सूर्य को ढकने के लिए कोई युक्ति करूँगा, जिससे सभी को सूर्य अस्त हुआ दिखाई देगा परन्तु जयद्रथ को सूर्य उदित ही दिखाई देगा।[1]

**तत्र छिद्रे प्रहर्तव्यं त्वयास्य कुरुसत्तम।**
**व्यपेक्षा नैव कर्तव्या गतोऽस्तमितिभास्करः ॥१४॥**

"कुरुश्रेष्ठ! वैसा अवसर आने पर तुम्हें अवश्य

---

१. जयद्रथ-वध के सम्बन्ध में लोगों में बहुत भ्रान्त धारणा है। ऐसा लोकप्रवाद है कि श्रीकृष्ण ने दिन में ही अपनी माया से सूर्य को अस्त कर दिया। जब अर्जुन जयद्रथ को मारने की प्रतिज्ञा पूर्ण नहीं कर सका, तब अर्जुन के आत्मदाह के लिए चिता बनाई गई। अर्जुन भस्म होने के लिए जब उस चिता पर बैठ गया, तब उसका धनुष और बाण भी चिता पर रख दिया गया कि उन्हें भी अर्जुन के साथ ही जला देना चाहिए, अन्यथा इन्हें देख-देखकर हमें अर्जुन की याद आती रहेगी। उधर जब कौरवों ने देखा कि अर्जुन स्वयं जल मरने के लिए चिता पर बैठ गया है, तब वे भी तमाशा देखने के लिए चिता के चारों ओर खड़े हो गये। जयद्रथ भी सामने आकर खड़ा हो गया। जब श्रीकृष्ण ने देखा कि जयद्रथ अर्जुन की मार में खड़ा है, तब उन्होंने अर्जुन को आदेश दिया कि तीर चलाओ और जयद्रथ का काम तमाम कर दो। अर्जुन ने धनुष-बाण उठाया और जयद्रथ की गर्दन को धड़ से अलग कर दिया। उसी समय लोगों ने देखा कि आकाश में सूर्य चमक रहा है, उसी समय लोगों को यह ज्ञात हुआ कि यह सब तो श्रीकृष्ण की माया थी।

यह सारा वर्णन महाभारत की वास्तविक घटना के विरुद्ध है। वस्तुस्थिति यह है कि अर्जुन ने द्वन्द्वयुद्ध में जयद्रथ के वध की प्रतिज्ञा थी। परन्तु जयद्रथ को बचाने के लिए छह महारथी उसकी रक्षा कर रहे थे। श्रीकृष्ण ने उन छह महारथियों को युद्ध से विरत करने के लिए एक माया रची। उन्होंने दिन में सूर्य को अस्त कर दिया और वह भी इस प्रकार कि सभी योद्धाओं—यहाँ तक कि अर्जुन को भी यह दिखाई देता था कि सूर्य अस्त हो गया, परन्तु जयद्रथ को ऐसा दिखाई दे रहा था कि अभी सूर्य अस्त नहीं हुआ है। वह गर्दन उठाकर बार-बार देख रहा था कि अभी सूर्यास्त में कितना समय शेष है? अर्जुन को श्रीकृष्ण ने सावधान कर ही दिया था। शेष महारथियों ने जब देखा कि सूर्यास्त हो गया है, तब वे या तो लड़े ही नहीं, अथवा बेमन से लड़े। जयद्रथ को यह दिखाई दे रहा था कि सूर्यास्त नहीं हुआ है, अतः वह पूर्ण उत्साह से लड़ रहा था। इस प्रकार जयद्रथ लड़ते हुए मारा गया है, बिना युद्ध करते हुए धोखे से नहीं मारा गया।

दिन में सूर्य को अस्त कर देना, यह श्रीकृष्ण का युद्धकौशल था। द्वितीय विश्वयुद्ध में जर्मनी ने भी ऐसे प्रयोग कई बार किये थे।

उसपर प्रहार करना चाहिए। इस बात पर ध्यान नहीं देना चाहिए कि सूर्य अस्त हो गया है।"

**एवमस्त्विति बीभत्सुः केशवं प्रत्यभाषत।**
**ततोऽसृजत् तमः कृष्णः सूर्यस्यावरणं प्रति ॥१५॥**

यह सुनकर अर्जुन ने श्रीकृष्ण से कहा—"प्रभो! ऐसा ही हो।" तब श्रीकृष्ण ने सूर्य को ढकने के लिए अन्धकार की सृष्टि की।

**सृष्टे तमसि कृष्णेन गतोऽस्तमिति भास्करः।**
**त्वदीयाः जहृषुर्योधाः पार्थनाशान्नराधिप ॥१६॥**

प्रजेश्वर! श्रीकृष्ण द्वारा अन्धकार की सृष्टि होने पर सूर्यास्त हो गया, ऐसा मानते हुए आपके योद्धा अर्जुन का विनाश निकट देख हर्षमग्न हो गये।

**ते प्रहृष्टा रणे राजन् नापश्यन् सैनिका रविम्।**
**तदा चोन्नाम्यवक्त्राणि स हि राजा जयद्रथः ॥१७॥**

राजन्! उस युद्धभूमि में हर्षमग्न हुए आपके सैनिकों ने सूर्य की ओर देखा तक नहीं। केवल राजा जयद्रथ उस समय बारम्बार मुँह ऊँचा करके सूर्य की ओर देख रहा था।

**वीक्षमाणे ततस्तस्मिन् सिन्धुराजे दिवाकरम्।**
**पुनरेवाब्रवीत् कृष्णो धनञ्जयमिदं वचः ॥१८॥**

सिन्धुराज जयद्रथ जब इस प्रकार सूर्य की ओर देखने लगा, तब श्रीकृष्ण पुनः अर्जुन से इस प्रकार बोले—

**पश्य सिन्धपतिं वीरं प्रेक्षमाणं दिवाकरम्।**
**भयं हि विप्रमुच्यैतत् त्वत्तो भरतसत्तम ॥१९॥**

"भरतकुलभूषण! देखो, यह वीर सिन्धुराज अब तुम्हारा भय छोड़कर सूर्य की ओर दृष्टिपात कर रहा है।

**अयं कालो महाबाहो वधायास्य दुरात्मनः।**
**छिन्धि मूर्धानमस्याशु कुरु साफल्यमात्मनः ॥२०॥**

"महाबाहो! इस दुरात्मा के वध का यही अवसर है। तुम शीघ्र इसका मस्तक काट डालो और अपनी प्रतिज्ञा पूरी करो।"

**इत्येवं केशवेनोक्तः पाण्डुपुत्रः प्रतापवान्।**
**न्यवधीत् तावकं सैन्यं शरैरर्काग्निसंनिभैः ॥२१॥**

श्रीकृष्ण के ऐसा कहने पर प्रतापी पाण्डुपुत्र अर्जुन ने सूर्य और अग्नि के समान तेजस्वी बाणों द्वारा आपकी सेना को मौत के घाट उतारना आरम्भ किया।

**कृपं विव्याध विंशत्या कर्णं पञ्चाशता शरैः।**
**शल्यं दुर्योधनं चैव षड्भिः षड्भिरताडयत् ॥२२॥**

उन्होंने कृपाचार्य को बीस, कर्ण को पचास तथा शल्य और दुर्योधन को छह-छह बाण मारे।

**तथैव च महाबाहुस्त्वदीयान् पाण्डुनन्दनः।**
**गाढं विद्ध्वा शरै राजन् जयद्रथमुपाद्रवत् ॥२३॥**

राजन्! इसी प्रकार महाबाहु पाण्डुपुत्र अर्जुन ने आपके अन्य सैनिकों को भी बाणों द्वारा गहरी चोट पहुँचाकर जयद्रथ पर धावा किया।

**तं समीपस्थितं दृष्ट्वा लेलिहानमिवानलम्।**
**जयद्रथस्य गोप्तारः संशयं परमं गताः ॥२४॥**

अपनी लपटों से सबको चाट जानेवाली अग्नि के समान अर्जुन को निकट खड़ा देख जयद्रथ के रक्षक भारी संकट में पड़ गये।

**तत्राद्भुतमपश्याम कुन्तीपुत्रस्य विक्रमम्।**
**तादृङ् न भावी भूतो वा यच्चकार महायशाः ॥२५॥**

वहाँ हम लोगों ने कुन्तीकुमार का अद्भुत पराक्रम देखा। उस महायशस्वी वीर ने उस समय जो पराक्रम प्रकट किया था, वैसा न तो पहले कभी प्रकट हुआ था और न आगे कभी होगा ही।

**द्विपान् द्विपगतांश्चैव हयान् हयगतानपि।**
**तथा स रथिनश्चैव न्यहन् रुद्रः पशूनिव ॥२६॥**

जैसे संहारकारी रुद्र समस्त प्राणियों का विनाश कर डालते हैं, उसी प्रकार उन्होंने हाथियों और हाथीसवारों को, घोड़ों और घुड़सवारों को तथा रथों और रथियों को भी नष्ट कर दिया।

**एवं तान् व्याकुलीकृत्य त्वदीयानां महारथान्।**
**उज्जहार शरं घोरं पाण्डवोऽनलसंनिभम् ॥२७॥**

इस प्रकार आपके महारथियों को व्याकुल करके पाण्डुपुत्र अर्जुन ने एक अग्नि के समान तेजस्वी एवं भयंकर बाण निकाला।

**वज्रेणास्त्रेण संयोज्य विधिवत् कुरुनन्दनः।**
**समादधन्महाबाहुर्गाण्डीवे क्षिप्रमर्जुनः ॥२८॥**

कुरुनन्दन महाबाहु अर्जुन ने उस बाण को विधि-

पूर्वक वज्रास्त्र से संयोजित करके शीघ्र ही गाण्डीव धनुष पर रखा।

**तस्मिन् संधीयमाने तु शरे ज्वलनतेजसि।**
**अब्रवीच्च पुनस्तत्र त्वरमाणो जनार्दनः ॥२९॥**

राजन्! जब अर्जुन अग्नि के समान तेजस्वी उस बाण का संधान करने लगे, उस समय श्रीकृष्ण पुनः उतावले होकर बोले--

**धनञ्जय शिरश्छिन्धि सैन्धवस्य दुरात्मनः।**
**अस्तं महीधरं श्रेष्ठं यियासति दिवाकरः ॥३०॥**

"धनञ्जय! तुम दुरात्मा सिन्धुराज का मस्तक शीघ्र काट डालो, क्योंकि सूर्य अब पर्वतश्रेष्ठ अस्ताचल पर जाना ही चाहता है।"

**एतत् श्रुत्वा तु वचनं सृक्किणी परिसंलिहन्।**
**विससर्जार्जुनस्तूर्णं सैन्धवस्य वधे धृतम् ॥३१॥**

श्रीकृष्ण का यह वचन सुनकर अपने ओठों के दोनों कोने चाटते हुए अर्जुन ने सिन्धुराज के वध के लिए धनुष पर रखे हुए उस बाण को तुरन्त ही छोड़ दिया।

**स तु गाण्डीवनिर्मुक्तः शरः श्येन इवाशुगः।**
**शिरःसिन्धुपतेश्छित्वा ह्युत्पपात विहायसम् ॥३२॥**

गाण्डीव धनुष से छूटा हुआ वह शीघ्रगामी बाण सिन्धुराज का सिर काटकर बाज पक्षी के समान उसे आकाश में ले उड़ा।

**ततो विनिहते राजन् सिन्धुराजे किरीटिना।**
**तमस्तद् वासुदेवेन संहृतं भरतर्षभ ॥३३॥**

राजन्! भरतभूषण! किरीटधारी अर्जुन के द्वारा सिन्धुराज जयद्रथ के मारे जाने पर श्रीकृष्ण ने अपने रचे हुए अन्धकार को समेट लिया।

**पश्चाज्ज्ञातं महीपाल तव पुत्रैः सहानुगैः।**
**वासुदेवप्रयुक्तेयं मायेति नृपसत्तम ॥३४॥**

भूपाल! नृपश्रेष्ठ! तब सेवकोंसहित आपके पुत्रों को यह ज्ञात हुआ कि इस अन्धकार के रूप में श्रीकृष्ण द्वारा फैलाई हुई माया थी।

**एवं स निहतो राजन् पार्थेनामिततेजसा।**
**अक्षौहिणीरष्ट हत्वा जामाता तव सैन्धवः ॥३५॥**

राजन्! इस प्रकार अमित तेजस्वी अर्जुन ने आपकी आठ अक्षौहिणी सेनाओं का संहार करके आपके दामाद सिन्धुराज जयद्रथ को मार डाला।

**हतं जयद्रथं दृष्ट्वा तव पुत्रा नराधिप।**
**दुःखादश्रूणि मुमुचुर्निराशाश्चाभवञ्जये ॥३६॥**

प्रजेश्वर! जयद्रथ को मारा गया देख आपके पुत्र दुःख से आँसू बहाने लगे और अपनी विजय से निराश हो गये।

**ततो जयद्रथे राजन् हते पार्थेन केशवः।**
**दध्मौ शंखं महाबाहुरर्जुनश्च परन्तपः ॥३७॥**

राजन्! कुन्तीपुत्र द्वारा जयद्रथ के मारे जाने पर श्रीकृष्ण और शत्रुसंतापक महाबाहु अर्जुन ने अपना-अपना शंख बजाया।

**भीमश्च वृष्णिसिंहश्च युधामन्युश्च भारत।**
**उत्तमौजाश्च विक्रान्तः शंखान्दध्मुः पृथक्पृथक् ॥३८॥**

भरतभूषण! तदनन्तर भीमसेन, वृष्णिवंश के सिंह सात्यकि, युधामन्यु और पराक्रमी उत्तमौजा ने पृथक् पृथक् शंख बजाये।

**श्रुत्वा महान्तं तं शब्दं धर्मराजो युधिष्ठिरः।**
**सैन्धवं निहतं मेने फाल्गुनेन महात्मना ॥३९॥**

राजन्! उस महान् शंखनाद को सुनकर धर्मराज युधिष्ठिर को यह निश्चय हो गया कि महात्मा अर्जुन ने सिन्धुराज जयद्रथ को मार दिया है।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि एकविंशोऽध्यायः ॥२१॥**

## द्वाविंशोऽध्यायः

**अर्जुन के बाणों से कृपाचार्य का मूर्च्छित होना, कर्ण और सात्यकि के युद्ध में कर्ण की पराजय**

धृतराष्ट्र उवाच

**[त]स्मिन् विनिहते वीरे सैन्धवे सव्यसाचिना।**
**[मा]मका यदकुर्वन्त तन्ममाचक्ष्व सञ्जय ॥१॥**

**धृतराष्ट्र ने पूछा**—सञ्जय! सव्यसाची अर्जुन के द्वारा वीर जयद्रथ के मारे जाने पर मेरे पुत्रों ने क्या किया, यह मुझे बताओ।

सञ्जय उवाच

**सैन्धवं निहतं दृष्ट्वा रणे पार्थेन भारत ।**
**अमर्षवशमापन्नः कृपः शारद्वतस्ततः ॥२॥**
**महता शरवर्षेण पाण्डवं समवाकिरत् ।**
**द्रौणिश्चाभ्यद्रवद् राजन् रथमास्थाय फाल्गुनम् ॥३॥**

**सञ्जय बोले**—भरतभूषण ! जयद्रथ को युद्ध-भूमि में मारा गया देख शरद्वान् के पुत्र कृपाचार्य क्रोध में भरकर भारी बाण-वृष्टि करके पाण्डुपुत्र अर्जुन को ढकने लगे । राजन् ! द्रोणपुत्र अश्वत्थामा ने भी रथ पर बैठकर अर्जुन पर आक्रमण किया ।

**तावेतौ रथिनां श्रेष्ठौ रथाभ्यां रथसत्तमौ ।**
**उभावुभयतस्तीक्ष्णैर्विशिखैरभ्यवर्षताम् ॥४॥**

रथियों में श्रेष्ठ वे दोनों महारथी [कृपाचार्य और अश्वत्थामा] दो दिशाओं से आकर अर्जुन पर पैने बाणों की वर्षा करने लगे ।

**स तथा शरवर्षाभ्यां सुमहद्भ्यां महाभुजः ।**
**पीड्यमानः परामार्तिमगमद् रथिनां वरः ॥५॥**

इस प्रकार दो दिशाओं से होनेवाली उस भारी बाणवर्षा से पीड़ित हो रथियों में श्रेष्ठ महाबाहु अर्जुन अत्यन्त व्यथित हो उठे ।

**सोऽजिघांसुर्गुरुं संख्ये गुरोस्तनयमेव च ।**
**चकाराचार्यकं तत्र कुन्तीपुत्रो धनञ्जयः ॥६॥**

वे रणभूमि में गुरु और गुरुपुत्र का वध नहीं करना चाहते थे, अतः कुन्तीकुमार धनञ्जय ने वहाँ अपने आचार्य का सम्मान किया ।

**अस्त्रैरस्त्राणि संवार्य द्रौणेः शारद्वतस्य च ।**
**मन्दवेगानिषूंस्ताभ्यामजिघांसुरवासृजत् ॥७॥**

उन्होंने अपने अस्त्रों के द्वारा अश्वत्थामा और कृपाचार्य के अस्त्रों का निवारण करके उनका वध करने की इच्छा न रखते हुए उन पर मन्द वेगवाले बाण चलाये ।

**ते चापि भृशमभ्यघ्नन् विशिखाः पार्थप्रेरिताः ।**
**बहुत्वात् तु परमार्ति शराणां तावगच्छताम् ॥८॥**

अर्जुन द्वारा चलाये हुए उन बाणों की संख्या अधिक होने के कारण उनसे उन दोनों को भारी चोट पहुँची । वे दोनों अत्यन्त वेदना का अनुभव करने लगे ।

**अथ शारद्वतो राजन् कौन्तेयशरपीडितः ।**
**अवासीदद् रथोपस्थे मूर्च्छामभिजगाम च ॥९॥**

राजन् ! कृपाचार्य अर्जुन के बाणों से पीड़ित हो मूर्च्छित हो गये और रथ के पिछले भाग में जा बैठे ।

**विह्वलं तमभिज्ञाय भर्तारं शरपीडितम् ।**
**हतोऽयमिति च ज्ञात्वा सारथिस्तमपावहत् ॥१०॥**

अपने स्वामी को बाणों से पीड़ित और विह्वल जानकर तथा उन्हें मरा हुआ समझकर सारथि उन्हें रणभूमि से दूर हटा ले गया ।

**तस्मिन् भग्ने महाराज कृपे शारद्वते युधि ।**
**अश्वत्थामाप्यपायासीत् पाण्डवाच्च रथान्तरम् ॥११॥**

महाराज ! रणक्षेत्र में शरद्वान् के पुत्र कृपाचार्य के अचेत होकर वहाँ से हट जाने पर अश्वत्थामा भी अर्जन को छोड़कर दूसरे किसी रथी का सामना करने के लिए चला गया ।

**दृष्ट्वा शारद्वतं पार्थो मूर्च्छितं शरपीडितम् ।**
**रथ एव महेष्वासः सकृपं पर्यदेवयत् ॥१२॥**

कृपाचार्य को बाणों से पीड़ित एवं मूर्च्छित देख-कर महाधनुर्धर अर्जुन दयावश रथ पर बैठे-बैठे ही विलाप करने लगे ।

**धिगस्तु क्षात्रमाचारं धिगस्तु बलपौरुषम् ।**
**को हि ब्राह्मणमाचार्यमभिद्रुह्येत मादृशः ॥१३॥**
**ऋषिपुत्रो ममाचार्यो द्रोणस्य परमः सखा ।**
**एष शेते रथोपस्थे कृपो मद्बाणपीडितः ॥१४॥**

"क्षत्रिय के आचार, बल और पुरुषार्थ को धिक्कार है ! धिक्कार है !! मेरे जैसा कौन पुरुष ब्राह्मण एवं आचार्य से द्रोह करेगा ? ये ऋषिकुमार, मेरे आचार्य और गुरुवर द्रोणाचार्य के परम सखा कृप मेरे बाणों द्वारा पीड़ित हो रथ की बैठक में पड़े हैं ।

**अकामयानेन मया विशिखैरर्दितो भृशम् ।**
**अवसीदन् रथोपस्थे प्राणान् पीडयतीव मे ॥१५॥**

"मैंने इच्छा न रखते हुए भी इन्हें बाणों द्वारा अधिक चोट पहुँचाई है । वे रथ की बैठक में पड़े हुए कष्ट पा रहे हैं और मुझे अत्यन्त पीड़ित-सा कर रहे हैं ।

**उपाकृत्य तु वै विद्यामाचार्येभ्यो नरर्षभाः ।**
**प्रयच्छन्तीह ये कामान् देवत्वमुपयान्ति ते ॥१६॥**

"आचार्यों से विद्या प्राप्त करके जो श्रेष्ठ पुरुष उन्हें उनकी अभीष्ट वस्तुएँ देते हैं, वे देवत्व को प्राप्त होते हैं।

**ये च विद्यामुपादाय गुरुभ्यः पुरुषाधमाः ।**
**घ्नन्ति तानेव दुर्वृत्तास्ते वै निरयगामिनः ॥१७॥**

"गुरु से विद्या ग्रहण करके जो नराधम उनपर ही चोट करते हैं, वे दुराचारी मानव निश्चय ही नरकगामी होते हैं।

**तदिदं नरकायाद्य कृतं कर्म मया ध्रुवम् ।**
**आचार्यं शरवर्षेण रथे सादयता कृपम् ॥१८॥**

"मैंने आचार्य कृप को अपनी बाण-वृष्टि से रथ पर सुला दिया है। निश्चय ही यह कर्म मैंने आज नरक में जाने के लिए ही किया है।

**नमस्तस्मै सुपूज्याय गौतमायापलायिने ।**
**धिगस्तु मम वार्ष्णेय यदस्मै प्रहराम्यहम् ॥१९॥**

"वार्ष्णेय ! युद्ध से कभी मुँह न मोड़नेवाले उन परम पूजनीय गौतमवंशी कृपाचार्य को मेरा नमस्कार है। मैंने जो उनपर प्रहार किया है, इसके लिए मुझे धिक्कार है !"

**तथा विलपमाने तु तं प्रति सव्यसाचिनि ।**
**सैन्धवं निहतं दृष्ट्वा राधेयः समुपाद्रवत् ॥२०॥**

सव्यसाची अर्जुन कृपाचार्य के लिए विलाप कर ही रहे थे कि सिन्धुराज को मारा गया देख राधानन्दन कर्ण ने उनपर आक्रमण किया।

**तमापतन्तं राधेयमर्जुनस्य रथं प्रति ।**
**पाञ्चाल्यौ सात्यकिश्चैव सहसा समुपाद्रवन् ॥२१॥**

राधापुत्र कर्ण को अर्जुन के रथ की ओर बढ़ते देख दोनों भाई पाञ्चालराजकुमार [युधामन्यु और उत्तमौजा] तथा सात्वतवंशी सात्यकि सहसा उनकी ओर दौड़े।

**उपायान्तं तु राधेयं दृष्ट्वा पार्थो महारथः ।**
**प्रहसन् देवकीपुत्रमिदं वचनमब्रवीत् ॥२२॥**

राधानन्दन कर्ण को अपने निकट आते देख महारथी कुन्तीकुमार अर्जुन ने देवकीपुत्र श्रीकृष्ण से हँसते हुए कहा—

**एष प्रयात्याधिरथिः सात्यकेः स्यन्दनं प्रति ।**
**न मृष्यति हतं नूनं भूरिश्रवसमाहवे ॥२३॥**

"यह अधिरथपुत्र कर्ण सात्यकि के रथ की ओर जा रहा है। अवश्य ही युद्धस्थल में भूरिश्रवा का मारा जाना इसके लिए असह्य हो उठा है।

**यत्र यात्येष तत्र त्वं नोदयाश्वान् जनार्दन ।**
**न सोमदत्तेः पदवीं गमयेत् सात्यकिं वृषः ॥२४॥**

"जनार्दन ! यह जहाँ जाता है, वहीं आप भी अपने घोड़ों को हाँकिए। कहीं ऐसा न हो कि कर्ण सात्यकि को भूरिश्रवा के पथ पर पहुँचा दे।"

**एवमुक्तो महाबाहुः केशवः सव्यसाचिना ।**
**प्रत्युवाच महातेजाः कालयुक्तमिदं वचः ॥२५॥**

सव्यसाची अर्जुन के ऐसा कहने पर महातेजस्वी महाबाहु श्रीकृष्ण ने उनसे यह समयोचित वचन कहा—

**अलमेष महाबाहुः कर्णायैकोऽपि पाण्डव ।**
**किं पुनर्द्रौपदेयाभ्यां सहितः सात्वतर्षभः ॥२६॥**

"पाण्डुनन्दन ! यह महाबाहु सात्वतशिरोमणि सात्यकि अकेला ही कर्ण के लिए पर्याप्त है, फिर इस समय जब द्रुपद के दोनों पुत्र इसके साथ हैं, तब तो कहना ही क्या है !

**न च तावत् क्षमः पार्थ तव कर्णेन सङ्गरः ।**
**प्रज्वलन्ती महोल्केव तिष्ठत्यस्य हि वासवी ॥२७॥**

"कुन्तीनन्दन ! इस समय कर्ण के साथ तुम्हारा युद्ध होना ठीक नहीं है, क्योंकि उसके पास महाउल्का के समान प्रज्वलित होनेवाली इन्द्र-प्रदत्त शक्ति विद्यमान है।

**त्वदर्थं पूज्यमानैषा रक्ष्यते परवीरहन् ।**
**अतः कर्णः प्रयात्वत्र सात्वतस्य यथातथा ॥२८॥**

"शत्रुनाशक अर्जुन ! तुम्हारे लिए कर्ण प्रतिदिन उसकी पूजा करते हुए उसे सदा सुरक्षित रखता है, अतः कर्ण सात्यकि के पास जैसे-तैसे जाए और युद्ध करे।"

धृतराष्ट्र उवाच

**योऽसौ कर्णेन वीरस्य वार्ष्णेयस्य समागमः ।**
**हते तु भूरिश्रवसि सैन्धवे च निपातिते ॥२९॥**

धृतराष्ट्र ने पूछा—सञ्जय ! भूरिश्रवा के मारे

जाने और सिन्धुराज के धराशायी किये जाने पर कर्ण के साथ शूरवीर सात्यकि का जो संग्राम हुआ वह कैसा रहा ?

**सात्यकिश्चापि विरथः कं समारूढवान् रथम् ।**
**चक्ररक्षौ च पाञ्चाल्यौ तन्ममाचक्ष्व सञ्जय ॥३०॥**

सञ्जय ! सात्यकि तो रथहीन हो गये थे, वे किसके रथ पर आरूढ़ हुए और चक्ररक्षक युधामन्यु तथा उत्तमौजा—इन दोनों पाञ्चाल वीरों ने किसके साथ युद्ध किया ? यह सब मुझे बताओ ।

सञ्जय उवाच

**हन्त ते वर्तयिष्यामि यथा वृत्तं महारणे ।**
**शुश्रूषस्व स्थिरो भूत्वा दुराचरितमात्मनः ॥३१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! मैं अत्यन्त दुःख के साथ उस महायुद्ध में घटित हुई घटनाओं का आपके समक्ष वर्णन करूँगा । आप स्थिर होकर अपने दुराचार का परिणाम सुनें ।

**सात्यकिं विरथं दृष्ट्वा कर्णं चाभ्युद्यतं रणे ।**
**दध्मौ शंखं महानादमार्षभेणाथ माधवः ॥३२॥**

सात्यकि को रथहीन और कर्ण को युद्ध के लिए तत्पर देख श्रीकृष्ण ने महान् ध्वनि करनेवाले शंख को ऋषभस्वर से बजाया ।

**दारुकोऽवेत्य संदेशं श्रुत्वा शंखस्य च स्वनम् ।**
**रथमन्वानयत् तस्मै सुपर्णोच्छ्रितकेतनम् ॥३३॥**

दारुक ने उस शंखध्वनि को सुनकर और श्रीकृष्ण के सन्देश को स्मरण करके तुरन्त ही उनके लिए अपना रथ ला दिया । इस रथ पर गरुड़चिह्न से युक्त ऊँची ध्वजा फहरा रही थी ।

**स केशवस्यानुमते रथं दारुकसंयुतम् ।**
**समारुह्य शिनेः पौत्रो राधेयं समुपाद्रवत् ॥३४॥**

श्रीकृष्ण की अनुमति पाकर शिनिपौत्र सात्यकि ने दारुक द्वारा जोते हुए रथ पर आरूढ़ होकर राधापुत्र कर्ण पर धावा किया ।

**चक्ररक्षावपि तदा युधामन्यूत्तमौजसौ ।**
**धनञ्जयरथं हित्वा राधेयं प्रत्युदीयतुः ॥३५॥**

उस समय चक्ररक्षक युधामन्यु और उत्तमौजा ने भी धनञ्जय का रथ छोड़कर कर्ण पर ही आक्रमण किया ।

**राधेयोऽपि महाराज शरवर्षं समुत्सृजन् ।**
**अभ्यद्रवत् सुसंक्रुद्धो रणे शैनेयमच्युतम् ॥३६॥**

महाराज ! अत्यन्त कुपित हुए कर्ण ने भी उस संग्रामभूमि में अपनी मर्यादा से कभी च्युत न होनेवाले सात्यकि पर बाण-वृष्टि करते हुए आक्रमण किया ।

**तं तु सक्रोधमालोक्य सात्यकिः प्रत्ययुध्यत ।**
**महता शरवर्षेण गजं प्रतिगजो यथा ॥३७॥**

कर्ण को क्रुद्ध देख सात्यकि भी बाणों की भारी वर्षा करते हुए उसका सामना करने लगे, मानो एक हाथी दूसरे हाथी से लड़ रहा हो ।

**तौ समेतौ नरव्याघ्रौ व्याघ्राविव तरस्विनौ ।**
**अन्योन्यं संततक्षाते रणेऽनुपमविक्रमौ ॥३८॥**

वेगशाली व्याघ्रों के समान परस्पर भिड़े हुए वे दोनों पुरुषसिंह युद्ध में अनुपम पराक्रम दिखाते हुए एक-दूसरे को क्षत-विक्षत कर रहे थे ।

**ततः कर्णं शिनेः पौत्रः सर्वपारशवैः शरैः ।**
**बिभेद सर्वगात्रेषु पुनः पुनररिन्दम ॥३९॥**
**सारथिं चास्य भल्लेन रथनीडादपातयत् ।**
**अश्वांश्च चतुरः श्वेतान् निजघान शितैः शरैः ॥४०॥**
**छित्वा ध्वजरथं चैव शतधा पुरुषर्षभ ।**
**चकार विरथं कर्णं तव पुत्रस्य पश्यतः ॥४१॥**

शत्रुओं का दमन करनेवाले महाराज ! तब शिनिपौत्र सात्यकि ने सम्पूर्णतः लोहनिर्मित बाणों द्वारा कर्ण के सभी अङ्गों में बारम्बार चोट पहुँचाई और एक भल्ल द्वारा उसके सारथि को रथ की बैठक से नीचे गिरा दिया । नरश्रेष्ठ ! फिर सात्यकि ने तीखे बाणों द्वारा कर्ण के चारों श्वेत घोड़ों को मार डाला तथा उसके ध्वज को काटकर रथ के सैकड़ों टुकड़े करके आपके पुत्र के देखते-देखते उसे रथहीन कर दिया ।

**कृष्णयोः सदृशो वीर्ये सात्यकिः शत्रुतापनः ।**
**जितवान् सर्वसैन्यानि तावकानि हसन्निव ॥४२॥**

शत्रुसन्तापक सात्यकि श्रीकृष्ण और अर्जुन के समान पराक्रमी थे । [कर्ण को परास्त करके] उन्होंने आपकी सारी सेनाओं को हँसते हुए-से जीत लिया ।

**कृष्णो वापि भवेल्लोके पार्थो वापि धनुर्धरः ।**
**शैनेयो वा नरव्याघ्र चतुर्थस्तु न विद्यते ॥४३॥**

नरव्याघ्र ! संसार में श्रीकृष्ण, कुन्तीपुत्र अर्जुन और शिनिपौत्र सात्यकि—ये तीन ही वस्तुतः धनुर्धर हैं। इनके समान चौथा कोई नहीं है।

**ततो राजन् हृषीकेशः संग्रामशिरसि स्थितम् ।**
**तीर्णप्रतिज्ञं बीभत्सुं परिष्वज्यैनमब्रवीत् ॥४४॥**

राजन् ! उधर कर्ण और सात्यकि का युद्ध हो रहा था, इधर श्रीकृष्ण ने प्रतिज्ञा से पार होकर युद्ध के मुहाने पर खड़े हुए अर्जुन को हृदय से लगाकर इस प्रकार कहा—

**दिष्टचा सम्पादिता जिष्णो प्रतिज्ञा महती त्वया ।**
**दिष्टचा विनिहतः पापो सिन्धुराजो जयद्रथः ॥४५॥**

"विजयशील अर्जुन ! महान् सौभाग्य की बात है कि तुमने अपनी बड़ी भारी प्रतिज्ञा पूर्ण कर ली। यह भी सौभाग्य की बात है कि सिन्धुराज पापी जयद्रथ मारा गया।

**एवमेव हते कर्णे सानुबन्धे दुरात्मनि ।**
**वर्धयिष्यामि भूयस्त्वां विजितारिं हतद्विषम् ॥४६॥**

"इसी प्रकार सगे-सम्बन्धियों सहित दुरात्मा कर्ण के मारे जानेपर शत्रुओं को जीतने और द्वेषी विपक्षियों का वध करनेवाले तुझ विजयी वीर को बधाई दूँगा।"

**तमर्जुनः प्रत्युवाच प्रसादात् तव माधव ।**
**प्रतिज्ञेयं मया तीर्णा विबुधैरपि दुस्तरा ॥४७॥**
**अनाश्चर्यो जयस्तेषां येषां नाथोऽसि केशव ।**
**त्वत्प्रसादान्महीं कृत्स्नां सम्प्राप्स्यति युधिष्ठिरः॥४८**

तब अर्जुन ने कहा—"माधव ! आपकी कृपा से ही मैं इस प्रतिज्ञा को पूर्ण कर सका हूँ, अन्यथा यह कार्य देवताओं के लिए भी कठिन था। आप जिनके रक्षक हैं, उनकी विजय हो, इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है। आपके कृपा-प्रसाद से महाराज युधिष्ठिर सम्पूर्ण पृथिवी का राज्य प्राप्त करेंगे।"

**ततो राजानमभ्येत्य धर्मपुत्रं युधिष्ठिरम् ।**
**ववन्दे स प्रहृष्टात्मा हते पार्थेन सैन्धवे ॥४९॥**

राजन् ! तत्पश्चात् अर्जुन द्वारा जयद्रथ के मारे जाने पर धर्मपुत्र राजा युधिष्ठिर के पास पहुँचकर श्रीकृष्ण ने हर्ष-पूर्ण हृदय से उन्हें प्रणाम किया और कहा—

**दिष्टचा वर्धसि राजेन्द्र हतशत्रुर्नरोत्तम ।**
**दिष्टचा निस्तीर्णवांश्चैव प्रतिज्ञामनुजस्तव ॥५०॥**

"हे राजेन्द्र ! सौभाग्य से आपका अभ्युदय हो रहा है। हे नरश्रेष्ठ ! आपका शत्रु मारा गया। आपके छोटे भाई ने अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण कर ली, यह भी सौभाग्य की बात है।"

**स त्वेवमुक्तः कृष्णेन हृष्टः परपुरञ्जयः ।**
**पर्यष्वजत् तदा कृष्णावान्दाश्रुपरिप्लुतः ॥५१॥**

राजन् ! श्रीकृष्ण के ऐसा कहने पर शत्रुओं की राजधानी पर विजय पानेवाले राजा युधिष्ठिर ने हर्ष में भरकर और आनन्द के आँसू बहाते हुए श्रीकृष्ण और अर्जुन को हृदय से लगाया।

**प्रमृज्य वदनं शुभ्रं पुण्डरीकसमप्रभम् ।**
**अब्रवीद् वासुदेवं च पाण्डवं च धनञ्जयम् ॥५२॥**

फिर उनके कमल के समान सुन्दर मुख पर हाथ फेरते हुए वे वसुदेवपुत्र श्रीकृष्ण और पाण्डुकुमार धनञ्जय से इस प्रकार बोले—

**नान्तं गच्छामि हर्षस्य श्रुत्वेदं परमं प्रियम् ।**
**अत्यद्भुतमिदं कृष्ण कृतं पार्थेन धीमता ॥५३॥**

"कृष्ण ! आपके मुख से यह प्रिय समाचार सुनकर मेरे हर्ष की सीमा नहीं रह गई है। बुद्धिमान् अर्जुन ने यह अत्यन्त अद्भुत पराक्रम किया है।

**दिष्टचा पश्यामि संग्रामे तीर्णभारौ महारथौ ।**
**दिष्टचा विनिहतः पापः सैन्धवः पुरुषाधमः ॥५४॥**

"आज सौभाग्यवश युद्धभूमि में मैं आप दोनों महारथियों को प्रतिज्ञा के भार से मुक्त हुआ देख रहा हूँ। यह महती प्रसन्नता की बात है कि नराधम सिन्धुराज जयद्रथ मारा गया।"

**एवमुक्तौ महात्मानावुभौ केशवपाण्डवौ ।**
**तावब्रूतां तदा कृष्णौ राजानं पृथिवीपतिम् ॥५५॥**

उनके ऐसा कहने पर महात्मा कृष्ण और अर्जुन ने उस समय उन पृथिवीपति-नरेश से इस प्रकार कहा—

**तव कोपाग्निना दग्धः पापो राजा जयद्रथः ।**
**उत्तीर्णं चापि सुमहद् धार्तराष्ट्रबलं रणे ॥५६॥**

"महाराज! पापी राजा जयद्रथ आपकी क्रोधाग्नि से भस्म हो गया है और रणभूमि में दुर्योधन की विशाल सेना से पार पाना भी आपकी कृपा से ही सम्भव हुआ है।

**हन्यन्ते निहताश्चैव विनङ्क्ष्यन्ति च भारत।**
**तव क्रोधहता ह्येते कौरवाः शत्रुसूदन ॥५७॥**

"हे भारत! शत्रुनाशक! ये समस्त कौरव आपके क्रोध से ही नष्ट होकर मारे गये हैं, मारे जाते हैं और भविष्य में भी मारे जाएँगे।

**त्वां हि चक्षुर्हणं वीरं कोपयित्वा सुयोधनः।**
**समित्रबन्धुः समरे प्राणाँस्त्यक्ष्यति दुर्मतिः ॥५८॥**

"क्रोधपूर्ण दृष्टिपात मात्र से शत्रु को भस्म कर देनेवाले आप-जैसे वीर को कुपित करके दुर्बुद्धि दुर्योधन अपने मित्रों और बन्धुओं के साथ रणक्षेत्र में प्राणों को त्याग देगा।"

**ततो भीमो महाबाहुः सात्यकिश्च महारथः।**
**अभिवाद्य गुरुं ज्येष्ठं मार्गणैः क्षतविक्षतौ ॥५९॥**

**क्षितावास्तां महेष्वासौ पाञ्चाल्यैः परिवारितौ।**
**तौ दृष्ट्वा मुदितौ वीरौ प्राञ्जली चाग्रतः स्थितौ ॥६०॥**
**अभ्यनन्दत कौन्तेयस्तावुभौ भीमसात्यकी।**
**दिष्ट्या पश्यामि वां शूरौ विमुक्तौ सैन्यसागरात् ।६१**

तत्पश्चात् बाणों से क्षत-विक्षत हुए महाबाहु भीमसेन और महारथी सात्यकि अपने ज्येष्ठ गुरु युधिष्ठिर को प्रणाम कर भूमि पर खड़े हो गये। पाञ्चालों से घिरे हुए उन दोनों महाधनुर्धर वीरों को प्रसन्नतापूर्वक हाथ जोड़े हुए सामने खड़े देख कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर ने भीम और सात्यकि दोनों का अभिनन्दन करते हुए कहा—"बड़े सौभाग्य की बात है कि मैं तुम दोनों शूरवीरों को शत्रुसेना के सागर से पार हुआ देख रहा हूँ।"

**इत्युक्त्वा पाण्डवो राजन् युयुधानवृकोदरौ।**
**सस्वजे पुरुषव्याघ्रौ हर्षाद् बाष्पं मुमोच ह ॥६२॥**

राजन्! पुरुषसिंह सात्यकि और भीमसेन से ऐसा कहकर पाण्डुनन्दन युधिष्ठिर ने उन दोनों को हृदय से लगा लिया और वे आनन्द के आँसू बहाने लगे।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि द्वाविंशोऽध्यायः ॥२२॥**

# त्रयोविंशोऽध्यायः

## दुर्योधन का द्रोणाचार्य को उपालम्भ देना, द्रोणाचार्य का प्रत्युत्तर

सञ्जय उवाच

**सैन्धवे निहते राजन् पुत्रस्तव सुयोधनः।**
**अश्रुपूर्णमुखो दीनो निरुत्साहो द्विषज्जये ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! सिन्धुराज जयद्रथ के मारे जाने पर आपका पुत्र दुर्योधन अत्यन्त दुःखी हो गया। उसके मुख पर आँसुओं की धारा बहने लगी और उसका शत्रुओं के जीतने का उत्साह ठण्डा पड़ गया।

**दृष्ट्वा तत्कदनं घोरं स्वबलस्य कृतं महत्।**
**अमन्यतार्जुनसमो न योद्धा भुवि विद्यते ॥२॥**

अपनी सेना का घोर संहार हुआ देख दुर्योधन को यह विश्वास हो गया कि 'इस पृथिवी पर अर्जुन के समान दूसरा कोई योद्धा नहीं है।'

**निर्जित्य हि रणे पार्थः सर्वान् मम महारथान्।**
**अवधीत् सैन्धवं संख्ये न हि कश्चिदवारयत् ॥३॥**

वह सोचने लगा—'आज के युद्ध में अर्जुन ने हमारे सभी महारथियों को जीतकर सिन्धुराज का वध कर डाला, परन्तु कोई भी उन्हें युद्धभूमि में न रोक सका।

**यस्य वीर्यं समाश्रित्य शमं याचन्तमच्युतम्।**
**तृणवत् तमहं मन्ये स कर्णो निर्जितो युधि ॥४॥**

'अहो! जिसके पराक्रम का आश्रय लेकर मैंने सन्धि की याचना करनेवाले श्रीकृष्ण को तिनके के समान समझा था, वही कर्ण युद्ध में परास्त हो गया।'

**एवं क्लान्तमना राजन्नुपायाद् द्रोणमीक्षितुम्।**
**आगस्कृत् सर्वलोकस्य पुत्रस्ते भरतर्षभ ॥५॥**

राजन्! भरतभूषण! समस्त संसार का अपराध करनेवाला आपका पुत्र जब इस प्रकार सोचते-सोचते मन-ही-मन अति खिन्न हो गया, तब वह आचार्य द्रोण का दर्शन करने के लिए उनके पास गया।

दुर्योधन उवाच

**पश्य मूर्धाभिषिक्तानामाचार्य कदनं महत् ।**
**कृत्वा प्रमुखतः शूरं भीष्मं मम पितामहम् ।।६।।**

**दुर्योधन बोला**—आचार्य ! जिनके मस्तक पर विधिपूर्वक राज्याभिषेक किया गया था, उन भूपालों का यह महाविनाश देखिए। मेरे शूरवीर पितामह भीष्म से लेकर आज तक कितने ही नरेश मारे गये ।

**भवानुपेक्षां कुरुते शिष्यत्वादर्जुनस्य हि ।**
**अतो विनिहताः सर्वे येऽस्मज्जयचिकीर्षवः ।।७।।**

आप हमारी उपेक्षा करते हैं, क्योंकि अर्जुन आपके शिष्य हैं। इसीलिए हमारी विजय चाहनेवाले सभी योद्धा मारे गये ।

**जलसन्धं महेष्वासं पश्य सात्यकिना हतम् ।**
**मदर्थमुद्यतं शूरं प्राणाँस्त्यक्त्वा महारथम् ।।८।।**

आचार्य ! देखिए तो सही, मेरे लिए प्राणों का मोह छोड़कर राज्य दिलाने के लिए उद्यत हुए महाधनुर्धर शूरवीर महारथी जलसन्ध को सात्यकि ने मार डाला ।

**हतो जयद्रथश्चैव सौमदत्तिश्च वीर्यवान् ।**
**अभीषाहाः शूरसेनाः शिबयोऽथ वसातयः ।।९।।**

जयद्रथ और सोमदत्तपुत्र भूरिश्रवा मारे गये । अभीषाह, शूरसेन, शिबि और वसातिगण भी मौत के घाट उतार दिये गये ।

**सोऽहमद्य गमिष्यामि यत्र ते पुरुषर्षभाः ।**
**हता मदर्थे संग्रामे युद्धमानाः किरीटिना ।।१०।।**

वे नरश्रेष्ठ सुहृद् युद्धभूमि में मेरे लिए लड़ते-लड़ते अर्जुन के हाथ से मारे जाकर जिन लोकों में गये हैं, वहीं आज मैं भी जाऊँगा ।

**न हि मे जीवितेनार्थस्तानृते पुरुषर्षभान् ।**
**आचार्यः पाण्डुपुत्राणामनुजानातु नो भवान् ।।११।।**

उन नररत्न मित्रों के बिना अब मेरे जीवित रहने का कोई प्रयोजन नहीं है। आप पाण्डुपुत्रों के आचार्य हैं, अतः मुझे जाने की अनुमति प्रदान करें।

सञ्जय उवाच

**द्रोणस्तु तद्वचः श्रुत्वा पुत्रस्य तव दुर्मनाः ।**
**मुहूर्तमिव तद् ध्यात्वा भृशमार्तोऽभ्यभाषत ।।१२।।**

**सञ्जय ने कहा**—राजन् ! आपके पुत्र का वह वचन सुनकर द्रोणाचार्य मन-ही-मन दुःखी हो गये। फिर उन्होंने दो घड़ी सोच-विचारकर अत्यन्त आर्तभाव से कहा—

द्रोण उवाच

**दुर्योधन किमेवं मां वाक्शरैरपि कृन्तसि ।**
**अजेयं सततं संख्ये ब्रुवाणं सव्यसाचिनम् ।।१३।।**

**द्रोणाचार्य ने कहा**—दुर्योधन ! तुम क्यों इस प्रकार अपने वचनरूपी बाणों से मुझे बींध रहे हो ? मैं तो सदा से कहता आया हूँ कि सव्यसाची अर्जुन युद्ध में अजेय हैं ।

**एतेनैवार्जुनं ज्ञातुमलं कौरव संयुगे ।**
**यच्छिखण्ड्यवधीद्भीष्मं पाल्यमानः किरीटिना ।।१४।।**

कुरुनन्दन ! अर्जुन के पौरुष को तो तुम्हें इसी बात से समझ लेना चाहिए था कि उनके द्वारा सुरक्षित होकर शिखण्डी ने भी युद्ध के मैदान में भीष्म को मार डाला ।

**यान् स्म तान् ग्लहते तात शकुनिः कुरुसंसदि ।**
**अक्षान् न तेऽक्षा निशिता बाणास्ते शत्रुतापनाः ।।१५।।**

जुए के समय विदुर ने तुमसे कहा था—'तात ! कौरव-सभा में शकुनि जिन पाशों को फेंक रहा है, उन्हें पासे न समझो, वे किसी दिन शत्रुओं को सन्ताप देनेवाले तीखे तीर बन सकते हैं ।'

**एते ते घ्नन्ति नरतात विशिखाः पार्थप्रेरिताः ।**
**ताँस्तदाऽऽख्यायमानाँस्त्वं विदुरेण न बुद्धवान् ।।१६।।**

वत्स ! उस समय विदुरजी की कही हुई बातों को तुमने कुछ नहीं समझा । अब वे ही पासे अर्जुन के बाणों के रूप में परिवर्तित होकर हमें मार रहे हैं ।

**यच्च नः प्रेक्षमाणानां कृष्णामानाय्य तत्सभाम् ।**
**तस्याधर्मस्य गान्धारे फलं प्राप्तमिदं महत् ।।१७।।**

इसके अतिरिक्त तुमने हम लोगों के सामने ही जो द्रौपदी को सभा में बुलाकर अपमानित किया था, उसी अधर्म का यह महान् फल प्राप्त हुआ है कि तुम्हारे दल का नाश हो रहा है ।

**यच्च तान् पाण्डवान् द्यूते विषमेण विजित्य च ।**
**प्राव्राजयस्तदारण्ये रौरवाजिनवाससः ।।१८।।**

इतना ही नहीं, तुमने पाण्डवों को जूए में छल से जीतकर और मृगचर्ममय वस्त्र पहनाकर उन्हें

वनवास दे दिया [उस अधर्म का फल तुम्हें भोगना पड़ रहा है]।

**पुत्राणामिव चैतेषां धर्ममाचरतां सदा।**
**द्रुह्येत् को नु नरो लोके मदन्यो ब्राह्मणब्रुवः ॥१९॥**

पाण्डव मेरे पुत्र के समान हैं तथा वे सदा धर्माचरण में तत्पर रहते हैं। संसार में मेरे अतिरिक्त दूसरा कौन मनुष्य है, जो ब्राह्मण कहलाकर भी उनसे द्रोह करे?

**पाण्डवानामयं कोपस्त्वया शकुनिना सह।**
**आहूतो धृतराष्ट्रस्य सम्मते कुरुसंसदि ॥२०॥**

तुमने राजा धृतराष्ट्र की सम्मति से कौरवों की सभा में शकुनि के साथ बैठकर पाण्डवों का यह क्रोध आमन्त्रित किया है।

**दुःशासनेन संयुक्तः कर्णेन परिवर्धितः।**
**क्षत्तुर्वाक्यमनादृत्य त्वयाभ्यस्तः पुनः पुनः ॥२१॥**

इस कार्य में दुःशासन ने तुम्हारा साथ दिया है, कर्ण ने भी उस कोपाग्नि को बढ़ाया है और विदुरजी के उपदेश की अवहेलना करके तुमने बारम्बार पाण्डवों के उस क्रोध को बढ़ने का अवसर दिया है।

**यत्ताः सर्वे पराभूताः पर्यवारयतार्ऽजुनम्।**
**सिन्धुराजं समाश्रित्य स वो मध्ये कथं हतः ॥२२॥**

तुम सब लोगों ने बड़ी सावधानी से अर्जुन को घेर लिया था, फिर तुम सब-के-सब पराजित कैसे हो गये? तुमने सिन्धुराज को आश्रय दिया था, फिर तुम्हारे बीच में वह कैसे मारा गया?

**कथं त्वयि च कर्णे च कृपे शल्ये च जीवति।**
**अश्वत्थाम्नि च कौरव्य निधनं सैन्धवोऽगमत् ॥२३॥**

कुरुकुलभूषण! तुम और कर्ण तो नहीं मारे गये थे, कृपाचार्य, शल्य और अश्वत्थामा तो जीवित थे, फिर तुम लोगों के जीतेजी सिन्धुराज की मृत्यु क्यों हुई?

**मय्येव हि विशेषेण तथा दुर्योधन त्वयि।**
**आशंसत परित्राणमर्जुनात् स महीपतिः ॥२४॥**

दुर्योधन! राजा जयद्रथ विशेषरूप से मुझपर और तुमपर ही अर्जुन से अपनी जीवन-रक्षा का भरोसा किये बैठा था।

**ततस्तस्मिन् परित्राणमलब्धवति फाल्गुनात्।**
**न किञ्चिदनुपश्यामि जीवितस्थानमात्मनः ॥२५॥**

तो भी जब अर्जुन से उसकी रक्षा नहीं की जा सकी, तब मुझे अपने जीवन की रक्षा के लिए भी कोई स्थान दिखाई नहीं देता।

**मज्जन्तमिव चात्मानं धृष्टद्युम्नस्य किल्बिषे।**
**पश्याम्यहत्वा पाञ्चालान् सह तेन शिखण्डिना ॥२६**

मैं [द्रोणाचार्य] धृष्टद्युम्न और शिखण्डीसहित समस्त पाञ्चालों का वध न करके अपने-आपको भी धृष्टद्युम्न के पापपूर्ण संकल्प में डूबता-सा देख रहा हूँ।

**तन्मां किमभितप्यन्तं वाक्शरैरेव कृन्तसि।**
**अशक्तः सिन्धुराजस्य भूत्वा त्राणाय भारत ॥२७॥**

हे भारत! तुम स्वयं सिन्धुराज जयद्रथ की रक्षा में असमर्थ होकर मुझे अपने वाग्बाणों से क्यों बींध रहे हो? मैं तो स्वयं ही सन्तप्त हो रहा हूँ।

**इमानि पाण्डवानां च सृञ्जयानां च भारत।**
**अनीकान्याद्रवन्ते मां सहितान्यद्य भारत ॥२८॥**

हे भारत! वह देखो, पाण्डवों और सृञ्जयों की सेनाएँ एक-साथ मिलकर इस समय मुझपर चढ़ी आ रही हैं।

**नाहत्वा सर्वपाञ्चालान् कवचस्य विमोक्षणम्।**
**कर्तास्मि समरे कर्म धार्तराष्ट्र हितं तव ॥२९॥**

दुर्योधन! अब मैं समस्त पाञ्चालों को मारे बिना अपना कवच नहीं उतारूँगा। मैं रणभूमि में वही कार्य करूँगा, जिससे तुम्हारा हित हो।

**राजन् ब्रूयाः सुतं मे त्वमश्वत्थामानमाहवे।**
**न सोमकाः प्रमोक्तव्या जीवितं परिरक्षता ॥३०॥**

राजन्! तुम मेरे पुत्र अश्वत्थामा से जाकर कहना कि 'वह युद्ध में अपने जीवन की रक्षा करते हुए जैसे भी हो, सोमकों को जीवित न छोड़े।'

**यच्च पित्रानुशिष्टोऽसि तद् वचः परिचालय।**
**आनृशंस्ये दमे सत्ये चार्जवे च स्थिरो भव ॥३१॥**

यह भी कहना कि 'पिता ने तुम्हें जो उपदेश दिया है, उसका पालन करो। दया, दम, सत्य तथा सरलता आदि सद्गुणों में स्थिर रहो।

**धर्मार्थकामकुशलो धर्मार्थाविप्यपीडयन्।**
**धर्मप्रधानकार्याणि कुर्याश्चेति पुनः पुनः ॥३२॥**

'तुम धर्म, अर्थ और काम के साधन में कुशल हो, अतः धर्म और अर्थ को हानि न पहुँचाते हुए तुम वारम्बार धर्मप्रधान कर्मों का ही अनुष्ठान करो।

**चक्षुर्मनोभ्यां संतोष्या विप्राः पूज्याश्च शक्तितः। □**
**न चैषां विप्रियं कार्यं ते हि वह्निशिखोपमाः ॥३३॥**

'विनयपूर्ण दृष्टि और श्रद्धायुक्त हृदय से ब्राह्मणों को सन्तुष्ट रखना, यथाशक्ति उनका आदर-सत्कार करते रहना, कभी उनका अप्रिय न करना, क्योंकि वे अग्नि की ज्वाला के समान तेजस्वी होते हैं।'

**एष त्वहमनीकानि प्रविशाम्यरिसूदन।**
**रणाय महते राजँस्त्वया वाक्शरपीडितः ॥३४॥**

राजन्! शत्रुसंहारक! लो, अब मैं तुम्हारे वचनरूपी बाणों से पीड़ित हो भीषण युद्ध के लिए शत्रुओं की सेना में प्रवेश करता हूँ।

**त्वं च दुर्योधन बलं यदि शक्तोऽसि पालय।**
**रात्रावपि च योत्स्यन्ते संरब्धाः कुरुसृञ्जयाः ॥३५॥**

दुर्योधन! तुममें शक्ति और सामर्थ्य हो तो सेना की रक्षा करना, क्योंकि इस समय क्रोध में भरे हुए कौरव और सृञ्जय रात्रि में भी युद्ध करेंगे।

सञ्जय उवाच

**एवमुक्त्वा ततः प्रायाद् द्रोणः पाण्डवसृञ्जयान्।**
**मुष्णन् क्षत्रियतेजांसि नक्षत्राणामिवांशुमान् ॥३६॥**

**सञ्जय कहते हैं**—जैसे सूर्य नक्षत्रों का तेज हर लेता है, वैसे ही क्षत्रियों के तेज का अपहरण करते हुए द्रोणाचार्य दुर्योधन से पूर्वोक्त बातें कहकर पाण्डवों और सृञ्जयों से युद्ध करने के लिए चल दिये।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि त्रयोविंशोऽध्यायः ॥२३॥**

# चतुर्विंशोऽध्यायः

## दुर्योधन और कर्ण की मन्त्रणा और पुनः युद्ध का आरम्भ

सञ्जय उवाच

**ततो दुर्योधनो राजा द्रोणेनैवं प्रणोदितः।**
**अमर्षवशमापन्नो युद्धायैव मनो दधे ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! तब द्रोणाचार्य से इस प्रकार प्रेरित हो क्रोध में भरे हुए राजा दुर्योधन ने मन-ही-मन युद्ध करने का ही निश्चय किया।

**अब्रवीच्च तदा कर्णं पुत्रो दुर्योधनस्तव।**
**पश्य कृष्णसहायेन पाण्डवेन किरीटिना ॥२॥**
**आचार्यविहितं व्यूहं भित्त्वा देवैः सुदुर्भिदम्।**
**मिषतां योधमुख्यानां सैन्धवो विनिपातितः ॥३॥**

उस समय आपके पुत्र दुर्योधन ने कर्ण से इस प्रकार कहा—"कर्ण! देखो, श्रीकृष्ण की सहायता से पाण्डुपुत्र अर्जुन ने आचार्य द्वारा निर्मित व्यूह को, जिसका भेदन करना देवताओं के लिए भी कठिन था, भेदकर मुख्य-मुख्य योद्धाओं के देखते-देखते सिन्धुराज जयद्रथ को मार गिराया।

**कथं नियम्यमानस्य द्रोणस्य युधि फाल्गुनः।**
**भिन्द्यात् सुदुर्भिदं व्यूहं यतमानोऽपि संयुगे ॥४॥**

"यदि इस संग्राम में द्रोणाचार्य अर्जुन को रोकने की पूरी चेष्टा करते तो प्रयत्न करने पर भी वे रणक्षेत्र में उस दुर्भेद्य व्यूह को कैसे तोड़ सकते थे?

**दयितः फाल्गुनो नित्यमाचार्यस्य महात्मनः।**
**ततोऽस्य दत्तवान् द्वारमयुद्धेनैव शत्रुहन् ॥५॥**

"शत्रुसंहारक! परन्तु अर्जुन तो महात्मा द्रोणाचार्य को सदा से ही परम प्रिय हैं, अतः उन्होंने युद्ध किये बिना ही उन्हें व्यूह में घुसने का मार्ग दे दिया।

**अभयं सिन्धुराजस्य दत्त्वा द्रोणः परन्तपः।**
**प्रादात् किरीटिने द्वारं पश्य निर्गुणतां मम ॥६॥**

"शत्रुसंतापक द्रोणाचार्य ने सिन्धुराज को अभय-दान देकर भी किरीटधारी अर्जुन को व्यूह में घुसने का मार्ग दे दिया। देखो, मैं कैसा गुणहीन हूँ!

**यद्यदास्यदनुज्ञां वै पूर्वमेव गृहान् प्रति।**
**प्रस्थातुं सिन्धुराजस्य नाभविष्यज्जनक्षयः ॥७॥**

"यदि उन्होंने पहले ही सिन्धुराज को घर जाने की आज्ञा दे दी होती तो यह इतना बड़ा नरसंहार नहीं होता।"

कर्ण उवाच

**आचार्यं मा विगर्हस्व शक्त्यासौ युध्यते द्विजः।**
**यथाबलं यथोत्साहं त्यक्त्वा जीवितमात्मनः ॥८॥**

**कर्ण बोला**—मित्र! तुम आचार्य की निन्दा न

करो। वह ब्राह्मण तो अपने बल, शक्ति और उत्साह के अनुसार प्राणों का भी मोह छोड़कर युद्ध कर रहे हैं।

**यद्येनं समतिक्रम्य प्रविष्टः श्वेतवाहनः।**
**नात्र सूक्ष्मोऽपि दोषः स्यादाचार्यस्य कथञ्चन ॥९॥**

यदि श्वेतवाहन अर्जुन द्रोणाचार्य को लाँघकर सेना में घुस गये तो इसमें किसी प्रकार आचार्य का कोई सूक्ष्म-सा भी दोष नहीं है।

**कृती दक्षो युवा शूरः कृतास्त्रो लघुविक्रमः।**
**यदर्जुनोऽभ्ययाद् द्रोणमुपपन्नं हि तस्य तत् ॥१०॥**

अर्जुन अस्त्रविद्या के विद्वान्, दक्ष, युवावस्था से सम्पन्न, शूरवीर, अनेक दिव्यास्त्रों के ज्ञाता और शीघ्रतापूर्वक पराक्रम प्रकट करनेवाले हैं। यदि वे आचार्य द्रोण को लाँघ गये तो वह उनके योग्य ही कर्म था।

**आचार्यः स्थविरो राजञ्शीघ्रयाने तथाक्षमः।**
**बाहुव्यायामचेष्टायामशक्तस्तु नराधिप ॥११॥**

राजन्! प्रजेश्वर! द्रोणाचार्य अब वृद्ध हो गये हैं, वे शीघ्रतापूर्वक चलने में भी असमर्थ हैं। भजाओं द्वारा परिश्रमपूर्वक की जानेवाले प्रत्येक चेष्टा में अब उनकी शक्ति उतना काम नहीं देती।

**अजेयान् पाण्डवान् मन्ये द्रोणेनास्त्रविदा मृधे।**
**तथा ह्येनमतिक्रम्य प्रविष्टः श्वेतवाहनः ॥१२॥**

मैं तो ऐसा मानता हूँ कि अस्त्रवेत्ता होने पर भी द्रोण युद्ध में पाण्डवों को नहीं जीत सकते, तभी तो उन्हें लाँघकर श्वेतवाहन अर्जुन व्यूह में घुस गये।

**दैवादिष्टेऽन्यथाभावो न मन्ये विद्यते क्वचित्।**
**यतो नो युध्यमानानां परं शक्त्या सुयोधन।**
**सैन्धवो निहतो युद्धे दैवमत्र परं स्मृतम् ॥१३॥**

सुयोधन! दैव के विधान में कहीं कोई उलट-फेर नहीं हो सकता, ऐसा मेरा विश्वास है, क्योंकि हम लोग पूर्ण बल लगाकर युद्ध कर रहे थे, तो भी युद्धभूमि में सिन्धुराज मारे गये। इस विषय में दैव=प्रारब्ध को ही प्रधान माना गया है।

**कुर्वतां च परं यत्नं त्वया सार्धं रणाजिरे।**
**हत्वा पौरुषमस्माकं दैवं पश्चात् करोति नः ॥१४॥**

युद्धभूमि में तुम्हारे साथ हम लोग भी विजय के लिए महान् प्रयत्न करते हैं, परन्तु दैव=भाग्य हमारे पुरुषार्थ को नष्ट करके हमें पीछे धकेल देता है।

**यत्कर्तव्यं मनुष्येण व्यवसायवता सदा।**
**तत् कार्यमविशंकेन सिद्धिर्दैवे प्रतिष्ठिता ॥१५॥**

मनुष्य को सर्वदा उद्योगशील होकर निःशंकभाव से अपने कर्त्तव्य का पालन करना चाहिए, किन्तु उसकी सिद्धि दैव के ही अधीन है।

**निकृत्या वञ्चिताः पार्था विषयोगैश्च भारत।**
**दग्धा जतुगृहे चापि द्यूतेन च पराजिताः ॥१६॥**
**राजनीतिव्यपाश्रित्य प्रहिताश्चैव काननम्।**
**यत्नेन च कृतं तत्तद् दैवेन विनिपातितम् ॥१७॥**

हे भारत! हम लोगों ने कपट द्वारा कुन्तीपुत्रों को छला, उन्हें मारने के लिए विष का प्रयोग किया, लाक्षागृह में जलाया, जूए में हराया और राजनीति का आश्रय लेकर उन्हें वन में भी पठाया, परन्तु यत्नपूर्वक किये गये हमारे उन सभी कार्यों को दैव ने नष्ट कर दिया।

**युध्यस्व यत्नमास्थाय दैवं कृत्वा निरर्थकम्।**
**यततस्तव तेषां च दैवं मार्गेण यास्यति ॥१८॥**

फिर भी तुम दैव को व्यर्थ समझकर प्रयत्नपूर्वक युद्ध करो। तुम्हारे और पाण्डवों के अपनी-अपनी विजय के लिए प्रयत्न करते रहने पर दैव अपने गन्तव्य मार्ग से जाता रहेगा।

सञ्जय उवाच

**तयोरेवं प्रवदतोः बहु तत् तज्जनाधिप।**
**पाण्डवानामनीकानि समदृश्यन्त संयुगे ॥१९॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! इस प्रकार जब कर्ण और दुर्योधन परस्पर वार्तालाप कर रहे थे, उसी समय युद्धस्थल में पाण्डवों की सेनाएँ दृष्टिगोचर हुईं।

**ततः प्रववृते युद्धं व्यतिषिक्तरथद्विपम्।**
**तावकानां परैः सार्धं राजन् दुर्मन्त्रिते तव ॥२०॥**

राजन्! तत्पश्चात् आपकी कुमन्त्रणा के अनुसार आपके पुत्रों का शत्रुओं के साथ घोर युद्ध छिड़ गया, जिसमें रथ-से-रथ तथा हाथी-से-हाथी भिड़ गये।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि चतुर्विंशोऽध्यायः ॥२४॥**

# पञ्चविंशोऽध्यायः

## रात्रियुद्ध में द्रोणाचार्य का पराक्रम

धृतराष्ट्र उवाच

**प्राविशत् पाण्डवानीकमाचार्यः कुपितो बली ।**
**कथं द्रोणं महेष्वासं पाण्डवाः पर्यवारयन् ॥१॥**

**धृतराष्ट्र ने पूछा**—सञ्जय ! जब क्रोध में भरे हुए महाबली द्रोणाचार्य ने पाण्डव-सेना में प्रवेश किया उस समय महाधनुर्धर शूरवीर द्रोणाचार्य को पाण्डवों ने किस प्रकार रोका ?

सञ्जय उवाच

**सायाह्ने सैन्धवं हत्वा राज्ञा पार्थः समेत्य च ।**
**सात्यकिश्च महेष्वासो द्रोणमेवाभ्यधावताम् ॥२॥**

**सञ्जय बोले**—राजन् ! सायंकाल सिन्धुराज जयद्रथ का वध करके राजा युधिष्ठिर से मिलकर कुन्तीपुत्र अर्जुन और महाधनुर्धर सात्यकि—दोनों ने द्रोणाचार्य पर ही धावा किया ।

**धृष्टद्युम्नः सहानीको विराटश्च सकेकयः ।**
**मत्स्याः शाल्वाः ससेनाश्च द्रोणमेव ययुर्युधि ॥३॥**

सेनासहित धृष्टद्युम्न, राजा विराट, केकयराजकुमार, मत्स्य और मालव देश के सैनिक अपनी सेनाओं के साथ रणभूमि में द्रोणाचार्य पर टूट पड़े ।

**ततो द्रोणः केकयांश्च धृष्टद्युम्नस्य चात्मजान् ।**
**सम्प्रैषयत् प्रेतलोकं सर्वानिषुभिराशुगैः ॥४॥**

तब द्रोणाचार्य ने भी केकयों और धृष्टद्युम्न के समस्त पुत्रों को अपने शीघ्रगामी बाणों द्वारा यमलोक पठा दिया ।

**तस्य प्रमुखतो राजन् येऽवर्तन्त महारथाः ।**
**तान् सर्वान् प्रेषयामास पितृलोकं स भारत ॥५॥**

भरतभूषण ! जो-जो महारथी उनके समक्ष आये, उन सबको भी आचार्य ने पितृलोक में भेज दिया ।

**प्रमथ्नन्तं तदा वीरान् भारद्वाजं महारथम् ।**
**अभ्यवर्तत संक्रुद्धः शिबी राजा प्रतापवान् ॥६॥**

इस प्रकार शत्रुवीरों का संहार करते हुए महारथी द्रोणाचार्य का सामना करने के लिए प्रतापी राजा शिबि क्रुद्ध होकर उनके सम्मुख आये ।

**तमापतन्तं सम्प्रेक्ष्य पाण्डवानां महारथम् ।**
**विव्याध दशभिर्बाणैः सर्वपारशवैः शितैः ॥७॥**

पाण्डवपक्ष के उस महारथी वीर को आते देख आचार्य ने पूर्णरूप से लोह-निर्मित दस पैने बाणों से उसे घायल कर दिया ।

**तं शिबिः प्रतिविव्याध त्रिंशता निशितैः शरैः ।**
**सारथिं चास्य भल्लेन स्मयमानो न्यपातयत् ॥८॥**

तब शिबि ने द्रोणाचार्य को तीस तीखे सायकों से वेधकर अपना बदला चुकाया और मुस्कराते हुए उन्होंने एक भल्ल से उनके सारथि को मार गिराया ।

**तस्य द्रोणो हयान् हत्वा सारथिं च महात्मनः ।**
**अथास्य सशिरस्त्राणं शिरः कायादपाहरत् ॥९॥**

यह देख द्रोणाचार्य ने भी महामना शिबि के घोड़ों को मारकर सारथि का भी वध कर दिया, फिर उनके शिरस्त्राणसहित मस्तक को धड़ से अलग कर दिया ।

**ततोऽस्य सारथिं क्षिप्रमन्यं दुर्योधनोऽदिशत् ।**
**स तेन संगृहीताश्वः पुनरभ्यद्रवद् रिपून् ॥१०॥**

उधर दुर्योधन ने द्रोणाचार्य को शीघ्र ही दूसरा सारथि दे दिया । जब उस नये सारथि ने घोड़ों की रासें सँभाली, तब उन्होंने पुनः शत्रुओं पर धावा किया ।

**यो यो हि प्रमुखे तस्य तस्थौ द्रोणस्य पूरुषः ।**
**तस्य तस्य शिरश्छित्वा ययुर्द्रोणशराः क्षितिम् ॥११॥**

जो-जो वीर द्रोणाचार्य के सम्मुख खड़ा होता, उसी-उसी का सिर काटकर द्रोणाचार्य के बाण धरती में समा जाते थे ।

**ततः समभवद् युद्धमतीव भयवर्धनम् ।**
**त्वदीयानां परेषां च घोरं विजयकांक्षिणाम् ॥१२॥**

फिर तो विजय की पूर्ण अभिलाषा रखनेवाले आपके और शत्रुपक्ष के सैनिकों में भयंकर युद्ध छिड़ गया ।

**ततो युधिष्ठिरः क्रुद्धस्तवानीकमशातयत् ।**
**मिषतः कुम्भयोनेस्तु पुत्राणां तव चानघ ॥१३॥**

निष्पाप राजन् ! उस समय क्रोध में भरे हुए राजा युधिष्ठिर द्रोणाचार्य तथा आपके पुत्रों के देखते-देखते आपकी सेना का विनाश करने लगे ।

सैन्यानि द्रावयन्तं तं द्रोणो दृष्ट्वा युधिष्ठिरम् ।
नोदितस्तव पुत्रेण सायकैरभ्यवाकिरत् ।।१४

द्रोणाचार्य ने युधिष्ठिर को अपनी सेनाओं को खदेड़ते देख आपके पुत्र दुर्योधन से प्रेरित होकर उन-पर बाण-वृष्टि आरम्भ कर दी ।

द्रोणस्तु परमक्रुद्धो वायव्यास्त्रेण पार्थिवम् ।
विव्याध सोऽपि तद् दिव्यमस्त्रमस्त्रेण जघ्निवान् ।।१५

अत्यन्त कुपित हुए द्रोणाचार्य ने वायव्यास्त्र से राजा युधिष्ठिर को बींध डाला । युधिष्ठिर ने भी उनके दिव्यास्त्रों को अपने दिव्यास्त्रों से ही नष्ट कर दिया ।

तस्मिन् विनिहते चास्त्रे भारद्वाजो युधिष्ठिरे ।
वारुणं चिक्षेपाग्नेयं त्वाष्ट्रं सावित्रमेव च ।।१६।।

उस अस्त्र के नष्ट हो जाने पर द्रोणाचार्य ने युधिष्ठिर पर क्रमशः वारुण, आग्नेय, त्वाष्ट्र और सावित्र नामक दिव्य-अस्त्रों से प्रहार किया ।

क्षिप्तानि क्षिप्यमाणानि तानि चास्त्राणि धर्मजः ।
जघानास्त्रैर्महाबाहुः कुम्भयोनेरवित्रसन् ।।१७

परन्तु महाबाहु धर्मपुत्र युधिष्ठिर ने द्रोणाचार्य से तनिक भी भय न खाकर उनके द्वारा चलाये गये और चलाये जानेवाले सभी अस्त्रों को अपने दिव्यास्त्रों से नष्ट कर दिया ।

विहन्यमानेष्वस्त्रेषु द्रोणः क्रोधसमन्वितः ।
युधिष्ठिरवधं प्रेप्सुर्ब्राह्ममस्त्रमुदैरयत् ।।१८।।

उन अस्त्रों के नष्ट हो जाने पर कुपित हुए द्रोणाचार्य ने युधिष्ठिर का वध करने की इच्छा से ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया ।

ततो नाज्ञासिषं किंचिद् घोरेण तमसाऽऽवृते ।
सर्वभूतानि च परं त्रासं जग्मुर्महीपते ।।१९।।

भूपाल ! फिर तो मैं घोर अन्धकार से ढके हुए उस रणक्षेत्र में कुछ भी न जान सका और समस्त प्राणी भयभीत हो उठे ।

ब्रह्मास्त्रमुद्यतं दृष्ट्वा कुन्तीपुत्रो युधिष्ठिरः ।
ब्रह्मास्त्रेणैव राजेन्द्र तदस्त्रं प्रत्यवारयत् ।।२०।।

राजेन्द्र ! ब्रह्मास्त्र को उद्यत देखकर युधिष्ठिर ने ब्रह्मास्त्र से ही उस अस्त्र का निवारण कर दिया ।

ततः सैनिकमुख्यास्ते प्रशशंसुर्नरर्षभौ ।
द्रोणपार्थौ महेष्वासौ सर्वयुद्धविशारदौ ।।२१।।

उस समय प्रधान-प्रधान सैनिक सम्पूर्ण युद्ध-कलाओं में निपुण, महाधनुर्धर नरश्रेष्ठ द्रोणाचार्य और युधिष्ठिर की प्रभूत प्रशंसा करने लगे ।

ततः प्रमुच्य कौन्तेयं द्रोणो द्रुपदवाहिनीम् ।
व्यधमत क्रोधताम्राक्षो वायव्यास्त्रेण भारत ।।२२।।

हे भारत ! अपने अस्त्रों को विफल हुआ देख द्रोणाचार्य ने कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर को छोड़ क्रोध से लाल आँखें किये वायव्यास्त्र के द्वारा द्रुपद की सेना का संहार आरम्भ किया ।

ते हन्यमाना द्रोणेन पाञ्चालाः प्राद्रवन् भयात् ।
पश्यतो भीमसेनस्य पार्थस्य च महात्मनः ।।२३

द्रोणाचार्य की मार खाकर पाञ्चाल सैनिक भीमसेन और महात्मा अर्जुन के देखते-देखते भयभीत होकर भाग खड़े हुए ।

ततः किरीटी भीमश्च सहसा संन्यवर्तताम् ।
महद्भ्यां रथवंशाभ्यां परिगृह्य बलं तदा ।।२४।।

यह देख किरीटधारी अर्जुन और भीमसेन विशाल रथसेनाओं के द्वारा अपनी सेना की रोक-थाम करते हुए सहसा उस ओर लौट पड़े ।

बीभत्सुर्दक्षिणं पार्श्वमुत्तरं च वृकोदरः ।
भारद्वाजं शरौघाभ्यां महद्भ्यामभ्यवर्षताम् ।।२५।।

अर्जुन ने द्रोणाचार्य के दाहिने पार्श्व में और भीमसेन ने बाएँ पार्श्व में बाण-समूह की प्रबल वर्षा आरम्भ कर दी ।

ततः सा भारती सेना वध्यमाना किरीटिना ।
तमसा निद्रया चैव पुनरेव व्यदीर्यत ।।२६।।

उस समय किरीटधारी अर्जुन की मार खाती हुई कौरवी-सेना अन्धकार और निद्रा से पीड़ित हो पुनः तितर-बितर हो गई ।

द्रोणेन वार्यमाणास्ते स्वयं तव सुतेन च ।
नाशक्यन्त महाराज योधा वारयितुं तदा ।।२७।।

महाराज ! द्रोणाचार्य और स्वयं आपके पुत्र दुर्योधन के रोकने पर भी उस समय आपके योद्धा रोके नहीं जा सके ।

इति महाभारते द्रोणपर्वणि पञ्चविंशोऽध्यायः ।।२५।।

# षड्विंशोऽध्यायः

**दुर्योधन तथा कर्ण का वार्तालाप, कृपाचार्य का कर्ण को फटकारना और कर्ण द्वारा उनका अपमान**

सञ्जय उवाच

**उदीर्यमाणं तद् दृष्ट्वा पाण्डवानां महद् बलम् ।**
**अविषह्यं च मन्वानः कर्णं दुर्योधनोऽब्रवीत् ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! पाण्डवों की उस विशाल सेना का जोर बढ़ते देख उसे असह्य मानकर दुर्योधन ने कर्ण से कहा—

**अयं स कालः सम्प्राप्तो मित्राणां मित्रवत्सल ।**
**त्रायस्व समरे कर्ण सर्वान् योधान् महारथान् ॥२॥**

"मित्रवत्सल कर्ण ! इस समय मित्रों के कर्तव्य-पालन का उचित अवसर आया है, अतः तुम मेरे समस्त महारथी योद्धाओं की रणभूमि में रक्षा करो।"

कर्ण उवाच

**परित्रातुमिह प्राप्तो यदि पार्थं पुरन्दरः ।**
**तमप्याशु पराजित्य ततो हन्तास्मि पाण्डवम् ॥३॥**

**कर्ण बोला**—राजन् ! यदि साक्षात् इन्द्र भी यहाँ अर्जुन की रक्षा के लिए आ गये हों तो मैं उन्हें भी शीघ्र परास्त करके पाण्डुपुत्र अर्जुन को अवश्य मार डालूंगा ।

**सत्यं ते प्रतिजानामि समाश्वसिहि भारत ।**
**हन्तास्मि पाण्डुतनयान् पाञ्चालाँश्च समागतान् ॥४॥**

भरतभूषण ! तुम धीरज रखो । मैं तुमसे सच्ची प्रतिज्ञा करके कहता हूँ कि मैं युद्धभूमि में आये हुए पाण्डवों और पाञ्चालों को अवश्य मारूँगा ।

**जयं ते प्रतिदास्यामि वासवस्येव पावकिः ।**
**प्रियं तव मया कार्यमिति जीवामि पार्थिव ॥५॥**

भूपाल ! जैसे अग्निकुमार कार्तिकेय ने तारकासुर का वध करके इन्द्र को विजय प्रदान की थी, उसी प्रकार मैं आज तुम्हें विजय प्रदान करूँगा । मैं तुम्हारा प्रिय करने के लिए ही जीवित हूँ ।

**सर्वेषामेव पार्थानां फाल्गुनो बलवत्तमः ।**
**तस्याममोघां विमोक्ष्यामि शक्तिं शक्रविनिर्मिताम् ॥६॥**

कुन्ती के सभी पुत्रों में अर्जुन ही शक्तिशाली हैं, अतः मैं इन्द्र द्वारा निर्मित और प्रदत्त अमोघ शक्ति को अर्जुन पर ही छोड़ूँगा ।

**तस्मिन् हते महेष्वासे भ्रातरस्तस्य मानद ।**
**तव वश्या भविष्यन्ति वनं यास्यन्ति वा पुनः ॥७॥**

मानद ! महाधनुर्धर अर्जुन के मारे जाने पर उनके सभी भाई तुम्हारे वश में आ जाएँगे अथवा पुनः वन में चले जाएँगे ।

**मयि जीवति कौरव्य विषादं मा कृथाः क्वचित् ।**
**अहं जेष्यामि समरे सहितान् सर्वपाण्डवान् ॥८॥**

कुरुनन्दन ! तुम मेरे जीते-जी कभी विषाद न करो । मैं युद्धभूमि में संगठित होकर आये हुए समस्त पाण्डवों को जीत लूँगा ।

**पाञ्चालान् केकयाँश्चैव वृष्णींश्चापि समागतान् ।**
**बाणौघैः शकलीकृत्य तव दास्यामि मेदिनीम् ॥९॥**

मैं अपने बाणसमूहों द्वारा युद्धभूमि में आये हुए पाञ्चालों, केकयों और वृष्णिवंशियों के भी टुकड़े-टुकड़े करके यह सारी पृथिवी तुम्हें दे दूँगा ।

सञ्जय उवाच

**एवं ब्रुवाणं कर्णं तु कृपः शारद्वतोऽब्रवीत् ।**
**स्मयन्निव महाबाहुः सूतपुत्रमिदं वचः ॥१०॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! इस प्रकार की बातें करते हुए सूतपुत्र कर्ण से शरद्वान् के पुत्र महाबाहु कृपाचार्य ने मुस्कराते हुए-से यह बात कही—

**शोभनं शोभनं कर्ण सनाथः कुरुपुङ्गवः ।**
**त्वया नाथेन राधेय वचसा यदि सिध्यति ॥११॥**

"कर्ण ! वाह-वाह ! राधापुत्र ! यदि बात बनाने से ही कार्य सिद्ध हो जाए, तब तो तुम जैसे सहायक को पाकर कुरुराज दुर्योधन सनाथ हो गये ।

**बहुशः कत्थसे कर्ण कौरवस्य समीपतः ।**
**न तु ते विक्रमः कश्चिद् दृश्यते फलमेव च ॥१२॥**

"कर्ण ! तुम कुरुनन्दन दुर्योधन के पास बहुत बढ़-चढ़कर बातें किया करते हो, परन्तु न तो कभी कोई तुम्हारा पराक्रम देखा जाता है और न उसका कोई फल ही सामने आता है ।

**समागमः पाण्डुसुतैर्दृष्टस्ते बहुशो युधि ।**
**सर्वत्र निर्जितश्चासि पाण्डवैः सूतनन्दन ॥१३॥**

"सूतनन्दन ! पाण्डु के पुत्रों से युद्धस्थल में तुम्हारी अनेकों बार मुठभेड़ हुई है, परन्तु सर्वत्र पाण्डवों से तुम परास्त ही हुए हो।

**ह्रियमाणे तदा कर्ण गन्धर्वैर्धृतराष्ट्रजे।**
**तदायुध्यन्त सैन्यानि त्वमेकोऽग्रेऽपलायिथाः ॥१४॥**

"कर्ण ! जब गन्धर्व दुर्योधन को पकड़कर लिये जा रहे थे, उस समय सारी सेना तो युद्ध कर रही थी और केवल तुम ही सबसे पहले भाग खड़े हुए थे।

**विराटनगरे चापि समेताः सर्वकौरवाः।**
**पार्थेन निर्जिता युद्धे त्वं च कर्ण सहानुजः ॥१५॥**

"कर्ण ! विराटनगर में भी सम्पूर्ण कौरव इकट्ठे हुए थे, किन्तु अर्जुन ने अकेले ही सबको हरा दिया था। तुम भी अपने भाइयों के साथ परास्त हुए थे।

**एकस्याप्यसमर्थस्त्वं फाल्गुनस्य रणाजिरे।**
**कथमुत्सहसे जेतुं सकृष्णान् सर्वपाण्डवान् ॥१६॥**

"रणभूमि में अकेले अर्जुन का सामना करने की भी तुममें शक्ति नहीं है, फिर श्रीकृष्णसहित समस्त पाण्डवों पर विजय पाने का उत्साह कैसे दिखाते हो ?

**अब्रुवन् कर्ण युध्यस्व कत्थसे बहु सूतज।**
**अनुक्त्वा विक्रमेद् यस्तु तद् वै सत्पुरुषव्रतम् ॥१७॥**

"सूतपुत्र कर्ण ! चुपचाप युद्ध करो। तुम बातें बहुत बनाते हो। जो बिना कुछ कहे ही पराक्रम दिखाये, वही वीर है और वैसा करना ही सत्पुरुषों का व्रत है।

**गर्जित्वा सूतपुत्र त्वं शारदाभ्रमिवाफलम्।**
**निष्फलो दृश्यते कर्ण तच्च राजा न बुध्यते ॥१८॥**

"सूतपुत्र कर्ण ! तुम शरद्-ऋतु के निष्फल बादलों के समान गर्जना करके भी निष्फल ही दिखायी देते हो परन्तु राजा दुर्योधन इस बात को समझते नहीं हैं।

**तावद् गर्जस्व राधेय यावत्पार्थं न पश्यसि।**
**आरात् पार्थं हि ते दृष्ट्वा दुर्लभं गर्जितं पुनः ॥१९॥**

"राधापुत्र ! जबतक तुम अर्जुन को नहीं देखते हो, तभी तक गर्जना कर लो। कुन्तीपुत्र अर्जुन को अपने पास देखकर यह गर्जना तुम्हारे लिए दुर्लभ हो जाएगी।

**बाहुभिः क्षत्रियाः शूरा वाग्भिः शूरा द्विजातयः।**
**धनुषा फाल्गुनः शूरः कर्णः शूरो मनोरथैः ॥२०॥**

"क्षत्रिय अपनी भुजाओं से शौर्य का परिचय देते हैं। ब्राह्मण वाणी द्वारा प्रवचन करने में वीर होते हैं। अर्जुन धनुष चलाने में वीर हैं, परन्तु कर्ण केवल मनोरथों में ही वीर है।"

**एवं संरुषितस्तेन तदा शारद्वतेन ह।**
**कर्णः प्रहरतां श्रेष्ठः कृपं वाक्यमथाब्रवीत् ॥२१॥**

शरद्वान् के पुत्र कृपाचार्य के ऐसा कहने पर योद्धाओं में श्रेष्ठ कर्ण ने उस समय रुष्ट होकर उनसे इस प्रकार कहा—

**शूरा गर्जन्ति सततं प्रावृषीव बलाहकाः।**
**फलं चाशु प्रयच्छन्ति बीजमुप्तमृताविव ॥२२॥**

"शूरवीर वर्षाकाल के मेघों की भाँति सदा गर्जते हैं और ठीक ऋतु में बोये हुए बीज के समान शीघ्र ही फल भी देते हैं।

**दोषमत्र न पश्यामि शूराणां रणमूर्धनि।**
**तत्तद् विकत्थमानानां भारं चोद्वहतां मृधे ॥२३॥**

"रणभूमि में महान् भार उठानेवाले शूरवीर यदि युद्ध के मुहाने पर अपनी प्रशंसा की भी बातें करते हैं तो इसमें मुझे उनका कोई दोष दिखाई नहीं देता।

**यं भारं पुरुषो वोढुं मनसा हि व्यवस्यति।**
**दैवमस्य ध्रुवं तत्र साहाय्यायोपपद्यते ॥२४॥**

"पुरुष अपने मन से जिस भार को ढोने का निश्चय करता है, उसमें दैव अवश्य ही उसकी सहायता करता है।

**हन्तुं पाण्डुसुतानाजौ सकृष्णान् सह सात्वतान्।**
**गर्जामि यद्यहं विप्र तव किं तत्र नश्यति ॥२५॥**

"विप्रवर ! मैं कृष्ण और सात्यकिसहित समस्त पाण्डवों को युद्ध में मौत के घाट उतारने का निश्चय करके यदि गर्ज रहा हूँ तो उसमें आपकी क्या हानि हो रही है ?

**वृथा शूरा न गर्जन्ति शारदा इव तोयदाः।**
**पश्य त्वं गर्जितस्यास्य फलं मे विप्र सानुगान् ॥२६॥**
**हत्वा पाण्डुसुतानाजौ सहकृष्णान् ससात्वतान्।**
**दुर्योधनाय दास्यामि पृथिवीं हतकण्टकाम् ॥२७॥**

"विप्रवर ! शरद्-ऋतु के बादलों के समान शूरवीर व्यर्थ नहीं गर्जते हैं। तुम मेरी इस गर्जना का फल देख लेना। मैं युद्ध में श्रीकृष्ण, सात्यकि और अनुगामियोंसहित पाण्डवों को मारकर इस भूमण्डल का निष्कण्टक राज्य दुर्योधन को सौंप दूँगा।"

कृप उवाच

**मनोरथप्रलापा मे न ग्राह्यास्तव सूतज।**
**सदा क्षिपसि वै कृष्णौ धर्मराजं च पाण्डवम् ॥२८॥**

**कृपाचार्य बोले**—सूतपुत्र ! तुम्हारे ये हवाई किले बनाने के निरर्थक प्रलाप मेरे लिए विश्वास के योग्य नहीं हैं। तुम सदा व्यर्थ ही श्रीकृष्ण, अर्जुन और पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर पर आक्षेप किया करते हो।

**ध्रुवस्तत्र जयः कर्ण यत्र युद्धविशारदौ।**
**देवगन्धर्वयक्षाणां अजेयौ कृष्णपाण्डवौ ॥२९॥**

कर्ण ! विजय उसी पक्ष की होगी, जहाँ युद्ध-विशारद श्रीकृष्ण और अर्जुन विद्यमान हैं। यदि देवता, गन्धर्व और यक्ष भी युद्ध के लिए आ जाएँ तो भी वे श्रीकृष्ण और अर्जुन को जीत नहीं सकते।

**ब्राह्मण्यः सत्यवाग् दान्तो गुरुदैवतपूजकः।□**
**धृतिमाँश्च कृतज्ञश्च धर्मपुत्रो युधिष्ठिरः ॥३०॥**

धर्मपुत्र युधिष्ठिर ब्राह्मणभक्त, सत्यवादी, जितेन्द्रिय, गुरु और देवताओं का सम्मान करनेवाले, धैर्यवान् और कृतज्ञ हैं।

**बलिनो भ्रातरश्चास्य सर्वास्त्रेषु कृतश्रमाः।**
**गुरुवृत्तिरताः प्राज्ञा धर्मनित्या यशस्विनः ॥३१॥**

इनके बलवान् भाई भी सम्पूर्ण अस्त्र-शस्त्रों की कला में परिश्रम किये हुए हैं। वे गुरुसेवापरायण, विद्वान्, धर्मतत्पर और यशस्वी हैं।

**कामं खलु जगत् सर्वं सदेवासुरमानुषम्।**
**निःशेषमस्त्रवीर्येण कुर्वाते भीमफाल्गुनौ ॥३२॥**

भीमसेन और अर्जुन यदि चाहें तो अपने अस्त्रबल से देवता, असुर, और मनुष्योंसहित इस सम्पूर्ण जगत् का सर्वनाश कर सकते हैं।

**अप्रमेयबलः शौरिर्येषामर्थे च दंशितः।**
**कथं तान् संयुगे कर्ण जेतुमुत्सहसे परान् ॥३३॥**

कर्ण ! जिनके लिए असीम बलशाली श्रीकृष्ण भी कवच धारण करके लड़ने को तैयार हैं, तुम उन शत्रुओं को युद्ध में जीतने का साहस कैसे कर रहे हो ?

सञ्जय उवाच

**एवमुक्तस्तु राधेयः प्रहसन् भरतर्षभ।**
**अब्रवीच्च तदा कर्णो गुरुं शारद्वतं कृपम् ॥३४॥**

**सञ्जय कहते हैं**—भरतश्रेष्ठ ! उनके ऐसा कहने पर राधापुत्र कर्ण ने हँसते हुए शरद्वान् के पुत्र गुरु कृपाचार्य से उस समय यूँ कहा—

कर्ण उवाच

**सत्यमुक्तं त्वया ब्रह्मन् पाण्डवान् प्रति यद्वचः।**
**एते चान्ये च बहवो गुणाः पाण्डुसुतेषु वै ॥३५॥**

**कर्ण बोला**—विप्रवर ! पाण्डवों के विषय में तुमने जो बात कही है, वह सब सत्य है। यही नहीं, पण्डवों में और भी बहुत-से गुण हैं।

**अजेयाश्च रणे पार्था देवैरपि सवासवैः।**
**तथापि पार्थाञ्जेष्यामि शक्त्या वासवदत्तया ॥३६॥**

यह भी सत्य है कि कुन्तीकुमारों को देवताओं-सहित इन्द्र भी नहीं जीत सकते, तथापि मैं इन्द्र की दी हुई शक्ति से कुन्तीपुत्रों को जीत लूंगा।

**मम ह्यमोघा दत्तेयं शक्तिः शक्रेण वै द्विज।**
**एतया निहनिष्यामि सव्यसाचिनमाहवे ॥३७॥**

ब्रह्मन् ! मुझे इन्द्र ने अमोघ-शक्ति प्रदान की है, इसके द्वारा मैं युद्ध में सव्यसाची अर्जुन को अवश्य मार डालूंगा।

**हते तु पाण्डवे कृष्णे भ्रातरश्चास्य सोदराः।**
**अनर्जुना न शक्ष्यन्ति महीं भोक्तुं कथञ्चन ॥३८॥**

पाण्डुपुत्र अर्जुन के मारे जाने पर उसके बिना उसके सहोदर भाई किसी भी प्रकार इस पृथिवी का राज्य नहीं भोग सकेंगे।

**तेषु नष्टेषु सर्वेषु पृथिवीयं ससागरा।**
**अयत्नात् कौरवेन्द्रस्य वशे स्थास्यति गौतम ॥३९॥**

गौतम ! उन सबके नष्ट हो जाने पर बिना किसी प्रयत्न के ही समुद्रसहित यह सम्पूर्ण पृथिवी कौरव-राज दुर्योधन के अधिकार में हो जाएगी।

**सुनीतैरिह सर्वार्थाः सिध्यन्ते नात्र संशयः।**
**एतमर्थमहं ज्ञात्वा ततो गर्जामि गौतम ॥४०॥**

गौतम ! इस लोक में सुनीतिसञ्चालित प्रयत्नों

से सारे कार्य सिद्ध होते हैं, इसमें संशय नहीं है। इस बात को समझकर ही मैं गर्जना करता हूँ।

**त्वं तु विप्रश्च वृद्धश्च अशक्तश्चापि संयुगे।**
**कृतस्नेहश्च पार्थेषु मोहान्मामवमन्यसे ॥४१॥**

तुम तो ब्राह्मण और उसपर भी वृद्ध हो। तुममें युद्ध करने की शक्ति है ही नहीं। इसके अतिरिक्त तुम कुन्तीकुमारों पर स्नेह रखते हो, अतः मोहवश मेरा अपमान कर रहे हो।

**यद्येवं वक्ष्यसे भूयो ममाप्रियमिह द्विज।**
**ततस्ते खड्गमुद्यम्य जिह्वां छेत्स्यामि दुर्मते ॥४२॥**

दुर्बुद्धि ब्राह्मण! यदि तुम यहाँ पुनः मुझे अप्रिय लगनेवाली ऐसी बात बोलोगे तो मैं अपनी तलवार उठाकर तुम्हारी जीभ काट लूँगा।

**यांस्तान् बलवतो नित्यं मन्यसे त्वं द्विजाधम।**
**यतिष्येऽहं यथाशक्ति योद्धुं तैः सह संयुगे।**
**दुर्योधनहितार्थाय जयो दैवे प्रतिष्ठितः ॥४३॥**

द्विजाधम! तुम जिन्हें सदा बलवान् मानते रहते हो, उन्हीं के साथ मैं रणभूमि में दुर्योधन के हित के लिए यथा-शक्ति युद्ध करने का प्रयत्न करूँगा। विजय तो दैव के अधीन है।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि षड्विंशोऽध्यायः ॥२६॥**

# सप्तविंशोऽध्यायः

**अश्वत्थामा का कर्ण को मारने के लिए उद्यत होना, पाण्डवों द्वारा कर्ण पर आक्रमण और अर्जुन द्वारा कर्ण की पराजय**

सञ्जय उवाच

**तथा परुषितं दृष्ट्वा सूतपुत्रेण मातुलम्।**
**खड्गमुद्यम्य वेगेन द्रौणिरभ्यपतद् द्रुतम् ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! इस प्रकार अपने मामा के प्रति सूतपुत्र को कटु वचन सुनाते देख अश्वत्थामा बड़े वेग से तलवार उठाकर तुरन्त कर्ण पर टूट पड़ा।

अश्वत्थामोवाच

**यदर्जुनगुणांस्तथ्यान् कीर्तयानं नराधम।**
**शूरं द्वेषात् सुदुर्बुद्धे त्वं भर्त्सयसि मातुलम् ॥२॥**
**विकत्थमानः शौर्येण सर्वलोकधनुर्धरम्।**
**दर्पोत्सेधगृहीतोऽद्य न कञ्चिद् गणयन् मृधे ॥३॥**

**अश्वत्थामा बोला**—दुर्बुद्धे! नराधम! मेरे मामा समस्त संसार में श्रेष्ठ धनुर्धर और शूरवीर हैं। ये अर्जुन के सच्चे गुणों का बखान कर रहे थे, तो भी तू द्वेष के कारण अपनी वीरता की डींग हाँकता हुआ तथा अभिमान में भरकर आज युद्ध में किसी को कुछ न समझता हुआ जो इन्हें फटकार रहा है, इसका कारण क्या है?

**क्व ते वीर्यं क्व चास्त्राणि यस्त्वां निर्जित्य संयुगे।**
**गाण्डीवधन्वा हतवान् प्रेक्षतस्ते जयद्रथम् ॥४॥**

जब युद्धभूमि में गाण्डीवधारी अर्जुन ने तुझे परास्त करके तेरे देखते-देखते जयद्रथ को मार डाला था, उस समय तेरा पराक्रम कहाँ था? तेरे वे अस्त्र-शस्त्र कहाँ चले गये थे?

**कर्ण पश्य सुदुर्बुद्धे तिष्ठेदानीं नराधम।**
**एष तेऽद्य शिरः कायादुद्धरामि सुदुर्मते ॥५॥**

दुर्बुद्धे! नराधम कर्ण! तू देख और खड़ा रह। दुर्मते! मैं अभी तेरा सिर धड़ से अलग कर देता हूँ।

सञ्जय उवाच

**तमुद्यतं तु वेगेन राजा दुर्योधनः स्वयम्।**
**न्यवारयन्महातेजाः कृपश्च द्विपदां वरः ॥६॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! इस प्रकार वेगपूर्वक कर्ण को मारने के लिए उद्यत हुए अश्वत्थामा को महातेजस्वी स्वयं राजा दुर्योधन और मनुष्यों में श्रेष्ठ कृपाचार्य ने रोका।

कर्ण उवाच

**शूरोऽयं समरश्लाघी दुर्मतिश्च द्विजाधमः।**
**आसादयतु मद्वीर्यं मुञ्चेमं कुरुसत्तम ॥७॥**

**कर्ण ने कहा**—कुरुश्रेष्ठ! यह दुर्बुद्धि और नीच ब्राह्मण बड़ा शूरवीर बनता है और युद्ध की इच्छा रखता है। तुम इसे छोड़ दो। आज यह मेरे पराक्रम का सामना करे।

अश्वत्थामोवाच

तवैतत् क्षम्यतेऽस्माभिः सूतात्मज सुदुर्मते ।
दर्पमुत्सिक्तमेतत् ते फाल्गुनो नाशयिष्यति ॥८॥

**अश्वत्थामा बोला**—दुर्मते ! सूतपुत्र ! हम लोग तेरे इस अपराध को क्षमा करते हैं । तेरे इस बढ़े हुए अभिमान का नाश अर्जुन करेंगे ।

दुर्योधन उवाच

अश्वत्थामन् प्रसीदस्व क्षन्तुमर्हसि मानद ।
कोपः खलु न कर्तव्यः सूतपुत्रे कथञ्चन ॥९॥

**दुर्योधन ने कहा**—दूसरों को मान देनेवाले अश्वत्थामन् ! प्रसन्न होओ । इन्हें क्षमा कर दो । सूतपुत्र कर्ण पर तुम्हें किसी प्रकार भी क्रोध करना उचित नहीं है ।

त्वयि कर्णे कृपे द्रोणे मद्रराजेऽथ सौबले ।
महत् कार्यं समासक्तं प्रसीद द्विजसत्तम ॥१०॥

हे द्विजश्रेष्ठ ! तुमपर, कर्ण पर, कृपाचार्य, द्रोणाचार्य, मद्रराज शल्य और शकुनि पर महान् कार्यभार रखा गया है, अतः तुम प्रसन्न होओ ।

एते ह्यभिमुखाः सर्वे राधेयेन युयुत्सवः ।
आयान्ति पाण्डवा ब्रह्मन्नाह्वयन्तः समन्ततः ॥११॥

ब्रह्मन् ! ये सामने राधापुत्र कर्ण के साथ युद्ध की अभिलाषा से समस्त पाण्डव-सैनिक सब ओर से ललकारते हुए चले आ रहे हैं ।

सञ्जय उवाच

ततः प्रसाद्यमानस्तु राज्ञा द्रौणिर्महामनाः ।
प्रससाद महाराज क्रोधवेगसमन्वितः ॥१२॥

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज ! दुर्योधन के मनाने पर क्रोध के आवेग से युक्त महामना अश्वत्थामा शान्त एवं प्रसन्न हो गया ।

ततः कृपोऽप्युवाचेदमाचार्यः सुमहामनाः ।
सौम्यस्वभावाद् राजेन्द्र क्षिप्रमागतमार्दवः ॥१३॥

राजेन्द्र ! तदनन्तर सौम्य-स्वभाव के कारण शीघ्र ही कोमलता आ जाने से महामना कृपाचार्य भी शान्त हो गये और इस प्रकार बोले—

कृप उवाच

तवैतत् क्षम्यतेऽस्माभिः सूतात्मज सुदुर्मते ।
दर्पमुत्सिक्तमेतत् ते फाल्गुनो नाशयिष्यति ॥१४॥

**कृपाचार्य बोले**—दुर्बुद्धे ! सूतपुत्र ! हम लोग तो तेरे इस अपराध को क्षमा कर देते हैं, परन्तु अर्जुन तेरे इस बढ़े हुए अभिमान का अवश्य नाश करेंगे ।

सञ्जय उवाच

ततस्ते पाण्डवा राजन् पाञ्चालाश्च यशस्विनः ।
आजग्मुः सहिताः कर्णं तर्जयन्तः समन्ततः ॥१५

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! इतने में ही वे यशस्वी पाण्डव और पाञ्चाल एकत्र होकर गर्जन-तर्जन करते हुए चारों ओर से कर्ण पर चढ़ आये ।

कर्णोऽपि रथिनां श्रेष्ठश्चापमुद्यम्य वीर्यवान् ।
कौरवाग्र्यैः परिवृतः शक्रो देवगणैरिव ॥१६॥
पर्यतिष्ठत तेजस्वी स्वबाहुबलमाश्रितः ।
ततः प्रववृते युद्धं कर्णस्य सह पाण्डवैः ॥१७॥

रथियों में श्रेष्ठ, पराक्रमी तथा तेजस्वी वीर कर्ण भी देवताओं से घिरे हुए इन्द्र के समान प्रधान कौरव वीरों से घिरकर और अपने बाहुबल का भरोसा करके धनुष तानकर युद्ध के लिए खड़ा हो गया । तत्पश्चात् कर्ण के साथ पाण्डवों का भीषण युद्ध आरम्भ हुआ ।

आयान्तं पाण्डवं दृष्ट्वा गजं प्रतिगजो यथा ।
असम्भ्रान्तो रणे कर्णः प्रत्युदीयाद् धनञ्जयम् ॥१८॥

जैसे एक हाथी को आते देख दूसरा हाथी उसका सामना करने के लिए आगे बढ़े, वैसे ही पाण्डुपुत्र अर्जुन को आते देख कर्ण बिना किसी घबराहट के युद्ध में उनका सामने करने के लिए आगे बढ़ा ।

तमापतन्तं वेगेन वैकर्तनमजिह्मगैः ।
छादयामास पार्थोऽथ कर्णस्तु विजयं शरैः ॥१९॥

वेग से धावा करते हुए वैकर्तन कर्ण को अर्जुन ने अपने सीधे जानेवाले बाणों से ढक दिया और कर्ण ने भी अर्जुन को अपने बाणों से आच्छादित कर दिया ।

ततः पार्थो महेष्वासो दृष्ट्वा कर्णस्य विक्रमम् ।
मुष्टिदेशे धनुस्तस्य चिच्छेद त्वरयान्वितः ॥२०॥

फिर तो महाधनुर्धर अर्जुन ने कर्ण का पराक्रम देखकर उसके धनुष को मुट्ठी पकड़ने के स्थान से शीघ्रतापूर्वक काट दिया ।

**अश्वांश्च चतुरो भल्लैरनयद् यमसादनम् ।**
**सारथेश्च शिरः कायादहरच्छत्रुतापनः ॥२१॥**

साथ ही उसके चारों घोड़ों को चार भल्लों द्वारा यमलोक भेज दिया । तत्पश्चात् शत्रु-सन्तापी अर्जुन ने उसके सारथि का सिर भी धड़ से अलग कर दिया ।

**अथैनं छिन्नधन्वानं हताश्वं हतसारथिम् ।**
**विव्याध सायकैः पार्थश्चतुर्भिः पाण्डुनन्दनः ॥२२॥**

धनुष कट जाने और घोड़ों तथा सारथि के मारे जाने पर कर्ण को पाण्डुपुत्र अर्जुन ने चार बाणों द्वारा घायल कर दिया ।

**हताश्वात् तु रथात् तूर्णमवप्लुत्य नरर्षभः ।**
**आरुरोह रथं तूर्णं कृपस्य शरपीडितः ॥२३॥**

जिसके घोड़े मारे गये थे, उस रथ से तुरन्त ही कूदकर बाणपीड़ित कर्ण शीघ्रतापूर्वक कृपाचार्य के रथ पर चढ़ गया ।

**राधेयं निर्जितं दृष्ट्वा तावका भरतर्षभ ।**
**धनञ्जयशरैर्नुन्नाः प्राद्रवन्त दिशो दश ॥२४॥**

भरतभूषण ! राधापुत्र कर्ण को पराजित हुआ देख आपके सैनिक अर्जुन के बाणों से पीड़ित हो दसों दिशाओं में भाग खड़े हुए ।

**द्रवतस्तान् समालोक्य राजा दुर्योधनो नृप ।**
**निवर्तयामास तदा वाक्यमेतदुवाच ह ॥२५॥**

नरेश्वर ! अपने सैनिकों को भागते देख राजा दुर्योधन ने उन्हें लौटाया और उस समय उनसे यह बात कही—

**अलं द्रुतेन वः शूरास्तिष्ठध्वं क्षत्रियर्षभाः ।**
**एष पार्थवधायाहं स्वयं गच्छामि संयुगे ॥२६॥**

"क्षत्रियशिरोमणि शूरवीरो ! ठहरो, तुम्हें भागने की आवश्यकता नहीं है । मैं स्वयं अभी अर्जुन का वध करने के लिए युद्धभूमि में चलता हूँ ।

**जेष्याम्यद्य रणे पार्थं सायकैर्नतपर्वभिः ।**
**तिष्ठध्वं समरे शूरा भयं त्यजत फाल्गुनात् ॥२७॥**

"आज युद्धक्षेत्र में झुकी हुई गाँठवाले बाणों द्वारा मैं अर्जुन को जीत लूंगा । शूरवीरो ! तुम युद्धभूमि में डटे रहो और अर्जुन से भयभीत मत होओ ।"

**इत्युक्त्वा प्रययौ राजा सैन्येन महता वृतः ।**
**फाल्गुनं प्रति दुर्धर्षः क्रोधात् संरक्तलोचनः ॥२८॥**

ऐसा कहकर दुर्धर्ष राजा दुर्योधन ने क्रोध से लाल आँखें करके विशाल सेना के साथ अर्जुन पर धावा बोला ।

**तं प्रयान्तं महाबाहुं दृष्ट्वा शारद्वतस्तदा ।**
**अश्वत्थामानमासाद्य वाक्यमेतदुवाच ह ॥२९॥**

महाबाहु दुर्योधन को अर्जुन के सामने जाते देख शरद्वान् के पुत्र कृपाचार्य ने उस समय अश्वत्थामा के पास पहुँचकर यह बात कही—

**एष राजा महाबाहुरमर्षी क्रोधमूर्च्छितः ।**
**पतङ्गवृत्तिमास्थाय फाल्गुनं योद्धुमिच्छति ॥३०॥**

"यह अमर्षशील महाबाहु राजा दुर्योधन क्रोध के कारण अपनी सुधबुध खो बैठा है और पतङ्गों की वृत्ति का आश्रय ले अर्जुन के साथ युद्ध करना चाहता है ।

**यावन्नः पश्यमानानां प्राणान् पार्थेन संगतः ।**
**न जह्यात् पुरुषव्याघ्रस्तावद् वारय कौरवम् ॥३१॥**

"यह पुरुषसिंह नरेश अर्जुन से भिड़कर हमारे देखते-देखते जबतक अपने प्राणों को त्याग न दे, उससे पूर्व ही तुम जाकर उस कुरुवंशी राजा को रोको ।

**दुर्लभं जीवितं मन्ये कौरव्यस्य किरीटिना ।**
**युध्यमानस्य पार्थेन शार्दूलेनेव हस्तिनः ॥३२॥**

"जैसे सिंह के साथ हाथी के युद्ध में उसका जीवित रहना असम्भव हो जाता है, वैसे ही किरीटधारी कुन्तीपुत्र अर्जुन के साथ युद्ध में जूझने पर कुरुवंशी दुर्योधन के जीवन को मैं दुर्लभ ही मानता हूँ ।"

**मातुलेनैवमुक्तस्तु द्रौणिः शस्त्रभृतां वरः ।**
**दुर्योधनमिदं वाक्यं त्वरितं समभाषत ॥३३॥**

मामा के ऐसा कहने पर शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ द्रोणपुत्र अश्वत्थामा ने तुरन्त ही दुर्योधन के पास जाकर इस प्रकार कहा—

**मयि जीवति गान्धारे न युद्धं गन्तुमर्हसि ।**
**मामनादृत्य कौरव्य तव नित्यं हितैषिणम् ॥३४॥**

"गान्धारीनन्दन ! कुरुकुलभूषण ! मैं सदा तुम्हारा

हित चाहनेवाला हूँ। तुम मेरे जीते-जी मेरा अनादर करके स्वयं युद्ध में न जाओ।

**न हि ते सम्भ्रमः कार्यः पार्थस्य विजयं प्रति।**
**अहमावारयिष्यामि पार्थं तिष्ठ सुयोधन ॥३५॥**

"सुयोधन! अर्जुन पर विजय पाने के सम्बन्ध में तुम्हें किसी प्रकार सन्देह नहीं करना चाहिए। तुम खड़े रहो। मैं अर्जुन को रोकूँगा।"

दुर्योधन उवाच

**आचार्यः पाण्डुपुत्रान् वै पुत्रवत् परिरक्षति।**
**त्वमप्युपेक्षां कुरुषे तेषु नित्यं द्विजोत्तम ॥३६॥**

**दुर्योनध ने कहा**—द्विजश्रेष्ठ! हमारे आचार्य तो अपने पुत्र की भाँति पाण्डवों की रक्षा करते हैं और तुम भी सदा उनकी उपेक्षा ही करते हो।

**मम वा मन्दभाग्यत्वान्मन्दस्ते विक्रमो युधि।**
**धर्मराजप्रियार्थं वा द्रौपद्या वा न विद्म तत् ॥३७॥**

अथवा मेरे दुर्भाग्य से युद्ध में तुम्हारा पराक्रम मन्द पड़ गया है। तुम धर्मराज युधिष्ठिर अथवा द्रौपदी का प्रिय करने के लिए ऐसा करते हो, इसका मुझे पता नहीं।

**धिगस्तु चातिलुब्धं मां यत्कृते सर्वबान्धवाः।**
**सुखार्हाः परमं दुःखं प्राप्नुवन्त्यपराजिताः ॥३८॥**

मुझ लोभी को धिक्कार है, जिसके कारण किसी से पराजित न होनेवाले और सुख भोगने के योग्य मेरे सभी भाई-बन्धु दुःख उठा रहे हैं।

**को हि शस्त्रविदां मुख्यो महेश्वरसमो युधि।**
**शत्रून्न क्षपयेच्छक्तो यो न स्याद् गौतमीसुतः ॥३९॥**

कृपीकुमार अश्वत्थामा के सिवा अन्य कौन ऐसा वीर पुरुष है, जो शस्त्रवेत्ताओं में प्रधान, महादेव के समान पराक्रमी और शक्तिशाली होकर भी युद्ध में शत्रु का नाश नहीं करेगा?

**अश्वत्थामन् प्रसीदस्व नाशयैतान् ममाहितान्।**
**तवास्त्रगोचरे शक्ताः स्थातुं देवा न दानवाः ॥४०॥**

अश्वत्थामन्! प्रसन्न होओ। मेरे इन शत्रुओं का नाश करो। तुम्हारे अस्त्रों के मार्ग में देवता और दानव भी नहीं ठहर सकते।

**पाञ्चालान् सोमकाँश्चैव जहि द्रौणे सहानुगान्।**
**वयं शेषान् हनिष्यामस्त्वयैव परिरक्षिताः ॥४१॥**

द्रोणपुत्र! तुम अनुगामियोंसहित पाञ्चालों और सोमकों को मार डालो, फिर तुम्हीं से सुरक्षित होकर हम लोग अपने शेष शत्रुओं का भी संहार कर डालेंगे।

**गच्छ गच्छ महाबाहो न नः कालात्ययो भवेत्।**
**इयं हि द्रवते सेना पार्थसायकपीडिता ॥४२॥**

महाबाहो! जाओ, जाओ। हमारे इस कार्य में विलम्ब नहीं होना चाहिए। देखो, अर्जुन के बाणों से पीड़ित होकर यह सेना भागी जा रही है।

**शक्तो ह्यसि महाबाहो दिव्येन स्वेन तेजसा।**
**निग्रहे पाण्डुपुत्राणां पाञ्चालानां च मानद ॥४३॥**

दूसरों को मान देनेवाले महाबाहु वीर! तुम अपने दिव्य तेज से पाञ्चालों और पाण्डवों का निग्रह करने में समर्थ हो।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि सप्तविंशोऽध्यायः ॥२७॥**

## अष्टाविंशोऽध्यायः

### अश्वत्थामा का अद्भुत पराक्रम, पाण्डवों की विजय

सञ्जय उवाच

**दुर्योधनेनैवमुक्तो द्रौणिराहवदुर्मदः।**
**प्रत्युवाच महाबाहुस्तव पुत्रमिदं वचः ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! दुर्योधन के ऐसा कहने पर रणदुर्मद महाबाहु अश्वत्थामा ने आपके पुत्र से यह वचन कहा—

अश्वत्थामोवाच

**प्रिया हि पाण्डवा नित्यं मम चापि पितुश्च मे।**
**तथैवावां प्रियौ तेषां न तु युद्धे कुरूद्वह ॥२॥**

**अश्वत्थामा बोला**—कुरुश्रेष्ठ! पाण्डव मुझे तथा मेरे पिता को भी अत्यन्त प्रिय हैं। इसी प्रकार उनको भी हम दोनों पिता-पुत्र प्रिय हैं, परन्तु रणभूमि में

हमारा यह भाव नहीं रहता।

**अहं कर्णश्च शल्यश्च कृपो हार्दिक्य एव च।**
**निमेषात् पाण्डवीं सेनां क्षपयेम नृपोत्तम ॥३॥**

नृपश्रेष्ठ! मैं, कर्ण, शल्य, कृपाचार्य और कृतवर्मा पलक मारते-मारते पाण्डव-सेना का संहार कर सकते हैं।

**ते चापि कौरवीं सेनां निमेषार्धात् कुरूद्वह।**
**क्षपयेयुर्महाबाहो न स्याम यदि संयुगे ॥४॥**

महाबाहु कुरुश्रेष्ठ! यदि रणभूमि में हम लोग न रहें तो पाण्डव भी आधे निमेष में ही सम्पूर्ण कौरव-सेना का संहार कर सकते हैं।

**अशक्या तरसा जेतुं पाण्डवानामनीकिनी।**
**जीवत्सु पाण्डुपुत्रेषु तद्धि सत्यं ब्रवीमि ते ॥५॥**

राजन्! मैं तुमसे सत्य कहता हूँ कि पाण्डवों के जीते-जी उनकी सेना का बलपूर्वक जीतना असम्भव है।

**त्वं तु लुब्धतमो राजन् निकृतिज्ञश्च कौरव।**
**सर्वाभिशङ्की मानी च ततोऽस्मानभिशङ्कसे ॥६॥**

कौरव-नरेश! तुम तो अत्यन्त लोभी और छल-कपट की विद्या को जाननेवाले हो। तुम सबपर सन्देह करनेवाले और अभिमानी हो, अतः हम लोगों पर भी शंका करते हो।

**मन्ये त्वं कुत्सितो राजन् पापात्मा पापपूरुषः।**
**अन्यानपि स नः क्षुद्र शङ्कसे पापभावितः ॥७॥**

राजन्! मैं तुम्हें निन्दित, पापात्मा और पाप-पुरुष समझता हूँ। क्षुद्रनरेश! तुम्हारा अन्तःकरण पापभावना से पूर्ण है, अतः तुम हमपर तथा दूसरों पर भी सन्देह करते हो।

**अहं तु यत्नमास्थाय त्वदर्थे त्यक्तजीवितः।**
**एष गच्छामि संग्रामं त्वत्कृते कुरुनन्दन ॥८॥**

कुरुनन्दन! मैं अभी तुम्हारे लिए अपने जीवन का मोह छोड़कर और विजय के लिए पूर्ण प्रयत्नशील होकर युद्धभूमि में जा रहा हूँ।

**ये मां युद्धेऽभियोत्स्यन्ति तान् हनिष्यामि भारत।**
**न हि ते वीर मोक्ष्यन्ते मद्बाह्वन्तरमागताः ॥९॥**

भारत! जो लोग युद्धभूमि में मेरे साथ युद्ध करेंगे, उन्हें मैं मार डालूँगा। वीर! मेरी भुजाओं के भीतर आकर शत्रुसैनिक जीवित नहीं छूट सकेंगे।

सञ्जय उवाच

**एवमुक्त्वा महाबाहुः पुत्रं दुर्योधनं तव।**
**अभ्यवर्तत युद्धाय त्रासयन् सर्वधन्विनः ॥१०॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! आपके पुत्र दुर्योधन से ऐसा कहकर महाबाहु अश्वत्थामा समस्त धनुर्धरों को त्रास देता हुआ युद्ध के लिए शत्रुओं के सामने डट गया।

**ततोऽब्रवीत्सकैकेयान्पाञ्चालान्गौतमीसुतः।**
**प्रहरध्वमितः सर्वे मम गात्रे महारथाः ॥११॥**

तत्पश्चात् गौतमीनन्दन अश्वत्थामा ने केकयों-सहित पाञ्चालों से कहा—"महारथियो! तुम सब लोग मिलकर मेरे शरीर पर प्रहार करो।"

**एवमुक्तास्तु ते सर्वे शस्त्रवृष्टीरपातयन्।**
**द्रौणिं प्रति महाराज जलं जलधरा इव ॥१२॥**

महाराज! अश्वत्थामा के ऐसा कहने पर वे सभी वीर उसपर उसी प्रकार अस्त्र-शस्त्रों की वर्षा करने लगे, जैसे मेघ पर्वत पर पानी बरसाते हैं।

**तान् निहत्य शरान्द्रौणिर्दश वीरानपोथयत्।**
**प्रमुखे पाण्डुपुत्राणां धृष्टद्युम्नस्य च प्रभो ॥१३॥**

प्रभो! द्रोणपुत्र ने उनके उन बाणों को नष्ट करके उनमें से दस वीरों को पाण्डवों और धृष्टद्युम्न के सामने ही मार गिराया।

**ते हन्यमानाः समरे पाञ्चालाः सोमकास्तथा।**
**परित्यज्य रणे द्रौणिं व्यद्रवन्त दिशो दश ॥१४॥**

युद्धभूमि में मारे जाते हुए पाञ्चाल और सोमक द्रोणपुत्र अश्वत्थामा को छोड़कर दसों दिशाओं में भाग गये।

**तान्दृष्ट्वा द्रवतः शूरान्पाञ्चालाँश्च ससोमकान्।**
**धृष्टद्युम्नो महाराज द्रौणिमभ्यद्रवद् रणे ॥१५॥**

महाराज! शूरवीर पाञ्चालों और सोमकों को भागते देख धृष्टद्युम्न ने समराङ्गण में अश्वत्थामा पर आक्रमण किया।

धृष्टद्युम्न उवाच

**आचार्यपुत्र दुर्बुद्धे किमन्यैर्निहतैस्तव।**
**समागच्छ मया सार्धं निहनिष्यामि त्वामहम् ॥१६॥**

**धृष्टद्युम्न बोला**—खोटी बुद्धिवाले आचार्यपुत्र!

दूसरों को मारने से तुम्हें क्या लाभ ? रणभूमि में मेरे साथ भिड़ जाओ, मैं तुम्हें मार डालूँगा।

सञ्जय उवाच

**ततस्तमाचार्यसुतं धृष्टद्युम्नः प्रतापवान्।**
**मर्मभिद्भिः शरैस्तीक्ष्णैर्जघान भरतर्षभ ॥१७॥**

**सञ्जय कहते हैं**—भरतभूषण ! ऐसा कहकर प्रतापी धृष्टद्युम्न ने मर्मभेदी एवं तीखे तीरों द्वारा आचार्यपुत्र को घायल कर दिया।

**सोऽतिविद्धो भृशं क्रुद्धः पदाक्रान्त इवोरगः।**
**मानी द्रौणिरसम्भ्रान्तो बाणपाणिरभाषत ॥१८॥**

उन बाणों से अत्यन्त घायल होकर स्वाभिमानी द्रोणपुत्र पैर से कुचले गये सर्प के समान अत्यन्त कुपित हो उठा और हाथ में बाण लेकर संभ्रमरहित हो इस प्रकार बोला—

**धृष्टद्युम्न स्थिरो भूत्वा मुहूर्तं प्रतिपालय।**
**यावत् त्वां निशितैर्बाणैः प्रेषयामि यमक्षयम् ॥१९॥**

"धृष्टद्युम्न ! स्थिर होकर दो घड़ी और प्रतीक्षा कर लो, तबतक मैं तुम्हें अपने तीखे तीरों द्वारा यमलोक भेज देता हूँ।"

**द्रौणिरेवमथाभाष्य पार्षतं परवीरहा।**
**छादयामास बाणौघैः समन्ताल्लघुहस्तवत् ॥२०॥**

शूरवीरों का संहार करनेवाले अश्वत्थामा ने ऐसा कहकर शीघ्रतापूर्वक हाथ चलानेवाले कुशल योद्धा की भाँति अपने बाण-समूह द्वारा धृष्टद्युम्न को सब ओर से ढक दिया।

**स छाद्यमानः समरे द्रौणिना राजसत्तम।**
**सर्वपाञ्चालसेनाभिः संवृतो रथसत्तमः ॥२१॥**
**नाकम्पत महाबाहुः स्ववीर्यं समुपाश्रितः।**
**सायकांश्चैव विविधानश्वत्थाम्नि मुमोच ह ॥२२॥**

नृपश्रेष्ठ ! युद्धभूमि में अश्वत्थामा के द्वारा आच्छादित होने पर भी समस्त पाञ्चाल सेनाओं से घिरे हुए महारथी महाबाहु धृष्टद्युम्न कम्पित नहीं हुए। उन्होंने अपने बल-पराक्रम का आश्रय लेकर अश्वत्थामा पर नाना प्रकार के बाणों का प्रहार किया।

**नृत्यमानाविव रणे मण्डलीकृतकार्मुकौ।**
**परस्परवधे यत्तौ सर्वभूतभयंकरौ ॥२३॥**

उस युद्धभूमि में धनुष को मण्डलाकार करके वे दोनों नृत्य-सा कर रहे थे। एक-दूसरे के वध के लिए तत्पर होकर वे समस्त प्राणियों के लिए भयंकर बन गये थे।

**ततो द्रौणिर्महाराज पार्षतस्य महात्मनः।**
**ध्वजं धनुस्तथा छत्रमुभौ च पार्ष्णिसारथी।**
**सूतमश्वांश्च चतुरो निहत्याभ्यद्रवद् रणे ॥२४॥**

महाराज ! लड़ते-लड़ते द्रोणपुत्र अश्वत्थामा ने महामना धृष्टद्युम्न के ध्वज, धनुष, छत्र, दोनों पार्श्वरक्षक, सारथि और चारों घोड़ों को नष्ट करके उस युद्ध में बड़े वेग से आक्रमण किया।

**पाञ्चालांश्चैव तान् सर्वान् बाणैः संनतपर्वभिः।**
**व्यद्रावयदमेयात्मा शतशोऽथ सहस्रशः ॥२५॥**

अपरिमित आत्मबल से सम्पन्न अश्वत्थामा ने झुकी हुई गाँठवाले सैकड़ों और सहस्रों बाणों द्वारा उन समस्त पाञ्चालों को दूर भगा दिया।

**स जित्वा समरे शत्रून् द्रोणपुत्रो महारथः।**
**ननाद सुमहानादं तपान्ते जलदो यथा ॥२६॥**

इस प्रकार रणभूमि में शत्रुओं को जीतकर महरथी द्रोणपुत्र वर्षाकाल के मेघ के समान जोर-जोर से सिंहनाद करने लगे।

**ततो युधिष्ठिरश्चैव भीमसेनश्च पाण्डवः।**
**द्रोणपुत्रं महाराज समन्तात् पर्यवारयन् ॥२७॥**

महाराज ! उस समय पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर और भीमसेन ने द्रोणपुत्र अश्वत्थामा को चारों ओर से घेर लिया।

**ततो दुर्योधनो राजा भारद्वाजेन संवृतः।**
**अभ्ययात् पाण्डवान् संख्ये ततो युद्धमवर्तत ॥२८॥**

यह देख द्रोणाचार्य की सेना से घिरे हुए राजा दुर्योधन ने भी रणभूमि में पाण्डवों पर आक्रमण किया, इस प्रकार वहाँ भयंकर युद्ध छिड़ गया।

**वर्तमाने तथा युद्धे घोररूपे भयावहे।**
**तमसा संवृते लोके रजसा च महीपते ॥२९॥**
**नापश्यन्त रणे योद्धाः परस्परमवस्थिताः।**
**अनुमानेन संज्ञाभिर्युद्धं तद् ववृधे महत् ॥३०॥**

जिस समय वह घोर युद्ध चल रहा था, उस समय सम्पूर्ण प्रदेश अन्धकार और धूल से आच्छादित

था, अतः रणभूमि में खड़े योद्धा एक-दूसरे को देख नहीं पाते थे। वह महान् युद्ध अनुमान से तथा नाम अथवा संकेतों द्वारा चलता हुआ उत्तरोत्तर बढ़ता जा रहा था।

**नरनागाश्वमथनं परमं लोमहर्षणम्।**
**अन्योन्यं क्षोभयामासुः सैन्यानि नृपसत्तम ॥३१॥**

नृपश्रेष्ठ! उस समय अत्यन्त रोमाञ्चकारी युद्ध हो रहा था। उसमें मनुष्य, हाथी और घोड़े मथे जा रहे थे। कौरव-पाण्डव एक-दूसरे की सेनाओं में हलचल मचाये हुए थे।

**वध्यमानानि सैन्यानि समन्तात् तैर्महारथैः।**
**तमसा संवृते चैव समन्ताद् विप्रदुद्रुवुः ॥३२॥**

उन महारथियों द्वारा उस अन्धकाराच्छन्न प्रदेश में सब ओर से मारी जाती हुई सेनाएँ चारों ओर भागने लगीं।

धृतराष्ट्र उवाच

**तेषां संलोडचमानानां पाण्डवैर्विहतौजसाम्।**
**अन्धे तमसि मग्नानामासीत् किं वो मनस्तदा ॥३३॥**

**धृतराष्ट्र ने पूछा**—सञ्जय! जिस समय तुम लोग अन्धकार में डूबे हुए थे और पाण्डव तुम्हारे बल एवं पराक्रम को नष्ट करके तुम्हें मथ रहे थे, उस समय तुम्हारी और पाण्डवों की मनोदशा कैसी थी?

**कथं प्रकाशस्तेषां वा मम सैन्यस्य वा पुनः।**
**बभूव लोके तमसा तथा सञ्जय संवृते ॥३४॥**

सञ्जय! जब सारा संसार अन्धकार से ढका हुआ था, उस समय पाण्डवों को अथवा मेरी सेना को प्रकाश कैसे प्राप्त हुआ?

सञ्जय उवाच

**ततः सर्वाणि सैन्यानि हतशिष्टानि यानि वै।**
**सेनागोप्तॄनथादिश्य पुनर्व्यूहमकल्पयत् ॥३५॥**

**सञ्जय ने कहा**—राजन्! उस समय जितनी सेनाएँ मरने से बची हुई थीं, उन सबको तथा सेनापतियों को आदेश देकर दुर्योधन ने उनका पुनः व्यूह-निर्माण कराया।

**द्रोणः पुरस्ताज्जघने तु शल्यो**
**द्रौणिस्तथा पार्श्वतः सौबलश्च।**
**स्वयं तु सर्वाणि बलानि राजन्**
**राजाभ्ययाद् गोपयन् वै निशायाम् ॥३६॥**

राजन्! उस व्यूह के अग्रभाग में द्रोणाचार्य, मध्यभाग में शल्य तथा पार्श्वभाग में अश्वत्थामा और शकुनि थे। स्वयं राजा दुर्योधन उस रात्रि के समय सम्पूर्ण सेनाओं की रक्षा करता हुआ युद्ध के लिए आगे बढ़ रहा था।

**उवाच सर्वांश्च पदातिसंघान्**
**दुर्योधनः पार्थिव सान्त्वपूर्वम्।**
**उत्सृज्य सर्वे परमायुधानि**
**गृह्णीत हस्तैर्ज्वलितान् प्रदीपान् ॥३७॥**

हे भूपाल! उस समय दुर्योधन ने समस्त पैदल सैनिकों से सान्त्वनापूर्ण वचनों में कहा—"वीरो! तुम लोग उत्तम आयुध छोड़कर अपने हाथों में जलती हुई मशालें ले लो।"

**ते नोदिताः पार्थिवसत्तमेन**
**ततः प्रहृष्टा जगृहुः प्रदीपान्।**
**रथे रथे पञ्च प्रदीपकास्तु**
**प्रदीपकास्तत्र गजे त्रयश्च ॥३८॥**
**प्रत्यश्वमेकश्च महाप्रदीपः**
**कृतास्तु तैः पाण्डवैः कौरवेयैः**
**क्षणेन सर्वे विहिताः प्रदीपा**
**व्यादीपयन्तो ध्वजिनीं तवाशु ॥३९॥**

नृपश्रेष्ठ दुर्योधन की आज्ञा पाकर उन पैदल सैनिकों ने बड़े हर्ष के साथ हाथों में मशालें ले लीं। एक-एक रथ के पास पाँच-पाँच मशालें थीं। प्रत्येक हाथी के साथ तीन-तीन प्रदीप जलते थे। प्रत्येक घोड़े के साथ एक महाप्रदीप की व्यवस्था की गई थी। पाण्डवों और कौरवों द्वारा इस प्रकार व्यवस्थापूर्वक जलाये गये समस्त प्रदीप क्षणभर में आपकी सारी सेना को प्रकाशित करने लगे।

**प्रकाशिते तदा लोके रजसा तमसाऽऽवृते।**
**समाजग्मुरथो वीराः परस्परवधैषिणः ॥४०॥**

उस समय धूल और अन्धकार से ढकी हुई युद्ध-भूमि में इस प्रकार उजाला होने पर एक-दूसरे के वध की इच्छावाले वीर सैनिक आपस में भिड़ गये।

**तव बलं नृपश्रेष्ठ वध्यमानं तदा निशि।**
**प्रदुद्राव दिशः सर्वा वीक्षमाणं भयार्दितम् ॥४१॥**

नृपश्रेष्ठ! उस समय रात्रि में पाण्डवों द्वारा मारी जाती हुई आपकी सेना भय से पीड़ित हो सम्पूर्ण दिशाओं की ओर देखती हुई भाग चली।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि अष्टाविंशोऽध्यायः ॥२८॥**

# एकोनत्रिंशोऽध्यायः

## द्रोणाचार्य और कर्ण द्वारा घोर युद्ध

सञ्जय उवाच

**विद्रुतं स्वबलं दृष्ट्वा वध्यमानं महात्मभिः ।**
**क्रोधेन महताऽऽविष्टः पुत्रस्तव विशाम्पते ॥१॥**
**अभ्येत्य सहसा कर्णं द्रोणं च जयतां वरम् ।**
**अमर्षवशमापन्नो वाक्यज्ञो वाक्यमब्रवीत् ॥२॥**

**सञ्जय कहते हैं**—नरेश्वर ! अपनी सेना को उन महामनस्वी वीरों की मार खाकर भागती देख आपके पुत्र दुर्योधन को महान् क्रोध हुआ । वाक्पटु दुर्योधन ने सहसा विजयी वीरों में श्रेष्ठ कर्ण और द्रोणाचार्य के पास जाकर अमर्ष के वशीभूत हो इस प्रकार कहा—

**भवद्भ्यामिह संग्रामः क्रुद्धाभ्यां सम्प्रवर्तितः ।**
**आहवे निहतं दृष्ट्वा सैन्धवं सव्यसाचिना ॥३॥**

"सव्यसाची अर्जुन द्वारा रणभूमि में सिन्धुराज जयद्रथ को मारा गया देख क्रोध में भरे हुए आप दोनों वीरों ने यहाँ रात्रि के समय इस युद्ध को जारी रखा था ।

**निहन्यमानां शत्रूणां बलेन मम वाहिनीम् ।**
**भूत्वा तद्विजये शक्तावशक्ताविव पश्यतः ॥४॥**

"परन्तु इस समय पाण्डव-सेना द्वारा मेरी विशाल वाहिनी का संहार हो रहा है और आप लोग उसे जीतने में समर्थ होकर भी असमर्थ की भाँति देख रहे हैं ।

**यद्यहं भवतोस्त्याज्यो न वाच्योऽस्मि तदैव हि ।**
**आवां पाण्डुसुतान् संख्ये जेष्याव इति मानदौ ॥५॥**

"दूसरों को मान देनेवाले वीरो ! यदि आप लोग मुझे त्याग देना ही उचित समझते थे तो आपको उस समय मुझसे यह नहीं कहना चाहिए था कि 'हम पाण्डवों को युद्ध में जीत लेंगे ।'

**यदि नाहं परित्याज्यो भवद्भ्यां पुरुषर्षभौ ।**
**युध्यतामनुरूपेण विक्रमेण सुविक्रमौ ॥६॥**

"अत्यन्त पराक्रमी पुरुषप्रवर वीरो ! यदि आप मुझे त्याग देना न चाहते हों तो अपने अनुरूप पराक्रम प्रकट करते हुए युद्ध कीजिए ।"

**वाक्प्रतोदेन तौ वीरौ प्रणुन्नौ तनयेन ते ।**
**प्रावर्तयेतां संग्रामं घट्टिताविव पन्नगौ ॥७॥**

इस प्रकार जब आपके पुत्र ने अपने वचनरूपी चाबुक से उन दोनों वीरों को पीड़ित किया, तब उन्होंने कुचले हुए सर्पों की भाँति क्रुद्ध हो पुनः घोर युद्ध आरम्भ किया ।

**ततस्तौ रथिनां श्रेष्ठौ सर्वलोकधनुर्धरौ ।**
**शैनेयप्रमुखान् पार्थानभिदुद्रुवतू रणे ॥८॥**

सम्पूर्ण लोकों में विख्यात धनुर्धर, रथियों में श्रेष्ठ उन द्रोणाचार्य और कर्ण ने युद्धभूमि में पुनः सात्यकि आदि पाण्डव महारथियों पर आक्रमण किया ।

**तत्र द्रोणोऽहरत् प्राणान् क्षत्रियाणां विशाम्पते ।**
**रश्मिभिर्भास्करो राजंस्तमांसीव समन्ततः ॥९॥**

नरेश्वर ! जैसे सूर्य अपनी किरणों द्वारा चारों ओर के अन्धकार को नष्ट कर देता है, उसी प्रकार द्रोणाचार्य वहाँ क्षत्रियों के प्राण लेने लगे ।

**द्रोणेन वध्यमानानां पञ्चालानां विशाम्पते ।**
**शुश्रुवे तुमुलः शब्दः क्रोशतामितरेतरम् ॥१०॥**

प्रजेश्वर ! द्रोणाचार्य की मार खाकर परस्पर चीखते-चिल्लाते हुए पाञ्चालों का घोर आर्तनाद सुनाई देने लगा ।

**सा तथा पाण्डवी सेना पीड्यमाना महात्मना ।**
**निशि सम्प्राद्रवद् राजन्नुत्सृज्योल्काः सहस्रशः ॥११॥**

राजन् ! महामना द्रोणाचार्य द्वारा इस प्रकार पीड़ित हुई वह पाण्डव-सेना उस रात्रि के समय सहस्रों मशालें फेंक-फेंककर भाग खड़ी हुई ।

**द्रवमाणं तु तत्सैन्यं द्रोणकर्णौ महारथौ ।**
**जघ्नतुः पृष्ठतो राजन् किरन्तौ सायकान्बहून् ॥१२॥**

राजन् ! महारथी द्रोणाचार्य और कर्ण बहुत-से बाणों की वर्षा करते हुए उस भागती हुई पाण्डव सेना को पीछे से मार रहे थे ।

**तां तु विद्रवतीं दृष्ट्वा ऊचतुः केशवार्जुनौ ।**
**मा विद्रवत वित्रस्ता भयं त्यजत पाण्डवाः ॥१३॥**

अपनी सेना को भागती देख श्रीकृष्ण और अर्जुन ने उससे कहा—"पाण्डव वीरो ! भयभीत होकर भागो मत । भय छोड़ो ।"

**तयोः संवदतोरेवं भीमकर्मा महाबलः ।**
**आयाद् वृकोदरः शीघ्रं पुनरावर्त्य वाहिनीम् ॥१४॥**

वे दोनों इस प्रकार अपनी सेना से बातें कर ही रहे थे कि भयंकर कर्म करनेवाले महाबली भीम पुनः अपनी सेना को लौटाकर शीघ्र वहाँ आ पहुँचे ।

**वृकोदरमथायान्तं दृष्ट्वा तत्र जनार्दनः ।**
**पुनरेवाब्रवीद् राजन् हर्षयन्निव पाण्डवम् ॥१५॥**

राजन् ! भीमसेन को वहाँ आते देख श्रीकृष्ण पाण्डुपुत्र अर्जुन का हर्ष बढ़ाते हुए-से पुनः इस प्रकार बोले—

**एष भीमो रणश्लाघी वृतः सोमकपाण्डवैः ।**
**अभ्यवर्तत वेगेन द्रोणकर्णौ महारथौ ॥१६॥**

"ये युद्ध की अभिलाषा रखनेवाले भीमसेन सोमक और पाण्डव योद्धाओं से घिरकर महारथी द्रोण और कर्ण का सामना करने के लिए बड़े वेग से बढ़े आ रहे हैं ।

**एतेन सहितो युद्धच पाञ्चालैश्च महारथैः ।**
**आश्वासनार्थं सैन्यानां सर्वेषां पाण्डनन्दन ॥१७॥**

"पाण्डुनन्दन ! इनके और पाञ्चाल महारथियों के साथ रहकर तुम अपनी सारी सेनाओं को सान्त्वना देने के लिए यहाँ युद्ध करो ।"

**ततस्तौ पुरुषव्याघ्रावुभौ माधवपाण्डवौ ।**
**द्रोणकर्णौ समासाद्याधिष्ठितौ रणमूर्धनि ॥१८॥**

तब वे दोनों पुरुषसिंह श्रीकृष्ण और अर्जुन युद्ध के मुहाने पर द्रोणाचार्य और कर्ण के सामने जाकर खड़े हो गये ।

**ततस्तत् पुनरावृत्तं यौधिष्ठिरबलं महत् ।**
**ततो द्रोणश्च कर्णश्च परान् ममृदतुर्युधि ॥१९॥**

जब युधिष्ठिर की विशाल सेना पुनः लौट आई, तब द्रोणाचार्य और कर्ण युद्धभूमि में शत्रुओं को पुनः रौंदने लगे ।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि एकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥२९॥**

## त्रिंशोऽध्यायः

### श्रीकृष्ण और अर्जुन का घटोत्कच को कर्ण के साथ युद्ध के लिए भेजना

सञ्जय उवाच

**ततः कर्णो रणे दृष्ट्वा पार्षतं परवीरहा ।**
**आजघानोरसि शरैर्दशभिर्मर्मभेदिभिः ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—हे राजन् ! युद्ध करते-करते शत्रुवीरों का संहार करनेवाले कर्ण ने युद्धभूमि में धृष्टद्युम्न को उपस्थित देख उनकी छाती में दस मर्मभेदी बाण मारे ।

**प्रतिविव्याध तं तूर्णं धृष्टद्युम्नोऽपि मारिष ।**
**दशभिः सायकैर्हृष्टस्तिष्ठ तिष्ठेति चाब्रवीत् ॥२॥**

आर्य ! तब धृष्टद्युम्न ने भी हर्ष और उत्साह में भरकर दस बाणों द्वारा तुरन्त ही कर्ण को घायल करके बदला चुकाया और कहा—"खड़ा रह, खड़ा रह ।"

**ततः पाञ्चालमुख्यस्य धृष्टद्युम्नस्य संयुगे ।**
**सारथिं चतुरश्चाश्वान् कर्णो विव्याध सायकैः ॥३॥**

फिर तो समराङ्गण में कर्ण ने भी अपने बाणों द्वारों पाञ्चाल देश के प्रमुख वीर धृष्टद्युम्न के सारथि और चारों घोड़ों को घायल कर दिया ।

**कार्मुकप्रवरं चापि प्रचिच्छेद शितैः शरैः ।**
**सारथिं चास्य भल्लेन रथनीडादपातयत् ॥४॥**

इतना ही नहीं, उसने अपने तीखे तीरों से धृष्टद्युम्न के श्रेष्ठ धनुष को भी काट दिया तथा एक भल्ल मारकर उसके सारथि को भी रथ की बैठक से नीचे गिरा दिया ।

**दृष्ट्वा तं निर्जितं युद्धे पाञ्चालाः सोमकैःसह ।**
**प्रययुः कर्णमुद्दिश्य मृत्युं कृत्वा निवर्तनम् ॥५॥**

युद्ध में धृष्टद्युम्न को परास्त हुआ देख पाञ्चाल और सोमक मृत्यु को ही युद्ध से निवृत्त होने की अवधि निश्चित करके कर्ण की ओर चल दिये ।

**लब्धलक्ष्यस्तु राधेयः पाञ्चालानां महारथान् ।**
**अभ्यपीडयदायस्तः शरैर्मेघ इवाचलम् ॥६॥**

राधापुत्र कर्ण का निशाना अचूक था । जैसे मेघ किसी पर्वत पर जल की धारा गिराता है, वैसे ही वह प्रयत्नपूर्वक बाणों की वर्षा करके पाञ्चाल-महारथियों को पीड़ा देने लगा ।

**सा पीड्यमाना कर्णेन पाञ्चालानां महाचमूः ।**
**सम्प्राद्रवत् सुसंत्रस्ता सिंहेनेवार्दिता मृगी ॥७॥**

कर्ण द्वारा पीड़ित पाञ्चालों की वह विशाल वाहिनी सिंह से सतायी गई हरिणी की भाँति अत्यन्त भयभीत होकर वेगपूर्वक भागने लगी ।

**ततो युधिष्ठिरो राजा स्वसैन्यं प्रेक्ष्य विद्रुतम् ।**
**अपयाने मनः कृत्वा फाल्गुनं वाक्यमब्रवीत् ॥८॥**

उस समय युधिष्ठिर ने अपनी सेना को भागते देख स्वयं भी रणभूमि से हट जाने का विचार करके अर्जुन से इस प्रकार कहा—

**पश्य कर्णं महेश्वासं धनुष्पाणिमवस्थितम् ।**
**निशीथे दारुणे काले तपन्तमिव भास्करम् ॥९॥**

"पार्थ ! महाधनुर्धर कर्ण को देखो । वह हाथ में धनुष लिये खड़ा है और इस भयंकर आधी रात के समय भी सूर्य के समान तप रहा है ।

**यथा विसृजतश्चास्य संदधानस्य चाशुगान् ।**
**पश्यामि नान्तरं पार्थ क्षपयिष्यति नो ध्रुवम् ॥१०॥**

"कर्ण कब तीरों को कमान पर चढ़ाता है और कब उन्हें छोड़ता है, इसमें तनिक भी अन्तर मुझे दिखाई नहीं देता । प्रतीत होता है यह निश्चय ही हमारी सेना का संहार कर डालेगा ।

**यदत्रानन्तरं कार्यं प्राप्तकालं च पश्यसि ।**
**कर्णस्य वधसंयुक्तं तत् कुरुष्व धनञ्जय ॥११॥**

"धनञ्जय ! अब यहाँ कर्ण के वध के सम्बन्ध में तुम्हें जो समयोचित कर्तव्य दिखाई देता हो, उसे करो ।"

**एवमुक्तो महाराज पार्थः कृष्णमथाब्रवीत् ।**
**भीतः कुन्तीसुतो राजा राधेयस्याद्य विक्रमात् ॥१२॥**

महाराज ! युधिष्ठिर के ऐसा कहने पर अर्जुन ने श्रीकृष्ण से कहा—'प्रभो ! आज कुन्तीकुमार राजा युधिष्ठिर राधापुत्र कर्ण के पराक्रम से भयभीत हो गये हैं ।

**एवं गते प्राप्तकालं कर्णानीके पुनः पुनः ।**
**भवान् व्यवस्यतु क्षिप्रं द्रवते हि वरूथिनी ॥१३॥**

"ऐसी दशा में कर्ण की सेना के प्रति हमारा जो समयोचित कर्तव्य हो, उसका आप शीघ्र निश्चय करें, क्योंकि हमारी सेना बारम्बार भाग रही है ।

**स भवाँस्तत्र यात्वाशु यत्र कर्णो महारथः ।**
**अहमेनं हनिष्यामि मां वैष मधुसूदन ॥१४॥**

"मधुसूदन ! आप शीघ्र वहीं चलिए, जहाँ महारथी कर्ण है । आज मैं इसे मार डालूँगा अथवा वह मुझे मार डालेगा ।"

वासुदेव उवाच

**न तु तावदहं मन्ये प्राप्तकालं तवानघ ।**
**समागमं महाबाहो सूतपुत्रेण संयुगे ॥१५॥**

**श्रीकृष्ण बोले**—निष्पाप महाबाहु अर्जुन ! इस समय युद्धभूमि में सूत्रपुत्र कर्ण के साथ तुम्हारा युद्ध करना मैं उचित नहीं समझता ।

**दीप्यमाना महोल्केव तिष्ठत्यस्य हि वासवी ।**
**त्वदर्थं हि महाबाहो सूतपुत्रेण संयुगे ॥१६॥**

क्योंकि उसके पास इन्द्र द्वारा प्रदत्त प्रज्वलित महोल्का के समान प्रकाशित होनेवाली शक्ति है । महाबाहो ! सूतपुत्र ने इसे तुम्हारे ऊपर प्रयोग करने के लिए ही रखा हुआ है ।

**घटोत्कचस्तु राधेयं प्रत्युद्यातु महाबलः ।**
**तस्मिन्नस्त्राणि दिव्यानि राक्षसान्यासुराणि च ॥१७॥**

मेरी सम्मति में इस समय महाबली घटोत्कच ही राधापुत्र कर्ण का साम्मुख्य करने के लिए जाए । उसके पास राक्षस-सम्बन्धी और असुर-सम्बन्धी सभी प्रकार के दिव्य अस्त्र-शस्त्र हैं ।

**सततं चानुरक्तो वो हितैषी च घटोत्कचः ।**
**विजेष्यति रणे कर्णमिति मे नात्र संशयः ॥१८॥**

घटोत्कच तुम लोगों का हितैषी है और सदा तुम्हारे प्रति अनुराग रखता है । वह युद्ध-भूमि में कर्ण को जीत लेगा, इसमें मुझे सन्देह नहीं है ।

सञ्जय उवाच

**एवमुक्तो महाबाहुः पार्थः पुष्करलोचनः ।**
**आजुहावाथ तद् रक्षस्तच्चासीत् प्रादुरग्रतः ॥१९॥**

**सञ्जय कहते हैं**—श्रीकृष्ण के ऐसा कहने पर कमलनयन अर्जुन ने राक्षस घटोत्कच को बुलाया और वह तत्काल उनके समक्ष उपस्थित हो गया।

**कवची सशरः खड्गी सधन्वा च विशाम्पते।**
**अभिवाद्य ततः कृष्णं पाण्डवं च धनञ्जयम्।**
**अब्रवीत्तं तदा हृष्टस्त्वयमस्म्यनुशाधि माम् ॥२०॥**

प्रजेश्वर! उसने कवच, धनुष, बाण और तलवार धारण कर रखी थी। वह श्रीकृष्ण और पाण्डुपुत्र धनञ्जय को प्रणाम करके उस समय श्रीकृष्ण से बोला—प्रभो! मैं सेवा में उपस्थित हूँ। मुझे आज्ञा दीजिए, मैं क्या करूँ।

वासुदेव उवाच

**घटोत्कच विजानीहि यत् त्वां वक्ष्यामि पुत्रक।**
**प्राप्तो विक्रमकालोऽयं तव नान्यस्य कस्यचित् ॥२१॥**

**श्रीकृष्ण बोले**—बेटा घटोत्कच! मैं तुमसे जो कुछ कहा रहा हूँ, उसे सुनो और समझो। यह तुम्हारे लिए ही पराक्रम दिखाने का अवसर प्राप्त हुआ है, दूसरे किसी के लिए नहीं।

**स भवान् मज्जमानानां बन्धूनां त्वं प्लवो भव।**
**विविधानि तवास्त्राणि सन्ति माया च राक्षसी ॥२२॥**

तुम्हारे ये बन्धु विपत्ति के सागर में डूब रहे हैं, तुम इनके लिए नौका बन जाओ। तुम्हारे पास नाना प्रकार के अस्त्र-शस्त्र हैं, साथ ही तुममें राक्षसी माया का बल भी है।

**पश्य कर्णेन हैडिम्बे पाण्डवानामनीकिनी।**
**काल्यमाना यथा गावः पालेन रणमूर्धनि ॥२३॥**

हिडिम्बानन्दन! देखो! जैसे चरवाहा गायों को हाँकता है, उसी प्रकार युद्ध के मुहाने पर खड़ा हुआ कर्ण पाण्डवों की इस विशाल सेना को खदेड़ रहा है।

**एतस्यैवं प्रवृद्धस्य सूतपुत्रस्य संयुगे।**
**निषेद्धा विद्यते नान्यस्त्वामृते भीमविक्रम ॥२४॥**

भयंकर पराक्रमी वीर! इस रणभूमि में तुम्हें छोड़कर दूसरा ऐसा कोई योद्धा नहीं है, जो इस प्रकार आगे बढ़नेवाले कर्ण को रोक सके।

**स त्वं कुरु महाबाहो कर्म युक्तमिहात्मनः।**
**मातुलानां पितॄणां च तेजसोऽस्त्रबलस्य च ॥२५॥**

महाबाहो! तुम अपने पिता, मामा, तेज, अस्त्र-बल और अपनी प्रतिष्ठा के अनुरूप युद्ध में पराक्रम प्रकट करो।

**एतदर्थं हि हैडिम्बे पुत्रानिच्छन्ति मानवाः। □**
**कथं नस्तारयेद् दुःखात् स त्वं तारय बान्धवान् ॥२६॥**

हिडिम्बाकुमार! मनुष्य इसीलिए पुत्र की इच्छा करते हैं कि वह किसी प्रकार हमें दुःख से छुड़ाएगा, अतः तुम अपने बन्धु-बान्धवों को उबारो।

**इच्छन्ति पितरः पुत्रान् स्वार्थहेतोर्घटोत्कच। □**
**इहलोकात् परे लोके तारयिष्यन्ति ये हिताः ॥२७॥**

घटोत्कच! प्रत्येक पिता अपने इसी स्वार्थ के लिए पुत्रों की इच्छा करता है कि वे पुत्र मेरे हितैषी होकर मुझे इस लोक से परलोक में तार देंगे।

**रात्रौ हि राक्षसा भूयो भवन्त्यमितविक्रमाः।**
**बलवन्तः सुदुर्धर्षाः शूरा विक्रान्तचारिणः ॥२८॥**

रात्रि के समय राक्षसों का अनन्त पराक्रम और भी बढ़ जाता है। वे बलवान्, परम दुर्धर्ष, शूरवीर और पराक्रमपूर्वक विचरनेवाले हो जाते हैं।

घटोत्कच उवाच

**एवमेव महाबाहो यथा वदसि मां प्रभो।**
**त्वया नियुक्तो गच्छामि कर्णस्य वधकांक्षया ॥२९॥**

**घटोत्कच ने कहा**—महाबाहो! प्रभो! आप जैसा कह रहे हैं, वैसा ही है। मैं आपका भेजा हुआ कर्ण के वध की इच्छा से जा रहा हूँ।

**अद्य दास्यामि संग्रामं सूतपुत्राय तं निशि।**
**यं जनाः सम्प्रवक्ष्यन्ति यावद् भूमिर्धरिष्यति ॥३०॥**

आज मैं इस रात्रि में सूतपुत्र कर्ण के साथ ऐसा संग्राम करूँगा, जिसकी चर्चा जबतक यह पृथिवी रहेगी, तबतक लोग करते रहेंगे।

**न चात्र शूरान्मोक्ष्यामि न भीतान्न कृताञ्जलीन्।**
**सर्वानेव वधिष्यामि राक्षसं धर्ममास्थितः ॥३१॥**

इस संग्राम में मैं शूरवीरों, डरनेवालों और हाथ जोड़नेवालों—किसी को भी जीवित नहीं छोड़ूँगा, राक्षसधर्म का आश्रय ले मैं सबको मार डालूँगा।

सञ्जय उवाच

**एवमुक्त्वा महाबाहुर्हैडिम्बिर्वरवीरहा।**
**अभ्ययात् तुमुले कर्णं तव सैन्यं विभीषयन् ॥३२॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! श्रेष्ठ वीरों का संहार करनेवाला महाबाहु हिडिम्बाकुमार ऐसा कहकर उस भयंकर युद्ध में आपकी सेना को भयभीत करता हुआ कर्ण का सामना करने के लिए गया।

**तमापन्तं संक्रुद्धं दीप्तास्यं दीप्तमूर्धजम्।**
**प्रहसन् पुरुषव्याघ्रः प्रतिजग्राह सूतजः ॥३३॥**

क्रोध में भरे हुए प्रज्वलित मुख और चमकीले केशोंवाले राक्षस को आते देख पुरुषसिंह सूतपुत्र कर्ण ने हँसते हुए उसे अपने प्रतिद्वन्द्वी के रूप में ग्रहण किया।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि त्रिंशोऽध्यायः ॥३०॥**

# एकत्रिंशोऽध्यायः

## घटोत्कच द्वारा अलम्बुष का वध

सञ्जय उवाच

**दृष्ट्वा घटोत्कचं राजन् सूतपुत्ररथं प्रति।**
**आयान्तं तु तथा युक्तं जिघांसुं कर्णमाहवे ॥१॥**
**अब्रवीत् तत्र पुत्रस्ते दुःशासनमिदं वचः।**
**अभियाति रक्षो कर्णं तद् वारय महारथम् ॥२॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! कर्ण को मारने की इच्छा से उद्यत हुए घटोत्कच को सूतपुत्र के रथ की ओर आते देख आपके पुत्र दुर्योधन ने दुःशासन से इस प्रकार कहा—"भाई! यह राक्षस वेगपूर्वक कर्ण पर आक्रमण कर रहा है, अतः उस महारथी घटोत्कच को रोको।"

**एतस्मिन्नन्तरे राजञ्जटासुरसुतो बली।**
**दुर्योधनमुपागम्य प्राह प्रहरतां वरः ॥३॥**

राजन्! इसी समय जटासुर का बलवान् पुत्र योद्धाओं में श्रेष्ठ एक राक्षस [अलम्बुष] दुर्योधन के पास आकर बोला—

**दुर्योधन तवामित्रान् प्रख्यातान् युद्धदुर्मदान्।**
**पाण्डवान् हन्तुमिच्छामि त्वयाऽऽज्ञप्तः सहानुगान् ॥४**

"दुर्योधन! यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं तुम्हारे विख्यात शत्रु रणदुर्मद पाण्डवों का उनके सेवकों-सहित वध करना चाहता हूँ।

**जटासुरो मम पिता रक्षसां ग्रामणीः पुरा।**
**प्रयुज्य कर्म रक्षोघ्नं क्षुद्रैः पार्थैर्निपातितः ॥५॥**

"मेरे पिता जटासुर राक्षसों के अगुआ थे। उन्हें पूर्वकाल में इन नीच कुन्तीकुमारों ने राक्षस-विनाशक कर्म करके मार गिराया।

**तस्यापचितिमिच्छामि शत्रुशोणितपूजया।**
**शत्रुमांसैश्च राजेन्द्र मामनुज्ञातुमर्हसि ॥६॥**

"राजेन्द्र! मैं शत्रुओं के रक्त और मांस द्वारा पिता की पूजा करके उनके वध का बदला लेना चाहता हूँ। आप इसके लिए मुझे आज्ञा दें।"

दुर्योधन उवाच

**द्रोणकर्णादिभिः सार्धं पर्याप्तोऽहं द्विषद्वधे।**
**त्वं तु गच्छ मयाऽऽज्ञप्तो जहि युद्धे घटोत्कचम् ॥७॥**

**दुर्योधन बोला**—वीरवर! द्रोणाचार्य और कर्ण आदि के साथ मिलकर मैं स्वयं ही तुम्हारे शत्रुओं का वध करने में समर्थ हूँ। तुम तो मेरी आज्ञा से घटोत्कच के पास जाओ और युद्ध में उसका काम तमाम कर दो।

**पाण्डवानां हितं नित्यं हस्त्यश्वरथघातिनम्।**
**वैहायसगतं युद्धे प्रेषयेर्यमसादनम् ॥८॥**

हाथियों, घोड़ों और रथों का विनाश करनेवाला आकाशचारी राक्षस घटोत्कच सदा पाण्डवों के हित में तत्पर रहता है। तुम युद्ध में उसे मारकर यमलोक पठा दो।

सञ्जय उवाच

**तथेत्युक्त्वा महाकायः समाहूय घटोत्कचम्।**
**जटासुरिर्भैमसेनिं नानाशस्त्रैरवाकिरत् ॥९॥**

**सञ्जय कहते हैं**—जटासुर के पुत्र [अलम्बुष] उस विशालकाय राक्षस ने दुर्योधन से 'तथास्तु' कहकर घटोत्कच को ललकारा और उसपर नाना प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों की वर्षा आरम्भ कर दी।

**अलम्बुषं च कर्णं च कुरुसैन्यं च दुस्तरम्।**
**हैडिम्बिः प्रममाथैको महावातोऽम्बुदानिव ॥१०॥**

परन्तु जैसे आँधी बादलों को छिन्न-भिन्न कर देती है, उसी प्रकार अकेले हिडिम्बाकुमार घटोत्कच

ने अलम्बुष, कर्ण और उस दुर्लङ्घ्य कौरव-सेना को भी मथ डाला ।

**अलम्बुषस्ततः क्रुद्धो भैमसेनिं महामृधे ।**
**आजघ्ने दशभिर्बाणैस्तोत्त्रैरिव महाद्विपम् ॥११॥**

तब क्रोध में भरे हुए उस अलम्बुष ने उस महा-युद्ध में भीमसेनकुमार घटोत्कच को दस बाणों से घायल कर दिया, मानो महावत ने महान् गजराज को अंकुशों से घायल कर दिया हो ।

**तिलशस्तस्य संवाहं सूतं सर्वायुधानि च ।**
**घटोत्कचः प्रचिच्छेद प्रणदश्चातिदारुणम् ॥१२॥**

यह देख अत्यन्त भयंकर गर्जना करते हुए घटोत्कच ने अलम्बुष के सारथि, घोड़ों और सम्पूर्ण अस्त्र-शस्त्रों को तिल तिल-करके काट डाला ।

**जटासुरिर्महाराज विरथो हतसारथिः ।**
**घटोत्कचं रणे क्रुद्धो मुष्टिनाभ्यहनद् दृढम् ॥१३॥**

महाराज ! उस समय सारथि के मारे जाने पर रथहीन हुए अलम्बुष ने रणभूमि में कुपित हो घटोत्कच को बड़े जोर से एक मुक्का मारा ।

**मुष्टिनाभ्याहतस्तेन प्रचचाल घटोत्कचः ।**
**क्षितिकम्पे यथा शैलः सवृक्षस्तृणगुल्मवान् ॥१४॥**

उस मुक्के की मार खाकर घटोत्कच उसी प्रकार काँप उठा, जैसे भूकम्प होने पर वृक्ष, तृण एवं गुल्मों-सहित पर्वत हिलने लगता है ।

**ततः स परिघाभेन द्विट्संघघ्नेन बाहुना ।**
**जटासुरिं भैमसेनिरवधीन्मुष्टिना भृशम् ॥१५॥**

तब भीमपुत्र घटोत्कच ने शत्रुसमूहों का नाश करनेवाली अपनी परिघ-जैसी मोटी बाँह के मुक्के से जटासुर के पुत्र को बहुत मारा ।

**तं प्रमथ्य ततः क्रुद्धस्तूर्णं हैडिम्बिराक्षिपत् ।**
**दोर्भ्यामिन्द्रध्वजाभाभ्यां निष्पिपेष च भूतले ॥१६॥**

क्रोध में भरे हुए हिडिम्बाकुमार ने उसे अच्छी प्रकार मथकर तुरन्त ही भूमि पर दे मारा और इन्द्र-ध्वजा के समान अपनी दोनों भुजाओं द्वारा उसे भूमि पर रगड़ना आरम्भ किया ।

**ततो घटोत्कचः खड्गमुद्धृत्याद्भुतदर्शनम् ।**
**रौद्रस्य कायाद्धि शिरो भीमं विकृतदर्शनम् ॥१७॥**

**स्फुरतस्तस्य समरे नदतश्चातिभैरवम् ।**
**निचकर्त महाराज शत्रोरमितविक्रमः ॥१८॥**

महाराज ! तदनन्तर महापराक्रमी घटोत्कच ने अद्भुत दिखाई देनेवाली अपनी तलवार उठाकर समराङ्गण में अत्यन्त भयंकर गर्जना करते और उछल-कूद मचाते हुए शत्रु अलम्बुष के भयंकर तथा विकराल मस्तक को उस भयानक राक्षस की काया से काटकर अलग कर दिया ।

**शिरस्तच्चापि संगृह्य केशेषु रुधिरोक्षितम् ।**
**ययौ घटोत्कचस्तूर्णं दुर्योधनरथं प्रति ॥१९॥**
**शिरो रथेऽस्य निक्षिप्य विकृताननमूर्धजम् ।**
**प्राणदद् भैरवं नादं प्रावृषीव बलाहकः ॥२०॥**

रक्त से भीगे हुए उस मस्तक के केश पकड़कर महाबाहु राक्षस घटोत्कच दुर्योधन के रथ के पास गया और उस विकराल मुख एवं केशवाले सिर को उसके रथ पर फेंककर वर्षाकाल के मेघ की भाँति भयंकर गर्जना की ।

हैडिम्बिरुवाच

**एष ते निहतो बन्धुस्त्वया दृष्टोऽस्य विक्रमः ।**
**पुनर्द्रष्टासि कर्णस्य निष्ठामेतां तथाऽऽत्मनः ॥२१॥**
**स्वधर्ममर्थं कामं च त्रितयं योऽभिवाञ्छति ।□**
**रिक्तपाणिर्न पश्येत राजानं ब्राह्मणं स्त्रियम् ॥२२॥**

**घटोत्कच बोला**—राजन् ! यह है तेरा सहायक बन्धु, इसे मैंने मार डाला । देख लिया तूने इसका पराक्रम ? अब तू कर्ण की और अपनी भी ऐसी ही अवस्था देखेगा । जो अपने धर्म, अर्थ और काम तीनों की इच्छा रखता है, उसे राजा, ब्राह्मण और स्त्री के पास रिक्तहस्त नहीं जाना चाहिए [अतः तेरे मित्र का यह मस्तक मैं भेंटस्वरूप लाया हूँ] ।

सञ्जय उवाच

**एवमुक्त्वा ततः प्रायात् कर्णं प्रति नरेश्वर ।**
**किरञ्छरगणाँस्तीक्ष्णान् रुषितो रणमूर्धनि ॥२३॥**

**सञ्जय कहते हैं**—नरेश्वर ! ऐसा कहकर क्रोध में भरा हुआ घटोत्कच तीखे बाणों की वर्षा करता हुआ युद्ध के मुहाने पर कर्ण के पास चला गया ।

**ततः समभवद् युद्धं घोररूपं भयानकम् ।**
**विस्मापनं महाराज नरराक्षसयोर्मृधे ॥२४॥**

महाराज ! तत्पश्चात् युद्धभूमि में सबको आश्चर्यचकित करनेवाला मनुष्य और राक्षस का वह घोर एवं भयानक युद्ध आरम्भ हो गया ।

**तौ प्रगृह्य महावेगे धनुषी भीमनिःस्वने ।**
**प्राच्छादयेतामन्योन्यं तक्षमाणौ महेषुभिः ॥२५॥**

वे दोनों भयंकर टंकार करनेवाले अत्यन्त वेगशाली धनुष लेकर बड़े-बड़े बाणों द्वारा एक-दूसरे को क्षत-विक्षत करते हुए आच्छादित करने लगे ।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि एकत्रिंशोऽध्यायः ॥३१॥**

# द्वात्रिंशोऽध्यायः

## अलायुध का युद्धस्थल में प्रवेश और घटोत्कच द्वारा उसका वध

सञ्जय उवाच

**तस्मिंस्तथा वर्तमाने कर्णराक्षसयोर्मृधे ।**
**अलायुधो राक्षसेन्द्रो वीर्यवानभ्यवर्तत ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! इस प्रकार कर्ण और घटोत्कच का वह युद्ध चल ही रहा था कि पराक्रमी राक्षसराज अलायुध वहाँ उपस्थित हुआ ।

**स मत्त इव मातङ्गः संक्रुद्ध इव चोरगः ।**
**दुर्योधनमिदं वाक्यमब्रवीद् युद्धलालसः ॥२॥**

वह मतवाले हाथी और क्रोध में भरे हुए सर्प के समान युद्ध की अभिलाषा मन में रखकर दुर्योधन से इस प्रकार बोला—

**विदितं ते महाराज यथा भीमेन राक्षसाः ।**
**हिडिम्बबककिर्मीरा निहता मम बान्धवाः ॥३॥**

"महाराज ! यह तो आपको ज्ञात ही होगा कि भीमसेन ने हमारे राक्षस भाई-बन्धु हिडिम्ब, बक और किर्मीर का किस प्रकार वध किया था ।

**परामर्शश्च कन्याया हिडिम्बायाः कृतः पुरा ।**
**किमन्यद् राक्षसानन्यानस्मांश्च परिभूय ह ॥४॥**

"इतना ही नहीं, उन्होंने मेरा और अन्य राक्षसों का अपमान करके पूर्वकाल में राक्षसकन्या हिडिम्बा के साथ भी बलात्कार किया था । इससे बढ़कर दूसरा अपराध क्या हो सकता है ?

**तमहं सगणं राजन् सवाजिरथकुञ्जरम् ।**
**हैडिम्बं च सहामात्यं हन्तुमभ्यागतः स्वयम् ॥५॥**

"राजन् ! मैं सैन्यसमूह, घोड़े, हाथी तथा रथियोंसहित भीमसेन को और मन्त्रियोंसहित हिडिम्बाकुमार घटोत्कच को मार डालने के लिए स्वयं यहाँ आया हूँ ।

**हत्वा सम्भक्षयिष्यामि सर्वानद्यैव पाण्डवान् ।**
**निवारय बलं सर्वं वयं योत्स्याम पाण्डवान् ॥६॥**

"आज मैं सभी कुन्तीकुमारों को मारकर खा जाऊँगा । आप अपनी सारी सेना को रोक दीजिए । पाण्डवों के साथ हम लोग युद्ध करेंगे ।"

**तस्यैतद् वचनं श्रुत्वा हृष्टो दुर्योधनस्तदा ।**
**प्रतिगृह्याब्रवीद् वाक्यं भ्रातृभिः परिवारितः ॥७॥**

उसकी यह बात सुनकर भाइयों से घिरे हुए राजा दुर्योधन को बड़ी प्रसन्नता हुई । उसने अलायुध का प्रस्ताव स्वीकार करते हुए कहा—

**त्वां पुरस्कृत्य सगणं वयं योत्स्यामहे परान् ।**
**न हि वैरान्तमनसः स्थास्यन्ति मम सैनिकाः ॥८॥**

"राक्षसराज ! सैनिकों-सहित तुम्हें आगे रखकर हम लोग भी शत्रुओं के साथ युद्ध करेंगे, क्योंकि जिनका मन वैर का अन्त करने में लगा हुआ है, मेरे वे सैनिक चुपचाप खड़े नहीं रह सकते ।"

**एवमस्त्विति राजानमुक्त्वा राक्षसपुङ्गवः ।**
**अभ्ययात् त्वरितो भैमिं सहितः पुरुषादकैः ॥९॥**

"अच्छा, ऐसा ही सही ।' राजा दुर्योधन से इस प्रकार कहकर राक्षसराज अलायुध तुरन्त ही पौरुष-सम्पन्न योद्धाओं के साथ घटोत्कच के पास गया ।

**ततः कर्णं समुत्सृज्य भैमसेनिरपि प्रभो ।**
**अमित्रं प्रत्युपायान्तमर्दयामास मार्गणैः ॥१०॥**

प्रभो ! तब घटोत्कच ने भी कर्ण को छोड़कर अपने समीप आते हुए शत्रु को बाणों द्वारा पीड़ित करना आरम्भ किया ।

**तयोः सुतुमुलं युद्धं बभूव निशि रक्षसोः ।**
**अलायुधस्य चैवोग्रं हैडिम्बेश्चापि भारत ॥११॥**

भरतभूषण ! उस रात्रि के समय अलायुध और हिडिम्बाकुमार घटोत्कच दोनों राक्षसों में अत्यन्त भयंकर एवं घमासान युद्ध होने लगा।

**अलायुधस्तु संक्रुद्धो घटोत्कचमरिन्दमम् ।**
**परिघेणातिकायेन ताडयामास मूर्धनि ॥१२॥**

इसी बीच क्रोध में भरे हुए अलायुध ने एक विशाल परिघ के द्वारा शत्रुदमन घटोत्कच के मस्तक पर प्रहार किया।

**स तु तेन प्रहारेण भैमसेनिर्महाबलः ।**
**ईषन्मूर्च्छितमात्मानमस्तम्भयत वीर्यवान् ॥१३॥**

उस आघात से भीमसेनपुत्र घटोत्कच को कुछ मूर्च्छा आ गई, परन्तु महाबली और पराक्रमी वीर ने पुनः अपने-आपको सँभाल लिया।

**ततो दीप्ताग्निसंकाशां शतघण्टामलंकृताम् ।**
**चिक्षेप तस्मै समरे गदां काञ्चनभूषिताम् ॥१४॥**

तत्पश्चात् घटोत्कच ने रणभूमि में प्रज्वलित अग्नि के समान तेजस्विनी, एक सौ घण्टियों से सुभूषित और सुवर्णमण्डित अपनी गदा उसके ऊपर फेंकी।

**सा हयांश्च रथं चास्य सारथिं च महास्वना ।**
**चूर्णयामास वेगेन विसृष्टा भीमकर्मणा ॥१५॥**

भयंकर कर्म करनेवाले उस राक्षस द्वारा वेगपूर्वक फेंकी गई उस भीषण आवाज करनेवाली गदा ने अलायुध के रथ, सारथि और घोड़ों को चूर-चूर कर दिया।

**अथाभिपत्य वेगेन समुद्भ्राम्य च राक्षसम् ।**
**बलेनाक्षिप्य हैडिम्बिश्चकर्तास्य शिरो महत् ॥१६॥**

फिर बड़े वेग से झपटकर हिडिम्बाकुमार घटोत्कच ने उस राक्षस को पकड़ लिया और उसे घुमाकर बलपूर्वक पटक दिया। तत्पश्चात् उसके विशाल मस्तक को भी काट गिराया।

**हतं दृष्ट्वा महाकायं बकज्ञातिमरिन्दमम् ।**
**पञ्चालाः पाण्डवाश्चैव सिंहनादान् विनेदिरे ॥१७॥**

बकासुर के विशालकाय भ्राता शत्रुदमन अलायुध को मारा गया देख पाञ्चाल और पाण्डव सिंहनाद करने लगे।

**अलायुधस्य तु शिरो भैमसेनिर्महाबलः ।**
**दुर्योधनस्य प्रमुखे चिक्षेप गतचेतसः ॥१८॥**

महाबली घटोत्कच ने प्राणहीन हुए अलायुध का वह मस्तक भी दुर्योधन के आगे फेंक दिया।

**अथ दुर्योधनो राजा दृष्ट्वा हतमलायुधम् ।**
**बभूव परमोद्विग्नः सह सैन्येन भारत ॥१९॥**

भारत ! अलायुध को मारा गया देख सेनासहित राजा दुर्योधन अत्यन्त उद्विग्न हो उठा।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि द्वात्रिंशोऽध्यायः ॥३२॥**

# त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः

## घटोत्कच का घोर युद्ध और कर्ण द्वारा इन्द्रप्रदत्त शक्ति से उसका वध

सञ्जय उवाच

**निहत्यालायुधं रक्षः प्रहृष्टात्मा घटोत्कचः ।**
**ननाद विविधान् नादान् वाहिन्याः प्रमुखे तव ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! राक्षस अलायुध का वध करके घटोत्कच अत्यन्त प्रसन्न हुआ और वह आपकी सेना के समक्ष खड़ा होकर नाना प्रकार से सिंहनाद करने लगा।

**तस्य तं तुमुलं शब्दं श्रुत्वा कुञ्जरकम्पनम् ।**
**तावकानां महाराज भयमासीत् सुदारुणम् ॥२॥**

महाराज ! उसकी वह भयंकर गर्जना हाथियों को भी कँपा देनेवाली थी। उसे सुनकर आपके योद्धाओं के मन में अत्यन्त दारुण भय समा गया।

**अलायुधविषक्तं तु भैमसेनिं महाबलम् ।**
**दृष्ट्वा कर्णो महाबाहुः पाञ्चालान् समुपाद्रवत् ॥३॥**

जिस समय महाबली घटोत्कच अलायुध के साथ जूझ रहा था, उस समय उसे उस अवस्था में देखकर महाबाहु कर्ण ने पाञ्चालों पर धावा किया।

**संछिन्नभिन्नध्वजिनश्च केचित्**
**केचिच्छरैरर्दितभिन्नदेहाः ।**

केचिद् विसूता विहयाश्च केचिद्
वैकर्तनेनाशु कृता बभूवुः ॥४॥

वैकर्तन कर्ण ने वहाँ शीघ्र ही किन्हीं की ध्वजा के टुकड़े-टुकड़े कर दिये, किन्हीं के शरीरों को बाणों से विदीर्ण कर पीड़ित कर डाला, किन्हीं के सारथि नष्ट कर दिये और किन्हीं के घोड़े मार डाले।

अविन्दमानास्त्वथ शर्म संख्ये
यौधिष्ठिरं ते बलमभ्यपद्यन्।
तान् प्रेक्ष्य भग्नान् विमुखीकृतांश्च
घटोत्कचो रोषमतीव चक्रे ॥५॥

योद्धा लोग युद्ध में किसी प्रकार चैन न पाकर युधिष्ठिर की सेना में घुसने लगे। उन्हें तितर-बितर और युद्ध से विमुख हुआ देख घटोत्कच बहुत क्रुद्ध हुआ।

आस्थाय तं काञ्चनरत्नचित्रं
रथोत्तमं सिंहवत् संननाद।
वैकर्तनं कर्णमुपेत्य चापि
विव्याध वज्रप्रतिमैः पृषत्कैः ॥६॥

फिर तो वह सुवर्ण एवं रत्नजटित होने के कारण विचित्र शोभायुक्त अपने उत्तम रथ पर आरूढ़ हो सिंह के समान गर्जना करने लगा और वैकर्तन कर्ण के पास जाकर उसे वज्रतुल्य बाणों द्वारा बींधने लगा।

समाहितावप्रतिमप्रभावा-
वन्योन्यमाजघ्नतुरुत्तमास्त्रैः ।
तयोर्हि वीरोत्तमयोर्न कश्चिद्
ददर्श तस्मिन् समरे विशेषम् ॥७॥

उन दोनों के ही चित्त एकाग्र थे, दोनों ही अनुपम प्रभावशाली थे, और उत्तम अस्त्रों द्वारा एक-दूसरे को चोट पहुँचा रहे थे। उन दोनों वीरशिरोमणियों में से कोई भी युद्ध में अपनी विशेषता न दिखा सका।

घटोत्कचं यदा कर्णो न विशेषयते नृपः।
ततः प्रादुश्चकारोग्रमस्त्रमस्त्रविदां वरः ॥८॥

जब अस्त्रवेत्ताओं में श्रेष्ठ कर्ण घटोत्कच से अपनी विशेषता नहीं दिखा सका, तब उसने एक भयंकर अस्त्र प्रकट किया।

तेनास्त्रेणावधीत् तस्य रथं सहयसारथिम्।
विरथश्चापि हैडिम्बिः क्षिप्रमन्तरधीयत ॥९॥

उस अस्त्र के द्वारा उसने घटोत्कच के रथ को घोड़ों और सारथिसहित नष्ट कर दिया। रथहीन होने पर घटोत्कच शीघ्र ही वहाँ से अदृश्य हो गया।

अन्तर्हितं राक्षसेन्द्रं विदित्वा
सम्प्राक्रोशन् कुरवः सर्व एव।
कथं नायं राक्षसः कूटयोधी
हन्यात् कर्णं समरेऽदृश्यमानः ॥१०॥

राक्षसराज घटोकत्कच को अदृश्य हुआ जानकर समस्त कौरव-योद्धा चिल्ला-चिल्लाकर कहने लगे—"माया द्वारा युद्ध करनेवाला यह निशाचर जब युद्ध-भूमि में स्वयं दिखाई नहीं देता है, तब कर्ण को कैसे नहीं मार डालेगा ?"

ततः शराः प्रापतन् रुक्मपुङ्खाः
शक्त्यृष्टिप्रासमुसलायुधानि ।
परश्वधास्तैलधौताश्च खड्गाः
प्रदीप्ताग्रास्तोमराः पट्टिशाश्च ॥११॥

ऐसी बातें हो ही रही थीं कि आकाश से सोने के पंखवाले बाण, शक्ति, ऋष्टि, प्रास, मुसल आदि आयुध, फरसे, तेल में साफ किये गये खड्ग, चम-चमाती धारवाले तोमर, पट्टिश आदि गिरने लगे।

सुभीमनानाविधशस्त्रपातैर्-
घटोत्कचेनाभिहतं समन्तात्।
दौर्योधनं वै बलमार्तरूप-
मावर्तमानं ददृशे भ्रमत् तत् ॥१२॥

घटोत्कच द्वारा चलाये गये अत्यन्त भयंकर और नाना प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों के प्रहार से हताश हुई दुर्योधन की सेना आर्त होकर चारों ओर घूमती और चक्कर काटती दिखाई देने लगी।

तेनोत्सृष्टा चक्रयुक्ता शतघ्नी
समं सर्वांश्चतुरोऽश्वाञ्जघान।
ते जानुभिर्जगतीमन्वपद्यन्
गतासवो निर्दशनाक्षिजिह्वाः ॥१३॥

इसी समय घटोत्कच ने एक शतघ्नी छोड़ी, जिसमें पहिये लगे हुए थे। उस शतघ्नी ने कर्ण के चारों घोड़ों को एक-साथ ही मार डाला। उन घोड़ों

ने प्राणशून्य होकर धरती पर घुटने टेक दिये। उनके दाँत, नेत्र और जीभें बाहर निकल आयी थीं।

**ततोऽब्रुवन् कुरवः सर्व एव**
**कर्णं दृष्ट्वा घोररूपां च मायां**
**शक्त्या रक्षो जहि कर्णाद्य तूर्णं**
**नश्यन्त्येते कुरवो धार्तराष्ट्राः ॥१४॥**

राक्षसराज घटोत्कच की उस माया को देखकर सभी कौरव कर्ण से इस प्रकार बोले—"कर्ण! तुम आज [इन्द्रप्रदत्त] शक्ति से तुरन्त ही इस राक्षस को मार डालो, क्योंकि ये धृतराष्ट्र के पुत्र और कौरव नष्ट होते जा रहे हैं।

**करिष्यतो नः किमु भीमपार्थौ**
**तपन्तमेनं जहि त्वं निशीथे।**
**यो नो हि समरात् घोराद् विमुच्येत्**
**पार्थान् स नः सबलान् योधयेत ॥१५॥**

"भीमसेन और अर्जुन हमारा क्या कर लेंगे? आधी रात के समय सन्ताप देनेवाले इस पापी को मार डालो। हममें से जो भी इस भयानक संग्राम से छुटकारा पाएगा, वही सेनासहित पाण्डवों के साथ युद्ध करेगा।

**तस्मादेनं राक्षसं घोररूपं**
**शक्त्या जहि दत्तया वासवेन।**
**मा कौरवाः सर्व एवेन्द्रकल्पा**
**रात्रि युद्धे कर्ण नेशुः सयोधाः ॥१६॥**

"अतः तुम इन्द्र द्वारा प्रदत्त शक्ति से इस घोर रूपधारी राक्षस को मार डालो। कर्ण! कहीं ऐसा न हो कि इन्द्र के समान पराक्रमी समस्त कौरव रात्रियुद्ध में अपने योद्धाओं के साथ नष्ट हो जाएँ।"

**वध्यमानो राक्षसा वै निशीथे**
**दृष्ट्वा राजँस्त्रास्यमानं बलं च।**
**श्रुत्वार्तनादं च हि कौरवाणां**
**मतिं दध्रे शक्तिमोक्षाय कर्णः ॥१७॥**

राजन्! रात्रि में राक्षस के प्रहार से घायल होते हुए कर्ण ने अपनी सेना को भयभीत देख और कौरवों का महान् आर्तनाद सुनकर घटोत्कच पर शक्ति छोड़ने का निश्चय कर लिया।

**यासौ राजन् रक्षिता वर्षपूगान्**
**घातायाजौ सत्कृता फाल्गुनस्य।**
**तां वै शक्तिं लेलिहानां प्रदीप्तां**
**वैकर्तनः प्राहिणोद् राक्षसाय ॥१८॥**

राजन्! जिस शक्ति को कर्ण ने युद्ध में अर्जुन का वध करने के लिए कितने ही वर्षों से सत्कारपूर्वक रख छोड़ा था, सबको चाट जाने के लिए उद्यत हुई उस शक्ति को सूर्यपुत्र कर्ण ने घटोत्कच पर चला दिया।

**सा तां मायां भस्म कृत्वा ज्वलन्ती**
**भित्त्वा गाढोरःस्थलं राक्षसस्य।**
**ऊर्ध्वं प्राप्ता दीप्यमाना निशायां**
**नक्षत्राणामन्तराण्याविवेश ॥१९॥**

वह प्रज्वलित शक्ति राक्षस घटोत्कच की उस माया को भस्म करके उसके वक्षस्थल को गहराई तक चीरकर रात्रि के समय प्रकाशित होती हुई ऊपर को चली गई और नक्षत्रों में जाकर विलीन हो गई।

**ततोऽन्तरिक्षादपतद् गतासुः**
**स राक्षसेन्द्रो भुवि भिन्नदेहः।**
**अवाक् शिराः स्तब्धगात्रो विजिह्वो**
**घटोत्कचो महदास्थाय रूपम् ॥२०॥**

विशालरूप धारण करके विदीर्ण शरीरवाला राक्षस घटोत्कच नीचे सिर करके प्राणशून्य हो आकाश से पृथिवी पर गिर पड़ा। उस समय उसका अङ्ग-अङ्ग अकड़ गया था और जीभ बाहर निकल आई थी।

**ततः कर्णः कुरुभिः पूज्यमानो**
**यथा शक्रो वृत्रवधे मरुद्भिः।**
**अन्वारूढस्तव पुत्रस्य यानं**
**हृष्टश्चापि प्राविशत् तत्स्वसैन्यम् ॥२१॥**

घटोत्कच के वध के पश्चात् जैसे वृत्रासुर का वध होने पर देवताओं ने इन्द्र का सत्कार किया था, उसी प्रकार कौरवों से सत्कृत होते हुए कर्ण ने आपके पुत्र के रथ पर आरूढ़ हो अत्यन्त हर्ष के साथ अपनी उस सेना में प्रवेश किया।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ॥३३॥**

# चतुस्त्रिंशोऽध्यायः

## घटोत्कच के वध से पाण्डवों का शोक और श्रीकृष्ण की प्रसन्नता

सञ्जय उवाच

**हैडिम्बं निहतं दृष्ट्वा विशीर्णमिव पर्वतम् ।**
**बभूवुः पाण्डवाः सर्वे शोकबाष्पाकुलेक्षणाः ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! जैसे पर्वत ढह गया हो, उसी प्रकार हिडिम्बाकुमार घटोत्कच को मारा गया देख समस्त पाण्डवों के नेत्रों में शोक के आँसू भर आये ।

**वासुदेवस्तु हर्षेण महताभिपरिप्लुतः ।**
**ननाद सिंहनादं वै पर्यष्वजत फाल्गुनम् ॥२॥**

परन्तु वसुदेवनन्दन श्रीकृष्ण अत्यन्त हर्षमग्न होकर सिंहनाद करने लगे । उन्होंने अर्जुन को छाती से लगा लिया ।

**स विनद्य महानादमभीषून् संनियम्य च ।**
**ननर्त हर्षसंवीतो वातोद्धूत इव द्रुमः ॥३॥**

वे बड़े जोर से गर्जना करके घोड़ों की रास को रोककर हवा से हिलाये हुए वृक्ष के समान हर्ष से झूमकर नाचने लगे ।

**प्रहृष्टमनसं ज्ञात्वा वासुदेवं महाबलः ।**
**अर्जुनोऽथाब्रवीद् राजन्नातिहृष्टमना इव ॥४॥**

राजन् ! श्रीकृष्ण के मन में अधिक प्रसन्नता हुई जानकर महाबली अर्जुन कुछ अप्रसन्न-से होकर बोले—

**अतिहर्षोऽयमस्थाने तवाद्य मधुसूदन ।**
**शोकस्थाने तु सम्प्राप्ते हैडिम्बस्य वधेन तु ॥५॥**

"मधुसूदन ! हिडिम्बाकुमार घटोत्कच के वध से आज हमारे लिए तो शोक का अवसर प्राप्त हुआ है, परन्तु आपको बेमौके अत्यन्त हर्ष हो रहा है ।

**विमुखानीह सैन्यानि हतं दृष्ट्वा घटोत्कचम् ।**
**वयं तु भृशमुद्विग्ना हैडिम्बस्य निपातनात् ॥६॥**

"घटोत्कच को मारा गया देख हमारी सेनाएँ युद्ध से विमुख होकर भागी जा रही हैं । हिडिम्बापुत्र के मारे जाने से हम लोग भी अत्यन्त उद्विग्न हो उठे हैं ।

**नैतत्कारणमल्पं हि भविष्यति जनार्दन ।**
**तदद्य शंस मे पृष्टः सत्यं सत्यवतां वर ॥७॥**

"परन्तु जनार्दन ! आपको जो इतनी प्रसन्नता हो रही है, इसका कोई छोटा-मोटा कारण नहीं होगा । वही मैं आपसे पूछना चाहता हूँ । वक्ताओं में श्रेष्ठ प्रभो ! आप मुझे इसका यथार्थ कारण बताइए ।"

वासुदेव उवाच

**अतिहर्षमिमं प्राप्तं शृणु मे त्वं धनञ्जय ।**
**अतीव मनसः सद्यः प्रसादकरमुत्तमम् ॥८॥**

**श्रीकृष्ण ने कहा**—धनञ्जय ! आज वास्तव में मुझे यह अत्यन्त हर्ष का कारण प्राप्त हुआ है । इसका कारण सुनो । मेरे मन को तत्काल अति-प्रसन्नता प्रदान करनेवाला वह उत्तम कारण इस प्रकार है ।

**शक्तिं घटोत्कचेनेमां व्यंसयित्वा महाद्युते ।**
**कर्णं निहतमेवाजौ विद्धि सद्यो धनञ्जय ॥९॥**

महातेजस्वी धनञ्जय ! इन्द्र-प्रदत्त शक्ति को घटोत्कच के द्वारा कर्ण के हाथ से दूर कराकर अब तुम युद्ध में कर्ण को शीघ्र मरा हुआ ही समझो ।

**आशीविष इव क्रुद्धो जृम्भितो मन्त्रतेजसा ।**
**तथाद्य भाति मे कर्णः शान्तज्वाल इवानलः ॥१०॥**

जैसे क्रोध में भरे हुए सर्प को मन्त्र के तेज से स्तब्ध कर दिया जाए और प्रज्वलित अग्नि की ज्वाला को बुझा दिया जाए, शक्ति से वञ्चित हुआ कर्ण भी आज मुझे वैसा ही प्रतीत होता है ।

**कवचेन विहीनश्च कुण्डलाभ्यां च पाण्डव ।**
**सोऽद्य मानुषतां प्राप्तो विमुक्तः शक्रदत्तया ॥११॥**

पाण्डुनन्दन ! कर्ण कवच और कुण्डल से हीन और इन्द्र की दी हुई शक्ति से शून्य होकर अब साधारण मनुष्य के समान हो गया है ।

**हैडिम्बश्चाप्युपायेन शक्त्या कर्णेन घातितः ।**
**नाहनिष्यच्च यद्येनं कर्णः शक्त्या महामृधे ॥१२॥**
**मया वध्योऽभविष्यत् स भैमसेनिर्घटोत्कचः ।**
**मया न निहतः पूर्वमेष युष्मत्प्रियेप्सया ॥१३॥**

घटोत्कच को मैंने ही युक्तिपूर्वक कर्ण की चलाई हुई शक्ति से मरवा दिया है। यदि महायुद्ध में कर्ण अपनी शक्ति द्वारा भीमसेनपुत्र घटोत्कच को नहीं मारता तो एक दिन मुझे उसका वध करना पड़ता। तुम लोगों का प्रिय करने की इच्छा से ही मैंने इसे पहले नहीं मारा था।

**एष हि ब्राह्मणद्वेषी यज्ञद्वेषी च राक्षसः।**
**धर्मस्य लोप्ता पापात्मा तस्मादेष निपातितः ॥१४॥**

यह ब्राह्मणों तथा यज्ञों से द्वेष रखनेवाला और धर्म का लोप करनेवाला पापात्मा राक्षस था, इसीलिए इसे मरवा दिया है।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥३४॥**

# पञ्चत्रिंशोऽध्यायः

## अर्जुन के कहने से उभयपक्ष की सेनाओं का विश्राम और चन्द्रोदय के पश्चात् पुनः युद्ध में लगना

सञ्जय उवाच

**घटोत्कचे तु निहते सूतपुत्रेण तां निशाम्।**
**दुःखामर्षवशं प्राप्तो धर्मराजो युधिष्ठिरः ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! सूतपुत्र के द्वारा घटोत्कच के मारे जाने पर उस रात्रि में धर्मराज युधिष्ठिर दुःख और अमर्ष के वशीभूत हो गये।

**दृष्ट्वा भीमेन महतीं वार्यमाणां चमूं तव।**
**धृष्टद्युम्नमुवाचेदं कुम्भयोनिं निवारय ॥२॥**

भीमसेन के द्वारा आपकी विशाल सेना का निवारण होता देख उन्होंने धृष्टद्युम्न से कहा—"वीर! तुम द्रोणाचार्य को आगे बढ़ने से रोको।

**जनमेजयः शिखण्डी च दौर्मुखिश्च यशोधरः।**
**अभिद्रवन्तु संहृष्टाः कुम्भयोनिं समन्ततः ॥३॥**

"जनमेजय, शिखण्डी और दुर्मुखपुत्र यशोधर—ये हर्ष और उत्साह में भरकर चारों ओर से द्रोणाचार्य पर आक्रमण करें।"

**तथाऽऽज्ञप्तास्तु ते सर्वे पाण्डवेन महात्मना।**
**अभ्यद्रवन्त वेगेन कुम्भयोनिवधेप्सया ॥४॥**

पाण्डुपुत्र महात्मा युधिष्ठिर के इस प्रकार आदेश देने पर वे सब वीर द्रोणाचार्य के वध की इच्छा से वेगपूर्वक उनपर टूट पड़े।

**तानागच्छतः सहसा सर्वोद्योगेन पाण्डवान्।**
**प्रतिजग्राह समरे द्रोणः शस्त्रभृतां वरः ॥५॥**

उन समस्त पाण्डव-सैनिकों को पूरे उद्योग के साथ सहसा आक्रमण करते देख शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ द्रोणाचार्य ने समराङ्गण में आगे बढ़कर उनका सामना किया।

**ततो दुर्योधनो राजा सर्वोद्योगेन पाण्डवान्।**
**अभ्यद्रवत् सुसंक्रुद्ध इच्छन् द्रोणस्य जीवितम् ॥६॥**

उस समय द्रोणाचार्य के जीवन की रक्षा चाहते हुए राजा दुर्योधन ने अत्यन्त क्रुद्ध हो पूरे प्रयत्न के साथ पाण्डवों पर आक्रमण किया।

**ततः प्रववृते युद्धं श्रान्तवाहनसैनिकम्।**
**पाण्डवानां कुरूणां च गर्जतामितरेतरम् ॥७॥**

तत्पश्चात् एक-दूसरे को लक्ष्य करके गर्जते हुए पाण्डव तथा कौरव योद्धाओं में पुनः संग्राम आरम्भ हो गया। उस समय सभी वाहन और सैनिक थके हुए थे।

**निद्रान्धास्ते महाराज परिश्रान्ताश्च संयुगे।**
**समरे नाभ्यपद्यन्त काञ्चिच्चेष्टां महारथाः ॥८॥**

महाराज! युद्ध में अत्यन्त थके हुए महारथी योद्धा निद्रा से अन्धे हो रहे थे, अतः संग्राम में कोई भी चेष्टा नहीं कर पा रहे थे।

**सर्वे ह्यासन् निरुत्साहाः क्षत्रिया दीनचेतसः।**
**तव चैव परेषां च गतास्त्रा विगतेषवः ॥९॥**

उस समय आपकी और शत्रुओं की सेना के सभी क्षत्रिय उत्साहहीन और दीनचित्त हो गये थे। उनके हाथों से अस्त्र और बाण गिर गये थे।

**अस्त्राण्यन्ये समुत्सृज्य निद्रान्धाः शेरते जनाः।**
**रथेष्वन्ये गजेष्वन्ये हयेष्वन्ये च भारत ॥१०॥**

भारत! अन्य अनेक सैनिक अपने अस्त्र-शस्त्र छोड़कर निन्द्रा से अन्धे होकर सो गये थे। कुछ लोग रथों पर, कुछ हाथियों पर और कुछ लोग घोड़ों पर ही सो गये थे।

**तेषामेतादृशीं चेष्टां विज्ञाय पुरुषर्षभः ।**
**उवाच वाक्यं बीभत्सुरुच्चैः संनादयन् दिशः ॥११॥**

उनकी ऐसी अवस्था देखकर पुरुषप्रवर अर्जुन ने सम्पूर्ण दिशाओं को निनादित करते हुए इस प्रकार कहा—

**श्रान्ता भवन्तो निद्रान्धाः सर्व एव सवाहनाः ।**
**तमसा च वृते सैन्ये रजसा बहुलेन च ॥१२॥**
**ते यूयं यदि मन्यध्वमुपारमत सैनिकाः ।**
**निमीलयत चात्रैव रणभूमौ मुहूर्तकम् ॥१३॥**

"सैनिको ! तुम सब लोग अपने वाहनोंसहित थक गये हो और नींद से अन्धे हो रहे हो । इधर यह सारी सेना घोर अन्धकार और बहुत-सी धूल से ढक गई है, अतः यदि तुम ठीक समझो तो युद्ध बन्द कर दो और दो घड़ी तक इस युद्धभूमि में ही सो लो ।

**ततो विनिद्रा विश्रान्ताश्चन्द्रमस्युदिते पुनः ।**
**संसाधयिष्यथान्योन्यं संग्रामं कुरुपाण्डवाः ॥१४॥**

"तदनन्तर विश्राम कर चुकने के पश्चात् निद्रा-रहित हो चन्द्रोदय होनेपर तुम समस्त कौरव-पाण्डव योद्धा परस्पर पूर्ववत् युद्ध आरम्भ कर देना ।"

**तद् वचः सर्वधर्मज्ञा धार्मिकस्य विशाम्पते ।**
**अरोचयन्त सैन्यानि तथा चान्योन्यमब्रुवन् ॥१५॥**

प्रजेश्वर ! धर्मात्मा अर्जुन का यह वचन समस्त धर्मज्ञों को उचित प्रतीत हुआ । सारी सेनाओं ने उसे पसन्द किया और सब लोग परस्पर यही बात कहने लगे ।

**चुक्रुशुः कर्ण कर्णेति तथा दुर्योधनेति च ।**
**उपारमत पाण्डूनां विरता हि वरूथिनी ॥१६॥**

कौरव-सैनिक "हे कर्ण ! हे कर्ण ! हे राजा दुर्योधन !"—इस प्रकार पुकारते हुए उच्चस्वर से बोले—"आप लोग युद्ध बन्द कर दें, क्योंकि पाण्डव-सेना युद्ध से विरत हो गई है ।"

**तथा विक्रोशमानस्य फाल्गुनस्य ततस्ततः ।**
**उपारमत पाण्डूनां सेना तव च भारत ॥१७॥**

हे भारत ! जब अर्जुन ने सब ओर इधर-उधर उच्चस्वर से पूर्वोक्त प्रस्ताव उपस्थित किया, तब पाण्डवों की तथा आपकी सेना भी युद्ध से विरत हो गई ।

**तत् सम्पूज्य वचोऽक्रूरं सर्वसैन्यानि भारत ।**
**मुहूर्तमस्वपत् राजञ्श्रान्तानि भरतर्षभ ॥१८॥**

भरतवंशी नरेश ! भरतकुलभूषण ! अर्जुन के उस क्रूरतारहित वचन का आदर करके थकी हुई सारी सेनाएँ दो घड़ी तक सोती रहीं ।

**सा तु सम्प्राप्य विश्रामं ध्वजिनी तव भारत ।**
**सुखमाप्तवती वीरमर्जुनं प्रत्यपूजयत् ॥१९॥**

भारत ! आपकी सेना विश्राम पाकर सुख का अनुभव करने लगी । उसने वीर अर्जुन की भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए कहा—

**त्वयि वेदास्तथास्त्राणि त्वयि बुद्धिपराक्रमौ ।**
**धर्मस्त्वयि महाबाहो दयाभूतेषु चानघ ॥२०॥**

"महाबाहु निष्पाप अर्जुन ! तुममें वेद और अस्त्रों का ज्ञान है । तुममें बुद्धि और पराक्रम है, साथ ही तुममें धर्म तथा सम्पूर्ण प्राणियों के प्रति दया है ।

**यच्चाश्वस्तास्तवेच्छामः शर्म पार्थ तदस्तु ते ।**
**मनसश्च प्रियानर्थान् वीर क्षिप्रमवाप्नुहि ॥२१॥**

"कुन्तीनन्दन ! हम लोग तुम्हारी प्रेरणा से विश्राम पाकर सुखी हुए हैं, अतः तुम्हारा कल्याण चाहते हैं । तुम्हें सुख प्राप्त हो । वीर ! तुम शीघ्र ही अपने मन को प्रिय लगनेवाले पदार्थ प्राप्त करो ।"

**इति ते तं नरव्याघ्रं प्रशंसन्तो महारथाः ।**
**निद्रया समवाक्षिप्तास्तूष्णीमासन् विशाम्पते ॥२२॥**

प्रजेश्वर ! इस प्रकार आपके महारथी नरश्रेष्ठ अर्जुन की भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए निद्रा के वशीभूत हो मौन हो गये ।

**अश्वपृष्ठेषु चाप्यन्ये रथनीडेषु चापरे ।**
**गजस्कन्धगताश्चान्ये शेरते चापरे क्षितौ ॥२३॥**

कुछ लोग घोड़ों की पीठों पर, दूसरे रथों की बैठकों में, कुछ अन्य योद्धा हाथियों पर और दूसरे बहुत-से सैनिक पृथिवी पर ही सो रहे ।

**तत्र हयाश्च नागाश्च योधाश्च भरतर्षभ ।**
**युद्धाद् विरम्य सुषुपुः श्रमेण महतान्विताः ॥२४॥**

भरतकुलभूषण ! वहाँ घोड़े, हाथी और सैनिक भारी थकावट से युक्त होने के कारण युद्ध से विरत हो सो गये ।

**तत्तथा निद्रया भग्नमबोधं प्रास्वपद् भृशम् ।**
**कुशलैः शिल्पिभिर्न्यस्तं पटे चित्रमिवाद्भुतम् ।।२५।।**

इस प्रकार निद्रा से अभिभूत हुआ वह सैन्यसमूह गहरी नींद में सो रहा था। वह देखने में ऐसा जान पड़ता था, मानो किन्हीं कुशल कलाकारों ने पट पर अद्भुत चित्र अंकित कर दिया हो।

**ततः कुमुदनाथेन कामिनीगण्डपाण्डुना ।**
**नेत्रानन्देन चन्द्रेण माहेन्द्री दिगलंकृता ।।२६।।**

कुछ देर बाद कामिनियों के कपोलों के समान श्वेतपीत वर्णवाले, नेत्रों को आनन्द प्रदान करनेवाले कुमुदनाथ चन्द्रमा ने पूर्व दिशा को आलोकित किया।

**प्रतिप्रकाशिते लोके दिवाभूते निशाकरे ।**
**विचेरुर्न विचेरुश्च राजन् नक्तञ्चरास्ततः ।।२७।।**

चन्द्रदेव के पूर्णतः प्रकाशित हो जाने पर जगत् में दिन का-सा उजाला हो गया। राजन् ! उस समय रात्रि में विचरनेवाले कुछ प्राणी विचरण करने लगे और कुछ जहाँ के तहाँ पड़े रहे।

**बोध्यमानं तु तत्सैन्यं राजंश्चन्द्रस्य रश्मिभिः ।**
**बुबुधे शतपत्राणां वनं सूर्यांशुभिर्यथा ।।२८।।**

राजन् ! चन्द्रमा की किरणों के स्पर्श से सारी सेना उसी प्रकार जाग उठी, जैसे सूर्यरश्मियों का स्पर्श पाकर कमलों का समूह खिल उठता है।

**यथा चन्द्रोदयोद्धूतः क्षुभितः सागरोऽभवेत् ।**
**तथा चन्द्रोदयोद्धूतः स बभूव बलार्णवः ।।२९।।**

जैसे पूर्णिमा के चन्द्रमा के उदय होने पर उससे प्रभावित होनेवाले महासागर में ज्वार उठने लगता है, वैसे ही उस समय चन्द्रोदय होने से उस सारे सैन्य-सागर में खलबली मच गई।

**ततः प्रववृते युद्धं पुनरेव विशाम्पते ।**
**लोके लोकविनाशाय परं लोकमभीप्सताम् ।।३०।।**

प्रजानाथ ! तत्पश्चात् स्वर्गलोक के अभिलाषी कौरव-पाण्डव वीरों का संसार में प्रलय मचा देनेवाला युद्ध पुनः आरम्भ हो गया।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ।।३५।।**

# षट्त्रिंशोऽध्यायः

## दुर्योधन का उपालम्भ और द्रोणाचार्य का व्यङ्ग्यपूर्ण उत्तर

सञ्जय उवाच

**ततो दुर्योधनो द्रोणमभिगम्याब्रवीदिदम् ।**
**अमर्षवशमापन्नो जनयन् हर्षतेजसी ।।१।।**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! युद्ध आरम्भ हो जाने पर अमर्ष में भरे हुए दुर्योधन ने द्रोणाचार्य के पास जाकर उनमें हर्षोत्साह और उत्तेजना पैदा करते हुए इस प्रकार कहा—

दुर्योधन उवाच

**न मर्षणीयाः संग्रामे विश्रमन्तः श्रमान्विताः ।**
**सपत्ना ग्लानमनसो लब्धलक्ष्या विशेषतः ।।२।।**

**दुर्योधन बोला**—आचार्य ! युद्ध में विशेषतः वे शत्रु, जो लक्ष्य वेधने में कभी चूकते न हों यदि थककर विश्राम कर रहे हों और मन में ग्लानि भरी होने से जिनका युद्ध-विषयक उत्साह मन्द पड़ गया हो, उनके प्रति कभी क्षमा नहीं दिखानी चाहिए।

**यत्तु मर्षितमस्माभिर्भवतः प्रियकाम्यया ।**
**त एते परिविश्रान्ताः पाण्डवा बलवत्तराः ।।३।।**

इस समय जो हमने क्षमा की है, सोते समय शत्रुओं पर प्रहार नहीं किया, वह केवल आपका प्रिय करने की इच्छा से ही हुआ है। इसका परिणाम यह हुआ कि ये पाण्डव-सैनिक पूर्णतः विश्राम करके पुनः अत्यन्त प्रबल हो गये हैं।

**सर्वथा परिहीनाः स्म तेजसा च बलेन च ।**
**भवता पाल्यमानास्ते विवर्धन्ते पुनः पुनः ।।४।।**

हम लोग तेज और बल में सर्वथा हीन हो गये हैं और वे पाण्डव आपसे सुरक्षित होने के कारण बारम्बार बढ़ते जा रहे हैं।

**दिव्यान्यस्त्राणि सर्वाणि ब्रह्मास्त्रादीनि यान्यपि ।**
**तानि सर्वाणि तिष्ठन्ति भवत्येव विशेषतः ।।५।।**

ब्रह्मास्त्र आदि जितने भी दिव्यास्त्र हैं, वे सब-

के-सब विशेष रूप से आप में ही प्रतिष्ठित हैं।

**न पाण्डवेया न वयं नान्ये लोके धनुर्धराः।**
**युध्यमानस्य ते तुल्याः सत्यमेतद् ब्रवीमि ते ॥६॥**

युद्ध करते समय आपकी समानता न तो पाण्डव, न हम कौरव और न संसार के दूसरे धनुर्धर ही कर सकते हैं, यह मैं आपसे सच्ची बात कहता हूँ।

**स भवान् मर्षयत्येतांस्त्वत्तो भीतान् विशेषतः।**
**शिष्यत्वं वा पुरस्कृत्य मम वा मन्दभाग्यताम् ॥७॥**

फिर भी आप पाण्डवों को क्षमा करते जाते हैं। यद्यपि वे आपसे डरते हैं तथापि वे आपके शिष्य हैं, इस बात को सामने रखकर अथवा मेरे दुर्भाग्य का विचार करके आप उनकी उपेक्षा करते हैं।

द्रोण उवाच

**स्थविरः सन् परं शक्त्या घटे दुर्योधनमाहवे।**
**अतः परं मया कार्यं क्षुद्रं विजयगृद्धिना ॥८॥**

**द्रोणाचार्य ने कहा**—दुर्योधन ! यद्यपि मैं वृद्ध हो गया, फिर भी रणभूमि में पूरी शक्ति लगाकर तुम्हारी विजय के लिए चेष्टा करता हूँ, परन्तु जान पड़ता है, अब तुम्हारी जीत की इच्छा से मुझे नीच कार्य भी करना पड़ेगा।

**अनस्त्रविदयं सर्वो हन्तव्योऽस्त्रविदा जनः।**
**यद् भवान्मन्यते चापि शुभं वा यदि वाशुभम्।**
**तद् वै कर्तास्मि कौरव्य वचनात्तव नान्यथा ॥९॥**

कुरुराज ! ये सब लोग जो मेरे सम्मुख स्थित हैं, दिव्यास्त्रों का प्रयोग नहीं जानते और मैं जानता हूँ। यद्यपि अस्त्रज्ञ को अस्त्रविद्या के न जाननेवालों पर प्रहार नहीं करना चाहिए, परन्तु तुम शुभ या अशुभ जो कुछ भी उचित समझो, तुम्हारे कहने से मैं वही करूँगा, उसके विपरीत कुछ नहीं करूँगा।

**निहत्य सर्वपाञ्चालान् युद्धे कृत्वा पराक्रमम्।**
**विमोक्ष्ये कवचं राजन् सत्येनायुधमालभे ॥१०॥**

राजन् ! मैं सत्य की शपथ खाकर और अपने धनुष को छूकर करता हूँ कि 'युद्ध में पराक्रम करके समस्त पाञ्चालों का वध किये बिना कवच नहीं उतारूँगा।'

**मन्यसे यच्च कौन्तेयमर्जुनं श्रान्तमाहवे।**
**तस्य वीर्यं महाबाहो शृणु सत्येन कौरव ॥११॥**

परन्तु तुम जो कुन्तीनन्दन अर्जुन को युद्ध में थका हुआ समझते हो, यह तुम्हारी भूल है। महाबाहु कुरुराज ! मैं उनके पराक्रम का सत्य-सत्य वर्णन करता हूँ, सुनो—

**न तं देवा न गन्धर्वा न यक्षा न च राक्षसाः।**
**उत्सहन्ते रणे जेतुं कुपितं सव्यसाचिनम् ॥१२॥**

युद्ध में कुपित हुए सव्यसाची अर्जुन को न देवता, न गन्धर्व, न यक्ष और न राक्षस ही जीत सकते हैं।

सञ्जय उवाच

**तं तदाभिप्रशंसन्तमर्जुनं कुपितस्तदा।**
**द्रोणं तव सुतो राजन् पुनरेवेदमब्रवीत् ॥१३॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! इस प्रकार अर्जुन की प्रशंसा करते हुए द्रोणाचार्य से उस समय आपके पुत्र ने क्रुद्ध होकर इस प्रकार कहा—

**अहं दुःशासनः कर्णः शकुनिर्मातुलश्च मे।**
**हनिष्यामोऽर्जुनं संख्ये द्विधा कृत्वाद्य भारतीम् ॥१४॥**

"आचार्य ! आज अपनी सेना को दो भागों में बाँटकर मैं, दुःशासन, कर्ण और मेरे मामा शकुनि संग्राम में अर्जुन को मार गिराएँगे।"

**तस्य तद्वचनं श्रुत्वा भारद्वाजो हसन्निव।**
**अन्ववर्तत राजानं स्वस्ति तेऽस्त्विति चाब्रवीत् ॥१५॥**

दुर्योधन की यह बात सुनकर द्रोणाचार्य ने हँसते हुए-से उसके कथन का अनुमोदन किया और 'तुम्हारा कल्याण हो' ऐसा कहकर वे राजा दुर्योधन से पुनः इस प्रकार बोले—

**को हि गाण्डीवधन्वानं ज्वलन्तमिव तेजसा।**
**अक्षयं क्षपयेत् कश्चित् क्षत्रियः क्षत्रियर्षभम् ॥१६॥**

"नरेश्वर ! अपने तेज से प्रज्वलित होनेवाले क्षत्रिय शिरोमणि, गाण्डीवधारी, नष्ट न होनेवाले अर्जुन को कौन क्षत्रिय मार सकता है ?

**मूढास्त्वेतानि भाषन्ते यानीमान्यात्थ भारत।**
**युद्धे ह्यर्जुनमासाद्य स्वस्तिमान्को व्रजेद् गृहान् ॥१७॥**

"हे भारत ! तुम जो कुछ कह रहे हो, ऐसी बातें मूर्ख लोग ही कहते हैं। भला युद्ध में अर्जुन का सामना करके कौन कुशलपूर्वक घर लौट सकता है ?

**गच्छ त्वमपि कौन्तेयमात्मार्थे जहि माचिरम्।**
**इमान्कि क्षत्रियान्सर्वान्घातयिष्यस्यनागसः ॥१८॥**

"तुम भी जाओ, अपने कल्याण के लिए कुन्तीपुत्र अर्जुन को शीघ्र मार डालो। इन सम्पूर्ण निरपराध क्षत्रियों का क्यों व्यर्थ वध कराते हो ?

**एष ते मातुलो जिह्मो द्यूतकृत् कितवः शठः।**
**देविता निकृतिप्रज्ञो युधि जेष्यति पाण्डवान् ॥१९॥**

"तुम्हारे इन मामाजी में कुटिलता, शठता और धूर्तता तो कूट-कूटकर भरी है। ये जुए के खिलाड़ी तो हैं ही, छलविद्या के भी अच्छे जानकार हैं, ये युद्ध में पाण्डवों को अवश्य जीत लेंगे।

**त्वया कथितमत्यर्थं धृतराष्ट्रस्य शृण्वतः।**
**अहं च तात कर्णश्च भ्राता दुःशासनश्च मे ॥२०॥**
**पाण्डुपुत्रान् हनिष्यामः सहिता समरे त्रयः।**
**अनुतिष्ठ प्रतिज्ञां तां सत्यवाग् भव तैः सह ॥२१॥**

"दुर्योधन ! तुमने धृतराष्ट्र के सुनते हुए बारम्बार यह बात कही थी कि—'तात ! मैं, कर्ण और भाई दुःशासन—ये तीन ही युद्धभूमि में एक-साथ मिलकर पाण्डवों का वध कर डालेंगे।' अपनी उस प्रतिज्ञा को पूर्ण करो और उन सबके साथ सत्यवादी बनो।

**एष ते पाण्डवः शत्रुरविशङ्कोऽग्रतः स्थितः।**
**क्षत्रधर्ममवेक्षस्व श्लाघ्यस्तव वधो जयात् ॥२२॥**

"ये तुम्हारे शत्रु पाण्डुपुत्र अर्जुन निर्भय होकर सामने खड़े हैं। अपने क्षत्रियधर्म की ओर दृष्टिपात करो। युद्ध में विजय की अपेक्षा अर्जुन के हाथ से तुम्हारा वध भी हो जाए तो वह तुम्हारे लिए प्रशंसा की बात होगी।

**दत्तं भुक्तमधीतं च प्राप्तमैश्वर्यमीप्सितम्।**
**कृतकृत्योऽनृणश्चासि मा भैर्युध्यस्व पाण्डवम् ॥२३॥**

"तुमने बहुत-सा दान कर लिया, भोग भोग लिये, स्वाध्याय भी कर लिया और इच्छित ऐश्वर्य भी पा लिया। तुम कृतकृत्य और देव, ऋषि तथा पितृ-ऋण से उऋण हो गये, अतः डरो मत। पाण्डुकुमार अर्जुन के साथ युद्ध करो।"

**इत्युक्त्वा समरे द्रोणो न्यवर्तत यतः परे।**
**द्वैधीकृत्य ततः सेनां युद्धं समभवत् तदा ॥२४॥**

ऐसा कहकर द्रोणाचार्य युद्धभूमि में जिस ओर शत्रुओं की सेना थी, उधर ही लौट पड़े। तदनन्तर सेना के दो विभाग करके उसी क्षण युद्ध आरम्भ हो गया।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि षट्त्रिंशोऽध्यायः ॥३६॥**

## सप्तत्रिंशोऽध्यायः

### पाण्डुवीरों का द्रोणाचार्य पर आक्रमण और दोनों दलों में घमासान युद्ध

सञ्जय उवाच

**त्रिभागमात्रशेषायां रात्र्यां युद्धमवर्तत।**
**कुरूणां पाण्डवानां च संहृष्टानां विशाम्पते ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—प्रजापते ! उस समय जब रात्रि के पन्द्रह मुहूर्तों में से तीन मुहूर्त ही शेष रह गये थे, हर्ष और उत्साह में भरे हुए कौरवों और पाण्डवों का युद्ध आरम्भ हुआ।

**ततो द्वैधीकृते सैन्ये द्रोणः सोमकपाण्डवान्।**
**अभ्यद्रवत् सपाञ्चालान् दुर्योधनपुरोगमः ॥२॥**

तदनन्तर सेना के दो भागों में विभक्त हो जाने पर द्रोणाचार्य ने दुर्योधन के आगे होकर सोमकों, पाण्डवों और पाञ्चालों पर धावा किया।

**भ्राजमानं श्रियायुक्तं ज्वलन्तमिव तेजसा।**
**द्रोणं दृष्ट्वा परे त्रेसुश्चेरुर्मम्लुश्च भारत ॥३॥**

हे भारत ! तेज से प्रज्वलित हुए-से, श्रीसम्पन्न द्रोणाचार्य को वहाँ प्रकाशित होते देख शत्रुसैनिक थर्रा उठे। कितने ही वहाँ से भाग चले और बहुत-से उदास होकर खड़े रहे।

**केचिदासन् निरुत्साहाः केचित् क्रुद्धामनस्विनः।**
**विस्मिताश्चाभवन् केचित् केचिदासन्नमर्षिताः ॥४॥**

कुछ योद्धा लड़ने का उत्साह खो बैठे, कुछ मनस्वी वीर रोष में भर गये, कितने ही योद्धा उनका पराक्रम देख आश्चर्यचकित हो उठे और कितने ही अमर्ष के वशीभूत हो गये।

**हस्तैर्हस्ताग्रमपरे प्रत्यपिषन् नराधिपाः।**
**अपरे दशनैरोष्ठानदशन् क्रोधमूर्च्छिताः ॥५॥**

कोई-कोई नरेश हाथ-से-हाथ मलने लगे। कुछ क्रोध से आतुर हो दाँतों से ओठ चबाने लगे।

**व्याक्षिपन्नायुधान्यन्ये ममृदुश्चापरे भुजान् ।**
**अन्ये चान्वपतन् द्रोणं त्यक्तात्मानो महौजसः ।।६।।**

कुछ भूपाल अपने आयुधों को उछालने और धनुष की प्रत्यञ्चा को खींचने लगे । दूसरे योद्धा अपनी भुजाओं को मसलने लगे और अन्य बहुत-से महातेजस्वी वीर अपने प्राणों का मोह छोड़कर द्रोणाचार्य पर टूट पड़े ।

**ततो द्रोणोऽजयद् युद्धे चेदिकेकयसृञ्जयान् ।**
**मत्स्यांश्चैवाजयत्कृत्स्नान्भारद्वाजो महारथान् ।।७।।**

फिर तो भरद्वाजनन्दन द्रोणाचार्य ने युद्ध में चेदि, केकय, सृञ्जय तथा मत्स्य देश के समस्त महारथियों को परास्त कर दिया ।

**ततस्तु द्रुपदः क्रोधाच्छरवर्षमवासृजत् ।**
**द्रोणं प्रति महाराज विराटश्चैव संयुगे ।।८।।**

महाराज ! द्रोणाचार्य का ऐसा पराक्रम देखकर द्रुपद और विराट ने द्रोणाचार्य पर युद्धभूमि में क्रोधपूर्वक बाणों की वर्षा आरम्भ दी ।

**तं निहत्येषुवर्षं तु द्रोणः क्षत्रियमर्दनः ।**
**तौ शरैश्छादयामास विराटद्रुपदावुभौ ।।९।।**

क्षत्रियमर्दन द्रोणाचार्य ने अपने बाणों द्वारा उस बाण-वर्षा को नष्ट करके विराट और द्रुपद दोनों को ढक दिया ।

**द्रोणेन च्छाद्यमानौ तु क्रुद्धौ संग्राममूर्धनि ।**
**द्रोणं शरैर्विव्यधतुः परमं क्रोधमास्थितौ ।।१०।।**

द्रोणाचार्य के द्वारा आच्छादित किये जाने पर क्रोध में भरे हुए वे दोनों नरेश अत्यन्त क्रुद्ध हो युद्ध के मोर्चे पर बाणों द्वारा द्रोण को घायल करने लगे ।

**ततो द्रोणः सुपीताभ्यां भल्लाभ्यामरिमर्दनः ।**
**द्रुपदं च विराटं च प्रेषयामास मृत्यवे ।।११।।**

तब शत्रुमर्दन आचार्य द्रोण ने दो पानीदार भल्लों द्वारा राजा द्रुपद और विराट को यमराज के घर भेज दिया ।

**हते विराटे द्रुपदे केकयेषु तथैव च ।**
**शशाप रथिनां मध्ये धृष्टद्युम्नो महामनाः ।।१२।।**

विराट, द्रुपद और केकय आदि के मारे जाने पर महामनस्वी धृष्टद्युम्न ने रथियों के बीच में इस प्रकार शपथ खाई—

**इष्टापूर्तात्तथा क्षात्राद् ब्राह्मण्याच्च स नश्यतु ।**
**द्रोणो यस्याद्य मुच्येत यं वा द्रोणः पराभवेत् ।।१३।।**

"आज जिसके हाथ से द्रोणाचार्य जीवित छूट जाएँ अथवा जिसे वे परास्त कर दें, वह यज्ञ करने एवं कुआँ-बावली-बनवाने और बगीचे लगाने आदि पुण्यों से वञ्चित हो जाए । वह क्षत्रित्व और ब्राह्मणत्व से भी गिर जाए ।"

**इति तेषां प्रतिश्रुत्य मध्ये सर्वधनुष्मताम् ।**
**आससाद रणे द्रोणं तदाऽऽसीत् तुमुलं महत् ।।१४।।**

इस प्रकार उन समस्त धनुर्धरों के बीच में प्रतिज्ञा करके धृष्टद्युम्न ने रणभूमि में द्रोणाचार्य पर आक्रमण किया । उस समय बड़ा भयंकर युद्ध होने लगा ।

**नैव नस्तादृशं युद्धं दृष्टपूर्वं न च श्रुतम् ।**
**यथा सूर्योदये राजन् समुत्पिञ्जोऽभवन्महान् ।।१५।।**

राजन् ! उस दिन सूर्योदय के समय जैसा महान् जनसंहारकारी संग्राम हुआ, वैसा हमने पहले न तो कभी देखा और न सुना ही था ।

**तथा संसक्तयुद्धं तदभवद् भृशदारुणम् ।**
**अथ सन्ध्यागतः सूर्यः क्षणेन समपद्यत ।।१६।।**

इस प्रकार वह अति भयंकर घमासान युद्ध हो ही रहा था कि क्षणभर में प्रातःसन्ध्या की वेला में सूर्यदेव का पूर्णतः उदय हो गया ।

**ततो रथाश्वांश्च मनुष्ययाना-**
**न्युत्सृज्य सर्वे कुरुपाण्डुयोधाः ।**
**दिवाकरस्याभिमुखं जपन्तः**
**सन्ध्यागताः प्राञ्जलयो बभूवुः ।।१७।।**

तब समस्त कौरव-पाण्डव-सैनिक रथ, घोड़े और पालकी आदि सवारियों को छोड़कर सन्ध्यावन्दन में तत्पर हो सूर्य के सम्मुख, हाथ जोड़कर वेदमन्त्रों का जप करते हुए खड़े हो गये ।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि सप्तत्रिंशोऽध्यायः ।।३७।।**

# अष्टात्रिंशोऽध्यायः

## धृष्टद्युम्न का द्रोणाचार्य पर आक्रमण तथा दुर्योधन और सात्यकि का युद्ध

सञ्जय उवाच

**उदिते तु सहस्रांशौ तप्तकाञ्चनसप्रभे ।**
**प्रकाशितेषु लोकेषु पुनर्युद्धमवर्तत ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! तपाये हुए सुवर्ण के समान कान्तिमान् सूर्य के उदय होने पर जब समस्त लोकों में प्रकाश छा गया, तब पुनः युद्ध होने लगा ।

**द्वन्द्वानि तत्र यान्यासन् संसक्तानि पुरोदयात् ।**
**तान्येवाभ्युदिते सूर्ये समसज्जन्त भारत ॥२॥**

भरतनन्दन ! सूर्योदय से पूर्व जिन लोगों में द्वन्द्वयुद्ध चल रहा था, सूर्योदय के पश्चात् भी पुनः वे ही लोग परस्पर जूझने लगे ।

**दृष्ट्वा द्रोणाय पाञ्चाल्यं व्रजन्तं युद्धदुर्मदम् ।**
**दुर्योधनो महाराज तदन्तरमुपाद्रवत् ॥३॥**

महाराज ! रणदुर्मद धृष्टद्युम्न को द्रोणाचार्य की ओर जाते देखकर राजा दुर्योधन उन दोनों के बीच में आ धमका ।

**तं सात्यकिः शीघ्रतरं पुनरेवाभ्यवर्तत ।**
**हसमानौ नृशार्दूलावभीतौ समसज्जताम् ॥४॥**

यह देख सात्यकि अति शीघ्रता के साथ दुर्योधन के सम्मुख आ गये । वे दोनों निर्भय हो हँसते हुए एक-दूसरे के साथ युद्ध करने लगे ।

**बाल्यवृत्तानि सर्वाणि प्रीयमाणौ विचिन्त्य तौ ।**
**अन्योन्यं प्रेक्षमाणौ च स्मयमानौ पुनः पुनः ॥५॥**

बचपन की सारी बातें स्मरण करके वे दोनों वीर एक-दूसरे की ओर देखते हुए बारम्बार प्रसन्नतापूर्वक मुस्करा उठते थे ।

**अथ दुर्योधनो राजा सात्यकिं समभाषत ।**
**प्रियं सखायं सततं गर्हयन् वृत्तमात्मनः ॥६॥**

फिर राजा दुर्योधन ने अपने बर्ताव की निरन्तर निन्दा करते हुए अपने प्रियमित्र सात्यकि से इस प्रकार कहा—

**धिक् क्रोधं धिक्सखे लोभं धिङ्मोहं धिगमर्षितम् ।**
**धिगस्तु क्षत्रमाचारं धिगस्तु बलमौरसम् ।**
**यत्त्वं मामभिसंधत्से त्वां चाहं शिनिपुङ्गव ॥७॥**

"मित्रवर ! क्रोध को धिक्कार है, लोभ, मोह और आवेश को धिक्कार है । इस क्षत्रियोचित आचार को धिक्कार है तथा औरस बल को भी धिक्कार है । शिनिप्रवर ! इन क्रोध, लोभ आदि के अधीन होकर तुम मुझे अपने बाणों का निशाना बनाते हो और मैं तुम्हें ।

**त्वं हि प्राणैः प्रियतरो ममाहं च सदा तव ।**
**स्मरामि तानि सर्वाणि बाल्यवृत्तानि यानि नौ ॥८॥**
**तानि सर्वाणि जीर्णानि साम्प्रतं नौ रणाजिरे ।**
**किमन्यत्क्रोधलोभाभ्यां युद्धमेवाद्य सात्वत ॥९॥**

"सात्वत वीर ! तुम मुझे सदा प्राणों से भी बढ़कर प्रिय रहे हो और मैं भी सदा ही तुम्हारा प्रिय था । बाल्यावस्था में तुम्हारे और हमारे जो प्रेमपूर्ण व्यवहार थे, वे आज भी मुझे स्मरण हैं, परन्तु अब इस युद्धभूमि में हमारे वे सभी सद्व्यवहार जीर्ण हो गये । आज का यह युद्ध क्रोध और लोभ के अतिरिक्त और क्या है ?"

**तं तथावादिनं तत्र सात्यकिः प्रत्यभाषत ।**
**प्रहसन् विशिखाँस्तीक्ष्णानुद्यम्य परमास्त्रवित् ॥१०॥**
**नेयं सभा राजपुत्र नाचार्यस्य निवेशनम् ।**
**यत्र क्रीडितमस्माभिस्तदा राजन् समागतैः ॥११॥**

उत्तम अस्त्रों के ज्ञाता सात्यकि ने हँसते हुए तीखे तीरों को ऊपर उठाकर वहाँ पूर्वोक्त बातें करनेवाले दुर्योधन को इस प्रकार उत्तर दिया—"राजकुमार ! कौरवनरेश ! यह न तो राजसभा है और न आचार्य का गुरुकुल ही है जहाँ एकत्र होकर हम सब लोग खेला करते थे ।"

दुर्योधन उवाच

**क्व सा क्रीडा गतास्माकं बाल्ये वै शिनिपुङ्गव ।**
**क्व च युद्धमिदं भूयः कालो हि दुरतिक्रमः ॥१२॥**

**दुर्योधन बोला**—शिनिप्रवर ! हमारा बाल्यकाल का वह खेल कहाँ चला गया और यह युद्ध कहाँ से आ टपका ? हाय ! काल का उल्लंघन करना अत्यन्त ही कठिन है ।

**किं नु नो विद्यते कृत्यं धनेन धनलिप्सया ।**
**यत्र युद्धामहे सर्वे धनलोभात् समागताः ॥१३॥**

हमें धन से अथवा धन पाने की इच्छा से क्या प्रयोजन है, जो हम सब लोग यहाँ धन के लालच से इकट्ठे होकर परस्पर जूझ रहे हैं ।

सञ्जय उवाच

**तं तथावादिनं तत्र राजानं माधवोऽब्रवीत् ।**
**एवंवृत्तं सदा क्षात्रं युध्यन्तीह गुरूनपि ॥१४॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! ऐसी बात करनेवाले राजा दुर्योधन से सात्यकि ने कहा—"राजन् ! क्षत्रियों का सनातन आचार ही ऐसा है कि उन्हें अपने गुरुओं के साथ भी युद्ध करना पड़ता है ।

**यदि तेऽहं प्रियो राजन् जहि मां मा चिरं कृथाः ।**
**त्वत्कृते सुकृताँल्लोकान् गच्छेयं भरतर्षभ ॥१५॥**
**या ते शक्तिर्बलं यच्च तत् क्षिप्रं मयि दर्शय ।**
**नेच्छामि तदहं द्रष्टुं मित्राणां व्यसनं महत् ॥१६॥**

"राजन् ! यदि मैं तुम्हारा प्रिय हूँ तो तुम मुझे शीघ्र मार डालो, विलम्ब मत करो । भरतकुल-भूषण ! तुम्हारे ऐसा करने पर मैं पुण्यवान् लोकों में जाऊँगा । तुममें जितनी शक्ति और बल है, वह सब शीघ्र मेरे ऊपर दिखाओ, क्योंकि मैं अपने मित्रों का महान् संकट बहुत देर तक देखना नहीं चाहता ।"

**इत्येवं व्यक्तमाभाष्य प्रतिभाष्य च सात्यकिः ।**
**अभ्ययात् तूर्णमव्यग्रो दयां नाकुरुतात्मनि ॥१७॥**

इस प्रकार स्पष्ट भाषण करके दुर्योधन की बात का उत्तर दे सात्यकि निःशङ्क होकर तुरन्त आगे बढ़े । उन्होंने अपने ऊपर दया नहीं दिखाई—अपने-आपको बचाने की चेष्टा नहीं की ।

**तमायन्तं महाबाहुं प्रत्यगृह्णात् तवात्मजः ।**
**शरैश्चावाकिरद् राजञ्शैनेयं तनयस्तव ॥१८॥**

राजन् ! सामने आते हुए उन महाबाहु सात्यकि का आपके पुत्र ने बाणों से स्वागत किया और अपने बाणसमूह से उन्हें ढक दिया ।

**तस्य संदधतश्चेषुं संहितेषु च कार्मुकम् ।**
**आच्छिनत् सात्यकिस्तूर्णं शरैश्चैवाप्यवीविधत् ॥१९॥**

फिर तो सात्यकि ने भी धनुष पर चढ़ाते हुए दुर्योधन के बाण को और जिस धनुष पर वह बाण चढ़ाया जा रहा था उस धनुष को भी तुरन्त काट डाला और बहुत-से बाण मारकर दुर्योधन को भी घायल कर दिया ।

**स गाढविद्धो व्यथितः प्रत्यपायाद् रथान्तरे ।**
**दुर्योधनो महाराज दाशार्हशरपीडितः ॥२०॥**

महाराज ! उस समय दुर्योधन सात्यकि के बाणों से गहरी चोट खाकर पीड़ित तथा व्यथित हो उठा और रथ के भीतर चला गया ।

**पाञ्चालानेव तु द्रोणो धृष्टद्युम्नपुरोगमान् ।**
**ममर्दुस्तरसा वीराः पञ्चमेऽहनि भारत ॥२१॥**

हे भारत ! इधर दुर्योधन और सात्यकि का संग्राम चल रहा था, उधर से द्रोणाचार्य ने धृष्टद्युम्न आदि पाञ्चालों पर ही आक्रमण किया । उस पाँचवें दिन के युद्ध में सभी वीर वेगपूर्वक एक-दूसरे को रौंदने लगे ।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि अष्टत्रिंशोऽध्यायः ॥३८॥**

# एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः

**अश्वत्थामा की मृत्यु का समाचार सुनकर द्रोणाचार्य का अस्त्रत्याग और धृष्टद्युम्न द्वारा उनका वध**

सञ्जय उवाच

**वध्यमानेषु संग्रामे पाञ्चालेषु महात्मना ।**
**उदीर्यमाणे द्रोणास्त्रे पाण्डवान् भयमाविशत् ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! संग्राम में जब महामनस्वी द्रोणाचार्य के द्वारा पाञ्चाल-सैनिक मौत के घाट उतारे जाने लगे एवं द्रोणाचार्य के अस्त्र लगातार बरसने लगे, तब पाण्डवों के मन में भय समा गया ।

**त्रस्तान् कुन्तीसुतान्दृष्ट्वा द्रोणसायकपीडितान् ।**
**मतिमान् श्रेयसं युक्तः केशवोऽर्जुनमब्रवीत् ॥२॥**

कुन्तीकुमारों को द्रोणाचार्य के बाणों से पीड़ित और भयभीत देखकर उनके कल्याण में लगे हुए बुद्धिमान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन से इस प्रकार कहा—

**नैष युद्धेन संग्रामे जेतुं शक्यः कथञ्चन ।**
**सधनुर्धन्विनां श्रेष्ठो देवैरपि सवासवैः ॥३॥**

"पार्थ ! ये द्रोणाचार्य सम्पूर्ण धनुर्धरों में श्रेष्ठ हैं। जबतक इनके हाथ में धनुष रहेगा, तबतक इन्हें युद्ध में इन्द्रसहित सम्पूर्ण देवता भी किसी प्रकार जीत नहीं सकते।

**न्यस्तशस्त्रस्तु संग्रामे शक्यो हन्तुं भवेन्नृभिः।**
**आस्थीयतां जये योगो धर्ममुत्सृज्य पाण्डवाः ॥४॥**

"जब ये संग्राम में हथियार डाल देंगे, तभी मनुष्यों द्वारा मारे जा सकते हैं, अतः पाण्डवो ! 'गुरु का वध करना उचित नहीं है' इस धर्मभावना को छोड़कर उनपर विजय पाने के लिए कोई यत्न करो।

**अश्वत्थाम्नि हते नैष युध्येदिति मतिर्मम।**
**तं हतं संयुगे कश्चिदस्मै शंसतु मानवः ॥५॥**

"मेरा विश्वास है कि अश्वत्थामा के मारे जाने पर ये युद्ध नहीं कर सकते, अतः कोई मनुष्य उनसे जाकर कहे कि 'युद्ध में अश्वत्थामा मारा गया'।"

**एतन्नारोचयद् राजन् कुन्तीपुत्रो धनञ्जयः।**
**अन्ये त्वरोचयन् सर्वे कृच्छ्रेण तु युधिष्ठिरः ॥६॥**

राजन् ! कुन्तीपुत्र अर्जुन को यह सम्मति अच्छी नहीं लगी, किन्तु अन्य सब लोगों ने इसका स्वागत किया। राजा युधिष्ठिर भी बड़ी कठिनाई से इस बात पर सहमत हो गये।

**ततो भीमो महाबाहुरनीके स्वे महागजम्।**
**जघान गदया राजन्नश्वत्थामानमित्युत ॥७॥**

राजन् ! तब महाबाहु भीमसेन ने अपनी ही सेना के एक विशाल हाथी को गदा से मार डाला। उस हाथी का नाम अश्वत्थामा था।

**भीमसेनस्तु सव्रीडमुपेत्य द्रोणमाहवे।**
**अश्वत्थामा हत इति शब्दमुच्चैश्चकार सः ॥८॥**

उस हाथी को मारकर भीमसेन लजाते हुए रण-भूमि में द्रोणाचार्य के पास गये और बड़े जोर से बोले—"अश्वत्थामा मारा गया।"

**अश्वत्थामेति हि गजः ख्यातो नाम्ना हतोऽभवत्।**
**कृत्वा मनसि तं भीमो मिथ्या व्याहृतवाँस्तदा ॥९॥**

'अश्वत्थामा' नाम का हाथी मारा गया था, उसी को मन में रखकर भीमसेन ने वह मिथ्या भाषण किया था।

**भीमसेनवचः श्रुत्वा द्रोणस्तत् परमाप्रियम्।**
**मनसा सन्नगात्रोऽभूद् यथा सैकतमम्भसि ॥१०॥**

भीमसेन का वह अत्यन्त अप्रिय वचन सुनकर द्रोणाचार्य मन-ही-मन शोक से व्याकुल हो सन्न रह गये। जैसे पानी पड़ते ही बालू गल जाता है, वैसे ही उस दुःख-संवाद से उनका सारा शरीर शिथिल पड़ गया।

**शङ्कमानः स तन्मिथ्या वीर्यज्ञः स्वसुतस्य वै।**
**हतः स इति च श्रुत्वा नैव धैर्यादकम्पयत् ॥११॥**

फिर उनके मन में यह सन्देह हुआ कि सम्भव है, यह बात झूठी हो, क्योंकि वे अपने पुत्र के बल-पराक्रम को जानते थे, अतः उसके वध का वृत्तान्त सुनकर भी वे धैर्य से विचलित नहीं हुए।

**लब्ध्वा चेतनां द्रोणः क्षणेनैव समाश्वसत्।**
**अनुचिन्त्यात्मनः पुत्रमविषह्यमरातिभिः ॥१२॥**

उनके मन में बारम्बार यही विचार आया कि मेरा पुत्र तो शत्रुओं के लिए असह्य है, अतः क्षणभर में ही सचेत होकर उन्होंने अपने-आपको सँभाल लिया।

**संदिह्यमानो व्यथितः कुन्तीपुत्रं युधिष्ठिरम्।**
**अहतं वा हतं वेति पप्रच्छ सुतमात्मनः ॥१३॥**

वे सन्देह में पड़े हुए थे, अतः उन्होंने व्यथित होकर अपने पुत्र के मारे जाने अथवा जीवित होने का समाचार कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर से पूछा।

**स्थिरा बुद्धिर्हि द्रोणस्य न पार्थो वक्ष्यतेऽनृतम्।**
**त्रयाणामपि लोकानामैश्वर्यार्थे कथञ्चन ॥१४॥**

द्रोणाचार्य के मन में यह दृढ़ विश्वास था कि कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर तीनों लोकों का राज्य पाने के लिए भी झूठ नहीं बोलेंगे।

**तस्मात् तं परिपप्रच्छ नान्यं कञ्चिद् द्विजर्षभः।**
**तस्मिंस्तस्य हि सत्याशा बाल्यात् प्रभृति पाण्डवे ॥१५**

इसलिए उस द्विजश्रेष्ठ ने युधिष्ठिर से ही वह बात पूछी, दूसरे किसी से नहीं, क्योंकि बाल्यावस्था से ही पाण्डुपुत्र की सचाई में आचार्य का विश्वास था।

**ततो निष्पाण्डवामुर्वीं करिष्यन्तं युधां पतिम्।**
**द्रोणं ज्ञात्वा धर्मराजं गोविन्दो व्यथितोऽब्रवीत् ॥१६॥**

उस समय योद्धाओं में श्रेष्ठ द्रोणाचार्य इस पृथिवी को पाण्डवों से शून्य कर डालने के लिए उद्यत थे। उनका यह विचार जानकर श्रीकृष्ण ने व्यथित हो धर्मराज युधिष्ठिर से कहा—

**यद्यर्धदिवसं द्रोणो युध्यते मन्युमास्थितः ।**
**सत्यं ब्रवीमि ते सेना विनाशं समुपैष्यति ॥१७॥**

"राजन् ! यदि क्रोध में भरे हुए द्रोणाचार्य आधे दिन भी युद्ध करते रहे, तो मैं सच कहता हूँ, तुम्हारी सम्पूर्ण सेना का विनाश हो जाएगा।

**स भवाँस्त्रातु नो द्रोणात्सत्याज्ज्यायोऽनृतं वचः ।**
**अनृतं जीवितस्यार्थे वदन्न स्पृश्यतेऽनृतैः ॥१८॥**

"अतः तुम हम लोगों को द्रोणाचार्य से बचाओ। इस अवसर पर मिथ्याभाषण का महत्त्व सत्य से भी बढ़कर है। किसी की प्राणरक्षा के लिए यदि कभी असत्य बोलना पड़े तो उस असत्यभाषी को पाप नहीं लगता।"

भीमसेन उवाच

**श्रुत्वैवं तु महाराज वधोपायं महात्मनः ।**
**गाहमानस्य ते सेनां मालवस्येन्द्रवर्मणा ॥१९॥**
**अश्वत्थामेति विख्यातो गजः शक्रगजोपमः ।**
**निहतो युधि विक्रम्य ततोऽहं द्रोणमब्रुवम् ॥२०॥**
**अश्वत्थामा हतो ब्रह्मन्निवर्तस्वाहवादिति ।**
**नूनं नाश्रद्दधद् वाक्यमेष मे पुरुषर्षभः ॥२१॥**

**भीमसेन बोले**—महाराज युधिष्ठर ! महामनस्वी द्रोण के वध का ऐसा उपाय सुनकर मैंने आपकी सेना में विचरनेवाले मालव-नरेश इन्द्रवर्मा के 'अश्वत्थामा' नाम से प्रसिद्ध गजराज को, जो ऐरावत के समान शक्तिशाली था, युद्ध में पराक्रम करके मार डाला। तत्पश्चात् द्रोणाचार्य के पास जाकर कहा—'ब्रह्मन् ! अश्वत्थामा मारा गया, अब आप युद्ध से निवृत्त हो जाओ।' परन्तु इस पुरुषश्रेष्ठ द्रोणाचार्य ने निश्चय ही मेरी बात पर विश्वास नहीं किया है।

**स त्वं गोविन्दवाक्यानि मानयस्व जयैषिणः ।**
**द्रोणाय निहतं शंस राजञ्शारद्वतीसुतम् ॥२२॥**

नरेश्वर ! आप विजय चाहनेवाले श्रीकृष्ण की बात मान लीजिए और द्रोणाचार्य से कह दीजिए कि 'अश्वत्थामा मारा गया।'

**त्वयोक्तो नैव युध्येत जातु राजन् द्विजर्षभः ।**
**सत्यवान्हि नृलोकेऽस्मिन्भवान् ख्यातो जनाधिप ॥२३॥**

राजन् ! प्रजेश्वर ! आपके कह देने पर द्विज-श्रेष्ठ द्रोणाचार्य कदापि युद्ध नहीं करेंगे, क्योंकि आप इस लोक में सत्यवादी के रूप में प्रसिद्ध हैं।

सञ्जय उवाच

**तस्य तद्वचनं श्रुत्वा कृष्णवाक्यप्रणोदितः ।**
**भावित्वाच्च महाराज वक्तुं समुपचक्रमे ॥२४॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज ! भीम की यह बात सुनकर और श्रीकृष्ण के आदेश से प्रेरित हो, होनहार को प्रबल मानकर युधिष्ठिर वह असत्य बात कहने के लिए उद्यत हो गये।

**तमतथ्यभये मग्नो जये सक्तो युधिष्ठिरः ।**
**अश्वत्थामा हत इति शब्दमुच्चैश्चचार ह ।**
**अव्यक्तमब्रवीद् राजन् हतः कुञ्जर इत्युत ॥२५॥**[1]

एक ओर तो वे असत्यभाषण के भय में डूबे हुए थे और दूसरी ओर विजय-प्राप्ति के लिए भी आसक्तिपूर्वक प्रयत्नशील थे, अतः राजन् ! उन्होंने 'अश्वत्थामा मारा गया' यह बात तो उच्चस्वर से कही परन्तु 'हाथी मारा गया है' यह बात धीरे से और अस्पष्टरूप में कही।

---

१. द्रोणवध के सम्बन्ध में ऐसी मिथ्या धारणा प्रचलित है कि जब द्रोणाचार्य ने युधिष्ठिर से पूछा कि—"क्या अश्वत्थामा मारा गया ?" तब युधिष्ठिर ने उत्तर दिया—'**अश्वत्थामा हतो नरो वा कुञ्जरो वा**' अर्थात् अश्वत्थामा मारा गया, यह पता नहीं कि वह मनुष्य था या हाथी। यह वाक्य महाभारत के किसी भी संस्करण में नहीं है। यह सब तो कथावाचक अम्बिकादत्त व्यास की कल्पना है।

महाभारत में तो इतना ही वर्णन है कि युधिष्ठिर ने '**अश्वत्थामा हतः**', इन शब्दों को उच्च स्वर से बोला और '**हतः कुञ्जर इत्युत**', इन शब्दों को धीरे से बोला।

यदि गम्भीरतापूर्वक देखें तो युधिष्ठिर ने छल का आश्रय लिया है, असत्य-भाषण नहीं किया।

**युधिष्ठिरात्तु तद्वाक्यं श्रुत्वा द्रोणो महारथः ।**
**पुत्रव्यसनसन्तप्तो निराशो जीवितेऽभवत् ।।२६।।**

युधिष्ठिर के मुख से ये वचन सुनकर महारथी द्रोणाचार्य पुत्रशोक से सन्तप्त हो अपने जीवन से निराश हो गये।

**सर्वाण्यस्त्राणि धर्मात्मा हातुकामोऽभ्यभाषत ।**
**कर्ण कर्ण महेष्वास कृप दुर्योधनेति च ।।२७।।**
**संग्रामे क्रियतां यत्नो ब्रवीम्येष पुनः पुनः ।**
**पाण्डवेभ्यः शिवं वोऽस्तु शस्त्रमभ्युत्सृजाम्यहम् ।।२८।।**

फिर सब अस्त्र-शस्त्रों को त्याग देने की इच्छा से वे इस प्रकार बोले—"कर्ण ! कर्ण ! महाधनुर्धर कृपाचार्य ! दुर्योधन ! अब तुम लोग स्वयं ही युद्ध में विजय पाने के लिए प्रयत्न करो, यही मैं तुमसे बारम्बार कहता हूँ। पाण्डवों से तुम लोगों का कल्याण हो। अब मैं अस्त्र-शस्त्रों का त्याग कर रहा हूँ।"

**इति तत्र महाराज प्राक्रोशद् द्रौणिमेव च ।**
**उत्सृज्य च रणे शस्त्रं रथोपस्थे निविश्य च ।।२९।।**
**अभयं सर्वभूतानां प्रददौ योगमीयिवान् ।**
**तस्य तच्छिद्रमाज्ञाय धृष्टद्युम्नः प्रतापवान् ।।३०।।**
**सशरं तद् धनुर्घोरं संन्यस्याथ रथे ततः ।**
**खड्गी रथादवप्लुत्य सहसा द्रोणमभ्ययात् ।।३१।।**

महाराज ! उनसे ऐसा कहकर उन्होंने वहाँ अश्वत्थामा का नाम ले-लेकर पुकारा। फिर वे अस्त्र-शस्त्रों को युद्धभूमि में फेंककर रथ के पिछले भाग में जा बैठे और सम्पूर्ण प्राणियों को अभयदान देकर समाधि लगा ली। उनपर प्रहार करने का अच्छा अवसर हाथ लगा जान प्रतापी धृष्टद्युम्न बाणसहित अपने धनुष को रथ पर ही रखकर तलवार हाथ में ले उस रथ से कूदकर सहसा द्रोणाचार्य के पास जा पहुँचे।

**हाहाकृतानि भूतानि मानुषाणीतराणि च ।**
**द्रोणं तथागतं दृष्ट्वा धृष्टद्युम्नवशं गतम् ।।३२।।**

उस दशा में द्रोणाचार्य को धृष्टद्युम्न के अधीन हुआ देख मनुष्य तथा अन्य प्राणी भी हाहाकार कर उठे।

**ततोऽस्य केशान् सव्येन गृहीत्वा पाणिना तदा ।**
**पार्षतः क्रोशमानानां वीराणामच्छिनच्छिरः ।।३३।।**

वहाँ पहुँचकर द्रुपदपुत्र ने समस्त वीरों के पुकार-पुकारकर मना करने पर भी उनकी बातें अनसुनी करके बायें हाथ से आचार्य के केश पकड़ लिये और दाहिने हाथ से उनका सिर काट लिया।

**हर्षेण महता युक्तो भारद्वाजे निपातिते ।**
**सिंहनादरवं चक्रे भ्रामयन् खड्गमाहवे ।।३४।।**

इस प्रकार द्रोणाचार्य का वध करके धृष्टद्युम्न को महान् हर्ष हुआ और वे समराङ्गण में तलवार घुमाते हुए जोर-जोर से सिंहनाद करने लगे।

**उक्तवाँश्च महाबाहुः कुन्तीपुत्रो धनञ्जयः ।**
**जीवन्तमानयाचार्यं मा वधीर्द्रुपदात्मज ।।३५।।**

यद्यपि उस समय महाबाहु कुन्तीकुमार ने बहुत कहा—"ओ द्रुपदकुमार ! तुम आचार्य को जीते-जी पकड़ लो। उनका वध मत करना।"

**न हन्तव्यो न हन्तव्य इति ते सैनिकाश्च ह ।**
**उत्क्रोशन्नर्जुनश्चैव सानुक्रोशस्तमाव्रजत् ।।३६।।**
**क्रोशमानेऽर्जुने चैव पार्थिवेषु च सर्वशः ।**
**धृष्टद्युम्नोऽवधीद् द्रोणं रथतल्पे नरर्षभम् ।।३७।।**

आपके सैनिक भी बारम्बार कहते ही रह गये कि 'न मारो, न मारो।' अर्जुन तो दयावश चिल्लाते हुए धृष्टद्युम्न के पास आने लगे, परन्तु उनके तथा अन्य भूपालों के पुकारते रहने पर भी धृष्टद्युम्न ने रथ की बैठक में बैठे नरश्रेष्ठ द्रोण का वध कर ही डाला।

**शोणितेन परिक्लिन्नो रथाद् भूमिमथापतत् ।**
**लोहिताङ्ग इवादित्यो दुर्धर्षः समपद्यत ।।३८।।**

दुर्धर्ष द्रोणाचार्य का शरीर रक्त से लथपथ हो रथ से भूमि पर गिर पड़ा, मानो लाल अङ्गकान्तिवाले सूर्य डूब गये हों।

**पाण्डवास्तु जयं लब्ध्वा हृष्टा ह्यासन् विशाम्पते ।**
**बाणशंखरवाँश्चक्रुः सिंहनादाँश्च पुष्कलान् ।।३९।।**

प्रजेश्वर ! पाण्डव विजय पाकर हर्ष से खिल उठे। वे धनुष पर बाण चढ़ाकर उसकी टंकार करने लगे, शंख बजाने और बार-बार सिंहनाद करने लगे।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ।।३९।।**

# चत्वारिंशोऽध्यायः

## अश्वत्थामा का क्रोध और नारायणास्त्र का प्रकटीकरण

सञ्जय उवाच

**भास्करस्येव पतनं समुद्रस्येव शोषणम् ।**
**विपर्यासं यथा मेरोर्वासवस्येव निर्जयम् ॥१॥**
**अमर्षणीयं तद् दृष्ट्वा भारद्वाजस्य पातनम् ।**
**त्रस्तरूपतरा राजन् कौरवाः प्राद्रवन् भयात् ॥२॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! जैसे सूर्य का पृथिवी पर गिर पड़ना, समुद्र का सूख जाना, मेरुपर्वत का उल्टी दिशा में चले जाना और इन्द्र का परास्त हो जाना असम्भव है, वैसे ही आचार्य द्रोण का मारा जाना भी असम्भव समझा जाता था, परन्तु द्रोणाचार्य के उसी असम्भव वध को सम्भव हुआ देख सारे कौरव थर्रा उठे और भय के मारे भागने लगे ।

**द्रवमाणं बलं दृष्ट्वा पलायनकृतक्षणम् ।**
**दुर्योधनं समासाद्य द्रोणपुत्रोऽब्रवीदिदम् ॥३॥**

भागने में उत्साह दिखाती हुई कौरव-सेना को पलायन करते हुए देखकर द्रोणपुत्र अश्वत्थामा ने दुर्योधन के पास जाकर पूछा—

**किमयं द्रवते सेना त्रस्तरूपेव भारत ।**
**द्रवमाणां च राजेन्द्र नावस्थापयसे रणे ॥४॥**

"भरतभूषण ! यह सेना भयभीत-सी होकर भागी क्यों जा रही है ? राजेन्द्र ! इस भागती हुई सेना को आप युद्ध में ठहराने का प्रयत्न क्यों नहीं करते ?

**त्वं चापि न यथापूर्वं प्रकृतिस्थो नराधिप ।**
**कर्णप्रभृतयश्चेमे नावतिष्ठन्ति पार्थिवाः ॥५॥**

"नरेश्वर ! आप भी पहले के समान स्वस्थ दिखाई नहीं देते । भूपाल ! ये कर्ण आदि वीर भी युद्धक्षेत्र में खड़े नहीं हो रहे हैं, इसका क्या कारण है ?

**कस्मिन्निदं हते राजन् रथसिंहे बलं तव ।**
**एतामवस्थां सम्प्राप्तं तन्ममाचक्ष्व कौरव ॥६॥**

"राजन् ! कुरुनन्दन ! किस सिंह के समान पराक्रमी रथी के मारे जाने पर आपकी यह सेना इस दुर्दशा को पहुँच गई है, यह मुझे बताइए ।"

**तत्तु दुर्योधनः श्रुत्वा द्रोणपुत्रस्य भाषितम् ।**
**घोरमप्रियमाख्यातुं नाशक्नोत् पार्थिवर्षभः ॥७॥**

द्रोणपुत्र अश्वत्थामा की वह बात सुनकर नृपश्रेष्ठ दुर्योधन वह घोर अप्रिय समाचार स्वयं उसे न कह सका ।

**ततः शारद्वतं राजा सव्रीडमिदमब्रवीत् ।**
**शंसात्र भद्रं ते सर्वं यथा सैन्यमिदं द्रुतम् ॥८॥**

उस समय राजा दुर्योधन ने कृपाचार्य से संकोचपूर्वक कहा—"गुरुवर ! आपका कल्याण हो । आप ही वह समाचार बता दीजिए कि यह सेना क्यों भागी जा रही है ।"

**अथ शारद्वतो राजन्नार्तिमाच्छंन् पुनः पुनः ।**
**शशंस द्रोणपुत्राय यथा द्रोणो निपातितः ॥९॥**

हे राजन् ! तब शरद्वान् के पुत्र कृपाचार्य ने बारम्बार पीड़ा का अनुभव करते हुए जिस प्रकार द्रोणाचार्य मारे गये थे, वह समाचार अश्वत्थामा को कह सुनाया ।

**छद्मना निहतं श्रुत्वा पितरं पापकर्मणा ।**
**बाष्पेणापूर्यत द्रौणी रोषेण च नरर्षभ ॥१०॥**

नरश्रेष्ठ ! 'पापी धृष्टद्युम्न ने मेरे पिता को छलपूर्वक मार डाला है,' यह सुनकर अश्वत्थामा के नेत्रों में आँसू भर आये, फिर वह क्रोध से जल उठा

**अश्रुपूर्णे ततो नेत्रे व्यपमृज्य पुनः पुनः ।**
**उवाच कोपान्निःश्वस्य दुर्योधनमिदं वचः ॥११॥**

फिर अपने आँसूभरे नेत्रों को बारम्बार पोंछकर, क्रोध से दीर्घ निःश्वास छोड़ते हुए अश्वत्थामा ने दुर्योधन से इस प्रकार कहा—

**पिता मम यथा क्षुद्रैर्न्यस्तशस्त्रो निपातितः ।**
**धर्मध्वजवता पापं कृतं तद् विदितं मम ॥१२॥**

"राजन् ! मेरे पिता ने जिस प्रकार हथियार डाल दिये, जिस प्रकार उन नीचों ने उन्हें मार गिराया और धर्म का ढोंग करनेवाले युधिष्ठिर ने जो पाप किया है, वह सब मुझे ज्ञात हो गया ।

**युद्धेष्वपि प्रवृत्तानां ध्रुवं जयपराजयौ ।**
**द्वयमेतद् भवेद् राजन् वधस्तत्र प्रशस्यते ॥१३॥**

"राजन् ! जो लोग युद्ध में प्रवृत्त होते हैं, उन्हें विजय और पराजय अवश्य प्राप्त होती है, परन्तु युद्ध में होनेवाले वध की अधिक प्रशंसा की गई है ।

**न्यायवृत्तो वधो यस्तु संग्रामे युद्धतो भवेत् ।**
**न स दुःखाय भवति तथा दृष्टो हि स द्विजैः ॥१४॥**

"संग्राम में जूझते हुए वीर को यदि न्यायानुकूल वध प्राप्त हो जाए तो वह दुःख का कारण नहीं होता, क्योंकि द्विजों ने युद्ध के इस परिणाम को देखा है ।

**गतः स वीरलोकाय पिता मम न संशयः ।**
**न शोच्यः पुरुषव्याघ्र यस्तदा निधनं गतः ॥१५॥**

"पुरुषसिंह ! इसमें संशय नहीं कि मेरे पिता वीरगति को प्राप्त हुए हैं । वे मारे गये हैं, इस बात को लेकर उनके लिए शोक करना उचित नहीं है ।

**यत्तु धर्मप्रवृत्तः सन् केशग्रहमवाप्तवान् ।**
**पश्यतां सर्वसैन्यानां तन्मे मर्माणि कृन्तति ॥१६॥**

"परन्तु धर्म में तत्पर रहने पर भी जो समस्त सैनिकों के समक्ष उनके केश पकड़े गये, वह अपमान ही मेरे मर्मस्थानों को विदीर्ण किये देता है ।

**मयि जीवति यत् तातः केशग्रहमवाप्तवान् ।**
**कथमन्ये करिष्यन्ति पुत्रेभ्यः पुत्रिणः स्पृहाम् ॥१७॥**

"मेरे जीते-जी यदि पिता को अपने केश पकड़े जाने का अपमान सहना पड़ा, तब दूसरे पुत्रवान् पुरुष किसलिए पुत्रों की अभिलाषा करेंगे ?

**कामात् क्रोधादविज्ञानाद्धर्षाद् बाल्येन वा पुनः ।**
**विधर्मकाणि कुर्वन्ति तथा परिभवन्ति च ॥१८॥**
**तदिदं पार्षतेनेह महदाधर्मिकं कृतम् ।**
**अवज्ञाय च मां नूनं नृशंसेन दुरात्मना ॥१९॥**

"लोग काम, क्रोध, अज्ञान, हर्ष अथवा बालोचित चञ्चलता के कारण धर्मविरुद्ध कार्य करते और सज्जनों का अपमान भी कर बैठते हैं, परन्तु क्रूर एवं दुरात्मा द्रुपदकुमार ने निश्चय ही मेरी अवहेलना करके यह महान् पापकर्म कर डाला है ।

**तस्यानुबन्धं द्रष्टासौ धृष्टद्युम्नः सुदारुणम् ।**
**अनार्यं परमं कृत्वा मिथ्यावादी च पाण्डवः ॥२०॥**

**यो ह्यसौ छद्मनाऽऽचार्यं शस्त्रं संन्यासयत् तदा ।**
**तस्याद्य धर्मराजस्य भूमिः पास्यति शोणितम् ॥२१॥**

"अतः उस धृष्टद्युम्न को उस पाप का अत्यन्त भयंकर परिणाम भोगना पड़ेगा, साथ ही मिथ्यावादी पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर को भी यह अत्यन्त नीच कर्म करने के कारण इसका भीषण परिणाम देखना पड़ेगा । जिसने छल करके आचार्य से उस समय अस्त्र-शस्त्र रखवा दिये थे, आज यह पृथिवी उस धर्मराज युधिष्ठिर के रक्त का पान करेगी ।

**शपे सत्येन कौरव्य इष्टापूर्तेन चैव ह ।**
**अहत्वा सर्वपाञ्चालान् जीवेयं न कथञ्चन ॥२२॥**

"कुरुनन्दन ! मैं अपने सत्य, इष्ट [यज्ञ-यागादि] और आपूर्त [वापी-तड़ागादि] कर्मों की शपथ खाकर कहता हूँ कि समस्त पाञ्चालों को मौत के घाट उतारे बिना मैं किसी प्रकार जीवित नहीं रह सकूंगा ।

**धृष्टद्युम्नं च समरे हन्ताहं पापकारिणम् ।**
**कर्मणा येन तेनेह मृदुना दारुणेन च ॥२३॥**

"युद्धभूमि में पापाचारी धृष्टद्युम्न को मैं कोमल अथवा कठोर जिस किसी भी उपाय द्वारा अवश्य मार डालूंगा ।

**धिङ्ममास्त्रणि दिव्यानि धिग्बाहू धिक्पराक्रमम् ।**
**यं स्म द्रोणः सुतं प्राप्य केशग्रहमवाप्तवान् ॥२४॥**

"मेरे दिव्यास्त्रों को धिक्कार है ! मेरी इन दोनों भुजाओं को धिक्कार है ! मेरे पराक्रम को भी धिक्कार है, जबकि मेरे जैसे पुत्र को पाकर पूज्य पिता को शत्रु द्वारा केश-ग्रहण का अपमान सहना पड़ा ।

**स तथाहं करिष्यामि यथा भरतसत्तम ।**
**परलोकगतस्यापि भविष्याम्यनृणः पितुः ॥२५॥**

"भरतश्रेष्ठ ! अब मैं ऐसा प्रयत्न करूँगा, जिससे मैं परलोक में गये हुए पिता के ऋण से मुक्त हो सकूं ।

**अद्य पश्यन्तु मे वीर्यं पाण्डवाः सजनार्दनाः ।**
**मृद्नतः सर्वसैन्यानि युगान्तमिव कुर्वतः ॥२६॥**

"आज मैं सारी सेनाओं को रौंदता हुआ प्रलय-काल का दृश्य उपस्थित करूँगा, अतः आज श्रीकृष्ण-सहित समस्त पाण्डव मेरा पराक्रम देखें ।

**सोऽहं नारायणास्त्रेण महता शत्रुतापनः ।**
**शत्रून् विध्वंसयिष्यामि कदर्थीकृत्य पाण्डवान् ।।२७।।**

"शत्रुसन्तापक ! मैं महान् नारायण अस्त्र का प्रयोग करके पाण्डवों को पीड़ा देता हुआ अपने समस्त शत्रुओं का संहार कर डालूँगा ।

**मित्रब्रह्मगुरुद्रोही जाल्मकः सुविगर्हितः ।**
**पाञ्चालापसदश्चाद्य न मे जीवन् विमोक्ष्यते ।।२८।।**

"मित्र, ब्राह्मण और गुरु-द्रोही अत्यन्त निन्दित वह पाञ्चाल-कुल-कलङ्क, पामर धृष्टद्युम्न आज मेरे हाथ से जीवित नहीं छूट सकेगा ।

**न हि जानाति बीभत्सुस्तदस्त्रं न जनार्दनः ।**
**न भीमसेनो न यमौ न च राजा युधिष्ठिरः ।।२९।।**
**न पार्षतो दुरात्मासौ न शिखण्डी न सात्यकिः ।**
**यदिदं मयि कौरव्य सकल्पं सनिवर्तनम् ।।३०।।**

"आज मैं जिस नारायणास्त्र का प्रयोग करूँगा, उसे न अर्जुन जानते हैं न कृष्ण; भीमसेन, नकुल-सहदेव और राजा युधिष्ठिर को भी उसका ज्ञान नहीं है । वह दुरात्मा धृष्टद्युम्न, शिखण्डी और सात्यकि भी उसके ज्ञान से रहित हैं । कुरुनन्दन ! वह तो प्रयोग और उपसंहारसहित केवल मेरे ही पास है ।"

**तथोक्त्वा द्रोणपुत्रस्तु वार्युपस्पृश्य भारत ।**
**प्रादुश्चकार तद् दिव्यमस्त्रं नारायणं तदा ।।३१।।**

हे भारत ! द्रोणपुत्र अश्वत्थामा ने पूर्वोक्त बात कहकर जल से आचमन करके उस समय दिव्य नारायणास्त्र को प्रकट किया ।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि चत्वारिंशोऽध्यायः ।।४०।।**

# एकचत्वारिंशोऽध्यायः

## भीमसेन के वीरोचित उद्‌गार और धृष्टद्युम्न द्वारा अपने कृत्य का समर्थन

सञ्जय उवाच

**व्यथिताः सर्वराजानस्त्रस्ताश्चासन् विशाम्पते ।**
**तद् दृष्ट्वा घोररूपं वै द्रौणेरस्त्रं भयावहम् ।।१।।**

**सञ्जय बोला**—महाराज ! अश्वत्थामा के उस घोर और भयंकर अस्त्र को देखकर सभी नरेश व्यथित तथा भयभीत हो गये ।

**प्रागेव विद्रुतान् दृष्ट्वा धार्तराष्ट्रान् युधिष्ठिरः ।**
**पुनश्च तुमुलं शब्दं श्रुत्वार्जुनमथाब्रवीत् ।।२।।**

राजा युधिष्ठिर ने पहले तो आपके सैनिकों को भागते देखा था । तत्पश्चात् उन्होंने वह भयंकर शब्द सुनकर अर्जुन से पूछा—

**क एष कौरवान् दीर्णानवस्थाप्य महारथाः ।**
**निवर्तयति युद्धार्थं मृधे देवेश्वरो यथा ।।३।।**

"अर्जुन ! देवराज इन्द्र के समान यह कौन महारथी है, जो भागे हुए कौरवों को रोककर उन्हें पुनः युद्ध के लिए समराङ्गण में लौटा रहा है ?"

अर्जुन उवाच

**यस्मिञ्जाते ददौ द्रोणो गवां दशशतं धनम् ।**
**ब्राह्मणेभ्यो महार्हेभ्यः सोऽश्वत्थामैष गर्जति ।।४।।**

**अर्जुन ने कहा**—राजन् ! जिसके शुभ जन्म लेने पर द्रोणाचार्य ने परम सुयोग्य ब्राह्मणों को एक सहस्र गौएँ दान दी थीं, वही अश्वत्थामा यह गर्जना कर रहा है ।

**गुरुं मे यत्र पाञ्चाल्यः केशपक्षे परामृशत् ।**
**तन्न जातु क्षमेद् द्रौणिर्जानन् पौरुषमात्मनः ।।५।।**

पाञ्चालराजकुमार धृष्टद्युम्न ने जो मेरे गुरु के केश पकड़कर खींचे थे, उसे अपने आत्मबल को जाननेवाला अश्वत्थामा कभी क्षमा नहीं कर सकता ।

**उपचीर्णो गुरुर्मिथ्या भवता राज्यकारणात् ।**
**धर्मज्ञेन सता नाम सोऽधर्मः सुमहान् कृतः ।।६।।**

आपने धर्मज्ञ होते हुए भी राज्य के लोभ से झूठ बोलकर जो अपने गुरु को धोखा दिया था, वह महान् पाप किया है ।

**चिरं स्थास्यति चाकीर्तिस्त्रैलोक्ये सचराचरे ।**
**रामे बालिबधाद् यद्वदेवं द्रोणे निपातिते ।।७।।**

छिपकर बाली का वध करने के कारण जैसे श्रीराम को अपयश मिला, वैसे ही मिथ्याभाषण करके द्रोणाचार्य को मरवा देने के कारण चराचर प्राणियों-

सहित तीनों लोकों में आपकी अपकीर्ति चिरस्थायी हो जाएगी।

**रक्षत्विदानीं सामात्यो यदि शक्तोऽसि पार्षतम्।**
**ग्रस्तमाचार्यपुत्रेण क्रुद्धेन हतबन्धुना ॥८॥**

जिसके पिता मारे गये हैं, वह आचार्यपुत्र अश्वत्थामा आज क्रुद्ध होकर धृष्टद्युम्न को काल का ग्रास बनाना चाहता है, अब यदि आपमें शक्ति है तो अपने मन्त्रियोंसहित पृषतकुमार धृष्टद्युम्न की रक्षा कीजिए।

**ब्राह्मणं वृद्धमाचार्यं न्यस्तशस्त्रं महामुनिम्।**
**घातयित्वाद्य राज्यार्थे मृतं श्रेयो न जीवितम् ॥९॥**

राजन्! शस्त्र त्यागकर मुनि की भाँति बैठे हुए, ब्राह्मणश्रेष्ठ, वृद्ध द्रोणाचार्य को राज्य के लिए मरवाकर मैं जीवित रहने की अपेक्षा मर जाना ही अच्छा समझता हूँ।

सञ्जय उवाच

**अर्जुनस्य वचः श्रुत्वा नोचुस्तत्र महारथाः।**
**अप्रियं वा प्रियं वापि महाराज धनञ्जयम् ॥१०॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज! अर्जुन के ये वचन सुनकर वहाँ उपस्थित सभी महारथी मौन रह गये। उनमें से किसी ने भी अच्छा या बुरा कुछ भी अर्जुन से नहीं कहा।

**ततः क्रुद्धो महाबाहुर्भीमसेनोऽभ्यभाषत।**
**कुत्सयन्निव कौन्तेयमर्जुनं भरतर्षभ ॥११॥**

भरतश्रेष्ठ! उस समय महाबाहु भीमसेन कुपित हो गये। उन्होंने कुन्तीपुत्र अर्जुन को फटकारते हुए-से कहा—

**मुनिर्यथारण्यगतो भाषसे धर्मसंहितम्।**
**न्यस्तदण्डो यथा पार्थ ब्राह्मणः संशितव्रतः ॥१२॥**

"पार्थ! जैसे वनवासी मुनि [वानप्रस्थ] अथवा किसी भी प्राणी को दण्ड न देते हुए कठोर व्रत का पालन करनेवाला परमहंस ब्राह्मण [संन्यासी] धर्म का उपदेश करता है, आज तो तुम भी वैसा ही उपदेश कर रहे हो।

**क्षतत्राता क्षताज्जीवन् क्षान्ता स्त्रीष्वपि साधुषु।**
**क्षत्रियः क्षितिमाप्नोति क्षिप्रं धर्मं यशः श्रियः ॥१३॥**

"परन्तु जो क्षति=संकट से अपना और दूसरे का त्राण करता है, युद्ध में शत्रुओं को हानि पहुँचाना ही जिसकी जीविका है तथा जो स्त्रियों एवं साधुपुरुषों पर क्षमाभाव रखता है, वही क्षत्रिय है और उसे ही शीघ्र इस पृथिवी का राज्य, धर्म, यश और श्री की प्राप्ति होती है।

**स भवान् क्षत्रियगुणैर्युक्तः सर्वैः कुलोद्वहः।**
**अविपश्चिद् यथा वाचं व्याहरन्नाद्य शोभसे ॥१४॥**

"तुम समस्त क्षत्रियोचित गुणों से सम्पन्न और इस कुल का भार वहन करने में समर्थ होते हुए भी आज मूर्ख के समान बातें कर रहे हो, यह तुम्हें शोभा नहीं देता।

**धर्ममन्विच्छसि ज्ञातुं मिथ्या वचनमेव ते।**
**भयार्दितानामस्माकं वाचा मर्माणि कृन्तसि ॥१५॥**

"तुम एक ओर तो धर्म का प्रवचन करना चाहते हो और दूसरी ओर धर्महीन वचन कह रहे हो। एक तो हम स्वयं ही भय से पीड़ित हो रहे हैं, ऊपर से तुम अपने वाग्बाणों द्वारा हमारे मर्म-स्थानों को छेदे डालते हो।

**वासुदेवे स्थिते चापि द्रोणपुत्रं प्रशंससि।**
**यः कलां षोडशीं पूर्णां धनञ्जय न तेऽर्हति।**
**स्वयमेवात्मनो दोषान् ब्रुवाणः किन्न लज्जसे ॥१६॥**

"धनञ्जय! श्रीकृष्ण की विद्यमानता में तुम द्रोणपुत्र अश्वत्थामा की प्रशंसा कर रहे हो जो पराक्रम में तुम्हारी पूरी सोलहवीं कला के बराबर भी नहीं है। स्वयं ही अपने दोषों का वर्णन करते हुए क्या तुम्हें लज्जा नहीं आती?

**दारयेयं महीं क्रोधाद् विकिरेयं च पर्वतान्।**
**आविध्यैतां गदां गुर्वीं भीमां काञ्चनमालिनीम् ॥१७**

"अर्जुन! मैं अपनी सुवर्णमण्डित भयंकर एवं भारी गदा का क्रोधपूर्वक प्रहार कर इस पृथिवी को विदीर्ण कर सकता हूँ और पर्वतों को चूर-चूर करके बिखेर सकता हूँ।

**द्रावयेयं शरैश्चापि सेन्द्रान् देवान् समागतान्।**
**सराक्षसगणान् पार्थ सासुरोरगमानवान् ॥१८॥**

"पार्थ! असुर, नाग, मानव और राक्षसगणों-सहित सम्पूर्ण देवता और इन्द्र भी आ जाएँ तो मैं उन्हें बाणों द्वारा मारकर भगा सकता हूँ।

**स त्वमेवंविधं जानन् भ्रातरं मां नरर्षभ ।**
**द्रोणपुत्राद् भयं कर्तुं नार्हस्यमितविक्रम ।।१९।।**

"अमित पराक्रमी नरश्रेष्ठ अर्जुन ! मुझ अपने भ्राता को ऐसा शक्ति-सम्पन्न जानकर तुम्हें द्रोणपुत्र से भयभीत नहीं होना चाहिए ।

**अथवा तिष्ठ बीभत्सो सह सर्वैः सहोदरैः ।**
**अहमेनं गदापाणिर्जेष्याम्येको महाहवे ।।२०।।**

"अथवा अर्जुन ! तुम अपने समस्त भाइयों के साथ यहीं खड़े रहो । मैं अकेला ही हाथ में गदा लेकर इस महायुद्ध में अश्वत्थामा को परास्त करूँगा ।"

धृष्टद्युम्न उवाच

**बीभत्सो विप्रकर्माणि विदितानि मनीषिणाम् ।**
**याजनाध्यापने दानं तथा यज्ञप्रतिग्रहौ ।।२१।।**
**षष्ठमध्ययनं नाम तेषां कस्मिन् प्रतिष्ठितः ।**
**हतो द्रोणो मया ह्येवं किं मां पार्थ विगर्हसे ।।२२।।**
**अपक्रान्तः स्वधर्माच्च क्षात्रधर्मं व्यपाश्रितः ।**
**अमानुषेण हन्त्यस्मानस्त्रेण क्षुद्रकर्मकृत् ।।२३।।**

**धृष्टद्युम्न बोला**—अर्जुन ! यज्ञ करना और कराना, वेदों को पढ़ना और पढ़ाना तथा दान देना और लेना—ये छह कर्म ही ब्राह्मणों के लिए मनीषी लोगों में प्रसिद्ध हैं । द्रोणाचार्य इनमें से कौन-से कर्म में प्रतिष्ठित थे ? अपने धर्म से भ्रष्ट होकर उन्होंने क्षत्रिय धर्म का आश्रय ले रखा था । वह तुच्छ कर्म करनेवाला ब्राह्मण दिव्यास्त्रों द्वारा हम लोगों का संहार करता था । पार्थ ! ऐसी दशा में यदि मैंने द्रोणाचार्य को मार डाला तो तुम इसके लिए मेरी निन्दा क्यों करते हो ?

**तथा मायां प्रयुञ्जानमसह्यं ब्राह्मणब्रुवम् ।**
**माययैव निहन्याद् यो न युक्तं पार्थ तत्र किम् ।।२४।।**

पार्थ ! जो ब्राह्मण कहलाकर भी दूसरों के लिए माया का प्रयोग करता हो और असह्य हो उठा हो, उसे यदि माया से ही मार डाला जाए तो इसमें अनुचित क्या है ?

**तस्मिंस्तथा मया शस्ते यदि द्रौणायनी रुषा ।**
**कुरुते भैरवं नादं किं मम तत्र हीयते ।।२५।।**

मेरे द्वारा द्रोणाचार्य के इस दशा में मारे जाने-पर यदि द्रोणपुत्र क्रोधपूर्वक भयंकर गर्जना करता हो तो उसमें मेरी क्या हानि है ?

**न चाद्भुतमिदं मन्ये यद् द्रौणिर्युद्धसंज्ञया ।**
**घातयिष्यति कौरव्यान् परित्रातुमशक्नुवन् ।।२६।।**

यह कोई अद्भुत बात नहीं है, यदि अश्वत्थामा अपने वीरों को युद्ध के लिए प्रेरित कर रहा है । इस प्रकार तो वह कौरववीरों को मरवा डालेगा, क्योंकि वह स्वयं उनकी रक्षा करने में समर्थ नहीं हो सकेगा ।

**यो ह्यनस्त्रविदो हन्याद् ब्रह्मास्त्रैः क्रोधमूर्च्छितः ।**
**सर्वोपायैः कथं न सः वध्यः पुरुषसत्तम ।।२७।।**

पुरुषश्रेष्ठ ! जो क्रोध से व्याकुल होकर ब्रह्मास्त्र न जाननेवालों को भी ब्रह्मास्त्र से ही मार डाले, उसका सभी उपायों से वध करना कैसे उचित नहीं है ?

**स शत्रुर्निहतः संख्ये मया धर्मेण पाण्डव ।**
**यथा त्वया हतः शूरो भगदत्तः पितुः सखा ।।२८।।**

पाण्डुनन्दन ! द्रोणाचार्य मेरे शत्रु थे, इसलिए मैंने युद्ध में धर्म के अनुसार ही उनका वध किया है, ठीक उसी प्रकार जैसे तुमने अपने पिता के मित्र शूरवीर भगदत्त का वध किया था ।

**पितामहं रणे हत्वा मन्यसे धर्ममात्मनः ।**
**मया शत्रौ हते कस्मात् पापे धर्मं न मन्यसे ।।२९।।**

तुम युद्ध में पितामह भीष्म को मारकर भी अपने लिए तो धर्म मानते हो, परन्तु मेरे द्वारा एक पापी शत्रु के मारे जाने पर भी इस कार्य को धर्म क्यों नहीं मानते ?

**सहे सर्वमनुचितं वाग्व्यतिक्रममर्जुन ।**
**द्रौपद्या द्रौपदेयानां कृते नान्येन हेतुना ।।३०।।**

अर्जुन ! मैं अपनी बहिन द्रौपदी और उसके पुत्रों के नाते ही तुम्हारी इन सारी उल्टी अथवा कड़वी बातों को सह लेता हूँ, दूसरे किसी कारण से नहीं ।

**कुलक्रमागतं वैरं ममाचार्येण विश्रुतम् ।**
**तथा जानात्ययं लोको न यूयं पाण्डुनन्दनाः ।।३१।।**

द्रोणाचार्य के साथ मेरा वंश-परम्परागत वैर चला आ रहा है, जो अति प्रसिद्ध है । उसे यह सारा संसार जानता है, क्या तुम पाण्डवों को इसका पता नहीं है ?

**नानृती पाण्डवो ज्येष्ठो नाहं वाधार्मिकोऽर्जुन ।**
**शिष्यद्रोही हतः पापो युध्यस्व विजयस्तव ।।३२।।**

अर्जुन ! न तो तुम्हारे बड़े भाई पाण्डुनन्दन युधिष्ठिर असत्यवादी हैं और न मैं ही अधर्मी हूँ । द्रोणाचार्य पापी और शिष्यद्रोही थे, अतः मारे गये । अब तुम युद्ध करो, विजय तुम्हारी ही होगी ।

इति महाभारते द्रोणपर्वणि एकचत्वारिंशोऽध्यायः ।।४१।।

# द्विचत्वारिंशोऽध्याय।

## सात्यकि और धृष्टद्युम्न का वाग्युद्ध

सञ्जय उवाच

**श्रुत्वा द्रुपदपुत्रस्य ता वाचः क्रूरकर्मणः।**
**तूष्णीं बभूवू राजानः सर्वं एव विशाम्पते ॥१॥**
**अर्जुनस्तु कटाक्षेण जिह्मं विप्रेक्ष्य पार्षतम्।**
**सबाष्पमतिनिःश्वस्य धिग्धिगित्येव चाब्रवीत् ॥२॥**

**सञ्जय कहते हैं**—प्रजेश्वर! क्रूरकर्मा द्रुपदपुत्र की वे बातें सुनकर वहाँ उपस्थित सभी नरेश मौन रह गये। केवल अर्जुन टेढ़ी नजरों से उसकी ओर देखकर आंसू बहाते हुए दीर्घ निःश्वास छोड़कर इतना ही बोले कि—"धिक्कार है! धिक्कार है!!"

**युधिष्ठिरश्च भीमश्च यमौ कृष्णस्तथापरे।**
**आसन् सुव्रीडिता राजन् सात्यकिस्त्वब्रवीदिदम् ॥३॥**

राजन् उस समय युधिष्ठिर, भीमसेन, नकुल-सहदेव, श्रीकृष्ण और अन्य सब लोग भी अत्यन्त लज्जित हो चुप ही बैठे रहे, परन्तु सात्यकि इस प्रकार बोल उठे—

सात्यकिरुवाच

**नेहास्ति पुरुषः कश्चिद् य इमं पापपूरुषम्।**
**भाषमाणमकल्याणं शीघ्रं हन्यान्नराधमम् ॥४॥**

**सात्यकि बोला**—क्या यहाँ कोई ऐसा मनुष्य नहीं है, जो इस प्रकार अभद्रतापूर्ण वचन बोलनेवाले इस पापी नराधम को शीघ्र ही मार डाले?

**एते त्वां पाण्डवाः सर्वे कुत्सयन्ति विकुत्सया।**
**कर्मणा तेन पापेन श्वपाकं ब्राह्मणा इव ॥५॥**

धृष्टद्युम्न! जैसे ब्राह्मण चाण्डाल की निन्दा करते हैं, वैसे ही ये सभी पाण्डव उस पापकर्म के कारण अत्यन्त घृणा प्रकट करते हुए तेरी निन्दा कर रहे हैं।

**एतत् कृत्वा महत्पापं निन्दितः सर्वसाधुभिः।**
**न लज्जसे कथं वक्तुं समिति प्राप्य शोभनाम् ॥६॥**
**कथं च शतधा जिह्वा न ते मूर्धा च दीर्यते।**
**गुरुमाक्रोशतः क्षुद्र न चाधर्मेण पात्यसे ॥७॥**

यह महान् पाप करके तू समस्त श्रेष्ठ पुरुषों की दृष्टि में निन्दा का पात्र बन गया है। सज्जनों के इस भव्य समागम में पहुँचकर ऐसी बातें करते हुए तुझे लज्जा कैसे नहीं आती है? तेरी जीभ के सैकड़ों टुकड़े क्यों नहीं हो जाते? तेरा मस्तक क्यों नहीं फट जाता? ओ नीच! गुरु की निन्दारूपी पाप से तेरा पतन क्यों नहीं हो जाता?

**कस्त्वेतद् व्यवसेदार्यस्त्वदन्यः पुरुषाधम।**
**निगृह्य केशेषु वधं गुरोर्धर्मात्मनः सतः ॥८॥**

पुरुषाधम! तेरे सिवा दूसरा कौन श्रेष्ठ पुरुष धर्मात्मा सज्जन गुरु के केश पकड़कर उनके वध का विचार भी मन में लाएगा?

**पुनश्चेदीदृशीं वाचं मत्समीपे वदिष्यसि।**
**शिरस्ते पोथयिष्यामि गदया वज्रकल्पया ॥९॥**

यदि तू फिर मेरे सामने ऐसी बात बोलेगा तो मैं अपनी इस वज्रतुल्य गदा से तेरा सिर कुचल दूंगा।

**पाञ्चालक सुदुर्वृत्त ममैव गुरुमग्रतः।**
**गुरोर्गुरं च भूयोऽपि क्षिपन्नैव हि लज्जसे ॥१०॥**

दुराचारी पाञ्चाल! तू मेरे आगे मेरे ही गुरु और मेरे गुरु के भी गुरु पर बारम्बार आक्षेप कर रहा है, तो भी तुझे लज्जा नहीं आती?

धृष्टद्युम्न उवाच

**श्रूयते श्रूयते चेति क्षम्यते चेति माधव।**
**सदानार्योऽशुभः साधुं पुरुषं क्षेप्तुमिच्छति ॥११॥**

**धृष्टद्युम्न ने कहा**—माधव! मैंने तुम्हारी बात सुन ली, अच्छी प्रकार सुन ली। मैं ऐसी बातों की परवाह नहीं करता। दुष्ट और अनार्य पुरुष साधु पुरुषों पर ऐसे ही मिथ्या आक्षेप किया करते हैं।

**क्षमा प्रशस्यते लोके न तु पापोऽर्हति क्षमाम्।□**
**क्षमावन्तं हि पापात्मा जितोऽयमिति मन्यते ॥१२॥**

संसार में क्षमाभाव की बड़ी प्रशंसा है, परन्तु पापी मनुष्य कभी क्षमा के योग्य नहीं होता, क्योंकि पापी मनुष्य तो क्षमाशील पुरुष को यही समझता है कि 'मैंने इसे जीत लिया है।'

**स त्वं क्षुद्रसमाचारो नीचात्मा पापनिश्चयः।**
**आकेशाग्रान्नखाग्राच्च वक्तव्यो वक्तुमिच्छसि ॥१३॥**

तू स्वयं ही दुराचारी, पापपूर्ण और नीच विचार रखनेवाला है। नख से चोटी तक पाप में डूबा होने के कारण निन्दा के योग्य है, फिर भी दूसरों की निन्दा करना चाहता है।

**यः स भूरिश्रवाश्छिन्नभुजः प्रायगतस्त्वया।**
**वार्यमाणेन हि हतस्ततः पापतरं नु किम् ॥१४॥**

भूरिश्रवा की भुजा काट दी गई थी। वे आमरण उपवास का व्रत लेकर मौन बैठे हुए थे। उस अवस्था में सबके मना करने पर भी जो तूने उनका वध किया, इससे बढ़कर महान् पापकर्म और क्या हो सकता है?

**गाहमानो मया द्रोणो दिव्येनास्त्रेण संयुगे।**
**विसृष्टशस्त्रो निहतः किं तत्र क्रूर दुष्कृतम् ॥१५॥**

ओ क्रूर! मैंने तो पहले ही रणभूमि में दिव्यास्त्र द्वारा द्रोणाचार्य को मथ डाला था, फिर वे हथियार डालकर मारे गये, तो इसमें मैंने कौन-सा पाप कर डाला?

**अयुध्यमानं यस्त्वाजौ तथा प्रायगतं मुनिम्।**
**छिन्नबाहुं परैर्हन्यात् सात्यके स कथं वदेत् ॥१६॥**

सात्यके! जो रणभूमि में मुनिवृत्ति का आश्रय ले आमरण उपवास का निश्चय लेकर बैठ गया हो, जो अपने साथ युद्ध न कर रहा हो और जिसकी भुजा शत्रु द्वारा काट दी गई हो, ऐसे मनुष्य को जो मार सकता है, वह दूसरे की निन्दा कैसे कर सकता है?

**निहत्य त्वां पदा भूमौ स विकर्षति वीर्यवान्।**
**किं तदा न निहंस्येनं भूत्वा पुरुषसत्तमः ॥१७॥**

जिस समय पराक्रमी भूरिश्रवा तुझे लात मारकर भूमि पर घसीट रहे थे, तू बड़ा श्रेष्ठ पुरुष था, तो उसी समय उन्हें क्यों नहीं मार डाला?

**त्वया पुनरनार्येण पूर्वं पार्थेन निर्जितः।**
**यदा तदा हतः शूरः सौमदत्तिः प्रतापवान् ॥१८॥**

जब अर्जुन ने पहले ही प्रतापी शूरवीर सोमदत्त-कुमार भूरिश्रवा को परास्त कर दिया, उस समय तूने उसका वध किया। तू कितना नीच है?

**जोषमास्स्व न मां भूयो वक्तुमर्हस्यतः परम्।**
**अधरोत्तरमेतद्धि यन्मां त्वं वक्तुमर्हसि ॥१९॥**

चुपचाप बैठा रह। अब फिर ऐसी बातें मुँह से न निकालना। तू मुझसे जो कुछ कहना चाहता है, वह तेरी अत्यन्त नीचता है।

**अथ वक्ष्यसि मां मौर्ख्याद् भूयः परुषमीदृशम्।**
**गमयिष्यामि बाणैस्त्वां युधि वैवस्वतक्षयम् ॥२०॥**

यदि मूर्खतावश तू पुनः मुझसे ऐसी कठोर बातें कहेगा, तो युद्ध में बाणों द्वारा मैं तुझे यमलोक पठा दूँगा।

**तौ वृषाविव नर्दन्तौ बलिनौ बाहुशालिनौ।**
**त्वरया वासुदेवश्च धर्मराजश्च मारिष।**
**यत्नेन महता वीरौ वारयामासतुस्ततः ॥२१॥**

अपनी भुजाओं से सुशोभित होनेवाले वे दोनों वीर दो साँडों के समान गर्ज रहे थे। आर्य! उस समय श्रीकृष्ण और धर्मराज युधिष्ठिर ने शीघ्रतापूर्वक महान् प्रयत्न करके उन दोनों वीरों को रोका।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि द्विचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४२॥**

# त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः

**अश्वत्थामा द्वारा नारायणास्त्र का प्रयोग, श्रीकृष्ण द्वारा बताये उपाय से सैनिकों की रक्षा, भीमसेन के वीरोचित उद्गार और उसपर अस्त्र का प्रबल आक्रमण**

सञ्जय उवाच

**प्रादुश्चक्रे यदा द्रौणिरस्त्रं नारायणं तदा।**
**अभिसन्धाय पाण्डूनां पाञ्चालानां च वाहिनीम् ॥१॥**
**प्रादुरासंस्ततो बाणा दीप्ताग्राः खे सहस्रशः।**
**पाण्डवान् क्षपयिष्यन्तो दीप्तास्याः पन्नगा इव ॥२॥**

सञ्जय कहते हैं—जब द्रोणपुत्र अश्वत्थामा ने पाण्डवों और पाञ्चालों की सेना को लक्ष्य करके नारायणास्त्र प्रकट किया तब उससे आकाश में सहस्रों बाण प्रकट हुए। उन सबके अग्रभाग प्रज्वलित हो रहे थे। वे सभी बाण प्रज्वलित मुखवाले सर्पों के समान आकर पाण्डव-सैनिकों का विनाश करने के लिए उद्यत थे।

**ते दिशः खं च सैन्यं च समावृण्वन् महाहवे।**
**मुहूर्ताद् भास्करस्येव लोके राजन् गभस्तयः ॥३॥**

राजन् ! जैसे दो ही घड़ी में सूर्य की किरणें सारे संसार में फैल जाती हैं, वैसे ही उस महायुद्ध में वे बाण समस्त दिशाओं, आकाश और सम्पूर्ण सेनाओं में छा गये ।

**तथापरे द्योतमाना ज्योतींषीवामलाम्बरे ।**
**प्रादुरासन् महाराज कार्ष्णायसमया गुडाः ॥४॥**

महाराज ! इसी प्रकार वहाँ निर्मल आकाश में प्रकाशित होनेवाले ज्योतिर्मय ग्रह-नक्षत्रों के समान काले लोहे के जलते हुए गोले भी प्रकट हो-होकर गिरने लगे ।

**शस्त्राकृतिभिराकीर्णमतीव पुरुषर्षभ ।**
**दृष्ट्वान्तरिक्षमाविग्नाः पाण्डुपाञ्जालसृञ्जयाः ॥५॥**

नरश्रेष्ठ ! उस समय आकाश को अनेक प्रकार के शस्त्रों के आकारवाले पदार्थों से अत्यधिक व्याप्त हुआ देख पाण्डव, पाञ्चाल और सृञ्जय योद्धा उद्विग्न हो उठे ।

**यथा यथा ह्ययुध्यन्त पाण्डवानां महारथाः ।**
**तथा तथा तदस्त्रं वै व्यवर्धत जनाधिप ॥६॥**

प्रजेश्वर ! पाण्डव महारथी जैसे-जैसे युद्ध करते थे, वैसे-वैसे ही उस अस्त्र का वेग बढ़ता जाता था ।[1]

**यथा हि शिशिरापाये दहेत् कक्षं हुताशनः ।**
**तथा तदस्त्रं पाण्डूनां ददाह ध्वजिनीं प्रभो ॥७॥**

प्रभो ! जैसे सर्दी बीतने पर गर्मी में लगी हुई आग सूखे काठ या जंगल को जला डाले, उसी प्रकार वह अस्त्र पाण्डव-सेना को भस्म करने लगा ।

**आपूर्यमाणेनास्त्रेण सैन्यं क्षीयति च प्रभो ।**
**जगाम परमं त्रासं धर्मपुत्रो युधिष्ठिरः ॥८॥**

राजन् ! जब वह अस्त्र सब ओर व्याप्त हो गया और उसके द्वारा पाण्डव-सेना क्षीण होने लगी, तब धर्मपुत्र युधिष्ठिर बहुत भयभीत हुए ।

**द्रवमाणं तु तत्सैन्यं दृष्ट्वा विगतचेतनम् ।**
**मध्यस्थतां च पार्थस्य धर्मपुत्रोऽब्रवीदिदम् ॥९॥**

अपनी उस सेना को अचेत होकर भागते हुए और कुन्तीकुमार अर्जुन को तटस्थभाव से खड़ा हुआ देखकर धर्मपुत्र युधिष्ठिर ने इस प्रकार कहा—

**धृष्टद्युम्न पलायस्व सह पाञ्चालसेनया ।**
**सात्यके त्वं च गच्छस्व वृष्ण्यन्धकवृतो गृहान् ॥१०॥**

"धृष्टद्युम्न ! तुम पाञ्चालों की सेना के साथ भाग जाओ । सात्यके ! तुम भी वृष्णिवंशी और अन्धकवंशी वीरों को साथ लेकर घर चले जाओ ।"

**एवं ब्रुवति कौन्तेये दाशार्हस्त्वरितस्ततः ।**
**निवार्य सैन्यं बाहुभ्यामिदं वचनमब्रवीत् ॥११॥**

जिस समय कुन्तीनन्दन युधिष्ठिर ऐसा कह रहे थे, उसी समय श्रीकृष्ण ने तुरन्त ही अपनी दोनों भुजाओं के संकेत से सारी सेना को इस प्रकार कहा—

**शीघ्रं न्यस्यत शस्त्राणि वाहेभ्यश्चावरोहत ।**
**एष योगोऽत्र विहितः प्रतिषेधे महात्मना ॥१२॥**

---

१. महाभारत काल चरित्र की दृष्टि से रामायण जैसा समुन्नत नहीं था, परन्तु अस्त्र-शास्त्र, कला-कौशल, वास्तुनिर्माण आदि की दृष्टि से महाभारत काल में इतनी उन्नति हुई थी कि बीसवीं शताब्दी का वैज्ञानिक भी अभी वहाँ नहीं पहुँच पाया है । क्या सारे संसार में पाण्डवों के दिव्य सभा-भवन जैसा कोई भवन है ? राक्षसों के पास तो विमानों की बहुलता प्रतीत होती है । विमान भी छोटे-छोटे [Monoplane] । जब चाहा और जहाँ चाहा तुरन्त उड़ गये ।

महाभारत काल में अस्त्र-शस्त्र विद्या कितनी बढ़ी चढ़ी थी, उसकी एक झलक यहाँ द्रष्टव्य है, नारायण-अस्त्र के रूप में । इसमें क्या वैज्ञानिकता थी । यदि इस शस्त्र के समक्ष हथियार डाल दिये जाएँ तो यह निष्प्रभाव हो जाता था और अस्त्र-शस्त्र न डालकर इसका विरोध किया जाए तो यह सम्पूर्ण शक्ति के साथ केवल उसी व्यक्ति पर आक्रमण करता था । जो लोग समर्पण कर देते थे [अस्त्र-शस्त्र डाल देते थे], उन्हें यह अस्त्र हानि नहीं पहुँचाता था । अस्त्र जड़ होते हुए भी चेतन मनुष्य के समान व्यवहार करता था, यह थी इस नारायण-अस्त्र की सबसे बड़ी विशेषता । जहाँ तक हमारा ज्ञान है, आज के वैज्ञानिक इस प्रकार का कोई अस्त्र [Missile] नहीं बना सके हैं ।

इस अस्त्र की एक और विशेषता भी थी । यदि एक बार प्रयोग असफल हो जाने पर इसका पुनः प्रयोग कर दिया जाए तो यह प्रयोगकर्ता को ही मार डालता था ।

"योद्धाओ ! अपने अस्त्र-शस्त्र शीघ्र नीचे डाल दो और सवारियों से नीचे उतर जाओ। महात्मा नारायण ने इस शस्त्र के निवारण के लिए यही उपाय निश्चित किया है।

**द्विपाश्वस्यन्दनेभ्यश्च क्षितिं सर्वे समापतन्।**
**एवमेतन्न वो हन्यादस्त्रं भूमौ निरायुधान् ॥१३॥**

"तुम सब लोग हाथी, घोड़े और रथों से उतरकर पृथिवी पर खड़े हो जाओ। इस प्रकार भूमि पर निहत्थे खड़े हुए तुम लोगों को यह अस्त्र नहीं मार सकेगा।

**यथा यथा हि युध्यन्ते योधा ह्यस्त्रमिदं प्रति।**
**तथा तथा भवन्त्येते कौरवा बलवत्तराः ॥१४॥**

"हमारे योद्धा जैसे-जैसे इस अस्त्र के विरुद्ध युद्ध करते हैं, वैसे-ही-वैसे ये कौरव प्रबलतर होते जा रहे हैं।

**निक्षेप्स्यन्ति च शस्त्राणि वाहनेभ्योऽवरुह्य ये।**
**तान्नैतदस्त्रं संग्रामे निहनिष्यति मानवान् ॥१५॥**

"जो लोग अपने वाहनों से उतरकर हथियार नीचे डाल देंगे, उन मनुष्यों को संग्राम-भूमि में यह अस्त्र नहीं मारेगा।

**ये त्वेतत्प्रतियोत्स्यन्ति मनसापीह केचन।**
**निहनिष्यति तान् सर्वान् रसातलगतानपि ॥१६॥**

"जो कोई मन से भी इस अस्त्र का सामना करेंगे, वे यदि रसातल में भी पहुँच जाएँ तो भी यह अस्त्र वहाँ पहुंचकर उन सबको मार डालेगा।"

**ते वचस्तस्य तत् श्रुत्वा वासुदेवस्य भारत।**
**ईषुः सर्वे समुत्स्रष्टुं मनोभिः करणेन च ॥१७॥**

भरतभूषण ! श्रीकृष्ण का वह वचन सुनकर सब योद्धाओं ने अन्यान्य इन्द्रियों और मन से हथियारों को त्याग देने का विचार कर लिया।

**तत उत्स्रष्टुकामाँस्तानस्त्राण्यालक्ष्य पाण्डवः।**
**भीमसेनोऽब्रवीद् राजन्निदं संहर्षयन् वचः ॥१८॥**

राजन् ! उस समय उन सबको अस्त्र त्यागने के लिए उद्यत हुआ देख भीमसेन ने उनमें हर्ष और उत्साह उत्पन्न करते हुए इस प्रकार कहा—

**न कथञ्चन शस्त्राणि मोक्तव्यानीह केनचित्।**
**अहमावारयिष्यामि द्रोणपुत्रास्त्रमाशगैः ॥१९॥**

"किसी भी वीर को किसी प्रकार भी अपने हथियार नहीं डालने चाहिएँ। मैं शीघ्रगामी बाणों द्वारा द्रोणपुत्र के अस्त्र का निवारण करूँगा।

**न हि मे विक्रमे तुल्यः कश्चिदस्ति पुमानिह।**
**यथैव सवितुस्तुल्यं ज्योतिरन्यन्न विद्यते ॥२०॥**

"इस जगत् में मेरे पराक्रम की समानता करनेवाला दूसरा कोई मनुष्य नहीं है। ठीक उसी प्रकार जैसे सूर्य के समान अन्य कोई ज्योतिर्मय ग्रह नहीं है।

**पश्यतेमौ मे बाहू नागराजकरोपमौ।**
**समर्थौ पर्वतस्यापि शैशिरस्य निपातने ॥२१॥**

"हाथी की सूंड के समान मोटी मेरी इन भुजाओं को तो देखो, ये हिमालय पर्वत को भी धराशायी करने में समर्थ हैं।

**अद्य पश्यत मे वीर्यं बाह्वोः पीनांसयोर्युधि।**
**ज्वलमानस्य दीप्तस्य द्रौणेरस्त्रस्य वारणे ॥२२॥**

"आज रणभूमि में मोटे कन्धोंवाली मेरी इन दोनों भुजाओं का बल देखो कि ये किस प्रकार अश्वत्थामा के प्रज्वलित तथा दीप्तिमान् अस्त्र के निवारण में समर्थ होती हैं।

**यदि नारायणास्त्रस्य प्रतियोद्धा न विद्यते।**
**अद्यैतत् प्रतियोत्स्यामि पश्यत्सु कुरुपाण्डुषु ॥२३॥**

"यदि इस नारायणास्त्र का सामना करनेवाला दूसरा कोई योद्धा आज तक पैदा नहीं हुआ है, तो आज मैं कौरवों और पाण्डवों के देखते-देखते इसका सामना करूँगा।

**अर्जुनार्जुन बीभत्सो न न्यस्यं गाण्डिवं त्वया।**
**शशाङ्कस्येव ते पङ्को नैर्मल्यं पातयिष्यति ॥२४॥**

"अर्जुन ! अर्जुन ! बीभत्सो ! तुम अपने गाण्डीव को नीचे मत डाल देना अन्यथा तुममें भी चन्द्रमा के समान कलङ्क लग जाएगा और वह तुम्हारी निर्मलता को नष्ट कर देगा।"

अर्जुन उवाच

**भीम नारायणास्त्रे मे गोषु च ब्राह्मणेषु च।**
**एतेषु गाण्डिवं न्यस्यमेतद्धि व्रतमुत्तमम् ॥२५॥**

**अर्जुन बोले**—भीम ! नारायणास्त्र, गौ और ब्राह्मण—इनके समक्ष गाण्डीव धनुष को नीचे डाल दिया जाए, यही मेरा उत्तम व्रत है।

सञ्जय उवाच

**एवमुक्तस्ततो भीमो द्रोणपुत्रमरिन्दमम् ।**
**अभ्ययान्मेघघोषेण रथेनादित्यवर्चसा ॥२६॥**

**सञ्जय कहते हैं**—अर्जुन के ऐसा कहने पर भीमसेन अकेले ही सूर्य के समान तेजस्वी और मेघ-गर्जना के समान गम्भीर घोष करनेवाले रथ के द्वारा शत्रुदमन द्रोणपुत्र का सामना करने के लिए चल दिये ।

**तदस्त्रं द्रोणपुत्रस्य तस्मिन् प्रतिसमस्यति ।**
**अवर्धत महाराज यथाग्निरनिलोद्धतः ॥२७॥**

महाराज ! भीमसेन जब द्रोणपुत्र के उस अस्त्र के सामने बाण मारने लगे, उस समय वह वायु का सहारा पाकर धधक उठनेवाली अग्नि की भाँति प्रचण्ड वेग से बढ़ने लगा ।

**विवर्धमानमालक्ष्य तदस्त्रं भीमविक्रमम् ।**
**पाण्डुसैन्यमृते भीमं सुमहद् भयमाविशत् ॥२८॥**

उस अस्त्र को बढ़ते देख भयंकर पराक्रमी भीमसेन को छोड़कर शेष सारी पाण्डव-सेना पर भय छा गया ।

**ततः शस्त्राणि ते सर्वे समुत्सृज्य महीतले ।**
**अवारोहन् रथेभ्यश्च हस्त्यश्वेभ्यश्च सर्वशः ॥२९॥**

तब वे समस्त सैनिक अपने अस्त्र-शस्त्रों को भूमि पर डालकर रथ, हाथी और घोड़े आदि सभी वाहनों से उतर गये ।

**तेषु निक्षिप्तशस्त्रेषु वाहनेभ्यश्च्युतेषु च ।**
**तदस्त्रवीर्यं विपुलं भीममूर्धन्यथापतत् ॥३०॥**

उनके हथियार डाल देने और वाहनों से उतर जाने पर उस अस्त्र की विशाल शक्ति केवल भीमसेन के माथे पर आ पड़ी ।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४३॥**

# चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः

## श्रीकृष्ण का भीम को रथ से उतारकर नारायणास्त्र को शान्त करना

सञ्जय उवाच

**भीमसेनं समाकीर्णं दृष्ट्वास्त्रेण धनञ्जयः ।**
**तेजसः प्रतिघातार्थं वारुणेन समावृणोत् ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! भीमसेन को उस अस्त्र से घिरा हुआ देख अर्जुन ने उन्हें उसके तेज का निवारण करने के लिए वारुणास्त्र से ढक दिया ।

**अर्जुनो वासुदेवश्च त्वरमाणौ महाद्युती ।**
**अवप्लुत्य रथाद् वीरौ भीममाद्रवतां ततः ॥२॥**

फिर महातेजस्वी अर्जुन और श्रीकृष्ण दोनों वीर बड़ी फुर्ती के साथ रथ से कूदकर भीमसेन की ओर दौड़े ।

**ततस्तद् द्रोणपुत्रस्य तेजोऽस्त्रबलसम्भवम् ।**
**विगाह्य तौ सुबलिनौ माययाऽऽविशतां तथा ॥३॥**

वहाँ पहुँचकर वे दोनों अत्यन्त बलवान् वीर द्रोणपुत्र की अस्त्रशक्ति से प्रकट हुई उस आग में माया द्वारा प्रविष्ट हो गये ।

**न्यस्तशस्त्रौ ततस्तौ तु नादहत् सोऽस्त्रजोऽनलः ।**
**वारुणास्त्रप्रयोगाच्च वीर्यवत्त्वाच्च कृष्णयोः ॥४॥**

उन दोनों ने अपने हथियार डाल दिये थे, वारुणास्त्र का प्रयोग किया था और वे दोनों कृष्ण अत्यन्त बलशाली थे, अतः वह अस्त्रजनित अग्नि उन्हें न जला सकी ।

**ततश्चकृषतुर्भीमं सर्वशस्त्रायुधानि च ।**
**नारायणास्त्रशान्त्यर्थं नरनारायणौ बलात् ॥५॥**

भीम के पास पहुँचकर अर्जुन और श्रीकृष्ण ने उस नारायणास्त्र की शान्ति के लिए भीमसेन को और उनके सम्पूर्ण अस्त्र-शस्त्रों को नीचे खींचा ।

**आकृष्यमाणः कौन्तेयो नदत्येव महारवम् ।**
**वर्धते चैव तद् घोरं द्रौणेरस्त्रं सुदुर्जयम् ॥६॥**

खींचे जाते समय कुन्तीपुत्र भीमसेन और भी जोर-जोर से गर्जना करने लगे। इससे अश्वत्थामा का वह परम दुर्जय घोर अस्त्र और भी बढ़ने लगा ।

**तमब्रवीद् वासुदेवः किमिदं पाण्डुनन्दन ।**
**वार्यमाणोऽपि कौन्तेय यद् युद्धान्न निवर्तसे ॥७॥**
**यदि युद्धेन जेयाः स्युरिमे कौरवनन्दनाः ।**
**वयमप्यत्र युध्येम तथा चेमे नरर्षभाः ॥८॥**

उस समय श्रीकृष्ण ने उनसे कहा—"पाण्डुनन्दन! कुन्तीकुमार! यह क्या बात है कि तुम मना करने पर भी युद्ध से निवृत्त नहीं हो रहे हो? यदि ये कौरवनन्दन इस समय युद्ध से ही जीते जा सकते तो हम और ये सभी नरश्रेष्ठ राजा लोग युद्ध ही करते।

**रथेभ्यस्त्ववतीर्णाः स्म सर्व एव हि तावकाः।**
**तस्मात् त्वमपि कौन्तेय रथात् तूर्णमपाक्रम ॥९॥**

"तुम्हारे सभी सैनिक रथ से उतर गये हैं। कुन्तीकुमार! अब तुम भी तुरन्त रथ से उतरकर युद्ध से अलग हो जाओ।"

**एवमुक्त्वा तु तं कृष्णो रथाद् भूमिमवर्तयत्।**
**निःश्वसन्तं यथा नागं क्रोधसंरक्तलोचनम् ॥१०॥**

ऐसा कहकर श्रीकृष्ण ने क्रोध से लाल आँखें करके साँप के समान फुंकारते हुए भीमसेन को रथ से भूमि पर उतार लिया।

**यदापकृष्टः स रथान्न्यासितश्चायुधं भुवि।**
**ततो नारायणास्त्रं तत् प्रशान्तं शत्रुतापनम् ॥११॥**

जब भीम रथ से नीचे उतर गये और उनसे अस्त्र-शस्त्रों को भूमि पर डलवा दिया गया, तब वह शत्रुओं को सन्ताप देनेवाला नाराणास्त्र स्वयं शान्त हो गया।

**तस्मिन् प्रशान्ते विधिना तेन तेजसि दुःसहे।**
**बभूवुर्विमलाः सर्वा दिशः प्रदिश एव च ॥१२॥**

राजन्! उस विधि से उस दुःसह तेज के शान्त हो जाने पर सारी दिशाएँ और विदिशाएं निर्मल हो गईं।

**प्रववुश्च शिवा वाताः प्रशान्ता मृगपक्षिणः।**
**वाहनानि च हृष्टानि प्रशान्तेऽस्त्रे सुदुर्जये ॥१३॥**

उस दुर्जय अस्त्र के शान्त होने पर शीतल सुखद वायु चलने लगी। पशु-पक्षियों का आर्तनाद बन्द हो गया और सारे वाहन भी सुखी हो गये।

**हतशेषं बलं तत्तु पाण्डवानामतिष्ठत।**
**अस्त्रव्युपरमाद्धृष्टं तव पुत्रजिघांसया ॥१४॥**

पाण्डवों की जो सेना मरने से बच गई थी, वह उस अस्त्र के शान्त हो जाने से पुनः आपके पुत्र का विनाश करने के लिए हर्षित हो उठी।

**व्यवस्थिते बले तस्मिन्नस्त्रे प्रतिहिते तथा।**
**दुर्योधनो महाराज द्रोणपुत्रमथाब्रवीत् ॥१५॥**

महाराज! उस अस्त्र के निष्फल और पाण्डु-सेना के सुव्यवस्थित हो जाने पर दुर्योधन ने द्रोणपुत्र से इस प्रकार कहा—

**अश्वत्थामन् पुनः शीघ्रमस्त्रमेतत् प्रयोजय।**
**अवस्थिता हि पाञ्चालाः पुनरेते जयैषिणः ॥१६॥**

"अश्वत्थामन्! तुम एक बार फिर शीघ्र इसी अस्त्र का प्रयोग करो, क्योंकि विजय-अभिलाषी ये पाञ्चाल सैनिक पुनः युद्ध के लिए आकर डट गये हैं।"

**अश्वत्थामा तथोक्तस्तु तव पुत्रेण मारिष।**
**सुदीनमभिनिःश्वस्य राजानमिदमब्रवीत् ॥१७॥**

आर्य नरेश! आपके पुत्र के ऐसा कहने पर अश्वत्थामा ने दीनभाव से लम्बी साँस छोड़कर राजा दुर्योधन से इस प्रकार कहा—

**नैतदावर्तते राजन्नस्त्रं द्विर्नोपपद्यते।**
**आवृत्तं हि निवर्तेत प्रयोक्तारं न संशयः ॥१८॥**

"राजन्! न तो यह अस्त्र दुबारा लौटता है और न इसका दूसरी बार प्रयोग ही हो सकता है। यदि इसका पुनः प्रयोग किया जाए तो यह प्रयोग कर्ता को ही मार डालता है, इसमें संशय नहीं है।

**एष चास्त्रप्रतीघातं वासुदेवः प्रयुक्तवान्।**
**अन्यथा विहितः संख्ये वधः शत्रोर्जनाधिप ॥१९॥**

"जनेश्वर! श्रीकृष्ण ने इस अस्त्र के निवारण का उपाय बता दिया है और उसका प्रयोग किया है, अन्यथा आज युद्ध में सम्पूर्ण शत्रुओं का वध हो ही गया होता।

**पराजयो वा मृत्युर्वा श्रेयान् मृत्युर्न निर्जयः।**
**विजिताश्चारयो ह्येते शस्त्रोत्सर्गान्मृतोपमाः ॥२०॥**

"पराजय हो या मृत्यु, इनमें मृत्यु ही श्रेष्ठ है, पराजय नहीं। ये सारे शत्रु हार गये थे, हथियार डालकर मुर्दे के समान हो गये थे।"

**एवमुक्त्वा धनुस्त्यक्त्वा रथात् प्रस्कन्द्य वेगतः।**
**वरूथिनीमश्वत्थामा ह्यवहारमकारयत् ॥२१॥**

ऐसा कहकर अश्वत्थामा धनुष त्यागकर रथ से

कूद पड़ा और अपनी सेना को छावनी में लौटने की आज्ञा दे दी।

**ततः प्रत्यवहारोऽभूत् पाण्डवानां विशाम्पते।**
**कौरवाणां च दीनानां द्रोणे युधि निपातिते ॥२२॥**

प्रजानाथ! युद्धस्थल में द्रोणाचार्य के मारे जाने के पश्चात् पाण्डवों तथा दीन कौरवों की सेनाएँ अपने-अपने शिबिर की ओर चल दीं।

**युद्धं कृत्वा दिनान् पञ्च द्रोणो हत्वा वरूथिनीम्।**
**ब्रह्मलोकं गतो राजन् ब्राह्मणो वेदपारगः ॥२३**

राजन्! इस प्रकार वेदों के पारंगत विद्वान् द्रोणाचार्य पाँच दिन तक युद्ध और शत्रु-सेना का संहार करके ब्रह्मलोक को चले गये।

**इति महाभारते द्रोणपर्वणि चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥४४॥**

**इति द्रोणपर्व सम्पूर्णम् ॥**

# कर्णपर्व

## प्रथमोऽध्यायः

### कर्ण का सेनापति-पद पर अभिषेक और युद्ध आरम्भ

सञ्जय उवाच

**हते द्रोणे महेष्वासे प्रविश्य शिबिरं स्वकम् ।**
**कुरवः सुहितं मन्त्रं मन्त्रयाञ्चक्रिरे मिथः ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! महाधनुर्धर द्रोणाचार्य के मारे जाने पर, अपने शिबिर में प्रवेश करने के पश्चात् समस्त कौरव अपने हित के लिए परस्पर गुप्त मन्त्रणा करने लगे ।

दुर्योधन उवाच

**मतं मतिमतां श्रेष्ठाः सर्वे प्रब्रूत माचिरम् ।**
**एवं गते तु किं कार्यं किं च कार्यतरं नृपाः ॥२॥**

**दुर्योधन बोला**—बुद्धिमानों में श्रेष्ठ प्रजेश्वर-मण्डल ! तुम सब शीघ्र बोलो, देर मत करो । इस अवस्था में हमें क्या करना चाहिए और सबसे अधिक आवश्यक कर्तव्य क्या है ?

अश्वत्थामोवाच

**रागो योगस्तथा दाक्ष्यं नयश्चेत्यर्थसाधकाः ।**
**उपायाः पण्डितैः प्रोक्तास्ते तु दैवमुपाश्रिताः ॥३॥**

**अश्वत्थामा ने कहा**—विद्वानों ने अभीष्ट अर्थ की सिद्धि देनेवाले चार उपाय बताये हैं—राग=राजा के प्रति सैनिकों की भक्ति, योग=साधन-सम्पत्ति, दक्षता=उत्साह, बल और कौशल तथा नीति—परन्तु ये सभी दैव के अधीन हैं ।

**लोकप्रवीरा येऽस्माकं दक्षा रक्ताश्च ते हताः ।**
**न त्वेव कार्यं नैराश्यमस्माभिर्विजयं प्रति ॥४॥**

यद्यपि हमारे पक्ष में जो विश्वविख्यात महारथी वीर, दक्ष और स्वामी के प्रति अनुरक्त थे, वे सब-के-सब मारे गये, तथापि हमें अपनी विजय के प्रति निराश नहीं होना चाहिए ।

**सुनीतैरिह सर्वार्थैर्दैवमप्यनुलोम्यते ।**
**ते वयं प्रवरं नृणां सर्वैर्गुणगणैर्युतम् ॥५॥**
**कर्णमेवाभिषेक्ष्यामः सैनापत्येन भारत ।**
**कर्णं सेनापतिं कृत्वा प्रमथिष्यामहे रिपून् ॥६॥**

हे भारत ! यदि समस्त कार्य उत्तम नीति के अनुसार किये जाएँ तो उनके द्वारा दैव को भी अनुकूल किया जा सकता है, अतः हम लोग सर्वगुण-सम्पन्न नरश्रेष्ठ कर्ण का सेनापति-पद पर अभिषेक करेंगे और इन्हीं के नेतृत्व में शत्रुओं को मथ डालेंगे ।

**एष ह्यतिबलः शूरः कृतास्त्रो युद्धदुर्मदः ।**
**वैवस्वत इवासह्यः शक्तो जेतुं रणे रिपून् ॥७॥**

ये कर्ण अत्यन्त बलवान्, शूरवीर, अस्त्रों के ज्ञाता, रणदुर्मद और यमराज के समान शत्रुओं के लिए असह्य हैं, अतः ये रणभूमि में हमारे शत्रुओं पर विजय पा सकते हैं ।

**वृषो महेन्द्रो देवेषु वृषः कर्णो नरेष्वपि ।**
**तृतीयमन्यं लोकेषु वृषं नैवानुशुश्रुम ॥८॥**

देवताओं में देवराज इन्द्र को वृष [जल-वृष्टि-कर्ता] कहा गया है, मनुष्यों में कर्ण वृष [दानशील] कहलाता है—इन दो के अतिरिक्त किसी तीसरे पुरुष को तीनों लोकों में 'वृष' नाम दिया गया हो, ऐसा मैंने नहीं सुना ।

**उच्चैःश्रवा वरोऽश्वानां राज्ञां वैश्रवणो वरः ।**
**वरो महेन्द्रो देवानां कर्णः प्रहरतां वरः ॥९॥**

जैसे घोड़ों में उच्चैःश्रवा, राजाओं में कुबेर और

देवताओं में इन्द्र श्रेष्ठ हैं, वैसे ही कर्ण भी योद्धाओं में श्रेष्ठ हैं।

सञ्जय उवाच

**एतदाचार्यतनयात् श्रुत्वा राजंस्तवात्मजः।**
**आशां बहुमतीं चक्रे कर्णं प्रति स वै तदा ॥१०॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! उस समय आचार्य-पुत्र अश्वत्थामा के मुख से यह बात सुनकर आपके पुत्र दुर्योधन ने कर्ण के प्रति विशेष आशा बाँध ली।

**हते भीष्मे च द्रोणे च कर्णो जेष्यति पाण्डवान्।**
**तामाशां हृदये कृत्वा स कर्णमिदमब्रवीत् ॥११॥**

भीष्म और द्रोण के मारे जाने पर कर्ण पाण्डवों को जीत लेगा, इस आशा को हृदय में रखकर दुर्योधन ने कर्ण से इस प्रकार कहा—

**कर्ण जानामि ते वीर्यं सौहृदं परमं मयि।**
**त्वत्समं समरे योधं नान्यं पश्यामि चिन्तयन् ॥१२॥**

"कर्ण! मैं तुम्हारे पराक्रम को जानता हूँ और तुम्हारा मेरे प्रति जो अत्यधिक स्नेह है उसे भी अनुभव करता हूँ। मैं बहुत सोचने पर भी रणभूमि में तुम्हारे समान किसी दूसरे योद्धा को नहीं देखता।

**भवानेव तु नः शक्तो विजयाय न संशयः।**
**पूर्वं मध्ये च पश्चाच्च तथैव विहितं हितम् ॥१३॥**

"हममें से तुम्हीं शत्रुओं पर विजय पाने में समर्थ हो, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है। तुमने पहले, बीच में और पीछे भी हमारा हित ही किया है।

**स भवान् धुर्यवत् संख्ये धुरमुद्वोढुमर्हति।**
**अभिषेचय सैनान्ये स्वयमात्मानमात्मना ॥१४॥**

"तुम धुरन्धर पुरुष की भाँति रणभूमि में सेना-सञ्चालन का भार वहन करने के योग्य हो, अतः तुम स्वयं ही अपने-आपको सेनापति-पद पर अभिषिक्त कराओ।

**यथा ह्यभ्युदितः सूर्यः प्रतपन् स्वेन तेजसा।**
**व्यपोहति तमस्तीव्रं तथा शत्रून् प्रतापय ॥१५॥**

"जैसे उदय होता हुआ सूर्य अपने तेज से तपता हुआ घोर अन्धकार को नष्ट कर देता है, उसी प्रकार तुम भी शत्रुओं को सन्तप्त एवं नष्ट करो।"

कर्ण उवाच

**उक्तमेतन्मया पूर्वं गान्धारे तव सन्निधौ।**
**जेष्यामि पाण्डवान्सर्वान्सपुत्रान् सजनार्दनान् ॥१६॥**

**कर्ण बोला**—गान्धारीनन्दन! मैंने तुमसे पहले ही कहा था कि मैं पाण्डवों को उनके पुत्रों और श्रीकृष्ण के साथ ही परास्त कर दूँगा।

**सेनापतिर्भविष्यामि तवाहं नात्र संशयः।**
**स्थिरो भव महाराज जितान् विद्धि च पाण्डवान् ॥१७॥**

महाराज! आप धैर्य धारण करें। मैं आपका सेनापति बनूँगा, इसमें कोई सन्देह नहीं है। अब आप पाण्डवों को परास्त हुआ ही समझो।

सञ्जय उवाच

**ततोऽभिषिषिचुः कर्णं विधिदृष्टेन कर्मणा।**
**दुर्योधनमुखा राजन् राजानो विजयैषिणः ॥१८॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! कर्ण के ऐसा कहने पर विजयाभिलाषी दुर्योधन आदि राजाओं ने शास्त्रोक्त विधि के अनुसार कर्ण का सेनापति-पद पर अभिषेक किया।

**सैनापत्ये तु राधेयमभिषिच्य सुतस्तव।**
**अमन्यत तदात्मानं कृतार्थं कालनोदितः ॥१९॥**

काल से प्रेरित हुआ आपका पुत्र दुर्योधन राधा-पुत्र कर्ण को सेनापति के पद पर अभिषिक्त करके अपने-आपको कृतकृत्य मानने लगा।

**कर्णोऽपि राजन् सम्प्राप्य सैनापत्यमरिन्दमः।**
**योगमाज्ञापयामास सूर्यस्योदयनं प्रति ॥२०॥**

राजन्! शत्रुदमन कर्ण ने भी सेनापति का पद प्राप्त करके सूर्योदय के समय सेना को युद्ध के लिए तैयार होने की आज्ञा दे दी।

धृतराष्ट्र उवाच

**सैनापत्यं तु सम्प्राप्य कर्णो वैकर्तनस्तदा।**
**अकरोत् किं महाप्राज्ञस्तन्ममाचक्ष्व सञ्जय ॥२१॥**

**धृतराष्ट्र ने पूछा**—सञ्जय! सेनापति का पद प्राप्त करके महाबुद्धिमान् वैकर्तन कर्ण ने क्या किया? यह मुझे बताओ।

सञ्जय उवाच

**कर्णस्य मतमाज्ञाय पुत्रास्ते पुरुषर्षभ।**
**योगमाज्ञापयामासुर्नन्दितूर्यपुरःसरम् ॥२२॥**

**सञ्जय ने कहा**—भरतभूषण! कर्ण का मत

जानकर आपके पुत्रों ने आनन्दमय वाद्यों=बाजों के साथ सेना को तैयार होने का आदेश दे दिया।

**महत्यपररात्रे च तव सैन्यस्य मारिष।**
**योगो योगेति सहसा प्रादुरासीन्महास्वनः ॥२३॥**

आर्य ! बहुत भोर में ही आपकी सेना में सहसा "तैयार हो जाओ, तैयार हो जाओ" का महानाद गूंज उठा।

**ततो दिव्येन धनुषा बलाकावर्णवाजिना।**
**रथेनाभिपताकेन सूतपुत्रोऽभ्यदृश्यत ॥२४॥**

तत्पश्चात् सूतपुत्र कर्ण रणयात्रा के लिए उद्यत दिखाई दिया। उसके रथ पर ध्वजा फहरा रही थी, उसमें बगुलों के समान सफेद रंग के घोड़े जुते हुए थे और दिव्य धनुष रखा हुआ था।

**ध्मापयन् वारिजं राजन् हेमजालविभूषितम्।**
**विधुन्वानो महच्चापं कार्तस्वरविभूषितम् ॥२५॥**

राजन् ! कर्ण सोने की जालियों से मण्डित शंख को बजाता हुआ अपने सुवर्ण-जटित विशाल धनुष की टंकार कर रहा था।

**दृष्ट्वा कर्णं महेष्वासं मेनिरे तत्र कौरवाः।**
**न भीष्मव्यसनं केचिन्नापि द्रोणस्य मारिष ॥२६॥**

पूजनीय नरेश ! महाधनुर्धर कर्ण को देखकर कोई भी कौरव भीष्म और द्रोणाचार्य के मारे जाने के दुःख को कुछ भी नहीं समझते थे।

**ततस्तु त्वरयन् योधाञ्शंखशब्देन मारिष।**
**कर्णो निष्कर्षयामास कौरवाणां महद् बलम् ॥२७॥**

आर्य ! उस समय शंखध्वनि द्वारा योद्धाओं को शीघ्रता करने का आदेश देते हुए कर्ण ने कौरवों की विशाल वाहिनी को शिबिरों से बाहर निकाला।

**व्यूहं व्यूह्य महेष्वासो मकरं शत्रुतापनः।**
**प्रत्युद्ययौ तथा कर्णः पाण्डवान् विजिगीषया ॥२८॥**

तदनन्तर शत्रुसन्तापक महाधनुर्धर कर्ण पाण्डवों पर विजय प्राप्त करने की इच्छा से अपनी सेना का मकर-व्यूह बनाकर आगे बढ़ा।

**तथा प्रयाते राजेन्द्र कर्णे नरवरोत्तमे।**
**धनञ्जयमभिप्रेक्ष्य धर्मराजोऽब्रवीदिदम् ॥२९॥**

राजेन्द्र ! मनुष्यों में श्रेष्ठ कर्ण को इस प्रकार युद्ध-यात्रा के लिए प्रस्थान करते देख धर्मराज युधिष्ठिर ने अर्जुन की ओर देखकर इस प्रकार कहा—

**पश्य पार्थ यथा सेना धार्तराष्ट्रीह संयुगे।**
**कर्णेन विहिता वीर गुप्ता वीरैर्महारथैः ॥३०॥**

"वीर पार्थ ! देखो, इस समय रणक्षेत्र में धृतराष्ट्रपुत्रों की सेना कैसी स्थिति में है ? कर्ण ने वीर महारथियों द्वारा इसे किस प्रकार प्रकार सुरक्षित कर दिया है ?

**हतवीरतमा ह्येषा धार्तराष्ट्री महाचमूः।**
**फल्गुशेषा महाबाहो तृणैस्तुल्या मता मम ॥३१॥**

"महाबाहो ! कौरवों की इस विशाल वाहिनी के प्रमुख वीर तो मारे जा चुके हैं। अब इसके तुच्छ सैनिक ही शेष हैं। मुझे तो अब यह तिनकों के समान तुच्छ प्रतीत होती है।

**एको ह्यत्र महेष्वासः सूतपुत्रो विराजते।**
**तं हत्वाद्य महाबाहो विजयस्तव फाल्गुन ॥३२॥**
**उद्धृतश्च भवेच्छल्यो मम द्वादशवार्षिकः।**
**एवं ज्ञात्वा महाबाहो व्यूहं व्यूह यथेच्छसि ॥३३॥**

"इस सेना में एकमात्र महाधनुर्धर सूतपुत्र कर्ण ही सुशोभित हो रहे हैं। महाबाहो ! आज उसी कर्ण को मारकर तुम्हारी विजय होगी और मेरे हृदय में बारह वर्षों से जो शल्य=काँटा कसक रहा है, वह निकल जाएगा। फाल्गुन ! ऐसा जानकर तुम्हारी जैसी इच्छा हो, वैसे व्यूह की रचना करो।"

**भ्रातुरेतद् वचः श्रुत्वा पाण्डवः श्वेतवाहनः।**
**अर्धचन्द्रेण व्यूहेन प्रत्यव्यूहत तां चमूम् ॥३४॥**

राजन् ! भाई की यह बात सुनकर श्वेतवाहन पाण्डुकुमार अर्जुन ने उस कौरव-सेना के मुकाबले में अपनी सेना को अर्धचन्द्राकार व्यूह में व्यवस्थित किया।

**उभे सैन्ये महाराज प्रहृष्टनरसंकुले।**
**योद्धुकामे स्थिते राजन् हन्तुमन्योन्यमोजसा ॥३५॥**

महाराज ! वे दोनों सेनाएँ हर्षोत्फुल्ल मनुष्यों से भरी थीं। राजन् ! वे बलपूर्वक एक-दूसरे पर प्रहार करने और जूझने की इच्छा से रणक्षेत्र में आकर खड़ी हो गईं।

**नृत्यमाने च ते सेने समेयातां परस्परम् ।**
**तयोः पक्षप्रपक्षेभ्यो निर्जग्मुस्ते युयुत्सवः ।।३६।।**

वे दोनों सेनाएँ परस्पर नृत्य करती हुई-सी भिड़ गईं। युद्धाभिलाषी वीर उन दोनों व्यूहों के पक्ष और प्रपक्ष से निकलने लगे।

**ततः प्रववृते युद्धं नरवारणवाजिनाम् ।**
**रथानां च महाराज अन्योन्यमभिनिघ्नताम् ।।३७।।**

महाराज ! तत्पश्चात् एक-दूसरे पर आघात करनेवाले मनुष्यों, हाथी, घोड़ों और रथों का वह महान् युद्ध आरम्भ हो गया।

**इति महाभारते कर्णपर्वणि प्रथमोऽध्यायः ।।१।।**

## द्वितीयोऽध्याय।

### भीम द्वारा क्षेमधूर्ति का वध, अश्वत्थामा का भीम पर आक्रमण और दोनों का मूर्च्छित होना

सञ्जय उवाच

**रथा रथैर्विमथिता मत्ता मत्तैर्द्विपा द्विपैः ।**
**सादिनः सादिभिश्चैव तस्मिन् परमसंकुले ।।१।।**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! उस घमासान युद्ध में रथों ने रथियों को मथ डाला, मतवाले हाथियों ने मदमत्त गजराजों को धराशायी कर दिया और घुड़सवारों ने घुड़सवारों को कुचल डाला।

**रथैर्नरा रथा नागैरश्वारोहाश्च पत्तिभिः ।**
**अश्वारोहैः पदाताश्च निहता युधि शेरते ।।२।।**

रथियों द्वारा मारे गये पैदल मनुष्य, हाथियों द्वारा रौंदे गये रथ और रथी, पैदलों द्वारा मौत के घाट उतारे गये घुड़सवार तथा घुड़सवारों द्वारा काल के गाल में भेजे गये पैदल सैनिक उस रणभूमि में सो रहे थे।

**तथा तस्मिन् बले शूरैर्वध्यमाने हतेऽपि च ।**
**अस्मानभ्ययायुः पार्था वृकोदरपुरोगमाः ।।३।।**

इस प्रकार जब शूरवीरों द्वारा वह सेना मारी जाने लगी और मारी गई, तब कुन्ती के पुत्रों ने भीमसेन को आगे रखकर हम लोगों पर आक्रमण किया।

**तस्य सैन्यस्य महतो महामात्रवरैर्वृतः ।**
**मध्ये वृकोदरोऽभ्यायात् त्वदीयान् नागधूर्गतः ।।४।।**

पाण्डवों की उस विशाल सेना के मध्य में हाथी की पीठ पर बड़े-बड़े महावतों से घिरकर बैठे हुए भीमसेन आपके सैनिकों की ओर बढ़े आ रहे थे।

**तं दृष्ट्वा द्विरदं दूरात् क्षेमधूर्तिर्द्विपस्थितः ।**
**आह्वयन्नभिदुद्राव प्रमनाः प्रमनस्तरम् ।।५।।**

उनके उस हाथी को दूर से ही देखकर हाथी पर ही बैठे हुए महामना क्षेमधूर्ति ने महामनस्वी भीमसेन को ललकारते हुए उनपर आक्रमण किया।

**तयोः समभवद् युद्धं द्विपयोरुग्ररूपयोः ।**
**यदृच्छया द्रुमवतोर्महापर्वतयोरिव ।।६।।**

जैसे वृक्षों से लदे हुए दो महान् पर्वत दैवेच्छा से आपस में टकरा रहे हों, वैसे ही भयानक रूपधारी उन दोनों गजराजों में भीषण युद्ध छिड़ गया।

**समुद्यतकराभ्यां तौ द्विपाभ्यां कृतिनावुभौ ।**
**वातोद्धूतपताकाभ्यां युयुधाते महाबलौ ।।७।।**

वे दोनों अत्यन्त बलवान् और विद्वान् योद्धा उन सूंड उठाये हुए दोनों हाथियों द्वारा युद्ध कर रहे थे। उस समय हाथियों पर लगी हुई पताकाएँ वायु के वेग से फहरा रही थीं।

**तावन्योन्यस्य धनुषी छित्त्वान्योन्यं विनेदतुः ।**
**शक्तितोमरवर्षेण प्रावृण्मेघाविवाम्बुभिः ।।८।।**

जैसे वर्षाकालीन दो मेघ जल बरसा रहे हों, वैसे ही वे दोनों शक्ति और तोमरों की वृष्टि से एक-दूसरे के धनुष को काटकर परस्पर गर्जन-तर्जन करने लगे।

**ततः क्रुद्धो रणे भीमं क्षेमधूर्तिः पराभिनत् ।**
**जघान चास्य द्विरदं नाराचैः सर्वमर्मसु ।।९।।**

इसी बीच क्षेमधूर्ति ने क्रुद्ध हो युद्धस्थल में भीमसेन पर गहरा आघात किया और अनेक नाराचों द्वारा उनके हाथी के समस्त मर्मस्थानों में चोट पहुँचाई।

**स पपात महानागो भीमसेनस्य भारत।**
**पुरा नागस्य पतनादवप्लुत्य स्थितो महीम् ॥१०॥**

हे भारत ! उस आघात से भीमसेन का वह महागजराज पृथिवी पर गिर पड़ा। उसके गिरने से पूर्व ही भीमसेन हाथी से कूदकर भूमि पर खड़े हो गये।

**तस्य भीमोऽपि द्विरदं गदया समपोथयत्।**
**तस्मात्प्रमथितान्नागात् क्षेमधूर्तिमवप्लुतम् ॥११॥**
**उद्यतायुधमायान्तं गदयाहन् वृकोदरः।**
**स पपात हतः सासिर्व्यसुस्तमभितो द्विपम् ॥१२॥**

फिर भीमसेन ने अपनी गदा से क्षेमधूर्ति के हाथी को मार डाला। तत्पश्चात् जब उस मरे हुए हाथी से कूदकर क्षेमधूर्ति हाथ में तलवार उठाये आगे बढ़ने लगा, तब भीमसेन ने उसपर भी गदा से प्रहार किया। गदा की चोट से उसके प्राणपखेरू उड़ गये और वह तलवार पकड़े हुए अपने हाथी के पास ही गिर पड़ा।

**तं हतं नृपतिं दृष्ट्वा कुलूतानां यशस्करम्।**
**प्राद्रवद् व्यथिता सेना त्वदीया भरतर्षभ ॥१३॥**

भरतभूषण ! कुलूतों का यश बढ़ानेवाले राजा क्षेमधूर्ति को मारा गया देख आपकी सेना व्यथित होकर भागने लगी।

**द्रौणिस्ततोऽभ्ययात् तूर्णं भीमसेनं महाबलम्।**
**ततः समागमो घोरो बभूव सहसा तयोः ॥१४॥**

कौरव-सेना को भागते हुए देख अश्वत्थामा ने तुरन्त ही महाबली भीम पर धावा किया, फिर तो उन दोनों वीरों में सहसा घोर युद्ध छिड़ गया।

**तावन्योन्यं शरैर्घोरैश्छादयानौ महारथौ।**
**रथचर्यगतौ वीरौ शुशुभाते बलोत्कटौ ॥१५॥**

वे दोनों बलोन्मत्त महारथी वीर श्रेष्ठ रथों पर बैठकर एक-दूसरे को भयंकर बाणों द्वारा आच्छादित करते हुए अत्यन्त सुशोभित हो रहे थे।

**व्याघ्राविव च संग्रामे चेरतुस्तौ नरोत्तमौ।**
**शरदंष्ट्रौ दुराधर्षौ चापवक्त्रौ भयंकरौ ॥१६॥**

वे दोनों ही पुरुषश्रेष्ठ रणभूमि में दो व्याघ्रों के समान विचर रहे थे, धनुष ही उन व्याघ्रों के मुख और बाण ही उनकी दाढ़ें थीं। वे दोनों ही दुर्धर्ष और भयंकर प्रतीत होते थे।

**बभूव तुमुलं युद्धं तयोः पुरुषसिंहयोः।**
**चरित्वा विविधान् मार्गान् मण्डलस्थानमेव च ॥१७॥**

उन दोनों पुरुषसिंहों में मण्डलाकार घूमकर भाँति-भाँति के पैंतरे दिखाते हुए भयंकर युद्ध होने लगा।

**ततः क्रुद्धौ महाराज बाणौ गृह्य महाहवे।**
**उभौ चिक्षिपतुस्तूर्णमन्योन्यस्य वधैषिणौ ॥१८॥**

महाराज ! तत्पश्चात् उस महायुद्ध में क्रुद्ध हो उन दोनों ने एक-दूसरे को मार डालने की इच्छा से तुरन्त दो बाण लेकर चलाये।

**तौ सायकौ महाराज द्योतमानौ चमूमुखे।**
**आजघ्नतुः समासाद्य वज्रवेगौ दुरासदौ ॥१९॥**

राजन् ! वे दोनों बाण सेना के मुहाने पर चमक उठे। उन दोनों का वेग वज्र के समान था। उन दुर्जय बाणों ने दोनों के पास पहुँचकर उन्हें घायल कर दिया।

**तौ परस्परवेगाच्च शराभ्यां च भृशाहतौ।**
**निपेततुर्महावीर्यौ रथोपस्थे तयोस्तदा ॥२०॥**

परस्पर के वेग से छूटे हुए उन बाणों द्वारा अत्यन्त घायल हो वे महापराक्रमी वीर अपने-अपने रथ की बैठक में तत्काल गिर पड़े।

**ततस्तु सारथिर्ज्ञात्वा द्रोणपुत्रमचेतनम्।**
**अपोवाह रणाद् राजन् सर्वसैन्यस्य पश्यतः ॥२१॥**

राजन् ! उस समय सारथि द्रोणपुत्र को अचेत जानकर समस्त सेना के देखते-देखते उसे युद्धभूमि से हटाकर ले गया।

**तथैव पाण्डवं राजन् विह्वलन्तं मुहुर्मुहुः।**
**अपोवाह रथेनाजौ सारथिः शत्रुतापनम् ॥२२॥**

महाराज ! इसी प्रकार बारम्बार विह्वल होते हुए शत्रुसन्तापक पाण्डुपुत्र भीमसेन को भी रथ द्वारा उनका सारथि विशोक रणभूमि से अन्यत्र हटा ले गया।

**इति महाभारते कर्णपर्वणि द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥**

# तृतीयोऽध्यायः

## नकुल और कर्ण के घोर युद्ध में नकुल की पराजय

सञ्जय उवाच

**नकुलं रभसं युद्धे द्रावयन्तं वरूथिनीम् ।
कर्णो वैकर्तनो राजन् वारयामास वै रुषा ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! दूसरी ओर युद्धभूमि में कौरव-सेना को खदेड़ते हुए वेगशाली वीर नकुल को वैकर्तन कर्ण ने रोषपूर्वक रोका ।

**नकुलस्तु ततः कर्णं प्रहसन्निदमब्रवीत् ।
चिरस्य बत दृष्टोऽहं दैवतैः सौम्यचक्षुषा ॥२॥
पश्य मां त्वं रणे पाप चक्षुर्विषयमागतम् ।
त्वं हि मूलमनर्थानां वैरस्य कलहस्य च ॥३॥
त्वद्दोषात् कुरवः क्षीणाः समासाद्य परस्परम् ।
त्वामद्य समरे हत्वा कृतकृत्योऽस्मि विज्वरः ॥४॥**

तब नकुल ने कर्ण से हँसते हुए कहा—"पापी कर्ण ! आज दीर्घकाल के पश्चात् देवताओं ने मुझे सौम्यदृष्टि से देखा है, यह बड़े हर्ष की बात है । मैं रणक्षेत्र में तेरी आँखों के समक्ष आ गया हूँ । तू मुझे भली-भाँति देख ले । तू ही सारे अनर्थों, वैर एवं कलह की जड़ है । तेरे ही अपराध से कौरव परस्पर लड़-भिड़कर क्षीण हो गये । आज मैं तुझे युद्धभूमि में मारकर कृतकृत्य और निश्चिन्त हो जाऊँगा ।"

**एवमुक्तः प्रत्युवाच नकुलं सूतनन्दनः ।
सदृशं राजपुत्रस्य धन्विनश्च विशेषतः ॥५॥
प्रहरस्व च मे वीर पश्यामस्तव पौरुषम् ।
कर्म कृत्वा रणे शूर ततः कत्थितुमर्हसि ॥६॥**

नकुल के ऐसा कहने पर सूतनन्दन कर्ण ने उससे कहा—"वीर ! तुम एक राजपुत्र के विशेषतः धनुर्धर योद्धा के योग्य कार्य करते हुए मुझपर वार करो । हम तुम्हारा बलाबल देखेंगे । शूर ! पहले युद्धभूमि में पराक्रम प्रकट करके फिर उसके विषय में तुम्हें बढ़-चढ़कर बातें करनी चाहिएँ ।

**अनुक्त्वा समरे तात शूरा युध्यन्ति शक्तितः ।
प्रयुध्यस्व मया शक्त्या हनिष्ये दर्पमेव ते ॥७॥**

"तात ! शूरवीर युद्धभूमि में बातें न बनाकर अपनी सामर्थ्य के अनुसार युद्ध करते हैं । तुम सम्पूर्ण शक्ति से मेरे साथ युद्ध करो, मैं तुम्हारा घमण्ड चूर्ण कर दूंगा ।"

**इत्युक्त्वा प्राहरत् तूर्णं पाण्डुपुत्राय सूतजः ।
विव्याध चैनं समरे त्रिसप्तत्या शिलीमुखैः ॥८॥**

ऐसा कहकर सूतपुत्र कर्ण ने पाण्डुपुत्र नकुल पर तुरन्त ही प्रहार किया और उसे रणभूमि में तिहत्तर बाणों से बींध डाला ।

**नकुलस्तु ततो विद्धः सूतपुत्रेण भारत ।
अशीत्याशीविषप्रख्यैः सूतपुत्रमविध्यत ॥९॥**

हे भारत ! सूतपुत्र कर्ण के द्वारा घायल होकर नकुल ने भी उसे विषधर सर्पों के समान भयंकर अस्सी बाणों से क्षत-विक्षत कर दिया ।

**तस्य कर्णो धनुश्छित्त्वा स्वर्णपुंखैः शिलाशितैः ।
त्रिंशता परमेष्वासः शरैः पाण्डवमार्दयत् ॥१०॥**

तब महाधनुर्धर कर्ण ने शिला पर तेज किये हुए स्वर्णमय पंखवाले बाणों से नकुल के धनुष को काटकर उसे तीस बाणों से व्यथा पहुँचाई ।

**अथान्यद् धनुरादाय हेमपृष्ठं दुरासदम् ।
कर्णं विव्याध सप्तत्या सारथिं च त्रिभिः शरैः ॥११॥**

उधर नकुल ने सोने की पीठवाला दूसरा दुर्जय धनुष हाथ में लेकर कर्ण को सत्तर और उसके सारथि को तीन बाणों से बींध डाला ।

**ततः क्रुद्धो महाराज नकुलः परवीरहा ।
क्षुरप्रेण सुतीक्ष्णेन कर्णस्य धनुराच्छिनत् ॥१२॥**

महाराज ! फिर शत्रुवीरों के संहारक नकुल ने क्रुद्ध होकर एक अत्यन्त तीखे क्षुरप्र से कर्ण का धनुष काट दिया ।

**सोऽन्यत् कार्मुकमादाय समरे वेगवत्तरम् ।
नकुलस्य ततो बाणैः सर्वतोऽवारयद् दिशः ॥१३॥**

तब कर्ण ने रणभूमि में दूसरा अत्यन्त वेगशाली धनुष लेकर नकुल के चारों ओर समस्त दिशाओं को बाणों से आच्छादित कर दिया ।

**संछाद्यमानः सहसा कर्णचापच्युतैः शरैः ।
चिच्छेद स शरांस्तूर्णं शरैरेव महारथः ॥१४॥**

कर्ण के धनुष से छूटे हुए बाणों द्वारा सहसा आच्छादित हो जाने पर महारथी नकुल ने तुरन्त ही उसके बाणों को अपने बाणों से काट गिराया।

**ततः कर्णो महाराज धनुश्छित्त्वा महात्मनः।**
**सारथिं पातयामास रथनीडाद्धसन्निव ॥१५॥**

महाराज ! तत्पश्चात् हँसते हुए-से कर्ण ने महात्मा नकुल का धनुष काटकर उसके सारथि को रथ की बैठक से नीचे गिरा दिया।

**ततोऽश्वांश्चतुरश्चास्य चतुर्भिर्निशितैः शरैः।**
**यमस्य भवनं तूर्णं प्रेषयामास भारत ॥१६॥**

हे भारत ! फिर चार तीखे बाणों से उसके चारों घोड़ों को भी तुरन्त ही यमलोक पठा दिया।

**अथास्य तं रथं दिव्यं तिलशो व्यधमच्छरैः।**
**पताकां चक्ररक्षांश्च गदां खड्गं च मारिष ॥१७॥**

आर्य नरेश ! तत्पश्चात् उसने अपने बाणों द्वारा नकुल के उस दिव्य रथ को तिल-तिल करके काट दिया और पताका, चक्ररक्षकों, गदा एवं खड्ग को भी छिन्न-भिन्न कर दिया।

**स हन्यमानः समरे कृतास्त्रेण बलीयसा।**
**प्राद्रवत् सहसा राजन् नकुलो व्याकुलेन्द्रियः ॥१८॥**

महाबली और अस्त्र-विद्या के पारंगत विद्वान् कर्ण के द्वारा रणभूमि में आहत हो, नकुल सहसा वहाँ से भाग खड़ा हुआ। उस समय उसकी सारी इन्द्रियाँ व्याकुल हो रही थीं।

**तमभिद्रुत्य राधेयः प्रहसन् वै पुनः पुनः।**
**सज्यमस्य धनुः कण्ठे व्यवासृजत भारत ॥१९॥**

महाराज ! राधापुत्र कर्ण ने बारम्बार हँसते हुए उसका पीछा करके उसके गले में प्रत्यञ्चासहित अपना धनुष डाल दिया।

**ततः स शुशुभे राजन् कण्ठासक्तमहाधनुः।**
**परिवेषमनुप्राप्तो यथा स्याद् व्योम्नि चन्द्रमाः ॥२०॥**

राजन् ! गले में पड़े हुए उस महाधनुष से युक्त नकुल ऐसे सुशोभित हुए मानो आकाश में चन्द्रमा पर घेरा पड़ गया हो।

**तमब्रवीत् ततः कर्णो व्यर्थं व्याहृतवानसि।**
**वदेदानीं पुनर्हृष्टो वध्यमानः पुनः पुनः ॥२१॥**
**मा योत्सीः कुरुभिः सार्धं बलवद्भिश्च पाण्डव।**
**सदृशैस्तात युध्यस्व व्रीडां मा कुरु भारत ॥२२॥**
**गृहं वा गच्छ माद्रेय यत्र वा कृष्णफाल्गुनौ।**
**एवमुक्त्वा महाराज व्यसर्जयत तं तदा ॥२३॥**

उस समय कर्ण ने नकुल से कहा—"पाण्डुकुमार ! तुमने व्यर्थ ही बढ़-चढ़कर डींगें मारी थीं। अब बारम्बार मेरे बाणों की मार खाकर पुनः उसी हर्ष के साथ तुम वैसी ही बातें करो न ! बलवान् कौरव-योद्धाओं के साथ आज से युद्ध मत करना। तात ! जो तुम्हारे समान हों, उन्हीं से युद्ध करना। भारत ! लज्जित न होओ। माद्रीकुमार ! इच्छा हो तो घर चले जाओ अथवा जहाँ श्रीकृष्ण और अर्जुन हैं, वहाँ भाग जाओ।" ऐसा कहकर उस समय कर्ण ने नकुल को छोड़ दिया।

**वधप्राप्तं तु तं शूरो नाहनद् धर्मवित्तदा।**
**स्मृत्वा कुन्त्या वचो राजंस्तत एनं व्यसर्जयत् ॥२४॥**

राजन् ! यद्यपि नकुल वध के योग्य दशा में आ पहुँचे थे, परन्तु कुन्ती को दिये वचन को स्मरण कर धर्मज्ञ वीर कर्ण ने उस समय उसे मारा नहीं, जीवित छोड़ दिया।

**तं विजित्याथ कर्णोऽपि पाञ्चालाँस्त्वरितो ययौ।**
**रथेनातिपताकेन चन्द्रवर्णहयेन च ॥२५॥**

नकुल को पराजित करके कर्ण भी चन्द्रमा के समान श्वेत रंगवाले घोड़ों और ऊँची पताकाओं से युक्त रथ के द्वारा तुरन्त ही पाञ्चालों की ओर चला गया।

**तत्राकरोन्महाराज कदनं सूतनन्दनः।**
**मध्यं प्राप्ते दिनकरे चक्रवद् विचरन् प्रभुः ॥२६॥**

महाराज ! दोपहर होते-होते शक्तिशाली सूतनन्दन कर्ण ने चक्र के समान चारों ओर विचरण करते हुए वहाँ पाण्डव-सैनिकों का भीषण संहार कर डाला।

**तं दहन्तमनीकानि तत्र तत्र महारथम्।**
**क्षत्रिया वर्जयामासुर्युगान्ताग्निमिवोल्बणम् ॥२७॥**

महारथी कर्ण प्रलयकाल की प्रचण्ड अग्नि के समान जहाँ-तहाँ पाण्डव-सेनाओं को भस्म कर रहा था। उस समय क्षत्रिय लोग उसे छोड़कर दूर हट जाते थे।

**इति महाभारते कर्णपर्वणि तृतीयोऽध्यायः ॥३॥**

# चतुर्थोऽध्यायः

## युधिष्ठिर द्वारा दुर्योधन की पराजय और अर्जुन द्वारा कौरव-सेना का संहार

सञ्जय उवाच

**युधिष्ठिरं महाराज विसृजन्तं शरान् बहून् ।**
**स्वयं दुर्योधनो राजा प्रत्यगृह्णादभीतवत् ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज ! बहुसंख्यक बाणों की वृष्टि करते हुए युधिष्ठिर का स्वयं राजा दुर्योधन ने एक निर्भीक वीर की भाँति सामना किया।

**तमापतन्तं सहसा तव पुत्रं महारथम् ।**
**धर्मराजो द्रुतं विद्ध्वा तिष्ठ तिष्ठेति चाब्रवीत् ॥२॥**

सहसा आते हुए आपके महारथी पुत्र को धर्मराज युधिष्ठिर ने तुरन्त ही घायल करके कहा—"अरे ! खड़ा रह, खड़ा रह।"

**स तु तं प्रतिविव्याध नवभिर्निशितैः शरैः ।**
**सारथिं चास्य भल्लेन भृशं क्रुद्धोऽभ्यताडयत् ॥३॥**

इससे दुर्योधन अत्यन्त कुपित हो उठा। उसने युधिष्ठिर को नौ तीखे तीरों से बींधकर बदला चुकाया और उसके सारथि पर भी एक भल्ल का प्रहार किया।

**ततो युधिष्ठिरो राजन् स्वर्णपुंखाञ्छिलीमुखान् ।**
**दुर्योधनाय चिक्षेप त्रयोदश शिलाशितान् ॥४॥**

राजन् ! तब युधिष्ठिर ने सान पर चढ़ाकर तेज किये हुए सुवर्णमय पंखवाले तेरह बाण दुर्योधन पर चलाये।

**ततो दुर्योधनो राजा धर्मशीलस्य मारिष ।**
**शिलाशितेन भल्लेन धनुश्चिच्छेद संयुगे ॥५॥**

पूजनीय नरेश ! तब रणभूमि में राजा दुर्योधन ने सान पर चढ़ाकर तेज किये हुए भल्ल से धर्मात्मा राजा युधिष्ठिर का धनुष काट दिया।

**अपविध्य धनुश्छिन्नमन्यदादाय कार्मुकम् ।**
**दुर्योधनस्य चिच्छेद ध्वजं कार्मुकमेव च ॥६॥**

युधिष्ठिर ने उस कटे हुए धनुष को फेंककर दूसरा धनुष हाथ में ले लिया और दुर्योधन के ध्वज और धनुष दोनों को काट डाला।

**अथान्यद् धनुरादाय प्राविध्यत युधिष्ठिरम् ।**
**सोऽतिविद्धो बलवता शत्रुणा शत्रुतापनः ॥७॥**
**दुर्योधनं समुद्दिश्य बाणं जग्राह सत्वरः ।**
**चिक्षेप च महाराज ततः क्रुद्धः पराक्रमी ॥८॥**

तब तो दुर्योधन ने भी दूसरा धनुष लेकर युधिष्ठिर को बींध डाला। बलवान् शत्रु के द्वारा अत्यन्त घायल किये जाने पर शत्रुतन्तापक महाबली युधिष्ठिर ने दुर्योधन को लक्ष्य करके एक बाण हाथ में लिया। महाराज ! तदनन्तर पराक्रमी युधिष्ठिर ने उस बाण को क्रोधपूर्वक चला दिया।

**स तु बाणः समासाद्य तवपुत्रं महारथम् ।**
**व्यमोहयत राजानं धरणीं च ददार ह ॥९॥**

उस बाण ने आपके महारथी पुत्र दुर्योधन को घायल करके उसे मूर्च्छित कर दिया और पृथिवी को भी विदीर्ण कर डाला।

**ततो दुर्योधनः क्रुद्धो गदामुद्यम्य वेगितः ।**
**विधित्सुः कलहस्यान्तं धर्मराजमुपाद्रवत् ॥१०॥**

फिर तो क्रोध में भरे हुए दुर्योधन ने वेगपूर्वक गदा उठाकर कलह का अन्त कर देने की इच्छा से धर्मराज युधिष्ठिर पर आक्रमण किया।

**तमुद्यतगदं दृष्ट्वा दण्डहस्तमिवान्तकम् ।**
**धर्मराजो महाशक्तिं प्राहिणोत् तव सूनवे ॥११॥**

दण्डधारी यमराज के समान उसे हाथ में गदा उठाये देख धर्मराज ने आपके पुत्र पर महाशक्ति का प्रहार किया।

**रथस्थः स तया विद्धो वर्म भित्वा महोरसि ।**
**भृशं संविग्नहृदयः पपात च मुमोह च ॥१२॥**

रथ पर बैठे हुए दुर्योधन का कवच फाड़कर वह शक्ति उसकी छाती में घुस गई। इससे अत्यन्त उद्विग्नचित्त होकर दुर्योधन गिरा और मूर्च्छित हो गया।

**भीमस्तमाह च ततः प्रतिज्ञामनुचिन्तयन् ।**
**नायं वध्यस्तव नृप इत्युक्तः स न्यवर्तत ॥१३॥**

उस समय भीमसेन ने अपनी प्रतिज्ञा का विचार करते हुए युधिष्ठिर से कहा—"राजन् ! यह दुर्योधन

आपका वध्य नहीं है।" भीम के ऐसा कहने पर युधिष्ठिर ने उसे छोड़ दिया।

**ततस्त्वरितमागम्य कृतवर्मा तवात्मजम्।**
**प्रत्यपद्यत राजानं निमग्नं व्यसनार्णवे ॥१४॥**

तब कृतवर्मा विपत्ति-सागर में डूबे हुए आपके पुत्र राजा दुर्योधन के पास तुरन्त पहुँचकर उसकी रक्षा के लिए तत्पर हो गया।

**गदामादाय भीमोऽपि हेमपट्टपरिष्कृताम्।**
**अभिदुद्राव वेगेन कृतवर्माणमाहवे ॥१५॥**

उधर भीमसेन भी सुवर्णपत्रजटित गदा हाथ में लेकर रणक्षेत्र में बड़े वेग से कृतवर्मा पर टूट पड़े।

**एवं तदभवद् युद्धं त्वदीयानां परैः सह।**
**अपराह्ले महाराज कांक्षतां विजयं युधि ॥१६॥**

महाराज! इस प्रकार अपराह्न के समय युद्ध-भूमि में विजय-अभिलाषी आपके योद्धाओं का शत्रुओं के साथ भीषण युद्ध होने लगा।

**ततः कर्णं पुरस्कृत्य त्वदीया युद्धदुर्मदाः।**
**पुनरावृत्य संग्रामं चक्रुर्देवासुरोपमम् ॥१७॥**

राजन्! तत्पश्चात् आपके युद्धदुर्मद योद्धा पुनः लौटकर कर्ण को आगे करके देवताओं और असुरों के समान युद्ध करने लगे।

**रथिनः समहामात्रान् गजानश्वान् ससादिनः।**
**पत्तिव्रातांश्च संक्रुद्धो निघ्नन् कर्णो व्यदृश्यत ॥१८॥**

क्रोध में भरा हुआ कर्ण रथियों, महावतोंसहित हाथियों, सवारोंसहित घोड़ों और पैदल-समूहों का वध करता हुआ ही दिखाई देता था।

**तद् वध्यमानं पाण्डूनां बलं कर्णास्त्रतेजसा।**
**विशस्त्रपत्रदेहासु प्राय आसीत् पराङ्मुखम् ॥१९॥**

कर्ण के अस्त्रों के तेज से मारी जाती हुई पाण्डवों की सेना शस्त्र, वाहन, शरीर और प्राणों से रहित हो प्रायः रणक्षेत्र से विमुख होकर भाग चली।

**अथ कर्णास्त्रमस्त्रेण प्रतिहत्यार्जुनः स्मयन्।**
**दिशं खं चैव भूमिं च प्रावृणोच्छरवृष्टिभिः ॥२०॥**

तब अर्जुन ने मुस्कराते हुए अपने अस्त्र से कर्ण के अस्त्र को नष्ट करके बाणों की वर्षा द्वारा आकाश, पृथिवी और दिशाओं को ढक दिया।

**तमसा च महाराज रजसा च विशेषतः।**
**न किंचित् प्रत्यपश्याम शुभं वा यदि वाशुभम् ॥२१॥**

महाराज! उस समय अन्धकार और विशेषतः धूल से सब-कुछ ढक जाने के कारण हम लोग किसी भी शुभ अथवा अशुभ वस्तु को नहीं देख पा रहे थे।

**ते त्रस्यन्तो महेष्वासा रात्रियुद्धस्य भारत।**
**अपयानं ततश्चक्रुः सहिताः सर्वयोधिभिः ॥२२॥**

हे भारत! वे महाधनुर्धर योद्धा रात्रियुद्ध से डरते थे, अतः समस्त सैनिकों के साथ उन्होंने वहाँ से शिबिर को प्रस्थान कर दिया।

**कौरवेष्वपयातेषु तदा राजन् दिनक्षये।**
**जयं सुमनसः प्राप्य पार्थाः स्वशिबिरं ययुः ॥२३॥**

राजन्! सूर्यास्त के समय कौरवों के हट जाने पर पाण्डव भी विजय पाकर प्रसन्नचित्त हो अपने शिबिरों को लौट गये।

**कृतेऽवहारे तैर्वीरैः सैनिकाः सर्व एव ते।**
**आशीर्वाचः पाण्डवेषु प्रायुञ्जन्त नरेश्वराः ॥२४॥**

उन वीरों द्वारा युद्ध का उपसंहार कर दिये जाने पर समस्त सैनिक और भूपाल पाण्डवों को आशीर्वाद देने लगे।

**इति महाभारते कर्णपर्वणि चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥**

# पञ्चमोऽध्यायः

## रात्रि में कौरवों की मन्त्रणा, कर्ण और दुर्योधन का वार्तालाप

सञ्जय उवाच

**शिबिरस्थाः पुनर्मन्त्रं मन्त्रयन्ति स्म कौरवाः।**
**भग्नदंष्ट्रा हतविषाः पादाक्रान्ता इवोरगाः ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! शिबिर में आने पर वे कौरव पुनः गुप्तमन्त्रणा करने लगे। उस समय उनकी अवस्था पैरों से कुचले गये उन सर्पों के समान हो रही थी, जिनके दाँत तोड़ दिये गये हों और विष नष्ट कर दिया गया हो।

**तानब्रवीत् ततः कर्णः क्रुद्धः सर्प इव श्वसन्।**
**करं करेण निष्पीडय प्रेक्षमाणस्तवात्मजम् ॥२॥**

उस समय क्रोध में भरकर फुफकारते हुए सर्प के समान कर्ण ने हाथ-से-हाथ दबाकर आपके पुत्र की ओर देखते हुए उन कौरव वीरों से इस प्रकार कहा—

**यत्तो दृढश्च दक्षश्च धृतिमानर्जुनस्तदा ।**
**सम्बोधयति चाप्येनं यथाकालमधोक्षजः ।।३।।**

"अर्जुन सावधान, दृढ़, चतुर और धैर्यवान् हैं। साथ ही उन्हें समय-समय पर श्रीकृष्ण भी कर्तव्य का ज्ञान कराते रहते हैं।

**सहसास्त्रविसर्गेण वयं तेनाद्य वञ्चिताः ।**
**श्वस्त्वहं तस्य संकल्पं सर्वं हन्ता महीपते ।।४।।**

"अतः उसने सहसा अस्त्रों का प्रयोग करके आज हमें ठग लिया है, परन्तु नरेश्वर ! कल मैं उसके सारे संकल्पों को नष्ट कर दूंगा।"

**एवमुक्तस्तथेत्युक्त्वा सोऽनुजज्ञे नृपोत्तमान् ।**
**तेऽनुज्ञाता नृपाः सर्वे स्वानि वेश्मानि भेजिरे ।।५।।**

कर्ण के ऐसा कहने पर दुर्योधन ने 'तथास्तु' कहकर समस्त श्रेष्ठ भूपालों को विश्राम के लिए जाने की आज्ञा दी। आज्ञा पाकर वे सब नरेश अपने-अपने शिबिरों में चले गये।

**प्रभातायां रजन्यां तु कर्णो राजानमभ्ययात् ।**
**समेत्य च महाबाहुर्दुर्योधनमथाब्रवीत् ।।६।।**

जब रात्रि व्यतीत हुई और प्रातःकाल हो गया, तब महाबाहु कर्ण राजा दुर्योधन के पास आया और उनसे मिलकर इस प्रकार बोला—

कर्ण उवाच

**अद्य राजन् समेष्यामि पाण्डवेन यशस्विना ।**
**हनिष्यामि च तं वीरं स वा मां निहनिष्यति ।।७।।**

**कर्ण बोला**—राजन् ! आज मैं यशस्वी पाण्डुपुत्र अर्जुन के साथ संग्राम करूँगा। या तो मैं ही उस वीर को मार डालूंगा या वही मेरा वध कर डालेगा।

**बहुत्वान्मम कार्याणां तथा पार्थस्य भारत ।**
**नाभूत् समागमो राजन् मम चैवार्जुनस्य च ।।८।।**

भरतवंशी नरेश ! मेरे तथा अर्जुन के सामने बहुत-से कार्य आते गये, अतः अबतक मेरा और उनका द्वैरथ युद्ध न हो सका।

**इदं तु मे यथाप्राज्ञं शृणु वाक्यं विशाम्पते ।**
**अनिहत्य रणे पार्थं नाहमेष्यामि भारत ।।९।।**

प्रजेश्वर ! भरतनन्दन ! मैं अपनी बुद्धि के अनुसार निश्चय करके जो बात कह रहा हूँ, उसे ध्यान से सुनो। आज मैं युद्धक्षेत्र में अर्जुन का वध किये बिना नहीं लौटूंगा।

**प्राणे शौर्येऽथ विज्ञाने विक्रमे चापि भारत ।**
**निमित्तज्ञानयोगे च सव्यसाची न मत्समः ।।१०।।**

हे भारत ! प्राणशक्ति [शारीरिक बल], शौर्य, अस्त्रविज्ञान, पराक्रम और शत्रुओं पर विजय पाने के उपायों को ढूंढ निकालने में सव्यसाची अर्जुन मेरी समानता नहीं कर सकते।

**अवश्यं तु मया वाच्यं येन हीनोऽस्मि फाल्गुनात् ।**
**सारथिस्तस्य गोविन्दो मम तादृङ् न विद्यते ।।११**

परन्तु जिस बात में मैं अर्जुन से कम हूँ, वह भी मुझे अवश्य ही बता देनी उचित है। अर्जुन के पास श्रीकृष्ण जैसे सारथि हैं, वैसा सारथि मेरे पास नहीं है।

**अयं तु सदृशः शौरेः शल्यः समितिशोभनः ।**
**सारथ्यं यदि मे कुर्याद् ध्रुवस्ते विजयो भवेत् ।।१२।।**

युद्ध में शोभा पानेवाले ये राजा शल्य श्रीकृष्ण के समान हैं; यदि ये मेरे सारथि का कार्य कर सकें तो तुम्हारी विजय निश्चित है।

**यथाश्वहृदयं वेद दाशार्हः परवीरहा ।**
**तथा शल्यो विजानीते हयानां वै महारथः ।।१३।।**

शत्रुवीरों का संहार करनेवाले दशार्हवंशी श्रीकृष्ण अश्वविद्या के रहस्य को जिस प्रकार जानते हैं, उसी प्रकार महारथी शल्य भी अश्वविज्ञान के विशेषज्ञ हैं।

**बाहुवीर्ये समो नास्ति मद्रराजस्य कश्चन ।**
**तथास्त्रे मत्समो नास्ति कश्चिदेव धनुर्धरः ।।१४।।**

बाहुबल में मद्रराज शल्य की समानता करने-वाला दूसरा कोई नहीं है, उसी प्रकार अस्त्रविद्या में मेरे समान कोई भी धनुर्धर नहीं है।

**तथा शल्यसमो नास्ति हयज्ञाने हि कश्चन ।**
**सोऽयमभ्यधिकः कृष्णाद् भविष्यति रथो मम ।।१५।।**
**एवं कृते रथस्थोऽहं गुणैरभ्यधिकोऽर्जुनात् ।**
**भवे युधि जयेयं च फाल्गुनं कुरुसत्तम ।।१६।।**

अश्वविज्ञान में निश्चय ही शल्य के समान कोई

नहीं है। शल्य के सारथि होने पर मेरा यह रथ अर्जुन के रथ से आगे बढ़ जाएगा। ऐसी व्यवस्था कर लेने पर जब मैं रथ में बैठूँगा, उस समय सभी गुणों द्वारा अर्जुन से बढ़ जाऊँगा। कुरुश्रेष्ठ! फिर तो मैं युद्ध में अर्जुन को अवश्य जीत लूँगा।

**एतत् कृतं महाराज त्वयेच्छामि परन्तप।**
**क्रियतामेष कामो मे मा वः कालोऽत्यगादयम् ॥१७॥**

शत्रुसन्तापक महाराज! मैं चाहता हूँ कि आपके द्वारा यह व्यवस्था हो जाए। मेरा यह मनोरथ पूरा किया जाए। अब आप लोगों का यह समय व्यर्थ नहीं बीतना चाहिए।

सञ्जय उवाच

**एवमुक्तस्तव सुतः कर्णेनाहवशोभिना।**
**सम्पूज्य सम्प्रहृष्टात्मा ततो राधेयमब्रवीत् ॥१८॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! युद्ध में शोभा पानेवाले कर्ण के ऐसा कहने पर आपके पुत्र दुर्योधन का मन प्रसन्न हो गया। फिर उसने राधापुत्र कर्ण का पूर्णतः सम्मान करके उससे कहा—

दुर्योधन उवाच

**एवमेतत्करिष्यामि यथा त्वं कर्ण मन्यसे।**
**सोपासङ्गा रथाः साश्वाः स्वनुयास्यन्ति संयुगे ॥१९॥**

**दुर्योधन बोला**—कर्ण! जैसा तुम ठीक समझते हो, उसी के अनुसार यह सारा कार्य मैं करूँगा। युद्धभूमि में अनेक तरकसों से भरे हुए बहुत-से अश्वयुक्त रथ तुम्हारे पीछे-पीछे जाएँगे।

सञ्जय उवाच

**एवमुक्त्वा महाराज तव पुत्रः प्रतापवान्।**
**अभिगम्याब्रवीद् राजा मद्रराजमिदं वचः ॥२०॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज! ऐसा कहकर आपके प्रतापी पुत्र राजा दुर्योधन ने मद्रराज शल्य के पास जाकर इस प्रकार कहा।

**इति महाभारते कर्णपर्वणि पञ्चमोऽध्यायः ॥५॥**

# षष्ठोऽध्यायः

## दुर्योधन की प्रार्थना पर शल्य द्वारा कर्ण का सारथ्य ग्रहण करना

दुर्योधन उवाच

**मद्रेश्वर प्रयाचेऽहं शिरसा विनयेन च।**
**सारथ्यं रथिनां श्रेष्ठ कर्णस्य कर्तुमर्हसि ॥१॥**

**दुर्योधन बोला**—रथियों में श्रेष्ठ मद्रराज! मैं मस्तक झुकाकर विनयपूर्वक आपसे याचना करता हूँ कि आप कर्ण का सारथ्य कीजिए।

**पार्थस्य समरे कृष्णो यथाभीषुग्रहो वरः।**
**तथा त्वमपि कर्णस्य रथेऽभीषुग्रहो भव ॥२॥**

जैसे युद्धभूमि में अर्जुन के रथ की बागडोर सँभालनेवाले श्रेष्ठ सारथि श्रीकृष्ण हैं, उसी प्रकार आप भी कर्ण के रथ पर बैठकर उसकी बागडोर अपने हाथ में लीजिए।

**उद्यन्तौ च यथा सूर्यौ बालसूर्यसमप्रभौ।**
**कर्णशल्यौ रणे दृष्ट्वा विद्रवन्तु महारथाः ॥३॥**

प्रातःकालीन सूर्य के समान तेजस्वी कर्ण और शल्य को उदित होते हुए दो सूर्यों के समान रणभूमि में देखकर शत्रुसेना के महारथी भाग जाएँ।

**रथिनां प्रवरः कर्णो यन्तॄणां प्रवरो भवान्।**
**संयोगो युवयोर्लोके नाभून्न च भविष्यति ॥४॥**

कर्ण रथियों में श्रेष्ठ है और आप सारथियों के शिरोमणि हैं। संसार में आप दोनों का आज जो संयोग बन गया है, वह न तो कभी हुआ था और न आगे कभी होगा।

**यथा सर्वास्ववस्थासु वार्ष्णेयः पाति पाण्डवम्।**
**तथा भवान् परित्रातुं कर्णं वैकर्तनं रणे ॥५॥**

जैसे श्रीकृष्ण सभी अवस्थाओं में पाण्डुकुमार अर्जुन की रक्षा करते हैं, उसी प्रकार आप भी युद्धक्षेत्र में वैकर्तन कर्ण की रक्षा करें।

सञ्जय उवाच

**दुर्योधनवचः श्रुत्वा धुन्वन् हस्तौ पुनः पुनः।**
**कुलैश्वर्यश्रुतबलैर्दृप्तः शल्योऽब्रवीदिदम् ॥६॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! दुर्योधन की बात

सुनकर अपने कुल, ऐश्वर्य, शास्त्रज्ञान और बल के अभिमान में चूर शल्य अपने हाथों को बार-बार हिलाते हुए यह वचन बोला—

शल्य उवाच

**अवमन्यसि गान्धारे ध्रुवं च परिशङ्कसे।**
**यन्मां ब्रवीषि विश्रब्धं सारथ्यं क्रियतामिति ॥७॥**

**शल्य बोला**—गान्धारीकुमार ! तुम मेरा अपमान कर रहे हो, निश्चय ही तुम्हारे मन में मेरे प्रति सन्देह है, तभी तुम निर्भय होकर कह रहे हो कि आप "सारथि का कार्य कीजिए।"

**अस्मत्तोऽभ्यधिकं कर्णं मन्यमानः प्रशंससि।**
**न चाहं युधि राधेयं गणये तुल्यमात्मनः ॥८॥**

तुम कर्ण को मुझसे श्रेष्ठ मानकर उसकी प्रशंसा कर रहे हो, परन्तु रणभूमि में मैं राधापुत्र कर्ण को अपने समान नहीं समझता।

**पश्य पीनौ मम भुजौ वज्रसंहननौ दृढौ।**
**धनुः पश्य च मे चित्रं शरांश्चाशीविषोपमान् ॥९॥**
**रथं च पश्य मे क्लृप्तं सदश्वैर्वातवेगितैः।**
**गदां च पश्य गान्धारे हेमपट्टविभूषिताम् ॥१०॥**

गान्धारीकुमार ! तुम मेरी मोटी और वज्र के समान गँठीली इन सुदृढ़ भुजाओं को देखो। मेरे इस विचित्र धनुष और विषधर सर्प के समान इन विषैले बाणों को निहारो। वायु के समान वेगवान् उत्तम घोड़ों से जुते हुए मेरे इस समलंकृत रथ और सुवर्णपत्र से मढ़ी हुई गदा की ओर दृष्टिपात करो।

**दारयेयं महीं कृत्स्नां विकिरेयं च पर्वतान्।**
**शोषयेयं समुद्रांश्च तेजसा स्वेन पार्थिव ॥११॥**

प्रजेश्वर ! मैं सारी पृथिवी को विदीर्ण कर सकता हूँ, पर्वतों को तोड़-फोड़कर बिखेर सकता हूँ और अपने तेज से समुद्रों को भी सुखा सकता हूँ।

**तं मामेवंविधं राजन् समर्थमरिनिग्रहे।**
**कस्माद् युनंक्षि सारथ्ये नीचस्याधिरथे रणे ॥१२॥**

राजन् ! इस प्रकार शत्रुओं का दमन करने में पूर्णतया समर्थ होने पर भी तुम मुझे इस नीच सूतपुत्र कर्ण के सारथि के कार्य में कैसे नियुक्त कर रहे हो ?

**न मामधुरि राजेन्द्र नियोक्तुं त्वमिहार्हसि।**
**न हि पापीयसः श्रेयान् भूत्वा प्रेष्यत्वमुत्सहे ॥१३॥**

राजेन्द्र ! तुम्हें मुझे नीच कर्म में नहीं लगाना चाहिए। मैं श्रेष्ठ होकर अति नीच पापी पुरुष की दासता नहीं कर सकता।

**अहं मूर्धाभिषिक्तो हि राजर्षिकुलजो नृपः।**
**महारथः समाख्यातः सेव्यः स्तुत्यश्च बन्दिनाम् ॥१४॥**

मैं राजर्षियों के कुल में उत्पन्न मूर्द्धाभिषिक्त नरेश हूँ। विश्वविख्यात महारथी हूँ। मैं सूतों द्वारा सेव्य और बन्दीजनों द्वारा स्तुति के योग्य हूँ।

**सोऽहमेतादृशो भूत्वा नेहारिबलसूदनः।**
**सूतपुत्रस्य संग्रामे सारथ्यं कर्तुमुत्सहे ॥१५॥**

ऐसा प्रतिष्ठित और शत्रुसेना का संहार करने में समर्थ होकर मैं इस युद्धक्षेत्र में एक सूतपुत्र के सारथि का कार्य कदापि नहीं कर सकता।

**अवमानमहं प्राप्य न योत्स्यामि कथञ्चन।**
**आपृच्छे त्वाद्य गान्धारे गमिष्यामि गृहाय वै ॥१६॥**

गान्धारीकुमार ! आज इस प्रकार अपमानित होकर अब मैं किसी प्रकार युद्ध नहीं करूँगा। मैं तुमसे आज्ञा चाहता हूँ। मैं आज ही अपने घर को लौट जाऊँगा।

सञ्जय उवाच

**एवमुक्त्वा महाराज शल्यः समितिशोभनः।**
**उत्थाय प्रययौ तूर्णं राजमध्यादमर्षितः ॥१७॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज ! ऐसा कहकर युद्ध में सुशोभित होनेवाले शल्य अमर्ष में भर गये और राजाओं के बीच से उठकर तुरन्त चल दिये।

**प्रणयाद् बहुमानाच्च तं निगृह्य सुतस्तव।**
**अब्रवीन्मधुरं वाक्यं साम्ना सर्वार्थसाधकम् ॥१८॥**

तब आपके पुत्र ने अत्यन्त प्रेम और आदर से उन्हें रोका और सान्त्वनापूर्ण मधुर स्वर में उनसे यह सर्वार्थसाधक वचन कहा—

**यथा शल्य विजानीषे एवमेतदसंशयम्।**
**अभिप्रायस्तु मे कश्चित् तं निबोध जनेश्वर ॥१९॥**

"नरेश्वर शल्य ! आप अपने विषय में जैसा समझते हैं, ऐसी ही बात है, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है, परन्तु मेरा कुछ और ही अभिप्राय है, आप उसे ध्यानपूर्वक सुनें।

**न कर्णोऽभ्यधिकस्त्वत्तो न शंके त्वाञ्च पार्थिव ।**
**न हि मद्रेश्वरो राजा कुर्याद् यदनृतं भवेत् ॥२०॥**

"प्रजेश्वर ! न तो कर्ण आपसे श्रेष्ठ है और न मुझे आपमें सन्देह है। मद्रदेश के स्वामी राजा शल्य कोई ऐसा कार्य नहीं कर सकते, जो उनकी सत्य प्रतिज्ञा के विपरीत हो।

**शल्यभूतस्तु शत्रूणां यस्मात्त्वं युधि मानद ।**
**तस्माच्छल्यो हि ते नाम कथ्यते पृथिवीतले ॥२१॥**

"मानद ! आप रणभूमि में शत्रुओं के लिए शल्य=काँटे के समान हैं, अतः इस भूतल पर आपका शल्य नाम विख्यात है।

**न च त्वत्तो हि राधेयो न चाहमपि वीर्यवान् ।**
**वृणेऽहं त्वां हयाग्र्याणां यन्तारमिह संयुगे ॥२२॥**

"आपकी अपेक्षा न तो राधापुत्र कर्ण बलवान् है और न मैं ही। आप अश्वविद्या के सर्वोत्तम ज्ञाता हैं, अतः इस रणभूमि में मैं आपका वरण कर रहा हूँ।

**मन्ये चाभ्यधिकं शल्य गुणैः कर्णं धनञ्जयात् ।**
**भवन्तं वासुदेवाच्च लोकोऽयमिति मन्यते ॥२३॥**

"शल्य ! मैं कर्ण को अर्जुन से अधिक गुणवान् मानता हूँ और यह सारा संसार आपको वसुदेवपुत्र श्रीकृष्ण से श्रेष्ठ मानता है।

**कर्णो ह्यभ्यधिकः पार्थादस्त्रैरेव नरर्षभ ।**
**भवानभ्यधिकः कृष्णादश्वज्ञाने बले तथा ॥२४॥**

"नरश्रेष्ठ ! कर्ण तो अर्जुन से केवल अस्त्र-ज्ञान में ही बढ़ा-चढ़ा है, परन्तु आप श्रीकृष्ण से अश्व-विद्या और बल—दोनों में बढ़-चढ़कर हैं।

**यथाश्वहृदयं वेद वासुदेवो महामनाः ।**
**द्विगुणं त्वं तथा वेत्सि मद्रराजेश्वरात्मज ॥२५॥**

"मद्रराजकुमार ! महामनस्वी श्रीकृष्ण जिस प्रकार अश्वविद्या का रहस्य जानते हैं, वैसा ही, अपितु उससे भी दुगुना आप जानते हैं।"

शल्य उवाच

**यन्मां ब्रवीषि गान्धारे मध्ये सैन्यस्य कौरव ।**
**विशिष्टं देवकीपुत्रात् प्रीतिमानस्म्यहं त्वयि ॥२६॥**

**शल्य बोले**—कौरव ! गान्धारीपुत्र ! तुम मुझे सारी सेना के बीच में देवकीनन्दन श्रीकृष्ण से भी बढ़कर बता रहे हो, इससे मैं तुमपर अति प्रसन्न हूँ।

**एष सारथ्यमातिष्ठे राधेयस्य यशस्विनः ।**
**युध्यतः पाण्डवाग्र्येण यथा त्वं वीर मन्यसे ॥२७॥**

वीर ! जैसा तुम चाहते हो उसके अनुसार मैं पाण्डवशिरोमणि अर्जुन के साथ युद्ध करते हुए यशस्वी कर्ण का सारथिकर्म अब स्वीकार किये लेता हूँ।

**समयश्च हि मे वीर कश्चिद् वैकर्तनं प्रति ।**
**उत्सृजेयं यथाश्रद्धमहं वाचोऽस्य सन्निधौ ॥२८॥**

परन्तु वीरवर ! वैकर्तन कर्ण को मेरी एक शर्त का पालन करना होगा। मैं इसके समीप जो जी में आएगा, वैसी बातें करूँगा।

**यत्तु कर्णमहं ब्रूयां हितकामः प्रियाप्रिये ।**
**तद्धि मे क्षमतां सर्वं भवान् कर्णश्च सर्वशः ॥२९॥**

मैं हित की कामना से कर्ण से जो भी प्रिय अथवा अप्रिय वचन कहूँ, वह सब आप और कर्ण को क्षमा करना होगा।

सञ्जय उवाच

**तथेति राजन् पुत्रस्ते सह कर्णेन मारिष ।**
**अब्रवीन्मद्रराजं तं सर्वक्षत्रस्य सन्निधौ ॥३०॥**

**सञ्जय कहते हैं**—मान्यवर ! तब समस्त क्षत्रियों के मध्य कर्णसहित आपके पुत्र ने मद्रराज शल्य से कहा—"बहुत अच्छा, आपकी शर्त स्वीकार है।"

**सारथ्यस्याभ्युपगमाच्छल्येनाश्वासितस्तदा ।**
**दुर्योधनस्तदा हृष्टः कर्णं तमभिषस्वजे ॥३१॥**

जब शल्य ने सारथ्य स्वीकार करने का आश्वासन दे दिया, तब राजा दुर्योधन ने बड़े हर्ष के साथ कर्ण को हृदय से लगा लिया।

**अब्रवीच्च पुनः कर्णं स्तूयमानः सुतस्तव ।**
**जहि पार्थान् रणे सर्वान् महेन्द्रो दानवानिव ॥३२॥**

तदनन्तर बन्दीजनों द्वारा अपनी स्तुति सुनते हुए आपके पुत्र ने कर्ण से फिर कहा—"वीर ! तुम रणभूमि में सभी कुन्तीपुत्रों को उसी प्रकार मार डालो, जैसे देवराज इन्द्र दानवों का संहार करते हैं।

**इति महाभारते कर्णपर्वणि षष्ठोऽध्यायः ॥६॥**

# सप्तमोऽध्यायः

## कर्ण का युद्ध के लिए प्रस्थान और शल्य से उसका वार्तालाप

सञ्जय उवाच

**शल्येऽभ्युपगते कर्णः सारथिं सुमनाब्रवीत् ।**
**त्वं सूत स्यन्दनं मह्यं कल्पयेत्यसकृत् त्वरन् ॥१॥**

सञ्जय कहते हैं—राजन् ! जब शल्य ने सारथि होना पूर्णरूप से स्वीकार कर लिया, तब कर्ण ने प्रसन्नचित्त होकर बारम्बार अपने पूर्वसारथि से शीघ्रतापूर्वक कहा—"सूत ! तुम मेरा रथ सजाकर तैयार करो ।"

**ततो जैत्रं रथवरं गन्धर्वनगरोपमम् ।**
**विधिवत् कल्पितं भद्रं जयेत्युक्त्वा न्यवेदयत् ॥२॥**

तब सारथि ने गन्धर्वनगर के समान विशाल, विजयशील, श्रेष्ठ और मङ्गलकारक रथ को विधिपूर्वक समलंकृत करके सूचित किया—"स्वामिन् ! आपकी जय हो ! रथ तैयार है ।"

**तं रथं रथिनां श्रेष्ठः कर्णः कृत्वा प्रदक्षिणम् ।**
**समीपस्थं मद्रराजमारोह त्वमथाब्रवीत् ॥३॥**

रथियों में श्रेष्ठ कर्ण ने उस रथ की प्रदक्षिणा करके पास ही खड़े हुए मद्रराज से कहा—"पहले आप रथ पर सवार हों ।"

**ततः कर्णस्य दुर्धर्षं स्यन्दनप्रवरं महत् ।**
**आरुरोह महातेजाः शल्यः सिंह इवाचलम् ॥४॥**

तब जैसे सिंह पर्वत पर चढ़ता है, वैसे ही महातेजस्वी शल्य कर्ण के दुर्जय, विशाल तथा श्रेष्ठ रथ पर आरूढ़ हुए ।

**ततः शल्याश्रितं दृष्ट्वा कर्णः स्वं रथमुत्तमम् ।**
**अध्यतिष्ठद् यथाम्भोदं विद्युत्वन्तं दिवाकरः ॥५॥**

कर्ण अपने उस श्रेष्ठ रथ को सारथि शल्य से सनाथ हुआ देख स्वयं भी उसपर चढ़ा, मानो सूर्यदेव बिजलियों से युक्त मेघ पर प्रतिष्ठित हुए हों ।

**तं रथस्थं महाबाहुं युद्धायामिततेजसम् ।**
**दुर्योधनस्तु राधेयमिदं वचनमब्रवीत् ॥६॥**

**अकृतं द्रोणभीष्माभ्यां दुष्करं कर्म संयुगे ।**
**कुरुष्वाधिरथे वीर मिषतां सर्वधन्विनाम् ॥७॥**

युद्ध के लिए रथ पर बैठे हुए अमित तेजस्वी महाबाहु राधाकुमार कर्ण से दुर्योधन ने इस प्रकार कहा—"हे वीर ! अधिरथकुमार ! युद्धस्थल में द्रोणाचार्य और भीष्म भी जिसे न कर सके, वही दुष्कर कर्म तुम समस्त धनुर्धरों के देखते-देखते कर डालो ।

**गृहाण धर्मराजं वा जहि वा त्वं धनञ्जयम् ।**
**भीमसेनं च राधेय माद्रीपुत्रौ यमावपि ॥८॥**

"राधानन्दन ! या तो तुम धर्मराज युधिष्ठिर को कैद कर लो या अर्जुन, भीमसेन और माद्रीकुमार नकुल-सहदेव को मार डालो ।

**जयश्च तेऽस्तु भद्रं ते प्रयाहि पुरुषर्षभ ।**
**पाण्डुपुत्रस्य सैन्यानि कुरु सर्वाणि भस्मसात् ॥९॥**

"पुरुषश्रेष्ठ ! तुम्हारी जय हो, तुम्हारा कल्याण हो । अब तुम प्रस्थान करो और पाण्डुपुत्र की सारी सेनाओं को भस्म करो ।"

**प्रतिगृह्य तु तद् वाक्यं रथस्थो रथसत्तमः ।**
**अभ्यभाषत राधेयः शल्यं युद्धविशारदम् ॥१०॥**

**नोदयाश्वान् महाबाहो यावद्धन्मि धनञ्जयम् ।**
**भीमसेनं यमौ चोभौ राजानं च युधिष्ठिरम् ॥११॥**

रथ पर आरूढ़ रथियों में श्रेष्ठ राधापुत्र कर्ण ने दुर्योधन के उस आदेश को शिरोधार्य करके युद्धकुशल राजा शल्य से कहा—"महाबाहो ! घोड़ों को आगे बढ़ाइए, जिससे कि मैं अर्जुन, भीमसेन, दोनों भाई नकुल-सहदेव तथा राजा युधिष्ठिर का वध कर सकूँ ।

**अद्य पश्यतु मे शल्य बाहुवीर्यं धनञ्जयः ।**
**अस्यतः कङ्कपत्राणां सहस्राणि शतानि च ॥१२॥**

"शल्य ! आज सैकड़ों और सहस्रों कङ्कपत्रयुक्त बाणों की वर्षा करते हुए मुझ कर्ण के बाहुबल को अर्जुन देखें ।"

शल्य उवाच

**सूतपुत्र कथं नु त्वं पाण्डवानवमन्यसे ।**
**अपि संजनयेयुर्ये भयं साक्षाच्छतक्रतोः ॥१३॥**

**यदा श्रोष्यसि निर्घोषं विस्फूर्जितमिवाशनेः ।**
**राधेय गाण्डिवस्याजौ तदा नैवं वदिष्यसि ॥१४॥**

**शल्य ने कहा**—सूतपुत्र ! तुम पाण्डवों की अवहेलना कैसे करते हो ? वे साक्षात् इन्द्र के मन में भी भय उत्पन्न कर सकते हैं। राधापुत्र ! जब तुम रणभूमि में वज्र की गड़गड़ाहट के समान गाण्डीव धनुष का गम्भीर घोष सुनोगे, तब ऐसी बातें नहीं कहोगे।

**यदा द्रक्ष्यसि भीमेन कुञ्जरानीकमाहवे ।**
**विशीर्णदन्तं निहतं तदा नैवं वदिष्यसि ॥१५॥**

जब तुम देखोगे कि भीमसेन ने रणक्षेत्र में गजराजों की सेना के दाँत तोड़-तोड़कर उनका संहार कर डाला है, तब तुम इस प्रकार नहीं बोल सकोगे।

सञ्जय उवाच

**अनादृत्य तु तद् वाक्यं मद्रराजेन भाषितम् ।**
**याहीत्येवाब्रवीत् कर्णो मद्रराजं तरस्विनम् ॥१६॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! मद्रराज की कही हुई उस बात की उपेक्षा करके कर्ण ने उन वेगशाली मद्रनरेश से कहा—"चलिए, चलिए।"

**प्रस्थितं सूतपुत्रं च जयेत्यूचुर्नराधिपाः ।**
**निर्जितान् पाण्डवांश्चैव मेनिरे तत्र कौरवाः ॥१७॥**

सूतपुत्र के प्रस्थान करने पर सब राजा उनकी जय-जयकार करने लगे और कौरवों को यह विश्वास हो गया कि अब पाण्डव परास्त हो जाएँगे।

**प्रयाणे च ततः कर्णो हर्षयन् वाहिनीं तव ।**
**एकैकं समरे दृष्ट्वा पाण्डवान् पर्यपृच्छत ॥१८॥**

राजन् ! प्रस्थानकाल में आपकी सेना का हर्ष बढ़ाता हुआ कर्ण रणक्षेत्र में पाण्डव-सैनिकों को देखकर प्रत्येक से पूछने और कहने लगा—

**यो मामद्य महात्मानं दर्शयेच्छ्वेतवाहनम् ।**
**तस्मै दद्यामभिप्रेतं धनं यन्मनसेच्छति ॥१९॥**

"जो आज मुझे श्वेतवाहन अर्जुन को दिखा देगा, उसे मैं उसका अभीष्ट धन, जिसे वह मन से लेना चाहे, दे दूँगा।

**हत्वा च सहितौ कृष्णौ तयोर्वित्तानि सर्वशः ।**
**तस्मै दद्यामहं यो मे प्रब्रूयात् केशवार्जुनौ ॥२०॥**

"जो मुझे श्रीकृष्ण और अर्जुन का पता बता देगा, उसे मैं उन दोनों को मारकर उनका सारा धन-वैभव दे दूँगा।"

शल्य उवाच

**बाल्यात्त्वमिह त्यजसि वसु वैश्रवणो यथा ।**
**अयत्नेनैव राधेय द्रष्टास्यद्य धनञ्जयम् ॥२१॥**

**शल्य बोले**—राधापुत्र ! तुम मूर्खता से ही यहाँ कुबेर के समान धन लुटा रहे हो, आज अर्जुन को तो तुम बिना यत्न किये ही देख लोगे।

**यच्च प्रार्थयसे हन्तुं कृष्णौ मोहाद् वृथैव तत् ।**
**न हि शुश्रुम सम्मर्दे क्रोष्ट्रा सिंहौ निपातितौ ॥२२॥**

और जो तुम मोहवश श्रीकृष्ण एवं अर्जुन को मारने की बात कहते हो, वह मनोरथ भी व्यर्थ ही है, क्योंकि हमने यह कभी नहीं सुना कि किसी गीदड़ ने युद्ध में दो सिंहों को मार गिराया हो।

**समुद्रतरणं दोर्भ्यां कण्ठे बद्ध्वा यथा शिलाम् ।**
**गिर्यग्राद् वा निपतनं तादृक् तव चिकीर्षितम् ॥२३॥**

जैसे कोई गले में पत्थर बाँधकर दोनों हाथों से समुद्र पार करना चाहे अथवा पहाड़ की चोटी से नीचे कूदने की इच्छा करे, ऐसी ही तुम्हारी सारी चेष्टा और अभिलाषा है।

**सहितः सर्वयोधैस्त्वं व्यूढानीकैः सुरक्षितः ।**
**धनञ्जयेन युध्यस्व श्रेयश्चेत् प्राप्तुमिच्छसि ॥२४॥**

यदि तुम कल्याण चाहते हो तो व्यूहरचनापूर्वक खड़े हुए समस्त सैनिकों के साथ सुरक्षित रहकर अर्जुन के साथ युद्ध करो।

**हितार्थं धार्तराष्ट्रस्य ब्रवीमि त्वां न हिंसया ।**
**श्रद्धत्स्वैतं मया प्रोक्तं यदि तेऽस्ति जिजीविषा ॥२५॥**

दुर्योधन के हित के लिए ही मैं ऐसा कह रहा हूँ, हिंसाभाव से नहीं। यदि तुम्हें जीने की इच्छा है तो मेरे इस कथन पर विश्वास करो।

कर्ण उवाच

**स्वबाहुवीर्यमाश्रित्य प्रार्थयाम्यर्जुनं रणे ।**
**त्वं तु मित्रमुखः शत्रुर्मां भीषयितुमिच्छसि ॥२६॥**

**कर्ण बोला**—शल्य ! मैं अपने भुजबल का भरोसा करके युद्धभूमि में अर्जुन को पाना चाहता हूँ, परन्तु तुम तो मुँह से मित्र बने हुए वास्तव में शत्रु हो जो मुझे यहाँ डराना चाहते हो।

**न मामस्मादभिप्रायात् कश्चिदद्य निवर्तयेत् ।**
**अपीन्द्रो वज्रमुद्यम्य किमु मर्त्यः कथञ्चन ॥२७॥**

परन्तु मुझे आज इस अभिप्राय से कोई भी पीछे नहीं लौटा सकता। वज्रधारी इन्द्र भी मुझे किसी प्रकार इस निश्चय से विचलित नहीं कर सकते, फिर मनुष्य की तो बात ही क्या है!

सञ्जय उवाच

**इति कर्णस्य वाक्यान्ते शल्यः प्राहोत्तरं वचः।**
**चुकोपयिषुरत्यर्थं कर्णं मद्रेश्वरः पुनः ॥२८॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! कर्ण की यह बात समाप्त होते ही मद्रराज शल्य उसे अत्यन्त कुपित करने की इच्छा से पुनः इस प्रकार उत्तर देने लगे—

**ईषादन्तं महानागं प्रभिन्नकरटामुखम्।**
**शशको ह्वयसे युद्धे कर्ण पार्थं धनञ्जयम् ॥२९॥**

कर्ण! "जैसे कोई खरगोश ईषादण्ड के समान दाँतोंवाले महान् मदस्रावी गजराज को अपने साथ युद्ध के लिए बुलाता हो, उसी प्रकार तुम भी कुन्ती-कुमार धनञ्जय का युद्धभूमि में आह्वान करते हो।

**सिंहं केसरिणं क्रुद्धमतिक्रम्याभिनर्दसे।**
**शृगाल इव मूढस्त्वं नृसिंहं कर्ण पाण्डवम् ॥३०॥**

"कर्ण! तुम मूर्ख हो। जैसे गीदड़ क्रोध में भरे हुए केसरी सिंह का अनादर करके गर्जना करे, वैसे ही तुम भी पुरुषों में सिंह के समान पराक्रमी और क्रोध में भरे हुए पाण्डुपुत्र अर्जुन का उल्लंघन करके गरज रहे हो।

**सुपर्णं पतगश्रेष्ठं वैनतेयं तरस्विनम्।**
**भोगीवाह्वयसे पाते कर्ण पार्थं धनञ्जयम् ॥३१॥**

"कर्ण! जैसे कोई सर्प अपने पतन के लिए ही पक्षियों में श्रेष्ठ वेगशाली विनतापुत्र गरुड़ का आह्वान करता है, वैसे ही तुम भी अपने विनाश के लिए ही कुन्तीपुत्र अर्जुन को ललकार रहे हो।

**सर्वाम्भसां निधिं भीमं मूर्तिमन्तं झषायुतम्।**
**चन्द्रोदये विवर्धन्तमप्लवः संतितीर्षसि ॥३२॥**

"अरे! तुम चन्द्रोदय के समय बढ़ते हुए, जल-जन्तुओं से पूर्ण तथा उत्ताल तरंगों से व्याप्त अगाध जलराशिवाले भयंकर समुद्र को बिना किसी नौका के केवल दोनों हाथों के सहारे पार करना चाहते हो।

**यथा च स्वगृहस्थः श्वा व्याघ्रं वनगतं भषेत्।**
**तथा त्वं भषसे कर्ण नरव्याघ्रं धनञ्जयम् ॥३३॥**

"कर्ण! जैसे अपने घर में बैठा हुआ कोई कुत्ता वन में रहनेवाले बाघ की ओर भौंके, वैसे ही तुम भी नरव्याघ्र अर्जुन को लक्ष्य करके भौंक रहे हो।

**शृगालोऽपि वने कर्ण शशैः परिवृतो वसन्।**
**मन्यते सिंहमात्मानं यावत् सिंहं न पश्यति ॥३४॥**

"कर्ण! वन में खरगोश के साथ रहनेवाला गीदड़ भी जबतक सिंह को नहीं देखता, तबतक अपने को सिंह ही मानता रहता है।

**तथा त्वमपि राधेय सिंहमात्मानमिच्छसि।**
**अपश्यञ्शत्रुदमनं नरव्याघ्रं धनञ्जयम् ॥३५॥**

"राधापुत्र! उसी प्रकार तुम भी शत्रुओं का दमन करनेवाले पुरुषसिंह अर्जुन को न देखने के कारण ही अपने-आपको सिंह समझना चाहते हो।

**मन्यसे त्वं स्वकं व्याघ्रं यावत् कृष्णौ न पश्यसि।**
**समास्थितावेकरथे सूर्याचन्द्रमसाविव ॥३६॥**

"एक रथ पर बैठे हुए सूर्य और चन्द्रमा के समान सुशोभित श्रीकृष्ण और अर्जुन को जबतक तुम नहीं देख रहे हो, तभी तक अपने-आपको बाघ माने बैठे हो।

**यावद् गाण्डीवघोषं त्वं न शृणोषि महाहवे।**
**तावदेव त्वया कर्ण शक्यं वक्तुं यथेच्छसि ॥३७॥**

"कर्ण! महायुद्ध में जबतक तुम गाण्डीव धनुष की टंकार नहीं सुनते हो, तबतक जैसा चाहो, वैसा बक सकते हो।

**रथशब्दधनुःशब्दैर्नादयन्तं दिशो दश।**
**नर्दन्तमिव शार्दूलं दृष्ट्वा क्रोष्टा भविष्यसि ॥३८॥**

"रथ की घर्घराहट और धनुष की टंकार से दशों दिशाओं को निनादित करते हुए सिंहतुल्य अर्जुन को जब तुम दहाड़ते हुए देखोगे [सुनोगे], तब तुरन्त गीदड़ बन जाओगे।

**नित्यमेव शृगालस्त्वं नित्यं सिंहो धनञ्जयः।**
**वीरप्रद्वेषणान्मूढ तस्मात् क्रोष्टेव लक्ष्यसे ॥३९॥**

"अरे मूढ़! तुम सदा से ही गीदड़ हो और अर्जुन सदा से ही सिंह है। वीरों के प्रति द्वेष रखने के कारण ही तुम गीदड़ जैसे दिखाई देते हो।

**यथाखुः स्याद् विडालश्च श्वा व्याघ्रश्च बलाबले।**
**यथा शृगालः सिंहश्च यथा च शशकुञ्जरौ ॥४०॥**

"जैसे चूहा और बिलाव, कुत्ता और बाघ, गीदड़ और सिंह तथा खरगोश और हाथी अपनी निर्बलता और प्रबलता के लिए प्रसिद्ध हैं, वैसे ही तुम निर्बल हो और अर्जुन सबल है।

**यथानृतं च सत्यं च यथा चापि विषामृते।**
**तथा त्वमपि पार्थश्च प्रख्यातावात्मकर्मभिः ॥४१॥**

"जैसे सत्य और असत्य तथा विष और अमृत अपना पृथक्-पृथक् प्रभाव रखते हैं, उसी प्रकार तुम और अर्जुन भी अपने-अपने कर्मों के लिए सर्वत्र विख्यात हो।"

**इति महाभारते कर्णपर्वणि सप्तमोऽध्यायः ॥७॥**

# अष्टमोऽध्यायः

## कर्ण का शल्य को फटकारना, शल्य का उसे हंस और कौए का दृष्टान्त सुनाकर श्रीकृष्ण और अर्जुन की शरण में जाने की सलाह देना

सञ्जय उवाच

**अधिक्षिप्तस्तु राधेयः शल्येनामिततेजसा।**
**शल्यमाह सुसंक्रुद्धो वाक्शल्यमवधारयन् ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! अमित तेजस्वी शल्य के इस प्रकार आक्षेप करने पर राधापुत्र कर्ण अति क्रुद्ध हो उठा और 'वचनरूपी शल्य=बाण छोड़ने के कारण ही इसका नाम शल्य पड़ा है', ऐसा निश्चय करके इस प्रकार बोला—

कर्ण उवाच

**गुणान् गुणवतां शल्य गुणवान् वेत्ति नागुणः।**
**त्वं तु शल्य गुणैर्हीनः किं ज्ञास्यसि गुणागुणम् ॥२॥**

**कर्ण बोला**—शल्य! गुणी पुरुषों के गुणों को गुणवान् ही जानता है, गुणहीन नहीं। तुम तो समस्त गुणों से हीन हो, फिर गुण-अवगुण क्या समझोगे?

**अर्जुनस्य महास्त्राणि क्रोधं वीर्यं धनुः शरान्।**
**अहं शल्याभिजानामि विक्रमं च महात्मनः ॥३॥**

शल्य! मैं महात्मा अर्जुन के महान् अस्त्र, क्रोध, बल, धनुष, बाण और पराक्रम को भली प्रकार जानता हूँ।

**तथा कृष्णस्य माहात्म्यमृषभस्य महीक्षिताम्।**
**यथाहं शल्य जानामि न त्वं जानासि तत्तथा ॥४॥**

शल्य! इसी प्रकार महीपाल-शिरोमणि श्रीकृष्ण के माहात्म्य को जैसा मैं जानता हूँ, वैसा तुम नहीं जानते।

**एवमेवात्मनो वीर्यमहं वीर्यं च पाण्डवे।**
**जानन्नेवाह्वये युद्धे शल्य गाण्डीवधारिणम् ॥५॥**

शल्य! मैं अपना और पाण्डुपुत्र अर्जुन का बल-पराक्रम समझकर ही गाण्डीवधारी पार्थ को युद्ध के लिए ललकार रहा हूँ।

**अर्जुने गाण्डिवं कृष्णे चक्रं तार्क्ष्यकपिध्वजौ। □**
**भीरूणां त्रासजननं शल्य हर्षकरं मम ॥६॥**

कपिध्वज अर्जुन के हाथ में गाण्डीव और गरुड़-ध्वज श्रीकृष्ण के हाथ में चक्र है। शल्य ये सब वस्तुएं कायरों को भयभीत करनेवाली हैं, परन्तु मेरा हर्ष बढ़ानेवाली हैं।

**त्वं तु दुष्प्रकृतिर्मूढो महायुद्धेष्वकोविदः।**
**भयावदीर्णः संत्रासादबद्धं बहु भाषसे ॥७॥**

तुम तो दुष्ट स्वभाव के मूर्ख मनुष्य हो। महा-युद्धों में शत्रु का सामना कैसे किया जाता है, इस बात से अनभिज्ञ हो। भय से तुम्हारा हृदय विदीर्ण हो रहा है। भयभीत होकर तुम व्यर्थ ही अनाप-सनाप बोल रहे हो।

**संस्तौषि तौ तु केनापि हेतुना त्वं कुदेशज।**
**तौ हत्वा समरे हन्ता त्वामद्य सहबान्धवम् ॥८॥**

दुष्ट देश में उत्पन्न शल्य! तुम उन दोनों की किसी स्वार्थ-सिद्धि के लिए स्तुति करते हो, परन्तु मैं आज रणभूमि में उन दोनों को मारकर बन्धु-बान्धवोंसहित तुम्हारा भी वध कर डालूंगा।

**नाहं बिभेमि कृष्णाभ्यां विजानन्नात्मनो बलम्।**
**वासुदेवसहस्रं वा फाल्गुनानां शतानि वा।**
**अहमेको हनिष्यामि जोषमास्स्व कुदेशज ॥९॥**

मैं अपने बल को भली प्रकार जानता हूँ, अतः

श्रीकृष्ण और अर्जुन से कदापि नहीं डरता। नीच देश में उत्पन्न शल्य ! तुम चुप रहो। मैं अकेला ही सहस्रों कृष्णों और सैकड़ों अर्जुनों को मार डालूँगा।

**स्त्रियो बालाश्च वृद्धाश्च या गाथाः प्रवदन्ति हि।**
**ता गाथाः शृणु मे शल्य मद्रकेषु दुरात्मसु ॥१०**

शल्य ! स्त्रियाँ, बालक और वृद्ध दुरात्मा मद्र-देशवासियों के विषय में जिन गाथाओं का गान किया करते हैं, उन गाथाओं को मुझसे सुनो।

**दुरात्मा मद्रको नित्यं नित्यमानृतिकोऽनृजुः।□**
**यावदन्त्यं हि दौरात्म्यं मद्रकेष्विति नः श्रुतम् ॥११॥**

मद्रवासी मनुष्य सदा ही दुरात्मा, सर्वदा झूठ बोलनेवाला और सदा ही कुटिल होता है। हमने सुन रखा है कि मद्रनिवासियों में मरते दम तक दुष्टता बनी रहती है।

**नापि वैरं न सौहार्दं मद्रकेण समाचरेत्।□**
**मद्रके संगतं नास्ति मद्रको हि सदा मलः ॥१२॥**

मद्रनिवासियों के साथ न तो वैर करे और न मित्रता ही स्थापित करे, क्योंकि उनमें सौहार्द की भावना नहीं होती। मद्रनिवासी सदा पाप में ही डूबा रहता है।

**मद्रकाः सिन्धुसौवीरा धर्मं विद्युः कथं त्विह।□**
**पापदेशोद्भवा म्लेच्छा धर्माणामविचक्षणाः ॥१३॥**

मद्र तथा सिन्धु-सौवीर देश के लोग पापपूर्ण देश में उत्पन्न हुए म्लेच्छ हैं। उन्हें धर्म-कर्म का पता नहीं है। वे इस लोक में धर्म की बातें कैसे समझ सकते हैं ?

**एष मुख्यतमो धर्मः क्षत्रियस्येति नः श्रुतम्।□**
**यदाजौ निहतः शेते सद्भिः समभिपूजितः ॥१४॥**

हमने सुना है कि क्षत्रिय के लिए सबसे श्रेष्ठ धर्म यह है कि वह युद्ध में मारा जाकर रणभूमि में सो जाए और सज्जनों के आदर का पात्र बने।

**आयुधानां सम्पराये यन्मुच्येयमहं ततः।**
**ममैष प्रथमः कल्पो निधने स्वर्गमिच्छतः ॥१५॥**

मैं अस्त्र-शस्त्रों द्वारा किये जानेवाले युद्ध में अपने प्राणों का परित्याग करूँ, यही मेरे लिए प्रथम श्रेणी का कार्य है, क्योंकि मैं मृत्यु के पश्चात् स्वर्ग पाने की अभिलाषा रखता हूँ।

**सोऽयं प्रियः सखा चास्मि धार्तराष्ट्रस्य धीमतः।**
**तदर्थे हि मम प्राणा यच्च मे विद्यते वसु ॥१६॥**
**व्यक्तं त्वमप्युपहितः पाण्डवैः पापदेशज।**
**यथा चामित्रवत् सर्वं त्वमस्मासु प्रवर्तसे ॥१७॥**

मैं बुद्धिमान् दुर्योधन का प्रिय मित्र हूँ, अतः मेरे पास जो कुछ धन-वैभव है, वह और मेरे प्राण भी उसी के लिए हैं। परन्तु पापदेश में उत्पन्न हुए शल्य ! यह स्पष्ट जान पड़ता है कि पाण्डवों ने तुम्हें हमारा भेद लेने के लिए ही यहाँ छोड़ा हुआ है, क्योंकि तुम हमारे साथ शत्रु के समान ही सारा बर्ताव कर रहे हो।

**कामं न खलु शक्योऽहं त्वद्विधानां शतैरपि।**
**संग्रामाद् विमुखः कर्तुं धर्मज्ञ इव नास्तिकैः ॥१८॥**

जैसे सैकड़ों नास्तिक भी धर्मज्ञ पुरुषों को धर्म से विचलित नहीं कर सकते, वैसे ही तुम्हारे जैसे सैकड़ों मनुष्य भी मुझे संग्राम से विमुख नहीं कर सकते, यह निश्चित बात है।

**सारङ्ग इव घर्मार्तः कामं विलप शुष्य च।**
**नाहं भीषयितुं शक्यः क्षत्रवृत्ते व्यवस्थितः ॥१९॥**

तुम धूप से सन्तप्त हुए हरिण की भाँति चाहे विलाप करो चाहे सूख जाओ। क्षत्रियधर्म में स्थित हुए मुझ कर्ण को तुम डरा नहीं सकते।

**न तद् भूतं प्रपश्यामि त्रिषु लोकेषु मद्रक।**
**यो मामस्मादभिप्रायाद् वारयेदिति मे मतिः ॥२०॥**

मद्रराज ! मैं तीनों लोकों में किसी भी ऐसे प्राणी को नहीं देखता, जो मुझे मेरे इस संकल्प से विचलित कर दे, यह मेरा दृढ़ निश्चय है।

**एवं विद्वञ्जोषमास्स्व त्रासात् किं बहु भाषसे।**
**मा त्वां हत्वा प्रदास्यामि क्रव्याद्भ्यो मद्रकाधम ॥२१**

विद्वन् ! शल्य ! ऐसा जानकर चुपचाप बैठे रहो। भय के कारण बहुत बड़बड़ाते क्यों हो ? मद्र-देश के नराधम ! यदि तुम चुप न हुए तो तुम्हारे टुकड़े-टुकड़े करके मांसभक्षी प्राणियों के समक्ष डाल दूँगा।

**मित्रप्रतीक्षया शल्य धृतराष्ट्रस्य चोभयोः।**
**अपवादतितिक्षाभ्यां त्रिभिरेतैर्हि जीवसि ॥२२॥**

शल्य ! एक तो मैं मित्र दुर्योधन और राजा

धृतराष्ट्र दोनों के कार्य की ओर दृष्टि रखता हूँ, दूसरे अपनी निन्दा से डरता हूँ, तीसरे मैंने क्षमा करने का वचन दिया हुआ है—इन्हीं तीन कारणों से तुम अभी तक जीवित हो।

**पुनश्चेदीदृशं वाक्यं मद्रराज वदिष्यसि।**
**शिरस्ते पातयिष्यामि गदया वज्रकल्पया ॥२३॥**

मद्रराज ! यदि फिर तुम ऐसी बात बोलोगे तो मैं अपनी वज्र के समान गदा से तुम्हारा मस्तक चूर-चूर करके गिरा दूँगा।

**श्रोतारस्त्विदमद्येह द्रष्टारो वा कुदेशज।**
**कर्णं वा जघ्नतुः कृष्णौ कर्णो वा निजघान तौ ॥२४॥**

नीच देश में उत्पन्न शल्य ! आज यहाँ सुननेवाले सुनेंगे और देखनेवाले देखेंगे कि "श्रीकृष्ण और अर्जुन ने कर्ण को मारा अथवा कर्ण ने ही उन दोनों को मार गिराया।"

सञ्जय उवाच

**एवमुक्त्वा तु राधेयः पुनरेव विशाम्पते।**
**अब्रवीन्मद्रराजं तं याहि याहीत्यसम्भ्रमम् ॥२५॥**

**सञ्जय कहते हैं**—नरेश्वर ! ऐसा कहकर राधापुत्र कर्ण ने बिना किसी घबराहट के पुनः मद्रराज शल्य से कहा—"चलो, चलो।"

**मारिषाधिरथेः श्रुत्वा वाचो युद्धाभिनन्दिनः।**
**शल्योऽब्रवीत् पुनः कर्णं निदर्शनमिदं वचः ॥२६॥**

मान्यवर नरेश ! युद्ध का अभिनन्दन करनेवाले अधिरथ पुत्र कर्ण की पूर्वोक्त बातें सुनकर शल्य ने पुनः उससे यह दृष्टान्तयुक्त बात कही—

शल्य उवाच

**जातोऽहं यज्वनां वंशे संग्रामेष्वनिवर्तिनाम्।**
**राज्ञां मूर्धाभिषिक्तानां स्वयं धर्मपरायणः ॥२७॥**

**शल्य बोला**—सूतपुत्र ! मैं यज्ञ में पीठ न दिखानेवाले यज्ञपरायण, मूर्धाभिषिक्त नरेशों के कुल में उत्पन्न हुआ हूँ और स्वयं भी धर्म में तत्पर रहता हूँ।

**यथैव मत्तो मद्येन त्वं तथा लक्ष्यसे वृष।**
**तथाद्य त्वां प्रमाद्यन्तं चिकित्सेयं सुहृत्तया ॥२८॥**

वृषभस्वरूप कर्ण ! जैसे कोई मदिरा से मतवाला हो गया हो, वैसे ही तुम भी उन्मत्त दिखाई दे रहे हो, अतः मैं हितैषी सुहृद् होने के नाते तुम जैसे प्रमत्त की आज चिकित्सा करूँगा।

**इमां काकोपमां कर्ण प्रोच्यमानां निबोध मे।**
**श्रुत्वा यथेष्टं कुर्यास्त्वं निहीन कुलपांसन ॥२९॥**

अरे नीच कुलाङ्गार कर्ण ! मेरे द्वारा कहे जानेवाले कौए के इस दृष्टान्त को सुनो और सुनकर जैसी इच्छा हो, वैसा करो।

**अवश्यं तु मया वाच्यं बुद्ध्यता त्वद्धिताहितम्।**
**विशेषतो रथस्थेन राज्ञश्चैव हितैषिणा ॥३०॥**

मैं राजा दुर्योधन का हितैषी हूँ और विशेषतः रथ पर सारथि बनकर बैठा हूँ, अतः तुम्हारे हिताहित को जानते हुए मेरा आवश्यक कर्तव्य है कि तुम्हें वह सब [तुम्हारा हित-अहित] बता दूँ।

**वैश्यः किल समुद्रान्ते प्रभूतधनधान्यवान्।**
**यज्वा दानपतिः क्षान्तः स्वकर्मस्थोऽभवच्छुचिः ॥३१॥**
**बहुपुत्रः प्रियापत्यः सर्वभूतानुकम्पकः।**
**राज्ञो धर्मप्रधानस्य राष्ट्रे वसति निर्भयः ॥३२॥**

कहते हैं समुद्र के तट पर किसी धर्मप्रधान राजा के राज्य में प्रभूत धन-धान्य से सम्पन्न एक वैश्य रहता था। वह यज्ञ-याग आदि करनेवाला, दानी, क्षमाशील, अपने वर्णानुकूल कर्म में तत्पर, पवित्र, बहुत-से पुत्रवाला, सन्तानप्रेमी और समस्त प्राणियों पर दया करनेवाला था।

**पुत्राणां तस्य बालानां कुमाराणां यशस्विनाम्।**
**काको बहूनामभवदुच्छिष्टकृतभोजनः ॥३३॥**

उसके जो बहुत-से अल्पवयस्क यशस्वी पुत्र थे, उन सबकी जूठन खानेवाला एक कौआ भी वहाँ रहा करता था।

**तस्मै सदा प्रयच्छन्ति वैश्यपुत्राः कुमारकाः।**
**माषौदनं दधि क्षीरं पायसं मधुसर्पिषी ॥३४॥**

वैश्य के बालक पुत्र उस कौए को सदा ही दाल-भात, दही, दूध, खीर, मधु और घी आदि दिया करते थे।

**स चोच्छिष्टभृतः काको वैश्यपुत्रैः कुमारकैः।**
**सदृशान् पक्षिणो दृप्तः श्रेयसश्चाधिचिक्षिपे ॥३५॥**

वैश्य बालकों की जूठन खा-खाकर पला हुआ वह कौआ बड़े घमण्ड में भरकर अपने समान तथा

अपने से श्रेष्ठ पक्षियों का भी अपमान करने लगा।

**अथ हंसाः समुद्रान्ते कदाचिदतिपातिनः ।**
**गरुडस्य गतौ तुल्याश्चक्राङ्गा हृष्टचेतसः ।।३६।।**

एक दिन की बात है, उस समुद्र-तट पर गरुड़ के समान लम्बी उड़ानें भरनेवाले मानसरोवरनिवासी राजहंस आये। उनके अङ्गों में चक्र के चिह्न थे और वे अति प्रसन्न थे।

**कुमारकास्तदा हंसान् दृष्ट्वा काकमथाब्रुवन् ।**
**एभिस्त्वमपि शक्तो हि कामान्नोत्पतितं त्वया ।।३७।।**

उस समय उन हंसों को देखकर कुमारों ने कौए से इस प्रकार कहा—"विहंगम ! तुम भी इन्हीं के समान दूर तक उड़ने में समर्थ हो। तुमने अपनी इच्छा से ही अबतक वैसी उड़ान नहीं भरी है।"

**प्रतार्यमाणस्तैः सर्वैरल्पबुद्धिभिरण्डजः ।**
**तद्वचः सत्यमित्येव मौर्ख्याद् दर्पाच्च मन्यते ।।३८।।**

उन सारे अल्पबुद्धि बालकों द्वारा ठगा गया वह पक्षी मूर्खता और अभिमान से उनकी बातों को सत्य मानने लगा।

**तान् सोऽभिपत्य जिज्ञासुः क एषां श्रेष्ठभागिति ।**
**उच्छिष्टदर्पितः काको बहूनां दूरपातिनाम् ।।३९**
**तेषां यं प्रवरं मेने हंसानां दूरपातिनाम् ।**
**तमाह्वयत दुर्बुद्धिः पताव इति पक्षिणम् ।।४०।।**

फिर वह जूठन पर घमण्ड करनेवाला कौआ "इन हंसों में सर्वश्रेष्ठ कौन है"—यह जानने की इच्छा से उड़कर उनके पास गया और दूर तक उड़ान भरनेवाले उन अनेक हंसों में से जिस पक्षी को उसने श्रेष्ठ समझा, उसी को उस मूर्ख ने ललकारते हुए कहा—"चलो, हम दोनों उड़ें।"

**भाषमाणस्य काकस्य बलिनः पततां वराः ।**
**तत् श्रुत्वा प्राहसन् हंसा इदमूचुर्विहंगमाः ।।४१।।**

बहुत काँव-काँव करनेवाले उस कौए की वह बात सुनकर पक्षियों में श्रेष्ठ आकाशचारी बलवान् हंस हँस पड़े और कौए से इस प्रकार बोले—

हंसा ऊचुः

**वयं हंसाश्चरामेमां पृथिवीं मानसौकसः ।**
**पक्षिणां च वयं नित्यं दूरपातेन पूजिताः ।।४२।।**

**हंसों ने कहा**—काक ! हम मानसरोवर निवासी हंस हैं। दूर तक उड़ने के कारण हम सदा सभी पक्षियों में सम्मानित होते आये हैं।

**कथं हंसं नु बलिनं चक्राङ्गं दूरपातिनम् ।**
**काको भूत्वा निपतने समाह्वयसि दुर्मते ।।४३।।**

अरे खोटी बुद्धिवाले काग ! तू कौआ होकर लम्बी उड़ान भरनेवाले और अपने अङ्गों में चक्र का चिह्न धारण करनेवाले एक बलवान् हंस को अपने साथ उड़ने के लिए कैसे ललकार रहा है ?

काक उवाच

**शतमेकं च पातानां पतितास्मि न संशयः ।**
**शतयोजनमेकैकं विचित्रं विविधं तथा ।।४४।।**

**कौआ बोला**—हंस ! मैं एक सौ एक प्रकार की उड़ानें उड़ सकता हूँ, इसमें संशय नहीं है। उनमें से प्रत्येक उड़ान सौ-सौ योजन की होती है और वे सभी विभिन्न प्रकार की और विचित्र हैं।

**उड्डीनमवडीनं च प्रडीनं डीनमेव च ।**
**निडीनमथ संडीनं तिर्यग्डीनगतानि च ।।४५।।**

उनमें से कुछ उड़ानों के नाम इस प्रकार हैं—उड्डीन [ऊँचा उड़ना], अवडीन [नीचा उड़ना], प्रडीन [चारों ओर उड़ना], डीन [साधारण उड़ना], निडीन [धीरे-धीरे उड़ना], संडीन [ललित गति से उड़ना], तिर्यग्डीन [तिरछा उड़ना] आदि।

हंस उवाच

**शतमेकं च पातानां त्वं काक पतिता ध्रुवम् ।**
**एकमेव तु यं पातं विदुः सर्वे विहंगमाः ।।४६।।**
**तमहं पतिता काक नान्यं जानामि कञ्चन ।**
**पत त्वमपि ताम्राक्ष येन पातेन मन्यसे ।।४७।।**

**हंस बोला**—काक ! तू अवश्य एक सौ एक उड़ानों द्वारा उड़ सकता है, परन्तु मैं तो जिस एक उड़ान को सारे पक्षी जानते हैं उसी से उड़ सकता हूँ, दूसरी किसी उड़ान का मुझे पता नहीं है। लालनेत्र काक ! तू भी जिस उड़ान को उचित समझे उसी से उड़।

शल्य उवाच

**अथ काकः प्रजहसुर्ये तत्रासन् समागताः ।**
**कथमेकेन पातेन हंसः पातशतं जयेत् ।।४८।।**

**शल्य ने कहा**—उस समय वहाँ आये हुए सारे कौए जोर-जोर से हँसने लगे और आपस में बोले—

"भला यह हंस एक ही उड़ान से सौ प्रकार की उड़ानों को कैसे जीत सकता है ?"

**प्रपेततुः स्पर्धया च ततस्तौ हंसवायसौ ।**
**एकपाती च चक्राङ्गः काकः पातशतेन च ॥४९॥**

उधर हंस और कौआ दोनों होड़ लगाकर उड़े। चक्राङ्ग हंस एक ही गति से उड़नेवाला था और कौआ सौ उड़ानों से।

**अथ काकस्य चित्राणि पतितानि मुहुर्मुहुः ।**
**दृष्ट्वा प्रमुदिताः काका विनेदुरधिकैः स्वरैः ॥५०॥**

उस समय कौए की विचित्र उड़ानों को बार-बार देखकर दूसरे कौए बड़े प्रसन्न हुए और जोर-जोर से काँव-काँव करने लगे।

**हंसांश्चावहसन्ति स्म प्रावदन्नप्रियाणि च ।**
**उत्पत्योत्पत्य च मुहुर्मुहूर्तमिति चेति च ॥५१॥**

वे दो-दो घड़ी पर बार-बार उड़-उड़कर कहते —"देखो, कौए की यह उड़ान, वह उड़ान।" ऐसा कहकर वे हंसों का उपहास करते और उन्हें कटुवचन सुनाते थे।

**हंसस्तु मृदुनैकेन विक्रान्तुमुपचक्रमे ।**
**प्रत्यहीयत काकाच्च मुहूर्तमिव मारिष ॥५२॥**

आर्य ! हंस ने एक ही मृदुल गति से उड़ना आरम्भ किया था, अतः दो घड़ी तक वह कौए से हारता-सा प्रतीत हुआ।

**अवमन्य च हंसाँस्तानिदं वचनमब्रुवन् ।**
**योऽसावुत्पतितो हंसः सोऽसावेवं प्रहीयते ॥५३॥**

तब कौओं ने हंसों का अपमान करते हुए इस प्रकार कहा—"वह जो हंस उड़ा था, वह तो इस प्रकार कौए से हारता जा रहा है।"

**अथ हंसः स तत् श्रुत्वा प्रापतत् पश्चिमां दिशम् ।**
**उपर्युपरि वेगेन सागरं मकरालयम् ॥५४॥**

उड़नेवाले हंस ने कौओं की यह बात सुनकर बड़े वेग से मकरालय समुद्र के ऊपर-ऊपर पश्चिम दिशा की ओर उड़ना आरम्भ किया।

**ततो भीः प्राविशत् काकं तदा तत्र विचेतसम् ।**
**द्वीपद्रुमानपश्यन्तं निपातार्थे श्रमान्वितम् ॥५५॥**

इधर कौआ थक गया था। उसे कहीं आश्रय लेने के लिए द्वीप या वृक्ष नहीं दिखाई दे रहे थे, अतः उसके मन में भय समा गया और वह घबराकर अचेत-सा हो उठा।

**अथ हंसोऽप्यतिक्रम्य काकं तं समुदैक्षत ।**
**यावद् गत्वा पतत्येष काको मामिति चिन्तयन् ॥५६**

उधर हंस कौए को लाँघकर आगे बढ़ चुका था तो भी यह सोचकर उसकी प्रतीक्षा करने लगा कि यह कौआ भी उड़कर मेरे समीप आ जाए।

**ततः काको भृशं श्रान्तो हंसमभ्यागमत्तदा ।**
**तं तथा हीयमानं तु हंसो दृष्ट्वाब्रवीदिदम् ॥५७॥**

तब कुछ देर में अत्यन्त थका-माँदा कौआ हंस के पास आया। कौए की शोचनीय दशा देखकर हंस ने उससे कहा—

हंस उवाच

**बहूनि पतितानि त्वमाचक्षाणो मुहुर्मुहुः ।**
**पातस्य व्याहरंश्चेदं न नो गुह्यं प्रभाषसे ॥५८॥**

**हंस बोला**—काक ! तू तो बारम्बार अपनी बहुत-सी उड़ानों का वर्णन कर रहा था, परन्तु उन उड़ानों का वर्णन करते समय उनमें से इस गोपनीय उड़ान की बात तो तूने बताई ही नहीं थी।

**किं नाम पतितं काक यत्त्वं पतसि साम्प्रतम् ।**
**जलं स्पृशसि पक्षाभ्यां तुण्डेन च पुनः पुनः ॥५९॥**

काग ! बता तो सही, तू इस समय जिस उड़ान से उड़ रहा है, उसका नाम क्या है ? इस उड़ान में तो तू अपने दोनों पंखों और चोंच के द्वारा बारम्बार जल का स्पर्श कर रहा है।

**प्रब्रूहि कतमे तत्र पाते वर्तसि वायस ।**
**एह्येहि काक शीघ्रं त्वमेष त्वां प्रतिपालये ॥६०॥**

कौए ! बता, बता ! इस समय तू कौन-सी उड़ान में स्थित है ? काक ! आ, शीघ्र आ। मैं अभी तेरी रक्षा करता हूँ।

शल्य उवाच

**अपश्यन्नम्भसः पारं निपतंश्च श्रमान्वितः ।**
**पातवेगप्रमथितो हंसं काकोऽब्रवीदिदम् ॥६१॥**

**शल्य कहते हैं**—अरे दुष्टात्मा कर्ण ! वह कौआ उड़ान के वेग से थककर शिथिलांग हो गया था और जल का कहीं आर-पार न देखकर नीचे गिरता जा रहा था। उस समय उसने हंस से कहा—

**वयं काकाः कुतो नाम चरामः काकवाशिकाः ।**
**उच्छिष्टदर्पितो हंस मन्येऽऽत्मानं सुपर्णवत् ।।६२।।**

"भाई हंस ! हम तो कौए हैं । व्यर्थ काँव-काँव किया करते हैं । हम उड़ना क्या जानें ? मैं जूठन खा-खाकर घमण्ड में भर गया था और अपने-आपको गरुड़ के समान शक्तिशाली समझने लगा था ।

**प्राणैर्हंस प्रपद्ये त्वां द्वीपान्तं प्रापयस्व माम् ।**
**यद्यहं स्वस्तिमान् हंस स्वं देशं प्राप्नुयां प्रभो ।**
**न कञ्चिदवमन्येऽहमापदो मां समुद्धर ।।६३।।**

"हंस ! अब मैं अपने प्राणों के साथ आपकी शरण में आया हूँ । तुम मुझे द्वीप के पास पहुँचा दो । शक्तिशाली हंस ! यदि मैं कुशलतापूर्वक अपने देश में पहुँच जाऊँ तो अब कभी किसी का अपमान नहीं करूँगा । तुम इस विपत्ति से मेरा उद्धार करो ।"

**तमेवंवादिनं दीनं विलपन्तमचेतनम् ।**
**काक काकेति वाशन्तं निमज्जन्तं महार्णवे ।।६४।।**
**कृपयाऽऽदाय हंसस्तं जलक्लिन्नं सुदुर्दृशम् ।**
**पद्भ्यामुत्क्षिप्य वेगेन पृष्ठमारोपयच्छनैः ।।६५।।**

हे कर्ण ! इस प्रकार कहकर कौआ अचेत-सा होकर दीनभाव से विलाप करने और काँव-काँव करते हुए महासागर के जल में डूबने लगा । उस समय उसकी ओर देखना कठिन हो रहा था । वह पानी से भीग गया था । हंस ने कृपापूर्वक उसे पंजों से उठाकर बड़े वेग से ऊपर को उछाला और धीरे से अपनी पीठ पर बिठा लिया ।

**आरोप्य पृष्ठं हंसस्तं काकं तूर्णं विचेतनम् ।**
**आजगाम पुनर्द्वीपं स्पर्धया पेततुर्यतः ।।६६।।**

अचेत हुए कौए को अपनी पीठ पर बिठाकर हंस तुरन्त ही फिर उसी द्वीप में आ पहुँचा, जहाँ से होड़ लगाकर वे दोनों उड़े थे ।

**संस्थाप्य तं पुनश्चापि समाश्वास्य च खेचरम् ।**
**गतो यथेप्सितं देशं हंसो मन इवाशुगः ।।६७।।**

उस कौए को उसके स्थान पर छोड़ और उसे आश्वासन दे मन के समान शीघ्रगामी हंस पुनः अपने अभीष्ट देश को चला गया ।

**एवमुच्छिष्टपुष्टः स काको हंसपराजितः ।**
**बलवीर्यमदं कर्ण त्यक्त्वा क्षान्तिमुपागतः ।।६८।।**

कर्ण ! इस प्रकार जूठन खाकर पुष्ट हुआ वह कौआ उस हंस से परास्त हो अपने महान् बल-पराक्रम का घमण्ड छोड़कर शान्त हो गया ।

**उच्छिष्टभोजनः काको यथा वैश्यकुले पुरा ।**
**त्वमुच्छिष्टभृतो ह्येवं धार्तराष्ट्रैर्न संशयः ।।६९।।**

पूर्वकाल में वह कौवा जैसे वैश्यकुल में सबकी जूठन खाकर पला था, उसी प्रकार धृतराष्ट्र के पुत्रों ने तुम्हें जूठन खिला-खिलाकर पाला है, इसमें संशय नहीं है ।

**द्रोणद्रौणिकृपैर्गुप्तो भीष्मेणान्यैश्च कौरवैः ।**
**विराटनगरे पार्थमेकं किं नावधीस्तदा ।।७०।।**

विराटनगर में तो द्रोणाचार्य, अश्वत्थामा, कृपाचार्य, भीष्म तथा अन्य कौरव वीर भी तुम्हारी रक्षा कर रहे थे, फिर उस समय तुमने अकेले सामने आये हुए अर्जुन का वध क्यों नहीं कर डाला ।

**यत्र व्यस्ताः समस्ताश्च निर्जिताः स्थ किरीटिना ।**
**शृगाला इव सिंहेन क्व ते वीर्यमभूत् तदा ।।७१**

वहाँ तो किरीटधारी अर्जुन ने अलग-अलग और सब लोगों से एक-साथ लड़कर भी तुम लोगों को उसी प्रकार परास्त कर दिया था, जैसे एक ही सिंह ने बहुत-से गीदड़ों को मार भगाया हो । कर्ण ! उस समय तुम्हारा पराक्रम कहाँ था ?

**भ्रातरं निहतं दृष्ट्वा समरे सव्यसाचिना ।**
**पश्यतां कुरुवीराणां प्रथमं त्वं पलायितः ।।७२।।**

सव्यसाची अर्जुन के द्वारा रणभूमि में अपने भाई को मारा गया देखकर कौरव वीरों के समक्ष सबसे पूर्व तुम्हीं भागे थे ।

**तथा द्वैतवने कर्ण गन्धर्वैः समभिद्रुतः ।**
**कुरून् समग्रानुत्सृज्य प्रथमं त्वं पलायितः ।।७३।।**

कर्ण ! इसी प्रकार जब द्वैतवन में गन्धर्वों ने चढ़ाई की थी, उस समय समस्त कौरवों को छोड़कर पहले तुमने ही पीठ दिखाई थी ।

**कियत् तत्तत् प्रवक्ष्यामि येन येन धनञ्जयः ।**
**त्वत्तोऽतिरिक्तः सर्वेभ्यो भूतेभ्यो ब्राह्मणो यथा ।।७४।।**

मैं कहाँ तक गिन-गिनकर बताऊँ कि किन-किन गुणों के कारण अर्जुन तुमसे श्रेष्ठ हैं ! जैसे ब्राह्मण

समस्त प्राणियों से श्रेष्ठ है, उसी प्रकार अर्जुन तुमसे श्रेष्ठ है।

**यथाश्रयत चक्राङ्गं वायसो बुद्धिमास्थितः।**
**तथाश्रयस्व वार्ष्णेयं पाण्डवं च धनञ्जयम् ॥७५॥**

जैसे कौआ उत्तम बुद्धि का आश्रय लेकर चक्राङ्ग की शरण में गया था, उसी प्रकार तुम भी वृष्णि-नन्दन श्रीकृष्ण और पाण्डुपुत्र अर्जुन की शरण लो।

**यदा शरशतैः पार्थो दर्पं तव वधिष्यति।**
**तदा त्वमन्तरं द्रष्टा आत्मनश्चार्जुनस्य च ॥७६॥**

जब अर्जुन अपने सैकड़ों बाणों द्वारा तुम्हारा अभिमान चूर-चूर कर देंगे, तब तुम स्वयं ही देख लोगे कि तुममें और अर्जुन में कितना अन्तर है।

**देवासुरमनुष्येषु प्रख्यातौ यौ नरोत्तमौ।**
**तौ मावमंस्था मौर्ख्यात् त्वं खद्योत इव रोचनौ ॥७७**

जैसे जुगनू प्रकाशमान सूर्य और चन्द्रमा का तिरस्कार करे, उसी प्रकार तुम देवों, असुरों और मनुष्यों में विख्यात उन दोनों नरश्रेष्ठ वीर श्रीकृष्ण और अर्जुन का मूर्खतावश अपमान मत करो।

**सूर्याचन्द्रमसौ यद्वत् तद्वदर्जुनकेशवौ।**
**प्राकाश्येनाभिविख्यातौ त्वं तु खद्योतवन्नृषु ॥७८॥**

जैसे सूर्य और चन्द्रमा हैं, वैसे ही श्रीकृष्ण और अर्जुन हैं। वे दोनों अपने तेज से सर्वत्र विख्यात हैं, परन्तु तुम तो मनुष्यों में जुगनू के ही समान हो।

**एवं विद्वान् मावमंस्थाः सूतपुत्राच्युतार्जुनौ।**
**नृसिंहौ तौ महात्मानौ जोषमास्स्व विकत्थने ॥७९॥**

सूतपुत्र! तुम महात्मा पुरुषसिंह श्रीकृष्ण और अर्जुन को ऐसा जानकर उनका अपमान न करो। बढ़-चढ़कर बातें बनाना बन्द करके चुपचाप बैठे रहो।

कर्ण उवाच

**यत् त्वं निदर्शनार्थं मां शल्य जल्पितवानसि।**
**नाहं शक्यस्त्वया वाचा विभीषयितुमाहवे ॥८०॥**

**कर्ण बोला**—शल्य! तुमने दृष्टान्त के लिए मेरे प्रति जो वाग्जाल फैलाया है, उसके उत्तर में निवेदन है कि तुम इस रणभूमि में मुझे अपनी बातों से नहीं डरा सकते।

**यदि मां देवताः सर्वा योधयेयुः सवासवाः।**
**तथापि मे भयं न स्यात् किमु पार्थात् सकेशवात् ॥८१**

यदि इन्द्रसहित सम्पूर्ण देवता मुझसे युद्ध करने लगें तो भी मुझे उनसे कोई भय नहीं होगा, फिर श्रीकृष्णसहित अर्जुन से तो क्या भय हो सकता है?

**नाहं भीषयितुं शक्यो वाङ्मात्रेण कथञ्चन।**
**अन्यं जानीहि यः शक्यस्त्वया भीषयितुं रणे ॥८२॥**

मुझे केवल बातों से किसी प्रकार भी नहीं डराया जा सकता। जिसे तुम युद्धभूमि में डरा सको, ऐसे किसी दूसरे ही मनुष्य को ढूंढो।

**नीचस्य बलमेतावत् पारुष्यं यत्त्वमात्थ माम्।**
**अशक्तो मद्गुणान् वक्तुं वल्गसे बहु दुर्मते ॥८३॥**

तुमने मेरे प्रति जो कटुवचन कहे हैं, इतना ही नीच पुरुष का बल है। दुर्बुद्धे! तुम मेरे गुणों का वर्णन करने में असमर्थ होकर बहुत-सी ऊटपटाँग बातें बकते जा रहे हो।

**न हि कर्णः समुद्भूतो भयार्थमिह मद्रक।**
**विक्रमार्थमहं जातो यशोऽर्थं च तथाऽऽत्मनः ॥८४॥**

मद्रनिवासी शल्य! कर्ण इस संसार में भयभीत होने के लिए पैदा नहीं हुआ है। मैं तो पराक्रम प्रकट करने और अपने यश को फैलाने के लिए ही उत्पन्न हुआ हूँ।

**सखिभावेन सौहार्दान्मित्रभावेन चैव हि।**
**कारणैस्त्रिभिरेतैस्त्वं शल्य जीवसि साम्प्रतम् ॥८५॥**

शल्य! एक तो तुम सारथि बनकर मेरे मित्र हो गये हो, दूसरे सौहार्दवश मैंने तुम्हें क्षमा कर दिया है और तीसरे मित्र दुर्योधन की अभीष्टसिद्धि का मुझे विचार है—इन्हीं तीन कारणों से तुम अब तक जीवित हो।

**कृतश्च समयः पूर्वं क्षन्तव्यं विप्रियं तव।**
**ऋते शल्यसहस्रेण विजयेयमहं परान्।**
**मित्रद्रोहस्तु पापीयानिति जीवसि साम्प्रतम् ॥८६॥**

इसके अतिरिक्त मैंने पहले ही वचन दे दिया था कि तुम्हारे अप्रिय वचनों को क्षमा करूँगा। वैसे तो हजारों शल्य न रहें तो भी मैं शत्रुओं पर विजय पा सकता हूँ, परन्तु मित्रद्रोह महापाप है, इसीलिए तुम अबतक जीवित हो।

सञ्जय उवाच

**ततो दुर्योधनो राजा कर्णशल्याववारयत् ।**
**सखिभावेन राधेयं शल्यं स्वाञ्जलिकेन च ॥८७॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! जब वे दोनों एक-दूसरे पर आक्षेप-प्रत्याक्षेप कर रहे थे तब राजा दुर्योधन ने कर्ण तथा शल्य दोनों को रोका। उसने कर्ण को तो मित्रभाव से समझाकर मना किया और शल्य को हाथ जोड़कर रोका।

**कर्णोऽपि नोत्तरं प्राह शल्योऽप्यभिमुखः परान् ।**
**ततः प्रहस्य राधेयः पुनर्याहीत्यनोदयत् ॥८८॥**

दुर्योधन के रोकने पर कर्ण ने कोई उत्तर नहीं दिया और शल्य ने भी शत्रुओं की ओर मुँह फेर लिया। तब राधापुत्र कर्ण ने हँसकर शल्य को रथ बढ़ाने का आदेश देते हुए कहा—"चलो, चलो।"

**इति महाभारते कर्णपर्वणि अष्टमोऽध्यायः ॥८॥**

# नवमोऽध्यायः

## अर्जुन का पराक्रम

सञ्जय उवाच

**ततः परानीकसहं व्यूहमप्रतिमं कृतम् ।**
**समीक्ष्य कर्णः पार्थानां धृष्टद्युम्नाभिरक्षितम् ॥१॥**
**प्रययौ रथघोषेण सिंहनादरवेण च ।**
**वादित्राणां च निनदैः कम्पयन्निव मेदिनीम् ॥२॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! उस समय यह देखकर कि कुन्तीपुत्रों की सेना का अनुपम व्यूह बनाया गया है, जो शत्रुपक्ष के आक्रमण को सह सकने में समर्थ और धृष्टद्युम्न द्वारा सुरक्षित है, कर्ण रथ की घर्घराहट, सिंह की-सी गर्जना और वाद्यों की गम्भीर ध्वनि से पृथिवी को कँपाता हुआ आगे बढ़ा।

**ततः सेनामुखे कर्णं दृष्ट्वा राजा युधिष्ठिरः ।**
**धनञ्जयममित्रघ्नमेकवीरमुवाच ह ॥३॥**

उधर सेना के मुहाने पर कर्ण को खड़ा देख राजा युधिष्ठिर ने शत्रुसंहारक, अद्वितीय वीर धनञ्जय से इस प्रकार कहा—

**पश्यार्जुन महाव्यूहं कर्णेन विहितं रणे ।**
**युक्तं पक्षैः प्रपक्षैश्च परानीकं प्रकाशते ॥४॥**

"अर्जुन ! रणभूमि में कर्ण द्वारा रचित उस महाव्यूह को देखो। पक्षों और प्रपक्षों से युक्त शत्रु की वह व्यूहाकार सेना कैसी सुशोभित हो रही है ?

**तदेतद् वै समालोक्य प्रत्यमित्रं महद् बलम् ।**
**यथा नाभिभवत्यस्मांस्तथा नीतिर्विधीयताम् ॥५॥**

"अतः इस विशाल शत्रुसेना की ओर देखकर तुम ऐसी नीति का निर्माण करो, जिससे वह हमें पराजित न कर सके।"

**इत्युक्तो धर्मराजेन तथेत्युक्त्वा धनञ्जयः ।**
**व्यादिदेश स्वसैन्यानि स्वयं चागाच्चमूमुखम् ॥६॥**

धर्मराज के ऐसा कहने पर अर्जुन ने 'तथास्तु' कहकर अपनी सेनाओं को युद्ध के लिए आदेश दिया और स्वयं वे सेना के मुहाने पर जा पहुँचे।

**ब्रह्मेशानेन्द्रवरुणान् क्रमशो योऽवहत् पुरा ।**
**तमाद्यं रथमास्थाय प्रयातौ केशवार्जुनौ ॥७॥**

जो प्राचीनकाल में क्रमशः ब्रह्मा, रुद्र, इन्द्र और वरुण की सवारी में आ चुका था, उसी आदिरथ पर बैठकर श्रीकृष्ण और अर्जुन शत्रुओं की ओर बढ़े चले जा रहे थे।

**अथ तं रथमायान्तं दृष्ट्वात्यद्भुतदर्शनम् ।**
**उवाचाधिरथिं शल्यः पुनस्तं युद्धदुर्मदम् ॥८॥**

अत्यन्त अद्भुत दिखाई देनेवाले उस रथ को आते देख शल्य ने रणदुर्मद सूतपुत्र कर्ण से पुनः इस प्रकार कहा—

**अयं स रथ आयातः श्वेताश्वः कृष्णसारथिः ।**
**निघ्नन्नमित्रान् कौन्तेयो यं कर्ण परिपृच्छसि ॥९॥**

"कर्ण ! तुम जिन्हें बार-बार पूछ रहे थे, वे ही ये कुन्तीकुमार अर्जुन शत्रुओं का संहार करते हुए रथ के साथ आ पहुँचे। उनके घोड़े श्वेत रंग के हैं और श्रीकृष्ण उनके सारथि हैं।"

**इति ब्रुवाणं मद्रेशं कर्णः प्राहातिमन्युना ।**
**पश्य संशप्तकैः क्रुद्धैः सर्वतः समभिद्रुतः ॥१०॥**

ऐसा कहनेवाले मद्रराज शल्य से कर्ण ने अत्यन्त क्रुद्ध होकर कहा—"तुम्हीं देखो न, रोष में भरे हुए संशप्तकों ने उनपर चारों ओर से आक्रमण कर दिया है।

**एष सूर्य इवाम्भोदैश्छन्नः पार्थो न दृश्यते।**
**एतदन्तोऽर्जुनः शल्य निमग्नो योधसागरे ॥११॥**

"यह लो, मेघों से ढके हुए सूर्य के समान अर्जुन अब दिखाई नहीं दे रहे हैं। शल्य ! अब अर्जुन का यहीं अन्त हुआ समझो। वे योद्धाओं के समुद्र में डूब गये हैं।"

शल्य उवाच

**वरुणं कोऽम्भसा हन्यादिन्धनेन च पावकम्।**
**को वानिलं निगृह्णीयात् पिबेद् वा को महार्णवम् ॥१२॥**

**शल्य बोले**—कर्ण ! कौन ऐसा वीर है, जो जल से वरुण को और ईंधन से अग्नि को मार सके ? वायु को कौन कैद कर सकता है अथवा समुद्र को कौन पी सकता है ?

**ईदृग्रूपमहं मन्ये पार्थस्य युधि विग्रहम्।**
**न हि शक्योऽर्जुनो जेतुं युधि सेन्द्रैः सुरासुरैः ॥१३॥**

'युद्धक्षेत्र में इन्द्रसहित सम्पूर्ण देवताओं और असुरों द्वारा भी अर्जुन नहीं जीते जा सकते'—मैं युद्ध में अर्जुन के स्वरूप को ऐसा ही समझता हूँ।

**अथवा परितोषस्ते वाचोक्त्वा सुमना भव।**
**न स शक्यो युधा जेतुमन्यं कुरु मनोरथम् ॥१४॥**

अथवा यदि तुम्हें इसी से सन्तोष होता है तो वाणी मात्र से अर्जुन के वध की चर्चा करके मन-ही-मन प्रसन्न हो लो, परन्तु वास्तव में युद्ध के द्वारा कोई भी अर्जुन को जीत नहीं सकता, अतः अब तुम कोई और ही मनोरथ करो।

**बाहुभ्यामुद्धरेद्भूमिं दहेत् क्रुद्ध इमाः प्रजाः।**
**पातयेत् त्रिदिवाद् देवान् योऽर्जनं समरे जयेत् ॥१५॥**

जो रणभूमि में अर्जुन को जीत ले, वह मानो अपनी दोनों भुजाओं से पृथिवी को उठा सकता है, क्रुद्ध होने पर इस सारी प्रजा को दग्ध कर सकता है और देवताओं को भी स्वर्ग से नीचे गिरा सकता है।

**पश्य कुन्तीसुतं वीरं भीममक्लिष्टकारिणम्।**
**प्रभासन्तं महाबाहुं स्थितं मेरुमिवापरम् ॥१६॥**

देखो, अनायास ही महान् कर्म करनेवाले, भयंकर वीर, महाबाहु कुन्तीकुमार अर्जुन दूसरे मेरुपर्वत के समान अविचल भाव से खड़े हुए सुशोभित हो रहे हैं।

सञ्जय उवाच

**इति संवदतोरेव तयोः पुरुषसिंहयोः।**
**ते सेने समसज्जेतां गङ्गायमुनवद् भृशम् ॥१७॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! वे दोनों पुरुषसिंह शल्य और कर्ण इस प्रकार बातें कर ही रहे थे कि कौरव और पाण्डव की दोनों सेनाएँ गङ्गा और यमुना के समान एक-दूसरे से वेगपूर्वक जा मिलीं।

धृतराष्ट्र उवाच

**तथा व्यूढेष्वनीकेषु संसक्तेषु च सञ्जय।**
**संशप्तकान् कथं पार्थो गतः कर्णश्च पाण्डवान् ॥१८॥**

**धृतराष्ट्र ने पूछा**—सञ्जय ! इस प्रकार जब सारी सेनाओं की व्यूहरचना हो गई और दोनों दलों के योद्धा परस्पर युद्ध करने लगे, तब कुन्तीकुमार अर्जुन ने संशप्तकों पर और कर्ण ने पाण्डव योद्धाओं पर कैसे धावा किया ?

सञ्जय उवाच

**अथ व्यूढेष्वनीकेषु प्रेक्ष्य संशप्तकान् रणे।**
**क्रुद्धोऽर्जुनोऽभिदुद्राव व्याक्षिपन् गाण्डिवं धनुः ॥१९॥**

**सञ्जय कहते हैं**—सेनाओं की व्यूहरचना हो जाने पर रणभूमि में संशप्तकों की ओर देखकर क्रोध में भरे हुए अर्जुन ने गाण्डीव धनुष की टंकार करते हुए उनपर धावा बोला।

**अथ संशप्तकाः पार्थमभ्यधावन् वधैषिणः।**
**विजये धृतसंकल्पा मृत्युं कृत्वा निवर्तनम् ॥२०॥**

उधर विजय का दृढ़संकल्प लेकर मृत्यु को ही युद्ध से निवृत्त होने का निमित्त बनाकर अर्जुन के वध की इच्छावाले संशप्तकों ने भी उनपर आक्रमण किया।

**तन्नराश्वौघबहूलं मत्तनागरथाकुलम्।**
**पत्तिमच्छूरवीरौघं द्रुतमर्जुनमार्दयत् ॥२१॥**

संशप्तकों की सेना में पैदल मनुष्यों और घुड़सवारों की संख्या बहुत थी। मदमस्त गजराज और रथ भी उसमें भरे हुए थे। पैदलोंसहित शूरवीरों के

समुदाय ने तुरन्त ही अर्जुन को पीड़ित करना आरम्भ किया।

**रथानश्वान् ध्वजान् नागान् पत्तीन् रणगतानपि।**
**इषून् धनूँषि खड्गाँश्च चक्राणि च परश्वधान् ॥२२**
**सायुधानुद्यतान् बाहून् विविधान्यायुधानि च।**
**चिच्छेद द्विषतां पार्थः शिराँसि च सहस्रशः ॥२३**

तब तो कुन्तीकुमार अर्जुन ने युद्धभूमि में आये हुए शत्रुदल के रथों, घोड़ों, ध्वजों, हाथियों और पैदलों को काट डाला। उन्होंने शत्रुओं के धनुष, बाण, खड्ग, चक्र, फरसे, हथियारोंसहित उठी हुई भुजा, नाना-प्रकार के अस्त्र-शस्त्र और सहस्रों मस्तक काट गिराये।

**कर्णोऽपि निशितैर्बाणैर्विनिहत्य महाचमूम्।**
**प्रमृद्य च रथश्रेष्ठान् युधिष्ठिरमपीडयत् ॥२४॥**

उधर कर्ण ने भी अपने पैने बाणों से पाण्डवों की विशाल वाहिनी को हताहत करके और बड़े-बड़े रथियों को धूल में मिलाकर युधिष्ठिर को पीड़ित करना आरम्भ किया।

**विवस्त्रायुधदेहासून् कृत्वा शत्रून् सहस्रशः।**
**युक्त्वा स्वर्गयशोभ्यां च स्वेभ्यो मुदमुदावहत् ॥२५॥**

वह सहस्रों शत्रुओं को वस्त्र, आयुध, शरीर और प्राणों से शून्य करके उन्हें स्वर्ग और सुयश से संयुक्त करता हुआ अपने आत्मीयजनों को आनन्द प्रदान करने लगा।

**एवं मारिष संग्रामो नरवाजिगजक्षयः।**
**कुरूणां सृञ्जयानां च देवासुरसमोऽभवत् ॥२६॥**

आर्य नरेश ! इस प्रकार मनुष्यों, घोड़ों और हाथियों का विनाश करनेवाला वह कौरवों और सृञ्जयों का युद्ध देवासुर-संग्राम के समान भयंकर था।

**इति महाभारते कर्णपर्वणि नवमोऽध्यायः ॥९॥**

# दशमोऽध्यायः

## कर्ण और युधिष्ठिर का युद्ध, कर्ण द्वारा युधिष्ठिर की पराजय और तिरस्कार

धृतराष्ट्र उवाच

**यत्तत् प्रविश्य पार्थानां सैन्यं कुर्वञ्जनक्षयम्।**
**कर्णो राजानमभ्येत्य तन्ममाचक्ष्व सञ्जय ॥१॥**

**धृतराष्ट्र ने पूछा**—सञ्जय ! कर्ण कुन्तीकुमारों की सेना में प्रवेश करके और राजा युधिष्ठिर के पास पहुँचकर जो जनसंहार कर रहा था, उसका समाचार मुझे सुनाओ।

सञ्जय उवाच

**धृष्टद्युम्नमुखान् पार्थान् दृष्ट्वा कर्णो व्यवस्थितान्।**
**समभ्यधावत्त्वरितः पाञ्चालाञ्शत्रुकर्षिणः ॥२॥**

**सञ्जय बोला**—राजन् ! कर्ण ने धृष्टद्युम्न आदि पाण्डव-वीरों को खड़ा देख अत्यन्त उतावली के साथ शत्रुसंहारक पाञ्चालों पर आक्रमण किया।

**तं तूर्णमभिधावन्तं पाञ्चाला जितकाशिनः।**
**प्रत्युद्ययुर्महात्मानं हंसा इव महार्णवम् ॥३॥**

विजय से उल्लसित होनेवाले पाञ्चाल वीर शीघ्रतापूर्वक धावा करते हुए महात्मा कर्ण की अगवानी के लिए उसी प्रकार आगे बढ़े, जैसे हंस महासागर की ओर बढ़ते हैं।

**ततः सुपुंखैर्निशितै रथश्रेष्ठो रथेषुभिः।**
**पाञ्चालानवधीद् वीरः शतशोऽथ सहस्रशः ॥४॥**

तब रथियों में श्रेष्ठ वीर कर्ण ने सुन्दर पंखवाले पैने बाणों द्वारा सैकड़ों और सहस्रों पाञ्चालों का वध कर डाला।

**पाञ्चालेषु च शूरेषु वध्यमानेषु सायकैः।**
**हाहाकारो महानासीत् पाञ्चालानां महाहवे ॥५॥**

उस महासागर में बाणों द्वारा उन शूरवीर पाञ्चालों के मारे जाने पर पाञ्चालों की सेना में महान् हाहाकार मच गया।

**विदीर्य कर्णस्तां सेनां युधिष्ठिरमथाद्रवत्।**
**रथहस्त्यश्वपत्तीनां सहस्रैः परिवारितः ॥६॥**

राजन् ! फिर सहस्रों रथ, हाथी, घोड़े और पैदलों से घिरे हुए कर्ण ने उस सेना को विदीर्ण करके युधिष्ठिर पर धावा किया।

**स राजगृद्धिभी रुद्धः पाण्डुपाञ्चालकेकयैः ।**
**नाशकत् तानतिक्रान्तुं मृत्युर्ब्रह्मविदो यथा ॥७॥**

राजा की रक्षा चाहनेवाले पाण्डवों, पाञ्चालों और केकयों ने कर्ण को रोक दिया। जैसे मृत्यु ब्रह्मवेत्ताओं को नहीं लाँघ सकती, उसी प्रकार कर्ण उन सबको लाँघकर आगे नहीं बढ़ सका।

**ततो युधिष्ठिरः कर्णमदूरस्थं निवारितम् ।**
**अब्रवीत् परवीरघ्नं क्रोधसंरक्तलोचनः ॥८॥**

उस समय युधिष्ठिर ने क्रोध से लाल आँखें करके शत्रुवीरों का संहार करनेवाले कर्ण से, जो पास ही रोक दिया गया था, इस प्रकार कहा—

**कर्ण कर्ण वृथादृष्टे सूतपुत्र वचः शृणु ।**
**सदा स्पर्धसि संग्रामे फाल्गुनेन तरस्विना ।**
**तथास्मान् बाधसे नित्यं धार्तराष्ट्रमते स्थितः ॥९॥**

"कर्ण ! कर्ण ! मिथ्यादर्शी सूतपुत्र ! मेरी बात सुनो। तुम संग्राम में वेगशाली वीर अर्जुन के साथ सदा डाह रखते हो तथा दुर्योधन के मत में रहकर सदा हमें बाधा पहुँचाते हो।

**यद् बलं यच्च ते वीर्यं दर्शयाद्यसुनिर्भयम् ।**
**युद्धश्रद्धां च तेऽद्याहं विनेष्यामि महाहवे ॥१०॥**

"आज तुम्हारे पास जितना बल हो, जो पराक्रम हो वह सब निर्भय होकर प्रकट कर लो। आज महायुद्ध में मैं तुम्हारा युद्ध का उत्साह मिटा दूँगा।"

**एवमुक्त्वा महाराज कर्णं पाण्डुसुतस्तदा ।**
**सुवर्णपुंखैर्दशभिर्विव्याधायस्मयैः शरैः ॥११॥**

महाराज ! ऐसा कहकर पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर ने लोहे के बने हुए सुवर्ण पंखयुक्त दस बाणों द्वारा कर्ण को बींध डाला।

**तं सूतपुत्रो दशभिः प्रत्यविध्यदरिन्दमः ।**
**वत्सदन्तैर्महेष्वासः प्रहसन्निव भारत ॥१२॥**

हे भारत ! तब शत्रुओं का दमन करनेवाले महाधनुर्धर सूतपुत्र ने हँसते-हुए से वत्सदन्त नामक दस बाणों द्वारा युधिष्ठिर को घायल कर दिया।

**सोऽवज्ञाय तु निर्विद्धः सूतपुत्रेण मारिष ।**
**प्रजज्वाल ततः क्रोधाद्धविषेव हुताशनः ॥१३॥**

मान्यवर ! सूतपुत्र के द्वारा अवज्ञापूर्वक घायल किये जाने पर राजा युधिष्ठिर घी की आहुति से प्रज्वलित हुई अग्नि के समान क्रोध से जल उठे।

**ततो विस्फार्य सुमहच्चापं हेमपरिष्कृतम् ।**
**समाधत्त शितं बाणं गिरीणामपि दारणम् ॥१४॥**

तत्पश्चात् उन्होंने अपने सुवर्णमण्डित विशाल धनुष को फैलाकर उसपर पर्वतों को भी विदीर्ण कर देनेवाले एक तीखे बाण का संधान किया।

**स तु वेगवता मुक्तो बाणो वज्राशनिस्वनः ।**
**विवेश सहसा कर्णं सव्ये पार्श्वे महारथम् ॥१५॥**

वेगवान् युधिष्ठिर का छोड़ा हुआ वज्र और विद्युत् के समान शब्द करनेवाला वह बाण सहसा महारथी कर्ण की बायीं पसली में घुस गया।

**स तु तेन प्रहारेण पीडितः प्रमुमोह वै ।**
**स्रस्तगात्रो महाबाहुर्धनुरुत्सृज्य स्यन्दने ॥१६॥**

उस प्रहार से पीड़ित हो महाबाहु कर्ण धनुष छोड़कर रथ पर ही मूर्च्छित हो गया। उसका सारा शरीर शिथिल हो गया था।

**ततो हाहाकृतं सर्वं धार्तराष्ट्रबलं महत् ।**
**विवर्णमुखभूयिष्ठं कर्णं दृष्ट्वा तथागतम् ॥१७॥**

उस समय कर्ण को उस अवस्था में देखकर दुर्योधन की सम्पूर्ण विशाल वाहिनी में हाहाकार मच गया और अधिकांश सैनिकों के मुख का रंग विषाद से फीका पड़ गया।

**प्रतिलभ्य तु राधेयः संज्ञां नातिचिरादिव ।**
**दध्रे राजविनाशाय मनः क्रूरपराक्रमः ॥१८॥**

उधर क्रूर पराक्रमी राधापुत्र कर्ण ने थोड़ी ही देर में होश में आकर राजा युधिष्ठिर को मार डालने का विचार किया।

**स हेमविकृतं चापं विस्फार्य विजयं महत् ।**
**अवाकिरदमेयात्मा पाण्डवं निशितैः शरैः ॥१९॥**

उस अमेय आत्मबल से सम्पन्न वीर कर्ण ने विजय नामक अपने विशाल सुवर्णमण्डित धनुष को खींचकर पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर को पैने बाणों से आच्छादित कर दिया।

**ततो बाह्वोर्ललाटे च हृदि चैव युधिष्ठिरः ।**
**चतुर्भिस्तोमरैः कर्णं ताडयित्वानदन्मुदा ॥२०॥**

तब तो युधिष्ठिर ने भी कर्ण की दोनों भुजाओं, ललाट और छाती में चार तोमरों का प्रहार करके आनन्दपूर्वक सिंहनाद किया।

**ध्वजं चिच्छेद भल्लेन त्रिभिर्विव्याध पाण्डवम् ।**
**इषुधी चास्य चिच्छेद रथं च तिलशोऽच्छिनत् ॥२१॥**

फिर तो कर्ण ने भी एक भल्ल से युधिष्ठिर की ध्वजा काट डाली और तीन बाणों से उस पाण्डुपुत्र को भी घायल कर दिया। उनके दोनों तरकस काट दिये और रथ के भी तिल-तिल करके टुकड़े कर डाले।

**कालवालास्तु ये पार्थं दन्तवर्णावहन् हयाः ।**
**तैर्युक्तं रथमास्थाय प्रायाद् राजा पराङ्मुखः ॥२२॥**

उस समय दाँतों के समान श्वेत रंग और काली पूँछवाले जो घोड़े युधिष्ठिर की सवारी में थे, उन्हीं से जुते हुए दूसरे रथ पर बैठकर राजा युधिष्ठिर युद्धभूमि से विमुख हो अपने शिबिर की ओर चल दिये।

**अभिद्रुत्य तु राधेयः पाण्डुपुत्रं युधिष्ठिरम् ।**
**ग्रहीतुमिच्छन् स बलात् कुन्तीवाक्यं च सोऽस्मरत् ॥२३**

उस समय राधापुत्र कर्ण पाण्डुनन्दन युधिष्ठिर का पीछा करके उन्हें बलपूर्वक पकड़ने की इच्छा करने लगा। उसी समय उसे कुन्तीदेवी को दिये हुए अपने वचन की स्मृति आ गई।

**शल्यस्तं प्राह मा कर्ण गृह्णीथाः पार्थिवोत्तमम् ।**
**गृहीतमात्रो हत्वा त्वां मा करिष्यति भस्मसात् ॥२४॥**

उधर राजा शल्य ने कहा—"कर्ण! इन नृपश्रेष्ठ युधिष्ठिर को हाथ न लगाना, अन्यथा वे पकड़ते ही तुम्हारा वध करके अपनी क्रोधाग्नि से तुम्हें भस्म कर डालेंगे।"

**अब्रवीत् प्रहसन् राजन् कुत्सयन्निव पाण्डवम् ।**
**कथं नाम कुले जातः क्षत्रधर्मे व्यवस्थितः ॥२५॥**
**प्रजह्यात् समरं भीतः प्राणान् रक्षन् महाहवे ।**
**न भवान् क्षत्रधर्मेषु कुशलो हीति मे मतिः ॥२६॥**

राजन्! तब कर्ण जोर-जोर से हँस पड़ा और पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर की निन्दा-सी करते हुए बोला—"युधिष्ठिर! जो क्षत्रिय-कुल में उत्पन्न हो, क्षत्रिय-धर्म में तत्पर रहता हो, वह महायुद्ध में प्राणों की रक्षा के लिए भयभीत हो युद्ध छोड़कर भाग कैसे सकता है? मेरा तो ऐसा विश्वास है कि तुम क्षत्रिय-धर्म में निपुण नहीं हो।

**ब्राह्मे बले भवान् युक्तः स्वाध्याये यज्ञकर्मणि ।**
**मा स्म युध्यस्व कौन्तेय मा स्म वीरान् समासदः ॥२७॥**

"कुन्तीपुत्र! तुम ब्राह्मबल, स्वाध्याय और यज्ञ कर्म में ही कुशल हो, अतः न तो युद्ध किया कर और न वीरों के समक्ष ही जाओ।

**स्वगृहं गच्छ कौन्तेय यत्र तौ केशवार्जुनौ ।**
**न हि त्वां समरे राजन् हन्यात् कर्णः कथञ्चन ॥२८**

"कुन्तीनन्दन! अपने घर चले जाओ अथवा जहाँ श्रीकृष्ण और अर्जुन हों वहीं पधारो। राजन् कर्ण रणभूमि में किसी प्रकार भी तुम्हारा वध नह करेगा।"

**एवमुक्त्वा ततः पार्थं विसृज्य च महाबलः ।**
**न्यहनत् पाण्डवीं सेनां वज्रहस्त इवासुरीम् ॥२९**

महाबली कर्ण ने युधिष्ठिर से ऐसा कहकर उन छोड़ दिया और जैसे वज्रधारी इन्द्र असुर-सेना का संहार करते हैं, उसी प्रकार पाण्डव-सेना का विनाश आरम्भ कर दिया।

**ततोऽपायाद् द्रुतं राजन् व्रीडन्निव नरेश्वरः ।**
**प्राप्य सेनानिवेशं च मार्गणैः क्षतविक्षतः ॥३०**
**अवतीर्णो रथात्तूर्णमाविशच्छयनं शुभम् ।**
**भृशमपनीतशल्यः हृच्छल्याभिनिपीडितः ॥३१**

राजन्! कर्ण द्वारा मुक्त हुए राजा युधिष्ठि लजाते हुए-से तुरन्त रणभूमि से भाग गये। अपन छावनी में पहुँचकर वे रथ से उतर पड़े और सुन्द शय्या पर लेट गये। उस समय उनका सारा शरी बाणों से क्षत-विक्षत हो रहा था। वहाँ उनके शरी से बाण निकाल दिये गये, तो भी हृदय में जो अपमा का काँटा गड़ गया था, उससे वे अत्यन्त पीड़ित हो रहे थे।

**अथापयातं राजानं पाण्डवानां महारथाः ।**
**भीमसेनमुखाः सर्वे पुत्राँस्ते प्रत्युपाद्रवन् ॥३२**

राजा युधिष्ठिर के युद्धक्षेत्र से हट जाने प भीमसेन आदि समस्त पाण्डव महारथी आपके पुत्र पर टूट पड़े।

**तेषामापततां वेगमविषह्यं निरीक्ष्य च ।**
**पुत्राणां ते महासैन्यमासीद् राजन् पराङ्मुखम् ॥३**

राजन्! उन आक्रमणकारी वीरों के असह्य वे को देखकर आपके पुत्रों की विशाल सेना युद्ध से विमुख होकर भाग चली।

**इति महाभारते कर्णपर्वणि दशमोऽध्यायः ॥१०॥**

# एकादशोऽध्यायः

## कर्ण एवं भीम का युद्ध और कर्ण का पलायन

सञ्जय उवाच

**कर्णोऽपि दृष्ट्वा द्रवतो धार्तराष्ट्रान्सराजकान् ।**
**मद्रराजमुवाचेदं याहि भीमरथं प्रति ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—उधर कर्ण ने भी राजा दुर्योधन और उसके सैनिकों को भागते देख मद्रराज शल्य से कहा—"भीमसेन के रथ की ओर चलो ।

**एष शूरश्च वीरश्च क्रोधनश्च वृकोदरः ।**
**निरपेक्षः शरीरे च प्राणतश्च बलाधिकः ॥२॥**

"ये भीमसेन शूरवीर, क्रोधी, अपने शरीर और प्राणों का मोह न करनेवाले तथा अत्यधिक बलशाली हैं ।"

**ततः प्रायाद् रथेनाशु शल्यस्तत्र विशाम्पते ।**
**यत्र भीमो महेष्वासो व्यद्रावयत वाहिनीम् ॥३॥**

नरेश्वर ! तब शल्य रथ के द्वारा तुरन्त ही वहाँ जा पहुँचे, जहाँ महाधनुर्धर भीमसेन आपकी सेना को खदेड़ रहे थे ।

**तमापतन्तं संप्रेक्ष्य भीमसेनो महाबलः ।**
**आजघान सुसंक्रुद्धो नाराचेन महोरसि ॥४॥**

कर्ण को अपनी ओर आते देख अत्यन्त क्रोध में भरे हुए महाबली भीमसेन ने एक नाराच द्वारा उनकी छाती में आघात किया ।

**तस्य कर्णो धनुर्मध्ये द्विधा चिच्छेद पत्रिभिः ।**
**अथैनां छिन्नधन्वानं प्रत्यविध्यत् महोरसि ॥५॥**

तब कर्ण ने कई बाण मारकर भीमसेन के धनुष के बीच से ही दो टुकड़े कर दिये । धनुष काटे जाने पर उसकी छाती पर आघात किया ।

**सोऽन्यत् कार्मुकमादाय सूतपुत्रं वृकोदरः ।**
**राजन् मर्मसु मर्मज्ञो विव्याध निशितैः शरैः ॥६॥**

राजन् ! मर्मज्ञ भीमसेन ने दूसरा धनुष लेकर सूतपुत्र के मर्म-स्थानों में पैने बाणों द्वारा प्रहार किया ।

**स भीमसेनाभिहतः सूतपुत्रः कुरूद्वह ।**
**निषसाद रथोपस्थे विसंज्ञः पृतनापतिः ॥७॥**

कुरुश्रेष्ठ ! भीमसेन द्वारा गहरी चोट खाकर सेनापति सूतपुत्र कर्ण अचेत हो रथ की बैठक में धम्म से बैठ गया ।

**ततो मद्राधिपो दृष्ट्वा विसंज्ञं सूतनन्दनम् ।**
**अपोवाह रथेनाजौ कर्णमाहवशोभिनम् ॥८॥**

संग्राम में सुशोभित होनेवाले सूतपुत्र कर्ण को अचेत हुआ देख मद्रराज शल्य रथ के द्वारा उन्हें युद्धस्थल से दूर हटा ले गये ।

**ततः पराजिते कर्णे धार्तराष्ट्रीं महाचमूम् ।**
**व्यद्रावयद् भीमसेनो यथेन्द्रो दानवान् पुरा ॥९॥**

कर्ण के पराजित हो जाने पर भीमसेन दुर्योधन की विशाल सेना को पुनः खदेड़ने लगे, ठीक उसी प्रकार, जैसे पूर्वकाल में इन्द्र ने दानवों को मार भगाया था ।

धृतराष्ट्र उवाच

**पराजितं तु राधेयं दृष्ट्वा भीमेन संयुगे ।**
**ततः परं किमकरोत् पुत्रो दुर्योधनो मम ॥१०॥**

**धृतराष्ट्र ने पूछा**—सञ्जय ! युद्धभूमि में राधा-पुत्र कर्ण को भीमसेन के द्वारा पराजित हुआ देखकर मेरे पुत्र दुर्योधन ने क्या किया ?

सञ्जय उवाच

**विमुखं प्रेक्ष्य राधेयं सूतपुत्रं महाहवे ।**
**पुत्रस्तव महाराज सोदर्यान् समभाषत ॥११॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज ! सूतपुत्र राधानन्दन कर्ण को महासमर में पराङ्मुख हुआ देख आपका पुत्र अपने भाइयों से बोला—

**शीघ्रं गच्छत भद्रं वो राधेयं परिरक्षत ।**
**भीमसेनभयागाधे मज्जन्तं व्यसनार्णवे ॥१२॥**

"तुम्हारा कल्याण हो । तुम लोग शीघ्र जाओ और राधाकुमार कर्ण की रक्षा करो । वह भीमसेन के भय से भरे हुए संकट के अगाध समुद्र में डूब रहा है ।"

**ते तु राज्ञा समादिष्टा भीमसेनं जिघांसवः ।**
**अभ्यवर्तन्त संक्रुद्धाः पतङ्गाः पावकं यथा ॥१३॥**

राजा दुर्योधन की आज्ञा पाकर आपके पुत्र

अत्यन्त क्रुद्ध हो भीमसेन को मार डालने की इच्छा से उनके समक्ष गये, मानो पतङ्ग अग्नि के पास जा पहुँचे हों।

**तेषामापततां क्षिप्रं भीमसेनो महाबलः।**
**रथैः पञ्चाशता सार्धं पञ्चाशदहनद् रथान् ॥१४॥**

महाबली भीमसेन ने पचास रथों के साथ आये हुए आपके पुत्रों के उन पचासों रथियों को शीघ्र ही नष्ट कर दिया।

**विवित्सोस्तु ततः क्रुद्धो भल्लेनापाहरच्छिरः।**
**भीमसेनो महाराज तत् पपात हतं भुवि ॥१५॥**

महाराज! तदनन्तर क्रुद्ध हुए भीमसेन ने एक भल्ल से विवित्सु का सिर काट दिया। उसका वह मस्तक पृथिवी पर गिर पड़ा।

**तं दृष्ट्वा निहतं शूरं भ्रातरः सर्वतः प्रभो।**
**अभ्यद्रवन्त समरे भीमं भीमपराक्रमम् ॥१६॥**

प्रभो! उस शूरवीर को मारा गया देख उसके भाई रणभूमि में भयंकर पराक्रमी भीमसेन पर सब ओर से टूट पड़े।

**ततोऽपराभ्यां भल्लाभ्यां पुत्रयोस्ते महाहवे।**
**जहार समरे प्राणान् भीमो भीमपराक्रमः ॥१७॥**

तब भयानक पराक्रम से सम्पन्न भीमसेन ने उस महासमर में दूसरे दो भल्लों द्वारा रणभूमि में आपके दो पुत्रों के प्राण हर लिये।

**तौ धरामन्वपद्येतां वातरुग्णाविव द्रुमौ।**
**विकटश्च समश्चोभौ देवपुत्रोपमौ नृप ॥१८॥**

नरेश्वर! वे दोनों पुत्र थे—विकट [विकटानन] और सम। देवकुमारों के समान सुशोभित होनेवाले वे दोनों वीर आँधी से उखाड़े हुए दो वृक्षों के समान पृथिवी पर गिर पड़े।

**ततस्तु त्वरितो भीमः क्राथं निन्ये यमक्षयम्।**
**नाराचेन सुतीक्ष्णेन स हतो न्यपतद् भुवि ॥१९॥**

फिर लगे हाथ भीमसेन ने क्राथ [क्रथन] को भी एक तीखे नाराच से मारकर यमलोक पठा दिया। वह राजकुमार प्राणरहित होकर पृथिवी पर गिर पड़ा।

**हाहाकारस्ततस्तीव्रः सम्बभूव जनेश्वर।**
**वध्यमानेषु वीरेषु तव पुत्रेषु धन्विषु ॥२०॥**

प्रजेश्वर! आपके वीर धनुर्धर पुत्रों के इस प्रकार मारे जाने पर वहाँ भयंकर हाहाकार मच गया।

**तेषां सुलुलिते सैन्ये पुनर्भीमो महाबलः।**
**नन्दोपनन्दौ समरे प्रैषयद् यमसादनम् ॥२१॥**

तब उन कौरवों की सेना चञ्चल हो उठी उधर महाबली भीम ने रणभूमि में नन्द और उपनन्द को भी मौत के घाट उतार दिया।

**ततस्ते प्राद्रवन् भीताः पुत्रास्ते विह्वलीकृताः।**
**भीमसेनं रणे दृष्ट्वा कालान्तकयमोपमम् ॥२२॥**

तदनन्तर आपके शेष पुत्र युद्धभूमि में काल अन्तक और यम के समान भयानक भीमसेन को देखकर भय से व्याकुल हो वहाँ से भाग गये।

**पुत्रांस्ते निहतान् दृष्ट्वा सूतपुत्रः सुदुर्मनाः।**
**हंसवर्णान् हयान् भूयः प्रैषयद् यत्र पाण्डवः ॥२३॥**

आपके पुत्रों को मारा गया देख सूतपुत्र कर्ण के मन में बड़ा दुःख हुआ। उसने अपने हंस के समान श्वेत घोड़ों को पुनः वहीं पर हँकवाया, जहाँ पाण्डुपुत्र भीमसेन विद्यमान थे।

**स संनिपातस्तुमुलो घोररूपो विशाम्पते।**
**आसीद् रौद्रो महाराज कर्णपाण्डवयोर्मृधे ॥२४॥**

प्रजेश्वर! महाराज! रणभूमि में कर्ण और भीमसेन का वह संघर्ष घोर, रौद्र और अत्यन्त भयंकर था।

**अथ कर्णो महाराज रोषामर्षसमन्वितः।**
**आजघ्ने पाण्डवं बाणैर्ध्वजमेकेषुणाहनत् ॥२५॥**

महाराज! तब रोष और अमर्ष=क्रोध में भरे हुए कर्ण ने भीमसेन को बहुत-से बाणों द्वारा घायल कर दिया और एक बाण से उनकी ध्वजा काट डाली।

**सारथिं चास्य भल्लेन प्रेषयामास मृत्यवे।**
**छित्त्वा च कार्मुकं तूर्णं पाण्डवस्याशु पत्रिणा ॥२६॥**
**ततो मुहूर्ताद् राजेन्द्र नातिकृच्छ्राद्धसन्निव।**
**विरथं भीमकर्माणं भीमं कर्णश्चकार ह ॥२७॥**

हे राजेन्द्र! फिर एक भल्ल से उनके सारथि को यमलोक पहुँचा दिया और तुरन्त ही एक बाण से उनके धनुष को भी काटकर बिना विशेष परिश्रम

के ही मुहूर्तभर में हँसते हुए-से कर्ण ने भयंकर पराक्रमी भीमसेन को रथहीन कर दिया।

**विरथो भरतश्रेष्ठ प्रहसन्ननिलोपमः।**
**गदां गृह्य महाबाहुरपतत् स्यन्दनोत्तमात् ॥२८॥**

भरतभूषण ! रथहीन होने पर वायु के समान बलशाली महाबाहु भीमसेन गदा हाथ में लेकर हँसते हुए उस उत्तम रथ से कूद पड़े।

**अवप्लुत्य च वेगेन तव सैन्यं विशाम्पते।**
**व्यधमद् गदया भीमः शरन्मेघानिवानिलः ॥२९॥**

प्रजेश्वर ! जैसे वायु शरत्काल के बादलों को शीघ्र ही उड़ा देती है, वैसे ही भीमसेन ने बड़े वेग से कूदकर अपनी गदा की चोट से आपकी सेना का विध्वंस आरम्भ किया।

**प्रताप्यमानं सूर्येण भीमेन च महात्मना।**
**संचुकोच च ते सैन्यं चर्माग्नावाहितं यथा ॥३०॥**

ऊपर से सूर्य आपकी सेना को तपा रहा था और नीचे से महामनस्वी भीमसेन उसे सन्तप्त कर रहे थे। उस अवस्था में आपकी सेना अग्नि पर रखे हुए चमड़े के समान सिकुड़कर छोटी हो गई।

**ते भीमभयसंत्रस्तास्तावका भरतर्षभ।**
**विहाय समरे भीमं दुद्रुवुर्वै दिशो दश ॥३१॥**

भरतभूषण ! भीम के भय से भयभीत हुए आपके समस्त सैनिक रणभूमि में उनका सामना करना छोड़कर दसों दिशाओं में भाग खड़े हुए।

**इति महाभारते कर्णपर्वणि एकादशोऽध्यायः ॥११॥**

# द्वादशोऽध्यायः

## संकुल युद्ध

सञ्जय उवाच

**सूतपुत्रोऽथ समरे पाञ्चालान् केकयाँस्तथा।**
**सृञ्जयाँश्च महेष्वासान् निजघान सहस्रशः ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! भीमसेन को रथहीन कर सूतपुत्र कर्ण ने समराङ्गण में सहस्रों पाञ्चाल, केकय तथा सृञ्जय योद्धाओं को जो महाधनुर्धर थे, मार डाला।

**संशप्तकेषु पार्थश्च कौरवेषु वृकोदरः।**
**पाञ्चालेषु तथा कर्णः क्षयं चक्रुर्महारथाः ॥२॥**

अर्जुन संशप्तकों की, भीमसेन कौरवों की और कर्ण पाञ्चालों की सेना में घुसकर युद्ध कर रहे थे। इन तीनों महारथियों ने बहुत-से शत्रुओं का संहार कर डाला।

**क्षत्रिया दह्यमानास्ते त्रिभिस्तैः पावकोपमैः।**
**विनाशं समरे जग्मु राजन् दुर्मन्त्रिते तव ॥३॥**

अग्नि के समान तेजस्वी इन तीनों वीरों द्वारा दग्ध होते हुए क्षत्रिय रणभूमि में विनाश को प्राप्त हो रहे थे। राजन् ! यह सब आपकी कुमन्त्रणा का फल है।

**ततो दुर्योधनः क्रुद्धो नकुलं नवभिः शरैः।**
**विव्याध भरतश्रेष्ठ चतुरश्चास्य वाजिनः ॥४॥**

भरतभूषण ! उस युद्ध में दुर्योधन ने कुपित होकर नौ बाणों से नकुल और उनके चारों घोड़ों को घायल कर दिया।

**ततः पुनरमेयात्मा तव पुत्रो जनाधिप।**
**क्षुरेण सहदेवस्य ध्वजं चिच्छेद काञ्चनम् ॥५॥**

नरेश्वर ! तत्पश्चात् अमेय आत्मबल से सम्पन्न आपके पुत्र ने क्षुर के द्वारा सहदेव की सुवर्णमयी-ध्वजा काट डाली।

**ततस्तौ रभसौ युद्धे भ्रातरौ भ्रातरं युधि।**
**शरैर्ववर्षतुर्घोरैर्महामेघौ यथाचलम् ॥६॥**

तब तो जैसे महामेघ किसी पर्वत पर जल-वृष्टि करते हों, वैसे ही दोनों वेगशाली बन्धु नकुल और सहदेव अपने भाई दुर्योधन पर युद्ध में भयंकर बाणों की वृष्टि करने लगे।

**ततः क्रुद्धो महाराज तव पुत्रो महारथः।**
**पाण्डुपुत्रौ महेष्वासौ वारयामास पत्रिभिः ॥७॥**

महाराज ! तब आपके महारथी पुत्र ने कुपित होकर उन दोनों महाधनुर्धर पाण्डुपुत्रों को बाणों द्वारा आगे बढ़ने से रोक दिया।

**ततः सेनापती राजन् पाण्डवस्य महारथः ।**
**पार्षतः प्रययौ तत्र यत्र राजा सुयोधनः ॥८॥**

राजन् ! उस समय पाण्डव-सेनापति द्रुपदपुत्र महारथी धृष्टद्युम्न जहाँ राजा दुर्योधन था, वहाँ जा पहुँचे ।

**माद्रीपुत्रौ ततः शूरौ व्यतिक्रम्य महारथौ ।**
**धृष्टद्युम्नस्तव सुतं वारयामास सायकैः ॥९॥**

महारथी शूरवीर माद्रीकुमार नकुल-सहदेव को लाँघकर धृष्टद्युम्न ने अपने बाणों की मार से आपके पुत्र को रोक दिया ।

**तमविध्यदमेयात्मा तव पुत्रो ह्यमर्षणः ।**
**पाञ्चाल्यं पञ्चविंशत्या प्रहसन् पुरुषर्षभः ॥१०॥**

तब अमेय आत्मबल से सम्पन्न आपके अमर्षशील पुत्र पुरुषश्रेष्ठ दुर्योधन ने हँसते हुए पच्चीस बाण मारकर धृष्टद्युम्न को घायल कर दिया ।

**ततो दुर्योधनस्याश्वान् हत्वा सूतं च पञ्चभिः ।**
**धनुश्चिच्छेद भल्लेन जातरूपपरिष्कृतम् ॥११॥**

फिर तो धृष्टद्युम्न ने पाँच भल्लों द्वारा दुर्योधन के सारथि और घोड़ों को मारकर एक भल्ल से उसके सुवर्ण-मण्डित धनुष को काट डाला ।

**रथं सोपस्करं छत्रं शक्तिं खड्गं गदां ध्वजम् ।**
**भल्लैश्चिच्छेद दशभिः पुत्रस्य तव पार्षतः ॥१२॥**

तदनन्तर द्रुपदपुत्र ने दस भल्ल मारकर आपके पुत्र के सब सामग्रियोंसहित रथ, छत्र, शक्ति, खड्ग, गदा और ध्वज काट दिये ।

**दुर्योधनं तु विरथं छिन्नवर्मायुधं रणे ।**
**भ्रातरः पर्यरक्षन्त सोदरा भरतर्षभ ॥१३॥**

भरतभूषण ! युद्धभूमि में जिसके कवच और आयुध छिन्न-भिन्न हो गये थे, उस रथहीन दुर्योधन की उसके सहोदर भाई सब ओर से रक्षा करने लगे ।

**तमारोप्य रथे राजन् दण्डधारो नराधिपम् ।**
**अपाहरदसम्भ्रान्तो धृष्टद्युम्नस्य पश्यतः ॥१४॥**

राजन् ! इसी समय आपका पुत्र दण्डधार धृष्टद्युम्न के देखते-देखते अपने भाई राजा दुर्योधन को अपने रथ पर बिठाकर बिना किसी घबराहट के रणभूमि से दूर हटा ले गया ।

**कर्णस्तु सात्यकिं जित्वा राजगृद्धी महाबलः ।**
**द्रोणहन्तारमुग्रेषुं ससाराभिमुखो रणे ॥१५॥**

उधर राजा दुर्योधन का हित चाहनेवाला महाबली कर्ण सात्यकि को परास्त करके युद्धभूमि में भयंकर बाण धारण करनेवाले द्रोणहन्ता धृष्टद्युम्न के सामने गया ।

**पाञ्चालास्तु महाराज त्वरिता विजिगीषवः ।**
**ते सर्वेऽभ्यद्रवत् कर्णं पतत्रिणा इव द्रुमम् ॥१६॥**

महाराज ! उस समय विजय-अभिलाषी समस्त पाञ्चाल योद्धा कर्ण पर उसी प्रकार टूट पड़े, जैसे पक्षी वृक्ष की ओर उड़ जाते हैं ।

**ताँस्तथाधिरथिः क्रुद्धो यतमानान् मनस्विनः ।**
**विचिन्वन्निव बाणौघैः समासादयदग्रगान् ॥१७॥**

फिर तो अधिरथिपुत्र कर्ण भी कुपित हो विजय के लिए प्रयत्नशील, मनस्वी एवं अग्रगामी वीरों को मानो चुन-चुनकर बाण-समूहों द्वारा मारने लगा ।

**नैव भीष्मो न च द्रोणो नान्ये युधि च तावकाः ।**
**चक्रुः स्म तादृशं कर्म यादृशं वै कृतं रणे ॥१८॥**

कर्ण ने उस समय युद्धक्षेत्र में जैसा पराक्रम प्रदर्शित किया था, वैसा न तो भीष्म, न द्रोणाचार्य और न आपके दूसरे कोई योद्धा ही कर सके थे ।

**वर्तमाने तथा रौद्रे संग्रामेऽद्भुतदर्शने ।**
**निहत्य पृतनामध्ये संशप्तकगणान् बहून् ॥१९॥**
**अर्जुनो जयतां श्रेष्ठो वासुदेवमथाब्रवीत् ।**
**तत्र याहि यतः कर्णो द्रावयत्येष नो बलम् ॥२०॥**

जब इस प्रकार अद्भुत दिखाई देनेवाला वह भयंकर युद्ध चल ही रहा था, उस समय दूसरी ओर विजयी वीरों में श्रेष्ठ अर्जुन सेना के मध्यभाग में बहुत-से संशप्तकों का संहार करके श्रीकृष्ण से बोले—"श्रीकृष्ण ! जहाँ यह कर्ण हमारी सेना को खदेड़ रहा है, वहीं चलिए।"

**एतत् श्रुत्वा वचस्तस्य गोविन्दः प्रहसन्निव ।**
**अब्रवीदर्जुनं तूर्णं कौरवाञ्जहि पाण्डव ॥२१॥**

अर्जुन की यह बात सुनकर श्रीकृष्ण ने उनसे हँसते-से कहा—"पाण्डुकुमार ! तुम शीघ्र ही कौरव-सैनिकों का संहार करो ।

**ततस्तव महासैन्यं गोविन्दप्रेरिता हयाः ।**
**हंसवर्णाः प्रविविशुर्वहन्तः कृष्णपाण्डवौ ॥२२॥**

राजन् ! तत्पश्चात् श्रीकृष्ण द्वारा हाँके गये हंस के समान श्वेत रंगवाले घोड़े श्रीकृष्ण और अर्जुन को लेकर आपकी विशाल सेना में घुस गये।

**विगाह्य तु रथानीकमश्वसंघांश्च फाल्गुनः ।**
**व्यचरत् पृतनामध्ये पाशहस्त इवान्तकः ॥२३॥**

अर्जुन रथसेना और अश्वारोहियों के समूह में घुसकर पाशधारी यमराज के समान कौरव-सेना के मध्य में विचरने लगे।

**प्रचिच्छेदाशु भल्लेन द्विषतामाततायिनाम् ।**
**शस्त्रपाणींस्तथा बाहूँस्तथापि च शिराँस्युत ॥२४॥**

वे अपने भल्लों द्वारा आततायी शत्रुओं के शस्त्र, हाथ, भुजा और सिरों को बड़ी फुर्ती से काट रहे थे।

**तस्मिन् प्रपक्षे पक्षे च निहते सव्यसाचिना ।**
**अर्जुनं जयतां श्रेष्ठं त्वरितो द्रौणिरभ्ययात् ॥२५॥**

उस महासमर में जब सव्यसाची अर्जुन ने शत्रुओं के पक्ष और प्रपक्ष दोनों को मार गिराया, तब द्रोण-पुत्र अश्वत्थामा तुरन्त वीरों में श्रेष्ठ अर्जुन के सामने आ पहुँचा।

**ततः प्रासृजदुग्राणि शरवर्षाणि संघशः ।**
**तैर्विसृष्टैर्महाराज व्यद्रवत् पाण्डवी चमूः ॥२६॥**

महाराज! फिर तो वह समूह-के समूह भयंकर बाणों की वर्षा करने लगा। उसके छोड़े हुए बाणों से व्यथित हो पाण्डव सेना भागने लगी।

**ततः शरशतैस्तीक्ष्णैरश्वत्थामा प्रतापवान् ।**
**निश्चेष्टौ तावुभौ युद्धे चक्रे माधवपाण्डवौ ॥२७॥**

पाण्डव सेना को खदेड़कर प्रतापी अश्वत्थामा ने सैकड़ों तीखे तीरों द्वारा श्रीकृष्ण और अर्जुन दोनों को युद्धभूमि में निश्चेष्ट कर दिया।

**वर्धमाने च राजेन्द्र द्रोणपुत्रे महाबले ।**
**हीयमाने च कौन्तेये कृष्णे रोषः समाविशत् ।**
**ततः क्रुद्धोऽब्रवीत् कृष्णः पार्थं सप्रणयं तदा ॥२८॥**

हे राजेन्द्र ! उस युद्ध में जब महाबली द्रोणपुत्र बढ़ने लगा और कुन्तीकुमार अर्जुन का पराक्रम मन्द पड़ने लगा, तब श्रीकृष्ण को बड़ा क्रोध हुआ। क्रोध में भरे हुए श्रीकृष्ण उस समय अर्जुन से प्रेमपूर्वक बोले—

**अत्यद्भुतमिदं पार्थ तव पश्यामि संयुगे ।**
**अतिशेते हि यत्र त्वां द्रोणपुत्रोऽद्य भारत ॥२९॥**

"पार्थ ! रणभूमि में मैं तुम्हारा यह उपेक्षायुक्त अद्भुत व्यवहार देख रहा हूँ। हे भारत ! आज द्रोणपुत्र अश्वत्थामा तुमसे सर्वथा बढ़ता जा रहा है।

**कच्चिद्वीर्यं यथापूर्वं भुजयोर्वा बलं तव ।**
**कच्चित्ते गाण्डिवं हस्ते रथे तिष्ठसि चार्जुन ॥३०॥**

"अर्जुन ! तुम्हारा पराक्रम पहले के समान ही ठीक है न ? अथवा तुम्हारी भुजाओं में पूर्ववत् बल तो है न ? तुम्हारे हाथ में गाण्डीव धनुष तो है न ? और तुम रथ पर ही खड़े हो न ?

**कच्चित् कुशलिनौ बाहू मुष्टिर्वा न व्यशीर्यत ।**
**उदीर्यमाणं हि रणे पश्यामि द्रौणिमाहवे ॥३१॥**

"क्या तुम्हारी दोनों भुजाएँ ठीक-ठाक हैं ? तुम्हारी मुट्ठी तो ढीली नहीं हो गई है ? अर्जुन ! मैं देखता हूँ कि रणभूमि में अश्वत्थामा तुमसे बढ़ता जा रहा है।

**गुरुपुत्र इति ह्येनं मानयन् भरतर्षभ ।**
**उपेक्षां कुरु मा पार्थ नायं काल उपेक्षितुम् ॥३२॥**

"भरतश्रेष्ठ ! कुन्तीकुमार ! यह मेरे गुरु का पुत्र है, ऐसा मानकर तुम इसके प्रति उपेक्षा-भाव प्रदर्शित न करो। यह समय उपेक्षा करने का नहीं है।"

**एवमुक्तस्तु कृष्णेन गृह्य भल्लाँश्चतुर्दश ।**
**त्वरमाणस्त्वरा काले द्रौणेर्धनुरथाच्छिनत् ॥३३॥**
**ध्वजं क्षत्रं पताकाश्च खड्गं शक्ति गदां तथा ।**
**जत्रुदेशे च सुभृशं वत्सदन्तैरताडयत् ॥३४॥**

श्रीकृष्ण के ऐसा कहने पर अर्जुन ने चौदह भल्ल हाथ में लेकर शीघ्रता करने के अवसर पर फुर्ती दिखाते हुए अश्वत्थामा का धनुष काट डाला। फिर उसके ध्वज, क्षत्र, पताका, खड्ग, शक्ति और गदा के भी टुकड़े-टुकड़े कर दिये। तत्पश्चात् अश्वत्थामा के गले की हँसली पर 'वत्सदन्त' नामक बाणों के द्वारा गहरी चोट पहुँचाई।

**स मूर्च्छां परमां गत्वा ध्वजयष्टिं समाश्रितः ।**
**अपोवाह रणात् सूतो शत्रुणा भृशपीडितम् ॥३५॥**

उस आघात से भारी मूर्च्छा में पड़कर अश्वत्थामा ध्वजदण्ड के सहारे लुढ़क गया। तब शत्रु से अत्यन्त पीड़ित अश्वत्थामा को उसका सारथि रणभूमि से दूर हटा ले गया।

**एतस्मिन्नेव काले च विजयः शत्रुतापनः ।**
**व्यहनत् तावकं सैन्यं तव पुत्रस्य पश्यतः ॥३६॥**

राजन् ! इसी समय शत्रुओं को सन्ताप देनेवाले अर्जुन ने आपके पुत्र के देखते-देखते आपकी सेना का संहार कर डाला।

**दुर्योधनस्ततः कर्णमुपेत्य भरतर्षभ ।**
**अब्रवीन्मद्रराजं च तथैवान्यांश्च पार्थिवान् ॥३७॥**

भरतभूषण ! अपनी सेना को मारी जाती हुई देख दुर्योधन कर्ण के पास जाकर मद्रराज शल्य और अन्य राजाओं से बोला—

**यदृच्छयैतत् सम्प्राप्तं स्वर्गद्वारमपावृतम् ।**
**सुखिनः क्षत्रियाः कर्ण लभन्ते युद्धमीदृशम् ॥३८॥**

"कर्ण ! यह स्वर्ग का खुला हुआ द्वाररूप युद्ध बिना इच्छा के अपने-आप प्राप्त हुआ है । ऐसे युद्ध को सुखी क्षत्रियगण ही पाते हैं ।

**सदृशैः क्षत्रियैः शूरैः शूराणां युद्धयतां युधि ।**
**इष्टं भवति राधेय तदिदं समुपस्थितम् ॥३९॥**

"हे राधानन्दन ! अपने समान बली, शूरवीर क्षत्रियों के साथ युद्धभूमि में जूझनेवाले शूरवीरों को जो अभीष्ट होता है वही संग्राम हमारे समक्ष उपस्थित है ।

**हत्वा च पाण्डवान् युद्धे स्फीतामुर्वीमवाप्स्यथ ।**
**निहता वा परैर्युद्धे वीरलोकमवाप्स्यथ ॥४०॥**

"तुम सब लोग रणभूमि में पाण्डवों को मारकर भूतल का समृद्धिशाली राज्य प्राप्त करोगे अथवा शत्रुओं द्वारा युद्ध में मारे जाकर वीरगति को पाओगे ।"

**दुर्योधनस्य तत् श्रुत्वा वचनं क्षत्रियर्षभाः ।**
**हृष्टा नादानुदक्रोशन् वादित्राणि च सर्वशः ॥४१॥**

दुर्योधन की वह बात सुनकर क्षत्रियशिरोमणि वीर हर्ष में भरकर सिंहनाद करने लगे और अनेक प्रकार के बाजे बजाने लगे ।

**ततः प्रमुदिते तस्मिन् दुर्योधनबले तदा ।**
**हर्षयंस्तावकान् योधान् द्रौणिर्वचनमब्रवीत् ॥४२॥**

तत्पश्चात् आनन्दविभोर हुई दुर्योधन की उस सेना में अश्वत्थामा ने आपके योद्धाओं का हर्ष बढ़ाते हुए कहा—

**प्रत्यक्षं सर्वसैन्यानां भवतां चापि पश्यताम् ।**
**न्यस्तशस्त्रो मम पिता धृष्टद्युम्नेन पातितः ॥४३॥**

"समस्त सैनिकों के सामने, आप लोगों के देखते-देखते जिन्होंने हथियार डाल दिया था, उन मेरे पिता को धृष्टद्युम्न ने मार गिराया था ।

**स तेनाहममर्षेण मित्रार्थे चापि पार्थिवाः ।**
**सत्यं वः प्रतिजानामि तद् वाक्यं मे निबोधत ॥४४॥**

"भूपालो ! पितृवध से होनेवाले अमर्ष के कारण एवं मित्र दुर्योधन के कार्य की सिद्धि के लिए मैं आप लोगों से सच्ची प्रतिज्ञा करके कहता हूँ, आप लोग मेरी प्रतिज्ञा सुनिए—

**धृष्टद्युम्नमहत्वाहं न विमोक्ष्यामि दंशनम् ।**
**अनृतायां प्रतिज्ञायां नाहं स्वर्गमवाप्नुयाम् ॥४५॥**

"मैं धृष्टद्युम्न को मारे बिना अपना कवच नहीं उतारूँगा—यदि मेरी यह प्रतिज्ञा झूठी हो जाए तो मुझे स्वर्गलोक की प्राप्ति न हो ।

**अर्जुनो भीमसेनश्च योधो यो रक्षिता रणे ।**
**धृष्टद्युम्नस्य तं संख्ये निहनिष्यामि सायकैः ॥४६॥**

"अर्जुन और भीमसेन आदि जो योद्धा रणभूमि में धृष्टद्युम्न की रक्षा करेगा, उसे मैं रणभूमि में अपने बाणों से मार डालूँगा ।"

**एवमुक्ते ततः सर्वा सहिता भारतीचमूः ।**
**अभ्यद्रवत कौन्तेयाँस्तथा ते चापि पाण्डवाः ॥४७॥**

अश्वत्थामा के ऐसा कहने पर सारी कौरव-सेना एकत्र होकर कुन्तीपुत्रों के सैनिकों पर टूट पड़ी, उधर पाण्डवों ने भी कौरवों पर धावा बोल दिया ।

**इति महाभारते कर्णपर्वणि द्वादशोऽध्यायः ॥१२॥**

# त्रयोदशोऽध्यायः

## अश्वत्थामा का धृष्टद्युम्न पर आक्रमण और अर्जुन द्वारा उसकी पराजय

सञ्जय उवाच

**ततः प्रववृते भीमः संग्रामो लोमहर्षणः ।**
**कुरूणां पाण्डवानां च यमराष्ट्रविवर्धनः ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! उस समय कौरव और पाण्डवों का बड़ा भयंकर एवं रोमाञ्चकारी संग्राम आरम्भ हुआ, जो यमराज के राज्य की वृद्धि करनेवाला था ।

**एतस्मिन्नन्तरे द्रौणिरभ्ययात् सुमहाबलम् ।**
**पार्षतं शत्रुदमनं शत्रुवीर्यासुनाशनम् ॥२॥**

इसी समय द्रोणकुमार अश्वत्थामा शत्रुओं के बल

और प्राणों का नाश करनेवाले शत्रुसंहारक महाबली धृष्टद्युम्न के पास आ पहुँचा।

**अभ्यभाषत संक्रुद्धो द्रौणिः परपुरञ्जयः।**
**तिष्ठ तिष्ठाद्य ब्रह्मघ्न न मे जीवन् विमोक्ष्यसे ।।३।।**

शत्रुओं की राजधानी पर विजय पानेवाला द्रोण-पुत्र अश्वत्थामा वहाँ पहुँचते ही अत्यन्त क्रुद्ध होकर बोला—"ब्रह्महत्यारे ! खड़ा रह, खड़ा रह, आज तू मेरे हाथ से जीवित नहीं छूट सकेगा।

**पाञ्चालापसदाद्य त्वां प्रेषयिष्यामि मृत्यवे।**
**एवमुक्तः प्रत्युवाच धृष्टद्युम्नः प्रतापवान् ।।४।।**
**प्रतिवाक्यं स एवासिर्मामको दास्यते तव।**
**येनैव ते पितुर्दत्तं यतमानस्य संयुगे ।।५।।**

"पाञ्चालकुल-कलंक ! आज मैं तुझे मृत्यु के घाट उतार दूंगा।" अश्वत्थामा के ऐसा कहने पर प्रतापी धृष्टद्युम्न ने उसे इस प्रकार उत्तर दिया—"अरे ! तेरी इस बात का उत्तर तुझे मेरी वही तलवार देगी, जिसने युद्धभूमि में विजय के लिए प्रयत्नशील तेरे पिता को परलोक पठा दिया था।

**यदि तावन्मया द्रोणो निहतो ब्राह्मणब्रुवः।**
**त्वामिदानीं कथं युद्धे न हनिष्यामि विक्रमात् ।।६।।**

"यदि मैंने नाममात्र के ब्राह्मण द्रोणाचार्य को पहले युद्ध में मार डाला था, तो इस समय पराक्रम करके मैं तुझे भी क्यों नहीं मार डालूँगा ?"

**एवमुक्त्वा महाराज सेनापतिरमर्षणः।**
**धृष्टद्युम्नस्तु समरे द्रौणेश्चिच्छेद कार्मुकम् ।।७।।**

महाराज ! ऐसा कहकर अमर्षशील सेनापति धृष्टद्युम्न ने रणभूमि में अश्वत्थामा के धनुष को काट दिया।

**तदपास्य धनुर्द्रौणिरन्यदादाय कार्मुकम्।**
**वेगवान् समरे घोरे शरांश्चाशीविषोपमान् ।।८।।**
**स पार्षतस्य राजेन्द्र धनुः शक्ति गदां ध्वजम्।**
**हयान् सूतं रथं चैव निमेषाद् व्यधमच्छरैः ।।९।।**

हे राजेन्द्र ! तब वेगवान् अश्वत्थामा ने उस कटे हुए धनुष को फेंककर दूसरा धनुष और विषधर सर्पों के समान भयंकर बाण हाथ में लेकर उनके द्वारा पलक मारते-मारते धृष्टद्युम्न के धनुष, शक्ति, गदा, ध्वज को काट, अश्व तथा सारथि को मार उसके रथ को तहस-नहस कर दिया।

**स छिन्नधन्वा विरथो हताश्वो हतसारथिः।**
**खड्गमादत्त विपुलं शतचन्द्रं च भानुमत् ।।१०।।**

धनुष कट जाने और घोड़ों तथा सारथि के मर जाने पर रथहीन हुए धृष्टद्युम्न ने विशाल खड्ग और सौ चन्द्राकार चिह्नों से चमकती हुई ढाल हाथ में ले ली।

**द्रौणिस्तदपि राजेन्द्र भल्लैः क्षिप्रं महारथः।**
**चिच्छेद समरे वीरः क्षिप्रहस्तो दृढायुधः ।।११।।**

हे राजेन्द्र ! शीघ्रतापूर्वक हाथ चलानेवाले, दृढ़ हथियारधारी वीर महारथी अश्वत्थामा ने रणभूमि में अनेक भल्लों द्वारा धृष्टद्युम्न की उस ढाल और तलवार को भी काट दिया।

**धृष्टद्युम्नं हि विरथमस्त्रैश्च शकलीकृतम्।**
**नाशकद् भरतश्रेष्ठ यतमानो महारथः ।।१२।।**

भरतभूषण ! यद्यपि धृष्टद्युम्न रथहीन और अस्त्र-शस्त्रों के आघात से जर्जर हो गये थे, तो भी महारथी अश्वत्थामा लाख प्रयत्न करने पर भी उन्हें मार न सका।

**तस्यान्तमिषुभी राजन् यदा द्रौणिर्न जग्मिवान्।**
**अथ त्यक्त्वा धनुर्वीरः पार्षतं त्वरितोऽन्वगात् ।।१३**

राजन् ! जब वीर द्रोणपुत्र अश्वत्थामा बाणों द्वारा उसका वध न कर सका, तब वह धनुष फेंक-कर तुरन्त ही धृष्टद्युम्न की ओर दौड़ा।

**एतस्मिन्नेव काले तु माधवोऽर्जुनमब्रवीत्।**
**पश्य पार्थ यथा द्रौणिः पार्षतस्य वधं प्रति ।।१४।।**
**यत्नं करोति विपुलं हन्याच्चैनं न संशयः।**
**तं मोचय महाबाहो पार्षतं शत्रुकर्षन ।।१५।।**

इसी समय श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा—"पार्थ ! वह देखो ! द्रोणकुमार अश्वत्थामा धृष्टद्युम्न के वध के लिए कैसा महान् पुरुषार्थ कर रहा है। वह उन्हें मार सकता है, इसमें संशय नहीं है। महाबाहो ! शत्रुसूदन ! धृष्टद्युम्न को बचाओ।"

**एवमुक्त्वा महाराज वासुदेवः प्रतापवान्।**
**प्रैषयत् तुरगाँस्तत्र यत्र द्रौणिर्व्यवस्थितः ।।१६।।**

महाराज ! ऐसा कहकर प्रतापी वसुदेवनन्दन

श्रीकृष्ण ने अपने घोड़ों को उसी ओर हाँका, जहाँ द्रोणकुमार अश्वत्थामा खड़ा था।

**दृष्ट्वाऽऽयातौ महावीर्यावुभौ कृष्णधनञ्जयौ।**
**धृष्टद्युम्नवधे यत्नं चक्रे राजन् महाबलः ॥१७॥**

राजन्! महापराक्रमी श्रीकृष्ण और अर्जुन दोनों को आते देख महाबली अश्वत्थामा धृष्टद्युम्न के वध के लिए विशेष प्रयत्न करने लगा।

**विकृष्यमाणं दृष्ट्वैव धृष्टद्युम्नं नरेश्वर।**
**शरांश्चिक्षेप वै पार्थो द्रौणिं प्रति महाबलः ॥१८॥**

प्रजेश्वर! धृष्टद्युम्न को खींचे जाते देख महाबली अर्जुन ने अश्वत्थामा पर बहुत-से बाण चलाये।

**स विद्धस्तैः शरैर्घोरैर्द्रोणपुत्रः प्रतापवान्।**
**उत्सृज्य समरे राजन् पाञ्चाल्यममितौजसम् ॥१९॥**
**रथमारुरुहे वीरो धनञ्जयशरार्दितः।**
**प्रगृह्य च धनुः श्रेष्ठं पार्थं विव्याध सायकैः ॥२०॥**

राजन्! उन भयंकर बाणों से घायल हुआ प्रतापी वीर द्रोणपुत्र अश्वत्थामा रणभूमि में अमित बलशाली धृष्टद्युम्न को छोड़कर अपने रथ पर जा चढ़ा। वह धनञ्जय के बाणों से अत्यन्त पीड़ित हो चुका था, अतः उसने भी श्रेष्ठ धनुष हाथ में लेकर बाणों द्वारा अर्जुन को घायल कर दिया।

**एतस्मिन्नन्तरे वीरः सहदेवो जनाधिप।**
**अपोवाह रथेनाजौ पार्षतं शत्रुतापनम् ॥२१॥**

प्रजेश्वर! इसी बीच में वीर सहदेव शत्रुसंतापक धृष्टद्युम्न को अपने रथ के द्वारा युद्ध-क्षेत्र से अन्यत्र हटा ले गया।

**अर्जुनोऽपि महाराज द्रौणिं विव्याध पत्रिभिः।**
**तं द्रोणपुत्रः संक्रुद्धो बाह्वोरुरसि चार्पयत् ॥२२॥**

हे महाराज! फिर तो अर्जुन ने भी अपने बाणों से अश्वत्थामा को घायल कर दिया। तब द्रोणपुत्र ने अत्यन्त क्रुद्ध हो अर्जुन की छाती और दोनों भुजाओं में प्रहार किया।

**क्रोधितस्तु रणे पार्थो नाराचं कालसम्मितम्।**
**द्रोणपुत्राय चिक्षेप कालदण्डमिवापरम् ॥२३॥**

तब युद्ध में क्रुद्ध हुए कुन्तीपुत्र अर्जुन ने द्रोणपुत्र पर द्वितीय कालदण्ड के समान साक्षात् कालस्वरूप नाराच नामक बाण चलाया।

**ब्राह्मणस्यांसदेशे स निपपात महाद्युतिः।**
**स विह्वलो महाराज शरवेगेन संयुगे।**
**निषसाद रथोपस्थे वैक्लव्यं च परं ययौ ॥२४॥**

महाराज! वह महातेजस्वी नाराच उस ब्राह्मण के कन्धे पर जा लगा। अश्वत्थामा उस युद्धभूमि में उस बाण के वेग से व्याकुल हो रथ की बैठक में धम्म से बैठ गया और अत्यन्त मूर्च्छित हो गया।

**विह्वलं तं तु वीक्ष्याथ द्रोणपुत्रं च सारथिः।**
**अपोवाह रथेनाजौ त्वरमाणो रणाजिरात् ॥२५॥**

द्रोणपुत्र को विह्वल देखकर उसका सारथि बड़ी उतावली के साथ उसे रथ के द्वारा समराङ्गण से दूर हटा ले गया।

**इति महाभारते कर्णपर्वणि त्रयोदशोऽध्यायः ॥१३॥**

# चतुर्दशोऽध्यायः

**श्रीकृष्ण और अर्जुन का युधिष्ठिर के पास जाना, युधिष्ठिर का भ्रमवश कर्ण के मारे जाने का वृत्तान्त पूछना, अर्जुन का कर्ण को अबतक न मारने का कारण बताते हुए उसके वध की प्रतिज्ञा करना**

सञ्जय उवाच

**द्रोणपुत्रं पराजित्य जित्वा चान्यान् महारथान्।**
**अब्रवीदर्जुनो राजन् वासुदेवमिदं वचः ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! द्रोणपुत्र एवं अन्यान्य महारथियों को हराकर और उनपर विजय पाकर अर्जुन ने श्रीकृष्ण से इस प्रकार कहा—

अर्जुन उवाच

**पश्य कृष्ण महाबाहो द्रवन्तीं पाण्डवीं चमूम्।**
**कर्णं पश्य च संग्रामे कालयन्तं महारथम् ॥२॥**

**अर्जुन ने कहा**—महाबाहु श्रीकृष्ण! देखिए तो, वह पाण्डव-सेना भागी जा रही है और कर्ण रण-

भूमि में बड़े-बड़े महारथियों को काल के गाल में भेज रहा है।

**न च पश्यामि दाशार्ह धर्मराजं युधिष्ठिरम् ।**
**नापि केतुर्युधां श्रेष्ठ धर्मराजस्य दृश्यते ।।३।।**

दाशार्ह ! इस समय मुझे धर्मराज युधिष्ठिर दिखाई नहीं दे रहे हैं । योद्धाओं में श्रेष्ठ श्रीकृष्ण ! धर्मराज के ध्वज का भी दर्शन नहीं हो रहा है ।

**नोदयाश्वान् हृषीकेश विहायैतद् बलार्णवम् ।**
**अजातशत्रुं राजानं द्रष्टुमिच्छामि केशव ।।४।।**

हृषीकेश ! अब आप इस शत्रुसेनारूपी समुद्र को छोड़कर घोड़ों को यहाँ से हाँक ले चलें । केशव ! मैं अज्ञातशत्रु राजा युधिष्ठिर का दर्शन करना चाहता हूँ ।

सञ्जय उवाच

**ततो ययौ हृषीकेशो यत्र राजा युधिष्ठिरः ।**
**शीघ्राच्छीघ्रतरं राजन् वाजिभिर्गरुडोपमैः ।।५।।**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! यह कहकर श्रीकृष्ण गरुड़ के समान वेगशाली घोड़ों द्वारा शीघ्र-से-शीघ्र वहाँ जा पहुँचे, जहाँ राजा युधिष्ठिर विश्राम कर रहे थे ।

**मुदाभ्युपगतौ कृष्णावश्विनाविव वासवम् ।**
**तावभ्यनन्दद् राजापि विवस्वानश्विनाविव ।।६।।**

दोनों कृष्णों को इन्द्र के पास गये हुए अश्विनी-कुमारों के समान प्रसन्नतापूर्वक अपने समीप आया जान राजा युधिष्ठिर ने उनका उसी प्रकार अभि-नन्दन किया, जैसे सूर्य दोनों अश्विनीकुमारों का स्वागत करते हैं ।

**मन्यमानो हतं कर्णं धर्मराजो युधिष्ठिरः ।**
**हर्षगद्गदया वाचा प्रीतः प्राह परन्तपः ।।७।।**

शत्रुओं को सन्ताप देनेवाले धर्मराज युधिष्ठिर ने कर्ण को मारा गया मानकर हर्ष-गद्गदवाणी से प्रसन्नतापूर्वक वार्तालाप आरम्भ किया—

युधिष्ठिर उवाच

**स्वागतं देवकीपुत्र स्वागतं ते धनञ्जय ।**
**अक्षताभ्यामरिष्टाभ्यां हतः कर्णो महारथः ।।८।।**

**युधिष्ठिर बोले**—देवकीनन्दन ! तुम्हारा स्वागत हो । धनञ्जय ! तुम्हारा भी स्वागत है, क्योंकि तुम दोनों ने स्वयं किसी प्रकार की क्षति न उठाकर, सकुशल रहते हुए महारथी कर्ण को मार डाला है ।

**अन्तकं मम मित्राणां हत्वा कर्णं महामृधे ।**
**दिष्टचा युवामनुप्राप्तौ जित्वासुरमिवामरौ ।।९।।**

किसी असुर को जीतकर आये हुए दो देवताओं के समान तुम दोनों मित्र महायुद्ध में मेरे मित्रों के लिए यमराज के समान कर्ण को मारकर यहाँ आ गये, यह बड़े सौभाग्य की बात है ।

**घोरं युद्धमदीनेन मया ह्यद्याच्युतार्जुनौ ।**
**कृतं तेनान्तकेनेव प्रजाः सर्वा जिघाँसता ।।१०।।**

श्रीकृष्ण और अर्जुन ! सम्पूर्ण प्रजा के संहार के इच्छुक काल के समान उस कर्ण ने आज मेरे साथ घोर युद्ध किया था, फिर भी मैंने उसमें दीनता नहीं दिखाई ।

**तेन केतुश्च मे छिन्नो हतौ च पार्ष्णिसारथी ।**
**हतवाहस्ततश्चास्मि युयुधानस्य पश्यतः ।।११।।**

उसने सात्यकि के देखते-देखते मेरी ध्वजा काट डाली, पार्श्वरक्षकों को मार डाला तथा मेरे घोड़ों का भी संहार कर डाला था ।

**अभिसृत्य च मां युद्धे परुषाण्युक्तवान् बहु ।**
**तत्र तत्र युधां श्रेष्ठ परिभूय न संशयः ।।१२।।**
**भीमसेनप्रभावात्तु यज्जीवामि धनञ्जय ।**
**बहुनात्र किमुक्तेन नाहं तत् सोढुमुत्सहे ।।१३।।**

योद्धाओं में श्रेष्ठ वीर ! उसने युद्ध में मेरा पीछा करके जहाँ-तहाँ मुझे अपमानित करते हुए बहुत-से कटु वचन सुनाये थे, इसमें सन्देह नहीं है । धनञ्जय ! मैं इस समय भीमसेन के प्रभाव से ही जीवित हूँ । अधिक कहने से क्या लाभ ! मैं उस अपमान को किसी प्रकार सह नहीं सकता ।

**त्रयोदशाहं वर्षाणि यस्माद्भीतो धनञ्जय ।**
**रात्रौ लेभे स्म न निद्रां न चाहनि सुखं क्वचित् ।।१४।।**

अर्जुन ! मैं जिससे भयभीत होकर तेरह वर्षों तक न तो रात्रि में अच्छी प्रकार नींद ले सका और न दिन में ही कहीं सुख पा सका [उसी कर्ण ने मुझे परास्त कर दिया] ।

**यस्य द्वेषेण संयुक्तः परिदह्ये धनञ्जय ।**
**सोऽहं तेनैव वीरेण जित्वा जीवन् विसर्जितः ।।१५।।**

धनञ्जय ! जिसके द्वेष से मैं निरन्तर जलता रहा, उसी वीर कर्ण ने मुझे परास्त करके जीवित छोड़ दिया।

**को नु मे जीवितेनार्थो राज्येनार्थो भवेत् पुनः ।**
**ममैवं विक्षतस्याद्य कर्णेनाहवशोभिना ।।१६।।**

अब मुझे इस जीवन से और राज्य से क्या प्रयोजन है, जबकि आज युद्ध में शोभा पानेवाले कर्ण ने मुझे इस प्रकार क्षत-विक्षत कर डाला है।

**स त्वां पृच्छामि कौन्तेय यथाद्य कुशलं तथा ।**
**तन्ममाचक्ष्व कार्त्स्न्येन यथा कर्णो हतस्त्वया ।।१७।।**

कुन्तीनन्दन ! मैं तुमसे पूछता हूँ कि आज जिस प्रकार सकुशल रहकर तुमने कर्ण को मारा है, वह सम्पूर्ण वृत्तान्त मुझे पूर्णरूप से बताओ।

**शक्रतुल्यबलो युद्धे यमतुल्यः पराक्रमे ।**
**रामतुल्यस्तथास्त्रेण स कथं वै निषूदितः ।।१८।।**

जो युद्ध में इन्द्र के समान बलवान्, यमराज के समान पराक्रमी और परशुरामजी के समान अस्त्र-शस्त्रों का ज्ञाता था, वह कर्ण कैसे मारा गया ?

**महारथः समाख्यातः सर्वयुद्धविशारदः ।**
**धनुर्धराणां प्रवरः सर्वेषामेकपूरुषः ।।१९।।**
**पूजितो धृतराष्ट्रेण सपुत्रेण महाबल ।**
**त्वदर्थमेव राधेयः स कथं निहतस्त्वया ।।२०।।**

जो सम्पूर्ण युद्ध की कला में कुशल, विख्यात महारथी, धनुर्धरों में श्रेष्ठ तथा सब शत्रुओं में प्रधान पुरुष था, जिसे पुत्रसहित धृतराष्ट्र ने तुम्हारा सामना करने के लिए ही सम्मानपूर्वक रखा था, वह महाबली राधानन्दन कर्ण तुम्हारे द्वारा कैसे मारा गया ?

**तद् धर्मशीलस्य वचो निशम्य**
**उवाच जिष्णुस्तमदीनसत्त्वम् ।**
**श्रुत्वा तु कर्णेन प्रपीडितं त्वां**
**द्रष्टुं भवन्तं त्वरयाभियातः ।।२१।।**

धर्मात्मा नरेश की वह बात सुनकर विजयशील अर्जुन ने उदारचित्त युधिष्ठिर से कहा—"मैं आपको कर्ण द्वारा पीड़ित किया हुआ जानकर उतावली के साथ आपका दर्शन करने के लिए चला आया हूँ।

**शैनेयो मे सात्यकिश्चक्ररक्षौ**
**धृष्टद्युम्नश्चापि तथैव राजन् ।**
**युधामन्युश्चोत्तमौजाश्च शूरौ**
**पृष्ठतो मां रक्षतां राजपुत्रौ ।।२२।।**

"राजन् ! शिनिपौत्र सात्यकि और धृष्टद्युम्न मेरे चक्ररक्षक हों, युधामन्यु और उत्तमौजा—दोनों शूरवीर राजकुमार मेरे पृष्ठभाग की रक्षा करें [इनसे सुरक्षित होकर मैं कर्ण के साथ युद्ध करना चाहता हूँ]।

**योत्स्याम्यहं भारत सूतपुत्र-**
**मस्मिन् युधि यदि वै दृश्यतेऽद्य ।**
**आयाहि पश्याद्य युयुत्समानं**
**मां सूतपुत्रस्य रणे जयाय ।।२३।।**

"भरतभूषण ! यदि इस संग्राम में आज कर्ण मुझे दृष्टिगोचर हो जाए तो मैं उसके साथ युद्ध करूँगा। आइए, देखिए, आज मैं युद्धक्षेत्र में सूतपुत्र पर विजय पाने के लिए संग्राम करना चाहता हूँ।

**कर्णं न चेदद्य निहन्मि राजन्**
**सबान्धवं युध्यमानं प्रसह्य ।**
**प्रतिश्रुत्याकुर्वतो वै गतिर्या**
**कष्टा याता तामहं राजसिंह ।।२४।।**

"राजन् ! राजसिंह ! यदि आज मैं बन्धुओं-सहित युद्ध के लिए उद्यत हुए कर्ण को हठपूर्वक न मार डालूँ तो प्रतिज्ञा भंग करनेवाले को जो दुःख-दायी गति प्राप्त होती है, मुझे भी वही गति मिले।

**पृच्छामि त्वां ब्रूहि जयं रणे मे**
**भीमं पुरा धार्तराष्ट्रा ग्रसन्ते ।**
**सौतिं हनिष्यामि नरेन्द्रसिंह**
**सैन्यं तथा शत्रुगणाँश्च सर्वान् ।।२५।।**

"मैं आपसे आज्ञा चाहता हूँ। आप रणभूमि में मेरी विजय का आशीर्वाद दीजिए। नरेन्द्रसिंह ! धृतराष्ट्र के पुत्र भीमसेन को ग्रस लेने की चेष्टा कर रहे हैं। वे उन्हें ग्रस लें इससे पूर्व ही मैं सूतपुत्र कर्ण को, उसकी सेना को तथा सम्पूर्ण शत्रुओं को मार डालूँगा।

**इति महाभारते कर्णपर्वणि चतुर्दशोऽध्यायः ।।१४।।**

# पञ्चदशोऽध्यायः

## युधिष्ठिर द्वारा अर्जुन का अपमान, अर्जुन का उन्हें मारने के लिए उद्यत होना, श्रीकृष्ण का अर्जुन को समझाना

सञ्जय उवाच

**श्रुत्वा कर्णं कल्यमुदारवीर्यं**
**क्रुद्धः पार्थः फाल्गुनस्यामितौजाः।**
**धनञ्जयं वाक्यमुवाच चेदं**
**युधिष्ठिरः कर्णशराभितप्तः ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! कर्ण के बाणों से सन्तप्त हुए अमित तेजस्वी कुन्तीकुमार राजा युधिष्ठिर महाबलशाली कर्ण को सकुशल जानकर अर्जुन पर क्रुद्ध हो उनसे इस प्रकार बोले—

युधिष्ठिर उवाच

**भीतो भीमं त्यज्य चायास्तथा त्वं**
**यन्नाशकः कर्णमथो निहन्तुम्।**
**स्नेहस्त्वया पार्थ कृतः पृथाया**
**गर्भं समाविश्य यथा न साधु ॥२॥**

**युधिष्ठिर ने कहा**—पार्थ ! जब तुम कर्ण को परास्त नहीं कर सके तो भयभीत हो भीमसेन को वहीं छोड़कर यहाँ चले आये। तुमने कुन्ती के गर्भ में निवास करके भी अपने सगे भाई के प्रति ऐसा स्नेह निभाया, जिसे कोई अच्छा नहीं कह सकता।

**यत् तद् वाक्यं द्वैतवने त्वयोक्तं**
**कर्णं हन्तास्म्येकरथेन सत्यम्।**
**त्यक्त्वा तं वै कथमद्यापयातः**
**कर्णाद् भीतो भीमसेनं विहाय ॥३॥**

तुमने द्वैतवन में जो सत्य प्रतिज्ञा की थी कि 'मैं एकमात्र रथ के द्वारा युद्ध करके कर्ण को मार डालूँगा' उस प्रतिज्ञा को तोड़कर कर्ण से भयभीत हो भीमसेन को रणभूमि में छोड़कर आज तुम युद्धभूमि से लौट कैसे आये ?

**इदं यदि द्वैतवनेऽप्यचक्षः**
**योद्धुं न कर्णं प्रशक्ष्ये नृपेति।**
**वयं ततः प्राप्तकालं च सर्वे**
**कृत्यान्युपैष्याम तथैव पार्थ ॥४॥**

पार्थ ! यदि तुमने द्वैतवन में यह कह दिया होता कि 'राजन् ! मैं कर्ण के साथ युद्ध नहीं कर सकूँगा' तो हम सब लोग समयोचित कर्त्तव्य का निश्चय करके उसी के अनुसार कार्य करते।

**मयि प्रतिश्रुत्य वधं हि तस्य**
**न वै कृतं तच्च तथैव वीर।**
**आनीय नः शत्रुमध्यं स कस्मात्**
**समुत्क्षिप्य स्थण्डिले प्रत्यपिंष्ठाः ॥५॥**

वीर ! तुमने मुझसे कर्ण के वध की प्रतिज्ञा करके उसका उसी रूप में पालन नहीं किया। यदि ऐसा ही करना था तो हमें शत्रुओं के मध्य में लाकर पत्थर की वेदी पर पटककर क्यों पीस डाला ?

**अन्वाशिष्म वयमर्जुन त्वयि**
**यियासवो बहु कल्याणमिष्टम्।**
**तन्नः सर्वं विफलं राजपुत्र**
**फलार्थिनां विफल इवातिपुष्पः ॥६॥**

राजकुमार अर्जुन ! हमने बहुत-से मङ्गलमय अभीष्ट पदार्थ प्राप्त करने की इच्छा रखकर तुमपर आशा लगा रखी थी, परन्तु फल-अभिलाषी मनुष्यों को अधिक फूलोंवाला फलहीन वृक्ष जैसे निराश कर देता है, उसी प्रकार तुमसे हमारी सारी आशाएँ निष्फल हो गईं।

**त्रयोदशेमा हि समाः सदा वयं**
**त्वामन्वजीविष्म धनञ्जयाशया।**
**काले च वर्षं देवमिवोप्तबीजं**
**तन्नः सर्वान् नरके त्वं न्यमज्जयः ॥७॥**

धनञ्जय ! जैसे बोया हुआ बीज समय पर मेघ द्वारा की हुई वर्षा की प्रतीक्षा में जीवित रहता है, उसी प्रकार हमने तेरह वर्षों तक सदा तुमपर ही आशा लगाकर जीवन धारण किया था, परन्तु तुमने हम लोगों को नरक में डुबो दिया [भारी संकट में डाल दिया]।

**धिगस्तु मज्जीवितमद्य कृष्ण**
**योऽहं वशं सूतपुत्रस्य यातः।**

**मध्ये कुरूणां सुहृदां च मध्ये**
**ये चाप्यन्ये योद्धुकामाः समेताः ॥८॥**

श्रीकृष्ण ! मैं कौरवों, सुहृदों तथा अन्य जो लोग युद्ध की इच्छा से एकत्र हुए हैं, उन सबके मध्य मैं आज सूतपुत्र कर्ण के अधीन हो गया। मेरे जीवन को धिक्कार है !

**मम ह्यभाग्यानि पुरा कृतानि**
**पापानि नूनं बलवन्ति युद्धे ।**
**तृणं च कृत्वा समरे भवन्तं**
**मामेव स निकृतवान् दुरात्मा ॥९॥**

पार्थ ! निश्चय ही मेरे अभाग्य और पूर्वकृत पाप इस युद्ध में प्रबल हो रहे हैं, तभी तो दुरात्मा कर्ण ने तुम्हें तिनके के समान समझकर मेरा घोर अपमान किया है।

**त्वष्ट्रा कृतं वाहमकूजनाक्षं**
**शुभं समास्थाय कपिध्वजं तम् ।**
**प्रगृह्य खड्गञ्च सुवर्णबद्धं**
**धनुश्च तत् गाण्डिवं तालमात्रम् ।**
**स केशवेनोह्यमानः कथं त्वं**
**कर्णाद् भीतो व्यपयातोऽसि पार्थ ॥१०**

कुन्तीकुमार ! तुम्हारा रथ साक्षात् विश्वकर्मा का बनाया हुआ है, उसके धुरे से कोई ध्वनि नहीं निकलती। उसपर वानरध्वजा फहराती रहती है, ऐसे शुभलक्षणयुक्त रथ पर आरूढ़ हो, सुवर्णजटित खड्ग और चार हाथ के श्रेष्ठ धनुष गाण्डीव को लेकर और श्रीकृष्ण जैसे सारथि के द्वारा संचालित होकर भी तुम कर्ण से भयभीत होकर भाग कैसे आये ?

**धनुश्च तत् केशवाय प्रयच्छ**
**यन्ता भव त्वं खलु केशवस्य ।**
**हनिष्यति केशवः कर्णमुग्रं**
**मरुत्पतिर्वृत्रमिवात्तवज्रः ॥११॥**

पार्थ ! तुम अपना गाण्डीव धनुष श्रीकृष्ण को दे दो और युद्धक्षेत्र में स्वयं इनके सारथि बन जाओ, फिर जैसे इन्द्र ने हाथ में वज्र लेकर वृत्रासुर का वध किया था, उसी प्रकार ये श्रीकृष्ण भयंकर वीर कर्ण को मार डालेंगे।

**राधेयमेतं यदि नाद्य शक्त-**
**श्चरन्तमुग्रं प्रतिबाधनाय ।**
**प्रयच्छ गाण्डीवमिमं हि राज्ञे-**
**त्वत्तो बलास्त्रैरधिकश्च यः स्यात् ॥१२॥**

यदि तुम आज समराङ्गण में विचरते हुए उस भयानक वीर राधापुत्र कर्ण का सामना करने की शक्ति नहीं रखते तो अब यह गाण्डीव धनुष किसी ऐसे राजा को दे दो, जो अस्त्रबल में तुमसे बढ़-चढ़कर हो।

**मासेऽपतिष्यः पञ्चमे सुकृच्छ्रे**
**न वा गर्भे आभविष्यः पृथायाः ।**
**तत् ते श्रेयो राजपुत्राभविष्यन्**
**न संग्रामादपयानं दुरात्मन् ॥१३॥**

दुरात्मा राजपुत्र ! यदि तुम पाँचवें मास में ही माता के गर्भ से गिर गये होते अथवा माता कुन्ती के अत्यन्त कष्टदायक गर्भ में आये ही न होते तो वह तुम्हारे लिए अच्छा होता, क्योंकि उस अवस्था में तुम्हें युद्ध से भाग आने का कलंक तो नहीं प्राप्त होता।

**धिग्गाण्डिवं धिक् च ते बाहुवीर्य-**
**मसंख्येयान् बाणगणाँश्च धिक् ते ।**
**धिक् ते केतुं केसरिणः सुतस्य**
**कृशानुदत्तं च रथं च धिक् ते ॥१४॥**

अर्जुन ! तुम्हारे इस गाण्डीव धनुष को धिक्कार है ! तुम्हारी भुजाओं के पराक्रम को धिक्कार है ! धिक्कार है तुम्हारे इन असंख्य बाणों को ! धिक्कार है तुम्हारी वानरध्वजा को और धिक्कार है अग्निदेव के दिये हुए इस रथ को !

सञ्जय उवाच

**युधिष्ठिरेणैवमुक्तः कौन्तेयः श्वेतवाहनः ।**
**असिं जग्राह संक्रुद्धो जिघांसुर्भरतर्षभम् ॥१५॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! युधिष्ठिर के ऐसा कहने पर श्वेतवाहन कुन्तीनन्दन अर्जुन को बड़ा क्रोध हुआ। उन्होंने भरतभूषण युधिष्ठिर को मार डालने की इच्छा से तलवार उठा ली।

**तस्य कोपं समुद्वीक्ष्य चित्तज्ञः केशवस्तदा ।**
**उवाच किमिदं पार्थ गृहीतः खड्ग इत्युत ॥१६॥**

उस समय उनका क्रोध देखकर उनके मन की

बात जाननेवाले श्रीकृष्ण ने पूछा—"पार्थ ! यह क्या ? तुमने तलवार कैसे उठा ली ?

**न हि पश्यामि योद्धव्यं त्वया किंचिद् धनञ्जय ।**
**प्रहर्तुमिच्छसि कस्मात् किं वा ते चित्तविभ्रमः ॥१७**

"धनञ्जय ! यहाँ तुम्हें किसी के साथ युद्ध करना हो, ऐसा तो दिखाई नहीं देता, फिर तुम किसपर क्यों प्रहार करना चाहते हो ? तुम्हारे चित्त में भ्रम तो नहीं हो गया है ?"

**एवमुक्तस्तु कृष्णेन प्रेक्षमाणो युधिष्ठिरम् ।**
**अर्जुनः प्राह गोविन्दं क्रुद्धः सर्प इव श्वसन् ॥१८॥**

श्रीकृष्ण के इस प्रकार पूछने पर अर्जुन ने क्रोध में भरकर फुंकारते हुए सर्प के समान युधिष्ठिर की ओर देखकर श्रीकृष्ण से कहा—

**अन्यस्मै देहि गाण्डिवमिति मां योऽभिनोदयेत् ।**
**भिन्द्यामहं शिरस्तस्य इत्युपांशुव्रतं मम ॥१९॥**
**तदुक्तं मम चानेन न तत् क्षन्तुमिहोत्सहे ।**
**तस्मादेनं वधिष्यामि राजानं धर्मभीरुकम् ॥२०॥**

"गोविन्द ! 'जो मुझसे यह कह दे कि तुम अपना गाण्डीव धनुष दूसरे को दे दो, मैं उसका सिर काट लूँगा ।' मैंने मन-ही-मन यह प्रतिज्ञा कर रखी है । इन महाराज ने मुझसे वही बात कही है, अतः मैं इन्हें क्षमा नहीं कर सकता । मैं इस धर्मभीरु नरेश का वध करूँगा ।

**एतदर्थं मया खड्गो गृहीतो यदुनन्दन ।**
**धिग्धिगित्येव गोविन्दः पार्थमुक्त्वाब्रवीत्पुनः ॥२१॥**

"यदुनन्दन ! मैंने इनके वध के लिए ही खड्ग हाथ में ली है ।" राजन् ! यह सुनकर श्रीकृष्ण अर्जुन से "धिक्कार है, धिक्कार है !" ऐसा कहकर पुनः इस प्रकार बोले—

श्रीकृष्ण उवाच

**इदानीं पार्थ जानामि न वृद्धाः सेवितास्त्वया ।**
**अकाले पुरुषव्याघ्र संरम्भं यद् भवानगात् ॥२२॥**

**श्रीकृष्ण बोले**—पार्थ ! आज मुझे पता चला कि तुमने वृद्ध पुरुषों की सेवा नहीं की है । पुरुषसिंह ! इसीलिए तुम्हें बिना अवसर के क्रोध आ गया है ।

**न हि धर्मविभागज्ञः कुर्यादेवं धनञ्जयः ।**
**यथा त्वं पाण्डवाद्येह धर्मभीरुरपण्डितः ॥२३॥**

पाण्डुपुत्र धनञ्जय ! जो धर्म के पृथक्-पृथक् रहस्यों को जाननेवाला है, वह कभी ऐसा नहीं कर सकता, जैसा कि आज तुम यहाँ करना चाहते हो । वस्तुतः तुम धर्मभीरु होने के साथ ही बुद्धिहीन भी हो ।

**अकार्याणां क्रियाणां च संयोगं यः करोति वै ।□**
**कार्याणामक्रियाणां च स पार्थ पुरुषाधमः ॥२४॥**

पार्थ ! जो करने योग्य होने पर भी असाध्य हों और जो साध्य होने पर भी निषिद्ध हों ऐसे कर्मों से जो सम्बन्ध जोड़ता है, वह पुरुषों में अधम माना गया है ।

**न हि कार्यमकार्यं वा सुखं ज्ञातुं कथञ्चन ।□**
**श्रुतेन ज्ञायते सर्वं तच्च त्वं नावबुध्यसे ॥२५॥**

कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य का ज्ञान किसी प्रकार भी अनायास ही नहीं हो जाता, वह सब शास्त्र से जाना जाता है और शास्त्र का तुम्हें ज्ञान नहीं है ।

**अविज्ञानाद् भवान् यच्च धर्मं रक्षति धर्मवित् ।**
**प्राणिनां त्वं वधं पार्थ धार्मिको नावबुध्यसे ॥२६॥**

पार्थ ! तुम अज्ञानवश अपने-आपको धर्मज्ञ मानकर जो धर्म की रक्षा करने चले हो, उसमें प्राणिहिंसा का पाप है, यह बात तुम्हारे जैसे धार्मिक की समझ में नहीं आसकती ।

**प्राणिनामवधस्तात सर्वज्यायान् मतो मम ।□**
**अनृतां वा वदेद् वाचं न तु हिंस्यात् कथञ्चन ॥२७॥**

तात ! मेरे विचार में प्राणियों की हिंसा न करना ही सबसे श्रेष्ठ धर्म है । किसी की प्राणरक्षा के लिए झूठ भी बोलना पड़े तो बोल दे, परन्तु उसकी हिंसा किसी प्रकार न होने दे ।

**स कथं भ्रातरं ज्येष्ठं राजानं धर्मकोविदम् ।**
**हन्याद् भवान् नरश्रेष्ठ प्राकृतोऽन्यः पुमानिव ॥२८॥**

नरश्रेष्ठ ! तुम दूसरे गँवार मनुष्य के समान अपने बड़े भाई धर्मज्ञ नरेश का वध कैसे करोगे ?

**अयुध्यमानस्य वधस्तथाशत्रोश्च मानद ।**
**पराङ्मुखस्य द्रवतः शरणं चापि गच्छतः ॥२९॥**
**कृताञ्जलेः प्रपन्नस्य प्रमत्तस्य तथैव च ।**
**न वधः पूज्यते सद्भिस्तच्च सर्वं गुरौ तव ॥३०॥**

मानद ! जो युद्ध न करता हो, शत्रुता न रखता

हो, युद्ध से मुँह मोड़कर भागा जा रहा हो, शरण में आता हो, हाथ जोड़कर आश्रय में आ पड़ा हो तथा असावधान हो, ऐसे मनुष्य का वध करना श्रेष्ठ पुरुष अच्छा नहीं समझते। तुम्हारे बड़े भाई में उपर्युक्त सभी बातें हैं।

**त्वया चैवं व्रतं पार्थ बालेनैव कृतं पुरा।**
**तस्मादधर्मसंयुक्तं मौर्ख्यात् कर्म व्यवस्यति ॥३१॥**

पार्थ! तुमने नासमझ बालक के समान पहले कोई प्रतिज्ञा कर ली थी, इसीलिए तुम मूर्खतावश अधर्मयुक्त कार्य करने को उद्यत हो गये हो।

**स गुरुं पार्थ कस्मात्त्वं हन्तुकामोऽभिधावसि।**
**असम्प्रधार्य धर्माणां गतिं सूक्ष्मां दुरत्ययाम् ॥३२॥**

कुन्तीनन्दन! बताओ तो तुम धर्म के सूक्ष्म और दुर्बोध स्वरूप का अच्छी प्रकार विचार किये बिना ही अपने ज्येष्ठ भ्राता का वध करने के लिए कैसे दौड़ पड़े?

**सत्यस्य वचनं साधु न सत्याद् विद्यते परम्।□**
**तत्त्वेनैव सुदुर्ज्ञेयं पश्य सत्यमनुष्ठितम् ॥३३॥**

सत्य बोलना उत्तम है। सत्य से बढ़कर दूसरा परमतत्त्व कुछ नहीं है, परन्तु यह समझ लो कि सत्पुरुषों द्वारा आचरण में लाये हुए सत्य के यथार्थ स्वरूप का ज्ञान अत्यन्त कठिन होता है।

**भवेत् सत्यमवक्तव्यं वक्तव्यमनृतं भवेत्।□**
**यत्रानृतं भवेत् सत्यं सत्यं चाप्यनृतं भवेत् ॥३४॥**

जहाँ झूठ बोलने का परिणाम सत्यभाषण के समान कल्याणकारक हो अथवा जहाँ सत्य बोलने का परिणाम असत्य बोलने के समान अमङ्गलकारी हो, वहाँ सत्य नहीं बोलना चाहिए। वहाँ असत्य बोलना ही उचित होगा।

**सर्वस्वस्यापहारे तु वक्तव्यमनृतं भवेत्।□**
**तत्रानृतं भवेत् सत्यं सत्यं चाप्यनृतं भवेत् ॥३५॥**

जब किसी का सर्वस्व छीना जा रहा हो तब उसे बचाने के लिए झूठ बोलना कर्तव्य है। वहाँ असत्य ही सत्य और सत्य ही असत्य हो जाता है।

**यत् स्यादहिंसासंयुक्तं स धर्म इति निश्चयः।□**
**अहिंसार्थाय भूतानां धर्मप्रवचनं कृतम् ॥३६॥**

जिस कार्य में हिंसा न हो वही धर्म है। महर्षियों ने प्राणियों की हिंसा न होने देने के लिए ही उत्तम धर्म का प्रवचन किया है।

**धारणाद् धर्ममित्याहुर्धर्मो धारयते प्रजाः।□**
**यत्स्याद् धारणसंयुक्तं स धर्म इति निश्चयः ॥३७॥**

धर्म ही प्रजा को धारण करता है और धारण करने के कारण ही उसे धर्म कहते हैं, अतः जो धारण=प्राणरक्षा से युक्त हो, जिसमें किसी जीव की हिंसा न की जाती हो, वही धर्म है। ऐसा ही धर्म-शास्त्रों का सिद्धान्त है।

**यथाधर्मं यथाबुद्धि मयोद्दिष्टो हितार्थिना।**
**एतत् श्रुत्वा ब्रूहि पार्थ यदि वध्यो युधिष्ठिरः ॥३८॥**

अर्जुन! मैं तुम्हारा हित चाहता हूँ, अतः मैंने अपनी बुद्धि और धर्म के अनुसार तुम्हें धर्माधर्म का तत्त्व बताया है? यह सुनकर अब तुम्हीं बताओ, क्या अब भी राजा युधिष्ठिर तुम्हारे वध्य हैं?

अर्जुन उवाच

**यथा ब्रूयान्महाप्राज्ञो यथा ब्रूयान्महामतिः।**
**हितं चैव यथास्माकं तथैतद् वचनं तव ॥३९॥**

**अर्जुन ने कहा**—प्रभो! कोई बहुत बड़ा विद्वान् एवं परम बुद्धिमान् मनुष्य जैसा उपदेश दे सकता है और जिसके अनुसार आचरण करने से हम लोगों का हित हो सकता है, वैसा ही आपका यह भाषण हुआ है।

**भवान् मातृसमोऽस्माकं तथा पितृसमोऽपि च।**
**गतिश्च परमा कृष्ण त्वमेव च परायणम् ॥४०॥**

श्रीकृष्ण! आप हमारे माता-पिता के तुल्य हैं। आप ही हमारी परम गति और परम आश्रय हैं।

**न हि ते त्रिषु लोकेषु विद्यतेऽविदितं क्वचित्।**
**तस्माद् भवान् परं धर्मं वेद सर्वं यथातथम् ॥४१॥**

तीनों लोकों में कहीं कोई भी ऐसी बात नहीं है, जो आपको विदित न हो, अतः आप ही परम धर्म को सम्पूर्ण और यथार्थरूप से जानते हैं।

**अवध्यं पाण्डवं मन्ये धर्मराजं युधिष्ठिरम्।**
**अस्मिंस्तु मम संकल्पे ब्रूहि किंचिदनुग्रहम् ॥४२॥**

मैं पाण्डुनन्दन धर्मराज युधिष्ठिर को मारने योग्य नहीं समझता, परन्तु मेरी मानसिक प्रतिज्ञा के

विषय में आप ही कोई अनुग्रह [भ्रातृवध के बिना ही प्रतिज्ञा-पालन का उपाय] बताइए।

**यो मां ब्रूयात् कश्चन मानुषेषु**
**अन्यस्मै त्वं गाण्डिवं देहि पार्थ।**
**यस्त्वत्तोऽस्त्रैर्वीर्यतो वा विशिष्टः**
**हन्यामहं केशव तं प्रसह्य ॥४३॥**

केशव ! मनुष्यों में यदि कोई भी मुझसे यह कह दे कि "पार्थ ! तुम अपना गाण्डीव धनुष किसी दूसरे ऐसे मनुष्य को दे दो, जो अस्त्रों के ज्ञान अथवा बल में तुमसे बढ़कर हो तो मैं उसे बलपूर्वक मार डालूँगा ?"

**तं हन्यां चेत् केशव जीवलोके**
**स्थाता नाहं कालमप्यल्पमात्रम्।**
**ध्यात्वा नूनं ह्येनसा चापि मुक्तो**
**वधं राज्ञो भ्रष्टवीर्यो विचेताः ॥४४॥**

केशव ! यदि मैं युधिष्ठिर का वध कर दूँ तो इस संसार में थोड़ी देर भी जीवित नहीं रह सकता। यदि किसी प्रकार पाप से छूट जाऊँ तो भी राजा युधिष्ठिर के वध का चिन्तन करके जी नहीं सकता। निश्चय ही इस समय मैं किंकर्तव्यविमूढ होकर पराक्रमशून्य और अचेत-सा हो गया हूँ।

**यथा प्रतिज्ञा मम लोकबुद्धौ**
**सत्या भवेत् धर्मभृतां वरिष्ठ।**
**जीवेत् यथा पाण्डवोऽहं च कृष्ण**
**बुद्धिं तथा दातुमप्यर्हसि त्वम् ॥४५॥**

धर्मात्माओं में श्रेष्ठ श्रीकृष्ण ! संसार के लोगों की दृष्टि में जिस प्रकार मेरी प्रतिज्ञा सच्ची हो जाए और जिस प्रकार पाण्डुपुत्र राजा युधिष्ठिर और मैं दोनों जीवित रह सकें, वैसी कोई सम्मति आप मुझे देने की कृपा करें।

वासुदेव उवाच

**राजा श्रान्तो विक्षतो दुःखितश्च**
**कर्णेनाजौ दंशितैर्बाणसंघैः।**
**अतस्त्वमेतेन सरोषमुक्तो**
**दुःखान्वितेनेदमयुक्तरूपम् ॥४६॥**

**श्रीकृष्ण ने कहा**—अर्जुन ! राजा युधिष्ठिर थक गये हैं। कर्ण ने युद्धभूमि में अपने तीखे तीरों द्वारा इन्हें क्षत-विक्षत कर दिया है, अतः वे बहुत दुःखी हैं। दुःखी होने के काण ही उन्होंने तुम्हारे प्रति ये रोषपूर्वक अनुचित बातें कही हैं।

**ततो वधं नार्हति धर्मपुत्र-**
**स्त्वया प्रतिज्ञार्जुन पालनीया।**
**जीवन्नयं येन मृतो भवेद्धि**
**तन्मे निबोधेह तवानुरूपम् ॥४७॥**

वीर ! धर्मपुत्र युधिष्ठिर वध के योग्य नहीं हैं। इधर तुम्हें अपनी प्रतिज्ञा का पालन भी करना है, अतः जिस उपाय से ये जीवित रहते हुए भी मरे के समान हो जाएँ, वही तुम्हारे अनुरूप होगा। उसे बताता हूँ, सुनो।

**मानं यदा लभते माननार्ह-**
**स्तदा स वै जीवति जीवलोके।**
**यदावमानं लभते महान्तं**
**जीवंस्तदेव मृत उच्यते सः ॥४८॥**

इस संसार में माननीय पुरुष जबतक सम्मान पाता है, तभी तक वह वास्तव में जीवित है। जब वह भारी अपमान पाने लगता है, तब वह जीते-जी मरा हुआ कहलाता है।

**सम्मानितः पार्थिवोऽयं सदैव**
**त्वया च भीमेन तथा यमाभ्याम्।**
**वृद्धैश्च लोके पुरुषैश्च शूरै-**
**स्तस्यापमानं कलया प्रयुङ्क्ष्व ॥४९॥**

तुमने, भीमसेन ने, नकुल-सहदेव ने तथा अन्य वृद्ध पुरुषों और शूरवीरों ने लोक में राजा युधिष्ठिर का सदा आदर-सम्मान किया है, किन्तु इस समय तुम उनका थोड़ा-सा अपमान कर दो।

**त्वमित्यत्रभवन्तं हि ब्रूहि पार्थ युधिष्ठिरम्। □**
**त्वमित्युक्तो हि निहतो गुरुर्भवति भारत ॥५०॥**

पार्थ ! तुम युधिष्ठिर को सदा 'आप' कहते आये हो, आज इन्हें 'तू' कह दो। भारत ! यदि किसी गुरुजन को 'तू' कह दिया जाए तो साधुपुरुषों की दृष्टि में उसका वध ही हो जाता है।

**वधं ह्ययं पाण्डव धर्मराज-**
**स्त्वत्तोऽयुक्तं वेत्स्यते चैवमेषः।**

ततोऽस्य पादावभिवाद्य पश्चा-

च्छमं ब्रूयाः सान्त्वयित्वा च पार्थम् ॥५१

पाण्डुपुत्र ! तुम्हारे द्वारा किये गये इस अनुचित शब्द के प्रयोग को सुनकर ये धर्मराज अपना वध हुआ ही समझेंगे। तत्पश्चात् तुम इनके चरणों में प्रणाम करके इन्हें सान्त्वना देते हुए इनसे क्षमा माँग लेना और इनके प्रति न्यायोचित वचन बोलना।

प्राज्ञस्तव जातु क्रुधं न भ्राता

कुर्यान्नृपो धर्ममवेक्ष्य चापि।

मुक्तोऽनृताद् भ्रातृवधाच्च पार्थ

मुदा जहि कर्णं सूतनन्दनम् ॥५२॥

पार्थ ! तुम्हारे भाई राजा युधिष्ठिर बुद्धिमान् हैं। ये धर्म का विचार करके तुमपर क्रुद्ध नहीं होंगे। इस प्रकार तुम मिथ्या भाषण और भ्रातृवध के पाप से मुक्त हो बड़े हर्ष के साथ सूतपुत्र कर्ण का वध करना।

इति महाभारते कर्णपर्वणि पञ्चदशोऽध्यायः ॥१५॥

## षोडशोऽध्यायः

### श्रीकृष्ण का अर्जुन को आत्महत्या से बचाना और युधिष्ठिर को सान्त्वना देकर सन्तुष्ट करना

सञ्जय उवाच

इत्येवमुक्तस्तु जनार्दनेन

पार्थः प्रशस्याथ सुहृद्वचस्तत्।

ततोऽब्रवीदर्जुनो धर्मराज-

मनुक्तपूर्वं परुषं प्रसह्य ॥१॥

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! श्रीकृष्ण के ऐसा कहने पर कुन्तीनन्दन अर्जुन ने अपने हितैषी सखा के उस वचन की बहुत प्रशंसा की। फिर वे हठपूर्वक धर्मराज के प्रति ऐसे कठोर वचन कहने लगे, जैसे उन्होंने पहले कभी नहीं कहे थे।

अर्जुन उवाच

मा त्वं राजन् व्याहर व्याहरस्व

यस्तिष्ठसे क्रोशमात्रे रणाद् वै।

भीमस्तु मामर्हति गर्हणाय

यो युध्यते सर्वलोकप्रवीरैः ॥२॥

**अर्जुन ने कहा**—राजन् ! तू स्वयं तो युद्ध से भागकर एक कोस दूर आ बैठा है, अतः तू मुझसे बुरे बोल न बोल। हाँ, भीमसेन को मेरी निन्दा करने का अधिकार है, जोकि समस्त संसार के प्रमुख योद्धाओं के साथ अकेले ही जूझ रहे हैं।

यते हि नित्यं तव कर्तुमिष्टं

दारैः सुतैरात्मसुजीवितेन।

तथापि मां वाग्विशिखेन हंसि

त्वत्तः सुखं विद्म वयं न किञ्चित् ॥३॥

मैं सदा स्त्री, पुत्र, जीवन और यह शरीर लगाकर भी तेरा प्रिय कार्य सिद्ध करने के लिए प्रयत्नशील रहता हूँ। ऐसी अवस्था में भी तू मुझे अपने वाग्बाणों से बींध रहा है ? हम लोग तुमसे थोड़ा-सा भी सुख न पा सकें।

सुखं त्वत्तो नाभिजानीम किंचिद्

यतस्त्वमक्षेषु दृढं प्रसक्तः।

स्वयं कृत्वा व्यसनं पाण्डव त्व-

मस्माँस्तीव्राः श्रावयस्यद्य वाचः ॥४॥

पाण्डुकुमार ! तुमसे थोड़ा-सा भी सुख मिला हो—यह हम नहीं जानते हैं, क्योंकि तू जूआ खेलने के व्यसन में पड़ा हुआ है। स्वयं यह दुर्व्यसन करके तू हमें कठोर बातें सुना रहा है।

त्वं देविता त्वत्कृते राज्यनाश-

स्त्वत्सम्भवं नो व्यसनं नरेन्द्र।

मास्मान् विषैर्वाक्प्रतोदैस्तुदस्त्वं

भूयो नृप कोपयेस्त्वल्पभाग्यः ॥५॥

नरेन्द्र ! तू भाग्यहीन जुआरी है। तेरे ही कारण हमारे राज्य का नाश हुआ और तुझसे ही हमें घोर संकट की प्राप्ति हुई। राजन् ! अब तू अपने विषभरे वचनरूपी चाबुकों से हमें पीड़ा देते हुए फिर कुपित न कर।

सञ्जय उवाच

एता वाचः परुषाः सव्यसाची

स्थिरप्रज्ञः श्रावयित्वा तु रूक्षाः।

**बभूवासौ विमना धर्मभीरुः**
**विनिःश्वनंश्चासिमथोद्बबर्ह ॥६॥**
**तमाह कृष्णः किमिदं पुनर्भवान्**
**विकोशमाकाशनिभं करोत्यसिम् ।**
**ब्रूहि च मां त्वं पुनरुत्तरं वच-**
**स्तथा प्रवक्ष्याम्यहमर्थसिद्धये ॥७॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! सव्यसाची अर्जुन धर्मभीरु हैं । उनकी बुद्धि स्थिर है । उस समय राजा युधिष्ठिर को वैसी रूखी और कठोर बातें सुनाकर वे अनमने और उदास हो गये । उन्होंने लम्बी साँस लेते हुए फिर से तलवार खींच ली । यह देख श्रीकृष्ण ने कहा—"अर्जुन ! यह क्या ? तुम आकाश के समान निर्मल इस तलवार को पुनः म्यान से बाहर क्यों निकाल रहे हो ? तुम मुझे मेरी बात का उत्तर दो । मैं तुम्हारी अभीष्ट सिद्धयर्थ पुनः कोई योग्य उपाय बताऊंगा ।"

**इत्येवमुक्तः पुरुषोत्तमेन**
**सुदुःखितस्तमवदत् किरीटी ।**
**अहं हनिष्ये स्वशरीरमेव**
**प्रसह्य येनाहितमाचरं वै ॥८॥**

पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण के इस प्रकार पूछने पर अर्जुन अत्यन्त दुःखी हो उनसे इस प्रकार बोले—"भगवन् ! मैंने जिसके द्वारा हठपूर्वक भाई का अपमानरूप अहितकर कार्य कर डाला है, अपने उस शरीर को ही समाप्त कर डालूंगा ।"

**उवाच तत्पार्थवचो निशम्य**
**धनञ्जयं धर्मभृतां वरिष्ठः ।**
**राजानमेनं त्वमितीदमुक्त्वा**
**किं कश्मलं प्राविशः पार्थ घोरम् ॥९॥**
**त्वं चात्मानं हन्तुमिच्छस्यरिघ्न**
**नेदं सद्भिः सेवितं वै किरीटिन् ।**
**सूक्ष्मो धर्मो दुर्विदश्चापि पार्थ**
**विशेषतोऽज्ञैः कथितं निबोध ॥१०॥**

अर्जुन का यह वचन सुनकर धर्मात्माओं में श्रेष्ठ श्रीकृष्ण ने उनसे कहा—"पार्थ ! राजा युधिष्ठिर को तू कहकर तुम इतने घोर दुःख में क्यों डूब गये ? शत्रुसंहारक ! क्या तुम आत्महत्या करने जा रहे हो ? किरीटधारी अर्जुन ! साधुपुरुषों ने कभी ऐसा कार्य नहीं किया है । कुन्तीनन्दन ! धर्म का स्वरूप सूक्ष्म है । उसे जानना या समझना अत्यन्त कठिन है । विशेषतः अज्ञानी पुरुषों के लिए तो उसका जानना और भी मुश्किल है । अब मैं जो कुछ कहता हूँ, उसे ध्यान देकर सुनो ।

**हत्वाऽऽत्मानमात्मना प्राप्नुयास्त्वं**
**भ्रातुर्वधान्नरकं चातिघोरम् ।**
**ब्रूहि च वाचाद्य गुणानिहात्मन-**
**स्तथा हतात्मा भवितासि पार्थ ॥११॥**

"भाई का वध करने से जिस अत्यन्त घोर नरक की प्राप्ति होती है, उससे भी भयानक नरक तुम्हें आत्महत्या करने से प्राप्त हो सकता है, अतः पार्थ ! अब तुम यहाँ अपनी ही वाणी द्वारा अपने गुणों का वर्णन करो । ऐसा करने से यह मान लिया जाएगा कि तुमने अपने ही हाथों अपना वध कर लिया ।"

**तथास्तु कृष्णेत्यभिनन्द्य वाचं**
**धनञ्जयः प्राह धनुर्विनाम्य ।**
**युधिष्ठिरं धर्मभृतां वरिष्ठं**
**शृणुष्व राजन्निति शक्रसूनुः ॥१२॥**

यह सुनकर अर्जुन ने श्रीकृष्ण की बात का अभिनन्दन करते हुए कहा—"श्रीकृष्ण ! ऐसा ही हो ।" फिर इन्द्रपुत्र अर्जुन ने अपने धनुष को नवाकर धर्मात्माओं में श्रेष्ठ युधिष्ठिर से इस प्रकार कहा—राजन् ! सुनिए—

अर्जुन उवाच

**न मादृशोऽन्यो नरदेव विद्यते**
**धनुर्धरो देवमृते पिनाकिनम् ।**
**अहं हि तेनानुमतो महात्मना**
**क्षणेन हन्यां सचराचरं जगत् ॥१३॥**

**अर्जुन ने कहा**—नरदेव ! पिनाकधारी शिव को छोड़कर दूसरा कोई भी मेरे समान धनुर्धर नहीं है । उस महात्मा ने भी मेरी वीरता का अनुमोदन किया है । मैं चाहूँ तो क्षणभर में चराचर प्राणियोंसहित सम्पूर्ण संसार को नष्ट कर डालूँ ।

**मया हि राजन् सदिगीश्वरा दिशो**
**विजित्य सर्वा भवतः कृता वशे ।**

**स राजसूयश्च समाप्तदक्षिणः**
**सभा च दिव्या भवतो ममौजसा ॥१४॥**

राजन् ! मैंने सम्पूर्ण दिशाओं और दिक्पालों को जीतकर आपके अधीन कर दिया था। पर्याप्त दक्षिणाओं से युक्त राजसूय यज्ञ का अनुष्ठान तथा आपकी दिव्य सभा का निर्माण मेरे ही बल से सम्भव हुआ है।

**अद्यापुत्रा सूतमाता भवित्री**
**कुन्ती वाथो वा मया तेन वापि।**
**सत्यं वदाम्यद्य न कर्णमाजौ**
**शरैरहत्वा कवचं विमोक्ष्ये ॥१५॥**

आज मेरे द्वारा सूतपुत्र की माता पुत्रहीन हो जाएगी अथवा मेरी माता कुन्ती ही कर्ण के द्वारा मुझ एक पुत्र से हीन हो जाएगी। मैं सत्य कहता हूँ, आज रणभूमि में अपने बाणों द्वारा कर्ण को मारे बिना मैं कवच नहीं उतारूँगा।

सञ्जय उवाच

**इत्येवमुक्त्वा पुनरेव पार्थो**
**युधिष्ठिरं धर्मभृतां वरिष्ठम्।**
**विमुच्य शस्त्राणि धनुर्विसृज्य**
**कोशे च खड्गं विनिधाय तूर्णम् ॥१६॥**
**स व्रीडया नम्रशिराः किरीटी**
**युधिष्ठिरं प्राञ्जलिरभ्युवाच।**
**प्रसीद राजन् क्षम यन्मयोक्तं**
**काले भवान् वेत्स्यति तन्नमस्ते ॥१७॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज ! किरीटधारी कुन्तीनन्दन अर्जुन धर्मात्माओं में श्रेष्ठ युधिष्ठिर से ऐसा कहकर शस्त्र खोल, धनुष नीचे पटक और तलवार को तुरन्त ही म्यान में रखकर लज्जा से नतमस्तक हो हाथ जोड़ उनसे पुनः इस प्रकार बोले—"राजन् ! आप प्रसन्न हों। मैंने जो कुछ कहा है, उसके लिए मुझे क्षमा करें। समय पर आपको सब-कुछ ज्ञात हो जाएगा। मैं आपको नमस्ते[1] कहता हूँ।"

**प्रसाद्य राजानममित्रसाहं**
**स्थितोऽब्रवीच्चैव पुनः प्रवीरः।**
**नेदं चिरात् क्षिप्रमिदं भविष्य-**
**त्यावर्ततेऽसावभियामि चैनम् ॥१८॥**

इस प्रकार शत्रुओं का सामना करने में समर्थ राजा युधिष्ठिर को प्रसन्न करके प्रमुख वीर अर्जुन खड़े होकर फिर बोले—"महाराज ! अब कर्ण के वध में देर नहीं है। यह कार्य शीघ्र ही होगा। वह इधर ही आ रहा है, अतः मैं भी उसी पर चढ़ाई कर रहा हूँ।"

**एतत् श्रुत्वा पाण्डवो धर्मराजो**
**भ्रातुर्वाक्यं परुषं फाल्गुनस्य।**
**उत्थाय तस्माच्छयनादुवाच**
**पार्थं ततो दुःखपरीतचेताः ॥१९॥**

अपने भाई अर्जुन के इस कठोर वचन को सुनकर पाण्डुपुत्र धर्मराज युधिष्ठिर दुःख से व्याकुल-चित्त होकर उस शय्या से उठ खड़े हुए और अर्जुन से इस प्रकार बोले—

**कृतं मया पार्थ यथा न साधु**
**येन प्राप्तं व्यसनं वः सुघोरम्।**
**तस्माच्छिरश्छिन्धि ममेदमद्य**
**कुलान्तकस्याधमपूरुषस्य ॥२०॥**

"पार्थ ! निश्चय ही मैंने अच्छा कर्म नहीं किया, इसी से तुम लोगों पर भयंकर संकट आ पड़ा है। तुम आज ही मुझ कुलान्तकारी, नराधम का मस्तक काट डालो।

१. कुछ शास्त्रज्ञान से शून्य लोगों की ऐसी धारणा है कि 'नमस्ते' पद से किसी का अभिवादन नहीं करना चाहिए। बड़ों को छोटों के लिए 'नमस्ते' का प्रयोग नहीं करना चाहिए, क्योंकि बड़ा छोटे को नमन नहीं कर सकता, तथा छोटों को बड़ों को 'नमस्ते' नहीं कहना चाहिए, क्योंकि बड़ों के लिए 'ते' पद का प्रयोग अनुचित है। ऐसे शास्त्रानभिज्ञ लोगों को इस स्थल को ध्यानपूर्वक देखना चाहिए। अर्जुन युधिष्ठिर के लिए 'त्वं' शब्द का प्रयोग करके उसके लिए खेद प्रकट कर रहा है और क्षमा माँग रहा है। यदि 'नमस्ते' पद में भी अपमान की बात होती तो अर्जुन अपने बड़े भाई युधिष्ठिर के लिए इस पद का प्रयोग कदापि न करते। आर्ष ग्रन्थों में बड़ों द्वारा छोटों को और छोटों द्वारा बड़ों को 'नमस्ते' द्वारा प्रणाम करने का अनेक स्थानों पर उल्लेख है।

**वृद्धावमन्तुः परुषस्य चैव**
**किं ते चिरं मामनुसृत्य रूक्षम् ।**
**गच्छाम्यहमद्य वनं सुपापः**
**सुखं भवान् तिष्ठतु मद्विहीनः ॥२१॥**

"मैं बड़े-बूढ़ों का अनादर करनेवाला और कठोर हूँ। तुम्हें मेरी रूखी बातों का दीर्घकाल तक अनुसरण करने की क्या आवश्यकता है। मैं पापी आज ही वन में चला जाता हूँ। तुम मुझसे अलग होकर आनन्द से रहो।

**योग्यो नृपः भीमसेनो महात्मा**
**क्लीबस्य वा मम किं राज्यकृत्यम् ।**
**न चापि शक्तः परुषाणि सोढुं**
**पुनस्तवेमानि रुषान्वितस्य ॥२२॥**

"मनस्वी भीमसेन सुयोग्य राजा है। मुझ कायर को राज्य लेने से क्या काम है? अब पुनः मुझमें तुम्हारे रोषपूर्वक कहे हुए इन कठोर वचनों को सहने की शक्ति नहीं है।"

**इत्येवमुक्त्वा सहसोत्पपात**
**राजा ततस्तच्छयनं विहाय ।**
**इयेष निर्गन्तुमथो वनाय**
**तं वासुदेवः प्रणतोऽभ्युवाच ॥२३॥**

ऐसा कहकर राजा युधिष्ठिर सहसा पलंग छोड़कर वहाँ से नीचे कूद पड़े और वन में जाने की इच्छा करने लगे। तब श्रीकृष्ण ने उनके चरणों में प्रणाम करके इस प्रकार कहा—

**राजन् विदितमेवैतत् यथा गाण्डीवधन्वनः ।**
**प्रतिज्ञा सत्यसन्धश्च गाण्डीवं प्रति विश्रुता ॥२४॥**

"राजन्! आपको यह तो विदित ही है कि गाण्डीवधारी सत्यप्रतिज्ञ अर्जुन ने गाण्डीव धनुष के विषय में कैसी प्रतिज्ञा कर रखी है। उनकी वह प्रतिज्ञा प्रसिद्ध है।

**ब्रूयाद् य एवं गाण्डीवमन्यस्मै देयमित्युत ।**
**वध्योऽस्य स पुमाँल्लोके त्वया चोक्तोऽयमीदृशम् ॥२५**

"जो अर्जुन से यह कह दे कि 'तुम्हें अपना गाण्डीव धनुष दूसरे को दे देना चाहिए, वह मनुष्य संसार में उनका वध्य है।' आपने आज अर्जुन से ऐसी ही बात कह दी है।

**ततः सत्यां प्रतिज्ञां तां पार्थेन प्रतिरक्षता ।**
**मच्छन्दादवमानोऽयं कृतस्तव महीपते ॥२६॥**

"अतः नरेश्वर! अर्जुन ने अपनी उसी सच्ची प्रतिज्ञा की रक्षा करते हुए मेरी आज्ञा से आपका यह अपमान किया है।

**तस्मात् त्वं वै महाबाहो मम पार्थस्य चोभयोः ।**
**व्यतिक्रममिमं राजन् सत्यसंरक्षणं प्रति ॥२७॥**

"इसलिए महाबाहो! राजन्! मेरे और अर्जुन दोनों के सत्य की रक्षा के लिए किये गये इस अपराध को आप क्षमा करें।

**शरणं त्वां महाराज प्रपन्नौ स्व उभावपि ।**
**क्षन्तुमर्हसि मे राजन् प्रणतस्याभियाचतः ॥२८॥**

"महाराज! हम दोनों आपकी शरण में आये हैं और मैं चरणों में गिरकर आपसे क्षमायाचना करता हूँ, आप मेरे अपराध को क्षमा करें।

**सत्यं ते प्रतिजानामि हतं विद्धयद्य सूतजम् ।**
**यस्येच्छसि वधं तस्य गतमप्यस्य जीवितम् ॥२९॥**

"मैं आपसे सच्ची प्रतिज्ञा करके कहता हूँ कि अब आप सूतपुत्र कर्ण को मरा हुआ ही समझिए। आप जिसका वध चाहते हैं, उसका जीवन समाप्त हो गया।"

**इति कृष्णवचः श्रुत्वा धर्मराजो युधिष्ठिरः ।**
**ससम्भ्रमं हृषीकेशमुत्थाप्य प्रणतं तदा ॥३०॥**
**कृताञ्जलिस्ततो वाक्यमुवाचानन्तरं वचः ।**
**एवमेव यथाऽऽत्थ त्वमस्त्येषोऽतिक्रमो मम ॥३१॥**

श्रीकृष्ण का यह वचन सुनकर धर्मराज युधिष्ठिर ने अपने पैरों में पड़े हुए हृषीकेश को वेगपूर्वक उठाकर और दोनों हाथ जोड़कर यह बात कही—"गोविन्द! आप जैसा कहते हैं, वह ठीक है। वास्तव में मुझसे यह नियम का उल्लंघन हो गया है।

**अनुनीतोऽस्मि गोविन्द तारितश्चास्मि माधव ।**
**मोचिता व्यसनाद् घोराद् वयमद्य त्वयाच्युत ॥३२॥**

"माधव! आपने अनुनय से मुझे सन्तुष्ट कर दिया और संकट के समुद्र में डूबने से बचा लिया। अच्युत! आज आपके द्वारा हम घोर विपत्ति से बच गये।

**इति महाभारते कर्णपर्वणि षोडशोऽध्यायः ॥१६॥**

# सप्तदशोऽध्यायः

## अर्जुन द्वारा कर्णवध की प्रतिज्ञा और युधिष्ठिर का आशीर्वाद

सञ्जय उवाच

**इति स्म कृष्णवचनात् प्रत्युच्चार्य युधिष्ठिरम् ।**
**बभूव विमनाः पार्थः किंचित् कृत्वेव पातकम् ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—श्रीकृष्ण के कहने से अर्जुन ने युधिष्ठिर के प्रति जो तिरस्कारपूर्ण वचन कहे थे, उनके कारण वे मन-ही-मन ऐसे उदास हो गये थे, मानो कोई पाप कर बैठे हों ।

**ततोऽब्रवीद् वासुदेवः प्रहसन्निव पाण्डवम् ।**
**कथं नाम भवेदेतद् यदि त्वं पार्थ धर्मजम् ॥२॥**
**असिना तीक्ष्णधारेण हन्या धर्मे व्यवस्थितम् ।**
**त्वमित्युक्त्वाथ राजानमेवं कश्मलमाविशः ॥३॥**

उनकी यह अवस्था देखकर श्रीकृष्ण हँसते हुए-से पाण्डुपुत्र अर्जुन से बोले—"पार्थ ! तुम तो राजा के प्रति केवल 'तू' कह देने मात्र से ही इस प्रकार शोक-सागर में डूब गये हो । फिर यदि धर्म में स्थित रहनेवाले धर्मपुत्र युधिष्ठिर को तीखी धारवाली तलवार से मार डालते, तब तुम्हारी क्या दशा होती ?

**हत्वा तु नृपतिं पार्थ अकरिष्यः किमुत्तरम् ।**
**एवं हि दुर्विदो धर्मो मन्दप्रज्ञैर्विशेषतः ॥४॥**

"पार्थ ! तुम राजा का वध करके क्या करते ? इस प्रकार धर्म का स्वरूप सभी के लिए कठिनता से जानने योग्य है, विशेषतः उन लोगों के लिए जिनकी बुद्धि मन्द है।

**स भवान् धर्मभीरुत्वाद् ध्रुवमैष्यन्महत्तमः ।**
**नरकं घोररूपं च भ्रातुर्ज्येष्ठस्य वै वधात् ॥५॥**

"धर्मभीरु होने के कारण तुम अपने बड़े भाई के वध के लिए निश्चय ही घोर नरकरूप महान् अन्धकार [दुःख] में डूब जाते ।

**स त्वं धर्मभृतां श्रेष्ठं राजानं धर्मसंहितम् ।**
**प्रसादय कुरुश्रेष्ठमेतदत्र मतं मम ॥६॥**

"इस विषय में मेरा विचार यह है कि तुम धर्मात्माओं में श्रेष्ठ, धर्मपरायण, कुरुश्रेष्ठ राजा युधिष्ठिर को प्रसन्न करो ।"

**ततोऽर्जुनो महाराज लज्जया वै समन्वितः ।**
**धर्मराजस्य चरणौ प्रपद्य शिरसा नतः ॥७॥**
**उवाच भरतश्रेष्ठं प्रसीदेति पुनः पुनः ।**
**क्षमस्व राजन् यत्प्रोक्तं धर्मकामेन भीरुणा ॥८॥**

महाराज ! श्रीकृष्ण के ऐसा कहने पर अर्जुन लज्जित हो धर्मराज के चरणों में गिरकर और मस्तक नवाकर उन भरतभूषण नरेश से बारम्बार बोले—"राजन् ! प्रसन्न होइए, प्रसन्न होइए । मैंने धर्म-पालन की इच्छा से भयभीत होकर जो अनुचित वचन कहा है, उसके लिए मुझे क्षमा कीजिए ।"

**पादयोः पतितं दृष्ट्वा धर्मराजो युधिष्ठिरः ।**
**धनञ्जयममित्रघ्नं रुदन्तं भरतर्षभ ॥९॥**
**उत्थाय भ्रातरं राजा धर्मराजो धनञ्जयम् ।**
**समाश्लिष्य च सस्नेहं प्ररुरोद महीपतिः ॥१०॥**

भरतभूषण ! धर्मराज युधिष्ठिर ने शत्रुसूदन, भाई धनञ्जय को अपने चरणों पर गिरकर रोते देख बड़े स्नेह से उठाकर हृदय से लगा लिया । फिर वे भूपाल धर्मराज भी फूट-फूटकर रोने लगे ।

**रुदित्वा सुचिरं कालं भ्रातरौ सुमहाद्युती ।**
**कृतशौचौ महाराज प्रीतिमन्तौ बभूवतुः ॥११॥**

महाराज ! वे दोनों महातेजस्वी भाई दीर्घकाल तक रोते रहे । इससे उनके मन की मैल धुल गई और वे दोनों भाई परस्पर प्रेम से भर गये ।

**तत आश्लिष्य तं प्रेम्णाब्रवीद् राजा धनञ्जयम् ।**
**कर्णेन मे महाबाहो सर्वसैन्यस्य पश्यतः ॥१२॥**
**कवचं च ध्वजं चैव धनुः शक्तिर्हयाः शराः ।**
**शरैः कृत्ता महेष्वास यतमानस्य संयुगे ॥१३॥**

तब राजा युधिष्ठिर ने धनञ्य को बड़े प्रेम से हृदय से लगाकर उनसे कहा—"महाधनुर्धर ! महाबाहो ! मैं युद्ध में यत्नपूर्वक लगा हुआ था, किन्तु कर्ण ने सारी सेना के देखते-देखते अपने बाणों द्वारा मेरे कवच, ध्वज, धनुष, शक्ति, घोड़े और बाणों के टुकड़े-टुकड़े कर डाले ।

**सोऽहं ज्ञात्वा रणे तस्य कर्म दृष्ट्वा च फाल्गुन ।**
**व्यवसीदामि दुःखेन न च मे जीवितं प्रियम् ॥१४**

"फाल्गुन ! युद्धभूमि में उसके इस कर्म को देख और समझकर मैं दुःख से पीड़ित हो रहा हूँ । मुझे अपना जीवन प्रिय नहीं लग रहा है ।

**न चेदद्य हि तं वीरं निहनिष्यसि संयुगे ।**
**प्राणानेव परित्यक्ष्ये जीवितार्थो हि को मम ॥१५॥**

"यदि आज तुम रणभूमि में कर्ण का वध नहीं करोगे तो मैं अपने प्राणों का परित्याग कर दूँगा । कर्ण का वध न हुआ तो मेरे जीवन का प्रयोजन ही क्या है ?"

अर्जुन उवाच

**सत्येन ते शपे राजन् प्रसादेन तथैव च ।**
**भीमेन च नरश्रेष्ठ यमाभ्यां च महीपते ॥१६॥**
**यथाद्य समरे कर्णं हनिष्यामि हतोऽपि वा ।**
**महीतले पतिष्यामि सत्येनायुधमालभे ॥१७॥**

**अर्जुन ने कहा**—राजन् ! नररत्न भूपाल ! मैं आपसे सत्य की, आपके कृपापूर्ण प्रसाद की, भीमसेन तथा नकुल-सहदेव की शपथ खाकर, सत्य के द्वारा अपने धनुष को छूकर कहता हूँ कि आज युद्ध में या तो कर्ण को मार डालूँगा अथवा स्वयं ही मारा जाकर पृथिवी पर गिर जाऊँगा ।

सञ्जय उवाच

**एवमाभाष्य राजानमब्रवीन्माधवं वचः ।**
**अद्य कर्णं रणे कृष्ण सूदयिष्ये न संशयः ॥१८॥**

**सञ्जय कहते हैं**—हे भारत ! राजा युधिष्ठिर से ऐसा कहकर अर्जुन ने कृष्ण से कहा—"श्रीकृष्ण ! आज युद्धभूमि में मैं कर्ण का वध करूँगा, इसमें संशय नहीं है ।"

**एवमुक्तोऽब्रवीत् पार्थं केशवो राजसत्तम ।**
**शक्तोऽसि भरतश्रेष्ठ हन्तुं कर्णं महाबलम् ॥१९॥**

नृपश्रेष्ठ ! उनके ऐसा कहने पर श्रीकृष्ण अर्जुन से बोले—"भरतभूषण ! तुम महाबली कर्ण का वध करने में समर्थ हो ।"

**भूयश्चोवाच मतिमान् माधवो धर्मनन्दनम् ।**
**युधिष्ठिरेमं बीभत्सुं त्वं सान्त्वयितुमर्हसि ॥२०॥**

फिर बुद्धिमान् कृष्ण ने धर्मपुत्र युधिष्ठिर से इस प्रकार कहा—"युधिष्ठिर ! आप अर्जुन को सान्त्वना [कर्ण-वध के लिए आशीर्वाद] प्रदान करें ।

**श्रुत्वा ह्यहमयं चैव त्वां कर्णशरपीडितम् ।**
**प्रवृत्तिं ज्ञातुमायाताविहावां पाण्डुनन्दन ॥२१॥**

"पाण्डुपुत्र ! आप कर्ण के बाणों से पीड़ित हो गये हैं—यह सुनकर मैं और अर्जुन दोनों आपका समाचार जानने के लिए यहाँ आये थे ।

**दिष्टयासि राजन् न हतो दिष्टया न ग्रहणं गतः ।**
**परिसान्त्वय बीभत्सुं जयमाशाधि चानघ ॥२२॥**

"निष्पाप नरेश ! सौभाग्य की बात है कि कर्ण द्वारा न तो आप मारे ही गये और न पकड़े ही गये । अब आप अर्जुन को सान्त्वना दें और उन्हें विजय के लिए आशीर्वाद प्रदान करें ।"

युधिष्ठिर उवाच

**एह्येहि पार्थ बीभत्सो मां परिष्वज पाण्डव ।**
**वक्तव्यमुक्तोऽस्मि हितं त्वया क्षान्तं च तन्मया ॥२३॥**

**युधिष्ठिर बोले**—पार्थ ! बीभत्सो ! आओ, आओ ! पाण्डुपुत्र ! मेरे हृदय से लग जाओ । तुमने तो मेरे प्रति कहने योग्य और हित की बात ही कही है और मैंने उसके लिए क्षमा भी कर दिया है ।

**अहं त्वामनुजानामि जहि कर्णं धनञ्जय ।**
**मन्युं च मा कृथाः पार्थ यन्मयोक्तोऽसि दारुणम् ॥२४॥**

धनञ्जय ! मैं तुम्हें आज्ञा देता हूँ, तुम कर्ण का वध करो । पार्थ ! मैंने तुमसे जो कठोर वचन कहा है, उसके लिए खेद मत करना ।

सञ्जय उवाच

**ततो धनञ्जयो राजन् शिरसा प्रणतोऽभवत् ।**
**पादौ जग्राह पाणिभ्यां भ्रातुर्ज्येष्ठस्य मारिष ॥२५॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! आर्यश्रेष्ठ ! तब धनञ्जय ने मस्तक झुकाकर प्रणाम किया और दोनों हाथों से बड़े भाई के पैर पकड़ लिये ।

**तमुत्थाय ततो राजा परिष्वज्य च पीडितम् ।**
**मूर्ध्न्युपाघ्राय चैवैनमिदं पुनरुवाच ह ॥२६॥**

तब राजा युधिष्ठिर ने मन-ही-मन पीड़ा का अनुभव करनेवाले अर्जुन को उठाकर हृदय से लगा लिया और उनका मस्तक सूँघकर पुनः इस प्रकार कहा—

**धनञ्जय महाबाहो मानितोऽस्मि दृढं त्वया ।**
**माहात्म्यं विजयं चैव भूयः प्राप्नुहि शाश्वतम् ।।२७।।**

"महाबाहु धनञ्जय ! तुमने मेरा बहुत सम्मान किया है, अतः तुम्हारी महिमा बढ़े और तुम्हें पुनः सनातन विजय प्राप्त हो।"

अर्जुन उवाच

**अद्य तं पापकर्माणं सानुबन्धं रणे शरैः ।**
**नयाम्यन्तं समासाद्य राधेयं बलगर्वितम् ।।२८।।**

**अर्जुन ने कहा**—महाराज ! आज मैं अपने बल का घमण्ड रखनेवाले उस पापाचारी राधापुत्र कर्ण को युद्धभूमि में पाकर उसके बन्धु-बान्धवोंसहित यमलोक भेज दूँगा।

**येन त्वं पीडितो बाणैर्दृढमायम्य कार्मुकम् ।**
**तस्याद्य कर्मणः कर्णः फलमाप्स्यति दारुणम् ।।२९।।**

राजन् ! जिसने धनुष को दृढ़तापूर्वक खैंचकर अपने बाणों द्वारा आपको पीड़ित किया है, वह कर्ण आज अपने उस पाप का अति दारुण फल पाएगा।

**नाहत्वा विनिर्वर्तिष्ये कर्णमद्य रणाजिरात् ।**
**इति सत्येन ते पादौ स्पृशामि जगतीपते ।।३०।।**

पृथिवीपते ! आज मैं कर्ण को मारे बिना युद्ध-भूमि से नहीं लौटूँगा। सत्य की सौगन्ध खाकर मैं आपके दोनों चरण छूता हूँ।

सञ्जय उवाच

**इति ब्रुवाणं सुमनाः किरीटिनं**
**युधिष्ठिरः प्राह वचो बृहत्तरम् ।**
**यशोऽक्षयं जीवितमीप्सितं च ते**
**प्रयाहि शीघ्रं जहि कर्णमाहवे ।।३१।।**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! ऐसी बातें कहनेवाले किरीटधारी अर्जुन से युधिष्ठिर ने प्रसन्नचित्त होकर यह महत्त्वपूर्ण बात कही—"वीर ! तुम्हें अक्षय यश, पूर्ण आयु और मनोवाञ्छित कामनाएँ प्राप्त होती रहें। तुम शीघ्र प्रयाण करो और समराङ्गण में कर्ण को मार डालो।

**इति महाभारते कर्णपर्वणि सप्तदशोऽध्यायः ।।१७।।**

# अष्टादशोऽध्यायः

## श्रीकृष्ण द्वारा अर्जुन को प्रोत्साहन, अर्जुन के वीरोचित उद्‌गार और कर्ण पर आक्रमण

सञ्जय उवाच

**प्रयातस्याथ पार्थस्य महान् स्वेदो व्यजायत ।**
**चिन्ता च विपुला जज्ञे कथं चेदं भविष्यति ।।१।।**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! युद्ध के लिए प्रस्थान करने पर कुन्तीकुमार अर्जुन के शरीर में बड़े जोर से पसीना छूटने लगा तथा मन-ही-मन भारी चिन्ता होने लगी कि यह सब कैसे होगा ?

**ततो गाण्डीवधन्वानमब्रवीन्मधुसूदनः ।**
**दृष्ट्वा पार्थं तथा यान्तं चिन्तापरिगतं तदा ।।२।।**

रथ में बैठकर उस प्रकार यात्रा करते हुए गाण्डीवधारी अर्जुन को चिन्तामग्न देखकर श्रीकृष्ण ने उनसे इस प्रकार कहा—

वासुदेव उवाच

**गाण्डीवधन्वन् संग्रामे ये त्वया धनुषा जिताः ।**
**न तेषां मनुषो जेता त्वदन्य इह विद्यते ।।३।।**

**श्रीकृष्ण बोले**—गाण्डीवधारी अर्जुन ! तुमने अपने धनुष से जिन-जिन वीरों पर विजय पायी है, उन्हें जीतनेवाला इस जगत् में तुम्हारे अतिरिक्त दूसरा कोई मनुष्य नहीं है।

**दृष्टा हि बहवः शूराः शक्रतुल्यपराक्रमाः ।**
**त्वां प्राप्य समरे शूरं ते गताः परमां गतिम् ।।४।।**

मैंने देखा है कि इन्द्र के समान पराक्रमी बहुत-से शूरवीर रणभूमि में तुझ शौर्य-सम्पन्न वीर के पास आकर परमगति को प्राप्त हो गये हैं।

**धनुर्ग्राहा हि ये केचित् क्षत्रिया युद्धदुर्मदाः ।**
**आ देवात् त्वत्समं तेषां न पश्यामि शृणोमि च ।।५।।**

यहाँ से देवलोक तक धनुष-धारण करनेवाले जितने भी क्षत्रिय हैं, उनमें से किसी को भी मैं तुम्हारे समान न तो देखता हूँ न सुनता ही हूँ।

**अवश्यं तु मया वाच्यं यत्पथ्यं तव पाण्डव ।**
**मावमंस्था महाबाहो कर्णमाहवशोभिनम् ॥६॥**

पाण्डुनन्दन ! फिर भी जो बात तुम्हारे लिए हितकर हो, उसे बता देना मैं आवश्यक समझता हूँ । महाबाहो ! संग्राम में शोभा पानेवाले कर्ण की अवहेलना मत करना ।

**कर्णो हि बलवान् दृप्तः कृतास्त्रश्च महारथः ।**
**कृती च चित्रयोधी च देशकालस्य कोविदः ॥७॥**

क्योंकि कर्ण बलवान्, अभिमानी, अस्त्रविद्या का विद्वान्, महारथी, युद्धकुशल, विचित्र रीति से युद्ध करनेवाला तथा देशकाल को समझनेवाला है ।

**त्वत्समं त्वद्विशिष्टं वा कर्णं मन्ये महारथम् ।**
**परमं यत्नमास्थाय त्वया वध्यो महाहवे ॥८॥**

मैं महारथी कर्ण को तुम्हारे समान अथवा तुमसे भी बढ़कर मानता हूँ, अतः महायुद्ध में महान् प्रयत्न करके तुम्हें उनका वध करना होगा ।

**तेजसा वह्निसदृशो वायुवेगसमो जवे ।**
**अन्तकप्रतिमः क्रोधे सिंहसंहननो बली ॥९॥**

कर्ण तेज में अग्नि के सदृश, वेग में वायु के समान, क्रोध में यमराज के तुल्य, सुदृढ़ शरीर में सिंह के सदृश तथा अत्यन्त बलवान् है ।

**सर्वयोधगुणैर्युक्तो मित्राणामभयंकरः ।**
**सततं पाण्डवद्वेषी धार्तराष्ट्रहिते रतः ॥१०॥**

उसमें योद्धाओं के सभी गुण हैं । वह अपने मित्रों को अभय देनेवाला और दुर्योधन के हित में तत्पर रहकर पाण्डवों से सदा द्वेष रखता है ।

**सर्वैरवध्यो राधेयो देवैरपि सवासवैः ।**
**ऋते त्वामिति मे बुद्धिस्तदद्य जहि सूतजम् ॥११॥**

मेरा तो ऐसा विचार है कि राधानन्दन कर्ण तुम्हें छोड़कर इन्द्रसहित सम्पूर्ण देवताओं के लिए भी अवध्य है, अतः तुम आज सूतपुत्र का वध करो ।

**आत्मानं मन्यते वीरं येन पापः सुयोधनः ।**
**तमद्य मूलं पापानां जहि सौतिं धनञ्जय ॥१२॥**

धनञ्जय ! जिसके साथ होने से पापी दुर्योधन अपने-आपको वीर मानता है, वह सूतपुत्र कर्ण ही सारे पापों की जड़ है, अतः आज तुम उसे मार डालो ।

**खड्गजिह्वं धनुरास्यं शरदंष्ट्रं तरस्विनम् ।**
**दृप्तं पुरुषशार्दूलं जहि कर्णं धनञ्जय ॥१३॥**

अर्जुन ! कर्ण पुरुषसिंह है, तलवार ही उसकी जिह्वा है, धनुष ही उसका फैला हुआ मुख है, बाण उसकी दाढ़ें हैं । वह अत्यन्त वेगशाली और अभिमानी है । तुम उसका वध करो ।

**अहं त्वामनुजानामि वीर्येण च बलेन च ।**
**जहि कर्णं रणे शूर मातङ्गमिव केसरी ॥१४॥**

जैसे सिंह मतवाले हाथी को मार डालता है, उसी प्रकार तुम भी अपने बल और पराक्रम से युद्धभूमि में शूरवीर कर्ण को मौत के घाट उतार दो । इसके लिए मैं तुम्हें आज्ञा देता हूँ ।

सञ्जय उवाच

**स केशवस्य बीभत्सुः श्रुत्वा भारत भाषितम् ।**
**विशोकः सम्प्रहृष्टश्च क्षणेन समपद्यत ॥१५॥**

**सञ्जय कहते हैं**—भरतभूषण ! श्रीकृष्ण का यह भाषण सुनकर अर्जुन एक ही क्षण में शोकरहित एवं हर्ष और उत्साह से सम्पन्न हो गये ।

**ततो ज्यामभिमृज्याशु व्याक्षिपद् गाण्डिवं धनुः ।**
**दध्रे कर्णविनाशाय केशवं चाभ्यभाषत ॥१६॥**

फिर धनुष की डोरी को साफ करके उन्होंने शीघ्र ही गाण्डीव धनुष की टंकार की और कर्ण के विनाश का दृढ़ निश्चय कर लिया । फिर वे श्रीकृष्ण से इस प्रकार बोले—

**त्वत्सहायो ह्यहं कृष्ण त्रींल्लोकान् वै समागतान् ।**
**प्रापयेयं परं लोकं किमु कर्णं महाहवे ॥१७**

"श्रीकृष्ण ! आपकी सहायता मिलने पर तो मैं युद्ध के लिए सामने आये हुए तीनों लोकों को भी यमलोक भेज सकता हूँ, फिर इस महासमर में कर्ण को जीतना कौन बड़ी बात है ?

**अद्य कृष्ण विकर्णा मे कर्णं नेष्यन्ति मृत्यवे ।**
**गाण्डीवमुक्ताः क्षिण्वन्तो मम हस्तप्रणोदिताः ॥१८॥**

"श्रीकृष्ण ! आज मेरे हाथ से प्रेरित और गाण्डीव धनुष से मुक्त हुए 'विकर्ण' नामक बाण कर्ण को क्षत-विक्षत करते हुए उसे यमलोक पहुँचा देंगे ।

**अद्याहमनुगान् कृष्ण कर्णस्य कृपणान् युधि ।**
**हन्ता ज्वलनसंकाशैः शरैः सर्पविषोपमैः ॥१९॥**

"श्रीकृष्ण ! आज मैं युद्धस्थल में कर्ण के पीछे चलनेवाले दीन-हीन सैनिकों को सर्वविष और अग्नि के समान बाणों द्वारा भस्म कर डालूँगा।"

**ततः स पुरुषव्याघ्रस्तव सैन्यमरिन्दमः ।**
**प्रविवेश महाबाहुर्मकरः सागरं यथा ॥२०॥**

तत्पश्चात् जैसे मगर समुद्र में घुस जाता है, उसी प्रकार शत्रुओं का दमन करनेवाले पुरुषसिंह महाबाहु अर्जुन ने आपकी सेना के भीतर प्रवेश किया।

**तं हृष्टास्तावका राजन् रथपत्तिसमन्विताः ।**
**गजाश्वसादिबहुलाः पाण्डवं समुपाद्रवन् ॥२१॥**

राजन् ! उस समय हर्ष में भरे हुए आपके रथियों और पैदलोंसहित हाथीसवार और घुड़सवार सैनिक जिनकी संख्या बहुत थी, पाण्डवनन्दन अर्जुन पर टूट पड़े।

**तेषामापततां तत्र शरवर्षाणि मुञ्चताम् ।**
**अर्जुनो व्यधमत् सैन्यं महावातो घनानिव ॥२२॥**

परन्तु जैसे आँधी बादलों को छिन्न-भिन्न कर देती है, उसी प्रकार अर्जुन ने बाणों की वर्षापूर्वक आक्रमण करनेवाले उन समस्त योद्धाओं का संहार कर डाला।

**तां तु सेनां भृशं विद्ध्वा द्रावयित्वार्जुनः शरैः ।**
**प्रायादभिमुखः पार्थः सूतानीकं हि मारिष ॥२३॥**

आर्य नरेश ! उस सेना को अपने बाणों से अत्यन्त घायल करके भगा देने के पश्चात् कुन्तीनन्दन अर्जुन कर्ण की सेना के समक्ष चले।

**श्रुत्वैव पार्थमायान्तं भीमसेनः प्रतापवान् ।**
**त्यक्त्वा प्राणभयं राजन् तव सेनां ममर्द ह ॥२४॥**

महाराज ! पार्थ का आना सुनते ही प्रतापी भीमसेन प्राणों का मोह छोड़कर आपकी सेना का मर्दन करने लगे।

**यतो यतः पाण्डुसुतः प्रविष्टो रथसत्तमः ।**
**ततस्ततोऽघातयत योधाञ्शतसहस्रशः ॥२५॥**

रथियों में श्रेष्ठ पाण्डुनन्दन भीमसेन जिस-जिस ओर घुसते उसी ओर सैकड़ों-हजारों योद्धाओं का संहार कर डालते।

**ते वध्यमाना भीमेन धार्तराष्ट्राः पराङ्मुखाः ।**
**कर्णमासाद्य समरे स्थिता राजन् समन्ततः ॥२६॥**

राजन् ! युद्धभूमि में भीमसेन की मार खाकर युद्ध से विमुख हुए धृतराष्ट्र के पुत्र सब ओर से कर्ण के पास पहुँचकर खड़े हो गये।

**ततः कर्णो महाराज ददाह रिपुवाहिनीम् ।**
**कक्षमिद्धो यथा वह्निर्निदाघे ज्वलितो महान् ॥२७॥**

महाराज ! जैसे ग्रीष्मकाल में अत्यन्त प्रज्वलित हुई आग सूखे काठ तथा घास-फूँस को जला देती है, उसी प्रकार कर्ण शत्रुसेना को दग्ध करने लगा।

**शिरांसि च महाराज कर्णांश्चैव सकुण्डलान् ।**
**बाहूंश्च वीरो वीराणां चिच्छेद लघु चेषुभिः ॥२८॥**

महाराज ! वीर कर्ण ने बाणों द्वारा पाण्डव-पक्ष के वीरों के मस्तक, कुण्डलसहित कान और भुजाएँ शीघ्रतापूर्वक काट डालीं।

**कृत्वा शून्यान् रथोपस्थान्वाजिपृष्ठांश्च भारत ।**
**निर्मनुष्यान् गजस्कन्धान् पादातांश्चैव विद्रुतान् ॥२९॥**

भरतभूषण ! उसने रथ की बैठकें सूनी कर दीं, घोड़ों की पीठें खाली कर दीं, हाथियों की पीठों और कन्धों पर कोई मनुष्य नहीं रहने दिया तथा पैदलों को भी मार भगाया।

**आदित्य इव मध्याह्ने दुर्निरीक्ष्यः परन्तपः ।**
**कालान्तकवपुः शूरः सूतपुत्रोऽभ्यराजत ॥३०॥**

इस प्रकार शत्रुसन्तापक कर्ण मध्याह्नकाल के सूर्य की भाँति तप रहा था। उस समय उसकी ओर देखना भी कठिन था। शूरवीर सूतपुत्र कर्ण का शरीर काल और अन्तक के समान सुशोभित हो रहा था।

**इति महाभारते कर्णपर्वणि अष्टादशोऽध्यायः ॥१८॥**

# एकोनविंशोऽध्यायः

## अर्जुन द्वारा कौरव सेना का विध्वंस

सञ्जय उवाच

**अर्जुनस्तु महाराज दृष्ट्वा कर्णं महारणे।**
**शोणितोदां महीं कृत्वा मांसमज्जास्थिपंकिलाम् ॥१॥**
**नदीं प्रवर्तयित्वा च बीभत्सुः परवीरहा।**
**वासुदेवमिदं वाक्यमब्रवीत् पुरुषर्षभः ॥२॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज ! अर्जुन ने उस महासमर में कर्ण को देखकर वहाँ रक्त की नदी बहा दी, जिसमें जल के स्थान में इस पृथिवी पर रक्त बह रहा था, मांस-मज्जा और अस्थियाँ [हड्डियाँ] कीचड़ का काम दे रही थीं। उस नदी को बहाकर शत्रुवीरों के संहारक पुरुषश्रेष्ठ अर्जुन ने वसुदेवनन्दन श्रीकृष्ण से इस प्रकार कहा—

अर्जुन उवाच

**एष केतू रणे कृष्ण सूतपुत्रस्य दृश्यते।**
**भीमसेनादयश्चैते योधयन्ति महारथम् ॥३॥**

**अर्जुन बोले**—श्रीकृष्ण ! युद्धभूमि में यह सूतपुत्र कर्ण की ध्वजा दिखाई दे रही है। ये भीमसेनादि वीर महारथी कर्ण से युद्ध कर रहे हैं।

**एते द्रवन्ति पाञ्चालाः कर्णत्रस्ता जनार्दन।**
**तत्र मे बुद्धिरुत्पन्ना वाह्यात्र महारथम् ॥४॥**

जनार्दन ! ये पाञ्चाल योद्धा कर्ण से भयभीत होकर भाग रहे हैं। यहाँ मेरा ऐसा विचार हो रहा है कि आप मेरे इस विशाल रथ को वहीं हाँक ले चलें [जहाँ कर्ण खड़ा है]।

**राधेयो ह्यन्यथा पार्थान् सृञ्जयाँश्च महारथान्।**
**निःशेषान् समरे कुर्यात् पश्यतां नौ जनार्दन ॥५॥**

जनार्दन ! अन्यथा राधानन्दन कर्ण हमारे देखते-देखते पाण्डव तथा सृञ्जय महारथियों को युद्धभूमि में निःशेष कर देगा—किसी को जीवित नहीं छोड़ेगा।

**ततः प्रायाद् रथेनाशु केशवस्तव वाहिनीम्।**
**कर्णं प्रति महेष्वासं द्वैरथे सव्यसाचिना ॥६॥**

तब श्रीकृष्ण रथ के द्वारा शीघ्र ही सव्यसाची अर्जुन के साथ कर्ण का द्वैरथ युद्ध कराने के लिए आपकी सेना में महाधनुर्धर कर्ण की ओर चले।

**तमायान्तं समीक्ष्यैव श्वेताश्वं कृष्णसारथिम्।**
**मद्रराजोऽब्रवीत् कर्णं केतं दृष्ट्वा महात्मनः ॥७॥**

श्रीकृष्ण जिनके सारथि हैं, उस श्वेतवाहन अर्जुन को आते देख और उस महात्मा की ध्वजा पर दृष्टि-पात करके मद्रराज शल्य ने कर्ण से कहा—

**अयं स रथ आयाति श्वेताश्वः कृष्णसारथिः।**
**निघ्नन्नमित्रान् समरे यं कर्ण परिपृच्छसि ॥८॥**

"कर्ण ! तुम जिसके विषय में पूछ रहे थे, वही यह श्वेत घोड़ोंवाला रथ, जिसके सारथि श्रीकृष्ण हैं, रणभूमि में शत्रुओं का संहार करता हुआ इधर ही आ रहा है।

**एष तिष्ठति कौन्तेयः संस्पृशन् गाण्डिवं धनुः।**
**तं हनिष्यसि चेदद्य तन्नः श्रेयो भविष्यति ॥९॥**

"ये कुन्तीपुत्र अर्जुन हाथ में गाण्डीव धनुष लिये हुए खड़े हैं। यदि तुम आज इन्हें मार डालोगे तो वह हम लोगों के लिए कल्याणकर होगा।

**न तं पश्यामि लोकेऽस्मिंस्त्वत्तो ह्यन्यं धनुर्धरम्।**
**अर्जुनं समरे क्रुद्धं यो वेलामिव धारयेत् ॥१०**

"कर्ण ! इस संसार में मैं तुम्हारे अतिरिक्त दूसरे किसी धनुर्धर को ऐसा नहीं समझता, जो समुद्र में उठे हुए ज्वार के समान रणक्षेत्र में कुपित हुए अर्जुन को रोक सके।

**न चास्य रक्षां पश्यामि पार्श्वतो न च पृष्ठतः।**
**एक एवाभियाति त्वां पश्य साफल्यमात्मनः ॥११॥**

"मैं देखता हूँ कि अगल-बगल अथवा पीछे की ओर से उनकी रक्षा का कोई प्रबन्ध नहीं किया गया है। वे अकेले ही तुमपर धावा कर रहे हैं, अतः देखो, तुम्हें अपनी सफलता के लिए कैसा सु-अवसर हाथ लगा है।

**त्वं हि कृष्णौ रणे शक्तः संसाधयितुमाहवे।**
**तवैव भारो राधेय प्रत्युद्याहि धनञ्जयम् ॥१२॥**

"राधानन्दन ! युद्धक्षेत्र में तुम्हीं श्रीकृष्ण और अर्जन को परास्त करने की शक्ति रखते हो, तुम्हारे

ऊपर ही यह भार रखा गया है, अतः तुम अर्जुन को रोकने के लिए आगे बढ़ो।

**समानो ह्यसि भीष्मेण द्रोणद्रौणिकृपेण च।**
**सव्यसाचिनमायान्तं निवारय महारणे ॥१३॥**

"तुम भीष्म, द्रोणाचार्य, अश्वत्थामा और कृपाचार्य के समान पराक्रमी हो, इसलिए इस महायुद्ध में आक्रमण करते हुए सव्यसाची अर्जुन को रोको।

कर्ण उवाच

**प्रकृतिस्थोऽसि मे शल्य इदानीं सम्मतस्तथा।**
**प्रतिभासि महाबाहो मा भैषीस्त्वं धनञ्जयात् ॥१४॥**

**कर्ण बोला**—शल्य! इस समय तुम अपने स्वरूप में प्रतिष्ठित हो तथा मुझसे सहमत प्रतीत होते हो। महाबाहो! तुम अर्जुन से डरो मत।

**पश्य बाह्वोर्बलं मेऽद्य शिक्षितस्य च पश्य मे।**
**एकोऽद्य निहनिष्यामि पाण्डवानां महाचमूम् ॥१५॥**

आज तुम मेरी इन दोनों भुजाओं का बल देखो और मेरी शिक्षा की शक्ति पर भी दृष्टिपात करो। आज मैं अकेला ही पाण्डवों की विशाल सेना का संहार कर डालूंगा।

**कृष्णौ च पुरुषव्याघ्र ततः सत्यं ब्रवीमि ते।**
**नाहत्वा युधि तौ वीरौ व्यपयास्ये कथञ्चन ॥१६॥**

पुरुषसिंह! तुमसे सच्ची बात कहता हूँ कि रणभूमि में उन दोनों वीरों [श्रीकृष्ण और अर्जुन] का वध किये बिना मैं किसी भी प्रकार पीछे नहीं हटूंगा।

**स्वप्स्ये वा निहतस्ताभ्यामनित्यो हि रणे जयः।**
**कृतार्थोऽद्य भविष्यामि हत्वा वाप्यथवा हतः ॥१७**

अथवा उन्हीं दोनों के हाथों मारा जाकर सदा के लिए सो जाऊँगा, क्योंकि रण में विजय अनिश्चित होती है। आज मैं उन दोनों को मारकर अथवा उनके द्वारा मारा जाकर सर्वथा कृतार्थ हो जाऊँगा।

सञ्जय उवाच

**तं प्रयान्तं महावेगैरश्वैः कपिवरध्वजम्।**
**युद्धायाभ्यद्रवन् वीराः कुरूणां नवती रथाः ॥१८॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! [उधर शल्य और कर्ण में इस प्रकार वार्तालाप हो ही रहा था, इधर] जिनकी ध्वजा में श्रेष्ठ वानर का चिह्न है, उन वीर अर्जुन को महावेगशाली अश्वों द्वारा आगे बढ़ते देख कौरव-दल के नव्वे वीर रथियों ने युद्ध के लिए उनपर आक्रमण किया।

**कृत्वा संशप्तका घोरं शपथं पारलौकिकम्।**
**परिववुर्नरव्याघ्रा नरव्याघ्रं रणेऽर्जुनम् ॥१९॥**

उन नरव्याघ्र संशप्तक वीरों ने परलोक-सम्बन्धी घोर शपथ खाकर पुरुषसिंह अर्जुन को रणभूमि में चारों ओर से घेर लिया।

**त्वरमाणाँस्तु तान् सर्वान् ससूतेष्वसनध्वजान्।**
**जघान नवतिं वीरानर्जुनो निशितैः शरैः ॥२०॥**

तब सारथि, धनुष और ध्वजसहित उतावली के साथ आक्रमण करनेवाले उन सभी नव्वे वीरों को अर्जुन ने अपने पैने बाणों द्वारा मार गिराया।

**ततः सरथनागाश्वाः कुरवः कुरुसत्तमम्।**
**निर्भया भरतश्रेष्ठमभ्यवर्तन्त फाल्गुनम् ॥२१॥**

उन नव्वे वीरों के धराशायी हो जाने पर रथ, हाथी और घोड़ोंसहित बहुत-से कौरव वीर निर्भय हो भरतभूषण कुरुश्रेष्ठ अर्जुन का सामना करने के लिए चढ़ आये।

**कर्णिनालीकनाराचैस्तोमरप्रासशक्तिभिः।**
**मुसलैर्भिन्दिपालैश्च रथस्थं पार्थमार्दयन् ॥२२॥**

उन्होंने रथ पर बैठे हुए अर्जुन को कर्णी, नालीक, नाराच, तोमर, मुसल, प्रास, भिन्दिपाल और शक्तियों द्वारा गहरी चोट पहुँचाई।

**ततो गाण्डीवनिर्घोषो महानासीद् विशाम्पते।**
**स्तनतां कूजतां चैव मनुष्यगजवाजिनाम् ॥२३॥**

प्रजेश्वर! फिर तो गाण्डीव धनुष की टंकार वहाँ बड़े जोर-जोर से सुनाई देने लगी। साथ ही चिंघाड़ते और आर्तनाद करते हुए हाथियों, मनुष्यों और घोड़ों की ध्वनि भी वहाँ गूँज उठी।

**कुञ्जराश्च हता राजन् दुद्रुवुस्ते समन्ततः।**
**अश्वाश्च पर्यधावन्त हतारोहा दिशो दश ॥२४॥**

राजन्! उस समय घायल हाथी सब ओर भागने लगे। जिनके सवार मार दिये गये थे, वे घोड़े भी दसों दिशाओं में दौड़ लगाने लगे।

**रथा हीना महाराज रथिभिर्वाजिभिस्तथा।**
**गन्धर्वनगराकारा दृश्यन्ते स्म सहस्रशः ॥२५॥**

हे महाराज ! गन्धर्वनगरों के समान सहस्रों विशाल रथ रथियों और घोड़ों से हीन दिखाई देने लगे।

**तस्मिन् क्षणे पाण्डवस्य बाह्वोर्बलमदृश्यत।**
**यत् सादिनो वारणांश्च रथांश्चैकोऽजयद् युधि॥२६॥**

राजन् ! उस समय पाण्डुनन्दन अर्जुन की भुजाओं का बल देखा गया, उन्होंने अकेले ही युद्ध में रथों, सवारों और हाथियों को भी परास्त कर दिया।

**दृष्ट्वा परिवृतं राजन् भीमसेनः किरीटिनम्।**
**जवेनाभ्यद्रवच्छीघ्रं धनञ्जयरथं प्रति॥२७॥**

राजन् ! अर्जुन को चारों ओर से घिरा हुआ देखकर भीमसेन उतावली के साथ बड़े वेग से धनञ्जय के रथ की ओर दौड़े।

**गदापाणिं ततो भीमं दृष्ट्वा भारत तावकाः।**
**मेनिरे समनुप्राप्तं कालदण्डोद्यतं यमम्॥२८॥**

हे भारत ! भीमसेन को गदा हाथ में लिये देख आपके सैनिक उसे कालदण्ड लेकर आया हुआ यमराज ही मानने लगे।

**ततः पराङ्मुखप्रायं निरुत्साहं बलं तव।**
**व्यालम्बत महाराज प्रायशः शस्त्रवेष्टितम्॥२९॥**

महाराज ! उस समय भीमसेन और अर्जुन के अस्त्र-शस्त्रों से घिरी हुई आपकी अधिकांश सेना उत्साहशून्य, युद्ध-विमुख और जड़वत् हो गई।

**विलम्बमानं तत् सैन्यमप्रगल्भमवस्थितम्।**
**दृष्ट्वा प्राच्छादयद् बाणैरर्जुनः प्राणतापनैः॥३०॥**

उस सेना को जड़वत् एवं उद्योगशून्य हुई देख अर्जुन ने उसे प्राणों को सन्तप्त कर देनेवाले बाणों द्वारा आच्छादित कर दिया।

**तं दृष्ट्वा कुरवस्तत्र विक्रान्तं सव्यसाचिनम्।**
**निराशा समपद्यन्त सर्वे कर्णस्य जीविते॥३१॥**

सव्यसाची अर्जुन को इस प्रकार पराक्रम प्रकट करते देख समस्त कौरव सैनिक कर्ण के जीवन से निराश हो गये।

**अविषह्यं तु पार्थस्य शरसम्पातमाहवे।**
**मत्वा न्यवर्तन् कुरवो जिता गाण्डीवधन्वना॥३२॥**

गाण्डीवधारी अर्जुन के द्वारा परास्त हुए कौरव योद्धा रणभूमि में उनकी बाणवर्षा को अपने लिए असह्य मानकर युद्ध से पीछे हटने लगे।

**प्रद्रुतान्तान्कुरून्दृष्ट्वा कर्णः शस्त्रभृतां वरः।**
**संचिन्तयित्वा पार्थस्य वधे दध्रे मनः श्वसन्॥३३॥**

शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ कर्ण ने कौरव-सैनिकों को भागते देख खूब सोच-विचारकर लम्बी साँस लेते हुए मन-ही-मन अर्जुन के वध का निश्चय किया।

**विस्फार्य सुमहच्चापं ततश्चाधिरथिर्वृषः।**
**पाञ्चालान् पुनराधावत् पश्यतः सव्यसाचिनः॥३४॥**

तब धर्मात्मा सूतपुत्र कर्ण ने अपने विशाल धनुष को खींचकर अर्जुन के देखते-देखते पुनः पाञ्चाल योद्धाओं पर धावा किया।

**ततः क्षणेन क्षितिपाः क्षतजप्रतिमेक्षणाः।**
**कर्णं ववर्षुर्बाणौघैर्यथा मेघा महीधरम्॥३५॥**

यह देख पाञ्चालनरेशों के नेत्र क्रोध से लाल हो गये। जैसे बादल पर्वत पर पानी बरसाते हैं, वैसे ही वे भी क्षणभर में कर्ण पर बाणसमूहों की वर्षा करने लगे।

**ततः शरसहस्राणि कर्णमुक्तानि मारिष।**
**व्ययोजयन्त पाञ्चालान् प्राणैः प्राणभृतां वर॥३६॥**

प्राणधारियों में श्रेष्ठ माननीय नरेश ! तब कर्ण के छोड़े हुए सहस्रों बाण पाञ्चालों को प्राणहीन करने लगे।

**इति महाभारते कर्णपर्वणि एकोनविंशोऽध्यायः॥१९॥**

# विंशोऽध्यायः

## भीमसेन द्वारा दुःशासन का रक्तपान और उसका वध

सञ्जय उवाच

**तथागते भीममभीस्तवात्मजः**
**ससार राजावरजः किरञ्शरैः ।**
**तमभ्यधावत् त्वरितो वृकोदरो**
**महारुरुं सिंह इवाभिपेदिवान् ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! इस प्रकार जब वह भयंकर युद्ध चल रहा था, उसी समय राजा दुर्योधन का छोटा भाई आपका पुत्र दुःशासन निर्भय हो बाणों की वर्षा करता हुआ भीमसेन पर चढ़ आया । उसे देखते ही भीमसेन भी बड़ी उतावली के साथ उसकी ओर दौड़े और जिस प्रकार सिंह महारुरु नामक मृग पर आक्रमण करता है, उसी प्रकार उसके पास जा पहुँचे ।

**ततस्तयोर्युद्धमतीव दारुणं**
**प्रदीव्यतोः प्राणदुरोदरं द्वयोः ।**
**परस्परेणाभिनिविष्टरोषयो-**
**रुदग्रयोः शम्बरशक्रयोर्यथा ॥२॥**

उन दोनों के मन में एक-दूसरे के प्रति महान् रोष भरा हुआ था । दोनों ही प्राणों की बाजी लगाकर अति भयंकर युद्ध का जुआ खेल रहे थे । उन प्रचण्ड शूरवीरों का वह युद्ध शम्बरासुर और इन्द्र के समान हो रहा था ।

**क्रुद्धस्ततो भीमसेनस्तरस्वी**
**शक्तिं चोग्रां प्राहिणोत् ते सुताय ।**
**आकर्णपूर्णैरिषुभिर्महात्मा**
**चिच्छेद पुत्रो दशभिः पृषत्कैः ॥३॥**

युद्ध करते हुए क्रोध में भरे वेगशाली भीमसेन ने आपके पुत्र पर एक भयंकर शक्ति छोड़ी, परन्तु आपके महामनस्वी पुत्र दुःशासन ने कान तक खींचकर छोड़े हुए दस बाणों द्वारा उसे काट गिराया ।

**अथाशु भीमं च शरेण भूयो**
**गाढं स विव्याध सुतस्त्वदीयः ।**
**चुक्रोध भीमः पुनराशु तस्मै**
**भृशं प्रजज्वाल रुषाभिवीक्ष्य ॥४॥**

तत्पश्चात् आपके पुत्र ने तुरन्त एक बाण मारकर भीमसेन को गहरी चोट पहुँचायी । इससे भीम को बड़ा क्रोध आया । वे उसकी ओर देखकर तुरन्त क्रोध से प्रज्वलित हो उठे ।

**विद्धोऽस्मि वीराशु भृशं त्वयाद्य**
**सहस्व भूयोऽपि गदाप्रहारम् ।**
**उक्त्वैवमुच्चैः कुपितोऽथ भीमो**
**जग्राह तां भीमगदां वधाय ॥५॥**

"वीर ! तूने आज मुझे शीघ्रतापूर्वक बाण मारकर अत्यन्त घायल कर दिया, परन्तु स्वयं भी मेरी गदा का प्रहार सहन कर"—उच्च स्वर से ऐसा कहकर कुपित हुए भीमसेन ने दुःशासन के वध के लिए एक भयंकर गदा हाथ में ले ली ।

**उवाच चाद्याहमहं दुरात्मन्**
**पास्यामि ते शोणितमाजिमध्ये ।**
**अथैवमुक्तस्तनयस्तवोग्रां**
**शक्तिं वेगात् प्राहिणोन्मृत्युरूपाम् ॥६॥**

फिर वे इस प्रकार बोले—"दुरात्मन् ! आज इस संग्राम में मैं तेरा रक्तपान करूँगा ।" भीमसेन के ऐसा कहते ही आपके पुत्र ने उनपर बड़े वेग से एक भयंकर शक्ति चलाई, जो मृत्युरूप जान पड़ती थी ।

**आविध्य भीमोऽपि गदां सुघोरां**
**विचिक्षिपे रोषपरीतमूर्तिः ।**
**सा तस्य शक्तिं सहसा विरुज्य**
**प्राताडयत्तं समरे सुमूर्ध्नि ॥७॥**

इधर रोष में भरे हुए भीमसेन ने भी अपनी अत्यन्त घोर गदा घुमाकर फेंकी । वह गदा युद्धभूमि में दुःशासन की उस शक्ति को खण्ड-खण्ड करती हुई सहसा उसके मस्तक में जा लगी ।

**तया हतः पतितो वेपमानो**
**दुःशासनो गदया वेगवत्या ।**
**विध्वस्तवर्माभरणाम्बरस्रग्**
**विचेष्टमानोऽतिवेदनातुरः ॥८॥**

दुःशासन उस वेगवती गदा के आघात से धरती पर गिरकर काँपने और अत्यन्त वेदना से व्याकुल हो छटपटाने लगा। उसका कवच टूट गया, आभूषण और हार बिखर गये तथा कपड़े फट गये थे।

**भीमोऽपि वेगादवतीर्य यानाद्**
**दुःशासनं वेगवानभ्यधावत्।**
**ततः स्मरन् भीमसेनस्तरस्वी**
**सापत्नकं यच्च कृतं सुतैस्ते ॥९॥**

फिर भीमसेन भी शीघ्रतापूर्वक रथ से उतरकर बड़े वेग से दुःशासन की ओर दौड़े। उस समय वेगशाली भीमसेन को आपके पुत्रों द्वारा किये गये शत्रुतापूर्ण दुर्व्यवहार स्मरण आने लगे थे।

**स्मृत्वाथ केशग्रहणं च देव्या**
**वस्त्रापहारं च रजस्वलायाः।**
**जज्वाल क्रोधादथ भीमसेन**
**आज्यप्रसिक्तो हि यथा हुताशः ॥१०॥**

दुःशासन द्वारा द्रौपदी के केश पकड़ना और भरी सभा में उस रजस्वला के वस्त्रों को खींचने की बात स्मरण करके भीमसेन घृत-आहुति से प्रज्वलित हुई अग्नि के समान क्रोध से जल उठे।

**तत्राह कर्णं च सुयोधनं च**
**द्रौणिं कृपं कृतवर्माणमेव।**
**निहन्मि दुःशासनमद्य पापं**
**संरक्ष्यतामद्य समस्तयोधाः ॥११॥**

उन्होंने वहाँ कर्ण, दुर्योधन, कृपाचार्य, अश्वत्थामा और कृतवर्मा को सम्बोधित करके कहा—"आज मैं पापी दुःशासन को मार डालता हूँ। तुम समस्त योद्धा मिलकर उसकी रक्षा कर सकते हो तो करो।

**तथा तु विक्रम्य रणे स भीमः**
**महागजं केसरिको यथैव।**
**निगृह्य दुःशासनमेकवीरः**
**सुयोधनस्याधिरथेः समक्षम् ॥१२॥**

उन्होंने युद्ध में पराक्रम द्वारा दुर्योधन एवं कर्ण के सामने ही दुःशासन को उसी प्रकार धर दबाया, जैसे सिंह किसी विशाल हाथी पर आक्रमण कर रहा हो।

**असिं समुद्यम्य सितं सुधारं**
**कण्ठे पदाऽऽक्रम्य च वेपमानम्।**
**उवाच तद्गौरिति यद् ब्रुवाणो**
**हृष्टो वदेः कर्णसुयोधनाभ्याम् ॥१३॥**
**ये राजसूयावभृथे पवित्रा**
**जाताः कचा याज्ञसेन्या दुरात्मन्।**
**ते पाणिना कतरेणावकृष्टा-**
**स्तद् ब्रूहि त्वां पृच्छति भीमसेनः ॥१४॥**

उन्होंने उत्तम धारवाली श्वेत तलवार उठा ली और उसके गले पर लात मारी। उस समय दुःशासन थर-थर काँप रहा था। वे उससे इस प्रकार बोले—"दुरात्मन्! स्मरण है न वह दिन, जब तुमने कर्ण और दुर्योधन के साथ बड़े हर्ष में भरकर मुझे 'बैल' कहा था। राजसूय यज्ञ में अवभृथ स्नान से पवित्र हुए महारानी द्रौपदी के केश तूने किस हाथ से खींचे थे? बता, आज भीमसेन तुझसे यह पूछता और इसका उत्तर चाहता है।"

**श्रुत्वा तु तद् भीमवचः सुघोरं**
**दुःशासनो भीमसेनं निरीक्ष्य।**
**उक्तस्तदाऽऽजौ स तथा सरोषं**
**जगाद भीमं परिवर्तनेत्रः ॥१५॥**

भीमसेन का यह अत्यन्त भयंकर वचन सुनकर दुःशासन ने उनकी ओर देखा। युद्धस्थल में उनके वैसा कहने पर उसकी त्यौरी बदल गई थी, अतः वह रोषपूर्वक बोला—

**अयं करिकराकारः क्षत्रियान्तकरः करः।**
**अनेन याज्ञसेन्या मे भीम केशा विकर्षिताः ॥१६॥**

"भीमसेन! यह है हाथी की सूँड के समान मोटा मेरा हाथ जो क्षत्रियों का नाश करनेवाला है। इसी हाथ से मैंने द्रौपदी के केश खींचे थे।

**एवं त्वसौ राजसुतं निशम्य**
**ब्रुवन्तमाजौ विनिपीड्य वक्षः।**
**भीमो बलात्तं प्रतिगृह्य दोर्भ्या-**
**मुच्चैर्ननादथ समस्तयोधान् ॥१७॥**
**उवाच यस्यास्ति बलं स रक्ष-**
**त्वसौ भवेदद्य निरस्तबाहुः।**
**दुःशासनं जीवितं प्रोत्सृजन्त-**
**माक्षिप्य योधाँस्तरसा महाबलः ॥१८॥**
**एवं क्रुद्धो भीमसेनः करेण**
**उत्पाटयामास भुजं महात्मा।**

**दुःशासनं तेन स वीरमध्ये**
**जघान वज्राशनिसंनिभेन ॥१९॥**

रणभूमि में ऐसी बात कहते हुए राजकुमार दुःशासन की छाती पर चढ़कर भीमसेन ने उसे दोनों हाथों से बलपूर्वक पकड़ लिया और उच्च स्वर से सिंहनाद करते हुए समस्त योद्धाओं से कहा—"आज दुःशासन की भुजा उखाड़ी जा रही है। यह अब अपने प्राणों को त्यागना ही चाहता है। जिसमें बल हो, वह आकर इसे मेरे हाथ से बचा ले।" इस प्रकार समस्त योद्धाओं को ललकारकर महाबली, महामनस्वी क्रुद्ध भीमसेन ने एक ही हाथ से वेगपूर्वक दुःशासन की बाँह उखाड़ ली। उसकी वह बाँह वज्र के समान कठोर थी। भीमसेन समस्त योद्धाओं के मध्य उसी के द्वारा उसे पीटने लगे।

**उत्कृत्य वक्षः पतितस्य भूमा-**
**वथापिबच्छोणितमस्य कोष्णम्।**
**ततो निपात्यास्य शिरोऽपकृत्य**
**तेनासिना तव पुत्रस्य राजन् ॥२०॥**
**सत्यां चिकीर्षुर्मतिमान् प्रतिज्ञां**
**भीमोऽपिबच्छोणितमस्य कोष्णम्।**
**आस्वाद्य चास्वाद्य च वीक्षमाणः**
**क्रुद्धो हि चैनं निजगाद वाक्यम् ॥२१॥**

तत्पश्चत् भीमसेन धरती पर पड़े हुए दुःशासन की छाती फाड़कर उसका गर्म-गर्म रक्त पीने का उपक्रम करने लगे। राजन्! उठने का प्रयत्न करते हुए दुःशासन को पुनः गिराकर बुद्धिमान् भीमसेन ने अपनी प्रतिज्ञा सत्य करने के लिए तलवार से आपके पुत्र का मस्तक काट डाला और उसके कुछ-कुछ गर्म रक्त को वे स्वाद ले-लेकर पीने लगे। फिर क्रोध में भरकर उसकी ओर देखते हुए इस प्रकार बोले—

**स्तन्यस्य मातुर्मधुसर्पिषोर्वा**
**माध्वीकपानस्य च सत्कृतस्य।**
**दिव्यस्य वा तोयरसस्य पानात्**
**पयोदधिभ्यां मथिताच्च मुख्यात् ॥२२॥**
**अन्यानि पानानि च यानि लोके**
**सुधामृतस्वादुरसानि तेभ्यः।**
**सर्वेभ्य एवाभ्यधिको रसोऽयं**
**ममाद्य चास्याहितलोहितस्य ॥२३॥**

मैंने माता के दूध का, मधु और घी का, अच्छी प्रकार तैयार किये हुए मधूक पुष्पनिर्मित पेय पदार्थ का, दिव्य जल के रस का, दूध और दही से बिलोये हुए ताजा मक्खन का भी पान या रसास्वादन किया है, इन सबसे तथा इनके अतिरिक्त भी संसार में जो अमृत के समान स्वादिष्ट पीने योग्य पदार्थ हैं, उन सबसे भी मेरे इस शत्रु के रक्त का स्वाद अधिक है।

**ये भीमसेनं ददृशुस्तदानीं**
**दौःशासनं तद् रुधिरं पिबन्तम्।**
**सर्वेऽपलायन्त भयाभिपन्ना**
**न वै मनुष्योऽयमिति ब्रुवाणाः ॥२४॥**

उस समय जिन लोगों ने भीमसेन को दुःशासन का रक्तपान करते देखा, वे सभी भयभीत हो यह कहते हुए सब ओर भागने लगे कि "यह मनुष्य नहीं राक्षस है।"

**भीमोऽपि हत्वा तत्रैव दुःशासनममर्षणम्।**
**शृण्वतां लोकवीराणामिदं वचनमब्रवीत् ॥२५॥**

इधर भीमसेन भी अमर्ष में भरे हुए दुःशासन का वध करके विश्वविख्यात वीरों के वचन सुनते हुए इस प्रकार बोले—

**दुःशासने यद् रणे संश्रुतं मे**
**तद् वै सत्यं कृतमद्येह वीराः।**
**अत्रैव दास्याम्यपरं द्वितीयं**
**दुर्योधनं यज्ञपशं विशस्य ॥२६॥**
**शिरो मृदित्वा च पदा दुरात्मनः**
**शान्ति लप्स्ये कौरवाणां समक्षम्।**
**एतावदुक्त्वा वचनं प्रहृष्टो**
**ननाद चोच्चै रुधिरार्द्रगात्रः ॥२७॥**

"वीरो! दुःशासन के विषय में मैंने जो प्रतिज्ञा की थी, उसे आज यहाँ युद्धभूमि में सत्य कर दिखाया है। यहीं दूसरे यज्ञपशु दुर्योधन को काटकर उसकी बलि प्रदान करूँगा और समस्त कौरवों की आँखों के सामने उस दुरात्मा के मस्तक को पैर से कुचलकर शान्ति प्राप्त करूँगा।" ऐसा कहकर रक्त से लथपथ शरीरवाले प्रसन्नचित्त भीमसेन उच्च स्वर से गर्जना और सिंहनाद करने लगे।

**इति महाभारते कर्णपर्वणि विंशोऽध्यायः ॥२०॥**

# एकविंशोऽध्यायः

**कर्ण का भय, शल्य का उसे आश्वासन देना, नकुल और वृषसेन का युद्ध तथा अर्जुन द्वारा उसका वध**

सञ्जय उवाच

**दुःशासने तु निहते पुत्रास्तवापलायिनः ।**
**दश राजन् महावीर्या भीमं प्राच्छादयञ्शरैः ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! दुःशासन के मारे जाने पर युद्ध से कभी पीठ न दिखानेवाले आपके दस महापराक्रमी पुत्रों ने आकर भीमसेन को अपने बाणों द्वारा ढक दिया ।

**तांस्तु भल्लैर्महावेगैर्दशभिर्दश भारतान् ।**
**रुक्माङ्गदान् रुक्मपुंखैः पार्थो निन्ये यमक्षयम् ॥२॥**

फिर तो कुन्तीकुमार भीमसेन ने सोने के पंखवाले महान् वेगशाली दस भल्लों द्वारा सुवर्णमय अङ्गदों से विभूषित उन दसों भरतवंशी राजकुमारों को यमलोक पठा दिया ।

**हतेषु तेषु वीरेषु प्रदुद्राव बलं तव ।**
**पश्यतः सूतपुत्रस्य पाण्डवस्य भयार्दितम् ॥३॥**

उन वीरों के मारे जाने पर पाण्डुपुत्र भीमसेन के भय से पीड़ित हो आपकी सारी सेना सूतपुत्र के देखते-देखते भाग खड़ी हुई ।

**ततः कर्णं महाराज प्रविवेश महद् भयम् ।**
**दृष्ट्वा भीमस्य विक्रान्तमन्तकस्य प्रजास्विव ॥४॥**

महाराज! जैसे प्रजावर्ग पर यमराज का बल काम करता है, उसी प्रकार भीमसेन का वह पराक्रम देखकर कर्ण के मन में महान् भय समा गया ।

**तस्य त्वाकारभावज्ञः शल्यः समितिशोभनः ।**
**उवाच वचनं कर्णं प्राप्तकालमरिन्दमम् ॥५॥**

युद्ध में शोभा पानेवाले शल्य कर्ण की आकृति देखकर ही उसके मन के भाव को ताड़ गये, अतः वे शत्रुदमन कर्ण से यह समयोचित वचन बोले—

**मा व्यथां कुरु राधेय नैवं त्वय्युपपद्यते ।**
**क्षत्रधर्मं पुरस्कृत्य प्रत्युद्याहि धनञ्जयम् ॥६॥**

"राधानन्दन! तुम खेद मत करो, तुम्हें यह शोभा नहीं देता। तुम क्षत्रियधर्म को सामने रखते हुए अर्जुन पर चढ़ाई करो ।

**भारो हि धार्तराष्ट्रेण त्वयि सर्वः समाहितः ।**
**तमुद्वह महाबाहो यथाशक्ति यथाबलम् ।**
**जये स्याद् विपुला कीर्तिर्ध्रुवः स्वर्गः पराजये ॥७॥**

"महाबाहो! धृतराष्ट्रपुत्र दुर्योधन ने सारा भार तुम्हीं पर रख छोड़ा है। तुम अपने बल और शक्ति के अनुसार उस भार का वहन करो। यदि विजय हुई तो तुम्हारी बड़ी कीर्ति फैलेगी और पराजय होने पर अक्षय स्वर्ग की प्राप्ति निश्चित है ।

**वृषसेनश्च राधेय संक्रुद्धस्तनयस्तव ।**
**त्वयि मोहं समापन्ने पाण्डवानभिधावति ॥८॥**

"राधानन्दन! तुम्हारे मोहग्रस्त हो जाने के कारण तुम्हारा पुत्र वृषसेन अत्यन्त क्रुद्ध होकर पाण्डवों पर आक्रमण कर रहा है।"

**एतत् श्रुत्वा तु वचनं शल्यस्यामिततेजसः ।**
**हृदि चावश्यकं भावं चक्रे युद्धाय सुस्थिरम् ॥९॥**

अमित तेजस्वी शल्य की यह बात सुनकर कर्ण ने अपने हृदय में युद्ध के लिए आवश्यक भाव [उत्साह, अमर्ष आदि] को दृढ़ किया ।

**ततः क्रुद्धो वृषसेनोऽभ्यधाव-**
**दवस्थितं प्रमुखे पाण्डवं तम् ।**
**वृकोदरं कालमिवात्तदण्डं**
**गदाहस्तं योधयन्तं त्वदीयान् ॥१०॥**

उधर क्रोध में भरे हुए वृषसेन ने सामने खड़े हुए पाण्डुपुत्र भीमसेन पर धावा किया, जो दण्डधारी काल के समान हाथ में गदा लिये आपके सैनिकों के साथ युद्ध कर रहा था ।

**तमभ्यधावन्नकुलः प्रवीरो**
**रोषादमित्रं प्रतुदन् पृषत्कैः ।**
**कर्णस्य पुत्रं समरे प्रहृष्टं**
**पुरा जिघांसुर्मघवेव जम्भम् ॥११॥**

यह देख प्रमुख वीर नकुल ने अपने शत्रु कर्णपुत्र वृषसेन को, जो रणभूमि में अति हर्ष के साथ युद्ध कर रहा था, बाणों द्वारा पीड़ित करते हुए उसपर रोषपूर्वक आक्रमण किया। ठीक वैसे ही, जैसे प्राचीन काल में इन्द्र ने 'जम्भ' पर चढ़ाई की थी ।

**तमापतन्तं नकुलं प्रपत्य**
**शरैः समन्तात्तमभिप्रविध्यत् ।**
**स तुद्यमानो नकुलः पृषत्कैर्**
**विव्याध वीरं स चुकोप विद्धः ॥१२॥**

अपने ऊपर आक्रमण करनेवाले नकुल के पास पहुँचकर वृषसेन ने अपने सायकों द्वारा उन्हें सब ओर से बींध डाला। बाणों से पीड़ित हुए नकुल अत्यन्त कुपित हो उठे और स्वयं घायल होने पर उन्होंने वीर वृषसेन को भी बींध डाला।

**ततः किरीटी परवीरघाती**
**हताश्वमालोक्य नरप्रवीरः ।**
**माद्रीसुतं नकुलं लोकमध्ये**
**समभ्यधावद् वृषसेनमाजौ ॥१३॥**

उधर शत्रुवीरों का संहार करनेवाले मानवलोक के प्रमुख वीर किरीटधारी अर्जुन ने समस्त सेनाओं के बीच रणभूमि में माद्रीकुमार नकुल के घोड़ों को वृषसेन द्वारा मारा गया देख उसपर धावा किया।

**तमापतन्तं नरवीरमुत्तमं**
**महाहवे बाणसहस्रधारिणम् ।**
**अभ्यापतत् कर्णसुतो महारथं**
**यथा महेन्द्रं नमुचिः पुरा तथा ॥१४॥**

महायुद्ध में सहस्रों बाणों को धारण करनेवाले सर्वोत्तम नरवीर महारथी अर्जुन को अपनी ओर आते देख कर्णपुत्र वृषसेन भी उनकी ओर उसी प्रकार दौड़ा, जैसे पूर्वकाल में नमुचि ने देवराज इन्द्र पर आक्रमण किया था।

**ततो द्रुतं चैकशरेण पार्थं**
**शितेन विद्ध्वा युधि कर्णपुत्रः ।**
**ननाद नादं सुमहानुभावो**
**विद्ध्वेव शक्रं नमुचिः प्रवीरः ॥१५॥**

फिर महानुभाव कर्णपुत्र वीर वृषसेन रणभूमि में कुन्तीनन्दन अर्जुन को तुरन्त ही एक तीखे तीर से घायल करके बड़े जोर-जोर से गर्जना करने लगा। ठीक वैसे ही, जैसे नमुचि ने इन्द्र को बींधकर सिंहनाद किया था।

**ततः किरीटी रणमूर्ध्नि कोपात्**
**कृत्वा त्रिशाखां भ्रुकुटिं ललाटे ।**
**मुमोच तूर्णं विशिखान् महात्मा**
**उवाच कर्णं भृशमुत्स्मयंश्च ॥१६॥**
**दुर्योधनं द्रौणिमुखांश्च सर्वा-**
**नहं रणे वृषसेनं तमुग्रम् ।**
**सम्पश्यतः कर्ण तवाद्य संख्ये**
**नयामि लोकं निशितैः पृषत्कैः ॥१७॥**

तब किरीटधारी महात्मा अर्जुन ने युद्धस्थल में अपने ललाट में स्थित भौंहों को क्रोधपूर्वक तीन स्थानों से टेढ़ी करके शीघ्रतापूर्वक वृषसेन पर बाणों का प्रहार किया। उस समय उन्होंने मुस्कराते हुए वहाँ कर्ण, दुर्योधन और अश्वत्थामा आदि सब वीरों को लक्ष्य करके कहा—"कर्ण ! आज रणभूमि में मैं तुम्हारे देखते-देखते इस उग्रपराक्रमी वीर वृषसेन को अपने पैने बाणों द्वारा यमलोक भेज रहा हूँ।

**ऊनं च तावद्धि जना वदन्ति**
**हतो भवद्भिर्मम वीरपुत्रः ।**
**एको रथो मद्विहीनस्तरस्वी**
**अहं हनिष्ये भवतां समक्षम् ॥१८॥**

"मेरा वेगशाली वीर पुत्र महारथी अभिमन्यु अकेला था। मैं उसके साथ नहीं था। उस अवस्था में तुम सब लोगों ने मिलकर उसका वध किया था। तुम्हारे उस कर्म को सब लोग खोटा बताते हैं, परन्तु आज मैं तुम सब लोगों के सामने वृषसेन का वध करूँगा।"

**स एवमुक्त्वा विनिमृज्य चापं**
**लक्ष्यं हि कृत्वा वृषसेनमाजौ ।**
**ससर्ज बाणान् विशिखान् महात्मा**
**हन्तुं नृप कर्णसुतञ्च संख्ये ॥१९॥**

राजन् ! ऐसा कहकर महात्मा अर्जुन ने अपने धनुष को पोंछा और कर्णपुत्र वृषसेन का वध करने के लिए युद्ध में उसी को लक्ष्य बनाकर बाणों का प्रहार किया।

**विव्याध चैनं दशभिः पृषत्कैर्**
**मर्मस्वशङ्कं प्रहसन् किरीटी ।**
**चिच्छेद चास्येष्वसनं भुजौ च**
**क्षुरैश्चतुर्भिर्निशितैः शिरश्च ॥२०॥**

किरीटधारी अर्जुन ने हँसते हुए-से दस बाणों से

उसके मर्मस्थानों में निर्भीक होकर आघात किया। फिर चार तीखे छुरों से उसके धनुष को, दोनों भुजाओं को और मस्तक को भी काट डाला।

**स पार्थबाणाभिहतः पपात**
**रथाद् विबाहुर्विशिरा धरायाम्।**
**सुपुष्पितो वृक्षवरोऽतिकायो**
**वातेरितः शाल इवाद्रिशृङ्गात् ॥२१॥**

अर्जुन के बाणों से आहत बाहु और मस्तक से रहित होकर वृषसेन उसी प्रकार रथ से नीचे गिर पड़ा, जैसे सुन्दर फूलों से भरा हुआ श्रेष्ठ एवं विशाल शालवृक्ष हवा के झोंके खाकर पर्वतशिखर से नीचे आ गिरा हो।

**इति महाभारते कर्णपर्वणि एकविंशोऽध्यायः ॥२१॥**

# द्वाविंशोऽध्यायः

## कर्ण और अर्जुन का द्वैरथयुद्ध में समागम, कर्ण का शल्य से और अर्जुन का श्रीकृष्ण से वार्तालाप

सञ्जय उवाच

**वृषसेनं हतं दृष्ट्वा शोकामर्षसमन्वितः।**
**पुत्रशोकोद्भवं वारि नेत्राभ्यां समवासृजत् ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज ! जब कर्ण ने वृषसेन को मारा गया देखा, तब वह शोक और अमर्ष के वशीभूत हो अपने दोनों नेत्रों से पुत्र-शोकजनित आँसू बहाने लगा।

**कर्णो रथेन तेजस्वी जगामाभिमुखो रिपुम्।**
**युद्धायामर्षताम्राक्षः समाहूय धनञ्जयम् ॥२॥**

फिर तेजस्वी कर्ण लाल आँखें करके अपने शत्रु धनञ्जय को युद्ध के लिए ललकारता हुआ रथ के द्वारा उनके समक्ष आया।

**तौ रथौ सूर्यसंकाशौ वैयाघ्रपरिवारितौ।**
**समेतौ ददृशुस्तत्र द्वाविवार्कौ समुद्गतौ ॥३॥**

व्याघ्रचर्म से मण्डित और सूर्य के समान तेजस्वी वे दोनों रथ जब आमने-सामने हुए तब लोगों ने वहाँ उन्हें इस प्रकार देखा, मानो दो सूर्य उदित हुए हों।

**दृष्ट्वा तु द्वैरथं ताभ्यां तत्र योद्धाः सहस्रशः।**
**चक्रुर्बाहुस्वनाँश्चैव तथा चैलावधूननम् ॥४॥**

उन दोनों वीरों का द्वैरथ युद्ध प्रस्तुत होते देख वहाँ खड़े सहस्रों योद्धा अपनी भुजाओं पर ताल ठोकने और वस्त्र हिलाने लगे।

**आजघ्नुः कुरवस्तत्र वादित्राणि समन्ततः।**
**कर्णं प्रहर्षयन्तश्च शंखान् दध्मुश्च सर्वशः ॥५॥**

तत्पश्चात् कर्ण का हर्ष बढ़ाने के लिए कौरव-सैनिक वहाँ सब ओर बाजे बजाने और शंखध्वनि करने लगे।

**तथैव पाण्डवाः सर्वे हर्षयन्तो धनञ्जयम्।**
**तूर्यशंखनिनादेन दिशः सर्वा व्यनादयन् ॥६॥**

इसी प्रकार समस्त पाण्डव भी अर्जुन का हर्ष बढ़ाते हुए वाद्यों और शंखों की ध्वनि से सम्पूर्ण दिशाओं को प्रतिध्वनित करने लगे।

**सिंहस्कन्धौ दीर्घभुजौ रक्ताक्षौ हेममालिनौ।**
**प्रभिन्नाविव मातङ्गौ व्यूढोरस्कौ महाबलौ ॥७॥**
**देवगर्भौ देवबलौ देवतुल्यौ च रूपतः।**
**यदृच्छया समायातौ सूर्याचन्द्रमसौ यथा ॥८॥**
**तौ दृष्ट्वा पुरुषव्याघ्रौ शार्दूलाविव धिष्ठितौ।**
**बभूव परमो हर्षस्तावकानां विशाम्पते ॥९॥**

उन दोनों महारथियों के कन्धे सिंह के समान, भुजाएँ बड़ी-बड़ी और आँखें लाल थीं। दोनों ने स्वर्णमालाएँ धारण की हुई थीं। वे दो मतवाले गज-राजों के समान मदोन्मत्त थे। दोनों की छाती चौड़ी थी और दोनों ही महान् बलशाली थे। दोनों ही देव-कुमार, देवताओं के समान बली, देवतुल्य, रूपवान् थे। वे दैवेच्छा से पृथिवी पर उतरे हुए सूर्य एवं चन्द्र के समान सुशोभित थे। प्रजेश्वर! आमने-सामने खड़े हुए दो सिंहों के समान उन दोनों नरव्याघ्र वीरों को देखकर आपके सैनिकों को महान् हर्ष हुआ।

**उभौ वरायुधधरावुभौ रणकृतश्रमौ।**
**उभौ च बाहुशब्देन नादयन्तौ नभस्तलम् ॥१०॥**

दोनों ने श्रेष्ठ आयुध धारण किये हुए थे, दोनों ने ही युद्ध की कला सीखने में परिश्रम किया था और दोनों अपनी भुजाओं के शब्द से आकाश को निनादित कर रहे थे।

**तव पुत्रास्ततः कर्णं सबला भरतर्षभ ।**
**परिवव्रुर्महात्मानं क्षिप्रमाहवशोभिनम् ॥११॥**

भरतभूषण ! दोनों वीरों को आमने-सामने खड़े देख सेनासहित आपके पुत्र युद्ध में शोभा पानेवाले महामनस्वी कर्ण को शीघ्र ही सब ओर से घेरकर खड़े हो गये ।

**तथैव पाण्डवा हृष्टा धृष्टद्युम्नपुरोगमाः ।**
**परिवव्रुर्महात्मानं पार्थमप्रतिमं युधि ॥१२॥**

इसी प्रकार हर्ष में भरे हुए धृष्टद्युम्न आदि पाण्डव वीर युद्ध में अपना सानी=प्रतिद्वन्द्वी न रखनेवाले महात्मा कुन्तीनन्दन अर्जुन को घेरकर खड़े हुए ।

**तावकानां रणे कर्णो ग्लहो ह्यासीद् विशाम्पते ।**
**तथैव पाण्डवानां च ग्लहः पार्थोऽभवत्तदा ॥१३॥**

प्रजेश्वर ! आपकी ओर से युद्धरूपी जुए में कर्ण को दाँव पर लगाया गया था । इसी प्रकार पाण्डव-पक्ष की ओर से कुन्तीपुत्र अर्जुन दाँव पर चढ़ गये थे ।

**तयोर्घोरतरे युद्धे द्वैरथे द्यूत आहिते ।**
**हया हयानभ्यहेषन् स्पर्धमानाः परस्परम् ॥१४॥**

उन दोनों में घोरतर द्वैरथ युद्धरूपी जुए का अवसर उपस्थित था । एक के घोड़े दूसरे के घोड़ों को देखकर परस्पर लाग-डाँट रखते हुए-से हिनहिनाने लगे ।

**अविध्यत् पुण्डरीकाक्षः शल्यं नयनसायकैः ।**
**शल्यश्च पुण्डरीकाक्षं तथैवाभिसमैक्षत ॥१५॥**
**तत्राजयद् वासुदेवः शल्यं नयनसायकैः ।**
**कर्णं चाप्यजयद् दृष्टया कुन्तीपुत्रो धनञ्जयः ॥१६॥**

इसी समय कमलनयन श्रीकृष्ण ने शल्य की ओर त्यौरी चढ़ाकर देखा, मानो वे उसे नेत्ररूपी बाण से बींध रहे हों । इसी प्रकार शल्य ने भी कमलनयन श्रीकृष्ण को घूरा, परन्तु वहाँ विजय श्रीकृष्ण की हुई । उन्होंने अपने नेत्ररूपी बाणों से शल्य को पराजित कर दिया । इसी प्रकार कुन्तीपुत्र अर्जुन ने भी अपनी दृष्टि द्वारा कर्ण को परास्त कर दिया ।

**अथाब्रवीत् सूतपुत्रः शल्यमाभाष्य सस्मितम् ।**
**यदि पार्थो रणे हन्यादद्य मामिह कर्हिचित् ।**
**किं करिष्यसि संग्रामे शल्य सत्यमथोच्यताम् ॥१७॥**

दृष्टि मिलाने में अर्जुन से पराजित होकर कर्ण ने शल्य से मुस्कराते हुए कहा—"शल्य ! सच बताओ, यदि कदाचित् आज रणभूमि में कुन्तीनन्दन अर्जुन मुझे मार डाले तो तुम इस संग्राम में क्या करोगे ?"

शल्य उवाच

**यदि कर्णं रणे हन्यादद्य त्वां श्वेतवाहनः ।**
**उभावेकरथेनाहं हन्यां माधवपाण्डवौ ॥१८॥**

**शल्य ने कहा**—कर्ण ! यदि श्वेतवाहन अर्जुन आज युद्ध में तुम्हें मार डालें तो मैं एकमात्र रथ के द्वारा श्रीकृष्ण और अर्जुन दोनों का वध कर डालूँगा ।

सञ्जय उवाच

**एवमेव तु गोविन्दमर्जुनः प्रत्यभाषत ।**
**तं प्रहस्याब्रवीत् कृष्णः सत्यं पार्थमिदं वचः ॥१९॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! इसी प्रकार अर्जुन ने भी श्रीकृष्ण से पूछा । तब श्रीकृष्ण ने हँसकर अर्जुन से यह सत्य बात कही—

**पतेद् दिवाकरः स्थानाच्छुष्येदपि महोदधिः ।**
**शैत्यमग्निरियान्न त्वां हन्यात् कर्णो धनञ्जय ॥२०॥**

"धनञ्जय ! सूर्य अपने स्थान से गिर जाए, समुद्र सूख जाए और अग्नि सदा-सदा के लिए शीतल हो जाए, तो भी कर्ण तुम्हें नहीं मार सकता ।

**यदि चैतत् कथञ्चित् स्याल्लोकपर्यसनं भवेत् ।**
**हन्यां कर्णं तथा शल्यं बाहुभ्यामेव संयुगे ॥२१॥**

"यदि किसी प्रकार ऐसा हो जाए तो संसार उलट जाएगा और मैं अपनी दोनों भुजाओं से ही कर्ण और शल्य को मसल डालूँगा ।"

**इति कृष्णवचः श्रुत्वा प्रहसन् कपिकेतनः ।**
**अर्जुनः प्रत्युवाचेदं कृष्णमक्लिष्टकारिणम् ॥२२॥**

श्रीकृष्ण का यह वचन सुनकर कपिध्वज अर्जुन हँस पड़े और अनायास ही महान् कर्म करनेवाले श्रीकृष्ण से इस प्रकार बोले—

**मम तावदपर्याप्तौ कर्णशल्यौ जनार्दन ।**
**सपताकध्वजं कर्णं सशल्यरथवाजिनम् ॥२३॥**
**सच्छत्रकवचं चैव सशक्तिशरकार्मुकम् ।**
**द्रष्टास्यद्य रणे कृष्ण शरैश्छिन्नमनेकधा ॥२४॥**

"जनार्दन ! ये कर्ण और शल्य तो मेरे ही लिए पर्याप्त नहीं है । श्रीकृष्ण ! आज युद्धभूमि में आप देखेंगे कि मैं कवच, छत्र, शक्ति, धनुष, बाण, ध्वजा,

पताका, रथ, घोड़े तथा राजा शल्य के सहित कर्ण को अपने बाणों से टुकड़े-टुकड़े कर डालूँगा।

**न हि मे शाम्यते मन्युर्यदनेन पुरा कृतम्।**
**कृष्णां सभागतां दृष्ट्वा मूढेनादीर्घदर्शिना ॥२५॥**

"इस अदूरदर्शी मूर्ख ने सभा में द्रौपदी को आई देख जो कुकृत्य [द्रौपदी को अपमानित किया और उसकी हँसी उड़ाई थी] किया था, उसे स्मरण करके मेरा क्रोध शान्त नहीं हो रहा है।

**अद्याभिमन्युजननीमनृणः सान्त्वयिष्यसि।**
**कुन्तीं पितृष्वसारं च प्रहृष्टः सञ्जनार्दन ॥२६॥**

"जनार्दन ! आज आप अनृण एवं अत्यन्त प्रसन्न होकर अभिमन्यु की माता सुभद्रा और अपनी बुआ कुन्तीदेवी को सान्त्वना प्रदान करेंगे।"

**इतिमहाभारते कर्णपर्वणि द्वाविंशोऽध्यायः ॥२२॥**

# त्रयोविंशोऽध्यायः

## अश्वत्थामा का दुर्योधन से सन्धि का प्रस्ताव और दुर्योधन द्वारा उसकी अस्वीकृति

सञ्जय उवाच

**ततः प्रहृष्टाः कुरुपाण्डुयोधा**
**वादित्रशंखस्वनसिंहनादैः ।**
**निनादयन्तो वसुधां दिशश्च**
**स्वनेन सर्वान् द्विषतो निजघ्नुः ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! अर्जुन और कर्ण दोनों के आमने-सामने होने पर कौरव और पाण्डव-पक्ष के समस्त योद्धा अत्यन्त हर्ष में भरकर वाद्य, शंखध्वनि, सिंहनाद और कोलाहल से रणभूमि और सम्पूर्ण दिशाओं को निनादित करते हुए समस्त शत्रुओं का संहार करने लगे।

**तथा प्रवृत्ते तुमुले सुदारुणे**
**धनञ्जयस्याधिरथेश्च सायकैः।**
**दिशश्च सैन्यं च शितैरजिह्मगैः**
**परस्परं प्रावृणुतां सुदंशितौ ॥२॥**

अर्जुन और कर्ण के बाणों से उस अत्यन्त दारुण तुमुल युद्ध के आरम्भ होने पर वे दोनों कवचधारी वीर अपने सीधे जानेवाले पैने बाणों द्वारा परस्पर सम्पूर्ण दिशाओं और सेना को आच्छादित करने लगे।

**ततो महास्त्राणि महाधनुर्धरौ**
**विमुञ्चमानाविषुभिर्भयानकैः।**
**नराश्वनागानमितान् निजघ्नतुः**
**परस्परं चापि महारथौ नृप ॥३॥**

राजन् ! वे महाधनुर्धर और महारथी वीर महान् अस्त्रों का प्रयोग करते हुए अपने भयानक बाणों द्वारा असंख्य मनुष्यों, घोड़ों तथा हाथियों का संहार करते और आपस में भी एक-दूसरे को चोट पहुँचाते थे।

**ततो विसस्रुः पुनरर्दिता नरा**
**नरोत्तमाभ्यां कुरुपाण्डवाश्रयाः।**
**सनागपत्त्यश्वरथा दिशो दश**
**तथा यथा सिंहहता वनौकसः ॥४॥**

जैसे सिंह के द्वारा घायल किये हुए जंगली पशु सब ओर भागने लगते हैं, उसी प्रकार उन नरश्रेष्ठ शूरवीरों द्वारा बाणों से पीड़ित किये हुए कौरव और पाण्डव-सैनिक हाथी, घोड़े, रथ और पैदलोंसहित दशों दिशाओं में भाग खड़े हुए।

**ततस्तु दुर्योधनभोजसौबलाः**
**कृपेण शारद्वतसूनुना सह।**
**महारथाः पञ्च धनञ्जयाच्युतौ**
**शरैः शरीरार्तिकरैरताडयन् ॥५॥**

महाराज ! तत्पश्चात् दुर्योधन, कृतवर्मा, शकुनि, शरद्वान् के पुत्र कृपाचार्य और कर्ण—ये पाँच महारथी शरीर को पीड़ा देनेवाले बाणों द्वारा श्रीकृष्ण और अर्जुन को घायल करने लगे।

**धनूंषि तेषामिषुधीन् ध्वजान् हयान्**
**रथांश्च सूतांश्च धनञ्जयः शरैः।**
**समं प्रमथ्याशु परान् समन्ततः**
**शरोत्तमैर्द्वादशभिश्च सूतजम् ॥६॥**

यह देख अर्जुन ने उनके धनुष, तरकस, ध्वज, घोड़े, रथ और सारथि—इन सबको अपने बाणों द्वारा एक साथ ही मथकर अपने चारों ओर खड़े हुए शत्रुओं को शीघ्र ही बींध डाला और सूतपुत्र कर्ण पर भी बारह बाणों से प्रहार किया।

**अथाभ्यधावंस्त्वरिताः शतं रथाः**
**शतं गजाश्चार्जुनमाततायिनः।**
**शकास्तुषारा यवनाश्च सादिनः**
**सहैव काम्बोजवरैर्जिघांसवः ॥७॥**

तत्पश्चात् वहाँ सैकड़ों रथी और सैकड़ों गजारोही आततायी बनकर अर्जुन को मार डालने की इच्छा से दौड़ पड़े। उनके साथ शक, तुषार, यवन तथा काम्बोजदेशों के अच्छे घुड़सवार भी थे।

**वरायुधान् पाणिगतैः शरैः सह**
**क्षुरैर्न्यकृन्तत्पतन् शिरांसि च।**
**हयांश्च नागांश्च रथांश्च युध्यतो**
**धनञ्जयः शत्रुगणान् क्षितौ क्षिणोत् ॥८**

परन्तु अर्जुन ने अपने हाथ के बाणों और क्षुरों द्वारा उन सबके उत्तम-उत्तम अस्त्रों को काट डाला। शत्रुओं के मस्तक कट-कटकर गिरने लगे। अर्जुन ने विपक्षियों के घोड़ों, हाथियों और रथों को एवं युद्ध में तत्पर हुए उन शत्रुओं को भी पृथिवी पर काट गिराया।

**तदद्भुतं देवमनुष्यसाक्षिकं**
**समीक्ष्य भूतानि विसिस्मियुस्तदा।**
**तवात्मजः सूतसुतश्च न व्यथां**
**न विस्मयं जग्मतुरेकनिश्चयौ ॥९॥**

विद्वानों और साधारण मनुष्यों के साक्षित्व में होनेवाले उस अद्भुत युद्ध को देखकर समस्त प्राणी उस समय आश्चर्यचकित हो उठे, परन्तु आपका पुत्र दुर्योधन और सूतपुत्र कर्ण—ये दोनों एक निश्चय पर पहुँच चुके थे, अतः इनके मन में न तो व्यथा हुई और न वे विस्मित ही हुए।

**अथाब्रवीद् द्रोणसुतस्तवात्मजं**
**करं करेण प्रतिपीड्य सान्त्वयन्।**
**प्रसीद दुर्योधन शाम्य पाण्डवै-**
**रलं विरोधेन धिगस्तु विग्रहम् ॥१०॥**

जब वह विस्मयकारी युद्ध चल रहा था, तब द्रोणपुत्र अश्वत्थामा ने दुर्योधन का हाथ अपने हाथ से दबाकर उसे सान्त्वना देते हुए कहा—"दुर्योधन! अब प्रसन्न हो जाओ, पाण्डवों से सन्धि कर लो। विरोध से कोई लाभ नहीं है। आपके इस झगड़े को धिक्कार है!

**धनञ्जयः शाम्यति वारितो मया**
**जनार्दनो नैव विरोधमिच्छति।**
**युधिष्ठिरो भूतहिते रतः सदा**
**वृकोदरस्तद्वशगस्तथा यमौ ॥११॥**
**त्वया तु पार्थैश्च कृते च संविदे**
**व्रजन्तु शेषाः स्वपुराणि बान्धवाः।**
**न चेद् वचः श्रोष्यसि मे नराधिप**
**ध्रुवं प्रतप्तासि हतोऽरिभिर्युधि ॥१२॥**

"अर्जुन मेरे मना करने पर शान्त हो जाएँगे। श्रीकृष्ण भी तुम लोगों में विरोध नहीं चाहते। युधिष्ठिर तो सभी प्राणियों के हित में संलग्न रहते हैं [अतः वे भी मेरी बात मान लेंगे], शेष रहे भीमसेन और नकुल-सहदेव—ये भी धर्मराज के अधीन हैं [अतः उनकी इच्छा के विरुद्ध कुछ नहीं करेंगे]। पाण्डवों के साथ तुम्हारी सन्धि हो जाने पर शेष सगे-सम्बन्धी अपने-अपने नगरों को लौट जाएँ। नरेश्वर! यदि मेरी बात नहीं सुनोगे तो निश्चय ही युद्ध में शत्रुओं के हाथ से मारे जाओगे और उस समय तुम्हें बड़ा पश्चात्ताप होगा।

**ममापि मानः परमः सदा त्वयि**
**ब्रवीम्यतस्त्वां परमाच्च सौहृदात्।**
**निवारयिष्यामि च कर्णमप्यहं**
**यदा भवान् सप्रणयो भविष्यति ॥१३॥**

"तुम्हारे प्रति मेरे मन में भी सदा बड़े आदर का भाव रहा है। हम दोनों की जो घनिष्ठ मित्रता है, उसी के कारण मैं तुमसे यह प्रस्ताव करता हूँ। यदि तुम प्रेमपूर्वक राजी हो जाओगे तो मैं कर्ण को भी युद्ध से रोक दूँगा।

**वदन्ति मित्रं सहजं विचक्षणा-**
**स्तथैव साम्ना च धनेन चार्जितम्।□**
**प्रतापतश्चोपनतं चतुर्विधं**

**तदस्ति सर्वं तव पाण्डवेषु च ॥१४॥**

विद्वान् लोग चार प्रकार के मित्र बतलाते हैं। एक सहज मित्र होते हैं [जिनके साथ स्वाभाविक मैत्री होती है]। दूसरे सन्धि करके बनाये मित्र होते हैं। तीसरे धन देकर अपनाये मित्र होते हैं और जो किसी के प्रबल प्रताप से प्रभावित हो स्वतः शरण में आ जाते हैं, वे चौथे प्रकार के मित्र होते हैं। पाण्डवों के साथ तुम्हारी सभी प्रकार की मित्रता सम्भव है।

**निसर्गतस्ते तव वीर बान्धवाः**
**पुनश्च साम्ना समवाप्नुहि प्रभो।**
**त्वयि प्रसन्ने यदि मित्रतां गते**
**हितं कृतं स्याज्जगतस्त्वयातुलम् ॥१५**

"वीर ! एक तो वे तुम्हारे जन्मजात भाई हैं, अतः सहज मित्र हैं। प्रभो ! फिर तुम सन्धि करके उन्हें अपना मित्र बना लो। यदि तुम प्रसन्नता से पाण्डवों के साथ मित्रता स्वीकार कर लो तो तुम्हारे द्वारा संसार का अनुपम हित हो सकता है।"

**स एवमुक्तः सुहृदा वचो हितं**
**विचिन्त्य निःश्वस्य च दुर्मनाब्रवीत्।**
**यथा भवानाह सखे तथैव त-**
**न्ममापि विज्ञापयतो वचः शृणु ॥१६॥**

सुहृद् अश्वत्थामा ने जब इस प्रकार हित की बात कही, तब दुर्योधन उसपर विचार करके दीर्घ निःश्वास छोड़कर मन-ही-मन दुःखी हो इस प्रकार बोला—"सखे ! तुम जैसा कहते हो, वह सब ठीक है, परन्तु इस विषय में मैं भी कुछ निवेदन करता हूँ, आप सुनें।

**निहत्य दुःशासनमुक्तवान् वचः**
**प्रसह्य शार्दूलवदेष दुर्मतिः।**
**वृकोदरस्तद्धृदये मम स्थितं**
**न तत् परोक्षं भवतः कुतः शमः ॥१७॥**

"इस दुर्बुद्धि भीमसेन ने सिंह के समान हठपूर्वक दुःशासन का वध करके जो बात कही थी, वह तुमसे छिपी नहीं है। वह इस समय भी मेरे हृदय में स्थिर होकर पीड़ा दे रही है। ऐसी अवस्था में सन्धि कैसे हो सकती है ?

**न चापि कर्णं प्रसहेद् रणेऽर्जुनो**
**महागिरिं मेरुमिवोग्रमारुतः।**
**न चाश्वसिष्यन्ति पृथात्मजा मयि**
**प्रसह्य वैरं बहुशो विचिन्त्य च ॥१८॥**

"इसके अतिरिक्त भयंकर वायु भी जैसे महापर्वत मेरु का सामना नहीं कर सकती, उसी प्रकार अर्जुन इस युद्धभूमि में कर्ण का वेग नहीं सकते। हमने हठ-पूर्वक बारम्बार जो वैर किया है, उसे सोचकर कुन्ती के पुत्र मुझपर विश्वास भी नहीं करेंगे।

**न चापि कर्णं गुरुपुत्र संयुगा-**
**दुपारमेत्यर्हसि वक्तुमच्युत।**
**श्रमेण युक्तो महताद्य फाल्गुन-**
**स्तमेष कर्णः प्रसभं हनिष्यति ॥१९॥**

"अपनी मर्यादा न छोड़नेवाले गुरुपुत्र ! तुम्हें कर्ण से युद्ध बन्द करने के लिए कदापि नहीं कहना चाहिए, क्योंकि इस समय अर्जुन महान् परिश्रम से थक गये हैं, अतः अब कर्ण उन्हें बलपूर्वक मार डालेगा।"

**तमेवमुक्त्वाप्यनुनीय चासकृत्**
**तवात्मजः स्वाननुशास्ति सैनिकान्।**
**विनिघ्नताभिद्रवताहितान् मम**
**सबाणहस्ताः किमु जोषमासत ॥२०॥**

अश्वत्थामा से ऐसा कहकर बारम्बार अनुनय-विनय द्वारा उसे प्रसन्न करके आपके पुत्र ने अपने सैनिकों को आदेश देते हुए कहा—"अरे ! तुम लोग हाथों में बाण लिये चुपचाप बैठे क्यों हो ? मेरे शत्रुओं पर टूट पड़ो और उन्हें मार डालो।"

**इति महाभारते कर्णपर्वणि त्रयोविंशोऽध्यायः ॥२३॥**

## चतुर्विंशोऽध्यायः

### कर्ण और अर्जुन का भयंकर युद्ध

सञ्जय उवाच

**तौ शंखभेरीनिनदे समृद्धे**
**समीयतुः श्वेतहयौ नराग्र्यौ ।**
**वैकर्तनः सूतसुतोऽर्जुनश्च**
**दुर्मन्त्रिते ते हि सुतस्य राजन् ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! तत्पश्चात् आपके पुत्र की कुमन्त्रणा के फलस्वरूप जब युद्धभूमि में शंख और भेरियों की गम्भीर ध्वनि होने लगी, उस समय वहाँ सफेद घोड़ोंवाले दो नरश्रेष्ठ वैकर्तन कर्ण और अर्जुन युद्ध के लिए एक-दूसरे की ओर बढ़े ।

**कर्णस्ततः प्रथमं तत्र पार्थं**
**महेषुभिर्दशभिः प्रत्यविध्यत् ।**
**तं चार्जुनः प्रत्यविद्धचच्छिताग्रैः**
**कक्षान्तरे दशभिः सम्प्रहस्य ॥२॥**

तब वहाँ कर्ण ने सर्वप्रथम दस विशाल बाणों द्वारा अर्जुन को बींध डाला । उधर अर्जुन ने भी हँसकर तीखी धारवाले दस बाणों से कर्ण की काँख में प्रहार किया ।

**परस्परं तौ विशिखैः सुपुंखै-**
**स्ततक्षतुः सूतसुतोऽर्जुनश्च ।**
**परस्परं तौ बिभिदुर्विमर्दे**
**सुभीममभ्यापततुश्च हृष्टौ ॥३॥**

सूतपुत्र कर्ण और अर्जुन दोनों उस युद्ध में अत्यन्त हर्ष में भरकर सुन्दर पंखोंवाले बाणों द्वारा एक-दूसरे को क्षत-विक्षत करने लगे । वे परस्पर क्षति पहुँचाते हुए भयंकर आक्रमण कर रहे थे ।

**यानर्जुनः सभ्रुकुटीकटाक्षं**
**कर्णाय राजन्नसृजज्जितारिः ।**
**तान् सायकैर्ग्रसते सूतपुत्रः**
**प्रप्रेषितान् पाण्डवस्येषुसंघान् ॥४॥**

राजन् ! शत्रुविजयी अर्जुन भौंहे टेढ़ी करके कटाक्षपूर्वक देखते हुए कर्ण पर जिन-जिन बाणों का प्रहार करते थे, उन सभी बाणसमूहों को सूतपुत्र कर्ण शीघ्र ही नष्ट कर देता था ।

**ततोऽस्त्रमाग्नेयममित्रसाधनं**
**मुमोच कर्णाय महेन्द्रसूनुः ।**
**योधाश्च सर्वे ज्वलिताम्बरा भृशं**
**प्रदुद्रुवुस्तत्र विदग्धवस्त्राः ॥५॥**

तब इन्द्रकुमार अर्जुन ने कर्ण पर शत्रुनाशक आग्नेयास्त्र का प्रयोग किया । इससे वहाँ समस्त योद्धाओं के वस्त्र जलने लगे । कपड़ों के जलने के कारण वे सब-के-सब वहाँ से भाग चले ।

**तद्वीक्ष्य कर्णो ज्वलनास्त्रमुद्यतं**
**स वारुणं तत्प्रशमार्थमाहवे ।**
**समुत्सृजन् सूतसुतः प्रतापवान्**
**स तेन वह्निं शमयाम्बभूव ह ॥६॥**

प्रतापी सूतपुत्र कर्ण ने उस आग्नेय-अस्त्र को उद्दीप्त हुआ देखकर युद्धभूमि में उसकी शान्ति के लिए वरुणास्त्र का प्रयोग किया और उसके द्वारा उस आग को बुझा दिया ।

**अस्त्रं ततो देवपतेः प्रियं तत्-**
**प्रादुश्चकाराविषहं स वज्रम् ।**
**गाण्डीवज्याविशिखाँश्चानुमन्त्र्य**
**धनञ्जयः शत्रुभिरप्रधृष्यः ॥७॥**

तब शत्रुओं के लिए अजेय अर्जुन ने गाण्डीव धनुष, उसकी प्रत्यञ्चा और बाणों को अभिमन्त्रित करके अत्यन्त प्रभावशाली वज्रास्त्र को प्रकट किया, जो देवराज इन्द्र का प्रिय अस्त्र है ।

**ततः क्षुरप्राञ्जलिकार्धचन्द्रा**
**नालीकनाराचवराहकर्णाः ।**
**गाण्डीवतः प्राकटिताः सुतीक्ष्णाः**
**सहस्रशो वज्रसमानवेगाः ॥८॥**

फिर तो उस गाण्डीव धनुष से क्षुरप्र, अञ्जलिक, अर्धचन्द्र, नालीक, नाराच और वराहकर्ण आदि तीखे अस्त्र सहस्रों की संख्या में छूटने लगे । वे सभी अस्त्र वज्र के समान वेगशाली थे ।

**ते कर्णमासाद्य महाप्रभावाः**
**सुतेजना गार्ध्रयुताः सुवेगाः ।**

**गात्रेषु सर्वेषु हयेषु चापि**
**शरासने चक्रयुगे ध्वजे च ॥९॥**

वे महाप्रभावशाली, गीध के पंखों से युक्त, तीखी धारवाले और अतिशय वेगवान् अस्त्र कर्ण के पास पहुँचकर उसके समस्त अङ्गों में, घोड़ों पर, धनुष में और रथ के जूओं, पहियों और ध्वजाओं में जा लगे।

**शराचिताङ्गो रुधिरार्द्रगात्रः**
**कर्णस्तदा रोषविवृत्तनेत्रः।**
**दृढज्यमानाम्य समुद्रघोषं**
**प्रादुश्चकार धनुः भार्गवास्त्रम् ॥१०॥**
**महेन्द्रशस्त्राभिमुखान् विमुक्तां-**
**चकर्त कर्णोऽर्जुनबाणसंघान् ।**
**तस्यास्त्रमस्त्रेण निहत्य सोऽथ**
**जघान संख्ये रथनागपत्तीन् ॥११॥**

जब कर्ण के सारे अङ्ग बाणों से भर गये, सम्पूर्ण शरीर रक्त से नहा उठा, और उसके नेत्र क्रोध से घूमने लगे, तब उस महामनस्वी वीर ने अपने धनुष को जिसकी प्रत्यञ्चा सुदृढ़ थी, झुकाकर समुद्र के समान गम्भीर गर्जना करनेवाले भार्गवास्त्र को प्रकट किया और अर्जुन के महेन्द्रास्त्र से प्रकट हुए बाण-समूहों के टुकड़े-टुकड़े करके अपने अस्त्र से उनके अस्त्र को शान्त करके रणभूमि में रथों, हाथियों और पैदल-सैनिकों का संहार कर डाला।

**दृष्ट्वा च कर्णेन धनञ्जयस्य**
**तथाऽऽजिमध्ये निहतं तदस्त्रम् ।**
**भीमोऽब्रवीदर्जुनं सत्यसंध-**
**मर्मार्पितो निःश्वसञ्जातमन्युः ॥१२॥**

समराङ्गण में कर्ण द्वारा अर्जुन के उस अस्त्र को नष्ट हुआ देखकर भीमसेन के हृदय में अमर्ष और क्रोध का प्रादुर्भाव हो गया, अतः वे दीर्घनिःश्वास छोड़ते हुए सत्यप्रतिज्ञ अर्जुन से इस प्रकार बोले—

**क्षिप्ताँस्त्वया चाग्रसद् बाणसंघा-**
**नाश्चर्यमेतत् प्रतिभाति मेऽद्य ।**
**कृष्णापरिक्लेशमनुस्मर त्वं**
**जह्याशु कर्णं युधि सव्यसाचिन् ॥१३॥**

"सव्यसाची अर्जुन! तुम्हारे चलाये बाण-समूहों को इस कर्ण ने नष्ट कर दिया, यह तो आज मुझे बड़े आश्चर्य की बात जान पड़ती है। तुम कौरव-सभा में द्रौपदी को दिये गये क्लेशों का स्मरण करो और इस कर्ण को शीघ्र ही युद्ध में मार डालो।"

वासुदेव उवाच

**अमीमृदत् सर्वपातेऽद्य कर्णो**
**ह्यस्त्रैरस्त्रं किमिदं भो किरीटिन् ।**
**स वीर किं मुह्यसि नावधत्से**
**नदन्त्येते कुरवः सम्प्रहृष्टाः ॥१४॥**

**श्रीकृष्ण बोले**—किरीटधारी अर्जुन! तुमने अब-तक जितनी बार प्रहार किये हैं, उन सबमें कर्ण ने तुम्हारे अस्त्र को अपने अस्त्रों द्वारा नष्ट कर दिया है, यह क्या बात है? वीर! आज तुमपर कैसा मोह छा रहा है? तुम सावधान क्यों नहीं होते? देखो, ये तुम्हारे शत्रु कौरव अत्यन्त हर्ष में भरकर सिंहनाद कर रहे हैं।

**अनेन चास्य क्षुरनेमिनाद्य**
**संछिन्धि मूर्धानमरेः प्रसह्य ।**
**मया विसृष्टेन सुदर्शनेन**
**वज्रेण शक्रो नमुचेरिवारेः ॥१५॥**

वीर! तुम मेरे दिये हुए सुदर्शनचक्र द्वारा जिसके नेमिभाग [किनारे] में क्षुर लगे हुए हैं, आज बलपूर्वक शत्रु का मस्तक काट डालो, ठीक वैसे ही जैसे इन्द्र ने वज्र के द्वारा अपने शत्रु नमुचि का सिर काट दिया था।

सञ्जय उवाच

**स एवमुक्तोऽतिबलो महात्मा**
**चकार बुद्धिं हि वधाय सौतेः ।**
**स प्रेरितो भीमजनार्दनाभ्यां**
**सर्वं स्मरन् केशवमित्युवाच ॥१६॥**

**सञ्जय कहते हैं**—भीमसेन और श्रीकृष्ण के इस प्रकार प्रेरणा देने और कहने पर अत्यन्त बलशाली महात्मा अर्जुन ने सूतपुत्र के वध का विचार किया। फिर बीती हुई सभी बातों को स्मरण कर वे श्रीकृष्ण से इस प्रकार बोले—

**प्रादुष्करोम्येष महास्त्रमुग्रं**
**शिवाय लोकस्य वधाय सौतेः ।**

**तदस्य हत्वा विरराज कर्णो**
**मुक्त्वा शरान् मेघ इवाम्बुधाराः ॥१७॥**

"श्रीकृष्ण ! मैं संसार के कल्याण और सूतपुत्र कर्ण के वध के लिए एक महान् एवं भयंकर अस्त्र [ब्रह्मास्त्र] प्रकट कर रहा हूँ।" परन्तु जैसे मेघ जल की धारा गिराता है, उसी प्रकार बाणों की बौछार से कर्ण उस अस्त्र को नष्ट कर अति शोभित होने लगे।

**तावुत्तमौ सर्वधनुर्धराणां**
**महाबलौ सर्वसपत्नसाहौ ।**
**निजघ्नतुश्चाहितसैन्यमुग्र-**
**मन्योन्यमप्यस्त्रविदौ महास्त्रैः ॥१८॥**

वे दोनों सम्पूर्ण धनुर्धरों में श्रेष्ठ, महाबलशाली, समस्त शत्रुओं का सामना करने में समर्थ और अस्त्र-विद्या के विद्वान् थे, अतः वे भयंकर शत्रुसेना को तथा आपस में भी एक-दूसरे को महान् अस्त्रों द्वारा घायल करने लगे।

**अथोपयातस्त्वरितो दिदृक्षुर्**
**मन्त्रौषधीभिर्निरुजो विशल्यः ।**
**कृतः सुहृद्भिर्भिषजां वरिष्ठैर्**
**युधिष्ठिरस्तत्र सुवर्णवर्मा ॥१९॥**

उधर शिविर में हितैषी वैद्यशिरोमणियों ने मन्त्र और ओषधियों द्वारा राजा युधिष्ठिर के शरीर से बाण निकालकर उन्हें स्वस्थ कर दिया, अतः वे बड़ी उतावली के साथ सुवर्णमय कवच धारण करके वहाँ युद्ध देखने के लिए आये।

**स कार्मुकज्यातलसंनिपातः**
**सुमुक्तबाणस्तुमुलो बभूव ।**
**घ्नतोस्तथान्योन्यमिषुप्रवेकैर्**
**धनञ्जयस्याधिरथेश्च तत्र ॥२०॥**

उस समय वहाँ अर्जुन और कर्ण उत्तम बाणों द्वारा एक-दूसरे को चोट पहुँचा रहे थे। उनके धनुष, प्रत्यञ्चा और हथेली का संघर्ष बड़ा भयंकर होता जा रहा था और उससे उत्तमोत्तम बाण छूट रहे थे।

**ततो धनुर्ज्या सहसातिकृष्टा**
**सुघोषमच्छिद्यत पाण्डवस्य ।**
**तस्मिन् क्षणे पाण्डवं सूतपुत्रः**
**समाचिनोत् क्षुद्रकाणां शतेन ॥२१॥**

इसी समय पाण्डुपुत्र अर्जुन के धनुष की डोरी अधिक खींची जाने के कारण सहसा भारी आवाज के साथ टूट गई। उस समय सूतपुत्र कर्ण ने पाण्डुकुमार अर्जुन को सौ बाण मारे।

**ततो धनुर्ज्यामवनाम्य शीघ्रं**
**शरांश्च तानाधिरथेर्विधम्य ।**
**संरब्धकर्णशरविक्षताङ्गः**
**पार्थो रणे कौरवान् प्रत्यगृह्णात् ॥२२॥**

तब कर्ण के बाणों से जिनका अङ्ग-अङ्ग क्षत-विक्षत हो गया था, उस कुन्तीकुमार अर्जुन ने युद्ध-भूमि में अत्यन्त क्रुद्ध हो शीघ्र ही धनुष की प्रत्यञ्चा को झुकाकर चढ़ा दिया और कर्ण के चलाये हुए बाणों को छिन्न-भिन्न करके कौरवों को आगे बढ़ने से रोक दिया।

**शल्यं च पार्थो दशभिः पृषत्कैर्**
**भृशं तनुत्रे प्रहसन्नविध्यत् ।**
**कर्णं ततो द्वादशभिः सुमुक्तैर्**
**विद्ध्वा पुनः सप्तभिरभ्यविद्ध्यत् ॥२३॥**

इसी समय कुन्तीपुत्र अर्जुन ने हँसते-हँसते दस बाणों से शल्य को गहरी चोट पहुँचायी और उनके कवच को छिन्न-भिन्न कर डाला। फिर अच्छी प्रकार छोड़े हुए बारह बाणों से कर्ण को घायल करके पुनः उसे सात बाणों से बींध डाला।

**इति महाभारते कर्णपर्वणि चतुर्विंशोऽध्यायः ॥२४॥**

# पञ्चविंशोऽध्यायः

## अर्जुन और कर्ण का घोर युद्ध, श्रीकृष्ण का अर्जुन को सर्पमुख बाण से बचाना

सञ्जय उवाच

**ततो विमर्दः सुमहान् बभूव**
**तत्रार्जुनस्याधिरथेश्च राजन् ।**
**अन्योन्यमासादयतोः पृषत्कैर्**
**विषाणघातैर्द्विपयोरिवाग्रैः ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—जैसे दो हाथी अपने भयंकर दाँतों से एक-दूसरे पर आघात करते हैं, उसी प्रकार अर्जुन और कर्ण एक-दूसरे पर बाणों का प्रहार कर रहे थे। उस समय उन दोनों में बड़ा भारी संग्राम होने लगा।

**एवं तयोर्युद्ध्यतोराजिमध्ये**
**सूतात्मजोऽभूदधिकः कदाचित् ।**
**पार्थः कदाचित् त्वधिकः किरीटी**
**वीर्यास्त्रमायाबलपौरुषेण ॥२॥**

इस प्रकार रणभूमि में जूझते समय उन दोनों वीरों में पराक्रम, अस्त्रसंचालन, मायाबल और पुरुषार्थ की दृष्टि से कभी सूतपुत्र कर्ण बढ़ जाता था और कभी किरीटधारी अर्जुन।

**कर्णोऽथ पार्थं न विशेषयद् यद्**
**भृशं च पार्थेन शराभितप्तः ।**
**ततस्तु वीरः शरविक्षताङ्गो**
**दध्रे मनो ह्येकशयस्य तस्य ॥३॥**

जब कर्ण किसी प्रकार भी युद्ध में अर्जुन से बढ़कर पराक्रम प्रकट न कर सका और अर्जुन ने अपने बाणों की मार से उसे अत्यन्त सन्तप्त कर दिया, तब बाणों के आघात से सारा शरीर क्षत-विक्षत हो जाने के कारण वीर कर्ण ने उसपर सर्पमुख बाण से प्रहार का विचार किया।

**ततो रिपुघ्नं समधत्त कर्णः**
**सुसंचितं सर्पमुखं ज्वलन्तम् ।**
**रौद्रं शरं संनतमुग्रधौतं**
**पार्थार्थमत्यर्थचिराभिगुप्तम् ॥४॥**

तब कर्ण ने पृथापुत्र अर्जुन को मारने के लिए ही जिसे सुदीर्घकाल से सुरक्षित रख छोड़ा था, उस शत्रुनाशक, झुकी हुई गाँठवाले, स्वच्छ, महातेजस्वी, सुसंचित, प्रज्वलित एवं भयानक सर्पमुख बाण को धनुष पर रखा और कान तक खींचकर अर्जुन की ओर सन्धान किया।

**ततोऽब्रवीन्मद्रराजो महात्मा**
**दृष्ट्वा कर्णं प्रहितेषुं तमुग्रम् ।**
**न कर्ण ग्रीवामिषुरेष लप्स्यते**
**समीक्ष्य संधत्स्व शरं शिरोघ्नम् ॥५॥**

उस समय महामनस्वी मद्रराज शल्य ने कर्ण को उस भयंकर बाण का प्रहार करने के लिए उद्यत देख उससे कहा—"कर्ण! तुम्हारा यह बाण शत्रु के कण्ठ में नहीं लगेगा, अतः सोच-विचारकर पुनः बाण का सन्धान करो, जिससे वह शत्रु का मस्तक काट सके।"

**अथाब्रवीत् क्रोधसुरक्तनेत्रो**
**मद्राधिपं सूतसुतस्तरस्वी ।**
**न संधत्ते द्विः शरः शल्य कर्णो**
**न मादृशा जिह्मयुद्धा भवन्ति ॥६॥**

यह सुनकर वेगशाली सूतपुत्र कर्ण के नेत्र क्रोध से लाल हो गये। उसने मद्रराज से कहा—"कर्ण दो बार बाण का सन्धान नहीं करता। मेरे जैसे वीर कपट-युद्ध नहीं करते।"

**इतीदमुक्त्वा विससर्ज तं शरं**
**प्रयत्नतो वर्षगणाभिपूजितम् ।**
**हतोऽसि वै फाल्गुन इत्यधिक्षिप-**
**न्नुवाच चोच्चैर्गिरमूर्जितां वृषः ॥७॥**

ऐसा कहकर कर्ण ने जिस बाण को वर्षों से सँभाल कर रखा हुआ था, उसे प्रयत्नपूर्वक शत्रु की ओर छोड़ दिया और आक्षेप करते हुए उच्चस्वर से कहा—"अर्जुन! अब तू निश्चय ही मारा गया।"

**स सायकः कर्णभुजप्रसृष्टो**
**हुताशनार्कप्रतिमः सुघोरः ।**
**गुणच्युतः कर्णधनुः प्रमुक्तो**
**वियद्गतः प्राज्वलदन्तरिक्षे ॥८॥**

अग्नि और सूर्य के समान तेजस्वी वह अति भयंकर बाण कर्ण की भुजाओं से प्रेरित हो उसके धनुष और प्रत्यञ्चा से छूटकर आकाश में पहुँचते ही प्रज्वलित हो उठा ।

**तं प्रेक्ष्य दीप्तं युधि माधवस्तु**
**त्वरान्वितं च सपदि सलीलम् ।**
**पदा विनिष्पिष्य रथोत्तमं स**
**प्रावेशयत् धरणीं किञ्चिदेव ॥९॥**
**क्षितिं गता जानुभिरेव वाहाः**
**हेमच्छन्नाश्चन्द्रमरीचिवर्णाः ।**
**ततः शरः सोऽभ्यहनत् किरीटं**
**तस्येन्द्रदत्तं सुदृढं सुबुद्धेः ॥१०॥**

उस प्रज्वलित बाण को अत्यन्त वेग से आते हुए देख श्रीकृष्ण ने युद्धस्थल में खेल-सा करते हुए अपने उत्तम रथ को तुरन्त ही पैर से दबाकर उसके पहियों का कुछ भाग भूमि में धँसा दिया । साथ ही सोने के आभूषणों से समलंकृत, चन्द्रमा की किरणों के समान श्वेतवर्णवाले उनके घोड़े भी धरती पर घुटने टेककर झुक गये । परिणामस्वरूप कर्ण का चलाया हुआ वह बाण रथ नीचा हो जाने के कारण इन्द्र द्वारा प्रदत्त बुद्धिमान् अर्जुन के किरीट में जा लगा ।

**स वै किरीटं बहुरत्नभूषितं**
**जहार बाणोऽर्जुनमूर्धतो बलात् ।**
**समुज्जहाराशु पुनः ह्यधोगतं**
**रथं भुजाभ्यां पुरुषोत्तमस्ततः ॥११॥**

उस बाण ने नाना प्रकार के रत्नों से विभूषित उस किरीट को अर्जुन के मस्तक से बलपूर्वक हर लिया [उसे पृथिवी पर गिरा दिया] । तब श्रीकृष्ण ने उस नीचे धँसे हुए रथ को पुनः अपनी दोनों भुजाओं से ऊपर उठा दिया ।

**तस्मिन् मुहूर्ते दशभिः पृषत्कैः**
**शिलाशितैर्बर्हिणबर्हयुक्तैः ।**
**विव्याध कर्णः पुरुषप्रवीरो**
**धनञ्जयं तिर्यगवेक्षमाणः ॥१२॥**

उस समय नरश्रेष्ठ कर्ण ने धनञ्जय की ओर तिरछी दृष्टि से देखते हुए मयूरपंख-युक्त, शिला पर तेज किये हुए दस बाणों से उन्हें घायल कर दिया ।

**ततोऽर्जुनो द्वादशभिः सुमुक्तैर्**
**वराहकर्णैर्निशितैः समर्प्य ।**
**नाराचमाशीविषतुल्यवेग-**
**माकर्णपूर्णायतमुत्ससर्ज ॥१३॥**

तब अर्जुन ने अच्छी प्रकार छोड़े हुए बारह वराहकर्ण नामक पैने बाणों द्वारा कर्ण को घायल करके पुनः विषधर सर्प के तुल्य एक वेगशाली नाराच को कान तक खींचकर उसकी ओर छोड़ दिया ।

**स चित्रवर्मेषुवरो विदार्य**
**प्राणान्निरस्यन्निव साधुमुक्तः ।**
**कर्णस्य पीत्वा रुधिरं विवेश**
**वसुन्धरां शोणितदिग्धवाजः ॥१४॥**

भली-भाँति छूटे हुए उस उत्तम नाराच ने कर्ण के विचित्र कवच को चीर-फाड़कर उसके प्राण निकालते हुए-से रक्तपान किया, फिर वह धरती में समा गया । उस समय उसके पंख रक्त से लथपथ हो रहे थे ।

**ततो वृषो बाणनिपातकोपितो**
**महोरगो दण्डविघट्टितो यथा ।**
**तदाशुकारी व्यसृजच्छरोत्तमान्**
**महाविषः सर्प इवोत्तमं विषम् ॥१५॥**

उस बाण के प्रहार से क्रोध में भरे हुए शीघ्रकारी कर्ण ने लाठी की चोट खाये हुए महान् सर्प के समान तिलमिलाकर उसी प्रकार उत्तम बाणों का प्रहार किया, जैसे महाविषैला सर्प अपने उत्तम विष का वमन करता है ।

**जनार्दनं द्वादशभिः पराभिन-**
**न्नवैर्नवत्या च शरैस्तथार्जुनम् ।**
**शरेण घोरेण पुनश्च पाण्डवं**
**विदार्य कर्णो व्यनदज्जहास च ॥१६॥**

उसने बारह बाणों से श्रीकृष्ण को और निन्यानवे बाणों से अर्जुन को अच्छी प्रकार घायल किया । तत्पश्चात् एक भयंकर बाण से पाण्डुपुत्र अर्जुन को पुनः क्षत-विक्षत करके कर्ण सिंह के समान दहाड़ने और हँसने लगा ।

**तमस्य हर्षं ममृषे न पाण्डवो**
**बिभेद मर्माणि ततोऽस्य मर्मवित् ।**

**परःशतैः पत्रिभिरिन्द्रविक्रम-**
**स्तथा यथेन्द्रो बलमोजसा रणे ॥१७॥**

उसके उस हर्ष को पाण्डुपुत्र अर्जुन सहन न कर सके। वे उसके मर्मस्थलों को जानते थे और इन्द्र के समान पराकमी थे, अतः जैसे इन्द्र ने समराङ्गण में बलासुर को बलपूर्वक मार गिराया था, उसी प्रकार अर्जुन ने भी सौ से अधिक बाणों द्वारा कर्ण के मर्म-स्थानों को विदीर्ण कर दिया।

**ततः शरैर्भीमतरैरविध्यत् त्रिभिराहवे।**
**हस्ते कृष्णं तथा पार्थमभ्यविध्यच्च सप्तभिः ॥१८॥**

फिर तो कर्ण ने भी तीन भयानक बाणों द्वारा रणभूमि में श्रीकृष्ण के हाथों में चोट पहुँचाई और अर्जुन को भी सात बाणों से बींध डाला।

**ततोऽर्जुनः सप्तदश तिग्मवेगानजिह्मगान्।**
**इन्द्राशनिसमान् घोरानसृजत् पावकोपमान् ॥१९॥**

तब अर्जुन ने इन्द्र के वज्र और अग्नि के समान प्रचण्ड वेगशाली, सीधे जानेवाले सत्रह घोर बाण कर्ण पर छोड़े।

**तान् कर्णस्त्वग्रतो न्यस्तान् मोघांश्चक्रे महारथः।**
**वैकर्तनः शितैर्बाणैर्ज्यां चिच्छेद सुतेजनैः ॥२०**

महारथी वैकर्तन कर्ण ने अपने समक्ष आये हुए उन सभी बाणों को व्यर्थ कर दिया। तत्पश्चात् तेज किये हुए पैने बाणों से अर्जुन के धनुष की डोरी काट डाली।

**द्वितीयां च तृतीयां च चतुर्थीं पञ्चमीं तथा।**
**षष्ठीमथास्य चिच्छेद सप्तमीं च तथाष्टमीम् ॥२१॥**

उसने क्रमशः अर्जुन के धनुष की दूसरी, तीसरी, चौथी, पाँचवीं, छठी, सातवीं और आठवीं डोरी भी काट डाली।

**नवमीं दशमीं चास्य तथा चैकादशीं वृषः।**
**ज्याशतं शतसन्धानः स कर्णो नावबुध्यते ॥२२॥**

इतना ही नहीं, नवीं, दसवीं और ग्यारहवीं डोरी काटकर भी सौ बाणों का सन्धान करनेवाले कर्ण को यह पता नहीं चला कि अर्जुन के धनुष में सौ डोरियाँ लगी हैं।

**ततो ज्यां विनिधायान्यामभिमन्त्र्य च पाण्डवः।**
**शरैरवाकिरत् कर्णं दीप्यमानैरिवाहिभिः ॥२३॥**

तत्पश्चात् दूसरी डोरी चढ़ाकर पाण्डुपुत्र अर्जुन ने उसे भी अभिमन्त्रित किया और प्रज्वलित सर्पों के समान बाणों द्वारा कर्ण को आच्छादित कर दिया।

**तस्य ज्याछेदनं कर्णो ज्यावधानं च संयुगे।**
**नान्वबुध्यत शीघ्रत्वात्तदद्भुतमिवाभवत् ॥२४॥**

रणभूमि में अर्जुन के धनुष की डोरी काटना और पुनः दूसरी डोरी का चढ़ जाना इतनी शीघ्रता से होता था कि कर्ण को भी उसका पता नहीं चलता था। वह एक अद्भुत-सी बात थी।

**अस्त्रैरस्त्राणि संवार्य प्रनिघ्नन् सव्यसाचिनः।**
**चक्रे चाप्यधिकं पार्थात् स्ववीर्यमतिदर्शयन् ॥२५॥**

कर्ण ने अपने अस्त्रों द्वारा सव्यसाची अर्जुन के अस्त्रों का निवारण करके उन सबको नष्ट कर दिया और अपने पराक्रम का प्रदर्शन करते हुए उसने अपने-आपको अर्जुन से अधिक शक्तिशाली सिद्ध कर दिखाया।

**ततः कृष्णोऽर्जुनं दृष्ट्वा कर्णास्त्रेण च पीडितम्।**
**अभ्यसेत्यब्रवीत् पार्थमातिष्ठास्त्रं व्रजेति च ॥२६॥**

इधर श्रीकृष्ण ने अर्जुन को कर्ण के अस्त्र से पीड़ित हुआ देखकर कहा—"पार्थ! लगातार अस्त्र छोड़ो। उत्तम अस्त्रों का प्रयोग करो और आगे बढ़े चलो।"

**ततोऽग्निसदृशं घोरं शरं सर्पविषोपमम्।**
**अश्मसारमयं दिव्यमभिमन्त्र्य परन्तपः ॥२७॥**
**रौद्रमस्त्रं समाधाय क्षेप्तुकामः किरीटवान्।**
**ततोऽग्रसन् मही चक्रं राधेयस्य तदा नृप ॥२८॥**

तब शत्रुओं के सन्तापक अर्जुन ने अग्नि और सर्पविष के समान भयंकर लोहमय दिव्य बाण को अभिमन्त्रित करके उसमें रौद्रास्त्र का आधान किया और उसे कर्ण पर छोड़ने का विचार किया। राजन्! इतने में ही राधापुत्र कर्ण के रथ का पहिया पृथिवी में धँस गया।

**ग्रस्तचक्रस्तु राधेयः क्रोधादश्रूण्यवर्तयत्।**
**अर्जुनं वीक्ष्य संरब्धमिदं वचनमब्रवीत् ॥२९॥**

पहिया फँस जाने के कारण राधापुत्र कर्ण क्रोध से आँसू बहाने लगा और रोषावेश से युक्त अर्जुन

की ओर देखकर इस प्रकार बोला—

**भो भोः पार्थ महेष्वास मुहूर्तं परिपालय ।**
**यावच्चक्रमिदं ग्रस्तमुद्धरामि महीतलात् ॥३०॥**

"महाधनुर्धर कुन्तीनन्दन ! दो घड़ी प्रतीक्षा करो, जिससे मैं इस फँसे हुए पहिये को पृथिवीतल से निकाल लूँ ।

**सव्यं चक्रं महीग्रस्तं दृष्ट्वा दैवादिदं मम ।**
**पार्थ कापुरुषाचीर्णमभिसंधिं विसर्जय ॥३१॥**

"पार्थ ! दैवयोग से मेरे रथ के बायें पहिये को धरती में फँसा हुआ देखकर तुम कापुरुषोचित कपट-पूर्ण वर्ताव का परित्याग करो ।

**न त्वं कापुरुषाचीर्णं मार्गमास्थातुमर्हसि ।**
**ख्यातस्त्वमसि कौन्तेय विशिष्टो रणकर्मसु ।**
**विशिष्टतरमेव त्वं कर्तुमर्हसि पाण्डव ॥३२॥**

"हे कुन्तीनन्दन ! जिस मार्ग पर कायर चला करते हैं, तुम उस मार्ग पर मत चलो, क्योंकि तुम युद्धकर्म में विशिष्ट वीर के रूप में विख्यात हो । हे पाण्डुनन्दन ! तुम्हें तो अपने-आपको और भी विशिष्ट ही सिद्ध करना चाहिए ।

**प्रकीर्णकेशे विमुखे ब्राह्मणेऽथ कृताञ्जलौ ।**
**शरणागते न्यस्तशस्त्रे याचमाने तथार्जुन ॥३३॥**
**अबाणे भ्रष्टकवचे भ्रष्टभग्नायुधे तथा ।**
**न विमुंचन्ति शस्त्राणि शूराः साधुव्रते स्थिताः ॥३४॥**

"अर्जुन ! जो केश खोलकर खड़ा हो, युद्ध से मुँह मोड़ चुका हो, ब्राह्मण हो, हाथ जोड़कर शरण में आया हो, हथियार डाल चुका हो, प्राणों की भीख माँगता हो, जिसके बाण, कवच और अन्य आयुध नष्ट हो गये हों, ऐसे पुरुष पर उत्तम व्रत का पालन करनेवाले शूरवीर शस्त्रों का प्रहार नहीं करते ।

**त्वं च शूरतमो लोके साधुवृत्तश्च पाण्डव ।**
**अभिज्ञो युद्धधर्माणां वेदान्तावभृथाप्लुतः ॥३५॥**

"पाण्डुनन्दन ! तुम लोक में महान् शूर और सदाचारी माने जाते हो । युद्ध के धर्मों को जानते हो । वेदान्त का अध्ययनरूपी यज्ञ समाप्त करके तुम उसमें अवभृथस्नान कर चुके हो [अतः तुम्हें उपर्युक्त स्थिति में पहुँचे हुए शत्रु पर प्रहार नहीं करना चाहिए] ।

**यावच्चक्रमिदं ग्रस्तमुद्धरामि महाभुज ।**
**न मां रथस्थो भूमिष्ठं विकलं हन्तुमर्हसि ॥३६॥**

"महाबाहो ! जबतक मैं इस फँसे हुए पहिये को निकाल रहा हूँ, तबतक रथारूढ़ तुम मुझ भूमि पर खड़े हुए को बाण मारकर व्याकुल मत करो ।

**त्वं हि क्षत्रियदायादो महाकुलविवर्धनः ।**
**अतस्त्वां प्रब्रवीम्येष मुहूर्तं क्षम पाण्डव ॥३७॥**

"पाण्डुपुत्र ! तुम क्षत्रिय के पुत्र हो, एक उच्च-कुल का गौरव बढ़ाते हो, अतः तुमसे ऐसी बात कहता हूँ । तुम दो घड़ी के लिए मुझे क्षमा करो ।"

**इति महाभारते कर्णपर्वणि पञ्चविंशोऽध्यायः ॥२५॥**

# षड्विंशोऽध्यायः

## श्रीकृष्ण की कर्ण को चेतावनी और कर्ण का वध

सञ्जय उवाच

**तमब्रवीद् वासुदेवो रथस्थो**
**राधेय दिष्टचा स्मरसीह धर्मम् ।**
**प्रायेण नीचा व्यसनेषु मग्ना**
**निन्दन्ति दैवं कुकृतं न तु स्वम् ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! उस समय रथ पर बैठे हुए श्रीकृष्ण ने कर्ण से कहा—"राधानन्दन ! सौभाग्य की बात है कि आज तुम्हें धर्म का स्मरण हो रहा है । प्रायः यह देखने में आता है कि नीच मनुष्य विपत्ति में फँसने पर दैव की निन्दा करते हैं, अपने किये हुए कुकर्मों की नहीं ।

**यद् द्रौपदीमेकवस्त्रां सभाया-**
**मानाययेस्त्वं च सुयोधनश्च ।**
**दुःशासनः शकुनिः सौबलश्च**
**न ते कर्ण प्रत्यभात्तत्र धर्मः ॥२॥**

"कर्ण ! जब तुमने, दुर्योधन, दुःशासन तथा

सुबलपुत्र शकुनि ने एक वस्त्र धारण करनेवाली रजस्वला द्रौपदी को सभा में बुलवाया था, उस समय तुम्हारे मन में धर्म का विचार नहीं आया था ?

**यदा सभायां राजानमनक्षज्ञं युधिष्ठिरम् ।**
**अजैषीच्छकुनिर्ज्ञानात् क्व ते धर्मस्तदा गतः ॥३॥**

"जब कौरवसभा में जुए के खेल से अनभिज्ञ राजा युधिष्ठिर को शकुनि ने जानबूझकर छलपूर्वक हराया था, उस समय तुम्हारा धर्म कहाँ चला गया था ?

**वनवासे व्यतीते च कर्ण वर्षे त्रयोदशे ।**
**न प्रयच्छसि यद् राज्यं क्व ते धर्मस्तदा गतः ॥४॥**

"कर्ण ! वनवास का तेरहवाँ वर्ष व्यतीत हो जाने पर भी जब तुमने पाण्डवों का राज्य उन्हें वापस नहीं दिया था, उस समय तुम्हारा धर्म कहाँ चला गया था ?

**यद् भीमसेनं सर्पैश्च विषयुक्तैश्च भोजनैः ।**
**आचरत् त्वन्मते राजा क्व ते धर्मस्तदा गतः ॥५॥**

"जब राजा दुर्योधन ने तुम्हारी सम्मति से भीमसेन को विषयुक्त अन्न खिलाया और उन्हें सर्पों से डँसवाया, उस समय तुम्हारा धर्म कहाँ चला गया था ?

**यद् वारणावते पार्थान् सुप्ताञ्जतुगृहे तदा ।**
**आदीपयस्त्वं राधेय क्व ते धर्मस्तदा गतः ॥६॥**

"राधानन्दन ! उन दिनों वारणावतनगर में लाक्षाभवन के भीतर सोये हुए कुन्तीपुत्रों को जब तुमने जलाने का प्रयत्न कराया था, उस समय तुम्हारा धर्म कहाँ चला गया था ?

**यदा रजस्वलां कृष्णां दुःशासनवशे स्थिताम् ।**
**सभायां प्राहसः कर्ण क्व ते धर्मस्तदा गतः ॥७॥**

"कर्ण ! भरी सभा में दुःशासन के वश में पड़ी हुई रजस्वला द्रौपदी को लक्ष्य करके जब तुमने उपहास किया था, उस समय तुम्हारा धर्म कहाँ चला गया था ?

**राज्यलुब्धः पुनः कर्ण समाह्वयसि पाण्डवान् ।**
**यदा शकुनिमाश्रित्य क्व ते धर्मस्तदा गतः ॥८॥**

"कर्ण ! राज्य के लोभ में पड़कर तुमने शकुनि की सम्मति के अनुसार जब पाण्डवों को दुबारा जुए के लिए बुलवाया था, तब तुम्हारा धर्म कहाँ चला गया था ।

**यदाभिमन्युं बहवो युद्धे जघ्नुर्महारथाः ।**
**परिवार्य रणे बालं क्व ते धर्मस्तदा गतः ॥९॥**

"जब युद्ध में तुम बहुत-से महारथियों ने मिलकर बालक अभिमन्यु को चारों ओर से घेरकर मार डाला था, उस समय तुम्हारा धर्म कहाँ चला गया था ?"

**एवमुक्तस्तदा कर्णो वासुदेवेन भारत ।**
**लज्जयावनतो भूत्वा नोत्तरं किञ्चिदुक्तवान् ॥१०॥**

भरतभूषण ! उस समय श्रीकृष्ण के ऐसा कहने पर कर्ण ने लज्जा से अपना सिर झुका लिया, उससे कुछ भी उत्तर देते नहीं बना ।

**क्रोधात् प्रस्फुरमाणौष्ठो धनुरुद्यम्य भारत ।**
**योधयामास वै पार्थं महावेगपराक्रमः ॥११॥**

हे भारत ! वह महान् वेग और पराक्रम से सम्पन्न हो, क्रोध से ओंठ फड़फड़ाता हुआ धनुष उठाकर युद्ध करने लगा ।

**ततोऽब्रवीद् वासुदेवः फाल्गुनं पुरुषर्षभम् ।**
**दिव्यास्त्रेणैव निर्भिद्य पातयस्व महाबल ॥१२॥**

कर्ण से उक्त बातें कहकर वसुदेवनन्दन श्रीकृष्ण ने पुरुषश्रेष्ठ अर्जुन से कहा—"महाबली वीर ! तुम कर्ण को दिव्यास्त्र से घायल करके मार गिराओ ।"

**एवमुक्तस्तु देवेन क्रोधमागात्तदार्जुनः ।**
**मन्युमभ्याविशद् घोरं स्मृत्वा तत्तु धनञ्जयः ॥१३॥**

श्रीकृष्ण के ऐसा कहने पर अर्जुन उस समय कर्ण के प्रति अत्यन्त कुपित हो उठे । उसकी पिछली करतूतों को स्मरण करके उनके मन में भयानक रोष जाग उठा ।

**तं समीक्ष्य ततः कर्णो ब्रह्मास्त्रेण धनञ्जयम् ।**
**अभ्यवर्षत् पुनर्यत्नमकरोद् रथसर्जने ॥१४॥**

उन्हें कुपित देख कर्ण ने अर्जुन पर ब्रह्मास्त्र का प्रयोग करके बाणों की झड़ी लगा दी और पुनः रथ के पहिये को निकालने का प्रयत्न किया ।

**ब्रह्मास्त्रेणैव तं पार्थो ववर्ष शरवृष्टिभिः ।**
**तदस्त्रमस्त्रेणावार्य प्रजहार च पाण्डवः ॥१५॥**

तब पाण्डुनन्दन अर्जुन ने भी ब्रह्मास्त्र से ही उसके अस्त्र को शान्त करके उसके ऊपर बाणों की

वर्षा प्रारम्भ कर दी और उसे अच्छी प्रकार घायल कर दिया।

**ततः शरं महाघोरं ज्वलन्तमिव पावकम्।**
**आददे पाण्डुपुत्रस्य सूतपुत्रो जिघांसया ॥१६॥**

तब सूतपुत्र ने पाण्डुनन्दन अर्जुन का वध करने के लिए प्रदीप्त हुई अग्नि के समान एक महाभयंकर बाण हाथ में लिया।

**स सायकः कर्णभुजप्रमुक्तः**
**शक्राशनिप्रख्यरुचिः शिताग्रः।**
**भुजान्तरं प्राप्य धनञ्जयस्य**
**विवेश वल्मीकमिवोरगोत्तमः ॥१७॥**

कर्ण के हाथ से छूटा हुआ वह बाण इन्द्र के वज्र के समान प्रकाशित हो रहा था। उसका अगला भाग बहुत तीखा था। वह अर्जुन की छाती में जा लगा और जैसे उत्तम सर्प बांबी में घुस जाता है, उसी प्रकार वह उनके वक्षस्थल में समा गया।

**स गाढविद्धः समरे महामनाः**
**विघूर्णमानः श्लथहस्तगाण्डिवः।**
**चचाल बीभत्सुरमित्रमर्दनः**
**क्षितेः प्रकम्पे च यथाचलोत्तमः ॥१८॥**

रणभूमि में उस बाण की गहरी चोट खाकर महामना अर्जुन को चक्कर आ गया। गाण्डीव धनुष पर रखा हुआ उनका हाथ ढीला पड़ गया और वे शत्रुमर्दन अर्जुन भूकम्प के समय हिलते हुए श्रेष्ठ पर्वत के समान काँपने लगे।

**तदन्तरं प्राप्य वृषः सुवीरः**
**रथाङ्गमुर्वीगतमुज्जिहीर्षुः ।**
**रथादवप्लुत्य निगृह्य दोर्भ्यां**
**शशाक दैवान्न महाबलोऽपि ॥१९॥**

इसी बीच में अवसर पाकर महावीर कर्ण ने धरती में धँसे हुए पहिये को निकालने का विचार किया। वह रथ से कूद पड़ा और दोनों हाथों से पकड़कर उसे ऊपर उठाने का प्रयत्न करने लगा, परन्तु महाबली होने पर भी वह दुर्दैव के कारण अपने प्रयास में सफल न हो सका।

**ततः किरीटी प्रतिलभ्य संज्ञां**
**जग्राह बाणं यमदण्डकल्पम्।**
**ततोऽब्रवीद् वासुदेवोऽपि पार्थं**
**छिन्ध्यस्य मूर्धानमरेः शरेण ॥२०॥**

उधर होश में आने पर किरीटधारी महात्मा अर्जुन ने यमदण्ड के समान भयंकर बाण हाथ में लिया। यह देख श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा—"पार्थ! अपने इस बाण से [रथ पर चढ़ने से पूर्व ही] अपने शत्रु का शिर काट डालो।"

**तथैव सम्पूज्य वचः प्रभो सः**
**ततः शरं प्रज्वलितं प्रगृह्य।**
**जघान कक्षाममलार्कवर्णां**
**महारथे स्यन्दनचक्रमग्ने ॥२१॥**

तब 'बहुत अच्छा' कहकर अर्जुन ने श्रीकृष्ण की उस आज्ञा को सादर शिरोधार्य किया और उस प्रज्वलित बाण को हाथ में लेकर, जिसका पहिया फँसा हुआ था, कर्ण के उस विशाल रथ पर फहराती हुई सूर्य के समान प्रकाशमान ध्वजा पर प्रहार किया।

**ततः क्षुरप्रेण सुसंशितेन**
**सुवर्णपंखेन हुताग्निभासा।**
**श्रिया ज्वलन्तं ध्वजमुन्ममाथ**
**महारथस्याधिरथेः किरीटी ॥२२॥**

किरीटधारी अर्जुन ने सोने के पंखवाले और आहुति से प्रज्वलित हुई अग्नि के समान विभासित उस तीखे क्षुरप्र से महारथी कर्ण के उस ध्वज को नष्ट कर दिया, जो अपनी प्रभा से निरन्तर देदीप्यमान होता रहता था।

**यशश्च दर्पश्च तथा प्रियाणि च**
**सर्वाणि कार्याणि च तेन केतुना।**
**साकं कुरूणां हृदयानि चापतन्**
**बभूव हाहेति च निःस्वनो महान् ॥२३॥**

कटकर गिरते हुए उस ध्वजा के साथ ही कौरवों के यश, अभिमान, समस्त प्रिय कार्य और हृदय का भी पतन हो गया तथा चारों ओर महान् हाहाकार मच गया।

**दृष्ट्वा ध्वजं पातितमाशुकर्त्रा**
**कुरुप्रवीरेण निकृत्तमाजौ।**
**नाशंसिरे सूतसुतस्य सर्वे**
**जयं तदा भारत ये त्वदीयाः ॥२४॥**

भरतभूषण ! शीघ्रकारी कौरव-वीर अर्जुन के द्वारा रणभूमि में उस ध्वजा को काटकर गिराया हुआ देख उस समय आपके सभी सैनिकों ने सूतपुत्र कर्ण की विजय की आशा छोड़ दी।

**अथ त्वरन् कर्णवधाय पार्थो**
**महेन्द्रवज्रानलदण्डकल्पम् ।**
**आदत्त चाथाञ्जलिकं निषङ्गात्**
**सहस्ररश्मेरिव रश्मिभासम् ॥२५॥**

तत्पश्चात् कर्ण के वध के लिए शीघ्रता करते हुए अर्जुन ने अपने तरकस से अञ्जलिक नामक एक बाण निकाला, जो इन्द्र के वज्र और अग्नि के दण्ड के समान भयंकर एवं सूर्य की एक उत्तम किरण के समान कान्तिमान् था।

**ततस्तु तं वै शरमप्रमेयं**
**गाण्डीवधन्वा धनुषि व्ययुंक्त ।**
**युक्त्वा महास्त्रेण परेण चापं**
**विकृष्य गाण्डीवमुवाच शीघ्रम् ॥२६॥**

तदनन्तर गाण्डीवधारी अर्जुन ने उस अप्रमेय शक्तिशाली बाण को धनुष पर रखा तथा उसे उत्तम एवं महान् दिव्यास्त्र से अभिमन्त्रित करके तुरन्त ही गाण्डीव को खींचते हुए कहा—

**अयं महास्त्रप्रहितो महाशरः**
**शरीरहृच्चासुहरश्च दुर्हृदः ।**
**तपोऽस्ति तप्तं गुरवश्च तोषिता**
**मया यदीष्टं सुहृदां श्रुतं तथा ॥२७॥**
**अनेन सत्येन निहन्त्वयं शरः**
**सुसंहितः कर्णमरिं ममोर्जितम् ।**
**इत्यूचिवांस्तं प्रमुमोच सायकं**
**धनञ्जयः कर्णवधाय सत्वरम् ॥२८॥**

"यह महान् दिव्यास्त्र से प्रेरित महाबाण शत्रु के शरीर, हृदय और प्राणों का विनाश करनेवाला है। यदि मैंने तप किया हो, गुरुजनों को सेवा द्वारा सन्तुष्ट रखा हो, यज्ञ किया हो और हितैषी मित्रों की बातें ध्यानपूर्वक सुनी हों तो इस सत्य के प्रभाव से यह सम्यक् प्रकार से संधान किया हुआ बाण मेरे बलशाली शत्रु कर्ण का नाश कर डाले।" ऐसा कहकर धनञ्जय ने उस बाण को शीघ्र ही कर्ण के वध के लिए छोड़ दिया।

**तथा विमुक्तो बलिनार्कतेजाः**
**प्रज्वालयामास दिशो नभश्च ।**
**ततोऽर्जुनस्तस्य शिरो जहार**
**वृत्रस्य वज्रेण यथा महेन्द्रः ॥२९॥**

महाबली अर्जुन के द्वारा इस प्रकार छोड़ा हुआ वह सूर्य के समान तेजस्वी बाण आकाश एवं दिशाओं को प्रकाशित करने लगा। जैसे इन्द्र ने अपने वज्र से वृत्रासुर का सिर काट गिराया था, उसी प्रकार अर्जुन ने उस बाण द्वारा कर्ण का मस्तक धड़ से अलग कर दिया।[1]

---

१. कर्ण की दानवीरता प्रसिद्ध है। लोक में ऐसा प्रवाद फैला हुआ है कि कर्ण की मृत्यु पर श्रीकृष्ण बहुत दुःखी हुए। अर्जुन ने उनके दुःखी होने का कारण पूछा तो उन्होंने कहा—"आज संसार से एक बहुत बड़ा दानी उठ गया।" अर्जुन को विश्वास नहीं हुआ। तब श्रीकृष्ण और अर्जुन दोनों ब्राह्मण का वेश बनाकर रणभूमि में पहुँचे, जहाँ कर्ण अन्तिम साँस ले रहा था। दोनों ने उच्च स्वर से कहा—"दानवीर कर्ण की जय हो ! हम आपकी कीर्ति सुनकर कुछ प्राप्ति की इच्छा से आपके पास आये हैं।" कर्ण बोला—"मैं तो मृत्यु के मुख में पड़ा हुआ हूँ। यहाँ मेरे पास कुछ नहीं है। आप मेरे घर पर चले जाइए, आपकी अभीष्ट वस्तु आपको प्राप्त हो जाएगी।" ब्राह्मण-वेशधारी श्रीकृष्ण और अर्जुन ने कहा—"क्या हम निराश लौट जाएँ ? हम घर नहीं जाएँगे, आप यदि कुछ दे सकें तो यहीं दे दें।" उनकी बात सुनकर कर्ण ने कुछ स्मरण करते हुए कहा—"मेरे मुख में एक स्वर्ण का दाँत लगा हुआ है। आप तोड़कर इसे निकाल लें।" छद्मवेशधारी ब्राह्मण बोले—"हम यह पाप नहीं कर सकते। आपको कुछ देना हो तो दें, अन्यथा हम लौटते हैं।" कर्ण बोला—"अच्छा आप यह पास में पड़ा हुआ पत्थर मुझे पकड़ा दें। मैं स्वयं ही अपना दाँत तोड़कर आपको दे दूँगा।" इसपर इन ब्राह्मणों ने कहा—"हम दान लेने आये हैं, नौकरी करने नहीं आये।" यह सुनकर कर्ण ने स्वयं सरक-सरककर वह पत्थर उठाया और उससे अपना सोने का दाँत तोड़कर कहा—"लीजिए।" ब्राह्मण बोले—"यह रक्त से सना हुआ

**तत् प्रापतच्चाञ्जलिकेन छिन्न-**
**मथास्य कायो निपपात पश्चात् ।**
**तदद्भुतं सर्वमनुष्ययोधाः**
**संदृष्टवन्तो निहिते स्म कर्णे ॥३०॥**

अञ्जलिक से कटा हुआ कर्ण का वह मस्तक पृथिवी पर गिर पड़ा। तत्पश्चात् उसका शरीर भी धराशायी हो गया। कर्ण के मारे जाने पर इस अद्भुत दृश्य को वहाँ खड़े हुए सब लोगों ने अपनी आँखों से देखा।

**शंखाँस्ततः पाण्डवा दध्मुरुच्चैर्**
**दृष्ट्वा कर्णं पातितं फाल्गुनेन ।**
**तूर्याणि सञ्जघ्नुरतीव हृष्टा**
**वासांसि चैवादुधुवुर्भुजाँश्च ॥३१॥**

कर्ण को अर्जुन द्वारा मार गिराया हुआ देख पाण्डवों ने उच्च स्वर से शंख बजाये। वे बड़े हर्ष में भरकर बाजे बजाने और कपड़े तथा हाथ हिलाने लगे।

**कर्णं तु शूरं पतितं पृथिव्यां**
**शराचितं शोणितदिग्धगात्रम् ।**
**दृष्ट्वा शयानं भुवि मद्रराज-**
**श्छिन्नध्वजेनाथ ययौ रथेन ॥३२॥**

शूरवीर कर्ण को बाणों से व्याप्त और खून से लथपथ होकर भूमि पर पड़ा हुआ देख मद्रराज शल्य उस कटी हुई ध्वजावाले रथ के द्वारा ही वहाँ से भाग खड़े हुए।

**कर्णे हते कौरवाः प्राद्रवन्त**
**भयार्दिता गाढहताश्च संख्ये ।**
**अवेक्षमाणा मुहुरर्जुनस्य**
**ध्वजं महान्तं वपुषा ज्वलन्तम् ॥३३॥**

कर्ण के मारे जाने पर युद्ध में अत्यन्त घायल हुए कौरव सैनिक अर्जुन के प्रज्वलित ध्वज को बारम्बार देखते हुए भय से पीड़ित हो भागने लगे।

**निपातितस्यन्दनवाजिनागं**
**बलं च दृष्ट्वा हतसूतपुत्रम् ।**
**दुर्योधनोऽश्रुप्रतिपूर्णनेत्रो**
**दीनो मुहुर्निःश्वसंश्चार्तरूपः ॥३४॥**

कौरव-सेना के रथ, घोड़े और हाथी मार डाले गये थे। सूतपुत्र का भी वध कर दिया गया था। उस दशा में उस सेना को देखकर दुर्योधन की आँखों में आँसू आ गये और वह बारम्बार लम्बी साँस खींचता हुआ दीन एवं दुःखी हो गया।

**मद्राधिपश्चापि विमूढचेता-**
**स्तूर्णं रथेनापकृतध्वजेन ।**
**दुर्योधनस्यान्तिकमेत्य राजन्**
**सबाष्पदुःखाद् वचनं बभाषे ॥३५॥**

राजन् ! जिसकी ध्वजा काट दी गई थी, उस रथ के द्वारा मद्रराज शल्य भी विमूढ़-चित्त होकर तुरन्त दुर्योधन के पास गये और दुःख से आँसू बहाते हुए इस प्रकार बोले—

**विशीर्णनागाश्वरथप्रवीरं**
**बलं त्वदीयं यमराष्ट्रकल्पम् ।**
**अन्योन्यमासाद्य हतं महद्भिर्-**
**नराश्वनागैर्गिरिकूटकल्पैः ॥३६॥**

"नरेश्वर ! तुम्हारी सेना के हाथी, घोड़े, रथ तथा प्रमुख वीर नष्ट-भ्रष्ट हो गये। सारी सेना में यमराज का राज्य-सा हो गया है। पर्वत-शिखरों के समान विशाल हाथी, घोड़े और पैदल मनुष्य एक-दूसरे से टक्कर लेकर अपने प्राण खो बैठे हैं।

**नैतादृशं भारत युद्धमासीद्**
**यथा तु कर्णार्जुनयोर्बभूव ।**

---

दाँत हम नहीं ले सकते।" तब कर्ण ने सरकते हुए अपना धनुष-बाण उठाया और भूमि में मारा जिससे जलधारा [फव्वारा] फूट पड़ी। उस दाँत को इस जलधारा में धोकर कर्ण ने उन्हें दे दिया। तब श्रीकृष्ण ने उन्हें अपना और अर्जुन का यथार्थ परिचय दिया।

कर्ण दानवीर थे, इसमें कोई सन्देह नहीं है, परन्तु उपर्युक्त सारी घटना अनर्गल और कपोल-कल्पित है। 'महाभारत' में इसका उल्लेख नहीं है। यह सब तो राधेश्याम कथावाचक की कल्पना मात्र है। यहाँ स्पष्ट कहा है कि **'ततोऽर्जुनस्तस्य शिरो जहार'**—अर्जुन ने उसका सिर धड़ से अलग कर दिया। जब सिर धड़ से अलग हो गया तब दाँत तोड़कर देने की बात कैसे सम्भव हो सकती है ?

**ग्रस्तौ हि कर्णेन समेत्य कृष्णा-**
**वन्ये च सर्वे तव शत्रवो ये ।।३७।।**

"भरतभूषण ! आज कर्ण और अर्जुन में जैसा युद्ध हुआ है, वैसा पहले कभी नहीं हुआ था। कर्ण ने धावा करके श्रीकृष्ण, अर्जुन तथा तुम्हारे अन्य सब शत्रुओं को भी प्रायः प्राणों के संकट में डाल दिया था, परन्तु कोई फल नहीं निकला।

**दैवं ध्रुवं पार्थवशात् प्रवृत्तं**
**यत्पाण्डवान्पाति हिनस्ति चास्मान् ।**
**तवार्थसिद्धयर्थकरास्तु सर्वे**
**प्रसह्य वीरा निहता द्विषद्भिः ।।३८।।**

"निश्चय ही दैव कुन्तीपुत्रों के अधीन होकर कार्य कर रहा है, क्योंकि वह पाण्डवों की तो रक्षा कर रहा है और हमारा सत्यानाश। यही कारण है कि तुम्हारे अर्थ की सिद्धि के लिए प्रयत्न करनेवाले प्रायः सभी वीर शत्रुओं के हाथ से बलपूर्वक मारे गये।

**कुबेरवैवस्वतवासवानां**
**तुल्यप्रभावा नृपते सुवीराः ।**
**वीर्येण शौर्येण बलेन चैव**
**तैस्तैस्तु युक्ता विविधैर्गुणौघैः ।।३९।।**

"राजन् ! तुम्हारी सेना के श्रेष्ठ वीर कुबेर, यम और इन्द्र के समान प्रभावशाली तथा बल, पराक्रम, शौर्य, और अन्य नाना प्रकार के गुण-समूहों से समलंकृत थे।

**अवध्यकल्पा निहता नरेन्द्रा-**
**स्तवार्थकामा युधि पाण्डवैस्ते ।**
**तन्मा शुचो भारत दिष्टमेतत्**
**पर्याश्वस त्वं न सदास्ति सिद्धिः ।।४०।।**

"जो-जो राजा तुम्हारे स्वार्थ की सिद्धि चाहनेवाले और अवध्य के समान थे, उन सबको पाण्डवों ने युद्ध में मार डाला। भारत ! अब तुम शोक मत करो। यह सब प्रारब्ध का खेल है। सबको सदा ही सिद्धि नहीं मिलती, ऐसा जानकर धैर्य धारण करो।"

**एतद् वचो मद्रपतेर्निशम्य**
**स्वं चाप्यनीतं मनसा निरीक्ष्य ।**
**दुर्योधनो दीनमना विसंज्ञः**
**पुनः पुनर्न्यश्वसदार्तरूपः ।।४१।।**

मद्रराज शल्य की ये बातें सुनकर और अपने अन्याय पर भी मन-ही-मन दृष्टि डालकर दुर्योधन बहुत उदास एवं दुःखी हो गया। वह अत्यन्त पीड़ित और अचेत-सा होकर बारम्बार लम्बी श्वासें भरने लगा।

**इति महाभारते कर्णपर्वणि षड्विंशोऽध्यायः ।।२६।।**

## सप्तविंशोऽध्यायः

### कर्णवध से युधिष्ठिर का प्रसन्न हो श्रीकृष्ण और अर्जुन की प्रशंसा करना

सञ्जय उवाच

**कर्णं तु निहतं दृष्ट्वा शत्रुभिः परमाहवे ।**
**भीता दिशो व्यकीर्यन्त तावकाः क्षतविक्षताः ।।१।।**

**सञ्जय कहते हैं**—शत्रुओं ने उस महायुद्ध में वैकर्तन कर्ण को मार डाला, यह देखकर आपके सैनिक भयभीत हो उठे थे। उनका सारा शरीर घावों से भर गया था, अतः वे भागकर सम्पूर्ण दिशाओं में बिखर गये।

**ततोऽवहारं चक्रुस्ते योधाः सर्वे समन्ततः ।**
**निवार्यमाणाश्चोद्विग्नास्तावका भृशदुःखिताः ।।२।।**

तब आपके समस्त योद्धा जो अत्यन्त दुःखी और उद्विग्न हो रहे थे, मना करने पर सब ओर से युद्ध बन्द करके लौटने लगे।

**तेषां तन्मतमाज्ञाय पुत्रो दुर्योधनस्तव ।**
**अवहारं ततश्चक्रे शल्यस्यानुमते नृप ।।३।।**

प्रजेश्वर ! उन सबका अभिप्राय जानकर राजा शल्य की अनुमति ले आपके पुत्र दुर्योधन ने सेना को लौटने की आज्ञा दी।

**हते कर्णे महाराज निराशाः कुरवोऽभवन् ।**
**जीवितेष्वपि राज्येष दारेषु च धनेषु च ।।४।।**

महाराज ! कर्ण के मारे जाने पर कौरव अपने राज्य से, धन से, स्त्रियों और जीवन से भी निराश हो गये।

**तथा निपतिते कर्णे परसैन्ये च विद्रुते।**
**आश्लिष्य पार्थं दाशार्हो हर्षाद् वचनमब्रवीत् ॥५॥**

उधर जब कर्ण मारा गया और शत्रुसेना भाग खड़ी हुई तब दशार्हनन्दन श्रीकृष्ण अर्जुन को हृदय से लगाकर बड़े हर्ष के साथ इस प्रकार बोले—

**हतो वज्रभृता वृत्रस्त्वया कर्णो धनञ्जय।**
**वृत्रकर्णवधं घोरं कथयिष्यन्ति मानवाः ॥६॥**

"धनञ्जय ! पूर्वकाल में वज्रधारी इन्द्र ने वृत्रासुर का वध किया था और आज तुमने कर्ण को मौत के घाट उतारा है। वृत्रासुर और कर्ण दोनों के वध का वृत्तान्त बड़ा भयंकर है। मनुष्य सदा इसकी चर्चा करते रहेंगे।

**तमिमं विक्रमं लोके प्रथितं ते यशस्करम्।**
**निवेदयावः कौन्तेय कुरुराजस्य धीमतः ॥७॥**

"कुन्तीनन्दन ! चलो, हम दोनों तुम्हारे इस विश्वविख्यात और यशोवर्धक पराक्रम का वृत्तान्त बुद्धिमान् कुरुराज युधिष्ठिर को बताएँ।

**वधं कर्णस्य संग्रामे दीर्घकालचिकीर्षितम्।**
**निवेद्य धर्मराजाय त्वमानृण्यं गमिष्यसि ॥८॥**

"उन्हें दीर्घकाल से युद्ध में कर्ण के वध की अभिलाषा थी। आज धर्मराज को यह समाचार बताकर तुम उऋण हो जाओगे।

**वर्तमाने महायुद्धे तव कर्णस्य चोभयोः।**
**द्रष्टुमायोधनं पूर्वमागतो धर्मनन्दनः ॥९॥**

"जब यह महायुद्ध चल रहा था, उस समय तुम्हारा और कर्ण का युद्ध देखने के लिए धर्मराज युधिष्ठिर पहले यहाँ आये थे।

**भृशं तु गाढविद्धत्वान्नाशकत् स्थातुमाहवे।**
**ततः स शिबिरं गत्वा स्थितवान् पुरुषर्षभः ॥१०॥**

"परन्तु गहरी चोट खाने के कारण वे देर तक रणभूमि में ठहर न सके। यहाँ से शिबिर में जाकर ये पुरुषरत्न युधिष्ठिर विश्राम कर रहे हैं।"

**तथोत्युक्तः केशवस्तु पार्थेन यदुपुङ्गवः।**
**पर्यावर्तयदव्यग्रो रथं रथवरस्य तम् ॥११॥**

तब अर्जुन ने श्रीकृष्ण से 'तथास्तु' कहकर उनकी आज्ञा शिरोधार्य की। तदनन्तर यदुकुलभूषण श्रीकृष्ण ने शान्तभाव से रथिश्रेष्ठ अर्जुन के उस रथ को युधिष्ठिर के शिबिर की ओर लौटाया।

**पार्थमादाय गोविन्दो ददर्श च युधिष्ठिरम्।**
**शयानं राजशार्दूलं काञ्चने शयनोत्तमे।**
**अगृह्णीतां च प्रमुदौ चरणौ पार्थिवस्य तौ ॥१२॥**

श्रीकृष्ण ने अर्जुन को साथ लेकर राजा युधिष्ठिर का दर्शन किया। उस समय नृपश्रेष्ठ युधिष्ठिर सोने के उत्तम पलंग पर सो रहे थे। उन दोनों ने वहाँ पहुँचकर बड़ी प्रसन्नता के साथ राजा की चरण-वन्दना की।

**तयोः प्रहर्षमालक्ष्य हर्षादश्रूण्यवर्तयत्।**
**राधेयं निहतं मत्वा समुत्तस्थौ युधिष्ठिरः ॥१३॥**

उन दोनों के हर्षोल्लास को देखकर राजा युधिष्ठिर यह समझ गये कि राधानन्दन कर्ण मारा गया, अतः वे शय्या से उठ खड़े हुए और नेत्रों से आनन्दाश्रु बहाने लगे।

**तत् तस्मै तद् यथावृत्तं वासुदेवः सहार्जुनः।**
**कथयामास कर्णस्य निधनं यदुपुङ्गवः ॥१४॥**

उस समय अर्जुनसहित यदुकुलभूषण वसुदेवनन्दन श्रीकृष्ण ने कर्ण के मारे जाने का समाचार उन्हें यथावत् रूप से कह सुनाया।

**ईषदुत्स्मयमानस्तु कृष्णो राजानमब्रवीत्।**
**युधिष्ठिरं हतामित्रं कृताञ्जलिरथाच्युतः ॥१५॥**

फिर श्रीकृष्ण हाथ जोड़कर कुछ मुस्कराते हुए, जिसका शत्रु मारा गया था, उस राजा युधिष्ठिर से इस प्रकार बोले—

**दिष्टया गाण्डीवधन्वा च पाण्डवश्च वृकोदरः।**
**त्वं चापि कुशली राजन् माद्रीपुत्रौ च पाण्डवौ ॥१६॥**

"राजन् ! बड़े सौभाग्य की बात है कि गाण्डीवधारी अर्जुन, पाण्डव भीमसेन, पाण्डुकुमार माद्रीनन्दन नकुल-सहदेव और आप भी सकुशल हैं।

**हतो वैकर्तनो राजन् सूतपुत्रो महारथः।**
**दिष्टया जयसि राजेन्द्र दिष्टया वर्धसि भारत ॥१७॥**

"राजन् ! महारथी सूतपुत्र वैकर्तन कर्ण मारा गया। राजन् ! सौभाग्य से आप विजयी हो रहे हैं।

हे भारत ! आपकी वृद्धि हो रही है, यह भी सौभाग्य की बात है ।

**यस्तु द्यूतजितां कृष्णां प्राहसत् पुरुषाधमः ।**
**तस्याद्य सूतपुत्रस्य भूमिः पिबति शोणितम् ॥१८॥**

"जिस नराधम ने जुए में जीती हुई द्रौपदी का उपहास किया था, आज पृथिवी उस सूतपुत्र कर्ण का रक्तपान कर रही है ।

**शेतेऽसौ शरपूर्णाङ्गः शत्रुस्ते कुरुपुङ्गव ।**
**तं पश्य पुरुषव्याघ्र विभिन्नं बहुभिः शरैः ॥१९॥**

"कुरुकुलश्रेष्ठ ! आपका वह शत्रु समराङ्गण में सो रहा है और उसके सारे शरीर में बाण धँसे हुए हैं । नरव्याघ्र ! अनेक बाणों से क्षत-विक्षत हुए उस कर्ण को आप देखिए ।"

**इति श्रुत्वा वचस्तस्य केशवस्य महात्मनः ।**
**धर्मपुत्रः प्रहृष्टात्मा दाशार्हं वाक्यमब्रवीत् ॥२०॥**

राजन् ! महात्मा कृष्ण का यह वचन सुनकर धर्मपुत्र युधिष्ठिर का चित्त प्रसन्न हो गया । उन्होंने दशार्हनन्दन श्रीकृष्ण से इस प्रकार कहना आरम्भ किया—

**तव कृष्ण प्रसादेन पाण्डवोऽयं धनञ्जयः ।**
**जिगायाभिमुखः शत्रून्न चासीद्विमुखः क्वचित् ॥२१॥**

"श्रीकृष्ण ! आपके प्रसाद से ही ये पाण्डुपुत्र धनञ्जय सदा सामने रहकर युद्ध में शत्रुओं पर विजयी हुए हैं और कभी युद्ध से मुख नहीं मोड़ा है ।

**जयश्चैव ध्रुवोऽस्माकं न त्वस्माकं पराजयः ।**
**यदा त्वं युधि पार्थस्य सारथ्यमुपजग्मिवान् ॥२२॥**

"प्रभो ! जब आप युद्ध में अर्जुन के सारथि बने थे, तभी हमें यह विश्वास हो गया था कि हम लोगों की विजय निश्चित है, हमारी पराजय नहीं हो सकती ।

**भीष्मो द्रोणश्च कर्णश्च महात्मा गौतमः कृपः ।**
**अन्ये च बहवः शूरा ये च तेषां पदानुगाः ।**
**त्वद्बुद्ध्या निहते कर्णे हता गोविन्द सर्वथा ॥२३॥**

"गोविन्द ! भीष्म, द्रोणाचार्य, कर्ण, महात्मा गौतमवंशी कृपाचार्य तथा इनके पीछे चलनेवाले जो और भी बहुत-से शूरवीर हैं एवं रहे हैं, आपकी बुद्धि से आज कर्ण के मारे जाने पर उन सबका वध हो गया, ऐसा मैं मानता हूँ ।

**अद्य राजास्मि गोविन्द पृथिव्यां भ्रातृभिः सह ।**
**त्वया नाथेन वीरेण विदुषा परिपालितः ॥२४॥**

"गोविन्द ! आप जैसे विद्वान् और वीर स्वामी एवं संरक्षक के द्वारा सुरक्षित होकर आज मैं भाइयों-सहित इस भूमण्डल का राजा हो गया ।

**दिष्टया जयसि गोविन्द दिष्टया शत्रुर्निपातितः ।**
**दिष्टया गाण्डीवधन्वा च विजयी पाण्डुनन्दनः ॥२५॥**

"गोविन्द ! बड़े भाग्य से आपकी विजय हुई है । भाग्य से ही हमारा शत्रु कर्ण आज मौत के घाट उतार दिया गया है और सौभाग्य से ही गाण्डीव-धारी पाण्डुपुत्र अर्जुन विजयी हुए हैं ।

**त्रयोदश समास्तीर्णा जागरेण सुदुःखिताः ।**
**स्वप्स्यामोऽद्य सुखं रात्रौ त्वत्प्रसादान्महाभुज ॥२६॥**

"महाबाहो ! अत्यन्त दुःखी होकर हम लोगों ने जागते हुए तेरह वर्ष व्यतीत किये हैं । आज की रात आपकी कृपा से हम लोग सुखपूर्वक सो सकेंगे ।"

**एवं स बहुशो राजा प्रशशंस जनार्दनम् ।**
**अर्जुनं च कुरुश्रेष्ठं महाराजो युधिष्ठिरः ॥२७॥**

राजन् ! इस प्रकार धर्मराज राजा युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण और कुरुश्रेष्ठ अर्जुन की बारम्बार प्रशंसा की ।

**दृष्ट्वा च निहतं कर्णं सपुत्रं पार्थसायकैः ।**
**पुनर्जातमिवात्मानं मेने स च महीपतिः ॥२८॥**

पुत्रसहित कर्ण को अर्जुन के बाणों से मारा गया देख राजा युधिष्ठिर ने अपना नया जन्म हुआ-सा माना ।

**समेत्य च महाराज कुन्तीपुत्रं युधिष्ठिरम् ।**
**हर्षयन्ति स्म राजानं हर्षयुक्ता महारथाः ॥२९॥**

महाराज ! उस समय हर्ष में भरे हुए पाण्डव-पक्ष के महारथी कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर से मिलकर उनका हर्ष बढ़ाने लगे ।

**ते वर्धयित्वा नृपतिं धर्मात्मानं युधिष्ठिरम् ।**
**जितकाशिनो लब्धलक्ष्या युद्धशौण्डाः प्रहारिणः ॥३०॥**
**स्तुवन्तः स्तवयुक्ताभिर्वाग्भिः कृष्णौ परन्तपौ ।**
**जग्मुः स्वशिबिरायैव मुदा युक्ता महारथाः ॥३१॥**

वे विजय से उल्लसित हो रहे थे । उनका लक्ष्य

सिद्ध हो गया था। वे युद्धकुशल महारथी योद्धा धर्मात्मा राजा युधिष्ठिर को बधाई देकर और स्तुति-युक्त वचनों द्वारा शत्रुसन्तापक श्रीकृष्ण और अर्जुन की प्रशंसा करते हुए बड़ी प्रसन्नता के साथ अपने-अपने शिबिरों को गये।

**एवमेष क्षयो वृत्तः सुमहाँल्लोमहर्षणः।**
**तव दुर्मन्त्रिते राजन् किमर्थमनुशोचसि ॥३२॥**

राजन्! इस प्रकार आपकी कुमन्त्रणा के कारण यह रोमाञ्चकारी महान् जनसंहार हुआ है। अब आप किसलिए बारम्बार शोक करते हैं?

वैशम्पायन उवाच

**श्रुत्वैतदप्रियं राजा धृतराष्ट्रोऽम्बिकासुतः।**
**पपात भूमौ निश्चेष्टश्छिन्नमूल इव द्रुमः ॥३३॥**

**वैशम्पायनजी कहते हैं**—जनमेजय! यह अप्रिय समाचार सुनकर अम्बिकानन्दन राजा धृतराष्ट्र निश्चेष्ट हो कटे हुए वृक्ष की भाँति पृथिवी पर गिर पड़े।

**तथा सा पतिता देवी गान्धारी दीर्घदर्शिनी।**
**शुशोच बहुलालापैः कर्णस्य निधनं युधि ॥३४॥**

इसी प्रकार दूरदर्शिनी गान्धारीदेवी भी पछाड़ खाकर गिर पड़ी और बहुत विलाप करती हुई युद्ध में कर्ण की मृत्यु के लिए शोक करने लगी।

**तां पर्यगृह्णाद् विदुरो नृपतिं सञ्जयस्तथा।**
**पर्याश्वासयतां चैव तावुभावेव भूमिपम् ॥३५॥**

उस समय विदुरजी ने गान्धारीदेवी को और सञ्जय ने राजा धृतराष्ट्र को सँभाला। फिर दोनों ही मिलकर राजा को समझाने-बुझाने लगे।

**इति महाभारते कर्णपर्वणि सप्तविंशोऽध्यायः ॥२७॥**

**॥ इति कर्णपर्व सम्पूर्णम् ॥**

# शल्यपर्व

## प्रथमोऽध्यायः

### शल्य तथा दुर्योधन के वध का वृत्तान्त सुनकर धृतराष्ट्र का मूर्च्छित होना और विदुर का उन्हें समझाना

जनमेजय उवाच

**एवं निपातिते कर्णे समरे सव्यसाचिना।**
**अल्पावशिष्टाः कुरवः किमकुर्वत वै द्विज ॥१॥**

**जनमेजय ने पूछा**—हे ब्रह्मन्! जब सव्यसाची अर्जुन ने रणभूमि में कर्ण को मार गिराया, तब थोड़े-से बचे हुए सैनिकों ने क्या किया?

**एतदिच्छाम्यहं श्रोतुं तदाचक्ष्व द्विजोत्तम।**
**न हि तृप्यामि पूर्वेषां शृण्वानश्चरितं महत् ॥२॥**

द्विजश्रेष्ठ! मैं यह सब वृत्तान्त सुनना चाहता हूँ। मुझे अपने पूर्वजों का महान् चरित्र सुनते-सुनते तृप्ति नहीं हो रही है, अतः आप इसका वर्णन कीजिए।

वैशम्पायन उवाच

**ततः कर्णे हते राजन् धार्तराष्ट्रः सुयोधनः।**
**भृशं शोकार्णवे मग्नो निराशः सर्वतोऽभवत् ॥३॥**

**वैशम्पायनजी बोले**—राजन्! कर्ण के मारे जाने पर धृतराष्ट्रनन्दन राजा दुर्योधन शोकसागर में डूब गया और सब ओर से निराश हो गया।

**स दैवं बलवन्मत्वा भवितव्यं च पार्थिवः।**
**संग्रामे निश्चयं कृत्वा पुनर्युद्धाय निर्ययौ ॥४॥**

परन्तु राजा दुर्योधन ने दैव और भवितव्यता को प्रबल मानकर युद्ध जारी रखने का ही दृढ़ निश्चय करके अगले दिन युद्ध के लिए प्रस्थान किया।

**शल्यं सेनापतिं कृत्वा विधिवद् राजपुङ्गवः।**
**रणाय निर्ययौ राजा हतशेषैर्नृपैः सह ॥५॥**

नृपश्रेष्ठ राजा दुर्योधन शल्य को विधिपूर्वक सेनापति-पद पर अभिषिक्त कर मरने से बचे हुए राजाओं के साथ युद्ध के लिए निकला।

**ततः शल्यो महाराज कृत्वा कदनमाहवे।**
**ससैन्योऽथ स मध्याह्ने धर्मराजेन घातितः ॥६॥**

महाराज! तब सेनासहित शल्य युद्ध में बड़ा भारी नरसंहार करके मध्याह्नकाल में धर्मराज युधिष्ठिर के हाथों मारे गये।

**ततो दुर्योधनो राजा हतबन्धू रणाजिरात्।**
**अपसृत्य ह्रदं घोरं विवेश रिपुजाद् भयात् ॥७॥**

तब राजा दुर्योधन अपने भाइयों के मारे जाने पर रणभूमि से दूर जाकर शत्रु के भय से एक भयंकर तालाब में घुस गया।

**अथापराह्णे तस्याह्नः परिवार्य सुयोधनः।**
**ह्रदादाहूय युद्धाय भीमसेनेन पातितः ॥८॥**

तत्पश्चात् उसी दिन अपराह्णकाल में दुर्योधन पर घेरा डालकर उसे युद्ध के लिए तालाब से बुलाकर भीमसेन ने मार गिराया।

**तस्मिन् हते महेष्वासे हतशिष्टास्त्रयो रथाः।**
**संरम्भान्निशि राजेन्द्र जघ्नुः पाञ्चालसोमकान् ॥९॥**

हे राजेन्द्र! उस महाधनुर्धर दुर्योधन के मारे जाने पर मरने से बचे हुए तीन रथी कृपाचार्य, कृतवर्मा और अश्वत्थामा ने सोते हुए पाञ्चालों और सोमकों को रोषपूर्वक मार डाला।

**ततः पूर्वाह्णसमये शिबिरादेत्य सञ्जयः।**
**ददर्श नृपतिश्रेष्ठं प्रज्ञाचक्षुमीश्वरम् ॥१०॥**

तत्पश्चात् पूर्वाह्णकाल में सञ्जय ने शिबिर से लौटकर अपने स्वामी प्रज्ञाचक्षु नृपश्रेष्ठ धृतराष्ट्र का

दर्शन किया।

**रुदन्नेवाब्रवीद् वाक्यं राजानं जनमेजय।**
**सञ्जयोऽहं नरव्याघ्र नमस्ते भरतर्षभ ॥११॥**

जनमेजय ! उस समय सञ्जय ने रोते हुए ही धृतराष्ट्र से कहा—"नरव्याघ्र ! भरतभूषण ! मैं सञ्जय हूँ। आपको नमस्कार है।

**मद्राधिपो हतः शल्यः शकुनिः सौबलस्तथा।**
**उलूकः पुरुषव्याघ्र कैतव्यो दृढविक्रमः ॥१२॥**

"पुरुषसिंह ! मद्रराज शल्य, सुबलपुत्र शकुनि और जुआरी का पुत्र सुदृढ़ पराक्रमी उलूक—ये सब-के-सब मारे गये।

**दुर्योधनो हतो राजा यथोक्तं पाण्डवेन ह।**
**भग्नसक्थो महाराज शेते पांसुषु रूषितः ॥१३॥**

"महाराज ! जैसा पाण्डुपुत्र भीमसेन ने कहा था, उसी के अनुसार राजा दुर्योधन भी मारा गया। उसकी जाँघ टूट गई और वह धूल-धूसर होकर पृथिवी पर पड़ा है।

**धृष्टद्युम्नो महाराज शिखण्डी चापराजितः।**
**उत्तमौजा युधामन्युस्तथा राजन् प्रभद्रकाः ॥१४॥**
**पाञ्चालाश्च नरव्याघ्र चेदयश्च निषूदिताः।**
**तव पुत्रा हताः सर्वे द्रौपदेयाश्च भारत ॥१५॥**

"महाराज ! नरव्याघ्र नरेश ! धृष्टद्युम्न, अपराजित वीर शिखण्डी, उत्तमौजा, युधामन्यु, प्रभद्रकगण, पाञ्चाल और चेदिदेशीय योद्धाओं का भी संहार हो गया। भारत ! आपके तथा द्रौपदी भी सभी पुत्र मारे गये।

**नरा विनिहताः सर्वे गजाश्च विनिपातिताः।**
**रथिनश्च नरव्याघ्र हयाश्च निहता युधि ॥१६॥**

"नरव्याघ्र ! रणभूमि में समस्त पैदल मनुष्य, गजारोही, रथी और घुड़सवार भी मार गिराये गये।

**किञ्चिच्छेषं च शिबिरं तावकानां कृतं प्रभो।**
**पाण्डवानां कुरूणां च समासाद्य परस्परम् ॥१७॥**

प्रभो ! पाण्डवों तथा कौरवों में परस्पर संघर्ष होकर आपके पुत्रों तथा पाण्डवों के शिबिर में किञ्चिन्मात्र ही शेष रह गया है।

**प्रायः स्त्रीशेषमभवज्जगत् कालेन मोहितम्।**
**सप्त पाण्डवतः शेषा धार्तराष्ट्रास्त्रयो रथाः ॥१८॥**

"काल से मोहित हुए सारे संसार में प्रायः स्त्रियाँ ही शेष रह गई हैं। पाण्डव-पक्ष में सात और आपके पक्ष में तीन रथी मरने से बचे हैं।

**ते चैव भ्रातरः पञ्च वासुदेवोऽथ सात्यकिः।**
**कृपश्च कृतवर्मा च द्रौणिश्च जयतां वरः ॥१९॥**

"उधर पाँचों भाई पाण्डव, श्रीकृष्ण और सात्यकि शेष हैं और इधर कृपाचार्य, कृतवर्मा और विजयी वीरों में श्रेष्ठ अश्वत्थामा जीवित हैं।

**अक्षौहिणीनां सर्वासां समेतानां जनेश्वर।**
**एते शेषा महाराज सर्वेऽन्ये निधनं गताः ॥२०॥**

"प्रजेश्वर ! महाराज ! उभय पक्ष में जो समस्त अट्ठारह अक्षौहिणी सेनाएँ एकत्र हुई थीं, उनमें से ये ही रथी शेष रह गये हैं, अन्य सब लोग काल के गाल में चले गये।"

वैशम्पायन उवाच

**एतत् श्रुत्वा वचः क्रूरं धृतराष्ट्रो जनेश्वरः।**
**निपपात स राजेन्द्रो गतसत्त्वो महीतले ॥२१॥**

**वैशम्पायनजी कहते हैं**—जनमेजय ! यह वचन सुनकर राजाधिराज प्रजेश्वर धृतराष्ट्र प्राणहीन-से होकर पृथिवी पर गिर पड़े।

**लब्ध्वा तु स नृपः संज्ञां धृतराष्ट्रोऽम्बिकासुतः।**
**पुनर्गावल्गणिं सूतं पर्यपृच्छद् यथातथम् ॥२२॥**

अम्बिकानन्दन राजा धृतराष्ट्र ने होश में आकर गवल्गणपुत्र सञ्जय से पुनः युद्ध का याथातथ्य समाचार पूछा।

धृतराष्ट्र उवाच

**भीष्मद्रोणौ हतौ श्रुत्वा सूतपुत्रं च घातितम्।**
**सेनापतिं प्रणेतारं किमकुर्वत मामकाः ॥२३॥**

**धृतराष्ट्र ने पूछा**—सञ्जय ! भीष्म तथा आचार्य द्रोण के वध का और युद्ध-संचालक सेनापति सूतपुत्र कर्ण के मारे जाने का समाचार सुनकर मेरे पुत्रों ने क्या किया ?

**को वा मुखमनीकानामासीत् कर्णे निपातिते।**
**अर्जुनं वासुदेवं च को वा प्रत्युद्ययौ रथी ॥२४॥**

कर्ण के मारे जाने पर सेना के मुखस्थान पर खड़ा होनेवाला कौन था ? कौन-सा रथी अर्जुन एवं

श्रीकृष्ण का सामना करने के लिए आगे बढ़ा ?

**कथं च वः समेतानां मद्रराजो महारथः ।**
**निहतः पाण्डवैः संख्ये पुत्रो वा मम सञ्जय ॥२५॥**

सञ्जय ! तुम सब लोगों के एक-साथ रहते हुए भी महारथी मद्रराज शल्य अथवा मेरा पुत्र दुर्योधन दोनों ही तुम्हारे सामने पाण्डवों के हाथ से कैसे मारे गये ?

**पाञ्चालाश्च यथा सर्वे निहताः सपदानुगाः ।**
**धृष्टद्युम्नः शिखण्डी च द्रौपद्याः पञ्च चात्मजाः ॥२६॥**

समस्त पाञ्चाल-सैनिक अपने सेवकोंसहित कैसे मारे गये ? धृष्टद्युम्न, शिखण्डी और द्रौपदी के पाँचों पुत्रों का संहार कैसे हुआ ?

**पाण्डवाश्च यथा मुक्तास्तथोभौ माधवौ युधि ।**
**कृपश्च कृतवर्मा च भारद्वाजस्य चात्मजः ॥२७॥**

पाँचों पाण्डव, दोनों मधुवंशी वीर श्रीकृष्ण और सात्यकि, कृपाचार्य, कृतवर्मा तथा अश्वत्थामा—ये रणभूमि में किस प्रकार जीवित बच गये ?

**ब्रूहि सर्वं यथातथ्यं भरतानां महाक्षयम् ।**
**अखिलं श्रोतुमिच्छामि कुशलो ह्यसि सञ्जय ॥२८॥**

तुम भरतवंशियों के विनाश का सारा वृत्तान्त यथार्थरूप से बताओ । मैं वह सब-कुछ सम्पूर्ण रूप से सुनना चाहता हूँ । तुम वह सब बताने में कुशल हो ।

**इति महाभारते शल्यपर्वणि प्रथमोऽध्यायः ॥१॥**

# द्वितीयोऽध्यायः

## कृपाचार्य का दुर्योधन को सन्धि के लिए समझाना परन्तु दुर्योधन का युद्ध का निश्चय करना

सञ्जय उवाच

**शृणु राजन्नवहितो यथा वृत्तो महान् क्षयः ।**
**कुरूणां पाण्डवानां च समासाद्य परस्परम् ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! कौरवों और पाण्डवों के आपस में भिड़ने से जिस प्रकार का महान् जन-संहार हुआ, वह सब सावधान होकर सुनो—

**पतितान् रथनीडाँश्च रथाँश्चापि महात्मनाम् ।**
**रणे च निहतान् नागान् दृष्ट्वा पत्तींश्च मारिष ॥२॥**
**विमुखे तव पुत्रे तु शोकोपहतचेतसि ।**
**कृपाविष्टः कृपो राजन् वयःशीलसमन्वितः ॥३॥**
**अब्रवीत् तत्र तेजस्वी सोऽभिसृत्य जनाधिपम् ।**
**दुर्योधनं मन्युवशाद् वाक्यं वाक्यविशारदः ॥४॥**

मान्यवर नरेश ! उस समय रणभूमि में महामनस्वी वीरों के रथ और उनकी टूटी हुई बैठकों, सवारोंसहित हाथी और पैदल सैनिकों को मारा गया देखकर जब आपके पुत्र दुर्योधन का मन शोक में डूब गया और उसने युद्ध से मुँह मोड़ लिया, उस समय प्रौढ़-अवस्था और उत्तम-स्वभाव से युक्त तेजस्वी कृपाचार्य के मन में बड़ी दया आई । बातचीत करने में कुशल उन्होंने राजा दुर्योधन के पास जाकर उसकी दीनता देखकर इस प्रकार कहा—

कृप उवाच

**दुर्योधन निबोधेदं यत् त्वां वक्ष्यामि कौरव ।**
**श्रुत्वा कुरु महाराज यदि ते रोचतेऽनघ ॥५॥**

**कृपाचार्य बोले**—कुरुवंशी महाराज दुर्योधन ! मैं इस समय तुमसे जो कुछ कहता हूँ, उसे ध्यानपूर्वक सुनो । निष्पाप ! मेरी बात सुनकर यदि तुम्हें रुचे तो उसके अनुसार कार्य करो ।

**युद्धधर्मान्न वै श्रेयान् पन्था राजेन्द्र विद्यते ।**
**यं समाश्रित्य युद्ध्यन्ते क्षत्रियाः क्षत्रियर्षभ ॥६॥**

हे राजेन्द्र ! क्षत्रियशिरोमणे ! युद्धधर्म से बढ़कर दूसरा कोई कल्याणकारी मार्ग नहीं है, जिसका आश्रय लेकर क्षत्रिय लोग युद्ध में तत्पर रहते हैं ।

**पुत्रो भ्राता पिता चैव स्वस्रीयो मातुलस्तथा ।**
**सम्बन्धिबान्धवाश्चैव योद्धया वै क्षत्रजीविना ॥७॥**

क्षत्रिय-धर्म से जीवन-निर्वाह करनेवाले पुरुष के लिए पुत्र, भ्राता, पिता, भानजा, मामा, सम्बन्धी और बन्धु-बान्धव—इन सबके साथ युद्ध करना कर्तव्य है ।

**वधे चैव परो धर्मस्तथाधर्मः पलायने ।**
**ते स्म घोरां समापन्ना जीविकां जीवितार्थिनः ॥८॥**

युद्ध में शत्रु को मारना अथवा उसके हाथ से

मारा जाना दोनों ही उत्तम धर्म हैं और युद्ध से पीठ दिखाना महापाप है। सभी क्षत्रिय जीवन-निर्वाह की इच्छा रखते हुए उसी घोर जीविका का आश्रय लेते हैं।

**तदत्र प्रतिवक्ष्यामि किंचिदेव हितं वचः।**
**हते भीष्मे च द्रोणे च कर्णे चैव महारथे ॥९॥**
**जयद्रथे च निहते तव भ्रातृषु चानघ।**
**लक्ष्मणे तव पुत्रे च किं शेषं पर्युपास्महे ॥१०॥**

ऐसी अवस्था में मैं तुम्हारे लिए कुछ हित की बात बताऊँगा। अनघ! भीष्म पितामह, द्रोणाचार्य, महारथी कर्ण, जयद्रथ और तुम्हारे सभी भाई काल के गाल में समा गये हैं। तुम्हारा पुत्र लक्ष्मण भी जीवित नहीं है। अब दूसरा कौन शेष है, जिसका हम लोग आश्रय ग्रहण करें?

**येषु भारं समासाद्य राज्ये मतिमकुर्महि।**
**ते संत्यज्य तनूर्याताः शूरा ब्रह्मविदां गतिम् ॥११॥**

जिनपर युद्ध का भार रखकर हम राज्य पाने की आशा करते थे, वे सभी शूरवीर शरीर छोड़कर ब्रह्मवेत्ताओं की गति को प्राप्त हो गये।

**वयं त्विह विनाभूता गुणवद्भिर्महारथैः।**
**कृपणं वर्तयिष्याम पातयित्वा नृपान् बहून् ॥१२॥**

इस समय हम लोग यहाँ भीष्म आदि गुणवान् महारथियों के सहयोग से वञ्चित हो गये हैं और बहुत-से नरेशों को मरवाकर दयनीय स्थिति में आ गये हैं।

**सर्वैरथ च जीवद्भिर्बीभत्सुरपराजितः।**
**कृष्णनेत्रो महाबाहुर्देवैरपि दुरासदः ॥१३॥**

जब सभी शूरवीर जीवित थे, तब भी अर्जुन किसी के द्वारा पराजित नहीं हुए। श्रीकृष्ण जैसे नेता के रहते हुए महाबाहु अर्जुन देवताओं के लिए भी दुर्जय हैं।

**अद्य सप्तदशाहानि वर्तमानस्य भारत।**
**संग्रामस्यातिघोरस्य वध्यतां चाभितो युधि ॥१४॥**

भरतभूषण! दोनों ओर से परस्पर मार-काट मचाते हुए योद्धाओं के इस अत्यन्त भयंकर संग्राम को आरम्भ हुए आज सत्रह दिन हो गये हैं।

**वायुनेव विधूतानि तव सैन्यानि सर्वतः।**
**शरदम्भोदजालानि व्यशीर्यन्त समन्ततः ॥१५॥**

जैसे हवा शरद्-ऋतु के बादलों को छिन्न-भिन्न कर देती है, वैसे ही अर्जुन की मार से आपकी सेनाएँ सब ओर तितर-बितर हो गई हैं।

**तां नावमिव पर्यस्तां वातधूतां महार्णवे।**
**तव सेनां महाराज सव्यसाची व्यकम्पयत् ॥१६॥**

हे महाराज! जैसे समुद्र में वायु के थपेड़े खाकर नाव डगमगाने लगती है, उसी प्रकार सव्यसाची अर्जुन ने तुम्हारी सेना को कँपा डाला है।

**क्व नु ते सूतपुत्रोऽभूत क्व नु द्रोणः सहानुगः।**
**बाणगोचरसम्प्राप्तं प्रेक्ष्य चैव जयद्रथम् ॥१७॥**

उस दिन जयद्रथ को अर्जुन के बाणों का निशाना बनते देखकर भी तुम्हारा कर्ण कहाँ चला गया था? और अपने अनुयायियों के साथ द्रोणाचार्य कहाँ थे?

**सर्वान् विक्रम्य मिषतो लोकमाक्रम्य मूर्धनि।**
**जयद्रथो हतो राजन् किं नु शेषमुपास्महे ॥१८॥**

राजन्! अर्जुन ने सभी महारथियों को अपने पराक्रम द्वारा सहज में ही परास्त करके सब लोगों के सिर पर पैर रखकर जयद्रथ को मार डाला। अब और कौन बचा है, जिसका हम आश्रय लें?

**तस्य चास्त्राणि दिव्यानि विविधानि महात्मनः।**
**गाण्डीवस्य च निर्घोषो धैर्याणि हरते हि नः ॥१९॥**

महात्मा अर्जुन के पास नाना प्रकार के दिव्यास्त्र हैं। उनके गाण्डीव धनुष का गम्भीर घोष हमारा धैर्य छीन लेता है।

**सात्यकेश्चैव यो वेगो भीमसेनस्य चोभयोः।**
**दारयेच्च गिरीन् सर्वान् शोषयेच्चैव सागरान् ॥२०॥**

उधर सात्यकि और भीमसेन दोनों वीरों का जो वेग है, वह सारे पर्वतों को विदीर्ण कर सकता है, समुद्रों को भी सुखा सकता है।

**युष्माभिस्तानि चीर्णानि यान्यसाधूनि साधुषु।**
**अकारणकृतान्येव तेषां वः फलमागतम् ॥२१॥**

पाण्डव साधु पुरुष हैं तो भी तुम लोगों ने अकारण ही उनके साथ ऐसे बहुत-से अनुचित व्यवहार किये हैं, जो साधु पुरुष के साथ नहीं करने चाहिएँ, उन्हीं का यह फल तुम्हें मिला है।

**आत्मनोऽर्थे त्वया लोके यत्नतः सर्व आहृतः।**
**स ते संशयितस्तात आत्मा वै भरतर्षभ ॥२२॥**

भरतभूषण ! तुमने अपनी रक्षा के लिए ही प्रयत्नपूर्वक सारे संसार के लोगों को एकत्र किया था, किन्तु अब तुम्हारा ही जीवन संशय में पड़ गया है।

**रक्ष दुर्योधनात्मानमात्मा सर्वस्य भाजनम्।**
**भिन्ने हि भाजने तात दिशो गच्छति तद्गतम् ॥२३॥**

दुर्योधन ! अब तुम अपने शरीर की रक्षा करो, क्योंकि शरीर ही आत्मा के समस्त सुखों का भाजन है। पात्र के फूट जाने पर उसका जल चारों ओर बह जाता है, उसी प्रकार आत्मा के आधार शरीर के नष्ट होने से उसपर अवलम्बित सुखों का भी अन्त हो जाता है।

**हीयमानेन वै सन्धिः पर्येष्टव्यः समेन वा।**
**विग्रहो वर्धमानेन मतिरेषा बृहस्पतेः ॥२४॥**

बृहस्पति की नीति के अनुसार जब अपना बल कम या बराबर जान पड़े तो शत्रु के साथ सन्धि कर लेनी चाहिए। युद्ध उसी समय छेड़ना चाहिए, जब अपनी शक्ति शत्रु से बढ़ी-चढ़ी हो।

**ते वयं पाण्डुपुत्रेभ्यो हीनाः स्म बलशक्तितः।**
**तदत्र पाण्डवैः सार्धं सन्धिं मन्ये क्षमं प्रभो ॥२५॥**

हम लोग बल तथा शक्ति में पाण्डवों से हीन हो गये हैं, अतः प्रभो ! इस अवस्था में मैं पाण्डवों के साथ सन्धि कर लेना ही उचित समझता हूँ।

**न जानीते हि यः श्रेयः श्रेयसश्चावमन्यते।**
**स क्षिप्रं भ्रश्यते राज्यान्न च श्रेयोऽनुविन्दते ॥२६॥**

जो राजा अपनी भलाई की बात नहीं समझता और श्रेष्ठ पुरुषों का अपमान करता है, वह शीघ्र ही राज्य से भ्रष्ट हो जाता है तथा उसे कभी कल्याण की प्राप्ति नहीं होती।

**प्रणिपत्य हि राजानं राज्यं यदि लभेमहि।**
**श्रेयः स्यान्न तु मौढ्येन राजन् गन्तुं पराभवम् ॥२७॥**

राजन् ! यदि राजा युधिष्ठिर के सामने नत-मस्तक होकर हम अपना राज्य प्राप्त कर लें तो यही श्रेयस्कर होगा। मूर्खतावश पराजय स्वीकार कर लेनेवाले का कभी भला नहीं हो सकता।

**वैचित्रवीर्यवचनात् कृपाशीलो युधिष्ठिरः।**
**विनियुञ्जीत राज्ये त्वां गोविन्दवचनेन च ॥२८॥**

युधिष्ठिर दयालु हैं। वे राजा धृतराष्ट्र और श्रीकृष्ण के कहने से तुम्हें राज्य पर प्रतिष्ठित कर सकते हैं।

**यद् ब्रूयाद्धि हृषीकेशो राजानमपराजितम्।**
**अर्जुनं भीमसेनं च सर्वे कुर्युरसंशयम् ॥२९॥**

श्रीकृष्ण किसी से पराजित न होनेवाले राजा युधिष्ठिर, अर्जुन और भीमसेन से जो कुछ भी कहेंगे, वे सब लोग उसे निःसन्देह स्वीकार कर लेंगे।

**नातिक्रमिष्यते कृष्णो वचनं कौरवस्य तु।**
**धृतराष्ट्रस्य मन्येऽहं नापि कृष्णस्य पाण्डवः ॥३०॥**

श्रीकृष्ण कुरुराज धृतराष्ट्र की बात को नहीं टालेंगे और श्रीकृष्ण की आज्ञा का उल्लंघन युधिष्ठिर नहीं कर सकेंगे, ऐसा मेरा विश्वास है।

**न त्वां ब्रवीमि कार्पण्यान्न प्राणपरिरक्षणात्।**
**पथ्यं राजन् ब्रवीमि त्वां तत्परासुः स्मरिष्यसि ॥३१॥**

राजन् ! मैं कायरता अथवा प्राणरक्षा की भावना से यह सब नहीं कह रहा हूँ। मैं तुम्हारे हित की बात कह रहा हूँ। तुम मरणासन्न अवस्था में मेरी यह बात याद करोगे।

सञ्जय उवाच

**एवमुक्तस्ततो राजा गौतमेन तपस्विना।**
**निःश्वस्य दीर्घमुष्णं च तूष्णीमासीद् विशाम्पते ॥३२॥**

**सञ्जय कहते हैं**—प्रजेश्वर ! तपस्वी कृपाचार्य के ऐसा कहने पर दुर्योधन जोर-जोर से गरम श्वास छोड़ता हुआ कुछ देर चुपचाप बैठा रहा।

**ततो मुहूर्तं स ध्यात्वा धार्तराष्ट्रो महामनाः।**
**कृपं शारद्वतं वाक्यमित्युवाच परन्तपः ॥३३॥**

दो घड़ी सोच-विचार करने के पश्चात् शत्रु-सन्तापक आपके उस महामनस्वी पुत्र ने शारद्वान् के पुत्र कृपाचार्य को इस प्रकार उत्तर दिया—

**सुहृदा यदिदं वाक्यं भवता श्रावितो ह्यहम्।**
**न मां प्रीणाति तत् सर्वं मुमूर्षोरिव भेषजम् ॥३४॥**

"आप मेरे हितचिन्तक सुहृद् हैं फिर भी आपने मुझे जो बात सुनाई है, वह सब मेरे मन को उसी प्रकार नहीं रुचती, जैसे मरणासन्न रोगी को दवा अच्छी नहीं लगती।

**हेतुकारणसंयुक्तं हितं वचनमुत्तमम् ।**
**उच्यमानं महाबाहो न मे विप्राग्र्य रोचते ॥३५॥**

"महाबाहो ! विप्रवर ! आपने युक्ति और कारणों से सुसङ्गत, हितकारक एवं उत्तम बात कही है तो भी वह मुझे अच्छी नहीं लग रही है।

**राज्याद्विनिकृतोऽस्माभिः कथं सोऽस्मासु विश्वसेत् ।**
**अक्षद्यूते च नृपतिर्जितोऽस्माभिर्महाधनः ॥३६**

"हम लोगों ने राजा युधिष्ठिर के साथ छल किया है। वे महाधनी थे, हमने उन्हें जुए में जीत, राज्य से निकालकर निर्धन बना दिया। ऐसी अवस्था में वे हम लोगों पर विश्वास कैसे कर सकते हैं ?

**विललाप च यत् कृष्णा सभामध्ये समेयुषी ।**
**न तन्मर्षयते कृष्णो न राज्यहरणं तथा ॥३७॥**

"सभा में बलपूर्वक लायी हुई द्रौपदी ने जो विलाप किया था और पाण्डवों का जो राज्य छीन लिया गया था, वह बर्ताव श्रीकृष्ण सहन नहीं कर सकते।

**एकप्राणावुभौ कृष्णावन्योन्यमभिसंश्रितौ ।**
**पुरा यत् श्रुतमेवासीदद्य पश्यामि तत्प्रभो ॥३८॥**

"प्रभो ! श्रीकृष्ण और अर्जुन दोनों दो शरीर और एक प्राण हैं। वे दोनों एक-दूसरे के आश्रित हैं। पहले जो बात मैंने केवल सुन रखी थी, उसे अब प्रत्यक्ष देख रहा हूँ।

**स्वस्रीयं निहतं श्रुत्वा दुःखं स्वपिति केशवः ।**
**कृतागसो वयं तस्य स मदर्थं कथं क्षमेत् ॥३९॥**

"अपने भानजे अभिमन्यु के मारे जाने का वृत्तान्त सुनकर श्रीकृष्ण सुख की नींद नहीं सोते हैं। हम सब लोग उनके अपराधी हैं, फिर वे हमें कैसे क्षमा कर सकते हैं ?

**अभिमन्योर्विनाशेन न शर्म लभतेऽर्जुनः ।**
**स कथं मद्धिते यत्नं प्रकरिष्यति याचितः ॥४०॥**

"अभिमन्यु के मारे जाने से अर्जुन को भी चैन नहीं है, फिर वे प्रार्थना करने पर भी मेरे हित के लिए कैसे यत्न करेंगे ?

**मध्यमः पाण्डवस्तीक्ष्णो भीमसेनो महाबलः ।**
**प्रतिज्ञातं च तेनोग्रं भज्येतापि न संनमेत् ॥४१॥**

"मँझले पाण्डव भीमसेन का स्वभाव बड़ा ही कठोर है। उन्होंने अति भयंकर प्रतिज्ञा की है। सूखे काठ की भाँति वे टूट भले ही जाएँ, झुक नहीं सकते।

**उभौ तौ बद्धनिस्त्रिंशावुभौ चाबद्धकङ्कटौ ।**
**कृतवैरावुभौ वीरौ यमावपि यमोपमौ ॥४२॥**

"दोनों भाई नकुल और सहदेव तलवार बाँधे और कवच धारण किये हुए यमराज के समान भयंकर जान पड़ते हैं। वे दोनों वीर मुझसे वैर मानते हैं।

**कथं च राजा भुक्त्वेमां पृथिवीं सागराम्बराम् ।**
**पाण्डवानां प्रसादेन भोक्ष्ये राज्यमहं कथम् ॥४३॥**

"और सबसे बड़ी बात यह है कि जब मैं समुद्र से घिरी हुई सारी पृथिवी का एकच्छत्र राजा के रूप में उपभोग कर चुका हूँ, तब इस समय पाण्डवों की कृपा का पात्र बनकर राज्य कैसे भोगूँगा ?

**उपर्युपरि राज्ञां वै ज्वलित्वा भास्करो यथा ।**
**युधिष्ठिरं कथं पश्चादनुयास्यामि दासवत् ॥४४॥**

"समस्त राजाओं के ऊपर सूर्य के समान प्रकाशित होकर अब दास की भाँति मैं युधिष्ठिर के पीछे-पीछे कैसे चलूँगा ?

**कथं भुक्त्वा स्वयं भोगान् दत्त्वा दायाँश्च पुष्कलान् ।**
**कृपणं वर्तयिष्यामि कृपणैः सह जीविकाम् ॥४५॥**

"स्वयं बहुत-से भोग भोगकर और प्रचुर धन दान करके अब दीन-मनुष्यों के साथ दीनतापूर्ण जीविका का आश्रय ले मैं किस प्रकार निर्वाह कर सकूँगा ?

**नाभ्यसूयामि ते वाक्यमुक्तं स्निग्धं हितं त्वया ।**
**न तु सन्धिमहं मन्ये प्राप्तकालं कथञ्चन ॥४६॥**

"आपने स्नेहवश मेरे हित की जो बात कही है, मैं न तो उसमें दोष निकालता हूँ और न इसकी निन्दा करता हूँ। मेरा कथन तो इतना ही है कि अब किसी प्रकार भी सन्धि का अवसर नहीं रह गया है। ऐसी मेरी मान्यता है।

**सुनीतमनुपश्यामि सुयुद्धेन परन्तप ।**
**नायं क्लीबयितुं कालः संयोद्धुं काल एव नः ॥४७॥**

"शत्रुसन्तापक वीर ! अब मैं अच्छी प्रकार युद्ध करने में ही उत्तम नीति का पालन समझ रहा हूँ।

हमारा यह समय कायरता दिखाने का नहीं, उत्साहपूर्वक युद्ध करने का है।

**इष्टं मे बहुभिर्यज्ञैर्दत्ता विप्रेषु दक्षिणाः।**
**प्राप्ताः कामाः श्रुता वेदाः शत्रूणां मूर्ध्नि च स्थितम् ॥**
**भृत्या मे सुभृतास्तात दीनश्चाभ्युद्धृतो जनः।**
**नोत्सहेऽद्य द्विजश्रेष्ठ पाण्डवान् वक्तुमीदृशम् ॥४६॥**

"तात! मैंने बहुत-से यज्ञों का अनुष्ठान कर लिया। ब्राह्मणों को प्रचुर दक्षिणाएँ दे दीं। सारी कामनाएँ पूर्ण कर लीं। वेदों का श्रवण कर लिया। शत्रुओं के सिर पर पैर रखा और भरण-पोषण योग्य व्यक्तियों के पालन-पोषण की सुव्यवस्था कर दी। इतना ही नहीं, मैंने दीनों का उद्धारकार्य भी सम्पन्न कर दिया, अतः द्विजश्रेष्ठ! अब मैं पाण्डवों से इस प्रकार याचना नहीं कर सकता।

**न ध्रुवं सुखमस्तीति कुतो राष्ट्रं कुतो यशः।□**
**इह कीर्तिर्विधातव्या सा च युद्धेन नान्यथा ॥५०॥**

"संसार में कोई भी सुख स्थायी नहीं है। फिर राष्ट्र और यश भी कैसे स्थिर रह सकते हैं? इस लोक में कीर्ति अर्जित करनी चाहिए और वह युद्ध के सिवा और किसी उपाय से नहीं मिल सकती।

**गृहे यत् क्षत्रियस्यापि निधनं तद् विगर्हितम्।□**
**अधर्मः सुमहानेष यच्छय्यामरणं गृहे ॥५१॥**

"क्षत्रिय की यदि घर में मृत्यु हो जाए तो उसे निन्दित माना गया है। घर में खाट पर पड़े-पड़े मरना क्षत्रिय के लिए महान् पाप है।

**अरण्ये यो विमुच्येत संग्रामे वा तनुं नरः।**
**क्रतूनाहृत्य महतो महिमानं स गच्छति ॥५२॥**

"जो बड़े-बड़े यज्ञों का अनुष्ठान करके वन में या संग्राम में शरीर का त्याग करता है, वही क्षत्रिय महत्त्व को प्राप्त होता है।

**कृपणं विलपन्नार्तो जरयाभिपरिप्लुतः।□**
**म्रियते रुदतां मध्ये ज्ञातीनां न स पूरुषः ॥५३॥**

"जिसका शरीर बुढ़ापे से जर्जर हो गया हो, जो रोग से पीड़ित हो, पारिवारिकजन जिसके आसपास बैठकर रो रहे हों और उन रोते हुए सम्बन्धियों के बीच में जो करुण-विलाप करते-करते अपने प्राणों का परित्याग करता है, वह पुरुष कहलाने योग्य नहीं है।

**त्यक्त्वा तु विविधान् भोगान् प्राप्तानां परमां गतिम्।**
**अपीदानीं सुयुद्धेन गच्छेयं यत्सलोकताम् ॥५४॥**

"अतः जिन्होंने नाना प्रकार के भोगों का परित्याग करके उत्तम गति प्राप्त कर ली है, इस समय युद्ध के द्वारा मैं उन्हीं लोकों में जाऊँगा।

**ये मदर्थे हताः शूरास्तेषां कृतमनुस्मरन्।**
**ऋणं तत् प्रतियुञ्जानो न राज्ये मन आदधे ॥५५॥**

"जो शूरवीर मेरे लिए मारे गये हैं, उनके उस उपकार का स्मरण करता हुआ उस ऋण को उतारने की चेष्टा में संलग्न होकर मैं राज्य में मन नहीं लगा सकता।

**घातयित्वा वयस्यांश्च भ्रातॄनथ पितामहान्।**
**जीवितं यदि रक्षेयं लोको मां गर्हयेद् ध्रुवम् ॥५६॥**

"मित्रों, भाइयों और पितामहों को मरवाकर यदि मैं अपने प्राणों की रक्षा करूँ तो सारा संसार निश्चय ही मेरी निन्दा करेगा।

**कीदृशं च भवेद् राज्यं मम हीनस्य बन्धुभिः।**
**सखिभिश्च विशेषेण प्रणिपत्य च पाण्डवम् ॥५७॥**

"बन्धु-बान्धवों और मित्रों से हीन हो युधिष्ठिर के पैरों में पड़ने पर मुझे जिस राज्य की प्राप्ति होगी, वह कैसा होगा?

**सोऽहमेतादृशं कृत्वा जगतोऽस्य पराभवम्।**
**सुयुद्धेन ततः स्वर्गं प्राप्स्यामि न तदन्यथा ॥५८॥**

"अतः मैं जगत् का ऐसा विनाश कराकर अब उत्तम युद्ध के द्वारा ही स्वर्गलोक प्राप्त करूँगा। मेरी सद्गति के लिए दूसरा कोई उपाय नहीं है।"

**एवं दुर्योधनेनोक्तं सर्वे सम्पूज्य तद्वचः।**
**साधु साध्विति राजानं क्षत्रियाः सम्बभाषिरे ॥५९॥**

इस प्रकार राजा दुर्योधन की यह बात सुनकर सब क्षत्रियों ने 'बहुत अच्छा, अति सुन्दर' कहकर उसका आदर किया और उसका धन्यवाद भी किया।

**पराजयमशोचन्तः कृतचित्ताश्च विक्रमे।**
**सर्वे सुनिश्चिता योद्धुमुदग्रमनसोऽभवन् ॥६०॥**

सबने अपनी पराजय का शोक छोड़कर मन-ही-मन पराक्रम करने का निश्चय किया। युद्ध करने के विषय में सबका दृढ़ निश्चय हो गया तथा सबके हृदय में उत्साह भर गया।

**इति महाभारते शल्यपर्वणि द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥**

## तृतीयोऽध्यायः

### शल्य का सेनापति-पद पर अभिषेक, श्रीकृष्ण का युधिष्ठिर को शल्यवध के लिए उत्साहित करना

सञ्जय उवाच

**तव पुत्रकृतोत्साहाः क्षत्रियाः कालप्रेरिताः ।**
**अब्रुवन् सहितास्तत्र राजानं शल्यसन्निधौ ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज ! आपके पुत्र द्वारा उत्साहित किये जाने पर काल से प्रेरित वे समस्त क्षत्रिय एकसाथ शल्य के समक्ष राजा दुर्योधन से इस प्रकार बोले—

**कृत्वा सेनाप्रणेतारं पराँस्त्वं योद्धुमर्हसि ।**
**येनाभिगुप्ताः संग्रामे जयेमासुहृदो वयम् ॥२॥**

"प्रजेश्वर ! तुम किसी को सेनापति बनाकर शत्रुओं के साथ युद्ध करो, जिससे सुरक्षित होकर हम लोग विपक्षियों पर विजय प्राप्त करें ।"

**ततो दुर्योधनः स्थित्वा रथे रथवरोत्तमम् ।**
**सर्वयुद्धविभावज्ञमन्तकप्रतिमं युधि ॥३॥**
**पारगं सर्वविद्यानां गुणार्णवमनिन्दितम् ।**
**तमभ्येत्यात्मजो राजन्नश्वत्थामानमब्रवीत् ॥४॥**

तब आपका पुत्र दुर्योधन रथ पर बैठकर महारथियों में श्रेष्ठ, युद्धविषयक सभी विभिन्न भावों के ज्ञाता, युद्ध में यमराज के समान भयंकर, सम्पूर्ण विद्याओं में पारङ्गत और गुणों के सागर अश्वत्थामा के पास गया और उससे इस प्रकार कहा—

**गुरुपुत्रोऽद्य सर्वेषामस्माकं परमा गतिः ।**
**भवाँस्तस्मान्नियोगात्ते कोऽस्तु सेनापतिर्मम ॥५॥**

"ब्रह्मन् ! तुम हमारे गुरुपुत्र हो, और इस समय तुम्हीं हमारे सबसे बड़े सहारे हो, अतः मैं तुम्हारी आज्ञा से सेनापति का निर्वाचन करना चाहता हूँ । बताओ, अब कौन मेरा सेनापति हो ?"

द्रौणिरुवाच

**अयं कुलेन रूपेण तेजसा यशसा श्रिया ।**
**सर्वैर्गुणैः समुदितः शल्यो नोऽस्तु चमूपतिः ॥६॥**

**अश्वत्थामा ने कहा**—ये राजा शल्य उत्तम कुल, सुन्दर रूप, तेज, यश, श्री और समस्त सद्गुणों से सम्पन्न हैं, अतः ये ही हमारे सेनापति हों ।

**भागिनेयान् निजाँस्त्यक्त्वा कृतज्ञोऽस्मानुपागतः ।**
**महासेनो महाबाहुर्महासेन इवापरः ॥७॥**

ये ऐसे कृतज्ञ हैं कि अपने सगे भानजों को भी छोड़कर हमारे पक्ष में आ गये हैं । ये महाबाहु शल्य दूसरे महासेन [कार्तिकेय] के समान महती सेना से सम्पन्न हैं ।

**एनं सेनापतिं कृत्वा नृपतिं नृपसत्तम ।**
**शक्यः प्राप्तुं जयोऽस्माभिर्देवैः स्कन्दमिवाजितम् ॥८॥**

नृपश्रेष्ठ ! जैसे देवताओं ने किसी से पराजित न होनेवाले स्कन्द को सेनापति बनाकर असुरों पर विजय प्राप्त की थी, वैसे ही हम लोग भी इन राजा शल्य को सेनापति बनाकर शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर सकते हैं ।

सञ्जय उवाच

**तथोक्ते द्रोणपुत्रेण सर्व एव नराधिपाः ।**
**परिवार्य स्थिताः शल्यं जयशब्दाँश्च चक्रिरे ॥९॥**

**सञ्जय कहते हैं**—द्रोणपुत्र के ऐसा कहने पर सभी नरेश राजा शल्य को घेरकर खड़े हो गये और उनकी जय-जयकार करने लगे ।

**ततो दुर्योधनो भूमौ स्थित्वा रथवरे स्थितम् ।**
**उवाच प्राञ्जलिर्भूत्वा द्रोणभीष्मसमं रणे ॥१०॥**
**अयं स कालः सम्प्राप्तो मित्राणां मित्रवत्सल ।**
**यत्र मित्रममित्रं वा परीक्षन्ते बुधा जनाः ॥११॥**

तत्पश्चात् राजा दुर्योधन ने भूमि पर खड़े हो रथ पर बैठे हुए रणभूमि में द्रोण और भीष्म के समान पराक्रमी राजा शल्य से हाथ जोड़कर कहा—"मित्रवत्सल ! आज आपके मित्रों के समक्ष वह समय आ गया है जबकि विद्वान् पुरुष शत्रु या मित्र की परीक्षा करते हैं ।

**स भवानस्तु नः शूरः प्रणेता वाहिनीमुखे ।**
**रणं याते च भवति पाण्डवा मन्दचेतसः ।**
**भविष्यन्ति सहामात्याः पाञ्चालाश्च निरुद्यमाः ॥१२**

"आप हमारे शूरवीर सेनापति होकर सेना के मुहाने पर खड़े हों। युद्धभूमि में आपके जाते ही

मन्दबुद्धि पाण्डव और पाञ्चाल अपने मन्त्रियोंसहित उद्योगशून्य हो जाएँगे।"

**दुर्योधनवचः श्रुत्वा शल्यो मद्राधिपस्तदा।**
**उवाच वाक्यं वाक्यज्ञो राजानं राजसन्निधौ ॥१३॥**

उस समय वचन के रहस्य को जाननेवाले मद्र-देश के स्वामी राजा शल्य दुर्योधन के वचन सुनकर समस्त राजाओं के सम्मुख राजा दुर्योधन से यह वचन बोले—

शल्य उवाच

**यत्तु मां मन्यसे राजन् कुरुराज करोमि तत्।**
**त्वत्प्रियार्थं हि मे सर्वं प्राणा राज्यं धनानि च ॥१४॥**

**शल्य बोले**—राजन्! कुरुराज! तुम मुझसे जो कुछ चाहते हो, मैं उसे पूर्ण करूँगा, क्योंकि मेरे प्राण, राज्य और धन सब-कुछ तुम्हारा प्रिय करने के लिए ही हैं।

दुर्योधन उवाच

**सैनापत्येन वरये त्वामहं मातुलातुलम्।**
**सोऽस्मान् पाहि युधां श्रेष्ठ स्कन्दो देवानिवाहवे ॥१५॥**

**दुर्योधन ने कहा**—योद्धाओं में श्रेष्ठ मामाजी! आप अनुपम वीर हैं, अतः मैं सेनापतिपद ग्रहण करने के लिए आपका वरण करता हूँ। जैसे स्कन्द ने रण-भूमि में देवताओं की रक्षा की थी, उसी प्रकार आप हमारी रक्षा कीजिए।

**अभिषेचय राजेन्द्र देवानामिव पावकिः।**
**जहि शत्रून् रणे वीर महेन्द्रो दानवानिव ॥१६॥**

हे राजेन्द्र! वीर! जैसे स्कन्द ने देवताओं का सेनापतित्व स्वीकार किया था, उसी प्रकार आप भी हमारे सेनापति के पद पर अपना अभिषेक कराइए और दानवों का वध करनेवाले देवराज इन्द्र के समान रणभूमि में हमारे शत्रुओं का संहार कीजिए।

सञ्जय उवाच

**एतत् श्रुत्वा वचो राज्ञो मद्रराजः प्रतापवान्।**
**दुर्योधनं तदा राजन् वाक्यमेतदुवाच ह ॥१७॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज! राजा दुर्योधन की यह बात सुनकर प्रतापी मद्रराज शल्य ने उससे इस प्रकार कहा—

**यावेतौ मन्यसे कृष्णौ रथस्थौ रथिनां वरौ।**
**न मे तुल्यावुभावेतौ बाहुवीर्ये कथञ्चन ॥१८॥**

"दुर्योधन! तुम रथ पर बैठे हुए जिन दोनों श्रीकृष्ण और अर्जुन को रथियों में श्रेष्ठ समझते हो, वे दोनों बाहुबल में किसी प्रकार भी मेरे समान नहीं हैं।

**उद्यतां पृथिवीं सर्वां ससुरासुरमानवाम्।**
**योधयेयं रणमुखे संक्रुद्धः किमु पाण्डवान् ॥१९॥**

"मैं युद्ध के मुहाने पर क्रुद्ध हो अपने समक्ष युद्ध के लिए आये हुए देवताओं, असुरों और मनुष्यों-सहित सारे भूमण्डल के साथ युद्ध कर सकता हूँ फिर पाण्डवों की तो बात ही क्या है?

**विजेष्यामि रणे पार्थान् सोमकांश्च समागतान्।**
**अहं सेनाप्रणेता ते भविष्यामि न संशयः ॥२०॥**
**तं च व्यूहं विधास्यामि न तरिष्यन्ति यं परे।**
**इति सत्यं ब्रवीम्येष दुर्योधन न संशयः ॥२१॥**

"मैं रणभूमि में कुन्ती के सभी पुत्रों और सामने आये हुए सोमकों पर भी विजय प्राप्त कर लूँगा। इसमें भी सन्देह नहीं है कि मैं तुम्हारा सेनापति बनूँगा और ऐसे व्यूह का निर्माण करूँगा, जिसे शत्रु लाँघ नहीं सकेंगे। दुर्योधन! यह मैं तुमसे सच्ची बात कहता हूँ। इसमें कोई संशय नहीं है।"

**एवमुक्तस्ततो राजा मद्राधिपतिमञ्जसा।**
**अभ्यषिञ्चत सेनाया मध्ये भरतसत्तम ॥२२॥**

भरतभूषण! शल्य के ऐसा कहने पर राजा दुर्योधन ने सेना के मध्यभाग में मद्रराज शल्य का सेनापति के पद पर अभिषेक कर दिया।

**अभिषिक्ते ततस्तस्मिन् सिंहनादो महानभूत्।**
**तव सैन्येऽभ्यवाद्यन्त वादित्राणि च भारत ॥२३॥**

भारत! उनका अभिषेक हो जाने पर आपकी सेना में बड़े जोर से सिंहनाद होने लगा और भाँति-भाँति के बाजे बज उठे।

**हृष्टाः सुमनसश्चैव बभूवुस्तत्र सैनिकाः।**
**मेनिरे निहतान् पार्थान् मद्रराजवशं गतान् ॥२४॥**

सब-के-सब सैनिक प्रसन्नचित्त होकर हर्ष से भर गये और यह मानने लगे कि मद्रराज शल्य के वश में पड़कर कुन्ती के पुत्र अवश्य ही मारे जाएँगे।

**प्रहर्षं प्राप्य सेना तु तावकी भरतर्षभ।**
**तां रात्रिमुषिता सुप्ता हर्षचित्ता च साभवत् ॥२५॥**

भरतकुलभूषण ! आपकी सेना अत्यन्त प्रसन्न होकर उस रात्रि में वहीं रही और सो गई। उसके मन में बड़ा उत्साह था।

**सैन्यस्य तव तं शब्दं श्रुत्वा राजा युधिष्ठिरः।**
**वार्ष्णेयमब्रवीद् वाक्यं सर्वक्षत्रस्य पश्यतः ॥२६॥**

उस समय आपकी सेना का वह महान् हर्षनाद सुनकर राजा युधिष्ठिर ने समस्त क्षत्रियों के समक्ष श्रीकृष्ण से कहा—

**मद्रराजः कृतः शल्यो धार्तराष्ट्रेण माधव।**
**सेनापतिर्महेष्वासः सर्वसैन्येषु पूजितः ॥२७॥**

"हे माधव ! धृतराष्ट्रपुत्र दुर्योधन ने समस्त सेनाओं के द्वारा सम्मानित महाधनुर्धर मद्रराज शल्य का सेनापतिपद पर अभिषेक किया है।

**एतज्ज्ञात्वा यथाभूतं कुरु माधव यत्क्षमम्।**
**भवान् नेता च गोप्ता च विधत्स्व यदनन्तरम् ॥२८॥**

"माधव ! शल्य को सेनापति बनाया गया है, इस बात को जानकर आप जैसा उचित समझें वैसा करें, क्योंकि आप ही हमारे नेता और संरक्षक हैं, अतः अब जो कार्य आवश्यक हो, उसका सम्पादन कीजिए।"

**तमब्रवीन्महाराज वासुदेवो जनाधिपम्।**
**आर्तायनिमहं जाने यथातत्त्वेन भारत ॥२९॥**

महाराज ! तब श्रीकृष्ण ने राजा युधिष्ठिर से कहा—"भारत ! मैं ऋतायनकुमार राजा शल्य को अच्छी प्रकार जानता हूँ।

**वीर्यवांश्च महातेजा महात्मा च विशेषतः।**
**कृती च चित्रयोधी च संयुक्तो लाघवेन च ॥३०॥**

"वे बलवान्, महातेजस्वी, महामनस्वी, विद्वान्, विचित्र युद्ध करनेवाले तथा शीघ्रतापूर्वक अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग करनेवाले हैं।

**यादृक् भीष्मस्तथा द्रोणो यादृक् कर्णश्च संयुगे।**
**तादृशस्तद्विशिष्टो वा मद्रराजो मतो मम ॥३१॥**

"पितामह भीष्म, आचार्य द्रोण और कर्ण—ये सब लोग युद्ध में जैसे पराक्रमी थे, वैसे ही या उनसे भी बढ़कर पराक्रमी मैं मद्रराज शल्य को मानता हूँ।

**शिखण्डयर्जुनभीमानां सात्वतस्य च भारत।**
**धृष्टद्युम्नस्य च तथा बलेनाभ्यधिको रणे ॥३२॥**

"भरतभूषण ! शिखण्डी, अर्जुन, भीम, सात्यकि और धृष्टद्युम्न से भी वे युद्धभूमि में अधिक बलशाली हैं।

**मद्रराजो महाराज सिंहद्विरदविक्रमः।**
**विचरिष्यत्यभीः काले कालः क्रुद्धः प्रजास्विव ॥३३॥**

"महाराज ! सिंह और हाथी के समान पराक्रमी मद्रराज शल्य प्रलयकाल में प्रजा पर क्रुद्ध हुए काल के समान निर्भय होकर समराङ्गण में विचरेंगे।

**तस्याद्य न प्रपश्यामि प्रतियोद्धारमाहवे।**
**त्वामृते पुरुषव्याघ्र शार्दूलसमविक्रमम् ॥३४॥**

"पुरुषसिंह ! आप सिंह के समान पराक्रमी हैं। आज मैं आपके अतिरिक्त दूसरे किसी योद्धा को नहीं देखता जो रणभूमि में शल्य के सम्मुख होकर उससे युद्ध कर सके।

**सदेवलोके कृत्स्नेऽस्मिन्नान्यस्त्वत्तः पुमान्भवेत्।**
**मद्रराजं रणे क्रुद्धं यो हन्यात् कुरुनन्दन ॥३५॥**

"कुरुनन्दन ! देवताओंसहित इस सम्पूर्ण संसार में आपके सिवा दूसरा कोई ऐसा पुरुष नहीं है, जो रण में कुपित हुए मद्रराज शल्य को मार सके।

**अहन्यहनि युध्यन्तं क्षोभयन्तं बलं तव।**
**तस्माज्जहि रणे शल्यं मघवानिव शम्बरम् ॥३६॥**

"अतः प्रतिदिन रणभूमि में जूझते और आपकी सेना को विक्षुब्ध करते हुए राजा शल्य को युद्ध में आप वैसे ही मार डालिए, जैसे इन्द्र ने शम्बर को मारा था।

**अजेयश्चाप्यसौ वीरो धार्तराष्ट्रेण सत्कृतः।**
**तवैव हि जयो नूनं हते मद्रेश्वरे युधि ॥३७॥**

"वीर शल्य अजेय हैं। दुर्योधन ने उनका बड़ा सम्मान किया है। युद्ध में मद्रराज के मारे जाने पर निश्चय ही आपकी विजय होगी।

**तस्मिन् हते हतं सर्वं धार्तराष्ट्रबलं महत्।**
**एतत् श्रुत्वा महाराज वचनं मम साम्प्रतम् ॥३८॥**
**प्रत्युद्याहि रणे पार्थ मद्रराजं महारथम्।**
**जहि चैनं महाबाहो वासवो नमुचिं यथा ॥३९॥**

"महाराज ! पार्थ ! उस शल्य के मारे जाने

पर आप समझ लें कि दुर्योधन की समस्त विशाल सेना ही मार डाली गई। इस समय मेरी इस बात को सुनकर आप महारथी मद्रराज पर आक्रमण कीजिए और महाबाहो! जैसे इन्द्र ने नमुचि का वध किया था, उसी प्रकार आप भी उन्हें मार डालिए।

**न चैवात्र दया कार्या मातुलोऽयं ममेति वै।**
**क्षत्रधर्मं पुरस्कृत्य जहि मद्रजनेश्वरम् ॥४०॥**

"ये मेरे मामा हैं, ऐसा समझकर आपको उनपर दया नहीं करनी चाहिए। आप क्षत्रियधर्म को सम्मुख रखते हुए मद्रराज शल्य को मार डालें।

**द्रोणभीष्मार्णवं तीर्त्वा कर्णपातालसम्भवम्।**
**मा निमज्जस्व सगणः शल्यमासाद्य गोष्पदम् ॥४१॥**

"भीष्म, द्रोण और कर्णरूपी महासागर को पार करके आप अपने सेवकोंसहित शल्यरूपी गाय की खुरी में मत डूब जाइए।

**यच्च ते तपसो वीर्यं यच्च क्षात्रं बलं तव।**
**तद् दर्शय रणे सर्वं जहि चैनं महारथम् ॥४२॥**

"राजन्! आपका जो तपोबल और क्षात्रबल है, वह सब समराङ्गण में प्रकट कीजिए और इस महारथी शल्य को मार डालिए।"

**एतावदुक्त्वा वचनं केशवः परवीरहा।**
**जगाम शिबिरं सायं पूज्यमानोऽथ पाण्डवैः ॥४३॥**

शत्रुवीरों का संहार करनेवाले श्रीकृष्ण यह बात कहकर सायंकाल पाण्डवों से सम्मानित हो अपने शिबिर में चले गये।

**केशवे तु तदा याते धर्मपुत्रो युधिष्ठिरः।**
**विसृज्य सर्वान्भ्रातॄंश्च पाञ्चालानथ सोमकान्।**
**सुष्वाप रजनीं तां तु विशल्य इव कुञ्जरः ॥४४॥**

श्रीकृष्ण के चले जाने पर धर्मपुत्र युधिष्ठिर ने अपने सब भाइयों तथा पाञ्चालों और सोमकों को भी विदा करके रात में अंकुशरहित हाथी के समान सुखपूर्वक शयन किया।

**ते च सर्वे महेष्वासाः पाञ्चालाः पाण्डवास्तथा।**
**कर्णस्य निधने हृष्टाः सुषुपुस्तां निशां तदा ॥४५॥**

वे सभी महाधनुर्धर पाञ्चाल और पाण्डव-योद्धा भी कर्ण के मारे जाने से हर्ष में भरकर रात्रि में सुख की नींद सोये।

**इति महाभारते शल्यपर्वणि तृतीयोऽध्यायः ॥३॥**

# चतुर्थोऽध्यायः

## उभय पक्ष की सेनाओं का रणभूमि में आना और नकुल द्वारा कर्ण के तीन पुत्रों का संहार

सञ्जय उवाच

**व्यतीतायां रजन्यां तु राजा दुर्योधनस्तदा।**
**अब्रवीत् तावकान् सर्वान् संनह्यन्तां महारथाः ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—जब रात्रि बीत गई, तब राजा दुर्योधन ने आपके समस्त सैनिकों से कहा—"महारथीगण कवच बाँधकर युद्ध के लिए तैयार हो जाएँ।"

**राज्ञश्च मतमाज्ञाय समनह्यत सा चमूः।**
**अयोजयन् रथांस्तूर्णं पर्यधावंस्तथा परे ॥२॥**
**अकल्प्यन्त च मातङ्गाः समनह्यन्त पत्तयः।**
**रथानास्तरणोपेतांश्चक्रुरन्ये सहस्रशः ॥३॥**

राजा दुर्योधन का अभिप्राय जानकर सारी सेना युद्ध के लिए सुसज्जित होने लगी। कुछ लोगों ने तुरन्त ही रथ जोत दिये, दूसरे चारों ओर दौड़ने लगे। हाथी समलंकृत किये जाने लगे। पैदल सैनिक कवच बाँधने लगे और अन्य सहस्रों सैनिकों ने रथों पर आवरण डाल दिये।

**वादित्राणां च निनदः प्रादुरासीद् विशाम्पते।**
**आयोधनार्थं योधानां बलानां चाप्युदीर्यताम् ॥४॥**

प्रजेश्वर! उस समय सब ओर से भाँति-भाँति के वाद्यों की गम्भीर ध्वनि प्रकट होने लगी। युद्ध के लिए उद्यत योद्धाओं और आगे बढ़ती हुई सेनाओं का महान् कोलाहल सुनाई देने लगा।

**शल्यं सेनापतिं कृत्वा मद्रराजं महारथाः।**
**प्रविभज्य बलं सर्वमनीकेषु व्यवस्थिताः ॥५॥**

सारे महारथी मद्रराज शल्य को सेनापति बना-

कर और समस्त सेना को अनेक भागों में विभक्त करके भिन्न-भिन्न दलों में खड़े हो गये ।

**ततः सर्वे समागम्य समयं चक्रुरादृताः ।**
**न न एकेन योद्धव्यं कथञ्चिदपि पाण्डवैः ॥६॥**
**यो ह्येकः पाण्डवैर्युध्येद्यो वा युध्यन्तमुत्सृजेत् ।**
**स पञ्चभिर्भवेद् युक्तः पातकैश्चोपपातकैः ॥७॥**

तत्पश्चात् सम्पूर्ण सैनिकों ने आदरपूर्वक यह नियम बनाया—हम लोगों में से कोई योद्धा अकेला रहकर किसी प्रकार भी पाण्डवों के साथ युद्ध न करे। जो अकेला ही पाण्डवों के साथ युद्ध करेगा अथवा जो पाण्डवों के साथ जूझते हुए वीर को अकेला छोड़ देगा, वह पाँच पातकों और उपपातकों से युक्त होगा।

**एवं ते समयं कृत्वा सर्वे तत्र महारथाः ।**
**मद्रराजं पुरस्कृत्य तूर्णमभ्यद्रवन् परान् ॥८॥**

ऐसा नियम बनाकर वे समस्त महारथी मद्रराज शल्य को आगे करके तुरन्त ही शत्रुओं पर टूट पड़े।

**तथैव पाण्डवा राजन् व्यूह्य सैन्यं महारणे ।**
**अभ्ययुः कौरवान् देव योत्स्यमानाः समन्ततः ॥९॥**

राजन्! देव! इसी प्रकार उस महायुद्ध में पाण्डव भी अपनी सेना का व्यूह बनाकर सब ओर से युद्ध के लिए तत्पर हो कौरवों पर चढ़ आये।

धृतराष्ट्र उवाच

**द्रोणस्य चैव भीष्मस्य राधेयस्य च मे श्रुतम् ।**
**पातनं शंस मे भूयः शल्यस्याथ सुतस्य मे ॥१०॥**

**धृतराष्ट्र ने पूछा**—सञ्जय! मैंने द्रोणाचार्य, भीष्म और राधापुत्र कर्ण के वध का सारा वर्णन सुन लिया है। अब मुझे शल्य तथा मेरे पुत्र दुर्योधन के मारे जाने का समाचार सुनाइए।

सञ्जय उवाच

**क्षयं मनुष्यदेहानां तथा नागाश्वसंक्षयम् ।**
**शृणु राजन् स्थिरो भूत्वा संग्रामं शंसतो मम ॥११॥**

**सञ्जय ने** कहा—राजन्! जहाँ हाथी, घोड़े और मनुष्यों के शरीरों का महान् संहार हुआ था, मैं उस संग्राम का वर्णन करता हूँ आप सुस्थिर होकर सुनिए।

**आशा बलवती राजन् पुत्राणां तेऽभवत्तदा ।**
**हते भीष्मे च द्रोणे च सूतपुत्रे च पातिते ।**
**शल्यः पार्थान् रणे सर्वान् निहनिष्यति मारिष ॥१२॥**

आर्यनरेश! भीष्म, द्रोणाचार्य और सूतपुत्र कर्ण के मारे जाने पर आपके पुत्रों के मन में यह प्रबल आशा हो गई कि शल्य युद्धक्षेत्र में सभी कुन्ती-पुत्रों का वध कर डालेंगे।

**तामाशां हृदये कृत्वा समाश्रित्य महारथम् ।**
**नाथवन्तं तदाऽऽत्मानममन्यन्त सुतास्तव ॥१३॥**

भरतभूषण! उसी आशा को हृदय में रखकर आपके पुत्र महारथी शल्य का आश्रय ले अपने-आपको सनाथ समझने लगे।

**व्यूह्य व्यूहं महाराज सर्वतोभद्रमृद्धिमत् ।**
**प्रत्युद्ययौ रणे पार्थान् मद्रराजः प्रतापवान् ॥१४॥**

महाराज! तब प्रतापी मद्रराज शल्य ने समृद्धि-शाली 'सर्वतोभद्र' नामक व्यूह बनाकर रण में पाण्डवों पर आक्रमण किया।

**तथैव पाण्डवाः शूराः समरे जितकाशिनः ।**
**उपयाता नरव्याघ्राः पाञ्चालाश्च यशस्विनः ॥१५॥**

इसी प्रकार रणभूमि में विजय से सुशोभित होनेवाले शूरवीर पुरुषसिंह पाण्डव और यशस्वी पाञ्चाल वीर आपकी सेना के निकट आ पहुँचे।

**इमे ते च बलौघेन परस्परवधैषिणः ।**
**उपयाता नरव्याघ्राः पूर्वां सन्ध्यां प्रति प्रभो ॥१६॥**

प्रभो! इस प्रकार आपस में एक-दूसरे के वध की इच्छावाले ये और वे पुरुषसिंह योद्धा प्रातःकाल एक-दूसरे पर चढ़ दौड़े।

**ततः प्रववृते युद्धं घोररूपं भयानकम् ।**
**तावकानां परेषां च निघ्नतामितरेतरम् ॥१७॥**

फिर तो परस्पर प्रहार करते हुए आपके और शत्रुपक्ष के सैनिकों में अति भयंकर घमासान युद्ध छिड़ गया।

**समार्च्छच्चित्रसेनं तु नकुलो युद्धदुर्मदः ।**
**तौ परस्परमासाद्य चित्रकार्मुकधारिणौ ॥१८॥**
**मेघाविव यथोद्वृत्तौ दक्षिणोत्तरवर्षिणौ ।**
**शरतोयैः सिषिचतुस्तौ परस्परमाहवे ॥१९॥**

इसी समय रणदुर्मद नकुल ने कर्णपुत्र चित्रसेन पर धावा किया। विचित्र धनुष धारण करनेवाले वे दोनों वीर एक-दूसरे से भिड़कर दक्षिण और उत्तर

की ओर से आते हुए दो बड़े जलवर्षक मेघों के समान परस्पर बाणरूपी जल की बौछार करने लगे ।

**चित्रसेनस्तु भल्लेन पीतेन निशितेन च ।**
**नकुलस्य महाराज मुष्टिदेशेऽच्छिनद् धनुः ॥२०॥**

महाराज ! इतने में ही चित्रसेन ने एक पानीदार पैने भल्ल के द्वारा नकुल के धनुष को मुट्‌ठी पकड़ने के स्थान से काट दिया ।

**अथैनं छिन्नधन्वानं रुक्मपुंखैः शिलाशितैः ।**
**त्रिभिः शरैरसम्भ्रान्तो ललाटे वै समार्पयत् ॥२१॥**

धनुष कट जाने पर चित्रसेन ने उसके ललाट में शिला पर तेज किये हुए सुनहरे पंखवाले तीन बाणों द्वारा गहरी चोट पहुँचायी । उस समय उस [चित्रसेन] के चित्त में तनिक भी घबराहट नहीं हुई ।

**हयाँश्चास्य शरैस्तीक्ष्णैः प्रेषयामास मृत्यवे ।**
**तथा ध्वजं सारथिं च त्रिभिस्त्रिभिरपातयत् ॥२२॥**

फिर उसने अपने तीखे तीरों द्वारा नकुल के घोड़ों को भी मृत्यु के घाट उतार दिया और तीन-तीन बाणों से उसके ध्वज और सारथि को भी काट गिराया ।

**स च्छिन्नधन्वा विरथः खड्गमादाय चर्म च ।**
**रथादवातरद् वीरः शैलाग्रादिव केसरी ॥२३॥**

धनुष कट जाने पर रथहीन हुए नकुल हाथ में ढाल और तलवार लेकर पर्वत के शिखर से उतरनेवाले सिंह के समान रथ से नीचे आ गये ।

**चित्रसेनरथं प्राप्य चित्रयोधी जितश्रमः ।**
**आरुरोह महाबाहुः सर्वसैन्यस्य पश्यतः ॥२४॥**

फिर विचित्र रीति से युद्ध करनेवाले, महाबाहु, कभी न थकनेवाले नकुल सारी सेना के देखते-देखते चित्रसेन के रथ के समीप जा उसपर चढ़ गये ।

**सकुण्डलं समुकुटं सुनसं स्वायतेक्षणम् ।**
**चित्रसेनशिरः कायादपाहरत पाण्डवः ॥२५॥**

तदनन्तर पाण्डुपुत्र नकुल ने सुन्दर नासिका और विशाल नेत्रों से युक्त कुण्डल और मुकुटसहित चित्रसेन के मस्तक को धड़ से काट गिराया ।

**विशस्तं भ्रातरं दृष्ट्वा कर्णपुत्रौ महारथौ ।**
**सुषेणः सत्यसेनश्च मुञ्चन्तौ विविधाञ्शरान् ॥२६॥**
**ततोऽभ्यधावतां तूर्णं पाण्डवं रथिनां वरम् ।**
**जिघाँसन्तौ यथा नागं व्याघ्रौ राजन् महावने ॥२७॥**

राजन् ! अपने भाई को मारा गया देख कर्ण के दो महारथी पुत्र सुषेण और सत्यसेन नाना प्रकार के बाणों की वृष्टि करते हुए रथियों में श्रेष्ठ पाण्डुपुत्र नकुल पर तुरन्त ही चढ़ आये, जैसे विशाल वन में दो व्याघ्र किसी एक हाथी को मार डालने की इच्छा से उसकी ओर उठ दौड़ें ।

**स शरैः सर्वतो विद्धो रथमारुह्य वेगवान् ।**
**अतिष्ठत रणे वीरः क्रुद्धरूप इवान्तकः ॥२८॥**

सब ओर से बाणों से विद्ध होने पर भी नकुल बड़े वेग से दूसरे रथ पर जा चढ़े और कुपित हुए काल के समान रणभूमि में खड़े हो गये ।

**तस्य तौ भ्रातरौ राजञ्शरैः संनतपर्वभिः ।**
**रथं विशकलीकर्तुं समारब्धौ विशाम्पते ॥२९॥**

राजन् ! प्रजेश्वर ! उन दोनों भाइयों ने झुकी हुई गाँठवाले बाणों द्वारा नकुल के रथ के टुकड़े-टुकड़े करने की चेष्टा आरम्भ की ।

**सत्यसेनो रथेषां तु नकुलस्य धनुस्तथा ।**
**पृथक् शराभ्यां चिच्छेद कृतहस्तः प्रतापवान् ॥३०॥**

तब सिद्धहस्त और प्रतापी वीर सत्यसेन ने पृथक्-पृथक् दो बाणों द्वारा नकुल का धनुष और उनके रथ के ईषादण्ड को भी काट दिया ।

**स रथेऽतिरथस्तिष्ठन् रथशक्तिं परामृशत् ।**
**स्वर्णदण्डामकुण्ठाग्रां तैलधोतां सुनिर्मलाम् ॥३१॥**
**लेलिहानामिव विभो नागकन्यां महाविषाम् ।**
**समुद्यम्य च चिक्षेप सत्यसेनस्य संयुगे ॥३२॥**

उधर रथ पर खड़े हुए अतिरथि वीर नकुल ने एक स्वर्णदण्डवाली रथशक्ति हाथ में ली । उसका अग्रभाग कहीं भी कुण्ठित होनेवाला नहीं था । प्रभो ! तेल में धोकर स्वच्छ की हुई वह निर्मलशक्ति जीभ लपलपाती हुई महाविषैली नागिन के समान प्रतीत होती थी । नकुल ने युद्धभूमि में सत्यसेन को लक्ष्य करके ऊपर उठाकर वह रथशक्ति चला दी ।

**सा तस्य हृदयं संख्ये बिभेद च तथा नृप ।**
**स पपात रथाद् भूमिं गतसत्त्वोऽल्पचेतसः ॥३३॥**

राजन् ! उस शक्ति ने समराङ्गण में उसके वक्षःस्थल को विदीर्ण कर दिया । सत्यसेन की चेतना

जाती रही और वह प्राणशून्य होकर पृथिवी पर गिर पड़ा।

**भ्रातरं निहतं दृष्ट्वा सुषेणः क्रोधमूर्च्छितः।**
**अभ्यवर्षच्छरैस्तूर्णं पादातं पाण्डुनन्दनम् ॥३४॥**

भाई को मारा गया देख सुषेण क्रोध से व्याकुल हो उठा और तुरन्त ही ईषादण्ड [जुआ] कट जाने से पैदल-से हुए पाण्डुपुत्र नकुल पर बाणों की वर्षा करने लगा।

**चतुर्भिश्चतुरो वाहान् ध्वजं छित्वा च पञ्चभिः।**
**त्रिभिर्वै सारथिं हत्वा कर्णपुत्रो ननाद ह ॥३५**

उसने चार बाणों से उनके चारों घोड़ों को मार डाला और पाँच से उनकी ध्वजा काटकर तीन बाणों से सारथि को भी मार डाला, फिर कर्णपुत्र ने जोर-जोर से सिंहनाद किया।

**ततः क्रुद्धो महाराज नकुलः परवीरहा।**
**शरैस्तस्य दिशः सर्वाश्छादयामास वीर्यवान् ।३६॥**

महाराज ! फिर तो शत्रुवीरों के संहारक पराक्रमी नकुल ने क्रुद्ध हो बाणों की वर्षा से सुषेण की सम्पूर्ण दिशाओं को आच्छादित कर दिया।

**ततो गृहीत्वा तीक्ष्णाग्रमर्धचन्द्रं सुतेजनम्।**
**सुवेगवन्तं चिक्षेप कर्णपुत्राय संयुगे ॥३७॥**

तत्पश्चात् तीखी धारवाले एक अत्यन्त तेज और वेगशाली अर्धचन्द्राकार बाण को लेकर उसे रणभूमि में कर्णपुत्र पर चला दिया।

**तस्य तेन शिरः कायाज्जहार नृपसत्तम।**
**पश्यतां सर्वसैन्यानां तदद्भुतमिवाभवत् ॥३८॥**

नृपश्रेष्ठ ! उस बाण से नकुल ने सम्पूर्ण सेनाओं के देखते-देखते सुषेण का मस्तक धड़ से काट गिराया। वह अद्‌भुत-सी घटना हुई।

**स हतः प्रापतद् राजन् नकुलेन महात्मना।**
**नदीवेगादिवारुग्णस्तीरजः पादपो महान् ॥३९॥**

महामनस्वी नकुल के हाथ से मारा जाकर सुषेण भूतल पर गिर पड़ा, मानो नदी के वेग से कटकर महान् तटवर्ती वृक्ष धराशायी हो गया हो।

**कर्णपुत्रवधं दृष्ट्वा नकुलस्य च विक्रमम्।**
**प्रदुद्राव भयात् सेना तावकी भरतर्षभ ॥४०॥**

भरतभूषण ! कर्णपुत्र का वध और नकुल का पराक्रम देखकर आपकी सेना भय के कारण भाग खड़ी हुई।

**इति महाभारते शल्यपर्वणि चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥**

# पञ्चमोऽध्यायः

## शल्य का पराक्रम

सञ्जय उवाच

**तां दृष्ट्वा सीदतीं सेनां पङ्के गामिव दुर्बलाम्।**
**उज्जिहीर्षुस्तदा शल्यः प्रायात् पाण्डुसुतान् प्रति ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—कीचड़ में फँसी हुई दुर्बल गौ के समान कौरव-सेना को अत्यन्त कष्ट पाते देख उसका उद्धार करने की इच्छा से राजा शल्य ने उस समय पाण्डवों पर धावा किया।

**पाण्डवा अपि भूपाल समरे जितकाशिनः।**
**मद्रराजं समासाद्य बिभिदुर्निशितैः शरैः ॥२॥**

भूपाल ! उधर रणभूमि में विजय से सुशोभित होनेवाले पाण्डव भी महाराज शल्य के समीप जाकर उन्हें अपने पैने बाणों से बींधने लगे।

**ततः शरशतैस्तीक्ष्णैर्मद्रराजो महारथः।**
**अर्दयामास तां सेनां धर्मराजस्य पश्यतः ॥३॥**

तब महारथी मद्रराज शल्य धर्मपुत्र युधिष्ठिर के देखते-देखते उनकी सेना को अपने सैकड़ों तीखे बाणों से सन्तप्त करने लगे।

**तां सम्मर्द्य ततः संख्ये लघुहस्तः शितैः शरैः।**
**बाणवर्षेण महता युधिष्ठिरमताडयत् ॥४॥**

शीघ्रतापूर्वक हाथ चलानेवाले शल्य ने रणभूमि में पैने बाणों द्वारा पाण्डव-सेना को मथकर बड़ी भारी बाणवर्षा के द्वारा युधिष्ठिर को भी गहरी चोट पहुँचाई।

**ततो वृकोदरः क्रुद्धः संदश्य दशनच्छदम् ।**
**पोथयामास शल्यस्य चतुरोऽश्वान् महाजवान् ॥५॥**

तब भीमसेन ने कुपित होकर ओठ चबाते हुए शल्य के महान् वेगशाली चारों घोड़ों को मार डाला।

**ततः शल्यो रणे क्रुद्धः पीने वक्षसि तोमरम् ।**
**निचखान नदन् वीरो वर्म भित्वा च सोऽभ्ययात् ॥६॥**

तब तो समराङ्गण में कुपित हो गर्जना करते हुए वीर शल्य ने भीमसेन के विशाल वक्षःस्थल में एक तोमर धँसा दिया। वह उनके कवच को छेदकर उनकी छाती में गड़ गया।

**वृकोदरस्त्वसम्भ्रान्तस्तमेवोद्धृत्य तोमरम् ।**
**यन्तारं मद्रराजस्य निर्बिभेद ततो हृदि ॥७॥**

इससे भीमसेन को तनिक भी घबराहट नहीं हुई। उन्होंने उसी तोमर को निकालकर उसके द्वारा मद्रराज शल्य के सारथि की छाती छेद डाली।

**स भिन्नमर्मा रुधिरं वमन् वित्रस्तमानसः ।**
**पपाताभिमुखो दीनो मद्रराजस्य पश्यतः ॥८॥**

इससे सारथि का मर्मस्थल विदीर्ण हो गया और वह मुख से रक्तवमन करता हुआ दीन एवं भयभीत होकर शल्य के देखते हुए उनके सामने ही रथ से नीचे गिर पड़ा।

**पतितं प्रेक्ष्य यन्तारं शल्यः सर्वायसीं गदाम् ।**
**आदाय तरसा राजँस्तस्थौ गिरिरिवाचलः ॥९॥**

राजन्! अपने सारथि को गिरा हुआ देख मद्रराज शल्य वेगपूर्वक लोहे की गदा हाथ में लेकर पर्वत के समान अविचल भाव से खड़े हो गये।

**तं दीप्तमिव कालाग्निं पाशहस्तमिवान्तकम् ।**
**जवेनाभ्यपतद् भीमः प्रगृह्य महतीं गदाम् ॥१०॥**

वे प्रलयकाल की प्रज्वलित अग्नि और पाशधारी यमराज के समान भयंकर जान पड़ते थे। भीमसेन भी बहुत बड़ी गदा हाथ में लेकर वेगपूर्वक उनपर टूट पड़े।

**प्रेक्षन्तः सर्वतस्तौ हि योधा योधमहाद्विपौ ।**
**तावकाश्चापरे चैव साधु साध्वित्यपूजयन् ॥११॥**

योद्धाओं में महान्, गजराज के समान पराक्रमी उन दोनों वीरों को देखकर आपके और शत्रुपक्ष के योद्धा सब ओर से वाह-वाह कहकर उनके प्रति सम्मान प्रकट करने लगे।

**न हि मद्राधिपादन्यो रामाद् वा यदुनन्दनात् ।**
**सोढुमुत्सहते वेगं भीमसेनस्य संयुगे ॥१२॥**

संसार में मद्रराज शल्य अथवा यदुनन्दन बलराम के अतिरिक्त दूसरा कोई ऐसा योद्धा नहीं है, जो युद्ध में भीम का वेग सह सके।

**तथा मद्राधिपस्यापि गदावेगं महात्मनः ।**
**सोढुमुत्सहते नान्यो योधो युधि वृकोदरात् ॥१३॥**

इसी प्रकार महामना मद्रराज शल्य की गदा का वेग भी समराङ्गण में भीमसेन के सिवा दूसरा कोई योद्धा नहीं सह सकता।

**तौ वृषाविव नर्दन्तौ मण्डलानि विचेरतुः ।**
**आवर्तितौ गदाहस्तौ मद्रराजवृकोदरौ ॥१४॥**

शल्य और भीमसेन दोनों वीर हाथ में गदा लिये साँडों की भाँति गर्जते हुए चक्कर लगाने और पैंतरे देने लगे।

**मण्डलावर्तमार्गेषु गदाविहरणेषु च ।**
**निर्विशेषमभूद् युद्धं तयोः पुरुषसिंहयोः ॥१५॥**

मण्डलाकार गति से घूमने में, विभिन्न प्रकार के पैंतरे दिखाने की कला में और गदा का प्रहार करने में उन दोनों पुरुषसिंहों में कोई भी अन्तर दिखाई नहीं देता था, वे दोनों एक-से जान पड़ते थे।

**दन्तैरिव महानागौ शृङ्गैरिव महर्षभौ ।**
**तोत्रैरिव तदान्योन्यं गदाग्राभ्यां निजघ्नतुः ॥१६॥**

जैसे दो विशालकाय हाथी दाँतों से और दो प्रबल साँड सींगों से एक-दूसरे पर प्रहार करते हैं, वैसे ही अंकुशों जैसी श्रेष्ठ गदाओं से वे दोनों वीर परस्पर आघात करने लगे।

**तौ परस्परसंरम्भाद् गदाभ्यां सुभृशाहतौ ।**
**युगपत् पेततुर्वीरावुभाविन्द्रध्वजाविव ॥१७॥**

वे एक-दूसरे पर क्रोधपूर्वक गदाओं का प्रहार करके अत्यन्त घायल हो गये और दो इन्द्रध्वजाओं के समान एक ही साथ पृथिवी पर गिर पड़े।

**ततः स्वरथमारोप्य मद्राणामृषभं रणे ।**
**अपोवाह कृपः शल्यं तूर्णमायोधनादथ ॥१८॥**

इतने में कृपाचार्य मद्रराज शल्य को अपने रथ

पर बिठाकर तुरन्त ही रणभूमि से दूर हटा ले गये ।

**क्षीणवद् विह्वलत्वात् तु निमेषात् पुनरुत्थितः ।**
**भीमसेनो गदापाणिः समाह्वयत मद्रपम् ॥१९॥**

इधर गदाधारी भीमसेन पलक मारते-मारते पुनः होश में आकर उठ खड़े हुए और विह्वलता के कारण मतवाले पुरुष के समान मद्रराज को युद्ध के लिए ललकारने लगे ।

**ततस्तु तावकाः शूरा नानाशस्त्रसमायुताः ।**
**नाना वादित्रशब्देन पाण्डुसेनामयोधयन् ॥२०॥**

तब आपके सैनिक नाना प्रकार के अस्त्र-शस्त्र लेकर भाँति-भाँति के रणवाद्यों की गम्भीर ध्वनि के साथ पाण्डुसेना से युद्ध करने लगे ।

**तदानीकमभिप्रेक्ष्य ततस्ते पाण्डुनन्दनाः ।**
**प्रययुः सिंहनादेन दुर्योधनपुरोगमान् ॥२१॥**

उस कौरवदल को आक्रमण करते देख पाण्डव-वीर सिंह के समान गर्जना करके दुर्योधन आदि की ओर बढ़ चले ।

**तेषामापततां तूर्णं पुत्रस्ते भरतर्षभ ।**
**प्रासेन चेकितानं वै विव्याध हृदये भृशम् ॥२२॥**

भरतभूषण ! आपके पुत्र ने तुरन्त ही एक प्रास का प्रहार करके उन धावा करनेवाले पाण्डव योद्धाओं में से चेकितान की छाती पर गहरी चोट पहुँचाई ।

**स पपात रथोपस्थे तव पुत्रेण ताडितः ।**
**रुधिरौघपरिक्लिन्नः प्रविश्य विपुलं तमः ॥२३॥**

आपके पुत्र द्वारा ताड़ित होकर चेकितान अत्यन्त मूर्च्छित हो रथ की बैठक में गिर पड़ा । उस समय उसका सारा शरीर रक्त से लथपथ हो गया ।

**चेकितानं हतं दृष्ट्वा पाण्डवाणां महारथाः ।**
**असक्तमभ्यवर्षन्त शरवर्षाणि भागशः ॥२४॥**

चेकितान को मारा गया देख पाण्डव महारथी पृथक्-पृथक् बाणों की लगातार वर्षा करने लगे ।

**कृपश्च कृतवर्मा च सौबलश्च महारथाः ।**
**अयोधयन् धर्मराजं मद्रराजपुरस्कृताः ॥२५॥**

उधर कृपाचार्य, कृतवर्मा और महारथी शकुनि मद्रराज शल्य को आगे करके धर्मराज युधिष्ठिर से युद्ध करने लगे ।

**त्रिसाहस्रास्तथा राजँस्तव पुत्रेण प्रेरिताः ।**
**अयोधयन्त विजयं द्रोणपुत्रपुरस्कृताः ॥२६॥**

राजन् ! आपके पुत्र से प्रेरित हो तीन सहस्र योद्धा अश्वत्थामा को आगे करके अर्जुन के साथ युद्ध करने लगे ।

**विजये धृतसंकल्पाः समरे त्यक्तजीविताः ।**
**प्राविशंस्तावका राजन् हंसा इव महत् सरः ॥२७॥**

राजन् ! जैसे हंस महान् सरोवर में प्रविष्ट होते हैं, वैसे ही आपके सैनिक रणभूमि में विजय का दृढ़ संकल्प ले प्राणों का मोह छोड़कर शत्रुसेना में जा घुसे ।

**तथा प्रवृत्ते संग्रामे घोररूपे भयानके ।**
**तावकानां परेषां च नासीत्कश्चित्पराङ्मुखः ॥२८॥**

इस प्रकार घोर एवं भयानक संग्राम चलने लगा । उस समय आपके और शत्रुपक्ष के योद्धाओं में से कोई भी विमुख नहीं हुआ ।

**ब्रह्मलोकपरा भूत्वा प्रार्थयन्तो जयं युधि ।**
**सुयुद्धेन पराक्रान्ता नराः स्वर्गमभीप्सवः ॥२९॥**

सबका लक्ष्य था ब्रह्मलोक की प्राप्ति । वे सभी सैनिक युद्ध में विजय चाहते और उत्तम युद्ध के द्वारा पराक्रम दिखाते हुए स्वर्गलोक पाने की अभिलाषा रखते थे ।

**भर्तृपिण्डविमोक्षार्थं भर्तृकार्यविनिश्चिताः ।**
**स्वर्गसंसक्तमनसो योधा युयुधिरे तदा ॥३०॥**

सभी योद्धा स्वामी के दिये हुए अन्न के ऋण से उऋण होने के लिए उनके कार्य को सिद्ध करने का दृढ़ निश्चय किये हुए मन में स्वर्ग-प्राप्ति की अभिलाषा रखकर उस समय उत्साहपूर्वक युद्ध कर रहे थे ।

**नानारूपाणि शस्त्राणि विसृजन्तो महारथाः ।**
**अन्योन्यमभिगर्जन्तः प्रहरन्तः परस्परम् ॥३१॥**

नाना प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग करके परस्पर प्रहार करनेवाले महारथी एक-दूसरे को लक्ष्य करके गर्जना करते थे ।

**हत विध्यत गृह्णीत प्रहरध्वं निकृन्तत ।**
**इति स्म वाचः श्रूयन्ते तव तेषां च वै बले ॥३२॥**

आपकी और पाण्डवों की सेना में 'मारो, बींध

डालो, पकड़ो प्रहार करो, और टुकड़े-टुकड़े कर डालो'—ये ही बातें सुनाई देती थीं।

**ततः शल्यो महाराज धर्मपुत्रं युधिष्ठिरम्।**
**विव्याध निशितैर्बाणैर्हन्तुकामो महारथम् ॥३३॥**

महाराज! तत्पश्चात् स्वस्थचित्त होकर राजा शल्य ने महारथी धर्मपुत्र राजा युधिष्ठिर को मार डालने की इच्छा से उन्हें पैने बाणों से बींध डाला।

**पीडिते धर्मराजे तु मद्रराजेन मारिष।**
**सात्यकिर्भीमसेनश्च माद्रीपुत्रौ च पाण्डवौ।**
**परिवार्य रथैः शल्यं पीडयामासुराहवे ॥३४॥**

मान्यवर! जब मद्रराज शल्य धर्मराज युधिष्ठिर को पीड़ा देने लगे, तब सात्यकि, भीमसेन और माद्रीपुत्र पाण्डव नकुल और सहदेव ने रणभूमि में शल्य को रथों द्वारा घेरकर उन्हें पीड़ा देना आरम्भ किया।

**स तु शूरो रणे यत्तः पीडितस्तैर्महारथैः।**
**विकृष्य कार्मुकं घोरं वेगघ्नं भारसाधनम् ॥३५॥**
**सात्यकिं पञ्चविंशत्या शल्यो विव्याध मारिष।**
**भीमसेनं तु सप्तत्या नकुलं सप्तभिस्तथा ॥३६॥**

आर्यनरेश! रणभूमि में शूरवीर शल्य ने उन महारथियों द्वारा पीड़ित होने पर भी विजय के लिए यत्नशील हो भार सहने में समर्थ तथा शत्रु के वेग का नाश करनेवाले एक भयंकर धनुष को खींचकर सात्यकि को पच्चीस, भीमसेन को सत्तर और नकुल को सात बाण मारे।

**ततः सविशिखं चापं सहदेवस्य धन्विनः।**
**छित्त्वा भल्लेन समरे विव्याधैनं त्रिसप्तभिः ॥३७॥**

तदनन्तर युद्धभूमि में एक भल्ल के द्वारा धनुर्धर सहदेव के बाणसहित धनुष को काटकर शल्य ने उन्हें इक्कीस बाणों से घायल कर दिया।

**सहदेवस्तु समरे मातुलं भूरिवर्चसम्।**
**सज्यमन्यद् धनुः कृत्वा पञ्चभिः समताडयत् ॥३८॥**

तब सहदेव ने रणभूमि में दूसरे धनुष पर डोरी चढ़ाकर अपने अत्यन्त तेजस्वी मामा को पाँच बाणों द्वारा घायल कर दिया।

**सारथिं चास्य समरे शरेणानतपर्वणा।**
**विव्याध भृशसंक्रुद्धस्तं वै भूयस्त्रिभिः शरैः ॥३९॥**

साथ ही अत्यन्त क्रुद्ध होकर उन्होंने झुकी हुई गाँठवाले बाण से उनके सारथि को भी बींध डाला और उन्हें भी पुनः तीन बाणों से घायल किया।

**ततः शल्यो रणे राजन् सर्वांस्तान् दशभिः शरैः।**
**विव्याध भृशसंक्रुद्धस्तोत्त्रैरिव महाद्विपान् ॥४०॥**

राजन्! तब राजा शल्य रणभूमि में अत्यन्त कुपित हो उठे और जैसे महावत अंकुशों से बड़े-बड़े हाथियों को चोट पहुँचाते हैं, उसी प्रकार उन्होंने उन सब योद्धाओं को दस बाणों से घायल कर दिया।

**ते वार्यमाणाः समरे मद्रराजेन धन्विनः।**
**न शेकुः सम्मुखे स्थातुं तस्य शत्रुनिषूदनाः ॥४१॥**

रणभूमि में मद्रराज शल्य के द्वारा इस प्रकार रोके जाते हुए शत्रुसूदन पाण्डव-महारथी उनके सामने ठहर न सके।

**ततो दुर्योधनो राजा दृष्ट्वा शल्यस्य विक्रमम्।**
**निहतान्पाण्डवान्मेने पाञ्चालानथ सृञ्जयान् ॥४२॥**

उस समय राजा दुर्योधन शल्य का वह पराक्रम देखकर ऐसा समझने लगा कि अब पाण्डव, पाञ्चाल और सृंजय अवश्य मौत के घाट उतार दिये जाएँगे।

**इति महाभारते शलपर्वणि पञ्चमोऽध्यायः ॥५॥**

# षष्ठोऽध्यायः

## युधिष्ठिर द्वारा शल्य की पराजय

सञ्जय उवाच

**ततः सैन्यास्तव विभो मद्रराजपुरस्कृताः।**
**पुनरभ्यद्रवन् पार्थान् वेगेन महता रणे ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—प्रभो! पाण्डवों के पीछे हटने पर आपके सभी सैनिक युद्धभूमि में मद्रराज को आगे करके पुनः बड़े वेग से पाण्डवों पर टूट पड़े।

**तत्र पश्याम्यहं कर्म शल्यस्यातिमहद्रणे।**
**यदेकः सर्वसैन्यानि पाण्डवानामयोधयत् ॥२॥**

महाराज! वहाँ युद्धक्षेत्र में मैंने राजा शल्य का बहुत बड़ा पराक्रम यह देखा कि वे अकेले ही पाण्डवों की सम्पूर्ण सेनाओं के साथ युद्ध कर रहे थे।

**तस्य तल्लाघवं दृष्ट्वा तथैव च कृतास्त्रताम् ।**
**अपूजयन्ननीकानि परेषां तावकानि च ॥३॥**

उनकी स्फूर्ति और अस्त्रविद्या का ज्ञान देखकर आपके और शत्रुपक्ष के सैनिकों ने भी उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा की ।

**वध्यमानेष्वनीकेषु मद्रराजेन पाण्डवः ।**
**अमर्षवशमापन्नो धर्मराजो युधिष्ठिरः ॥४॥**

जब मद्रराज द्वारा पाण्डव-सैनिकों का संहार होने लगा, तब पाण्डुपुत्र धर्मराज युधिष्ठिर अमर्ष के वशीभूत हो गये ।

**ततः पौरुषमास्थाय मद्रराजमताडयत् ।**
**जयो वास्तु वधो वास्तु कृतबुद्धिर्महारथः ॥५॥**

तब उन्होंने अपने पुरुषार्थ का आश्रय ले मद्रराज पर प्रहार किया । महारथी युधिष्ठिर ने यह निश्चय कर लिया कि आज या तो मेरी विजय होगी अथवा मेरा वध हो जाएगा ।

**समाहूयाब्रवीत् सर्वान् भ्रातॄन् कृष्णं च माधवम् ।**
**भीष्मो द्रोणश्च कर्णश्च ये चान्ये पृथिवीक्षितः ॥६॥**
**कौरवार्थे पराक्रान्ताः संग्रामे निधनं गताः ।**
**यथाभागं यथोत्साहं भवन्तः कृतपौरुषाः ॥७॥**

उन्होंने अपने समस्त भाइयों, श्रीकृष्ण और सात्यकि को बुलाकर इस प्रकार कहा—"बन्धुओ ! भीष्म, द्रोण, कर्ण तथा अन्य जो-जो राजा दुर्योधन के लिए पराक्रम प्रकट करते थे, वे सब-के-सब संग्राम में मारे गये । तुम लोगों ने उत्साहपूर्वक अपने-अपने हिस्से का कार्य पूरा कर लिया ।

**भागोऽवशिष्ट एकोऽयं मम शल्यो महारथः ।**
**सोऽहमद्य युधा जेतुमाशंसे मद्रकाधिपम् ॥८॥**

"अब एकमात्र महारथी शल्य शेष रह गये हैं, जो मेरे हिस्से में आये हैं, अतः आज मैं इन मद्रराज शल्य को युद्ध में जीतने की आशा रखता हूँ ।

**योत्स्येऽहं मातुलेनाद्य क्षात्रधर्मेण पार्थिवाः ।**
**स्वमंशमभिसंधाय विजयायेतराय च ॥९॥**

"राजाओ ! मैं आज क्षत्रियधर्म के अनुसार अपने हिस्से का कार्य पूर्ण करने का संकल्प लेकर अपनी विजय अथवा वध के लिए मामा शल्य के साथ संग्राम करूँगा ।

**तस्य मेऽप्यधिकं शस्त्रं सर्वोपकरणानि च ।**
**संसज्जन्तु रथे क्षिप्रं शास्त्रवद् रथयोजकाः ॥१०॥**

"रथ जोतनेवाले लोग शीघ्र ही मेरे रथ पर शास्त्रीय विधि के अनुसार अधिक-से-अधिक शस्त्र और अन्य समस्त आवश्यक सामग्री सजाकर रख दें ।

**शैनेयो दक्षिणं चक्रं धृष्टद्युम्नस्तथोत्तरम् ।**
**पृष्ठगोपो भवत्वद्य मम पार्थो धनञ्जयः ॥११॥**
**पुरःसरो ममाद्यास्तु भीमः शस्त्रभृतां वरः ।**
**एवमभ्यधिकः शल्याद् भविष्यामि महामृधे ॥१२॥**

"सात्यकि मेरे दाहिने चक्र की रक्षा करें और धृष्टद्युम्न बायें चक्र की । आज कुन्तीपुत्र अर्जुन मेरे पृष्ठभाग की रक्षा में तत्पर रहें तथा शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ भीमसेन मेरे आगे-आगे चलें । ऐसी व्यवस्था हो जाने पर मैं इस महासमर में शल्य से अधिक शक्तिशाली हो जाऊँगा ।"

**एवमुक्तस्तथा चक्रुस्तदा राज्ञः प्रियैषिणः ।**
**ततः प्रहर्षः सैन्यानां पुनरासीत् तदा मृधे ॥१३॥**

उनके ऐसा कहने पर राजा का प्रिय करने की इच्छा रखनेवाले भाइयों ने वैसा ही किया । तब उस रणभूमि में सैनिकों के मन में महान् हर्षोल्लास छा गया ।

**युधिष्ठिरस्तु मद्रेशमभ्यधावदमर्षितः ।**
**स्वयं संनोदयन्नश्वान् दन्तवर्णान् मनोजवान् ॥१४॥**

तब राजा युधिष्ठिर ने अमर्ष में भरकर दाँतों के समान श्वेत वर्णवाले और मन के तुल्य वेगवान् घोड़ों को स्वयं ही हाँकते हुए मद्रराज शल्य पर आक्रमण किया ।

**तत्राश्चर्यमपश्याम कुन्तीपुत्रे युधिष्ठिरे ।**
**पुरा भूत्वा मृदुर्दान्तो यत्तदा दारुणोऽभवत् ॥१५॥**

वहाँ हमने कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर में एक आश्चर्य की बात देखी । वे पहले से जितेन्द्रिय और कोमल स्वभाव के होकर भी उस समय कठोर बन गये ।

**विवृत्ताक्षश्च कौन्तेयो वेपमानश्च मन्युना ।**
**चिच्छेद योधान् निशितैः शरैः शतसहस्रशः ॥१६॥**

क्रोध से काँपते हुए तथा आँखें फाड़-फाड़कर देखते हुए कुन्तीपुत्र ने अपने पैने बाणों द्वारा सैकड़ों और सहस्रों शत्रु-सैनिकों का संहार कर डाला ।

**साश्वारोहाँश्च तुरगान् पत्तींश्चैव सहस्रधा ।**
**व्यपोथयत संग्रामे क्रुद्धो रुद्रः पशूनिव ॥१७॥**

जैसे क्रोध में भरे हुए रुद्रदेव पशुओं का संहार करते हैं, उसी प्रकार युधिष्ठिर ने भी इस संग्राम में कुपित हो घुड़सवारों, घोड़ों और पैदलों के सहस्रों टुकड़े कर डाले ।

**शून्यमायोधनं कृत्वा शरवर्षैः समन्ततः ।**
**अभ्यद्रवत मद्रेशं तिष्ठ शल्येति चाब्रवीत् ॥१८॥**

उन्होंने अपनी बाणों की वर्षा के द्वारा चारों ओर से युद्धस्थल को सूना करके मद्रराज शल्य पर आक्रमण किया और कहा—"शल्य ! खड़े रहो, खड़े रहो ।"

**तस्य तच्चरितं दृष्ट्वा संग्रामे भीमकर्मणः ।**
**वित्रेसुस्तावकाः सर्वे शल्यस्त्वेनं समभ्ययात् ॥१९॥**

भयंकर कर्म करनेवाले युधिष्ठिर का रणभूमि में वह पराक्रम देखकर आपके सारे सैनिक थर्रा उठे, परन्तु शल्य ने उनपर धावा बोल दिया ।

**ततस्तौ भृशसंक्रुद्धौ प्रध्माय सलिलोद्भवौ ।**
**समाहूय तदान्योन्यं भर्त्सयन्तौ समीयतुः ॥२०॥**

फिर वे दोनों वीर अत्यन्त क्रुद्ध हो शंख बजाकर एक-दूसरे को ललकारते और फटकारते हुए परस्पर भिड़ गये ।

**शल्यस्तु शरवर्षेण पीडयामास पाण्डवम् ।**
**मद्रराजं तु कौन्तेयः शरवर्षैरवाकिरत् ॥२१॥**

शल्य ने बाणों की झड़ी लगाकर पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर को पीड़ित कर दिया और कुन्तीकुमार युधिष्ठिर ने भी बाणवृष्टि द्वारा मद्रराज शल्य को आच्छादित कर दिया ।

**दीप्यमानौ महात्मानौ प्राणद्यूतेन दुर्मदौ ।**
**दृष्ट्वा सर्वाणि सैन्यानि नाध्यवस्यंस्तयोर्जयम् ॥२२॥**

प्राणों की बाजी लगाकर युद्ध का जुआ खेलते हुए उन मदमत्त महामनस्वी तथा दीप्तिमान वीरों को देखकर सारी सेनाएँ यह निश्चय नहीं कर रही थीं कि इन दोनों में किसकी विजय होगी ।

**हत्वा मद्राधिपं पार्थो भोक्ष्यतेऽद्य वसुन्धराम् ।**
**शल्यो वा पाण्डवं हत्वा दद्याद् दुर्योधनाय गाम् ॥२३॥**

आज कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर मद्रराज को मारकर इस भूमण्डल का राज्य भोगेंगे अथवा शल्य ही पाण्डुकुमार युधिष्ठिर को मारकर दुर्योधन को पृथिवी का राज्य सौंप देंगे ।

**ततः शरशतं शल्यो मुमोचाथ युधिष्ठिरे ।**
**धनुश्चास्य शिताग्रेण बाणेन निरकृन्तत ॥२४॥**

इधर ये बातें हो रही थीं उधर शल्य ने युधिष्ठिर पर सौ बाणों का प्रहार किया तथा तीखी धारवाले बाण से उनके धनुष को भी काट दिया ।

**सोऽन्यत् कार्मुकमादाय शल्यं शरशतैस्त्रिभिः ।**
**अविध्यत् कार्मुकं चास्य क्षुरेण निरकृन्तत ॥२५॥**
**अथास्य निजघानाश्वाँश्चतुरो नतपर्वभिः ।**
**द्वाभ्यामतिशिताग्राभ्यामुभौ तत्पार्ष्णिसारथी ॥२६॥**
**ततोऽस्य दीप्यमानेन पीतेन निशितेन च ।**
**प्रमुखे वर्तमानस्य भल्लेनापाहरत् ध्वजम् ॥२७॥**

तब युधिष्ठिर ने दूसरा धनुष लेकर शल्य को तीन सौ बाणों से घायल कर दिया तथा एक क्षुर के द्वारा उनके धनुष के भी दो टुकड़े कर दिये । फिर झुकी हुई गाँठवाले बाणों से उनके चारों घोड़ों को मार डाला । तत्पश्चात् दो अत्यन्त तीखे तीरों से दोनों पार्श्व-रक्षकों को यमलोक पठा दिया । इसके अनन्तर एक चमकते हुए पानीदार पैने भल्ल से सामने खड़े हुए शल्य के ध्वज को भी काट गिराया ।

**ततो मद्राधिपं द्रौणिरभ्यधावत् तथा कृतम् ।**
**आरोप्य चैनं स्वरथे त्वरमाणः प्रदुद्रुवे ॥२८॥**

उस समय मद्रराज शल्य की ऐसी दुर्गति हुई देख अश्वत्थामा दौड़ा और उन्हें अपने रथ पर बिठाकर तुरन्त वहाँ से भाग गया ।

**मुहूर्तमिव तौ गत्वा नर्दमाने युधिष्ठिरे ।**
**ततः स्मित्वा मद्रपतिरन्यं स्यन्दनमास्थितः ॥२९॥**

युधिष्ठिर दो घड़ी तक उनका पीछा करके सिंह के समान दहाड़ते रहे । उधर मद्रराज शल्य मुस्कराकर दूसरे रथ पर जा बैठे ।

**इति महाभारते शल्यपर्वणि षष्ठोऽध्यायः ॥६॥**

# सप्तमोऽध्यायः

## युधिष्ठिर द्वारा राजा शल्य का वध

सञ्जय उवाच

**अथान्यद् धनुरादाय बलवान् वेगवत्तरम् ।**
**युधिष्ठिरं मद्रपतिर्भित्वा सिंह इवानदत् ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! तत्पश्चात् बलवान् मद्रराज शल्य दूसरा अत्यन्त वेगशाली धनुष हाथ में लेकर युधिष्ठिर को घायल करके सिंह के समान गर्जने लगे ।

**ततः स शरवर्षेण पर्जन्य इव वृष्टिमान् ।**
**अभ्यवर्षदमेयात्मा क्षत्रियान् क्षत्रियर्षभः ॥२॥**

तदनन्तर अमेय [असीम] आत्मबल से सम्पन्न क्षत्रिय-शिरोमणि शल्य वर्षा करनेवाले मेघ के समान क्षत्रिय वीरों पर बाणों की वृष्टि करने लगे ।

**कुञ्जरान् कुञ्जरारोहानश्वानश्वप्रियायिनः ।**
**रथांश्च रथिनः सार्धं जघान रथिनां वरः ॥३॥**

रथियों में श्रेष्ठ शल्य ने गजों [हाथियों] और गजारोहियों को, घोड़ों और घुड़सवारों को तथा रथों और रथियों को एकसाथ ही नष्ट कर दिया ।

**बाहूंश्चिच्छेद तरसा सायुधान् केतनानि च ।**
**चकार च महीं योधैस्तीर्णां वेदीं कुशैरिव ॥४॥**

उन्होंने आयुधोंसहित भुजाओं और ध्वजों को वेगपूर्वक काट डाला और भूतल पर उसी प्रकार योद्धाओं की लाशें बिछा दीं, जैसे वेदी पर कुश बिछाये जाते हैं ।

**तथा तमरिसैन्यानि घ्नन्तं मृत्युमिवान्तकम् ।**
**परिवव्रुर्भृशं क्रुद्धाः पाण्डुपाञ्चालसोमकाः ॥५॥**

इस प्रकार मृत्यु और यमराज के समान शत्रु-सेना का संहार करनेवाले राजा शल्य को अत्यन्त क्रोध में भरे हुए पाण्डव, पाञ्चाल और सोमक योद्धाओं ने चारों ओर से घेर लिया ।

**तं भीमसेनश्च शिनेश्च नप्ता**
**माद्र्याश्च पुत्रौ पुरुषप्रवीरौ ।**
**समागतं भीमबलेन राज्ञा**
**पर्याप्तमन्योन्यमथाह्वयन्त ॥६॥**

भीमसेन, शिनिपौत्र सात्यकि और माद्री के पुत्र नरश्रेष्ठ नकुल एवं सहदेव—ये भयंकर बलशाली राजा युधिष्ठिर के साथ भिड़े हुए सामर्थ्यशाली वीर शल्य को परस्पर युद्ध के लिए ललकारने लगे ।

**संरक्षितो भीमसेनेन राजा**
**माद्रीसुताभ्यामथ माधवेन ।**
**मद्राधिपं पत्रिभिरुग्रवेगैः**
**स्तनान्तरे धर्मसुतो निजघ्ने ॥७॥**

धर्मपुत्र राजा युधिष्ठिर ने भीमसेन, नकुल-सहदेव और सात्यकि से सुरक्षित होकर मद्रराज शल्य की छाती में उग्रवेगशाली बाणों का प्रहार किया ।

**ततो रणे तावकानां रथौघाः**
**समीक्ष्य मद्राधिपतिं शरार्तम् ।**
**पर्यावव्रुः प्रवरास्ते सुसज्जा**
**दुर्योधनस्यानुमते पुरस्तात् ॥८॥**

उस समय रणभूमि में मद्रराज को बाणों से पीड़ित देख आपके श्रेष्ठ महारथी योद्धा दुर्योधन की आज्ञा से सुसज्जित हो उन्हें [शल्य को] घेरकर युधिष्ठिर के आगे खड़े हो गये ।

**ततस्तु मद्राधिपतिर्महात्मा**
**युधिष्ठिरं भीमबलं प्रसह्य ।**
**विव्याध वीरं हृदयेऽतिवेगं**
**शरेण सूर्याग्निसमप्रभेण ॥९॥**

तब महान् आत्मा मद्रराज शल्य ने सूर्य और अग्नि के समान तेजस्वी बाण से अत्यन्त वेगवान् और भयंकर बलशाली वीर युधिष्ठिर की छाती में चोट पहुँचाई ।

**ततोऽतिविद्धोऽथ युधिष्ठिरोऽपि**
**सुसम्प्रयुक्तेन शरेण राजन् ।**
**जघान मद्राधिपतिं महात्मा**
**मुदं च लेभे ऋषभः कुरूणाम् ॥१०॥**

राजन् ! उससे अत्यन्त घायल होने पर भी कुरुकुल-शिरोमणि महात्मा युधिष्ठिर ने अच्छी प्रकार चलाये हुए एक बाण द्वारा मद्रराज शल्य को आहत कर दिया । इससे उन्हें अति प्रसन्नता हुई ।

**ततस्तु मद्राधिपतिः प्रकृष्टं**
**धनुर्विकृष्य व्यसृजत् पृषत्कान् ।**
**द्वाभ्यां शराभ्यां च तथैव राज्ञ-**
**श्चिच्छेद चापं कुरुपुङ्गवस्य ॥११॥**

फिर तो मद्रराज शल्य ने अपने उत्तम धनुष को खींचकर बहुत-से बाण छोड़े । उन्होंने दो बाणों से कुरुकुलशिरोमणि राजा युधिष्ठिर के धनुष को काट दिया ।

**नवं ततोऽन्यत् समरे प्रगृह्य**
**राजा धनुर्घोरतरं महात्मा ।**
**शल्यं तु विव्याध शरैः समन्ताद्**
**यथा महेन्द्रो नमुचिं शिताग्रैः ॥१२॥**

तब महात्मा राजा युधिष्ठिर ने रणभूमि में दूसरे नये और अतिभयंकर धनुष को हाथ में लेकर तीखी धारवाले बाण से शल्य को सब ओर से उसी प्रकार घायल कर दिया, जैसे देवराज इन्द्र ने नमुचि को घायल किया था ।

**ततस्तु शल्यो ज्वलनार्कतेजः**
**क्षुरेण राज्ञो धनुरुन्ममाथ ।**
**कृपश्च तस्यैव जघान सूतं**
**षड्भिः शरैः सोऽभिमुखः पपात ॥१३॥**

तब शल्य ने अग्नि और सूर्य के समान तेजस्वी क्षुर के द्वारा राजा युधिष्ठिर के धनुष को ध्वस्त कर दिया । फिर कृपाचार्य ने भी छह बाणों से उनके सारथि को मार डाला । सारथि उनके सामने ही भूमि पर गिर पड़ा ।

**मद्राधिपश्चापि युधिष्ठिरस्य**
**शरैश्चतुर्भिर्निजघान वाहान् ।**
**वाहांश्च हत्वा व्यकरोन्महात्मा**
**योधक्षयं धर्मसुतस्य राज्ञः ॥१४॥**

तत्पश्चात् मद्रराज ने चार बाणों से युधिष्ठिर के चारों घोड़ों का भी संहार कर डाला । घोड़ों को मारकर महामनस्वी शल्य ने धर्मपुत्र राजा युधिष्ठिर के योद्धाओं का विनाश आरम्भ कर दिया ।

**तथा कृते राजनि भीमसेनो**
**मद्राधिपस्याशु ततो महात्मा ।**
**छित्वा धनुर्वेगवता शरेण**
**द्वाभ्यामविध्यत् सुभृशं नरेन्द्रम् ॥१५॥**

जब मद्रराज शल्य ने राजा युधिष्ठिर की ऐसी दशा कर दी, तब महामनस्वी भीमसेन ने शीघ्र ही एक वेगशाली बाण द्वारा उनके धनुष को काट दिया और दो बाणों से उस नरेश [शल्य] को भी अत्यन्त घायल कर दिया ।

**तथापरेणास्य जहार यन्तुः**
**कायाच्छिरः संहननीयमध्यात् ।**
**जघान चाश्वांश्चतुरः सुशीघ्रं**
**तथा भृशं कुपितो भीमसेनः ॥१६॥**

तत्पश्चात् अत्यन्त क्रोध में भरे हुए भीमसेन ने दूसरे बाण से शल्य के सारथि का मस्तक उसके धड़ से अलग कर दिया और उनके चारों घोड़ों को भी शीघ्र ही मार डाला ।

**तमग्रणीः सर्वधनुर्धराणा-**
**मेकं चरन्तं समरेऽतिवेगम् ।**
**भीमः शतेन व्यकिरच्छराणां**
**माद्रीसुतः सहदेवस्तथैव ॥१७॥**

तत्पश्चात् सम्पूर्ण धनुर्धरों में अग्रगण्य भीमसेन तथा माद्रीपुत्र सहदेव ने रणभूमि में बड़े वेग से एकाकी विचरनेवाले शल्य पर सैकड़ों बाणों की वर्षा की ।

**तैः सायकैर्मोहितं वीक्ष्य शल्यं**
**भीमः शरैरस्य चकर्त वर्म ।**
**स भीमसेनेन निकृत्तवर्मा**
**मद्राधिपश्चर्म सहस्रतारम् ॥१८॥**
**प्रगृह्य खड्गं च रथान्महात्मा**
**प्रस्कन्द्य कुन्तीसुतमभ्यधावत् ।**
**छित्त्वा रथेषां नकुलस्य सोऽथ**
**युधिष्ठिरं भीमबलोऽभ्यधावत् ॥१९॥**

उन बाणों से शल्य को मोहित हुआ देख भीमसेन ने उनके कवच को भी काट डाला । भीमसेन के द्वारा अपना कवच कट जाने पर भयंकर बलशाली महामनस्वी मद्रराज शल्य अनेक तारों के चिह्न से सुशोभित ढाल और तलवार लेकर उस रथ से कूद पड़े और कुन्तीपुत्र की ओर दौड़े । उन्होंने नकुल के रथ का जुआ काटकर युधिष्ठिर पर धावा किया ।

**स धर्मराजो निहताश्वसूतः**
**जग्राह शक्तिं कनकप्रकाशाम् ।**
**चिक्षेप वेगात् सुभृशं महात्मा**
**हतोऽसि पापेत्यभिगर्जमानः ॥२०॥**

धर्मराज महात्मा युधिष्ठिर ने, जिनके घोड़े और सारथि पहले ही मारे जा चुके थे, सोने के समान प्रकाशित होनेवाली शक्ति हाथ में ली और उसे बड़े वेग से शल्य पर चलाया तथा गर्जते हुए कहा—"ओ पापी ! तू मारा गया ।"

**सा तस्य मर्माणि विदार्य शुभ्र-**
**मुरो विशालं च तथैव भित्त्वा ।**
**विवेश गां तोयमिवाप्रसक्ता**
**यशो विशालं नृपतेर्दहन्ती ॥२१॥**

वह शक्ति राजा शल्य के मर्मस्थानों को विदीर्ण करके उनके उज्ज्वल एवं विशाल वक्षःस्थल को चीरती तथा विस्तृत यश को दग्ध करती हुई जल की भाँति धरती में समा गई । उसकी गति कहीं भी कुण्ठित नहीं होती थी ।

**प्रसार्य बाहू च रथाद् गतो गां**
**संछिन्नवर्मा कुरुनन्दनेन ।**
**महेन्द्रवाहप्रतिमो महात्मा**
**वज्राहतं शृङ्गमिवाचलस्य ॥२२॥**

राजन् ! भीमसेन ने जिनके कवच को छिन्न-भिन्न कर दिया था, वे इन्द्र के ऐरावत हाथी के समान विशालकाय राजा शल्य दोनों भुजाएँ फैलाकर वज्र द्वारा मारे हुए पर्वतशिखर की भाँति रथ से पृथिवी पर गिर पड़े ।

**ततः शल्ये निपतिते मद्रराजानुजो युवा ।**
**भ्रातुस्तुल्यो गुणैः सर्वै रथी पाण्डवमभ्ययात् ॥२३॥**

तत्पश्चात् मद्रराज शल्य के मारे जाने पर उनका छोटा भाई, जो अभी नवयुवक था और सभी गुणों में अपने भाई की समानता करता था, रथ पर आरूढ़ हो पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर पर चढ़ आया ।

**विव्याध च नरश्रेष्ठो नाराचैर्बहुभिस्त्वरन् ।**
**हतस्यापचितिं भ्रातुश्चिकीर्षुर्युद्धदुर्मदः ॥२४॥**

मारे गये भाई का बदला लेने की इच्छा से वह रणदुर्मद नरश्रेष्ठ वीर बड़ी उतावली के साथ उन्हें बहुत-से नाराचों द्वारा घायल करने लगा ।

**तं विव्याधाशुगैः षड्भिर्धर्मराजस्त्वरन्निव ।**
**कार्मुकं चास्य चिच्छेद क्षुराभ्यां ध्वजमेव च ॥२५॥**

तब धर्मराज ने उसे शीघ्रतापूर्वक छह बाणों से बींध डाला और दो क्षुरों से उसके धनुष और ध्वज को काट दिया ।

**ततोऽस्य दीप्यमानेन सुदृढेन शितेन च ।**
**प्रमुखे वर्तमानस्य भल्लेनापाहरच्छिरः ॥२६॥**

तत्पश्चात् एक चमकीले, सुदृढ़ और तीखे भल्ल से सामने खड़े हुए उस राजकुमार के मस्तक को काट गिराया ।

**विचित्रकवचे तस्मिन् हते मद्रनृपानुजे ।**
**हाहाकारं प्रकुर्वाणाः कुरवोऽभिप्रदुद्रुवुः ॥२७॥**

मद्रनरेश का वह छोटा भाई विचित्र कवच से सुशोभित था, उसके मारे जाने पर समस्त कौरव हाहाकार करते हुए भाग चले ।

**इति महाभारते शल्यपर्वणि सप्तमोऽध्यायः ॥७॥**

## अष्टमोऽध्यायः

### कौरव-सेना का पलायन और दुर्योधन का उसे उत्साहित करना

सञ्जय उवाच

**शल्येऽथ निहते राजन् मद्रराजपदानुगाः ।**
**युधिष्ठिरं जिघांसन्तः पाण्डूनां प्राविशन् बलम् ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! मद्रराज शल्य के मारे जाने पर उसके अनुगामी योद्धा युधिष्ठिर के वध की इच्छा से पाण्डवों की सेना में जा घुसे ।

**ततोऽर्जुनश्च भीमश्च माद्रीपुत्रौ च पाण्डवौ ।**
**अभ्यघ्नन् युयुधानश्च मद्रराजपदानुगान् ॥२॥**

तब अर्जुन, भीमसेन, माद्रीपुत्र पाण्डुकुमार

नकुल-सहदेव और सात्यकि ने मद्रराज के अनुगामी वीरों को मारना आरम्भ किया।

**ततो गान्धारराजस्य पुत्रः शकुनिरब्रवीत्।**
**दुर्योधनं महाराज वचनं वचनक्षमः ॥३॥**

हे महाराज! मद्रराज के अनुगामियों को मारे जाते देख प्रवचन-पटु गान्धारराज-पुत्र शकुनि ने दुर्योधन से यह बात कही—

**किं नः सप्रेक्षमाणानां मद्राणां हन्यते बलम्।**
**न युक्तमेतत् समरे त्वयि तिष्ठति भारत ॥४॥**

"भरतभूषण! हम लोगों के देखते-देखते मद्रदेश की यह सेना क्यों मारी जा रही है? तुम्हारे रहते ऐसा कदापि नहीं होना चाहिए।

**सहितैश्चापि योद्धव्यमित्येष समयः कृतः।**
**अथ कस्मात् परानेव घ्नतो मर्षयसे नृप ॥५॥**

"हम सब लोग इकट्ठे होकर लड़ेंगे"—ऐसी शपथ ली जा चुकी है। नरेश्वर! ऐसी अवस्था में शत्रुओं को अपनी सेना का संहार करते देखकर भी तुम क्यों सहन कर रहे हो?"

दुर्योधन उवाच

**वार्यमाणा मया पूर्वं नैते चक्रुर्वचो मम।**
**एते विनिहताः सर्वे प्रस्कन्नाः पाण्डुवाहिनीम् ॥६॥**

**दुर्योधन बोला**—मैंने पहले ही इन्हें बहुत मना किया था, परन्तु इन लोगों ने मेरी बात नहीं मानी और पाण्डुसेना में घुसकर ये प्रायः सब-के-सब मारे गये।

शकुनिरुवाच

**न भर्तुः शासनं वीरा रणे कुर्वन्त्यमर्षिताः।**
**अलं क्रोद्धुमथैतेषां नायं काल उपेक्षितुम् ॥७॥**
**यामः सर्वे च सम्भूय सवाजिरथकुञ्जराः।**
**परित्रातुं महेष्वासान् मद्रराजपदानुगान् ॥८॥**

**शकुनि ने कहा**—नरेश्वर! रणभूमि में क्रोध के वशीभूत हुए सैनिक स्वामी की आज्ञा का पालन नहीं करते, अतः उनपर कुपित होना उचित नहीं है और यह उनकी उपेक्षा करने का समय भी नहीं है। आओ, हम सब एकसाथ हो मद्रराज के महाधनुर्धर सेवकों की रक्षा के लिए हाथी, घोड़े और रथोंसहित चलें [तथा प्रयत्नपूर्वक एक-दूसरे की रक्षा करें]।

सञ्जय उवाच

**एवमुक्तस्तदा राजा बलेन महता वृतः।**
**प्रययौ सिंहनादेन कम्पयन्निव मेदिनीम् ॥९॥**

**सञ्जय कहते हैं**—शकुनि के वैसा कहने पर राजा दुर्योधन विशाल सेना के साथ सिंहनाद करता और पृथिवी को कँपाता हुआ-सा आगे बढ़ा।

**हत विद्ध्यत गृह्णीत प्रहरध्वं निकृन्तत।**
**इत्यासीत् तुमुलः शब्दस्तव सैन्यस्य भारत ॥१०॥**

हे भरतभूषण! उस समय आपकी सेना में "मार डालो, बींध डालो, पकड़ लो, प्रहार करो और टुकड़े-टुकड़े कर डालो" आदि भयंकर शब्द गूँज रहे थे।

**पाण्डवास्तु रणे दृष्ट्वा मद्रराजपदानुगान्।**
**सहितानभ्यवर्तन्त गुल्ममास्थाय मध्यमम् ॥११॥**

समराङ्गण में मद्रराज के सेवकों को एकसाथ धावा करते देख पाण्डवों ने मध्यम गुल्म [सेना] का आश्रय ले उनका सामना किया।

**ते मुहूर्ताद् रणे वीरा हस्ताहस्ति विशाम्पते।**
**निहताः प्रत्यदृश्यन्त मद्रराजपदानुगाः ॥१२॥**

प्रजेश्वर! वे मद्रराज के अनुगामी वीर युद्धभूमि में दो ही घड़ी के भीतर हाथों-हाथ मारे गये दिखाई दिये।

**निहतेषु च शूरेषु मद्रराजानुगेषु वै।**
**दुर्योधनबलं सर्वं पुनरासीत् पराङ्मुखम् ॥१३॥**

मद्रराज के उन शूरवीर सैनिकों के मारे जाने पर दुर्योधन की सारी सेना पुनः पीठ दिखाकर भाग चली।

**ते रणाद् भरतश्रेष्ठ तावकाः प्राद्रवन् दिशः।**
**धावतश्चाप्यपश्याम श्वसमानाञ्शराहतान् ॥१४॥**

भरतश्रेष्ठ! आपके वे सैनिक रणभूमि से सम्पूर्ण दिशाओं की ओर भागे थे। हमने देखा, वे बाणों से क्षत-विक्षत हो हाँफते हुए दौड़े जा रहे हैं।

**तान्प्रभग्नान्द्रुतान्दृष्ट्वा हतोत्साहान्पराजितान्।**
**दुर्योधनः स्वकं सैन्यमब्रवीद् भृशविक्षतम् ॥१५॥**

उन्हें हतोत्साह, पराजित, हताश और घायल होकर भागते हुए देख दुर्योधन ने अपने सैनिकों को पुकारकर कहा—

**न तं देशं प्रपश्यामि पृथिव्यां पर्वतेषु च ।**
**यत्र यातान्न वा हन्युः पाण्डवाः किं सृतेन वः ।।१६।।**

"अरे ! इस प्रकार भागने से क्या लाभ है ? मैं पृथिवी में या पर्वतों पर ऐसा कोई स्थान नहीं देखता, जहाँ जाने पर पाण्डव तुम्हारा वध न कर सकें ।

**अल्पं च बलमेतेषां कृष्णौ च भृशविक्षतौ ।**
**यदि सर्वेऽत्र तिष्ठामो ध्रुवं नो विजयो भवेत् ।।१७।।**

"अब तो इनके पास बहुत थोड़ी सेना शेष रह गई है और कृष्ण तथा अर्जुन भी अत्यन्त घायल हो चुके हैं, ऐसी अवस्था में यदि हम लोग साहस करके डटे रहें तो हमारी विजय निश्चित है ।

**विप्रयातांस्तु वो भिन्नान् पाण्डवाः कृतविप्रियाः ।**
**अनुसृत्य हनिष्यन्ति श्रेयान्नः समरे वधः ।।१८।।**

"तुम पाण्डवों के प्रति अपराध तो कर ही चुके हो । यदि तुम अलग-अलग होकर भागोगे तो पाण्डव तुम्हारा पीछा करके तुम्हें अवश्य मार डालेंगे । ऐसी अवस्था में हमारे लिए संग्राम में मारा जाना ही श्रेयस्कर है ।

**यदा शूरं च भीरुं च मारयत्यन्तकः सदा ।**
**को नु मूढो न युध्येत पुरुषः क्षत्रियो ध्रुवम् ।।१९।।**

"जब शूरवीर और कायर सभी को सदा ही मृत्यु मार डालती है, तब ऐसा कौन मूर्ख मनुष्य है जो क्षत्रिय कहलाकर भी निश्चितरूप से युद्ध नहीं करेगा ?

**श्रेयो नो भीमसेनस्य क्रुद्धस्याभिमुखे स्थितम् ।**
**सुखः संग्रामिको मृत्युः क्षत्रधर्मेण युध्यताम् ।।२०।।**

"हमारे लिए क्रोध में भरे हुए भीमसेन के सामने डटे रहना ही कल्याणकारी होगा । क्षत्रिय-धर्म के अनुसार युद्ध करनेवाले वीर पुरुषों के लिए संग्राम में होनेवाली मृत्यु ही सुखद है ।

**मर्त्येनावश्यमर्तव्यं गृहेष्वपि कदाचन ।**
**युध्यतः क्षत्रधर्मेण मृत्युरेष सनातनः ।।२१।।**

"मरणधर्मा मनुष्य को कभी-न-कभी अवश्य मरना पड़ेगा । घर में भी उसे मृत्यु से छुटकारा नहीं है, अतः क्षत्रिय-धर्म के अनुसार युद्ध करते हुए ही जो मृत्यु होती है, यही क्षत्रिय के लिए सनातन मृत्यु है ।

**हत्वेह सुखमाप्नोति हतः प्रेत्य महत् फलम् ।**
**न युद्धधर्माच्छ्रेयान् वै पन्थाः स्वर्गस्य कौरवाः ।।२२।।**

"कौरवो ! वीर पुरुष शत्रु को मारकर इहलोक में सुख भोगता है और यदि मारा गया तो वह परलोक में जाकर महान् फल का भागी होता है, अतः धर्मयुद्ध से बढ़कर स्वर्ग की प्राप्ति के लिए दूसरा कोई कल्याणकारी मार्ग नहीं है ।"

**श्रुत्वा तद् वचनं तस्य पूजयित्वा च पार्थिवाः ।**
**पुनरेवाभ्यवर्तन्त पाण्डवानाततायिनः ।।२३।।**

दुर्योधन की यह बात सुनकर सब राजा उसका आदर करते हुए पुनः आततायी पाण्डवों का सामना करने के लिए लौट पड़े ।

**तानापतत एवाशु व्यूढानीकाः प्रहारिणः ।**
**प्रत्युद्ययुस्तदा पार्था जयगृद्धाः प्रमन्यवः ।।२४।।**

उनके आक्रमण करते ही अपनी सेना का व्यूह बनाकर प्रहारकुशल, विजयाभिलाषी तथा बढ़े हुए क्रोधवाले पाण्डव शीघ्र ही उनका सामना करने के लिए आगे बढ़े ।

**धनञ्जयो रथेनाजावभ्यवर्तत वीर्यवान् ।**
**विश्रुतं त्रिषु लोकेषु व्यक्षिपन् गाण्डिवं धनुः ।।२५।।**

पराक्रमी अर्जुन अपने विश्वविख्यात गाण्डीव धनुष की टंकार करते हुए रथ के द्वारा युद्ध के लिए वहाँ आ पहुँचे ।

**इति महाभारते शल्यपर्वणि अष्टमोऽध्यायः ।।८।।**

# नवमोऽध्यायः

## अर्जुन और भीम द्वारा कौरव-सेना का संहार, सात्यकि द्वारा सञ्जय का पकड़ा जाना, भीम द्वारा आपके पुत्रों का वध

सञ्जय उवाच

**तत्सैन्यं भरतश्रेष्ठ वध्यमानं किरीटिना ।**
**सम्प्रदुद्राव संग्रामात् तव पुत्रस्य पश्यतः ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—हे भरतश्रेष्ठ ! किरीटधारी अर्जुन की मार खाकर वह बची हुई सेना आपके पुत्र के देखते-देखते युद्धभूमि से भाग चली ।

**दृष्ट्वा तु हतविक्रान्तं स्वमनीकं महाबलः ।**
**तव पुत्रो महाराज प्रययौ यत्र सौबलः ॥२॥**

महाराज ! अपनी सेना का पराक्रम नष्ट हुआ देख आपका महाबली पुत्र दुर्योधन वहीं चला गया, जहाँ सुबलपुत्र शकुनि खड़ा था ।

**अदृष्ट्वा तु रथानीके दुर्योधनमरिन्दमम् ।**
**अश्वत्थामा कृपश्चैव कृतवर्मा च सात्वतः ।**
**अपृच्छन् क्षत्रियाँस्तत्र क्व नु दुर्योधनो गतः ॥३॥**

उधर शत्रुदमन दुर्योधन को रथसेना में न देखकर अश्वत्थामा, कृपाचार्य और सात्वतवंशी कृतवर्मा ने समस्त क्षत्रियों से पूछा—"राजा दुर्योधन कहाँ चले गये ?"

**आहुः केचिद्धते सूते प्रयातो यत्र सौबलः ।**
**अपरे त्वब्रुवंस्तत्र क्षत्रिया भृशविक्षताः ॥४॥**
**दुर्योधनेन किं कार्यं द्रक्ष्यध्वं यदि जीवति ।**
**युद्धयध्वं सहिताः सर्वे किं वो राजा करिष्यति ॥५॥**

कुछ लोगों ने कहा—"सारथि के मारे जाने पर राजा दुर्योधन वहीं गये हैं, जहाँ शकुनि हैं ।" दूसरे अत्यन्त घायल हुए क्षत्रिय वहाँ इस प्रकार कहने लगे—"अरे ! दुर्योधन से यहाँ क्या काम है ? यदि वे जीवित होंगे तो तुम सब लोग उन्हें देख ही लोगे । इस समय तो सब लोग एकसाथ होकर केवल युद्ध करो । राजा तुम्हारी क्या सहायता करेंगे ?"

**श्रुत्वा तु वचनं तेषामश्वत्थामा महाबलः ।**
**कृपश्च कृतवर्मा च प्रययौ यत्र सौबलः ॥६॥**

उनकी बात सुनकर महाबली अश्वत्थामा, कृपाचार्य और कृतवर्मा—ये सब वहीं जा पहुँचे जहाँ शकुनि था ।

**ततस्तेषु प्रयातेषु धृष्टद्युम्नपुरस्कृताः ।**
**आययुः पाण्डवा राजन्विनिघ्नन्तः स्म तावकम् ॥७॥**

राजन् ! उन अश्वत्थामा आदि के आगे बढ़ जाने पर धृष्टद्युम्न आदि पाण्डव आपकी सेना का संहार करते हुए वहाँ आ पहुँचे ।

**दृष्ट्वा तु तानापततः सम्प्रहृष्टान् महारथान् ।**
**पराक्रान्तांस्ततो वीरा निराशा जीविते तदा ॥८॥**

हर्ष और उत्साह में भरे हुए उन महारथियों को आक्रमण करते देख आपके पराक्रमी वीर उस समय जीवन से निराश हो गये ।

**विवर्णमुखभूयिष्ठमभवत् तावकं बलम् ।**
**परिक्षीणायुधान् दृष्ट्वा तानहं परिवारितान् ॥९॥**
**राजन्बलेन द्व्यङ्गेन त्यक्त्वा जीवितमात्मनः ।**
**आत्मना पञ्चमोऽयुद्ध्यं पाञ्चालस्य बलेन ह ॥१०॥**

आपकी सेना के अधिकांश योद्धाओं का मुख उदास हो गया । उन सबके हथियार नष्ट हो गये थे और वे चारों ओर से घिर गये थे । राजन् ! उन सबकी वह दुर्दशा देख मैं जीवन का मोह छोड़कर अन्य चार महारथियों को साथ ले हाथी और घोड़े—दो अङ्गोंवाली सेना से मिलकर धृष्टद्युम्न की सेना के साथ युद्ध करने लगा ।

**धृष्टद्युम्नबलेन वै तत्र नोऽभूद् रणो महान् ।**
**जितास्तेन वयं सर्वे व्यपयाम रणात् ततः ॥११॥**

वहाँ धृष्टद्युम्न की सेना के साथ हम लोगों का बड़ा भारी युद्ध हुआ, परन्तु उन्होंने हम सबको परास्त कर दिया । तब हम वहाँ से भाग चले ।

**अथापश्यं सात्यकिं तमुपायान्तं महारथम् ।**
**रथैश्चतुःशतैर्वीरो मामभ्यद्रवदाहवे ॥१२॥**

इतने में ही मैंने महारथी सात्यकि को अपने पास आते देखा । वीर सात्यकि ने रणभूमि में चार सौ रथियों के साथ मुझपर आक्रमण किया ।

**धृष्टद्युम्नादहं मुक्तः कथञ्चिच्छ्रान्तवाहनात् ।**
**पतितो माधवानीकं दुष्कृती नरकं यथा ॥१३॥**

थके हुए वाहनोंवाले धृष्टद्युम्न से मैं किसी प्रकार छूटा तो सात्यकि की सेना में आ फँसा; जैसे कोई पापी नरक में गिर गया हो ।

**तत्र युद्धमभूद् घोरं मुहूर्तमतिदारुणम् ।**
**सात्यकिस्तु महाबाहुर्मम हत्वा परिच्छदम् ।**
**जीवग्राहमगृह्णान्मां मूर्च्छितं पतितं भुवि ॥१४॥**[1]

वहाँ दो घड़ी तक बड़ा भयंकर एवं घोर युद्ध हुआ । महाबाहु सात्यकि ने मेरी सारी युद्ध-सामग्री नष्ट कर दी और जब मैं मूर्च्छित होकर पृथिवी पर गिर पड़ा, तब मुझे जीवित ही पकड़ लिया ।

**अदृश्यमाने कौरव्ये पुत्रे दुर्योधने तव ।**
**सोदर्याः सहिता भूत्वा भीमसेनमुपाद्रवन् ॥१५॥**

उधर जब आपका पुत्र कुरुवंशी दुर्योधन कहीं दिखाई नहीं दिया, तब मरने से बचे आपके सभी पुत्र एकसाथ एकट्ठे होकर भीमसेन पर टूट पड़े ।

**ततो भीमो महाराज स्वरथं पुनरास्थितः ।**
**मुमोच निशितान् बाणान् पुत्राणां तव मर्मसु ॥१६॥**

महाराज ! तब भीमसेन पुनः अपने रथ पर आरूढ़ हो, आपके पुत्रों के मर्मस्थानों में तीखे बाणों का प्रहार करने लगे ।

**ते हता न्यपतन् भूमौ स्यन्दनेभ्यो महारथाः ।**
**वसन्ते पुष्पशबला निकृत्ता इव किंशुकाः ॥१७॥**

उन बाणों द्वारा मारे गये वे महारथी वसन्त ऋतु में कटे हुए पुष्पयुक्त पलाश के वृक्षों की भाँति रथों से पृथिवी पर गिर पड़े ।

**भीमसेनस्तु कौन्तेयो हत्वा युद्धे सुताँस्तव ।**
**मेने कृतार्थमात्मानं सफलं जन्म च प्रभो ॥१८॥**

प्रभो ! इस प्रकार कुन्तीपुत्र भीमसेन ने युद्ध में आपके पुत्रों का वध करके अपने-आपको कृतार्थ माना और अपने जन्म को सफल समझा ।

**इति महाभारते शल्यपर्वणि नवमोऽध्यायः ॥९॥**

---

१. सञ्जय के सम्बन्ध में ऐसा प्रसिद्ध है कि व्यासजी ने इन्हें दिव्यदृष्टि प्रदान की थी । यह दिव्यदृष्टि इन्हें क्यों दी गई, इस विषय में ऐसा कहा जाता है कि जब कौरव-पाण्डवों का युद्ध होने लगा तब धृतराष्ट्र की यह इच्छा हुई कि वे तत्काल युद्ध का समाचार जानते रहें । उनकी इच्छापूर्ति के लिए व्यासजी ने यह प्रस्ताव किया कि "मैं तुम्हें दिव्यदृष्टि प्रदान कर देता हूँ । तुम यहीं बैठे युद्ध के समाचार देखते रहोगे ।" धृतराष्ट्र ने कहा—"मैं अपनी आँखों से अपने कुटुम्बियों का वध देखना नहीं चाहता । आप सञ्जय को दिव्यदृष्टि प्रदान कर दें । वे मुझे युद्ध के समाचार सुनाते रहेंगे ।" धृतराष्ट्र के प्रस्ताव पर व्यासजी ने सञ्जय को दिव्यदृष्टि दे दी और वे हस्तिनापुर में बैठे हुए ही धृतराष्ट्र को युद्ध के समाचार सुनाते रहे । इसी प्रसङ्ग को लेकर यह कल्पना भी कर ली गई कि महाभारत-युग में दूरदर्शन [Television] भी था तभी तो सञ्जय हस्तिनापुर में बैठे हुए कुरुक्षेत्र के समाचार सुनाते रहते थे ।

महाभारतकाल में ज्ञान-विज्ञान पराकाष्ठा की चोटी पर पहुँचा हुआ था, इसमें सन्देह नहीं है, परन्तु महाभारतकाल में 'दूरदर्शन' नहीं था । साथ ही सञ्जय को दिव्यदृष्टि प्रदान करने की बात भी गप्प है ।

वास्तविक बात यह है कि वर्तमान पत्रकारों की भाँति सञ्जय सन्देशवाहक था । वह युद्धभूमि में जाकर वहाँ के समाचार संग्रह करता था और हस्तिनापुर लौटकर धृतराष्ट्र को सुना देता था ।

इस स्थल से यह स्पष्ट है कि सञ्जय रणक्षेत्र में जाता था । इतना ही नहीं, यहाँ तो उसके युद्ध करने का और युद्ध में मूर्च्छित होने पर उसे बन्दी बनाने का भी स्पष्ट उल्लेख है ।

यदि सञ्जय युद्ध के समाचार दिव्यदृष्टि के द्वारा बताता था तो क्या वह समाचार सुनाते-सुनाते युद्ध भी करने लगा और बन्दी भी बना लिया गया ?

# दशमोऽध्यायः

## अर्जुन द्वारा सेना और पुत्रोंसहित सुशर्मा का वध

सञ्जय उवाच

**दुर्योधनो महाराज सुदर्शश्चापि ते सुतः।**
**हतशेषौ तदा संख्ये वाजिमध्ये व्यवस्थितौ ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज ! उस समय आपके पुत्र दुर्योधन और सुदर्शन—ये दो ही बच गये थे। ये दोनों ही घुड़सवारों के बीच में खड़े थे।

**ततो दुर्योधनं दृष्ट्वा वाजिमध्ये व्यवस्थितम्।**
**उवाच देवकीपुत्रः कुन्तीपुत्रं धनञ्जयम् ॥२॥**

उस समय दुर्योधन को घुड़सवारों के बीच खड़ा देख देवकीनन्दन श्रीकृष्ण ने कुन्तीपुत्र अर्जुन से इस प्रकार कहा—

**असौ दुर्योधनः पार्थ वाजिमध्ये व्यवस्थितः।**
**छत्रेण ध्रियमाणेन प्रेक्षमाणो मुहुर्मुहुः ॥३॥**

"पार्थ ! वह रहा दुर्योधन, जो छत्र धारण किये हुए घुड़सवारों के बीच में खड़ा है, और बारम्बार इधर ही देख रहा है।

**प्रतिव्यूह्य बलं सर्वं रणमध्ये व्यवस्थितः।**
**एनं हत्वा शितैर्बाणैः कृतकृत्यो भविष्यसि ॥४॥**

"वह अपनी सारी सेना का व्यूह बनाकर युद्धभूमि में खड़ा है। तुम इसे पैने बाणों से मारकर कृतकृत्य हो जाओगे।

**गजानीकं हतं दृष्ट्वा त्वां च प्राप्तमरिन्दम।**
**यावन्न विद्रवन्त्येते तावज्जहि सुयोधनम् ॥५॥**

"शत्रुदमन ! गजसेना का वध और तुम्हारा आगमन हुआ देख ये कौरव योद्धा जबतक भाग नहीं जाते तभी तक दुर्योधन को मार डालो।"

अर्जुन उवाच

**धृतराष्ट्रसुताः सर्वे हता भीमेन माधव।**
**यावेतावास्थितौ कृष्ण तावद्य न भविष्यतः ॥६॥**

**अर्जुन ने कहा**—माधव ! धृतराष्ट्र के सभी पुत्र भीमसेन के हाथ से मारे गये हैं। श्रीकृष्ण ! ये जो दो पुत्र खड़े हैं, इनका भी आज अन्त हो जाएगा।

**अद्य ता अपि रोत्स्यन्ति सर्वा नागपुरे स्त्रियः।**
**श्रुत्वा पतींश्च पुत्रांश्च पाण्डवैर्निहतान् युधि ॥७॥**

आज हस्तिनापुर में रहनेवाली वे सारी स्त्रियाँ भी फूट-फूटकर रोएँगी, जिनके पतियों और पुत्रों को पाण्डवों ने मार डाला है।

**समाप्तमद्य वै कर्म सर्वं कृष्ण भविष्यति।**
**अद्य दुर्योधनो दीप्तां श्रियं प्राणांश्च मोक्ष्यति ॥८॥**

श्रीकृष्ण ! आज हम लोगों का सारा कार्य समाप्त हो जाएगा। आज दुर्योधन अपनी उज्ज्वल राज्यलक्ष्मी और प्राणों को भी खो बैठेगा।

**मम ह्येतदशक्तं वै वाजिवृन्दमरिन्दम।**
**सोढुं ज्यातलनिर्घोषं याहि यावन्निहन्म्यहम् ॥९॥**

शत्रुदमन ! यह घुड़सवारों की सेना मेरे गाण्डीव धनुष की टंकार को नहीं सह सकेगी। आप घोड़े बढ़ाइए, मैं अभी इन सबको मार डालता हूँ।

सञ्जय उवाच

**एवमुक्तस्तु दाशार्ह पाण्डवेन यशस्विना।**
**अनोदयद्धयान् राजन् दुर्योधनबलं प्रति ॥१०॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! यशस्वी पाण्डुकुमार अर्जुन के ऐसा कहने पर दशार्हकुलनन्दन श्रीकृष्ण ने दुर्योधन की सेना की ओर घोड़ों को बढ़ाया।

**भीमसेनोऽर्जुनश्चैव सहदेवश्च मारिष।**
**प्रययुः सिंहनादेन दुर्योधनजिघांसया ॥११॥**

आर्यनरेश ! भीमसेन, अर्जुन और सहदेव—ये तीनों दुर्योधन के वध की इच्छा से सिंहनाद करते हुए आगे बढ़े।

**तान्प्रेक्ष्य सहितान्सर्वाञ्जवेनोद्यतकार्मुकान्।**
**सौबलोऽभ्यद्रवद् युद्धे पाण्डवानाततायिनः ॥१२॥**

उन सब महारथियों को बड़े वेग से धनुष उठाये एकसाथ धावा बोलते देख सुबलपुत्र शकुनि युद्धभूमि में आततायी पाण्डवों की ओर दौड़ा।

**सुदर्शनस्तव सुतो भीमसेनं समभ्ययात्।**
**सुशर्मा शकुनिश्चैव युयुधाते किरीटिना ॥१३॥**

आपका पुत्र सुदर्शन भीम का सामना करने लगा। सुशर्मा और शकुनि ने किरीटधारी अर्जुन के साथ युद्ध छेड़ दिया।

**तदानीकं तदा पार्थो व्यधमद् बहुभिः शरैः।**
**पातयित्वा हयान्सर्वांस्त्रिगर्तानां रथान् ययौ ॥१४॥**

पार्थ ने अपने बहुसंख्यक बाणों द्वारा घुड़सवारों की उस सेना को छिन्न-भिन्न कर डाला तथा समस्त घोड़ों को धराशायी करके त्रिगर्तदेशीय रथियों पर आक्रमण किया।

**ततस्ते सहिता भूत्वा त्रिगर्तानां महारथाः।**
**अर्जुनं वासुदेवं च शरवर्षैरवाकिरन् ॥१५॥**

फिर तो वे त्रिगर्तदेशीय महारथी एक साथ इकट्ठे होकर अर्जुन और श्रीकृष्ण को अपने बाणों की वर्षा से आच्छादित करने लगे।

**सत्यकर्माणमाक्षिप्य क्षुरप्रेण महायशाः।**
**ततोऽस्य स्यन्दनस्येषां चिच्छेद पाण्डुनन्दनः ॥१६॥**
**शिलाशितेन च विभो क्षुरप्रेण महायशाः।**
**शिरश्चिच्छेद सहसा तप्तकुण्डलभूषणम् ॥१७॥**

प्रभो! उस समय महायशस्वी पाण्डुपुत्र अर्जुन ने क्षुरप्र द्वारा सत्यकर्मा पर प्रहार करके उसके रथ के जुए को काट डाला। तदनन्तर उस महायशस्वी वीर ने शिला पर तेज किये हुए क्षुरप्र द्वारा उसके तपाये हुए सुवर्ण के कुण्डलों से विभूषित मस्तक को भी सहसा काट लिया।

**सत्येषुमथ चादत्त योधानां मिषतां ततः।**
**यथा सिंहो वने राजन् मृगं परिबुभुक्षितः ॥१८॥**

राजन्! जैसे वन में भूखा सिंह किसी मृग को दबोच लेता है, उसी प्रकार अर्जुन ने समस्त योद्धाओं के देखते-देखते सत्येषु के भी प्राण हर लिये।

**तं निहत्य ततः पार्थः सुशर्माणं त्रिभिः शरैः।**
**विद्ध्वा तानहनत्सर्वान्रथान्रुक्मविभूषितान् ॥१९॥**

सत्येषु का वध करके अर्जुन ने सुशर्मा को तीन बाणों से घायल कर दिया और उन समस्त सुवर्ण-भूषित रथों का विध्वंस कर डाला।

**ततः शरं समादाय यमदण्डोपमं तदा।**
**सुशर्माणं समुद्दिश्य चिक्षेपाशु धनुर्धरः ॥२०॥**

तत्पश्चात् यमदण्ड के समान भयंकर बाण हाथ में लेकर धनुर्धर अर्जुन ने सुशर्मा को लक्ष्य करके शीघ्र ही छोड़ दिया।

**स शरः प्रेषितस्तेन क्रोधदीप्तेन धन्विना।**
**सुशर्माणं समासाद्य बिभेद हृदयं रणे ॥२१॥**

क्रोध से तमतमाये हुए धनुर्धर अर्जुन के द्वारा चलाये गये उस बाण ने सुशर्मा पर चोट करके उसकी छाती छेद डाली।

**स गतासुर्महाराज पपात धरणीतले।**
**नन्दयन् पाण्डवान्सर्वान्व्यथयंश्चापि तावकान् ॥२२॥**

महाराज! सुशर्मा आपके पुत्रों को व्यथित और समस्त पाण्डवों को आनन्दित करता हुआ प्राणशून्य होकर पृथिवी पर गिर पड़ा।

**सुशर्माणं रणे हत्वा पुत्रानस्य महारथान्।**
**सप्त चाष्टौ च त्रिंशच्च सायकैरनयत् क्षयम् ॥२३॥**

युद्धभूमि में सुशर्मा का वध करके अर्जुन ने अपने बाणों द्वारा उसके पैंतालीस महारथी पुत्रों को भी यमलोक की राह दिखा दी।

**ततोऽस्य निशितैर्बाणैः सर्वान् हत्वा पदानुगान्।**
**अभ्यगाद् भारतीं सेनां हतशेषां महारथः ॥२४॥**

तत्पश्चात् पैने बाणों द्वारा उसके सारे सेवकों का संहार करके महारथी अर्जुन ने मरने से बची हुई कौरवी-सेना पर आक्रमण किया।

**भीमस्तु समरे क्रुद्धः पुत्रं तव जनाधिप।**
**सुदर्शनमदृश्यं तं शरैश्चक्रे हसन्निव ॥२५॥**
**ततोऽस्य प्रहसन् क्रुद्धः शिरः कायादपाहरत्।**
**क्षुरप्रेण सुतीक्ष्णेन स हतः प्रापतद् भुवि ॥२६॥**

जनेश्वर! दूसरी ओर क्रुद्ध हुए भीमसेन ने हँसते-हँसते बाणों की वर्षा करके सुदर्शन को ढक दिया, फिर क्रोधपूर्वक अट्टहास करते हुए उन्होंने उसके मस्तक को तीखे क्षुरप्र द्वारा धड़ से काट लिया। सुदर्शन मरकर पृथिवी पर गिर पड़ा।

इति महाभारते शल्यपर्वणि दशमोऽध्यायः ॥१०॥

# एकादशोऽध्यायः

## सहदेव द्वारा उलूक और शकुनि का वध तथा कौरव-सेना का पलायन

सञ्जय उवाच

**तस्मिन् प्रवृत्ते संग्रामे गजवाजिनरक्षये ।**
**शकुनिः सौबलो राजन् सहदेवं समभ्ययात् ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! हाथी-घोड़ों और मनुष्यों का संहार करनेवाले भयंकर युद्ध का आरम्भ होने पर सुबलपुत्र शकुनि ने सहदेव पर आक्रमण किया ।

**उलूकोऽपि महाराज भीमं विव्याध सप्तभिः ।**
**सहदेवं च सप्तत्या परीप्सन् पितरं रणे ॥२॥**

महाराज ! शकुनि के साथ उलूक भी विद्यमान था । समराङ्गण में पिता की रक्षा करते हुए उलूक ने भीमसेन को सात और सहदेव को सत्तर बाणों से क्षत-विक्षत कर दिया ।

**ततोऽस्यापततः शूरः सहदेवः प्रतापवान् ।**
**उलूकस्य महाराज भल्लेनापाहरच्छिरः ॥३॥**

महाराज ! तब प्रतापी शूरवीर सहदेव ने एक भल्ल मारकर अपने ऊपर आक्रमण करनेवाले उलूक का मस्तक काट डाला ।

**पुत्रं तु निहतं दृष्ट्वा शकुनिस्तत्र भारत ।**
**सहदेवं समासाद्य त्रिभिर्विव्याध सायकैः ॥४॥**

भरतभूषण ! अपने पुत्र उलूक को मारा गया देख शकुनि ने सहदेव के पास पहुँचकर तीन बाणों द्वारा उसपर प्रहार किया ।

**तानपास्य शरान् मुक्ताञ्शरसंघैः प्रतापवान् ।**
**सहदेवो महाराज धनुश्चिच्छेद संयुगे ॥५॥**

उसके छोड़े हुए उन बाणों को अपने शरसमूह से निवारण करके प्रतापी सहदेव ने रणभूमि में उसका धनुष काट डाला ।

**छिन्ने धनुषि राजेन्द्र शकुनिः सौबलस्तदा ।**
**प्रगृह्य विपुलं खड्गं सहदेवाय प्राहिणोत् ॥६॥**

राजेन्द्र ! धनुष कट जाने पर उस समय सुबल-पुत्र शकुनि ने एक बहुत बड़ी तलवार लेकर उसे सहदेव पर दे मारा ।

**तमापतन्तं सहसा घोररूपं विशाम्पते ।**
**द्विधा चिच्छेद समरे सौबलस्य हसन्निव ॥७॥**

प्रजेश्वर ! शकुनि के उस घोर खड्ग को सहसा अपने ऊपर आते देख रणभूमि में सहदेव ने हँसते हुए-से उसके दो टुकड़े कर डाले ।

**ततः शक्तिं महाघोरां कालरात्रिमिवोद्यताम् ।**
**प्रेषयामास संक्रुद्धः पाण्डवं प्रति सौबलः ॥८॥**

अपनी तलवार के वार को विफल देख सुबलपुत्र क्रोध से जल उठा, अतः इस बार उसने उठी हुई कालरात्रि के समान एक महाभयंकर शक्ति सहदेव को लक्ष्य करके चलाई ।

**तामापतन्तीं सहसा शरैः कनकभूषणैः ।**
**त्रिधा चिच्छेद समरे सहदेवो हसन्निव ॥९॥**

अपने ऊपर आती हुई उस शक्ति को सहदेव ने रणभूमि में हँसते हुए-से अपने सुवर्णविभूषित बाणों से काटकर सहसा उसके तीन टुकड़े कर दिये ।

**शक्तिं विनिहतां दृष्ट्वा सौबलं च भयार्दितम् ।**
**दुद्रुवुस्तावकाः सर्वे भये जाते ससौबलाः ॥१०॥**

उस शक्ति को नष्ट हुई देख और सुबलपुत्र शकुनि को भी भयभीत जानकर आपके सभी सैनिक भयभीत हो शकुनिसहित वहाँ से भाग खड़े हुए ।

**स्वमंशमवशिष्टं तं संस्मृत्य शकुनिं नृप ।**
**रथेन काञ्चनाङ्गेन सहदेवः समभ्ययात् ॥११॥**

राजन् ! शकुनि को अपना अवशिष्ट भाग मान-कर सहदेव ने सुवर्णमय अङ्गोंवाले रथ के द्वारा उसका पीछा किया ।

**अभिगम्य सुदुर्धर्षः सहदेवो युधां पतिः ।**
**विकृष्य बलवच्चापं क्रोधेन प्रज्वलन्निव ॥१२॥**
**शकुनिं दशभिर्विद्ध्वा चतुर्भिश्चास्य वाजिनः ।**
**छत्रं ध्वजं धनुश्चास्य च्छित्त्वा सिंह इवानदत् ॥१३॥**

योद्धाओं में श्रेष्ठ सहदेव अत्यन्त दुर्जय वीर हैं । उन्होंने क्रोध से जलते हुए-से शकुनि के पास पहुँच-कर अपने धनुष को बलपूर्वक खींचा और दस बाणों से उसे घायल करके चार बाणों से उसके चारों घोड़ों को भी बींध डाला । तदनन्तर उसके छत्र, ध्वज

और धनुष को भी काटकर सिंह के समान गर्जना की।

**तस्याशुकारी सुसमाहितेन**
**सुवर्णपुंखेन दृढायसेन।**
**भल्लेन सर्वावरणातिगेन**
**शिरः शरीरात् प्रममाथ भूयः ॥१४॥**

तदनन्तर शीघ्रकारी सहदेव ने अच्छी प्रकार सन्धान करके छोड़े गये सुवर्णमय पंखवाले लोहे के बने हुए सुदृढ़ भल्ल के द्वारा, जो समस्त आवरणों को छेद डालनेवाला था, शकुनि के मस्तक को धड़ से काट गिराया।

**हृतोत्तमाङ्गं शकुनिं समीक्ष्य**
**भूमौ शयानं रुधिरार्द्रगात्रम्।**
**योधास्त्वदीया भयनष्टसत्त्वा**
**दिशः प्रजग्मुः प्रगृहीतशस्त्राः ॥१५॥**

शकुनि को मस्तक से रहित तथा खून से लथपथ होकर भूमि पर पड़ा देख आपके योद्धा भय के कारण अपना धैर्य खो बैठे और हथियार लिये हुए सम्पूर्ण दिशाओं में भाग गये।

**ततो रथाच्छकुनिं पातयित्वा**
**मुदान्विता भारत पाण्डवेयाः।**
**शंखान् प्रदध्मुः समरेऽतिहृष्टाः**
**सकेशवाः सैनिकान् हर्षयन्तः ॥१६॥**

भरतभूषण! शकुनि को रथ से गिराकर [मार-कर] रणभूमि में श्रीकृष्णसहित समस्त पाण्डव हर्ष में भरकर सैनिकों का हर्ष बढ़ाते हुए प्रसन्नतापूर्वक शंखनाद करने लगे।

**इति महाभारते शल्यपर्वणि एकादशोऽध्यायः ॥११॥**

# द्वादशोऽध्यायः

**शेष कौरव-सेना का वध, सञ्जय का छुटकारा, दुर्योधन का सरोवर में प्रवेश और युयुत्सु का राजमहिलाओं के साथ हस्तिनापुर में आना**

सञ्जय उवाच

**ततः क्रुद्धा महाराज सौबलस्य पदानुगाः।**
**त्यक्त्वा जीवितमाक्रन्दे पाण्डवान् पर्यवारयन् ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज! शकुनि के मारे जाने पर उसके अनुचर क्रोध में भर गये और प्राणों का मोह छोड़कर उन्होंने उस महासमर में पाण्डवों को चारों ओर से घेर लिया।

**तानर्जुनः प्रत्यगृह्णात् सहदेवजये धृतः।**
**भीमसेनश्च तेजस्वी क्रुद्धाशीविषदर्शनः ॥२॥**

उस समय सहदेव की विजय को सुरक्षित रखने का दृढ़ निश्चय लेकर अर्जुन ने उन समस्त सैनिकों को आगे बढ़ने से रोका। उनके साथ तेजस्वी भीमसेन भी थे, जो क्रुद्ध हुए विषधर सर्प के समान जान पड़ते थे।

**संगृहीतायुधान् बाहून् योधानामभिधावताम्।**
**भल्लैश्चिच्छेद बीभत्सुः शिरांस्यपि हयानपि ॥३॥**

सहदेव पर धावा करनेवाले उन योद्धाओं की अस्त्र-शस्त्रयुक्त भुजाओं, मस्तकों और उनके घोड़ों को भी अर्जुन ने भल्लों से काट गिराया।

**ते हयाः प्रत्यपद्यन्त वसुधां विगतासवः।**
**चरता लोकवीरेण प्रहताः सव्यसाचिना ॥४॥**

समराङ्गण में विचरते हुए विश्वप्रसिद्ध वीर सव्यसाची अर्जुन के द्वारा मारे गये वे घोड़े और घुड़सवार प्राणहीन होकर पृथिवी पर गिर पड़े।

**ततो दुर्योधनो राजा दृष्ट्वा स्वबलसंक्षयम्।**
**हतशेषान् समानीय क्रुद्धो रथगणान् बहून् ॥५॥**
**कुञ्जरांश्च हयांश्चैव पादातांश्च समन्ततः।**
**उवाच सहितान् सर्वान् धार्तराष्ट्र इदं वचः ॥६॥**

अपनी सेना का इस प्रकार विनाश होता देख राजा दुर्योधन अत्यन्त कुपित हुए। उसने मरने से बचे हुए बहुत-से रथियों, हाथीसवारों, घुड़सवारों और पैदलों को सब ओर से एकत्र करके उन सबसे इस प्रकार कहा—

**समासाद्य रणे सर्वान् पाण्डवान् ससुहृद्गणान् ।**
**पाञ्चाल्यं चापि सबलं हत्वा शीघ्रं न्यवर्तत ॥७॥**

"वीरो ! तुम सब लोग युद्धभूमि में समस्त पाण्डवों तथा उनके मित्रों से भिड़कर उन्हें मार डालो तथा पाञ्चालराज धृष्टद्युम्न का भी सेनासहित संहार करके शीघ्र लौट आओ।"

**तस्य ते शिरसा गृह्य वचनं युद्धदुर्मदाः ।**
**अभ्युद्ययू रणे पार्थांस्तव पुत्रस्य शासनात् ॥८॥**

राजन् ! आपके पुत्र के वचन को शिरोधार्य करके उसकी आज्ञा से वे रणदुर्मद योद्धा पाण्डुपुत्रों से युद्ध करने के लिए आगे बढ़े ।

**ततस्तु पाण्डवानीकान्निःसृत्य बहवो जनाः ।**
**अभ्यघ्नंस्तावकान् युद्धे मुहूर्तादिव भारत ॥९॥**

हे भारत ! कौरव-सैनिकों के आगे बढ़ने पर पाण्डुसेना में से बहुत-से सैनिकों ने निकलकर युद्ध में एक ही मुहूर्त के भीतर आपके सम्पूर्ण योद्धाओं का संहार कर डाला ।

**अक्षौहिण्यः समेतास्तु तव पुत्रस्य भारत ।**
**एकादश हता युद्धे ताः प्रभो पाण्डुसृञ्जयैः ॥१०॥**

प्रभो ! भरतवंशी नरेश ! आपके पुत्र के पास ग्यारह अक्षौहिणी सेनाएँ थीं, परन्तु युद्ध में पाण्डवों और सृञ्जयों ने उन सबका संहार कर डाला ।

**तेषु राजसहस्रेषु तावकेषु महात्मसु ।**
**एको दुर्योधनो राजन्नदृश्यत भृशं क्षतः ॥११॥**

राजन् ! आपके दल के सहस्रों महामनस्वी राजाओं में एकमात्र दुर्योधन ही उस समय दिखाई देता था, परन्तु वह भी अत्यन्त घायल हो चुका था ।

**ततो वीक्ष्य दिशः सर्वा दृष्ट्वा शून्यां च मेदिनीम् ।**
**अपयाने मनश्चक्रे विहीनबलवाहनः ॥१२**

उस समय उसे सम्पूर्ण दिशाएँ और सारी पृथिवी सूनी दिखाई दे रही थी। उसके पास न तो सेना थी और न कोई सवारी ही, अतः उसने वहाँ से भाग जाने का विचार किया ।

धृतराष्ट्र उवाच

**निहते मामके सैन्ये निःशेषे शिबिरे कृते ।**
**पाण्डवानां बले सूत किं नु शेषमभूत् तदा ॥१३॥**

**धृतराष्ट्र ने पूछा**—सूत ! जब मेरी सेना मार डाली गई और सारी छावनी सूनी कर दी गई, उस समय पाण्डवों की सेना में कितने सैनिक शेष रह गये थे ?

**यच्च दुर्योधनो मन्दः कृतवाँस्तनयो मम ।**
**बलक्षयं तथा दृष्ट्वा स एकः पृथिवीपतिः ॥१४॥**

सञ्जय ! अपनी सेना का संहार हुआ देखकर अकेले बचे हुए मेरे मूर्ख पुत्र राजा दुर्योधन ने क्या किया ?

सञ्जय उवाच

**रथानां द्वे सहस्रे तु सप्त नागशतानि च ।**
**पञ्च चाश्वसहस्राणि पत्तीनां च शतं शताः ॥१५॥**

**सञ्जय ने कहा**—हे राजेन्द्र ! पाण्डवों की विशाल सेना में से केवल दो सहस्र रथ, सात सौ हाथी, पाँच हजार घोड़े और दस सहस्र पैदल बचे थे ।

**परिगृह्य हि यद् युद्धे धृष्टद्युम्नो व्यवस्थितः ।**
**एकाकी भरतश्रेष्ठ ततो दुर्योधनो नृपः ॥१६॥**

इनको साथ लेकर सेनापति धृष्टद्युम्न रणभूमि में खड़े हुए थे । उधर राजा दुर्योधन अकेला रह गया था ।

**नापश्यत् समरे कञ्चित् सहायं रथिनां वरः ।**
**नर्दमानान् परान् दृष्ट्वा स्वबलस्य च संक्षयम् ॥१७॥**
**तथा दृष्ट्वा महाराज एकः स पृथिवीपतिः ।**
**हतं स्वहयमुत्सृज्य प्राङ्मुखः प्राद्रवद् भयात् ॥१८॥**

महाराज ! रथियों में श्रेष्ठ दुर्योधन ने जब समरभूमि में अपने किसी सहायक को न देखकर शत्रुओं को गर्जते देखा और अपनी सेना के विनाश पर दृष्टिपात किया, तब वह अकेला नरेश अपने मरे हुए घोड़े को वहीं छोड़कर भय के मारे पूर्व दिशा की ओर भाग चला ।

**एकादशचमूभर्त्ता पुत्रो दुर्योधनस्तव ।**
**गदामादाय तेजस्वी पदातिः प्रस्थितो ह्रदम् ॥१९॥**

जो किसी समय ग्यारह अक्षौहिणी सेना का स्वामी था, वही आपका तेजस्वी पुत्र दुर्योधन अब गदा हाथ में लेकर पैदल ही सरोवर की ओर भागा जा रहा था ।

**नातिदूरं ततो गत्वा पद्भ्यामेव नराधिपः ।**
**सस्मार वचनं क्षत्तुर्धर्मशीलस्य धीमतः ॥२०॥**

पैदल ही थोड़ी दूर जाने के पश्चात् राजा दुर्योधन को धर्मशील बुद्धिमान् विदुरजी की कही हुई बातें स्मरण आने लगीं।

**इदं नूनं महाप्राज्ञो विदुरो दृष्टवान् पुरा।**
**महद् वैशसमस्माकं क्षत्रियाणां च संयुगे ॥२१॥**

वह मन-ही-मन सोचने लगा कि हमारा और इन क्षत्रियों का जो भीषण विनाश हुआ है इसे महाज्ञानी विदुरजी ने निश्चय ही पहले ही देख और समझ लिया था।

**एवं विचिन्तयानस्तु प्रविविक्षुर्ह्रदं नृपः।**
**दुःखसंतप्तहृदयो दृष्ट्वा राजन् बलक्षयम् ॥२२॥**

राजन्! अपनी सेना का संहार देखकर इस प्रकार सोच-विचार करते हुए राजा दुर्योधन का हृदय दुःख और शोक से सन्तप्त हो उठा था। उसने सरोवर में प्रवेश करने का विचार किया।

**पाण्डवास्तु महाराज धृष्टद्युम्नपुरोगमाः।**
**अभ्यद्रवन्त संक्रुद्धास्तव राजन् बलं प्रति ॥२३॥**
**शक्त्यृष्टिप्रासहस्तानां बलानामभिगर्जताम्।**
**संकल्पमकरोन्मोघं गाण्डीवेन धनञ्जयः ॥२४॥**

महाराज! धृष्टद्युम्न आदि पाण्डवों ने अत्यन्त क्रुद्ध होकर आपकी सेना पर धावा किया था तथा शक्ति, ऋष्टि और प्रास हाथ में लेकर गर्जना करनेवाले आपके योद्धाओं का सारा संकल्प अर्जुन ने अपने गाण्डीव धनुष से व्यर्थ कर दिया था।

**तान् हत्वा निशितैर्बाणैः सामात्यान्सह बन्धुभिः।**
**रथे श्वेतहये तिष्ठिन्नर्जुनो बह्वशोभत ॥२५॥**

अपने पैने बाणों द्वारा बन्धु और मन्त्रियोंसहित उन योद्धाओं का संहार करके श्वेत घोड़ोंवाले रथ पर स्थित हुए अर्जुन अत्यन्त सुशोभित हो रहे थे।

**अनेकशतसाहस्रे बले दुर्योधनस्य तु।**
**नान्यो महारथो राजन् जीवमानो व्यदृश्यत ॥२६॥**
**द्रोणपुत्रादृते वीरात् तथैव कृतवर्मणः।**
**कृपाच्च गौतमाद् राजन् पार्थिवाच्च तवात्मजात् ॥२७**

राजन्! दुर्योधन की कई लाख सेना में से द्रोणपुत्र वीर अश्वत्थामा, कृतवर्मा, गौतमवंशी कृपाचार्य और आपके पुत्र राजा दुर्योधन के अतिरिक्त अन्य कोई महारथी जीवित नहीं दिखाई देता था।

**धृष्टद्युम्नस्तु मां दृष्ट्वा हसन्सात्यकिमब्रवीत्।**
**किमनेन गृहीतेन नानेनार्थोऽस्ति जीवता ॥२८॥**

उस समय मुझे कैद में पड़ा हुआ देखकर धृष्टद्युम्न ने हँसते हुए सात्यकि से कहा—"इसे कैद करके क्या करना है? इसके जीवित रहने से अपना कोई लाभ नहीं है।"

**धृष्टद्युम्नवचः श्रुत्वा शिनेर्नप्ता महारथः।**
**उद्यम्य निशितं खड्गं हन्तु मामुद्यतस्तदा ॥२९॥**

धृष्टद्युम्न की बात सुनकर शिनिपौत्र महारथी सात्यकि तीखी तलवार उठाकर उसी क्षण मुझे मार डालने के लिए उद्यत हो गये।[1]

**तमागम्य महाप्राज्ञः कृष्णद्वैपायनोऽब्रवीत्।**
**मुच्यतां सञ्जयो जीवन्न हन्तव्यः कथञ्चन ॥३०॥**

उस समय महाज्ञानी श्रीकृष्ण द्वैपायन व्यासजी सहसा आकर बोले—"सञ्जय को जीवित छोड़ दो। ये किसी भी प्रकार वध के योग्य नहीं हैं।"

**द्वैपायनवचः श्रुत्वा शिनेर्नप्ता कृताञ्जलिः।**
**ततो मामब्रवीन्मुक्त्वा स्वस्ति सञ्जय साधय ॥३१॥**

हाथ जोड़े हुए शिनिपौत्र सात्यकि ने व्यासजी की वह बात सुनकर मुझे बन्धन से मुक्त करके कहा, "सञ्जय! तुम्हारा कल्याण हो! जाओ, अपना अभीष्ट साधन करो।"

**अनुज्ञातस्त्वहं तेन न्यस्तवर्मा निरायुधः।**
**प्रातिष्ठं येन नगरं सायाह्ने रुधिरोक्षितः ॥३२॥**

उनके इस प्रकार आज्ञा देने पर मैंने कवच उतार दिया और हथियाररहित हो सायंकाल नगर की ओर प्रस्थित हुआ। उस समय मेरा सारा शरीर रक्त से भीगा हुआ था।

**क्रोशमात्रमपक्रान्तं गदापाणिमवस्थितम्।**
**एकं दुर्योधनं राजन्नपश्यं भृशविक्षतम् ॥३३॥**

राजन्! एक कोस चलने पर मैंने भागे हुए

---

१. इस स्थल को ध्यानपूर्वक पढ़िए। इस स्थल के अवलोकन से भी यह बात स्पष्ट है कि सञ्जय को व्यास से दिव्यदृष्टि प्राप्त नहीं हुई थी। यदि वे दिव्यदृष्टि की सहायता से समाचार सुना रहे थे तो क्या सात्यकि इन्हें मारने के लिए हस्तिनापुर आ पहुँचे थे?

दुर्योधन को गदा हाथ में लिये अकेले खड़ा देखा। उसका शरीर बहुत क्षत-विक्षत हो गया था।

**स तु मामश्रुपूर्णाक्षो नाशक्नोदभिवीक्षितुम्।**
**उपप्रैक्षत मां दृष्ट्वा तथा दीनमवस्थितम्॥३४॥**

मुझे देखते ही उसकी आँखों में आँसू भर आये। वह अच्छी प्रकार मेरी ओर देख न सका। मैं उस समय दीन-भाव से खड़ा था। वह मेरी उस दशा पर दृष्टिपात करता रहा।

**तं चाहमपि शोचन्तं दृष्ट्वैकाकिनमाहवे।**
**मुहूर्तं नाशकं वक्तुमतिदुःखपरिप्लुतः॥३५॥**

मैं भी रणभूमि में अकेले शोकमग्न हुए दुर्योधन को देखकर गहरे दुःखसागर में डूब गया और दो घड़ी तक कोई बात मुख से न निकाल सका।

**ततोऽस्मै तदहं सर्वमुक्तवान् ग्रहणं तदा।**
**द्वैपायनप्रसादाच्च जीवतो मोक्षमाहवे॥३६॥**

कुछ देर पश्चात् मैंने युद्ध में अपने पकड़े जाने और व्यासजी की कृपा से जीवित छूट जाने का सारा समाचार उन्हें कह सुनाया।

**स दीर्घमिव निःश्वस्य प्रत्यवेक्ष्य पुनः पुनः।**
**असौ मां पाणिना स्पृष्ट्वा पुत्रस्ते पर्यभाषत॥३७॥**
**त्वदन्यो नेह संग्रामे कश्चिज्जीवति सञ्जय।**
**द्वितीयं नेह पश्यामि ससहायाश्च पाण्डवाः॥३८॥**

यह सुनकर आपके पुत्र ने लम्बी साँस छोड़कर बारम्बार मेरी ओर देखा और हाथ से मेरा स्पर्श करके इस प्रकार कहा—"सञ्जय! इस युद्ध में तुम्हारे सिवा दूसरा कोई मेरा बन्धु-बान्धव सम्भवतः जीवित नहीं है, क्योंकि मैं यहाँ दूसरे किसी स्वजन को देख नहीं रहा हूँ। उधर पाण्डव अपने सहायकों से सम्पन्न हैं।

**ब्रूयाः सञ्जय राजानं प्रज्ञाचक्षुषमीश्वरम्।**
**दुर्योधनस्तव सुतः प्रविष्टो ह्रदमित्युत॥३९॥**
**सुहृद्भिस्तादृशैर्हीनः पुत्रैर्भ्रातृभिरेव च।**
**पाण्डवैश्च हृते राज्ये को नु जीवेत मादृशः॥४०॥**

"सञ्जय! तुम प्रज्ञाचक्षु ऐश्वर्यशाली महाराज धृतराष्ट्र से कहना कि आपका पुत्र दुर्योधन अपने पराक्रमी सुहृदों, पुत्रों और भाइयों से हीन होकर सरोवर में प्रविष्ट हो गया है। जब पाण्डवों ने मेरा राज्य हर लिया, तब इस दीन-हीन दशा में मेरे-जैसा कौन मनुष्य जीवित रह सकता है?"

**एवमुक्त्वा महाराज प्राविशत् तं महाह्रदम्।**
**अस्तम्भयत तोयं च मायया मनुजाधिपः॥४१॥**

महाराज! ऐसा कहकर राजा दुर्योधन ने उस महान् सरोवर में प्रवेश किया और माया=कौशल से उसका पानी बाँध दिया।

**तस्मिन्ह्रदं प्रविष्टे तु त्रीन्रथाञ्श्रान्तवाहनान्।**
**अपश्यं सहितानेकस्तं देशं समुपेयुषः॥४२॥**

जब दुर्योधन सरोवर में प्रविष्ट हो गया तत्पश्चात् अकेले खड़े हुए मैंने अपने पक्ष के तीन महारथियों को वहाँ उपस्थित देखा, जो एकसाथ उस स्थान पर आ पहुँचे थे। उन तीनों के घोड़े थक चुके थे।

**कृपं शारद्वतं वीरं द्रौणिं च रथिनां वरम्।**
**भोजं च कृतवर्माणं सहिताञ्शरविक्षितान्॥४३॥**

वे थे—शरद्वान् के पुत्र वीर कृपाचार्य, रथियों में श्रेष्ठ द्रोणपुत्र अश्वत्थामा और भोजवंशी कृतवर्मा। ये सब लोग एकसाथ थे, और बाणों से अत्यन्त घायल थे।

**ते सर्वे मामभिप्रेक्ष्य तूर्णमश्वाननोदयन्।**
**उपागम्य तु मामूचुर्दिष्टया जीवसि सञ्जय॥४४॥**

मुझे देखते ही उन तीनों ने शीघ्रतापूर्वक अपने घोड़ों को बढ़ाया और मेरे निकट आकर मुझसे कहा—"सञ्जय! सौभाग्य की बात है कि तुम जीवित हो।"

**अपृच्छंश्चैव मां सर्वे पुत्रं तं जनाधिपम्।**
**कच्चिद् दुर्योधनो राजा स नो जीवति सञ्जय॥४५॥**

तत्पश्चात् उन सबने आपके पुत्र राजा दुर्योधन का समाचार पूछा—"सञ्जय! क्या हमारे राजा जीवित हैं?"

**आख्यातवानहं तेभ्यस्तदा कुशलिनं नृपम्।**
**ह्रदं चैवाहमाचक्षं यं प्रविष्टो नराधिपः॥४६॥**

तब मैंने उन लोगों को दुर्योधन का कुशल समाचार बताया और जिस सरोवर में वह प्रविष्ट हुआ था, उसका भी पता बता दिया।

**अश्वत्थामा तु तद् राजन् निशम्य वचनं मम ।**
**तं ह्रदं विपुलं प्रेक्ष्य करुणं पर्यदेवयत् ॥४७॥**
**अहो धिक्स न जानाति जीवतोऽस्मान्नराधिपः ।**
**पर्याप्ता हि वयं तेन सह योधयितुं परान् ॥४८॥**

राजन् ! मेरी बात सुनकर अश्वत्थामा ने उस विशाल सरोवर की ओर देखा और करुण विलाप करते हुए कहा—"अहो ! धिक्कार है, राजा दुर्योधन नहीं जानते हैं कि हम सब जीवित हैं। उनके साथ रहकर हम लोग शत्रुओं से जूझने के लिए पर्याप्त हैं।"

**ते तु तत्र चिरं कालं विलप्य च महारथाः ।**
**प्राद्रवन्रथिनां श्रेष्ठा दृष्ट्वा पाण्डुसुतान्रणे ॥४९॥**

वे महारथी दीर्घकाल तक वहाँ विलाप करते रहे। फिर रणक्षेत्र में पाण्डवों को आते देख वे रथियों में श्रेष्ठ तीनों वीर वहाँ से भाग निकले।

**ते तु मां रथमारोप्य कृपस्य सुपरिष्कृतम् ।**
**सेनानिवेशमाजग्मुर्हतशेषास्त्रयो रथाः ॥५०॥**
**तत्र गुल्माः परित्रस्ताः सूर्ये चास्तमिते सति ।**
**सर्वे विचुक्रुशुः श्रुत्वा पुत्राणां तव संक्षयम् ॥५१॥**

मरने से बचे हुए वे तीनों रथी मुझे भी कृपाचार्य के समलंकृत रथ पर बिठाकर छावनी तक ले आये। सूर्य अस्ताचल को जा चुके थे। वहाँ छावनी के पहरेदार भय से घबराये हुए थे। आपके पुत्रों के विनाश का समाचार सुनकर वे सभी फूट-फूटकर रोने लगे।

**ततो वृद्धा महाराज योषितां रक्षिणो नराः ।**
**राजदारानुपादाय प्रययुर्नगरं प्रति ॥५२॥**

महाराज ! उस समय स्त्रियों की रक्षा में नियुक्त हुए वृद्ध पुरुषों ने राजकुल की महिलाओं को साथ लेकर नगर की ओर प्रस्थान किया।

**आ गोपालाविपालेभ्यो द्रवन्तो नगरं प्रति ।**
**ययुर्मनुष्याः सम्भ्रान्ता भीमसेनभयार्दिताः ॥५३॥**

उधर भीमसेन के भय से पीड़ित हो सभी मनुष्य, गायों और भेड़ों के चरवाहे तक घबराकर नगर की ओर भाग रहे थे।

**तस्मिंस्तथा वर्तमाने विद्रवे भृशदारुणे ।**
**युयुत्सुः शोकसम्मूढः प्राप्तकालमचिन्तयत् ॥५४॥**

जब इस प्रकार अतिभयंकर भगदड़ मची हुई थी, उस समय आपके पुत्र युयुत्सु शोक से मूर्च्छित हो मन-ही-मन समयोचित कर्तव्य का विचार करने लगे—

**जितो दुर्योधनः संख्ये पाण्डवैर्भीमविक्रमैः ।**
**एकादशचमूभर्ता भ्रातरश्चास्य सूदिताः ॥५५॥**

'भयंकर पराक्रमी पाण्डवों ने ग्यारह अक्षौहिणी सेना के स्वामी राजा दुर्योधन को युद्ध में परास्त कर दिया और उसके भाइयों को भी मार डाला।

**विद्रुतानि च सर्वाणि शिबिराणि समन्ततः ।**
**इतस्ततः पलायन्ते हतनाथा हतौजसः ॥५६॥**

'सारे शिबिर के लोग सब ओर भाग गये। स्वामी के मारे जाने से हतोत्साह होकर सभी सेवक इधर-उधर पलायन कर रहे हैं।

**दुर्योधनस्य सचिवा ये केचिदवशेषिताः ।**
**राजदारानुपादाय प्रययुर्नगरं प्रति ॥५७॥**

'दुर्योधन के मन्त्रियों में से जो कोई बच गये हैं, वे राजमहिलाओं को साथ लेकर नगर की ओर जा रहे हैं।

**प्राप्तकालमहं मन्ये प्रवेशं तैः सह प्रभुम् ।**
**युधिष्ठिरमनुज्ञाप्य वासुदेवं तथैव च ॥५८॥**

'मैं राजा युधिष्ठिर और वसुदेवनन्दन श्रीकृष्ण की आज्ञा लेकर उन मन्त्रियों के साथ ही नगर में प्रवेश करूँ, यही मुझे समयोचित कर्तव्य जान पड़ता है।'

**एतमर्थं महाबाहुरुभयोः स न्यवेदयत् ।**
**तस्य प्रीतोऽभवद् राजा नित्यं करुणवेदिता ।**
**परिष्वज्य महाबाहुर्वैश्यापुत्रं व्यसर्जयत् ॥५९॥**

ऐसा सोचकर महाबाहु ययुत्सु ने उन दोनों के सामने अपना विचार प्रकट किया। उसकी बात सुनकर करुणा का अनुभव करनेवाले महाबाहु राजा युधिष्ठिर अति प्रसन्न हुए और उन्होंने वैश्यकुमारी के पुत्र युयुत्सु को हृदय से लगाकर विदा किया।

**ततः स रथमास्थाय द्रुतमश्वानचोदयत् ।**
**संवाहयितवांश्चापि राजदारान् पुरं प्रति ॥६०॥**

विदा होने पर उसने रथ पर बैठकर तुरन्त ही अपने घोड़े बढ़ाये और राजकुल की स्त्रियों को राजधानी में पहुँचा दिया।

**तैश्चैव सहितः क्षिप्रमस्तं गच्छति भास्करे ।**
**प्रविष्टो हास्तिनपुरं बाष्पकण्ठोऽश्रुलोचनः ।।६१।।**

सूर्यास्त होते-होते नेत्रों से अश्रु बहाते हुए उसने उन सबके साथ हस्तिनापुर में प्रवेश किया । उस समय उसका गला भरा हुआ था ।

**अपश्यत महाप्राज्ञं विदुरं साश्रुलोचनम् ।**
**राज्ञः समीपान्निष्क्रान्तं शोकोपहतचेतसम् ।।६२।।**

राजन् ! वहाँ उसने आपके पास से निकलते हुए महाज्ञानी विदुरजी का दर्शन किया, जिनके नेत्रों में आँसू भरे हुए थे और मन शोक में डूबा हुआ था ।

**तमब्रवीत् सत्यधृतिः प्रणतं त्वग्रतः स्थितम् ।**
**दिष्टया कुरुक्षये वृत्ते अस्मिंस्त्वं पुत्र जीवसि ।।६३।।**

सत्यवादी धैर्यव्रती विदुरजी ने प्रणाम करके सामने खड़े हुए युयुत्सु से कहा—"बेटा ! बड़े सौभाग्य की बात है कि कौरवों के इस भीषण संहार में भी तुम जीवित बच गये हो ।

**अन्धस्य नृपतेर्यष्टिर्लुब्धस्यादीर्घदर्शिनः ।**
**त्वमेको व्यसनार्तस्य ध्रियसे पुत्र सर्वथा ।।६४।।**

"पुत्र ! लोभी, अदूरदर्शी और अन्धे राजा के लिए तुम्हीं लाठी के समान हो । सभी पुत्रों के मारे जाने से संकट से पीड़ित अवस्था में एकमात्र तुम्हीं उन्हें सहारा देने के लिए जीवित हो ।"

**एतावदुक्त्वा वचनं विदुरः साश्रुलोचनः ।**
**युयुत्सुं समनुप्राप्य प्रविवेश नृपक्षयम् ।।६५।।**

ऐसा कहकर नेत्रों में आँसू भरे हुए विदुरजी ने युयुत्सु को साथ लेकर राजमहल में प्रवेश किया ।

**वन्द्यमानः स्वकैश्चापि नाभ्यनन्दत् सुदुःखितः ।**
**चिन्तयानः क्षयं तीव्रं भरतानां परस्परम् ।।६६।।**

उनके मन में दुःख का आवेग था, अतः वे स्वजनों द्वारा सत्कृत होने पर भी प्रसन्न नहीं हुए । इस पारस्परिक युद्ध से भरतवंशियों का जो घोर संहार हुआ था, उसी की चिन्ता में वे व्यथित हो गये थे ।

**इति महाभारते शल्यपर्वणि द्वादशोऽध्यायः ।।१२।।**

# त्रयोदशोऽध्यायः

**अश्वत्थामादि का सरोवर पर जाकर दुर्योधन से युद्धविषयक वार्तालाप, व्याधों से पता पाकर युधिष्ठिर का सेनासहित वहाँ पहुँचना और अश्वत्थामा आदि का वहाँ से दूर हटना**

धृतराष्ट्र उवाच

**हतेषु सर्वसैन्येषु पाण्डुपुत्रै रणाजिरे ।**
**अवशिष्टा हि सैन्या मे किमकुर्वत सञ्जय ।।१।।**

**धृतराष्ट्र ने पूछा**—सञ्जय ! जब पाण्डु के पुत्रों ने रणभूमि में समस्त सेनाओं का संहार कर डाला, उस समय मेरी सेना के शेष वीरों ने क्या किया ?

**कृतवर्मा कृपश्चैव द्रौणपुत्रश्च वीर्यवान् ।**
**दुर्योधनश्च मन्दात्मा राजा किमकरोत्तदा ।।२।।**

कृतवर्मा, कृपाचार्य, पराक्रमी द्रोणपुत्र अश्वत्थामा तथा मन्दबुद्धि राजा दुर्योधन ने उस समय क्या किया ?

सञ्जय उवाच

**सम्प्राद्रवत्सु दारेषु क्षत्रियाणां महात्मनाम् ।**
**विद्रुते शिबिरे शून्ये भृशोद्विग्नास्त्रयो रथाः ।।३।।**

**सञ्जय कहते हैं**—हे राजन् ! जब महामनस्वी क्षत्रिय राजाओं की पत्नियाँ भाग चलीं और सब लोगों के पलायन करने से सारा शिबिर सूना हो गया, उस समय पूर्वोक्त तीनों रथी अत्यन्त उद्विग्न हो गये ।

**विद्रुतं शिबिरं दृष्ट्वा सायाह्ने राजगृद्धिनः ।**
**स्थानं नारोचयंस्तत्र ततस्ते ह्रदमभ्ययुः ।।४।।**

सायंकाल में अपने सारे शिबिर के लोगों को भागा हुआ देखकर राजा दुर्योधन को चाहनेवाले उन तीनों महारथियों को वहाँ ठहरना अच्छा न लगा, अतः वे उसी सरोवर के तट पर गये ।

**युधिष्ठिरोऽपि धर्मात्मा भ्रातृभिः सहितो रणे ।**
**हृष्टः पर्यचरद् राजन् दुर्योधनवधेप्सया ।।५।।**

नृपश्रेष्ठ ! इधर धर्मात्मा युधिष्ठिर भी युद्धभूमि में दुर्योधन के वध की इच्छा से बड़े हर्ष के साथ भाइयोंसहित विचर रहे थे ।

**मार्गमाणास्तु संक्रुद्धास्तव पुत्रं जयैषिणः ।**
**यत्नतोऽन्वेषमाणास्ते नैवापश्यञ्जनाधिपम् ॥६॥**

विजय के अभिलाषी पाण्डव अत्यन्त कुपित होकर आपके पुत्र का पता लगाने लगे, परन्तु यत्नपूर्वक खोज करने पर भी उन्हें राजा दुर्योधन कहीं दिखाई नहीं दिया ।

**यदा तु पाण्डवाः सर्वे सुपरिश्रान्तवाहनाः ।**
**ततः स्वशिबिरं प्राप्य व्यतिष्ठन्त ससैनिकाः ॥७॥**

दुर्योधन की खोज करते-करते जब पाण्डवों के वाहन बहुत थक गये, तब सभी पाण्डव सैनिकों-सहित अपने शिबिर में आकर ठहर गये ।

**ततः कृपश्च द्रौणिश्च कृतवर्मा च सात्वतः ।**
**संनिविष्टेषु पार्थेषु प्रयातास्तं ह्रदं शनैः ॥८॥**

उधर जब कुन्ती के सभी पुत्र थककर शिबिर में विश्राम करने लगे, तब कृपाचार्य, अश्वत्थामा और सात्वतवंशी कृतवर्मा धीरे-धीरे उस सरोवर के तट पर जा पहुँचे ।

**ते तं ह्रदं समासाद्य यत्र शेते जनाधिपः ।**
**अभ्यभाषन्त दुर्धर्षं राजानं सुप्तमम्भसि ॥९॥**
**राजन्नुत्तिष्ठ युद्धस्व सहास्माभिर्युधिष्ठिरम् ।**
**जित्वा वा पृथिवीं भुङ्क्ष्व हतो वा स्वर्गमाप्नुहि ॥१०॥**

जिसमें राजा दुर्योधन सो रहा था, उस सरोवर के समीप पहुँचकर, वे जल में सोये हुए उस दुर्धर्ष नरेश से इस प्रकार बोले—"राजन् ! उठो तथा हमारे साथ चलकर युधिष्ठिर से युद्ध करो । युद्ध में विजयी होकर पृथिवी का राज्य भोगो अथवा मारे जाकर स्वर्गलोक प्राप्त करो ।"

दुर्योधन उवाच

**दिष्ट्या पश्यामि वो मुक्तानीदृशात्पुरुषक्षयात् ।**
**पाण्डुकौरवसम्मर्दाज्जीवमानान् नरर्षभान् ॥११॥**

**दुर्योधन बोला**—महानुभावो ! मैं ऐसे जन-संहारकारी पाण्डव-कौरव-संग्राम से आप सभी नरश्रेष्ठ वीरों को जीवित बचा हुआ देख रहा हूँ, यह बड़े सौभाग्य की बात है ।

**भवन्तश्च परिश्रान्ता वयं च भृशविक्षताः ।**
**उदीर्णं च बलं तेषां तेन युद्धं न रोचये ॥१२॥**

आप लोग अत्यन्त थके हुए हैं और हम भी बहुत घायल हो चुके हैं । उधर पाण्डवों का बल बढ़ा हुआ है, अतः इस समय युद्ध करना मुझे अच्छा नहीं लग रहा ।

**न त्वेतदद्भुतं वीरा यद् वो महदिदं मनः ।**
**अस्मासु च परा भक्तिर्न तु कालः पराक्रमे ॥१३॥**

वीरो ! आपके मन में युद्ध के लिए जो उत्साह बना हुआ है, यह कोई आश्चर्यजनक बात नहीं है । आप लोगों का मुझपर महान् प्रेम भी है, परन्तु यह पराक्रम प्रकट करने का समय नहीं है ।

**विश्रम्यैकां निशामद्य भवद्भिः सहितो रणे ।**
**प्रतियोत्स्याम्यहं शत्रूञ्श्वो न मेऽस्त्यत्र संशयः ॥१४॥**

आज रात्रिभर विश्राम करके प्रातः युद्धभूमि में आप लोगों के साथ रहकर मैं शत्रुओं के साथ युद्ध करूँगा, इसमें संशय नहीं है ।

सञ्जय उवाच

**एवमुक्तोऽब्रवीद् द्रौणी राजानं युद्धदुर्मदम् ।**
**उत्तिष्ठ राजन् भद्रं ते विजेष्यामो वयं परान् ॥१५॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! दुर्योधन के कहने पर द्रोणपुत्र ने उस रणदुर्मद राजा से कहा—"महाराज ! उठो ! आपका कल्याण हो । हम शत्रुओं पर विजय प्राप्त करेंगे ।

**इष्टापूर्तेन दानेन सत्येन च जपेन च ।**
**शपे राजन् यथा ह्यद्य निहनिष्यामि सोमकान् ॥१६॥**

"राजन् ! मैं अपने इष्टापूर्त, कर्म, दान, सत्य और जप की शपथ खाकर कहता हूँ कि सोमकों का संहार कर डालूँगा ।

**मा स्म यज्ञकृतां प्रीतिमाप्नुयां सज्जनोचिताम् ।**
**यदीमां रजनीं व्युष्टां न हि हन्मि परान् रणे ॥१७॥**

"यदि यह रात्रि व्यतीत होते ही प्रातःकाल युद्ध-भूमि में शत्रुओं को न मार डालूँ तो मुझे सज्जन पुरुषों के योग्य और यज्ञकर्ताओं को प्राप्त होनेवाली प्रसन्नता प्राप्त न हो ।

**नाहत्वा सर्वपाञ्चालान् विमोक्ष्ये कवचं विभो ।**
**इति सत्यं ब्रवीम्येतत्तन्मे शृणु जनाधिप ॥१८॥**

"प्रभो ! जनेश्वर ! मैं समस्त पाञ्चालों का संहार किये बिना अपना कवच नहीं उतारूँगा, यह

तुमसे सच्ची बात कहता हूँ। मेरे इस कथन को ध्यान से सुनो।"

**तेषु सम्भाषमाणेषु व्याधास्तं देशमाययुः।**
**मांसभारपरिश्रान्ताः पानीयार्थं यदृच्छया ॥१९॥**

वे इस प्रकार बात कर ही रहे थे कि मांस के भार से थके हुए बहुत-से व्याध उस स्थान पर पानी पीने के लिए अकस्मात् आ पहुँचे।

**तेषां श्रुत्वा च संवादं राज्ञश्च सलिले सतः।**
**अभ्यजानन् नृप व्याधाः सलिलस्थं सुयोधनम् ॥२०॥**

जल में छिपे नरेश के साथ उन तीनों का संवाद सुनकर व्याध यह समझ गये कि "दुर्योधन इसी सरोवर के जल में छिपा हुआ है।"

**ते पूर्वं पाण्डुपुत्रेण पृष्टा ह्यासन् सुतं तव।**
**यदृच्छोपगतास्तत्र राजानं परिमार्गता ॥२१॥**

पहले राजा दुर्योधन की खोज करते हुए पाण्डु-पुत्र युधिष्ठिर ने दैववश अपने पास पहुँचे हुए उन व्याधों से आपके पुत्र का पता पूछा था।

**ततस्ते पाण्डुपुत्रस्य स्मृत्वा तद् भाषितं तदा।**
**अन्योन्यमब्रुवन् राजन् मृगव्याधाः शनैरिव ॥२२॥**

राजन्! उस समय पाण्डुकुमार की कही हुई बात स्मरण करके वे व्याध आपस में धीरे-धीरे बोले—

**दुर्योधनं ख्यापयामो धनं दास्यति पाण्डवः।**
**सुव्यक्तमिह नः ख्यातो ह्रदे दुर्योधनो नृपः ॥२३॥**

"यदि हम दुर्योधन का पता बता दें तो पाण्डु-कुमार युधिष्ठिर हमें धन देंगे। हमें तो यहाँ यह स्पष्टरूप से ज्ञात हो गया कि राजा दुर्योधन इसी सरोवर में छिपा हुआ है।

**तस्माद् गच्छामहे सर्वे यत्र राजा युधिष्ठिरः।**
**आख्यातुं सलिले सुप्तं दुर्योधनममर्षणम् ॥२४॥**

"अतः जल में सोये हुए अमर्षशील दुर्योधन का पता बताने के लिए हम सब लोग उस स्थान पर चलें, जहाँ राजा युधिष्ठिर विद्यमान हैं।

**धृतराष्ट्रात्मजं तस्मै भीमसेनाय धीमते।**
**शयानं सलिले सर्वे कथयामो धनुर्भृते ॥२५॥**

"बुद्धिमान् धनुर्धर भीमसेन को हम सब यह बता दें कि धृतराष्ट्र का पुत्र दुर्योधन जल में सो रहा है।

**स नो दास्यति सुप्रीतो धनानि बहुलान्युत।**
**किं नो मांसेन शुष्केण परिक्लिष्टेन शोषिणा ॥२६॥**

"इससे अत्यन्त प्रसन्न होकर वे हमें बहुत-सा धन देंगे। फिर हमें शरीर का रक्त सुखा देनेवाले इस सूखे मांस को ढोकर व्यर्थ कष्ट उठाने की क्या आवश्यकता है!"

**एवमुक्त्वा तु ते व्याधाः सम्प्रहृष्टा धनार्थिनः।**
**आजग्मुः शिबिरं क्षिप्रं दृष्ट्वा दुर्योधनं नृपम् ॥२७॥**
**वार्यमाणाः प्रविष्टाश्च भीमसेनस्य पश्यतः।**
**तस्मै तत् सर्वमाचख्युर्यद् वृत्तं यच्च वै श्रुतम् ॥२८॥**

इस प्रकार परस्पर वार्तालाप करके धन की अभिलाषा रखनेवाले वे व्याध राजा दुर्योधन को देखकर अत्यन्त प्रसन्न होते हुए शीघ्र ही पाण्डवों के शिबिर में आ पहुँचे। द्वारपालों के रोकने पर भी वे भीमसेन के देखते-देखते अन्दर घुस गये और सरोवर के तट पर जो कुछ हुआ था और जो कुछ सुनने में आया था, वह सब कह सुनाया।

**ततो वृकोदरो राजन् दत्त्वा तेषां धनं बहु।**
**धर्मराजाय तत्सर्वमाचचक्षे परन्तपः ॥२९॥**

राजन्! तत्पश्चात् शत्रुओं को सन्ताप देनेवाले भीम ने उन व्याधों को बहुत-सा धन देकर [उन्हें विदा किया और फिर] धर्मराज से सारा समाचार कह सुनाया।

**असौ दुर्योधनो राजन् विज्ञातो मम लुब्धकैः।**
**संस्तभ्य सलिलं शेते यस्यार्थे परितप्यसे ॥३०॥**

वे बोले—"धर्मराज! मेरे व्याधों ने राजा दुर्योधन का पता लगा लिया है। आप जिसके लिए सन्तप्त हैं, वह माया=कौशल से पानी को बाँधकर सरोवर में सो रहा है।"

**तद् वचो भीमसेनस्य प्रियं श्रुत्वा विशाम्पते।**
**अजातशत्रुः कौन्तेयो हृष्टोऽभूत् सह सोदरैः ॥३१॥**

प्रजेश्वर! भीमसेन का वह प्रिय वचन सुनकर अजातशत्रु कुन्तीकुमार युधिष्ठिर अपने भाइयों के साथ बड़े प्रसन्न हुए।

**तं च श्रुत्वा महेष्वासं प्रविष्टं सलिलह्रदे।**
**क्षिप्रमेव ततोऽगच्छन् पुरस्कृत्य जनार्दनम् ॥३२॥**

महाधनुर्धर दुर्योधन को पानी से भरे हुए सरोवर

में घुसा सुनकर राजा युधिष्ठिर श्रीकृष्ण को आगे करके शीघ्र ही वहाँ से चल दिये।

**सिंहनादांस्ततश्चक्रुः क्ष्वेडांश्च भरतर्षभ।**
**त्वरिताः क्षत्रिया राजञ्जग्मुर्द्वैपायनं ह्रदम् ॥३३॥**

भरतभूषण नरेश! वे सभी क्षत्रिय सिंहनाद एवं गर्जना करने लगे और तुरन्त ही द्वैपायन नामक सरोवर के पास जा पहुँचे।

**महता शंखनादेन रथनेमिस्वनेन च।**
**ऊर्ध्वं धुन्वन् महारेणुं कम्पयंश्चापि मेदिनीम् ॥३४॥**
**यौधिष्ठिरस्य सैन्यस्य श्रुत्वा शब्दं महारथाः।**
**कृतवर्मा कृपो द्रौणी राजानमिदमब्रुवन् ॥३५॥**

वे महान् शंखनाद और रथ के पहियों की घर्घराहट से पृथिवी को कँपाते और धूल का महान् ढेर ऊपर उड़ाते हुए वहाँ आये थे। युधिष्ठिर की सेना का कोलाहल सुनकर कृतवर्मा, कृपाचार्य और अश्वत्थामा तीनों महारथी राजा दुर्योधन से इस प्रकार बोले—

**इमे ह्यायान्ति संहृष्टाः पाण्डवा जितकाशिनः।**
**अपयास्यामहे तावदनुजानातु नो भवान् ॥३६॥**

"ये विजय से उल्लसित होनेवाले पाण्डव अत्यन्त हर्ष में भरकर इधर ही आ रहे हैं, अतः हम लोग यहाँ से हट जाएँगे। इसके लिए आप हमें आज्ञा प्रदान करें।"

**दुर्योधनस्तु तत् श्रुत्वा तेषां तत्र तरस्विनाम्।**
**तथेत्युक्त्वा ह्रदं तं वै माययास्तम्भयत् प्रभो ॥३७॥**

प्रभो! उन वेगशाली वीरों की वह बात सुनकर दुर्योधन ने 'तथास्तु' कहकर उस सरोवर के जल को पुनः माया द्वारा स्तम्भित कर दिया।

**ते त्वनुज्ञाप्य राजानं भृशं शोकपरायणाः।**
**जग्मुर्दूरे महाराज कृपप्रभृतयो रथाः ॥३८॥**

महाराज! राजा की आज्ञा लेकर अत्यन्त शोक में डूबे हुए कृपाचार्य आदि महारथी वहाँ से दूर चले गये।

**ते गत्वा दूरमध्वानं न्यग्रोधं प्रेक्ष्य मारिष।**
**न्यविशन्त भृशं श्रान्ताश्चिन्तयन्तो नृपं प्रति ॥३९॥**

आर्यनरेश! दूर के मार्ग पर जाकर उन्हें एक बरगद का वृक्ष दिखाई दिया। वे अत्यन्त थके होने के कारण राजा दुर्योधन के विषय में चिन्ता करते हुए उसी के नीचे बैठ गये।

**विष्टभ्य सलिलं सुप्तो धार्तराष्ट्रो महाबलः।**
**पाण्डवाश्चापि सम्प्राप्तास्तं देशं युद्धमीप्सवः ॥४०॥**

इधर महाबली धृतराष्ट्रपुत्र दुर्योधन पानी बाँधकर सो गया। इतने में ही युद्ध की अभिलाषा रखनेवाले पाण्डव भी वहाँ आ पहुँचे।

**इति महाभारते शल्यपर्वणि त्रयोदशोऽध्यायः ॥१३॥**

## चतुर्दशोऽध्यायः

### पाण्डवों का द्वैपायन सरोवर पर पहुँचना, वहाँ युधिष्ठिर और कृष्ण का वार्तालाप तथा सरोवर में छिपे दुर्योधन के साथ युधिष्ठिर का संवाद

सञ्जय उवाच

**आसाद्य च कुरुश्रेष्ठ तदा द्वैपायनं ह्रदम्।**
**वासुदेवमिदं वाक्यमब्रवीत् कुरुनन्दनः ॥१॥**
**पश्येमां धार्तराष्ट्रेण मायामप्सु प्रयोजिताम्।**
**विष्टभ्य सलिलं शेते नास्य मानुषतो भयम् ॥२॥**

**सञ्जय कहते हैं**—कुरुश्रेष्ठ! द्वैपायन-कुण्ड पर पहुँचकर कुरुनन्दन युधिष्ठिर ने वासुदेव श्रीकृष्ण से इस प्रकार कहा—"प्रभो! देखिए तो सही, दुर्योधन ने जल के भीतर इस माया का कैसा प्रयोग किया है? यह पानी को बाँधकर सो रहा है। इसे यहाँ मनुष्य से किसी प्रकार का भय नहीं है।

**निकृत्या निकृतिप्रज्ञो न मे जीवन् विमोक्ष्यते।**
**यद्यस्य समरे साह्यं कुरुते वज्रभृत् स्वयम् ॥३॥**

"यद्यपि यह छल-कपट की विद्या में बहुत प्रवीण है, तथापि कपट करके यह मेरे हाथ से छूट नहीं सकता, चाहे रणभूमि में साक्षात् वज्रधारी इन्द्र भी इसकी सहायता करें।"

वासुदेव उवाच

**मायाविन इमां मायां मायया जहि भारत।**
**मायावी मायया वध्यः सत्यमेतद् युधिष्ठिर ॥४॥**

**श्रीकृष्ण बोले**—हे भारत ! मायावी दुर्योधन की इस माया को आप माया द्वारा ही नष्ट कर डालिए। युधिष्ठिर ! मायावी का वध माया द्वारा ही करना चाहिए, यह सच्ची नीति है।

**क्रियाभ्युपायैर्बहुभिर्मायामप्सु प्रयोज्य च।**
**जहि त्वं भरतश्रेष्ठ मायात्मानं सुयोधनम् ॥५॥**

भरतभूषण ! आप बहुत-से रचनात्मक उपायों द्वारा जल में माया का प्रयोग करके मायावी दुर्योधन का वध कर डालिए।

**क्रियाभ्युपायैरिन्द्रेण निहता दैत्यदानवाः।**
**क्रिया बलवती राजन्नान्यत्किञ्चिद् युधिष्ठिर ॥६॥**

राजन् ! रचनात्मक उपायों से ही इन्द्र ने बहुत-से दैत्य और दानवों का संहार किया था। युधिष्ठिर ! कार्यकौशल ही बलवान् है, दूसरी कोई वस्तु नहीं।

सञ्जय उवाच

**इत्युक्तो वासुदेवेन तव पुत्रं महाबलम्।**
**अभ्यभाषत कौन्तेयः प्रहसन्निव भारत ॥७॥**

**सञ्जय कहते हैं**—भरतभूषण ! श्रीकृष्ण के ऐसा कहने पर कुन्तीकुमार युधिष्ठिर ने [जल में स्थित] आपके महाबली पुत्र से हँसते हुए-से कहा—

**सुयोधन किमर्थोऽयमारम्भोऽप्सु कृतस्त्वया।**
**सर्वं क्षत्रं घातयित्वा स्वकुलं च विशाम्पते ॥८॥**
**जलाशयं प्रविष्टोऽद्य वाञ्छञ्जीवितमात्मनः।**
**उत्तिष्ठ राजन् युध्यस्व सहास्माभिः सुयोधन ॥९॥**

"प्रजेश्वर सुयोधन ! तुमने पानी में यह अनुष्ठान किसलिए आरम्भ किया है ? सम्पूर्ण क्षत्रियों तथा अपने कुल का विनाश कराकर अपनी जान बचाने की इच्छा से तुम जलाशय में घुसे बैठे हो ? राजा सुयोधन ! उठो और हम लोगों के साथ युद्ध करो।

**स ते दर्पो नरश्रेष्ठ स च मानः क्व ते गतः।**
**यस्त्वं संस्तभ्य सलिलं भीतो राजन्व्यवस्थितः ॥१०॥**

"राजन् ! नरश्रेष्ठ ! तुम्हारा पहले का वह दर्प और अभिमान कहाँ गया जो डर के मारे जल का स्तम्भन करके यहाँ छिपे हुए हो ?

**सर्वे त्वां शूर इत्येवं जना जल्पन्ति संसदि।**
**व्यर्थं तद् भवतो मन्ये शौर्यं सलिलशायिनः ॥११॥**

"सभा में सब लोग तुम्हें शूरवीर कहते हैं। जब तुम भयभीत होकर पानी में सो रहे हो, तब मैं तुम्हारे उस तथाकथित शौर्य को व्यर्थ समझता हूँ।

**उत्तिष्ठ राजन्युध्यस्व क्षत्रियोऽसि कुलोद्भवः।**
**कौरवेयो विशेषेण कुलं जन्म च संस्मर ॥१२॥**

"राजन् ! उठो, युद्ध करो क्योंकि तुम कुलीन क्षत्रिय हो, विशेषतः कुरुकुल की सन्तान हो, अतः अपने कुल और जन्म की याद तो करो।

**अयुद्धमव्यवस्थानं नैष धर्मः सनातनः।**
**अनार्यजुष्टमस्वर्ग्यं रणे राजन् पलायनम् ॥१३॥**

"प्रजेश्वर ! युद्ध न करना अथवा युद्ध में स्थिर न रहकर वहाँ से पीठ दिखाकर भागना—यह सनातनधर्म नहीं है। नीच पुरुष ही ऐसे कुमार्ग का आश्रय लेते हैं। इससे स्वर्ग की प्राप्ति नहीं होती।

**कथं पारमगत्वा हि युद्धे त्वं वै जिजीविषुः।**
**इमान्निपतितान्दृष्ट्वा पुत्रान्भ्रातॄन्पितॄँस्तथा॥**
**सम्बन्धिनो वयस्यांश्च मातुलान्बान्धवांस्तथा।**
**घातयित्वा कथं तात ह्रदे तिष्ठसि साम्प्रतम् ॥१५॥**

"युद्ध से पार पाये बिना ही तुम्हें जीवित रहने की इच्छा कैसे हो गई ? तात ! युद्धभूमि में गिरे हुए इन पुत्रों, भाइयों तथा चाचा-ताऊ आदि सम्बन्धियों को मरते देख तथा सम्बन्धियों, मित्रों, मामाओं एवं बन्धु-बान्धवों का वध कराकर इस समय सरोवर में क्यों छिपे बैठे हो ?

**शूरमानी न शूरस्त्वं मृषा वदसि भारत।**
**शूरोऽहमिति दुर्बुद्धे सर्वलोकस्य शृण्वतः ॥१६॥**

"तुम अपने को शूरवीर तो मानते हो परन्तु शूर हो नहीं। भरतवंश के खोटी बुद्धिवाले नरेश ! तुम सब लोगों के सुनते हुए व्यर्थ ही कहा करते हो कि मैं शूरवीर हूँ।

**न हि शूराः पलायन्ते शत्रून् दृष्ट्वा कथञ्चन।**
**ब्रूहि वा त्वं यया वृत्त्या शूर त्यजसि संगरम् ॥१७॥**

"जो वस्तुतः शूरवीर हैं, वे शत्रुओं को देखकर किसी भी प्रकार भागते नहीं हैं। अपने को शूर

कहनेवाले सुयोधन ! बताओ तो सही, तुम किस वृत्ति का आश्रय लेकर युद्ध छोड़ रहे हो ?

**स त्वमुत्तिष्ठ युध्यस्व विनीय भयमात्मनः ।**
**कथं हि त्वद्विधो मोहाद् रोचयेत पलायनम् ॥१८॥**

"सुयोधन ! तुम अपना भय दूर करके उठो और युद्ध करो। तुम्हारे-जैसा वीरपुरुष मोहवश पीठ दिखाकर भागना कैसे पसन्द करेगा ?

**क्व ते तत् पौरुषं यातं क्व च मानः सुयोधन ।**
**क्व च विक्रान्तता याता क्व च विस्फूर्जितं महत् ॥१६॥**
**क्व ते कृतास्त्रता याता किञ्च शेषे जलाशये ।**
**स त्वमुत्तिष्ठ युध्यस्व क्षत्रधर्मेण भारत ॥२०॥**

"सुयोधन ! तुम्हारा वह पौरुष कहाँ चला गया ? कहाँ गया तुम्हारा वह अभिमान ? कहाँ गया तुम्हारा पराक्रम ? कहाँ गई महान् गर्जना-तर्जना ? कहाँ गया तुम्हारा अस्त्रविद्या का ज्ञान ? इस समय इस सरोवर में तुम्हें नींद कैसे आ रही है ? हे भारत ! उठो और क्षत्रियधर्म के अनुसार युद्ध करो ।

**अस्माँस्तु वा पराजित्य प्रशाधि पृथिवीमिमाम् ।**
**अथवा निहतोऽस्माभिर्भूमौ स्वप्स्यसि भारत ॥२१॥**

"भरतभूषण ! हम सब लोगों को परास्त करके तुम इस पृथिवी का शासन करो अथवा हमारे हाथों मारे जाकर सदा के लिए युद्धभूमि में सो जाओ ।"

सञ्जय उवाच

**एवमुक्तो महाराज धर्मपुत्रेण धीमता ।**
**सलिलस्थस्तव सुत इदं वचनमब्रवीत् ॥२२॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज ! बुद्धिमान् धर्मपुत्र युधिष्ठिर के ऐसा कहने पर जल के भीतर स्थित हुए आपके पुत्र ने यह बात कही—

दुर्योधन उवाच

**नैतच्चित्रं महाराज यद्भीः प्राणिनमाविशेत् ।**
**न च प्राणभयाद् भीतो व्यपयातोऽस्मि भारत ॥२३॥**

**दुर्योधन बोला**—महाराज ! किसी भी प्राणी के मन में भय उत्पन्न हो जाए, यह आश्चर्य की बात नहीं है, परन्तु हे भारत ! मैं प्राणों के भय से भागकर यहाँ नहीं आया हूँ ।

**अरथश्चानिषङ्गी च निहतः पार्ष्णिसारथिः ।**
**एकश्चाप्यगणः संख्ये प्रत्याश्वासमरोचयम् ॥२४॥**

मेरे पास न तो रथ है और न तरकस। मेरे पार्श्व रक्षक भी मारे जा चुके हैं। मेरी सेना नष्ट हो गई और रणभूमि में मैं अकेला रह गया था, इस दशा में मुझे कुछ देर तक विश्राम करने की इच्छा हुई ।

**न प्राणहेतोर्न भयान्न विषादाद् विशाम्पते ।**
**इदमम्भः प्रविष्टोऽस्मि श्रमात्त्विदमनुष्ठितम् ॥२५॥**

नरेश्वर ! मैं न तो प्राणों की रक्षा के लिए, न किसी भय से और न विषाद के कारण ही इस जल में आ घुसा हूँ । केवल थक जाने के कारण मैंने ऐसा किया है ।

**त्वं चाश्वसिहि कौन्तेय ये चाप्यनुगतास्तव ।**
**अहमुत्थाय वः सर्वान् प्रतियोत्स्यामि संयुगे ॥२६॥**

कुन्तीकुमार ! तुम भी कुछ देर विश्राम कर लो। तुम्हारे अनुगामी सेवक भी थोड़ी देर आराम कर लें । फिर मैं उठकर युद्धभूमि में तुम सब लोगों के साथ युद्ध करूँगा ।

युधिष्ठिर उवाच

**आश्वस्ता एव सर्वे स्म चिरं त्वां मृगयामहे ।**
**तदिदानीं समुत्तिष्ठ युध्यस्वेह सुयोधन ॥२७॥**

**युधिष्ठिर बोले**—सुयोधन ! हम सब लोग तो विश्राम कर ही चुके हैं और बहुत देर से तुम्हें खोज रहे हैं, अतः अब तुम उठो और यहीं युद्ध करो ।

**हत्वा वा समरे पार्थान् स्फीतं राज्यमवाप्नुहि ।**
**निहतो वा रणेऽस्माभिर्वीरलोकमवाप्स्यसि ॥२८॥**

संग्राम में समस्त पाण्डवों को मारकर समृद्धिशाली राज्य प्राप्त करो अथवा रणभूमि में हमारे हाथों मारे जाकर वीरों को प्राप्त होने योग्य पुण्यलोकों में चले जाओ ।

दुर्योधन उवाच

**यदर्थं राज्यमिच्छामि कुरूणां कुरुनन्दन ।**
**त इमे निहताः सर्वे भ्रातरो मे जनेश्वर ॥२९॥**
**क्षीणरत्नां च पृथिवीं हतक्षत्रियपुङ्गवाम् ।**
**नाभ्युत्सहाम्यहं भोक्तुं विधवामिव योषितम् ॥३०॥**

**दुर्योधन बोला**—कुरुनन्दन जनेश्वर ! मैं जिनके लिए कौरवों का राज्य चाहता था, वे मेरे सभी भाई मारे जा चुके हैं। भूमण्डल के सभी क्षत्रिय शिरो-

मणियों का संहार हो गया है। यहाँ के सभी रत्न नष्ट हो गये हैं, अतः विधवा स्त्री के समान श्रीहीन हुई इस पृथिवी का उपभोग करने के लिए मेरे मन में तनिक भी उत्साह नहीं है।

**अद्यापि त्वहमाशंसे त्वां विजेतुं युधिष्ठिर।**
**भङ्क्त्वा पाञ्चालपाण्डूनामुत्साहं भरतर्षभ ।।३१।।**

भरतभूषण युधिष्ठिर ! मैं आज भी पाञ्चालों और पाण्डवों का उत्साह भङ्ग करके तुम्हें जीतने का हौसला रखता हूँ।

**न त्विदानीमहं मन्ये कार्यं युद्धेन कर्हिचित्।**
**द्रोणे कर्णे च संशान्ते निहते च पितामहे ।।३२।।**

परन्तु जब द्रोण और कर्ण शान्त हो गये और भीष्म पितामह भी मार डाले गये तो अब मेरी सम्मति में इस युद्ध की कुछ भी आवश्यकता नहीं रही।

**अस्त्विदानीमियं राजन् केवला पृथिवी तव।**
**असहायो हि को राजा राज्यमिच्छेत्प्रशासितुम् ।।३३।।**

राजन् ! अब यह सूनी पृथिवी तुम्हारी ही रहे। सहायकों से रहित होकर कौन राजा राज्य-शासन की इच्छा करेगा ?

**सुहृदस्तादृशान् हित्वा पुत्रान् भ्रातॄन् पितॄनपि।**
**भवद्भिश्च हृते राज्ये को नु जीवेत मादृशः ।।३४।।**

अपने हितैषी सुहृदों, पुत्रों, भाइयों और पिताओं को छोड़कर तथा तुम लोगों के द्वारा राज्य का अपहरण हो जाने पर मेरे-जैसा कौन पुरुष जीवित रहेगा ?

**अहं वनं गमिष्यामि ह्यजिनैः प्रतिवासितः।**
**रतिर्हि नास्ति मे राज्ये हतपक्षस्य भारत ।।३५।।**

भरतभूषण ! मैं मृगचर्म धारण करके वन में चला जाऊँगा। अपने पक्ष के लोगों के मारे जाने से अब इस राज्य के प्रति मेरा कोई लगाव नहीं है।

**हतबान्धवभूयिष्ठा हताश्वा हतकुञ्जरा।**
**एषा ते पृथिवी राजन् भुङ्क्ष्वैनां विगतज्वरः ।।३६।।**

राजन् ! यह पृथिवी, जहाँ मेरे अधिक-से-अधिक भाई-बन्धु, घोड़े और हाथी मारे गये हैं, अब तुम्हारे ही अधिकार में रहे। तुम निश्चिन्त होकर इसका उपभोग करो।

युधिष्ठिर उवाच

**आर्तप्रलापान्मा तात सलिलस्थः प्रभाषिथाः।**
**नैतन्मनसि मे राजन् वाशितं शकुनेरिव ।।३७।।**

**युधिष्ठिर ने कहा**—प्रजेश्वर ! तुम जल में स्थित होकर दुःखी मनुष्यों के समान प्रलाप मत करो। तात ! चिड़ियों के चहचहाने के समान तुम्हारी यह बात मेरे मन में कोई अर्थ नहीं रखती।

**यदि वापि समर्थः स्यास्त्वं दानाय सुयोधन।**
**नाहमिच्छेयमवनिं त्वया दत्तां प्रशासितुम् ।।३८।।**

सुयोधन ! यदि तुम इस पृथिवी को देने में समर्थ होते, तो भी मैं तुम्हारी दी हुई इस पृथिवी पर शासन करने की इच्छा नहीं रखता।

**अधर्मेण न गृह्णीयां त्वया दत्तां महीमिमाम्।**
**न हि धर्मः स्मृतो राजन् क्षत्रियस्य प्रतिग्रहः ।।३९।।**

राजन् ! तुम्हारी दी हुई इस पृथिवी को मैं अधर्मपूर्वक नहीं ले सकता, क्षत्रिय के लिए दान लेना धर्म नहीं बताया गया है।

**त्वया दत्तां न चेच्छेयं पृथिवीमखिलामहम्।**
**त्वां तु युद्धे विनिर्जित्य भोक्तास्मि वसुधामिमाम् ।।४०**

तुम्हारे देने पर इस सम्पूर्ण पृथिवी को भी मैं लेने की इच्छा नहीं रखता। तुम्हें युद्ध में परास्त करके ही मैं इस वसुधा का उपभोग करूँगा।

**अनीश्वरश्च पृथिवीं कथं त्वं दातुमिच्छसि।**
**त्वयेयं पृथिवी राजन् किन्न दत्ता तदैव हि ।।४१।।**
**धर्मतो याचमानानां प्रशमार्थं कुलस्य नः।**
**सूच्यग्रं नात्यजः पूर्वं स कथं त्यजसि क्षितिम् ।।४२।।**

अब तो तुम स्वयं ही इस पृथिवी के स्वामी नहीं रहे, फिर इसका दान कैसे करना चाहते हो ? राजन् ! जब हम लोग कुल में शान्ति बनाये रखने के लिए पहले धर्म के अनुसार अपना ही राज्य माँग रहे थे, उसी समय तुमने हमें यह पृथिवी क्यों नहीं दे दी ? पहले तो तुम सूई की नोक के बराबर भी भूमि नहीं दे रहे थे, अब सम्पूर्ण पृथिवी को कैसे त्याग रहे हो ?

**त्वं तु केवलमौर्ख्येण विमूढो नावबुद्ध्यसे।**
**पृथिवीं दातुकामोऽपि जीवितेन विमोक्ष्यसे ।।४३।।**

तुम तो केवल मूर्खतावश विवेक खो बैठे हो,

अतः यह नहीं समझते कि भूमि देने की इच्छा करने-वाले तुम्हें अपने जीवन से हाथ धोना पड़ेगा ।

**आवयोर्जीवितो राजन्मयि च त्वयि च ध्रुवम् ।**
**संशयः सर्वभूतानां विजये नौ भविष्यति ॥४४॥**

राजन् ! मेरे और तुम्हारे दोनों के जीते-जी हमारी विजय के विषय में समस्त प्राणियों को सन्देह बना रहेगा ।

**जीवितं तव दुष्प्रज्ञ मयि सम्प्रति वर्तते ।**
**जीवयेयमहं कामं न तु त्वं जीवितुं क्षमः ॥४५॥**

दुर्मते ! इस समय तुम्हारा जीवन मेरे हाथ में है । मैं इच्छानुसार तुम्हें जीवनदान दे सकता हूँ, परन्तु तुम स्वेच्छापूर्वक जीवित रहने में समर्थ नहीं हो ।

**दहने हि कृतो यत्नस्त्वयास्मासु विशेषतः ।**
**आशीविषैर्विषैश्चापि जले चापि प्रवेशनैः ॥४६॥**
**त्वया विनिकृता राजन् राज्यस्य हरणेन च ।**
**अप्रियाणां च वचनैर्द्रौपद्याः कर्षणेन च ॥४७॥**
**एतस्मात् कारणात् पाप जीवितं ते न विद्यते ।**
**उत्तिष्ठोत्तिष्ठ युध्यस्व युद्धे श्रेयो भविष्यति ॥४८॥**

तुमने हम लोगों को जला डालने के लिए विशेष यत्न किया था । भीम को विषधर सर्पों से डसवाया, विष खिलाकर उन्हें जल में फेंका, हमारा राज्य छीनकर हमें अपने कपटजाल का शिकार बनाया, द्रौपदी को कटु-वचन सुनाये और उसके केश खींचे । पापी ! इन सब कारणों से तुम्हारा जीवन नष्ट-सा हो चुका है । उठो-उठो, अब तुम युद्ध करो, इसी से तुम्हारा कल्याण होगा ।

**इति महाभारते शल्यपर्वणि चतुर्दशोऽध्यायः ॥१४॥**

# पञ्चदशोऽध्यायः

## दुर्योधन का किसी एक पाण्डव के साथ गदा-युद्ध के लिए तैयार होना

सञ्जय उवाच

**तर्ज्यमानस्तदा राजन्नुदकस्थस्तवात्मजः ।**
**मनश्चकार युद्धाय राजानं चाभ्यभाषत ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! युधिष्ठिर ने जब दुर्योधन को इस प्रकार फटकारा, तब जल में स्थित आपके पुत्र ने मन-ही-मन युद्ध का निश्चय किया और राजा युधिष्ठिर से इस प्रकार कहा—

**यूयं ससुहृदः पार्थाः सर्वे सरथवाहनाः ।**
**अहमेकः परिद्यूनो विरथो हतवाहनः ॥२॥**

"तुम सभी पाण्डव अपने हितैषी मित्रों से युक्त हो । तुम्हारे पास रथ और वाहन भी विद्यमान हैं । मैं अकेला, थका-माँदा, रथहीन और वाहन-शून्य हूँ ।

**आत्तशस्त्रै रथोपेतैर्बहुभिः परिवारितः ।**
**कथमेकः पदातिः सन्नशस्त्रो योद्धुमुत्सहे ॥३॥**

"तुम्हारी संख्या बहुत है । तुमने रथ पर बैठकर नाना प्रकार के अस्त्र-शस्त्र लेकर मुझे घेर रखा है । फिर तुम्हारे साथ मैं अकेला, पैदल और अस्त्र-शस्त्रों से रहित होकर कैसे युद्ध कर सकता हूँ ?

**एकैकेन तु मां यूयं योधयध्वं युधिष्ठिर ।**
**न ह्येको बहुभिर्वीरैर्न्याय्यो योधयितुं युधि ॥४॥**

"युधिष्ठिर ! तुम लोग एक-एक करके मुझसे युद्ध करो । युद्ध में बहुत-से वीरों के साथ किसी एक को लड़ने के लिए विवश करना न्यायोचित नहीं है ।

**विशेषतो विकवचः श्रान्तश्चापत्समाश्रितः ।**
**भृशं विक्षतगात्रश्च श्रान्तवाहनसैनिकः ॥५॥**

"विशेषतः उस अवस्था में जिसके शरीर पर कवच न हो, जो थका-माँदा, आपत्ति में पड़ा और अत्यन्त घायल हो एवं जिसके वाहन और सैनिक भी थक गये हों, उसे युद्ध के लिए विवश करना न्यायसंगत नहीं है ।

**न मे त्वत्तो भयं राजन् न च पार्थाद् वृकोदरात् ।**
**फाल्गुनाद् वासुदेवाद् वा पाञ्चालेभ्योऽथवा पुनः ॥६॥**
**यमाभ्यां युयुधानाद्वा ये चान्ये तव सैनिकाः ।**
**एकः सर्वानहं क्रुद्धो वारयिष्ये युधि स्थितः ॥७॥**

"राजन् ! मुझे न तो तुमसे, न कुन्ती के पुत्र भीमसेन से, न अर्जुन से, न श्रीकृष्ण से अथवा

पाञ्चालों से ही कोई भय है। नकुल-सहदेव, सात्यकि तथा अन्य जो-जो तुम्हारे सैनिक हैं, उनसे भी मैं नहीं डरता। युद्ध में कुपित होकर खड़ा होने पर मैं अकेला ही तुम सब लोगों को आगे बढ़ने से रोक दूँगा।

**धर्ममूला सतां कीर्तिर्मनुष्याणां जनाधिप।**
**धर्मं चैवेह कीर्तिं च पालयन् प्रब्रवीम्यहम् ॥८॥**

"प्रजेश्वर! साधुपुरुषों की कीर्ति का मूल कारण धर्म ही है। मैं यहाँ उस धर्म और कीर्ति का पालन करता हुआ ही यह बात कह रहा हूँ।

**अद्य वः सरथान् साश्वानशस्त्रो विरथोऽपि सन्।**
**अहमुत्थाय सर्वान् वै प्रतियोत्स्यामि संयुगे ॥९॥**

"आज मैं उठकर अस्त्र-शस्त्र और रथ से हीन होकर भी घोड़ों और रथ पर चढ़कर आये हुए तुम सब लोगों के साथ रणभूमि में युद्ध करूँगा।

**आनृण्यमद्य गच्छामि हत्वा त्वां भ्रातृभिः सह।**
**एतावदुक्त्वा वचनं विरराम जनाधिपः ॥१०॥**

"राजन्! आज मैं भाइयोंसहित तुम्हारा वध करके [यशस्वी क्षत्रियों के ऋण से] उऋण हो जाऊँगा।" राजा दुर्योधन इतना कहकर चुप हो गया।

युधिष्ठिर उवाच

**दिष्ट्या त्वमपि जानीषे क्षत्रधर्मं सुयोधन।**
**दिष्ट्या ते वर्तते बुद्धिर्युद्धायैव महाभुज ॥११॥**
**दिष्ट्या शूरोऽसि कौरव्य दिष्ट्या जानासि संगरम्।**
**यस्त्वमेको हि नः सर्वान् संगरे योद्धुमिच्छसि ॥१२॥**
**एक एकेन संगम्य यत्ते सम्मतमायुधम्।**
**तत् त्वमादाय युध्यस्व प्रेक्षकास्ते वयं स्थिताः ॥१३॥**

**युधिष्ठिर बोले**—सुयोधन! सौभाग्य की बात है कि तुम भी धर्म को जानते हो। महाबाहो! यह जानकर प्रसन्नता हुई कि अभी तुम्हारा विचार युद्ध करने का ही है। कुरुनन्दन! तुम शूरवीर हो और युद्ध करना जानते हो—यह हर्ष और सौभाग्य की बात है। तुम युद्धभूमि में अकेले ही एक-एक के साथ भिड़कर हम सब लोगों से युद्ध करना चाहते हो तो ऐसा ही सही। जो हथियार तुम्हें पसन्द हो, उसी को लेकर हम लोगों में से एक-एक के साथ युद्ध करो। हम सब लोग दर्शक बनकर खड़े रहेंगे।

**स्वयमिष्टं च ते कामं वीर भूयो ददाम्यहम्।**
**हत्वैकं भवतो राज्यं हतो वा स्वर्गमाप्नुहि ॥१४॥**

वीर! मैं स्वयं ही पुनः तुम्हें यह अभीष्ट वर देता हूँ—"हममें से एक का भी वध कर देने पर सारा राज्य तुम्हारा हो जाएगा, अथवा यदि तुम्हीं मारे गये तो स्वर्गलोक प्राप्त करोगे।"

दुर्योधन उवाच

**एकश्चेद् योद्धुमाक्रन्दे शूरोऽद्य मम दीयताम्।**
**आयुधानामियं चापि वृता त्वत्सम्मते गदा ॥१५॥**

**दुर्योधन बोला**—राजन्! यदि ऐसी बात है तो इस महायुद्ध में मेरे साथ लड़ने के लिए आज किसी भी एक शूरवीर को दे दो और तुम्हारी सम्मति के अनुसार हथियारों में से मैंने एकमात्र इस गदा का ही वरण किया है।

**हन्तैकं भवतामेकः शक्यं मां योऽभिमन्यते।**
**पदातिर्गदया संख्ये स युध्यतु मया सह ॥१६॥**

हन्त! तुममें से कोई भी एक वीर जो मुझ अकेले को जीत सकने का अभिमान रखता हो, वह युद्धभूमि में पैदल ही गदा द्वारा मेरे साथ युद्ध करे।

**वृत्तानि रथयुद्धानि विचित्राणि पदे पदे।**
**इदमेकं गदायुद्धं भवत्वद्याद्भुतं महत् ॥१७॥**

रथ के विचित्र युद्ध तो पग-पग पर हुए हैं, आज यह एक अत्यन्त अद्भुत गदायुद्ध भी हो जाए।

**गदया त्वां महाबाहो विजेष्यामि सहानुजम्।**
**न हि मे सम्भ्रमो जातु शक्रादपि युधिष्ठिर ॥१८॥**

महाबाहो! मैं गदा द्वारा भाइयोंसहित तुम्हें जीत लूँगा। युधिष्ठिर! मुझे युद्ध करने में इन्द्र से भी कभी घबराहट नहीं होती।

युधिष्ठिर उवाच

**उत्तिष्ठोत्तिष्ठ गान्धारे मां योधय सुयोधन।**
**एक एकेन संगम्य संयुगे गदया बली ॥१९॥**
**पुरुषो भव गान्धारे युध्यस्व सुसमाहितः।**
**अद्य ते जीवितं नास्ति यद्यपीन्द्रोऽपि तवाश्रयः ॥२०॥**

**युधिष्ठिर बोले**—गान्धारीनन्दन! सुयोधन! उठो; उठो और मेरे साथ युद्ध करो। बलवान् तो तुम हो ही। युद्ध में गदा के द्वारा अकेले किसी एक वीर के साथ भिड़कर अपने पुरुषत्व का परिचय

दो। एकाग्रचित्त होकर युद्ध करो। यदि इन्द्र भी तुम्हारे आश्रयदाता हो जाएँ तो भी आज तुम्हारे प्राण नहीं बच सकते।

सञ्जय उवाच

**तथासौ वाक्प्रतोदेन तुद्यमानः पुनः पुनः।**
**वचो न ममृषे राजन्नुत्तमाश्वः कशामिव ॥२१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन्! जैसे उत्तम घोड़ा कोड़े की मार नहीं सह सकता, वैसे ही वचनरूपी चाबुक से बारम्बार पीड़ित किया जाता हुआ दुर्योधन युधिष्ठिर की बात को सहन न कर सका।

**संक्षोभ्य सलिलं वेगाद् गदामादाय वीर्यवान्।**
**उदतिष्ठत पुत्रस्ते प्रतपन् रश्मिवानिव ॥२२॥**

आपका वह पराक्रमी वीर पुत्र बड़े वेग से गदा लेकर पानी को चीरता हुआ प्रतापी सूर्य के समान ऊपर उठा [बाहर निकला]।

**तमुत्तीर्णं महाबाहुं गदाहस्तमरिन्दमम्।**
**मेनिरे सर्वभूतानि दण्डपाणिमिवान्तकम् ॥२३॥**

शत्रुओं का दमन करनेवाले महाबाहु दुर्योधन को हाथ में गदा लिये जल से निकला हुआ देख समस्त प्राणी ऐसा मानने लगे, मानो दण्डधारी यमराज प्रकट हो गये हों।

**तमुत्तीर्णं तु सम्प्रेक्ष्य समहृष्यन्त सर्वशः।**
**पाञ्चालाः पाण्डवेयाश्च तेऽन्योन्यस्य तलान्ददुः ॥२४॥**

उसे जल से बाहर निकला देख समस्त पाञ्चाल और पाण्डव हर्ष से खिल उठे और एक-दूसरे से हस्तालिंगन करने [हाथ मिलाने] लगे।

**अवहासं तु तं मत्वा पुत्रो दुर्योधनस्तव।**
**उद्वृत्य नयने क्रुद्धः पाण्डवानब्रवीद्वचः ॥२५॥**

राजन्! उनके इस हाथ मिलाने को दुर्योधन ने अपना उपहास समझा, अतः उसने क्रोधपूर्वक आँखें घुमाकर पाण्डवों से इस प्रकार कहा—

दुर्योधन उवाच

**फलमस्यावहासस्य प्रतिभोक्ष्यथ पाण्डवाः।**
**गमिष्यथ हताः सद्यः सपाञ्चाला यमक्षयम् ॥२६॥**

**दुर्योधन बोला**—पाञ्चालो और पाण्डवो! इस उपहास का फल तुम्हें अभी भोगना पड़ेगा, मेरे हाथ से मारे जाकर तुम तत्काल यमलोक में पहुँच जाओगे।

**एकैकेन च मां यूयमासीदत युधिष्ठिर।**
**न ह्येको बहुभिर्न्याय्यो वीरो योधयितुं युधि ॥२७॥**

युधिष्ठिर! तुम लोग एक-एक करके मेरे साथ युद्ध के लिए आते जाओ। युद्धभूमि में किसी एक वीर को बहुसंख्यक वीरों के साथ युद्ध के लिए विवश करना न्यायसंगत नहीं है।

युधिष्ठिर उवाच

**यद्येकस्तु न हन्तव्यो बहुभिर्धर्म एव तु।**
**तदाभिमन्युं बहवो निजघ्नुस्त्वन्मते कथम् ॥२८॥**

**युधिष्ठिर बोले**—'बहुत-से योद्धा मिलकर किसी एक वीर को न मारें' यदि यही धर्म है तो तुम्हारी सम्मति से अनेक महारथियों ने अभिमन्यु का वध कैसे किया?

**सर्वो विमृशते जन्तुः कृच्छ्रस्थो धर्मदर्शनम्।**
**पदस्थः पिहितं द्वारं परलोकस्य पश्यति ॥२९॥**

प्रायः सभी प्राणी जब स्वयं संकट में पड़ जाते हैं तब अपनी रक्षा के लिए धर्मशास्त्र की दुहाई देने लगते हैं और जब अपने उच्च-पद पर प्रतिष्ठित होते हैं, उस समय उन्हें परलोक का द्वार बन्द दिखाई देता है।

**आमुञ्च कवचं वीर मूर्धजान् यमयस्व च।**
**यच्चान्यदपि ते नास्ति तदप्यादत्स्व भारत ॥३०॥**

वीर भरतनन्दन! तुम कवच धारण कर लो, अपने केशों को अच्छी प्रकार बाँध लो तथा युद्ध की और कोई आवश्यक सामग्री जो तुम्हारे पास न हो, वह भी ले लो।

**इममेकं च ते कामं वीर भूयो ददाम्यहम्।**
**पञ्चानां पाण्डवानां हि येन त्वं योद्धुमिच्छसि ॥३१॥**
**तं हत्वा वै भवान् राजा हतो वा स्वर्गमाप्नुहि।**
**ऋते च जीविताद्वीर युद्धे किं कर्म ते प्रियम् ॥३२॥**

वीर! मैं पुनः तुम्हें एक अभीष्ट वर देता हूँ—'पाँचों पाण्डवों में से तुम जिसके साथ युद्ध करना चाहो, उस एक का ही वध कर देने पर तुम राजा हो सकते हो अथवा यदि स्वयं मारे गये तो स्वर्गलोक प्राप्त कर लोगे। शूरवीर! बताओ, युद्ध में प्राणों की रक्षा के सिवा तुम्हारा और कौन-सा प्रिय कार्य हम कर सकते हैं?'

सञ्जय उवाच

**ततस्तव सुतो राजन् वर्म जग्राह काञ्चनम् ।**
**विचित्रं च शिरस्त्राणं जाम्बुनदपरिष्कृतम् ॥३३॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! युधिष्ठिर के ऐसा कहने पर आपके पुत्र ने स्वर्णमय कवच और स्वर्ण-जटित विचित्र शिरस्त्राण धारण किया ।

**संनद्धः सगदो राजन् सज्जः संग्राममूर्धनि ।**
**अब्रवीत् पाण्डवान् सर्वान् पुत्रो दुर्योधनस्तव ॥३४॥**

राजन् ! युद्ध के मुहाने पर सुसज्जित हो कवच बाँधे और गदा हाथ में लिये आपके पुत्र दुर्योधन ने समस्त पाण्डवों से कहा—

**भ्रातृणां भवतामेको युध्यतां गदया मया ।**
**सहदेवेन वा योत्स्ये भीमेन नकुलेन वा ।**
**अथवा फाल्गुनेनाद्य त्वया वा भरतर्षभ ॥३५॥**

"भरतभूषण ! तुम्हारे भाइयों में से कोई एक मेरे साथ गदा द्वारा युद्ध करे । मैं सहदेव, नकुल, भीमसेन, अर्जुन अथवा स्वयं तुमसे भी युद्ध कर सकता हूँ ।

**गदायुद्धे न मे कश्चित् सदृशोऽस्तीति चिन्तये ।**
**गदया वो हनिष्यामि सर्वानेव समागतान् ॥३६॥**

"मैं ऐसा समझता हूँ कि 'गदायुद्ध में मेरी समानता करनेवाला दूसरा कोई नहीं है।' गदा के द्वारा सामने आने पर मैं तुम सभी लोगों को मार डालूँगा ।

**न युक्तमात्मना वक्तुमेवं गर्वोद्धतं वचः ।**
**अथवा सफलं ह्येतत् करिष्ये भवतां पुरः ॥३७॥**

"मुझे स्वयं ही अपने विषय में ऐसे गर्वीले वचन नहीं बोलने चाहिएँ तथापि कहना पड़ा है, अथवा कहने की क्या आवश्यकता ? मैं तुम्हारे सामने ही यह सब सत्य कर दिखाऊँगा ।

**अस्मिन्मुहूर्ते सत्यं वा मिथ्या वैतद् भविष्यति ।**
**गृह्णातु च गदां यो वै योत्स्यतेऽद्य मया सह ॥३८॥**

"मेरा वचन सत्य है या मिथ्या, यह इसी मुहूर्त में स्पष्ट हो जाएगा । आज मेरे साथ युद्ध करने को जो भी उद्यत हो, वह गदा उठाए ।"

**इति महाभारते शल्यपर्वणि पञ्चदशोऽध्यायः ॥१५॥**

# षोडशोऽध्यायः

## श्रीकृष्ण का युधिष्ठिर को फटकारना, भीम की प्रशंसा, भीम और दुर्योधन में वाग्युद्ध

सञ्जय उवाच

**एवं दुर्योधने राजन् गर्जमाने मुहुर्मुहुः ।**
**युधिष्ठिरस्य संक्रुद्धो वासुदेवोऽब्रवीदिदम् ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! जब ऐसा कहकर दुर्योधन बारम्बार गर्जना करने लगा, उस समय श्रीकृष्ण अत्यन्त कुपित होकर युधिष्ठिर से बोले—

**यदि नाम ह्ययं युद्धे वरयेत् त्वां युधिष्ठिर ।**
**अर्जुनं नकुलं चैव सहदेवमथापि वा ॥२॥**

"युधिष्ठिर ! यदि यह दुर्योधन युद्ध में तुमको, अर्जुन को अथवा नकुल या सहदेव को ही युद्ध के लिए वरण कर ले, तब क्या होगा ?

**किमिदं साहसं राजंस्त्वया व्याहृतमीदृशम् ।**
**एकमेव निहत्याजौ भव राजा कुरुष्विति ॥३॥**

"राजन् ! आपने ऐसी दुःसाहसपूर्ण बात क्यों कह डाली कि 'तुम हममें से एक को ही मारकर कौरवों के राजा हो जाओ।'

**एतेन हि कृता योग्या वर्षाणीह त्रयोदश ।**
**आयसे पुरुषे राजन् भीमसेनजिघांसया ॥४॥**

"राजन् ! इसने भीमसेन का वध करने की इच्छा से उनकी लोहे की मूर्ति के साथ तेरह वर्ष तक गदायुद्ध का अभ्यास किया है ।

**नान्यमस्यानुपश्यामि प्रतियोद्धारमाहवे ।**
**ऋते वृकोदरात् पार्थात् स च नातिकृतश्रमः ॥५॥**

"मैं कुन्तीकुमार भीमसेन के सिवा, दूसरे किसी को ऐसा नहीं समझता, जो गदायुद्ध में दुर्योधन का सामना कर सके, परन्तु भीमसेन ने भी अधिक परि-श्रम नहीं किया है ।

**तदिदं द्यूतमारब्धं पुनरेव यथा पुरा ।**
**विषमं शकुनेश्चैव तव चैव विशाम्पते ॥६॥**

"इस समय आपने पहले के समान ही पुनः यह जुए का खेल आरम्भ कर दिया है । नरेश्वर ! आपका यह जुआ शकुनि के जुए से कहीं भयंकर है ।

**बली भीमः समर्थश्च कृती राजा सुयोधनः ।**
**बलवान् वा कृती वेति कृती राजन् विशिष्यते ॥७॥**

"राजन् ! भीम बलवान् और समर्थ है परन्तु राजा दुर्योधन ने अभ्यास अधिक किया है। एक ओर बलवान् हो और दूसरी ओर युद्ध का अभ्यासी, तो उनमें अभ्यासी बड़ा माना जाता है।

**सोऽयं राजँस्त्वया शत्रुः समे पथि निवेशितः ।**
**न्यस्तश्चात्मा सुविषमे कृच्छ्रमापादिता वयम् ॥८॥**

"महाराज ! आपने अपने शत्रु को समान धरातल पर ला दिया है। इस प्रकार अपने-आपको तो भारी संकट में फँसाया ही है, हम लोगों को भी भारी कठिनाई में डाल दिया है।

**को नु सर्वान् विनिर्जित्य शत्रूनेकेन वैरिणा ।**
**कृच्छ्रप्राप्तेन च तथा हारयेद् राज्यमागतम् ॥९॥**

"भला ऐसा कौन मनुष्य होगा, जो सब शत्रुओं को जीत लेने के पश्चात् जब एक ही शत्रु शेष रह जाए और वह भी संकट में पड़ा हो तब उसके साथ अपने हाथ में आये हुए राज्य को दाँव पर लगाकर हार जाए ?

**न हि पश्यामि तं लोके योऽद्य दुर्योधनं रणे ।**
**गदाहस्तं विजेतुं वै शक्तः स्यादमरोऽपि हि ॥१०॥**

"मैं संसार में किसी भी शूरवीर को, चाहे वह देवता ही क्यों न हो, ऐसा नहीं देखता, जो आज रणभूमि में गदाधारी दुर्योधन को परास्त करने में समर्थ हो।

**न त्वं भीमो न नकुलः सहदेवोऽथ फाल्गुनः ।**
**जेतुं न्यायेन शक्तो वै कृती राजा सुयोधनः ॥११॥**

"आप, भीमसेन, नकुल, सहदेव अथवा अर्जुन— कोई भी न्यायपूर्वक युद्ध करके दुर्योधन पर विजय नहीं पा सकता, क्योंकि राजा दुर्योधन ने गदायुद्ध का अधिक अभ्यास किया है।

**स कथं वदसि शत्रुं युध्यस्व गदयेति हि ।**
**एकं च नो निहत्याजौ भव राजेति भारत ॥१२॥**

"भरतभूषण ! जब ऐसी दशा है, तब आपने अपने शत्रुओं से यह कैसे कह दिया कि 'तुम गदा द्वारा युद्ध करो और हममें से किसी एक को मारकर राजा हो जाओ ?'

**वृकोदरं समासाद्य संशयो वै जये हि नः ।**
**न्यायतो युध्यमानानां कृती ह्येष महाबलः ॥१३॥**

"भीमसेन पर युद्ध का भार रखा जाए तो भी हमें विजय मिलने में सन्देह है, क्योंकि न्यायपूर्वक युद्ध करनेवाले योद्धाओं में महाबली सुयोधन का अभ्यास सबसे अधिक है।

**एकं वास्मान् निहत्य त्वं भव राजेति वै पुनः ।**
**नूनं न राज्यभागेषा पाण्डोः कुन्त्याश्च सन्ततिः ।**
**अत्यन्तवनवासाय सृष्टा भैक्ष्याय वा पुनः ॥१४**

"फिर भी आपने बारम्बार कहा है कि 'तुम हम लोगों में से एक को भी मारकर राजा हो जाओ।' निश्चय ही राजा पाण्डु और कुन्तीदेवी की सन्तान राज्य भोगने की अधिकारिणी नहीं है। विधाता ने इसे अनन्तकाल तक वनवास भोगने अथवा भीख माँगने के लिए ही पैदा किया है।"

भीमसेन उवाच

**मधुसूदन मा कार्षीर्विषादं यदुनन्दन ।**
**अद्य पारं गमिष्यामि वैरस्य भृशदुर्गमम् ॥१५॥**

**भीम बोले**—मधुसूदन ! आप विषाद न करें। यदुनन्दन ! मैं आज वैर की उस अन्तिम सीमा पर पहुँच जाऊँगा, जहाँ जाना दूसरों के लिए अत्यन्त कठिन है।

**अहं सुयोधनं संख्ये हनिष्यामि न संशयः ।**
**विजयो वै ध्रुवः कृष्ण धर्मराजस्य दृश्यते ॥१६॥**

श्रीकृष्ण ! इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि मैं युद्ध में सुयोधन को मार डालूँगा। मुझे तो धर्मराज की निश्चय ही विजय दिखाई देती है।

**अध्यर्धेन गुणेनेयं गदा गुरुतरी मम ।**
**अहमेनं हि गदया संयुगे योद्धुमुत्सहे ॥१७॥**

मेरी यह गदा दुर्योधन की गदा से डेढ़गुणी भारी है। मैं रणभूमि में इस गदा द्वारा इससे भिड़ने का उत्साह रखता हूँ।

सञ्जय उवाच

**तथा सम्भाषमाणं तु वासुदेवो वृकोदरम् ।**
**हृष्टः सम्पूजयामास वचनं चेदमब्रवीत् ॥१८॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! भीमसेन ने जब ऐसी बात कही, तब श्रीकृष्ण अत्यन्त प्रसन्न होकर उनकी

प्रशंसा करने लगे और इस प्रकार बोले—

**त्वामाश्रित्य महाबाहो धर्मराजो युधिष्ठिरः ।**
**निहतारिः स्वकां दीप्तां श्रियं प्राप्तो न संशयः ।।१९।।**
**त्वया विनिहताः सर्वे धृतराष्ट्रसुता रणे ।**
**हत्वा दुर्योधनं चापि प्रयच्छोर्वीं ससागराम् ।।२०।।**

"महाबाहो ! इसमें सन्देह नहीं कि धर्मराज युधिष्ठिर ने तुम्हारा आश्रय लेकर ही शत्रुओं का नाश करके पुनः अपनी उज्ज्वल राज्यलक्ष्मी को प्राप्त कर लिया है । धृतराष्ट्र के सभी पुत्र तुम्हारे ही हाथ से युद्ध में मारे गये हैं । अब तुम दुर्योधन का भी वध करके समुद्रोंसहित यह सम्पूर्ण वसुन्धरा धर्मराज युधिष्ठिर को समर्पित कर दो ।

**त्वां च प्राप्य रणे पापो धार्तराष्ट्रो विनङ्क्ष्यति ।**
**त्वमस्य सक्थिनी भङ्क्त्वा प्रतिज्ञां पालयिष्यसि ।।२१**

"अवश्य ही रणभूमि में तुमसे टक्कर लेकर पापी दुर्योधन नष्ट हो जाएगा और तुम उसकी दोनों जाँघें तोड़कर अपनी प्रतिज्ञा का पालन करोगे ।

**यत्नेन तु सदा पार्थ योद्धव्यो धृतराष्ट्रजः ।**
**कृती च बलवाँश्चैव युद्धशौण्डश्च नित्यदा ।।२२।।**

"किन्तु पार्थ ! तुम्हें दुर्योधन के साथ सदा प्रयत्नपूर्वक युद्ध करना चाहिए, क्योंकि वह अभ्यास-कुशल, बलवान् और युद्ध की कला में सदा चतुर है ।"

**ततो भीमबलो भीमो युधिष्ठिरमथाब्रवीत् ।**
**सृञ्जयैः सह तिष्ठन्तं तपन्तमिव भास्करम् ।।२३।।**

श्रीकृष्ण के वचनों को सुनकर भयंकर बलशाली भीमसेन ने सृंजयों के साथ खड़े हुए तपते हुए सूर्य के समान तेजस्वी युधिष्ठिर से कहा—

**अहमेतेन संगम्य संयुगे योद्धुमुत्सहे ।**
**न हि शक्तो रणे जेतुं मामेष पुरुषाधमः ।।२४।।**

"भैया ! मैं रणाङ्गण में इस दुर्योधन के साथ भिड़कर लड़ने का उत्साह रखता हूँ । यह नराधम मुझे युद्ध में परास्त नहीं कर सकता ।

**अद्य क्रोधं विमोक्ष्यामि निहितं हृदये भृशम् ।**
**सुयोधने धार्तराष्ट्रे खाण्डवेऽग्निमिवार्जुनः ।।२५।।**

"मेरे हृदय में बहुत समय से जो क्रोध संचित है, उसे आज मैं धृतराष्ट्रपुत्र दुर्योधन पर इसी प्रकार छोड़ूँगा, जैसे अर्जुन ने खाण्डव वन में अग्निदेव को छोड़ा था ।

**शल्यमद्योद्धरिष्यामि तव पाण्डव हृच्छयम् ।**
**निहत्य गदया पापमद्य राजन् सुखी भव ।।२६।।**

"पाण्डुनन्दन ! नरेश ! आज मैं गदा द्वारा पापी दुर्योधन का वध करके आपके हृदय का काँटा निकाल दूँगा, अतः आप सुखी होइए ।

**अद्य कीर्तिमयीं मालां प्रतिमोक्ष्ये तवानघ ।**
**प्राणाञ्छ्रियं च राज्यं च मोक्ष्यतेऽद्य सुयोधनः ।।२७।।**

"निष्पाप नरेश ! आज आपके गले में मैं कीर्ति-मयी माला पहनाऊँगा और आज यह दुर्योधन अपनी राज्यलक्ष्मी तथा प्राणों का परित्याग करेगा ।

**राजा च धृतराष्ट्रोऽद्य श्रुत्वा पुत्रं मया हतम् ।**
**स्मरिष्यत्यशुभं कर्म यत् तच्छकुनिबुद्धिजम् ।।२८।।**

"आज मेरे द्वारा अपने पुत्र को मारा गया सुनकर राजा धृतराष्ट्र शकुनि की सम्मति से किये हुए अपने अशुभ कर्मों को स्मरण करेंगे ।"

**इत्युक्त्वा भरतश्रेष्ठो गदामुद्यम्य वीर्यवान् ।**
**उदतिष्ठत युद्धाय शक्रो वृत्रमिवाह्वयन् ।।२९।।**

ऐसा कहकर भरतवंशी वीरों में श्रेष्ठ पराक्रमी भीमसेन गदा लेकर युद्ध के लिए उठ खड़े हुए तथा जैसे इन्द्र ने वृत्रासुर को ललकारा था, उसी प्रकार उन्होंने दुर्योधन का आह्वान किया ।

**तदाह्वानममृष्यन् वै तव पुत्रोऽतिवीर्यवान् ।**
**प्रत्युपस्थित एवाशु मत्तो मत्तमिव द्विपम् ।।३०।।**

हे राजेन्द्र ! उस समय आपका अत्यन्त पराक्रमी पुत्र दुर्योधन भीमसेन की उस ललकार को न सह सका । वह तुरन्त ही उनका सामना करने के लिए आ डटा, मानो एक मतवाला हाथी दूसरे मदोन्मत्त गजराज से भिड़ने को उद्यत हो गया हो ।

**समुद्यतगदं दृष्ट्वा कैलासमिव शृङ्गिणम् ।**
**भीमसेनस्तदा राजन् दुर्योधनमथाब्रवीत् ।।३१।।**

राजन् ! शृङ्गधारी कैलास पर्वत के समान गदा उठाये दुर्योधन को देखकर भीमसेन ने उससे कहा—

**राज्ञापि धृतराष्ट्रेण त्वया चास्मासु यत्कृतम् ।**
**स्मर तद् दुष्कृतं कर्म यद् वृत्तं वारणावते ।।३२।।**

"दुर्योधन ! तूने तथा राजा धृतराष्ट्र ने भी हम

लोगों पर जो-जो अत्याचार किया था और वारणावतनगर में जो कुछ हुआ था, उन सारे पापकर्मों को स्मरण कर ले ।

**द्रौपदी च परिक्लिष्टा सभामध्ये रजस्वला ।**
**द्यूते यद् विजितो राजा शकुनेर्बुद्धिनिश्चयात् ।।३३।।**
**यानि चान्यानि दुष्टात्मन् पापानि कृतवानसि ।**
**अनागःसु च पार्थेषु तस्य पश्य सुदुष्फलम् ।।३४।।**

"दुरात्मन् ! तूने भरी सभा में रजस्वला द्रौपदी को क्लेश पहुँचाया, शकुनि की सलाह से राजा युधिष्ठिर को कपटपूर्वक जूए में हराया और निरपराध कुन्तीपुत्रों पर अन्य जो-जो पाप एवं अत्याचार किये थे, उन सबका महान् अशुभ फल आज तू अपनी आँखों से देख ले ।

**अद्य तेऽहं रणे दर्पं सर्वं नाशयिता नृप ।**
**राज्याशां विपुलां राजन् पाण्डवेषु च दुष्कृतम् ।।३५।।**

"नरेश्वर ! आज युद्धभूमि में तेरा सारा गर्व खर्व कर दूँगा । राजन् ! तेरे मन में राज्य पाने की जो बड़ी भारी अभिलाषा है, उसका और पाण्डवों पर तेरे द्वारा किये जानेवाले अत्याचारों का भी मैं अन्त कर डालूँगा ।"

दुर्योधन उवाच

**किं कत्थितेन बहुना युद्धयस्वाद्य मया सह ।**
**अद्य तेऽहं विनेष्यामि युद्धश्रद्धां वृकोदर ।।३६।।**

**दुर्योधन बोला**--वृकोदर ! बहुत बढ़-चढ़कर बातें बनाने से क्या लाभ ? आज मेरे साथ भिड़ तो सही । मैं युद्ध का तेरा सारा हौसला मिटा दूँगा ।

**गदिनं कोऽद्य मां पाप हन्तुमुत्सहते रिपुः ।**
**न्यायतो युद्धयमानश्च देवेष्वपि पुरन्दरः ।।३७।।**

ओ पापी ! आज कौन ऐसा शत्रु है जो मेरे हाथ में गदा रहते हुए भी मुझे मार सके ? न्यायपूर्वक युद्ध करते हुए देवताओं के राजा इन्द्र भी मुझे परास्त नहीं कर सकते ।

**मा वृथा गर्ज कौन्तेय शारदाभ्रमिवाजलम् ।**
**दर्शयस्व बलं युद्धे यावत् तत् तेऽद्य विद्यते ।।३८।।**

कुन्तीकुमार ! शरद् ऋतु के जलहीन मेघ की भाँति व्यर्थ की गर्जना न कर । तेरे पास जितना बल हो, वह सब आज युद्ध में प्रदर्शित कर ।

**इति महाभारते शल्यपर्वणि षोडशोऽध्यायः ।।१६।।**

## सप्तदशोऽध्यायः

### बलरामजी का आगमन और स्वागत तथा भीम और दुर्योधन का गदायुद्ध आरम्भ

सञ्जय उवाच

**तस्मिन् युद्धे महाराज सुसंवृत्ते सुदारुणे ।**
**उपविष्टेषु सर्वेषु पाण्डवेषु महात्मसु ।।१।।**
**ततस्तालध्वजो रामस्तयोर्युद्ध उपस्थिते ।**
**श्रुत्वा तच्छिष्ययो राजन्नाजगाम हलायुधः ।।२।।**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज ! जिस समय वह भयंकर युद्ध आरम्भ होने लगा और समस्त महात्मा पाण्डव उसे देखने के लिए बैठ गये, उस समय अपने दोनों शिष्यों के युद्ध होने का समाचार पाकर तालचिह्नित ध्वजवाले—हलधारी बलरामजी वहाँ आ पहुँचे ।

**तं दृष्ट्वा परमप्रीताः पाण्डवाः सहकेशवाः ।**
**उपगम्योपसंगृह्य विधिवत् प्रत्यपूजयन् ।।३।।**

उन्हें देखकर श्रीकृष्णसहित पाण्डव अति प्रसन्न हुए । उन्होंने निकट जाकर उनका चरणस्पर्श किया और विधिपूर्वक उनकी पूजा की, सम्मान किया ।

**पूजयित्वा ततः पश्चादिदं वचनमब्रुवन् ।**
**शिष्ययोः कौशलं युद्धे पश्य रामेति पार्थिव ।।४।।**

राजन् ! उनका सत्कार करने के पश्चात् उन लोगों ने इस प्रकार कहा—"बलरामजी ! अपने दोनों शिष्यों का युद्ध-कौशल देखिए ।"

**अब्रवीच्च तदा रामो दृष्ट्वा कृष्णं सपाण्डवम् ।**
**दुर्योधनं च कौरव्यं गदापाणिमवस्थितम् ।।५।।**

उस समय बलरामजी ने श्रीकृष्ण, पाण्डव तथा हाथ में गदा लेकर खड़े हुए कुरुवंशी दुर्योधन की ओर देखकर कहा—

**चत्वारिंशदहान्यद्य द्वे च मे निःसृतस्य वै ।**
**पुष्येण सम्प्रयातोऽस्मि श्रवणे पुनरागतः ।**
**शिष्ययोर्वै गदायुद्धं द्रष्टुकामोऽस्मि माधव ।।६।।**

"माधव ! तीर्थयात्रा के लिए निकले हुए आज मुझे बयालीस दिन हो गये । मैं पुष्य नक्षत्र में चला था और श्रवण नक्षत्र में पुनः वापस आया हूँ । मैं अपने दोनों शिष्यों का गदायुद्ध देखना चाहता हूँ ।"

**ततोऽब्रवीद् धर्मसुतो रौहिणेयमरिन्दमम् ।**
**इदं भ्रात्रोर्महायुद्धं पश्य रामेति भारत ।।७।।**

हे भारत ! उस समय धर्मपुत्र युधिष्ठिर ने शत्रुदमन रोहिणीकुमार से कहा—"बलरामजी ! आप दोनों भाइयों का यह महान् युद्ध देखिए ।"

**तेषां मध्ये महाबाहुः श्रीमान् केशवपूर्वजः ।**
**न्यविशत् परमप्रीतः पूज्यमानो महारथैः ।।८।।**

उनके ऐसा कहने पर श्रीकृष्ण के बड़े भाई महाबाहु श्रीबलरामजी उन महारथियों से सत्कृत होकर उनके बीच में अत्यन्त प्रसन्न होकर बैठे ।

**ततस्तयोः संनिपातस्तुमुलो लोमहर्षणः ।**
**आसीदन्तकरो राजन् वैरस्य तव पुत्रयोः ।।९।।**

राजन् ! तत्पश्चात् आपके उन दोनों पुत्रों में वैर का अन्त कर देनेवाला भयंकर एवं रोमाञ्चकारी संग्राम होने लगा ।

**समापेततुरन्योन्यं शृङ्गिणौ वृषभाविव ।**
**महानिर्घातघोषश्च प्रहाराणामजायत ।।१०।।**

वे दोनों बड़े-बड़े दो सींगोंवाले दो साँडों के समान एक-दूसरे से भिड़ गये । उनके प्रहारों की आवाज महान् वज्रपात के समान भयंकर जान पड़ती थी ।

**अभवच्च तयोर्युद्धं तुमुलं लोमहर्षणम् ।**
**उभावपि परिश्रान्तौ युध्यमानावरिन्दमौ ।।११।।**

उन दोनों में भयंकर एवं रोमाञ्चकारी युद्ध होने लगा । लड़ते-लड़ते वे दोनों शत्रुदमन वीर बहुत थक गये ।

**तौ मुहूर्तं समाश्वस्य पुनरेव परन्तपौ ।**
**सम्प्रहारयतां चित्रे सम्प्रगृह्य गदे शुभे ।।१२।।**

फिर उन दोनों ने दो घड़ी तक विश्राम किया । तत्पश्चात् शत्रुसन्तापक वे दोनों योद्धा फिर विचित्र एवं सुन्दर गदाएँ हाथ में लेकर एक-दूसरे पर प्रहार करने लगे ।

**प्रगृहीतगदौ दृष्ट्वा दुर्योधनवृकोदरौ ।**
**संशयः सर्वभूतानां विजये समपद्यत ।।१३।।**

दुर्योधन और भीमसेन को पुनः गदा उठाये देख उनमें से किसी एक की विजय के सम्बन्ध में समस्त प्राणियों के हृदय में संशय उत्पन्न हो गया ।

**समागम्य ततो भूयो भ्रातरौ बलिनां वरौ ।**
**अन्योन्यस्यान्तरप्रेप्सू प्रचक्रातेऽन्तरं प्रति ।।१४।।**

उधर बलवानों में श्रेष्ठ उन दोनों भाइयों में जब पुनः युद्ध आरम्भ हुआ तब वे दोनों ही दोनों के चूकने का अवसर देखते हुए पैंतरे बदलने लगे ।

**तौ परस्परमासाद्य यत्तावन्योन्यरक्षणे ।**
**मार्जाराविव भक्ष्यार्थे ततक्षाते मुहुर्मुहुः ।।१५।।**

वे दोनों परस्पर भिड़कर एक-दूसरे से अपनी रक्षा के लिए प्रयत्नशील हो रोटी के टुकड़ों के लिए लड़नेवाले दो बिलावों के समान बारम्बार आघात-प्रतिघात कर रहे थे ।

**तौ दर्शयन्तौ समरे युद्धक्रीडां समन्ततः ।**
**गदाभ्यां सहसान्योन्यमाजघ्नतुररिन्दमौ ।।१६।।**

रणभूमि में सब ओर युद्ध की क्रीड़ा का प्रदर्शन करते हुए उन दोनों शत्रुदमन वीरों ने सहसा अपनी गदाओं द्वारा एक-दूसरे पर प्रहार किया ।

**तौ परस्परमासाद्य दंष्ट्राभ्यां द्विरदौ यथा ।**
**अशोभेतां महाराज शोणितेन परिप्लुतौ ।।१७।।**

महाराज ! जैसे दो गजराज अपने दाँतों से परस्पर प्रहार करके लहूलुहान हो जाते हैं, वैसे ही वे दोनों एक-दूसरे पर चोट करके खून से लथपथ हो अद्भुत शोभा पाने लगे ।

**दृष्ट्वा व्यवस्थितं भीमं तव पुत्रो महाबलः ।**
**चरंश्चित्रतरान् मार्गान् कौन्तेयमभिदुद्रुवे ।।१८।।**

तत्पश्चात् विचित्र पैंतरे बदलते हुए आपके महाबली पुत्र ने कुन्तीकुमार भीमसेन को खड़ा देख उनपर सहसा आक्रमण किया ।

**तस्य भीमो महावेगां जाम्बूनदपरिष्कृताम् ।**
**अतिक्रुद्धस्य क्रुद्धस्तु ताडयामास तां गदाम् ।।१९।।**

यह देख क्रोध में भरे हुए भीमसेन ने अत्यन्त

कुपित हुए दुर्योधन की सुवर्णजटित उस महावेग-शालिनी गदा पर ही अपनी गदा से आघात किया।

**तां नामृष्यत कौरव्यो गदां प्रतिहतां रणे ।**
**मत्तो द्विप इव क्रुद्धः प्रतिकुञ्जरदर्शनात् ।।२०।।**

जैसे क्रोध में भरा हुआ मतवाला हाथी अपने प्रतिद्वन्द्वी गजराज को देखकर सहन नहीं कर पाता, वैसे ही रणभूमि में अपनी गदा को प्रतिहत हुई देख कुरुवंशी दुर्योधन नहीं सह सका।

**स सव्यं मण्डलं राजा उद्भ्राम्य कृतनिश्चयः ।**
**आजघ्ने मूर्ध्नि कौन्तेयं गदया भीमवेगया ।।२१।।**

तब राजा दुर्योधन ने अपने मन में दृढ़ निश्चय लेकर बायें मण्डल से चक्कर लगाते हुए अपनी भयंकर वेगशाली गदा से कुन्तीपुत्र भीमसेन के मस्तक पर प्रहार किया।

**तया त्वभिहतो भीमः पुत्रेण तव पाण्डवः ।**
**नाकम्पत महाराज तदद्भुतमिवाभवत् ।।२२।।**

महाराज ! आपके पुत्र के आघात से पीड़ित होने पर भी पाण्डुकुमार भीमसेन विचलित नहीं हुए। वह अद्भुत-सी बात हुई।

**ततो गुरुतरां दीप्तां गदां हेमपरिष्कृताम् ।**
**दुर्योधनाय व्यसृजद् भीमो भीमपराक्रमः ।।२३।।**

तब भयंकर पराक्रमी भीमसेन ने दुर्योधन पर अपनी सुवर्णजटित तेजस्विनी एवं भारी गदा फेंकी।

**तं प्रहारमसम्भ्रान्तो लाघवेन महाबलः ।**
**मोघं दुर्योधनश्चक्रे तत्राभूद् विस्मयो महान् ।।२४।।**

परन्तु महाबली दुर्योधन को इससे तनिक भी घबराहट नहीं हुई। उसने फुर्ती से इधर-उधर होकर उस प्रहार को व्यर्थ कर दिया। यह देख वहाँ सब लोगों को महान् आश्चर्य हुआ।

**वञ्चयित्वा तदा भीमं गदया कुरुसत्तमः ।**
**ताडयामास संक्रुद्धो वक्षोदेशे महाबलः ।।२५।।**

फिर क्रोध में भरे हुए महाबली कुरुश्रेष्ठ दुर्योधन ने भीमसेन को धोखा दे उनकी छाती में गदा मारी।

**गदया निहतो भीमो मुह्यमानो महारणे ।**
**नाभ्यमन्यत कर्तव्यं पुत्रेणाभ्याहतस्तव ।।२६।।**

उस महायुद्ध में आपके पुत्र की गदा की चोट खाकर भीमसेन मूर्च्छित-से हो गये और एक क्षण तक उन्हें अपने कर्तव्य का ज्ञान तक नहीं रहा।

**स तु तेन प्रहारेण मातङ्ग इव रोषितः ।**
**हस्तिवद्धस्तिसंकाशमभिदुद्राव ते सुतम् ।।२७।।**

उस प्रहार से भीमसेन मतवाले हाथी के समान कुपित हो उठे और जैसे एक हाथी दूसरे हाथी पर धावा करता है, उसी प्रकार उन्होंने आपके पुत्र पर आक्रमण किया।

**उपसृत्य तु राजानं गदामोक्षविशारदः ।**
**अताडयद् भीमसेनः पार्श्वे दुर्योधनं तदा ।।२८।।**

राजन् ! गदा का प्रहार करने में कुशल भीमसेन ने आपके पुत्र राजा दुर्योधन के पास पहुँचकर उसकी पसली में आघात किया।

**स विह्वलः प्रहारेण जानुभ्यामगमन्महीम् ।**
**उदतिष्ठत् ततो नादः सृञ्जयानां जगत्पते ।।२९।।**

उस प्रहार से व्याकुल होकर आपका पुत्र घुटने टेककर पृथिवी पर बैठ गया। राजन् ! उस समय सृञ्जयों ने बड़े जोर से हर्षध्वनि की।

**तेषां तु निनदं श्रुत्वा सृञ्जयानां नरर्षभः ।**
**अमर्षाद् भरतश्रेष्ठ पुत्रस्ते समकुप्यत ।।३०।।**
**उत्थाय तु महाबाहुर्महानाग इव श्वसन् ।**
**दिधक्षन्निव नेत्राभ्यां भीमसेनमवैक्षत ।।३१।।**

भरतश्रेष्ठ ! उन सृञ्जयों का वह सिंहनाद सुनकर पुरुषप्रवर आपका महाबाहु पुत्र दुर्योधन अमर्ष से कुपित हो उठा और खड़ा हो सर्प के समान फुंकारने लगा। उसने दोनों आँखों से भीमसेन की ओर ऐसे देखा, मानो उन्हें भस्म कर डालना चाहता हो।

**ततः स भरतश्रेष्ठो गदापाणिरभिद्रवत् ।**
**प्रमथिष्यन्निव शिरो भीमसेनस्य संयुगे ।।३२।।**

फिर भरतवंश का वह श्रेष्ठ वीर हाथ में गदा लेकर युद्धभूमि में भीमसेन का मस्तक कुचल डालने के लिए उनकी ओर दौड़ा।

**स महात्मा महात्मानं भीमं भीमपराक्रमम् ।**
**अताडयच्छंखदेशे न चचालाचलोपमः ।।३३।।**

उस भयंकर पराक्रमी महामनस्वी वीर ने महामना भीम के ललाट पर गदा से आघात किया, परन्तु भीमसेन पर्वत के समान अविचल भाव से खड़े रहे, तनिक भी विचलित नहीं हुए।

**इति महाभारते शल्यपर्वणि सप्तदशोऽध्यायः ।।१७।।**

# अष्टादशोऽध्यायः

## भीमसेन का गदा से दुर्योधन की जाँघें तोड़कर उसे धराशायी करना

सञ्जय उवाच

**समुदीर्णं ततो दृष्ट्वा संग्रामं कुरुमुख्ययोः ।**
**अथाब्रवीदर्जुनस्तु वासुदेवं यशस्विनम् ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! कुरुकुल के उन दोनों प्रमुख वीरों के उस संग्राम को उत्तरोत्तर बढ़ता देख अर्जुन ने यशस्वी श्रीकृष्ण से पूछा—

**अनयोर्वीरयोर्युद्धे को ज्यायान् भवतो मतः ।**
**कस्य वा को गुणो भूयानेतद् वद जनार्दन ॥२॥**

"जनार्दन ! आपकी सम्मति में इन दोनों वीरों में से इस रणभूमि में कौन बड़ा है अथवा किसमें कौन-सा गुण अधिक है ? यह मुझे बताइए।"

वासुदेव उवाच

**उपदेशोऽनयोस्तुल्यो भीमस्तु बलवत्तरः ।**
**कृती यत्नपरस्त्वेष धार्तराष्ट्रो वृकोदरात् ॥३॥**

**श्रीकृष्ण बोले**—अर्जुन ! इन दोनों को शिक्षा तो एक-सी मिली है, परन्तु भीमसेन बल में अधिक हैं और दुर्योधन उनकी अपेक्षा अभ्यास और प्रयत्न में बढ़ा-चढ़ा है।

**भीमसेनस्तु धर्मेण युद्धयमानो न जेष्यति ।**
**अन्यायेन तु युध्यन् वै हन्यादेव सुयोधनम् ॥४॥**

यदि भीमसेन धर्मपूर्वक युद्ध करते रहे तो कदापि नहीं जीतेंगे और अन्यायपूर्वक युद्ध करने पर निश्चय ही दुर्योधन का वध कर डालेंगे।

**मायया निर्जिता देवैरसुरा इति नः श्रुतम् ।**
**तस्मान्मायामयं भीम आतिष्ठतु पराक्रमम् ॥५॥**

हमने सुना है कि देवताओं ने पूर्वकाल में माया से ही असुरों पर विजय पाई थी, अतः भीमसेन भी यहाँ मायामय पराक्रम का ही आश्रय लें।

**प्रतिज्ञातं च भीमेन द्यूतकाले धनञ्जय ।**
**ऊरू भेत्स्यामि ते संख्ये गदयेति सुयोधनम् ॥६॥**

धनञ्जय ! जुए के समय भीमसेन ने प्रतिज्ञा करते हुए दुर्योधन से यहा था कि 'मैं युद्ध में गदा मारकर तेरी दोनों जाँघें तोड़ डालूँगा।'

**सोऽयं प्रतिज्ञां तां चाऽपि पालयत्वरिकर्षणः ।**
**मायाविनं तु राजानं माययैव निकृन्ततु ॥७॥**

अतः शत्रुसूदन भीमसेन अपनी उसी प्रतिज्ञा का पालन करें और मायावी राजा दुर्योधन को माया से ही नष्ट कर डालें।

**यद्येष बलमास्थाय न्यायेन प्रहरिष्यति ।**
**विषमस्थस्ततो राजा भविष्यति युधिष्ठिरः ॥८॥**

यदि ये बल का सहारा लेकर न्यायपूर्वक प्रहार करेंगे, तब राजा युधिष्ठिर पुनः अत्यन्त विषम परिस्थिति में पड़ जाएँगे।

**पुनरेव तु वक्ष्यामि पाण्डवेय निबोध मे ।**
**धर्मराजापराधेन भयं नः पुनरागतम् ॥९॥**

पाण्डुनन्दन ! मैं पुनः यह बात कहे देता हूँ, तुम उसे ध्यान देकर सुनो। धर्मराज के अपराध से हम लोगों पर फिर भय आ पहुँचा है।

**अबुद्धिरेषा महती धर्मराजस्य पाण्डव ।**
**यदेकविजये युद्धं पणितं घोरमीदृशम् ॥१०॥**

पाण्डुनन्दन ! एक की ही हार-जीत से सबकी हार-जीत की शर्त लगाकर जो इन्होंने इस भयंकर युद्ध को जुए का दाँव बना डाला, यह धर्मराज की बड़ी भारी नासमझी है।

**सुयोधनः कृती वीर एकायनगतस्तथा ।**
**अपि चोशनसा गीतः श्रूयतेऽयं पुरातनः ॥११॥**

दुर्योधन युद्ध की कला जानता है, वीर है और एक निश्चय पर डटा हुआ है। इस विषय में शुक्राचार्य का कहा हुआ यह प्राचीन श्लोक सुनने में आता है—

**पुनरावर्तमानानां भग्नानां जीवितैषिणाम् ।**
**भेतव्यमरिशेषाणामेकायनगता हि ते ॥१२॥**

"मरने से बचे हुए शत्रुगण यदि युद्ध में जान बचाने की इच्छा से भाग गये हों और पुनः युद्ध के लिए लौटने लगे हों तो उनसे डरते रहना चाहिए, क्योंकि वे एक निश्चय पर पहुँचे हुए होते हैं [उस समय वे मृत्यु से भी नहीं डरते]।"

**साहसोत्पतितानां च निराशानां च जीविते ।**
**न शक्यमग्रतः स्थातुं शक्रेणापि धनञ्जय ।।१३।।**

धनञ्जय ! जो जीवन की आशा छोड़कर साहस-पूर्वक युद्ध में कूद पड़े हों, उनके समक्ष इन्द्र भी नहीं ठहर सकता ।

**एनं चेन्न महाबाहुरन्यायेन हनिष्यति ।**
**एष वः कौरवो राजा धार्तराष्ट्रो भविष्यति ।।१४।।**

यदि महाबाहु भीमसेन इसे अन्यायपूर्वक नहीं मारेंगे तो यह धृतराष्ट्र का पुत्र दुर्योधन ही आपका और समस्त कुरुकुल का राजा होगा ।

सञ्जय उवाच

**धनञ्जयस्तु श्रुत्वैतत् केशवस्य महात्मनः ।**
**प्रेक्षतो भीमसेनस्य सव्यमूरुमताडयत् ।।१५।।**

**सञ्जय कहते हैं**—महात्मा केशव का यह वचन सुनकर अर्जुन ने भीमसेन के देखते हुए अपनी बायीं जाँघ को ठोंका ।

**गृह्य संज्ञां ततो भीमो गदया व्यचरद् रणे ।**
**मण्डलानि विचित्राणि यमकानीतराणि च ।।१६।।**

इससे संकेत पाकर भीमसेन युद्धभूमि में गदा द्वारा यमक और अन्य प्रकार के विचित्र मण्डल दिखाते हुए विचरने लगे ।

**तथैव तव पुत्रोऽपि गदामार्गविशारदः ।**
**व्यचरल्लघु चित्रं च भीमसेनजिघांसया ।।१७।।**

इसी प्रकार गदायुद्ध की प्रणाली का विशेषज्ञ आपका पुत्र भी भीमसेन को मार डालने की इच्छा से शीघ्रतापूर्वक विचित्र पैंतरे लेता हुआ विचरने लगा ।

**अन्योन्यं तौ जिघांसन्तौ प्रवीरौ पुरुषर्षभौ ।**
**युयुधाते गरुत्मन्तौ यथा नागामिषैषिणौ ।।१८।।**

जैसे दो गरुड़ किसी सर्प के मांस को पाने की इच्छा से परस्पर लड़ रहे हों, वैसे ही एक-दूसरे के वध की इच्छावाले वे दोनों पुरुषप्रवर प्रमुख वीर भीमसेन तथा दुर्योधन आपस में जूझ रहे थे ।

**जर्जरीकृतसर्वाङ्गौ रुधिरेणाभिसम्प्लुतौ ।**
**ददृशाते हिमवति पुष्पिताविव किंशुकौ ।।१९।।**

उन दोनों के सारे अङ्ग गदा के प्रहार से जर्जर हो गये थे और वे दोनों ही रक्त से नहा उठे थे । उस अवस्था में वे दोनों हिमालय पर खिले हुए दो पलाश वृक्षों के समान दिखाई देते थे ।

**तस्मिंस्तदा सम्प्रहारे दारुणे संकुले भृशम् ।**
**उभावपि परिश्रान्तौ युध्यमानावरिन्दमौ ।।२०।।**

उस समय उस अत्यन्त भयंकर घमासान युद्ध में शत्रुओं का दमन करनेवाले वे दोनों वीर परस्पर युद्ध करते हुए बहुत थक गये ।

**ततो मुहूर्तमाश्वस्य दुर्योधनमुपस्थितम् ।**
**वेगेनाभ्यपतद् राजन् भीमसेनः प्रतापवान् ।।२१।।**

राजन् ! तत्पश्चात् दो घड़ी सुस्ताकर [वे पुनः युद्ध करने लगे उस समय] प्रतापी भीमसेन ने निकट आये हुए दुर्योधन पर बड़े वेग से आक्रमण किया ।

**तमापतन्तं सम्प्रेक्ष्य संरब्धममितौजसम् ।**
**मोघमस्य प्रहारं तं चिकीर्षुर्भरतर्षभ ।।२२।।**
**अवस्थाने मतिं कृत्वा पुत्रस्तव महामनाः ।**
**इयेषोत्पतितुं राजञ्छलयिष्यन् वृकोदरम् ।।२३।।**

भरतश्रेष्ठ ! अमित तेजस्वी भीमसेन को क्रोध-पूर्वक धावा करते देख आपके पुत्र ने उनके उस प्रहार को व्यर्थ कर देने की इच्छा की । राजन् ! भीमसेन को छलने के लिए आपके महामनस्वी पुत्र ने पहले वहाँ स्थिरतापूर्वक खड़े रहने का विचार करके फिर उछल-कर दूर हट जाने की इच्छा की ।

**अबुद्धयद् भीमसेनस्तु राज्ञस्तस्य चिकीर्षितम् ।**
**अथास्य समभिद्रुत्य समुत्क्रुश्य च सिंहवत् ।।२४।।**
**सृत्या वञ्चयतो राजन् पुनरेवोत्पतिष्यतः ।**
**ऊरुभ्यां प्राहिणोद् राजन् गदां वेगेन पाण्डवः ।।२५।।**

राजन् ! भीमसेन समझ गये कि राजा दुर्योधन क्या करना चाहता है, अतः पैंतरे से ऊपर उछलने की इच्छावाले दुर्योधन के ऊपर आक्रमण करके भीमसेन ने सिंह के समान गर्जना की और उसकी जाँघों पर बड़े वेग से गदा चला दी ।

**सा वज्रनिष्पेषसमा प्रहिता भीमकर्मणा ।**
**ऊरू दुर्योधनस्याथ बभञ्ज प्रियदर्शनौ ।।२६।।**

भयंकर कर्म करनेवाले भीमसेन के द्वारा चलाई हुई वह गदा वज्रपात के समान गिरी और दुर्योधन की सुन्दर दिखाई देनेवाली जाँघों को उसने तोड़ दिया ।

**स पपात नरव्याघ्रो वसुधामनुनादयन् ।**
**भग्नोरुर्भीमसेनेन पुत्रस्तव महीपते ।।२७।।**

पृथिवीनाथ ! इस प्रकार जब भीमसेन ने उसकी जाँघें तोड़ डालीं, तब आपका पुत्र पुरुषसिंह दुर्योधन पृथिवी को प्रतिध्वनित करता हुआ गिर पड़ा ।

**इति महाभारते शल्यपर्वणि अष्टावशोऽध्यायः ।।१८।।**

# एकोनविंशोऽध्याय।

## भीमसेन द्वारा दुर्योधन का तिरस्कार, युधिष्ठिर का भीमसेन को रोकना और दुर्योधन को सान्त्वना देते हुए खेद प्रकट करना

सञ्जय उवाच

**ततो दुर्योधनं हत्वा भीमसेनः प्रतापवान्।**
**पातितं कौरवेन्द्रं तमुपगम्येवमब्रवीत् ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! उस समय दुर्योधन का वध करके प्रतापी भीमसेन उस गिराये गये कौरव-राज के पास जाकर बोले—

**गौर्गौरिति पुरा मन्द द्रौपदीमेकवाससाम्।**
**यत् सभायां हसन्नस्माँस्तदा वदसि दुर्मते।**
**तस्यावहासस्य फलमद्य त्वं समवाप्नुहि ॥२॥**

"खोटी बुद्धिवाले मूर्ख ! तूने पहले मुझे 'बैल-बैल' कहकर और एकवस्त्रधारिणी रजस्वला द्रौपदी को सभा में लाकर जो हम लोगों का उपहास किया था और हम सबके प्रति कटुवचन सुनाये थे, उस उपहास का फल आज तू प्राप्त कर ले।"

**एवमुक्त्वा स वामेन पदा मौलिमुपास्पृशत्।**
**शिरश्च राजसिंहस्य पादेन समलोडयत् ॥३॥**

ऐसा कहकर भीमसेन ने अपने बायें पैर से उसके मुकुट को ठुकराया और उस राजसिंह के मस्तक पर भी पैर से ठोकर मारी।

**तथैव क्रोधसंरक्तो भीमः परबलार्दनः।**
**पुनरेवाब्रवीद् वाक्यं यत्तच्छृणु जनाधिप ॥४॥**

प्रजेश्वर ! इसी प्रकार शत्रुसेना का संहार करनेवाले भीमसेन ने क्रोध से लाल आँखें करके फिर जो बात कही उसे भी सुन लीजिए—

**योऽस्मान् पुरोऽपनृत्यन्त मूढा गौरिति गौरिति।**
**तान् वयं प्रतिनृत्यामः पुनर्गौरिति गौरिति ॥५॥**

"जिन मूर्खों ने पहले हमें 'बैल-बैल' कहकर नृत्य किया था, आज उन्हें 'बैल-बैल' कहकर उस अपमान का बदला लेते हुए हम भी प्रसन्नता से नाच रहे हैं।

**नास्माकं निकृतिर्वह्निर्नाक्षद्यूतं न वञ्चना।**
**स्वबाहुबलमाश्रित्य प्रबाधामो वयं रिपून् ॥६॥**

"छल-कपट करना, घर में आग लगाना, जुआ खेलना अथवा ठगी करना हमारा काम नहीं है। हम तो अपने बाहुबल का भरोसा करके शत्रुओं को सन्ताप देते हैं।"

**तव पुत्रं तथा हत्वा कत्थमानं वृकोदरम्।**
**नृत्यमानं च बहुशो धर्मराजोऽब्रवीदिदम् ॥७॥**

आपके पुत्र को मारकर बहुत बढ़-बढ़कर बातें बनाते और बारम्बार नाचते-कूदते हुए भीमसेन से युधिष्ठिर ने इस प्रकार कहा—

**गतोऽसि वैरस्यानृण्यं प्रतिज्ञा पूरिता त्वया।**
**शुभेनाथाशुभेनैव कर्मणा विरमाधुना ॥८॥**

"हे भीम ! तुम वैर से उऋण हुए। तुमने शुभ अथवा अशुभ कर्म से अपनी प्रतिज्ञा पूरी कर ली। अब इस कार्य से विरत हो जाओ।

**मा शिरोऽस्य पदा मार्दीर्मा धर्मस्तेऽतिगो भवेत्।**
**राजा ज्ञातिर्हतश्चायं नैतन्न्याय्यं तवानघ ॥९॥**

"तुम इसके सिर को पैर से मत ठुकराओ। तुम्हें धर्म का उल्लंघन नहीं करना चाहिए। अनघ ! दुर्योधन राजा और हमारा बन्धु है। यह मार डाला गया, अब तुम्हें इसके साथ ऐसा व्यवहार करना उचित नहीं।

**एकादशचमूनाथं कुरूणामधिपं तथा।**
**मा स्प्राक्षीर्भीम पादेन राजानं ज्ञातिमेव च ॥१०॥**

"भीम ! ग्यारह अक्षौहिणी सेना के स्वामी और अपने ही बन्धु कुरुराज राजा दुर्योधन को पैर से न ठुकराओ।

**हतबन्धुर्हतामात्यो भ्रष्टसैन्यो हतो मृधे।**
**सर्वाकारेण शोच्योऽयं नावहास्योऽयमीश्वरः ॥११॥**

"इसके भाई और मन्त्री मारे गये, सेना नष्ट-भ्रष्ट हो गई, आज यह स्वयं भी युद्ध में मारा गया। ऐसी अवस्था में राजा दुर्योधन सर्वथा शोक के योग्य है, उपहास का पात्र नहीं।

**धार्मिको भीमसेनोऽसावित्याहुस्त्वां पुरा जनाः।**
**स कस्माद् भीमसेन त्वं राजानमधितिष्ठसि ॥१२॥**

"भीम ! तुम्हारे विषय में लोग पहले कहा करते

थे कि भीमसेन बड़े धर्मात्मा हैं। वही तुम आज राजा दुर्योधन को पैर से क्यों ठुकराते हो?"

**इत्युक्त्वा भीमसेनं तु साश्रुकण्ठो युधिष्ठिरः।**
**उपसृत्याब्रवीद् दीनो दुर्योधनमरिन्दमम्॥१३॥**

भीमसेन से ऐसा कहकर राजा युधिष्ठिर दीन-भाव से शत्रुदमन दुर्योधन के पास पहुँचकर अश्रु-गद्गद कण्ठ से इस प्रकार बोले—

**तात मन्युर्न ते कार्यो नात्मा शोच्यस्त्वया तथा।**
**नूनं पूर्वकृतं कर्म सुघोरमनुभूयते॥१४॥**

"तात! तुम्हें खेद अथवा क्रोध नहीं करना चाहिए। साथ ही अपने लिए शोक करना भी उचित नहीं है। निश्चय ही सब लोग पहले किये हुए अत्यन्त भयंकर कर्मों का ही फल भोगते हैं।

**धात्रोपदिष्टं विषमं नूनं फलमसंस्कृतम्।**
**यद् वयं त्वां जिघांसामस्त्वं चास्मान् कुरुसत्तम॥१५॥**

"कुरुश्रेष्ठ! इस समय जो हम लोग तुम्हें और तुम हमें मारना चाहते थे, यह अवश्य ही विधाता का दिया हुआ हमारे ही पाप-कर्मों का विषम फल है।

**आत्मनो ह्यपराधेन महद् व्यसनमीदृशम्।**
**प्राप्तवानसि यल्लोभान्मदाद् बाल्याच्च भारत॥१६॥**

"भरतभूषण! तुमने लोभ, मद और अविवेक के कारण अपने ही अपराध से ऐसा भारी संकट प्राप्त किया है।

**तवापराधादस्माभिर्भ्रातरस्ते निपातिताः।**
**निहता ज्ञातयश्चापि दिष्टं मन्ये दुरत्ययम्॥१७॥**

"तुम्हारे अपराध से ही हम लोगों ने तुम्हारे भाइयों को मारा और कुटुम्बियों को परलोक पठाया है। मैं इसे दैव का दुर्लङ्घ्य विधान ही मानता हूँ।

**आत्मा न शोचनीयस्ते श्लाघ्यो मृत्युस्तवानघ।**
**वयमेवाधुना शोच्याः सर्वावस्थासु कौरव।**
**कृपणं वर्तयिष्यामस्तैर्हीना बन्धुभिः प्रियैः॥१८॥**

"निष्पाप! तुम्हें अपने लिए शोक नहीं करना चाहिए। तुम्हारी तो प्रशंसनीय मृत्यु हो रही है, कुरुराज! अब तो सभी अवस्थाओं में इस समय हमीं लोग शोचनीय हो गये हैं, क्योंकि अपने प्रिय बन्धु-बान्धवों से रहित होकर हमें दीनतापूर्ण जीवन बिताना पड़ेगा।

**भ्रातॄणां चैव पुत्राणां तथा वै शोकविह्वलाः।**
**कथं द्रक्ष्यामि विधवा वधूः शोकपरिप्लुताः॥१९॥**

"भला, मैं भाइयों और पुत्रों की उन शोक-विह्वला और दुःख में डूबी हुई विधवा बहुओं को कैसे देख सकूँगा?

**त्वमेकः सुस्थितो राजन् स्वर्गे ते निलयो ध्रुवः।**
**वयं नरकसंज्ञं वै दुःखं प्राप्स्याम दारुणम्॥२०॥**

"राजन्! तुम अकेले सुखी हो। निश्चय ही तुम्हें स्वर्ग में स्थान मिलेगा और हमें यहाँ नरकतुल्य दारुण दुःख भोगना पड़ेगा।"

**एवमुक्त्वा सुदुःखार्तो निशश्वास स पार्थिवः।**
**विललाप चिरं चापि धर्मपुत्रो युधिष्ठिरः॥२१॥**

राजन्! ऐसा कहकर धर्मपुत्र राजा युधिष्ठिर दुःख से अत्यन्त आतुर होकर लम्बा श्वास छोड़ते हुए बहुत देर तक विलाप करते रहे।

**इति महाभारते शल्यपर्वणि एकोनविंशोऽध्यायः॥१९॥**

# विंशोऽध्यायः

**क्रोध में भरे हुए बलराम को श्रीकृष्ण का समझाना, युधिष्ठिर के साथ श्रीकृष्ण एवं भीमसेन का वार्तालाप**

धृतराष्ट्र उवाच

**अधर्मेण हतं दृष्ट्वा राजानं माधवोत्तमः।**
**कृतवान् रौहिणेयो यत्तन्ममाचक्ष्व सञ्जय॥१॥**

**धृतराष्ट्र ने पूछा**—सञ्जय! राजा दुर्योधन को अधर्मपूर्वक मारा गया देख मधुकुल-शिरोमणि रोहिणीनन्दन बलरामजी ने वहाँ जो कुछ किया वह मुझे बताओ।

सञ्जय उवाच

**शिरस्यभिहतं दृष्ट्वा भीमसेनेन ते सुतम्।**
**रामः प्रहरतां श्रेष्ठश्चुक्रोध बलवद् बली॥२॥**

**सञ्जय ने कहा**—राजन्! भीमसेन के द्वारा आपके पुत्र के मस्तक को पैर से ठुकराया जाता देख योद्धाओं में श्रेष्ठ महाबली बलरामजी अत्यन्त कुपित हुए।

**ततो मध्ये नरेन्द्राणामूर्ध्वबाहुर्हलायुधः ।**
**कुर्वन्नार्तस्वरं घोरं धिग् धिग् भीमेत्युवाच ह ।।३।।**

फिर वहाँ राजाओं की मण्डली में अपनी दोनों भुजाएँ उठाकर हलधर बलराम ने भयंकर आर्तनाद करते हुए कहा, "भीम ! तुम्हें धिक्कार है ! धिक्कार है ! !

**अहो धिक् यदधो नाभेः प्रहृतं धर्मविग्रहे ।**
**नैतद् दृष्टं गदायुद्धे कृतवान् यद् वृकोदरः ।।४।।**

"अहो ! इस धर्मयुद्ध में नाभि से नीचे जो प्रहार किया गया है और जिसे भीमसेन ने स्वयं किया है, वह गदायुद्ध में कभी नहीं देखा गया ।

**अधो नाभ्या न हन्तव्यमिति शास्त्रस्य निश्चयः ।**
**अयं त्वशास्त्रविन्मूढः स्वच्छन्दात् सम्प्रवर्तते ।।५।।**

"नाभि से नीचे आघात नहीं करना चाहिए—यह गदायुद्ध के सम्बन्ध में शास्त्र का सिद्धान्त है। परन्तु यह शास्त्रज्ञान से शून्य मूर्ख भीमसेन यहाँ स्वेच्छाचार कर रहा है ।

**न चैष पतितः कृष्ण केवलं मत्समोऽसमः ।**
**आश्रितस्य तु दौर्बल्यादाश्रयः परिभत्स्यते ।।६।।**

"श्रीकृष्ण ! राजा दुर्योधन मेरे समान बलवान् था । गदायुद्ध में उसकी समानता करनेवाला कोई न था । यहाँ अन्याय करके केवल दुर्योधन ही नहीं गिराया गया है [मेरा भी अपमान किया गया है], शरणागत की दुर्बलता के कारण शरण देनेवाले का तिरस्कार किया जा रहा है ।"

**ततो लाङ्गलमुद्यम्य भीमसभ्यद्रवद् बली ।**
**तमुत्पतन्तं जग्राह केशवो विनयान्वितः ।।७।।**

ऐसा कहकर महाबली बलराम अपना हल उठाकर भीमसेन की ओर दौड़े। उस समय विनयशील श्रीकृष्ण ने आक्रमण करते हुए बलरामजी को पकड़कर रोका ।

**उवाच चैनं संरब्धं शमयन्निव केशवः ।**
**आत्मवृद्धिर्मित्रवृद्धिर्मित्रमित्रोदयस्तथा ।**
**विपरीतं द्विषत्स्वेतत् षड्विधा वृद्धिरात्मनः ।।८।।**

उस समय श्रीकृष्ण ने कुपित हुए बलरामजी को शान्त करते हुए-से कहा—"भैया ! अपनी उन्नति छह प्रकार की होती है—अपनी वृद्धि, मित्र की वृद्धि तथा मित्र के मित्र की वृद्धि और शत्रुपक्ष में इसके विपरीत स्थिति अर्थात् शत्रु की हानि, शत्रु के मित्र की हानि और शत्रु के मित्र के मित्र की हानि ।

**आत्मन्यपि च मित्रे च विपरीतं यदा भवेत् ।**
**तदा विद्यान्मनोग्लानिमाशु शान्तिकरो भवेत् ।।९।।**

"अपनी और अपने मित्र की यदि इसके विपरीत परिस्थिति हो तो मन-ही-मन ग्लानि का अनुभव करना चाहिए और मित्रों की उस हानि के निवारण के लिए शीघ्र प्रयत्नशील होना चाहिए ।

**सहजमित्राण्यस्माकं पाण्डवाः शुद्धपौरुषाः ।**
**स्वकाः पितृष्वसुः पुत्रास्ते परैर्निकृता भृशम् ।।१०।।**

"शुद्ध पुरुषार्थ का आश्रय लेनेवाले पाण्डव हमारे सहज मित्र हैं। बुआ के पुत्र होने के कारण सर्वथा अपने हैं। शत्रुओं ने इनके साथ बहुत छल-कपट किया था।

**प्रतिज्ञापालनं धर्मः क्षत्रियस्येह वेद्म्यहम् ।**
**सुयोधनस्य गदया भङ्क्तास्म्यूरू महाहवे ।।११।।**
**इति पूर्वं प्रतिज्ञातं भीमेन हि सभातले ।**
**अतो दोषं न पश्यामि मा क्रुद्धयस्व प्रलम्बहन् ।।१२।।**

"मैं समझता हूँ कि इस संसार में अपनी प्रतिज्ञा का पालन करना क्षत्रिय के लिए धर्म ही है । पहले सभा में भीमसेन ने यह प्रतिज्ञा की थी कि 'मैं महासमर में अपनी गदा से दुर्योधन की दोनों जाँघें तोड़ डालूँगा', अतः प्रलम्बहन्ता बलरामजी ! मैं इसमें भीमसेन का कोई दोष नहीं देखता । आप भी क्रोध न करें ।

**यौनैः स्वैः सुखहार्देश्च सम्बन्धः सह पाण्डवैः ।**
**तेषां वृद्ध्या हि वृद्धिर्नो मा क्रुधः पुरुषर्षभ ।।१३।।**

"पुरुषप्रवर ! हमारा पाण्डवों के साथ यौन सम्बन्ध तो है ही, परस्पर सुख देनेवाले सौहार्द से भी हम लोग बँधे हुए हैं। इन पाण्डवों की वृद्धि से हमारी भी वृद्धि है, अतः आप क्रोध न करें ।

**वासुदेववचः श्रुत्वा सीरभृत् प्राह धर्मवित् ।**
**धर्मः सुचरितः सद्भिः स च द्वाभ्यां नियच्छति ।।१४।।**

श्रीकृष्ण की यह बात सुनकर धर्मज्ञ हलधर ने इस प्रकार कहा—"श्रीकृष्ण ! श्रेष्ठ पुरुषों ने धर्म का भली प्रकार आचरण किया है किन्तु वह अर्थ

और काम—इन दो वस्तुओं से संकुचित हो जाता है।

**अर्थश्चात्यर्थलुब्धस्य कामश्चातिप्रसङ्गिणः ।**
**धर्मार्थौ धर्मकामौ च कामार्थौ चाप्यपीडयन् ।**
**धर्मार्थकामान् योऽभ्येति सोऽत्यन्तं सुखमश्नुते ॥१५॥**

"अत्यन्त लोभी का अर्थ और अधिक आसक्ति रखनेवाले का काम—ये दोनों ही धर्म को हानि पहुँचाते हैं। जो मनुष्य काम से धर्म और अर्थ को, अर्थ से धर्म और काम को तथा धर्म से अर्थ और काम को हानि न पहुँचाकर धर्म, अर्थ और काम—तीनों का यथोचित रूप से सेवन करता है, वह अत्यन्त सुख का भागी होता है।

**तदिदं व्याकुलं सर्वं कृतं धर्मस्य पीडनात् ।**
**भीमसेनेन गोविन्द कामं त्वं तु यथाऽऽत्थ माम् ॥१६॥**

"गोविन्द ! भीमसेन ने [अर्थ के लोभ से] धर्म को हानि पहुँचाकर इन सबको विकृत कर दिया है। तुम मुझसे इस कार्य को जिस प्रकार धर्म-संगत बता रहे हो, वह सब तुम्हारी मनमानी कल्पना है।"

श्रीकृष्ण उवाच

**अरोषणो हि धर्मात्मा सततं धर्मवत्सलः ।**
**भवान् प्रख्यायते लोके तस्मात् संशाम्य मा क्रुधः ॥१७**

**श्रीकृष्ण बोले**—भैया ! आप संसार में क्रोध-रहित, धर्मात्मा और निरन्तर धर्म पर अनुग्रह रखने-वाले सत्पुरुष के रूप में प्रसिद्ध हैं, अतः शान्त हो जाइए, क्रोध मत कीजिए।

**प्राप्तं कलियुगं विद्धि प्रतिज्ञां पाण्डवस्य च ।**
**आनृण्यं यातु वैरस्य प्रतिज्ञायाश्च पाण्डवः ॥१८॥**

समझ लीजिए कि कलियुग आ गया। पाण्डुपुत्र भीमसेन की प्रतिज्ञा पर भी ध्यान दीजिए। आज पाण्डुकुमार भीम वैर और प्रतिज्ञा के ऋण से मुक्त हो जाएँ।

सञ्जय उवाच

**धर्मच्छलमपि श्रुत्वा केशवात् स विशाम्पते ।**
**नैव प्रीतमना रामो वचनं प्राह संसदि ॥१९॥**

**सञ्जय कहते हैं**—नरेश्वर ! श्रीकृष्ण से यह छलरूप धर्म का विवेचन सुनकर बलदेवजी के मन को सन्तोष नहीं हुआ। उन्होंने भरी सभा में कहा—

**हत्वाधर्मेण राजानं धर्मात्मानं सुयोधनम् ।**
**जिह्मयोधीति लोकेऽस्मिन्ख्यातिं यास्यति पाण्डवः ॥२०**

"धर्मात्मा राजा दुर्योधन को अधर्मपूर्वक मारकर पाण्डुपुत्र भीमसेन इस संसार में कपटपूर्ण युद्ध करने-वाले योद्धा के रूप में विख्यात होंगे।

**दुर्योधनोऽपि धर्मात्मा गतिं यास्यति शाश्वतीम् ।**
**ऋजुयोधी हतो राजा धार्तराष्ट्रो नराधिपः ॥२१**

"धृतराष्ट्र का पुत्र धर्मात्मा राजा दुर्योधन सर-लता से युद्ध कर रहा था, वह उस दशा में मारा गया है, अतः वह सनातन सद्गति को प्राप्त होगा।"

**इत्युक्त्वा रथमास्थाय रौहिणेयः प्रतापवान् ।**
**श्वेताभ्रशिखराकारः प्रययौ द्वारकां प्रति ॥२२॥**

ऐसा कहकर प्रतापी रोहिणीनन्दन बलरामजी, जो श्वेत बादलों के अग्रभाग की भाँति गौर कान्ति से सुशोभित हो रहे थे, रथ पर आरूढ़ हो द्वारका की ओर चल दिये।

**रामे द्वारावतीं याते चिन्तापरमधोमुखम् ।**
**प्रोवाच भीमसेनोऽपि धर्मराजं युधिष्ठिरम् ॥२३॥**

राजन् ! बलरामजी के द्वारका चले जाने पर भीमसेन ने चिन्ता में डूबे हुए धर्मराज युधिष्ठिर से कहा—

**तवाद्य पृथिवी सर्वा क्षेमा निहतकण्टका ।**
**तां प्रशाधि महाराज स्वधर्ममनुपालय ॥२४॥**

"महाराज ! आज यह सारी पृथिवी आपकी हो गई। इसके काँटे नष्ट कर दिये गये, अतः यह मङ्गलमयी हो गई है। आप इसका शासन और अपने धर्म का पालन कीजिए।"

इति महाभारते शल्यपर्वणि विंशोऽध्यायः ॥२०॥

# एकविंशोऽध्यायः

## पाण्डव-सैनिकों द्वारा भीम की स्तुति, श्रीकृष्ण का दुर्योधन पर आक्षेप, दुर्योधन का उत्तर

धृतराष्ट्र उवाच

**हतं दुर्योधनं दृष्ट्वा भीमसेनेन संयुगे।**
**पाण्डवाः सृञ्जयाश्चैव किमकुर्वत सञ्जय ॥१॥**

**धृतराष्ट्र ने पूछा**—सञ्जय! रणभूमि में भीमसेन के द्वारा दुर्योधन को मारा गया देख पाण्डवों और सृञ्जयों ने क्या किया?

सञ्जय उवाच

**पाञ्चालाः सृञ्जयाश्चैवः निहते कुरुनन्दने।**
**आविद्धयन्नुत्तरीयाणि सिंहनादांश्च नेदिरे ॥२॥**

**सञ्जय बोले**—राजन्! कुरुनन्दन दुर्योधन के मारे जाने पर पाञ्चाल और सृञ्जय अपने दुपट्टे उछालने और सिंहनाद करने लगे।

**धनूंष्यन्ये व्यक्षिपन्त ज्याश्चाप्यन्ये तथाक्षिपन्।**
**दध्मुरन्ये महाशंखानन्ये जघ्नुश्च दुन्दुभीन् ॥३॥**

किसी ने धनुष टंकारा, किसी ने प्रत्यञ्चा खींची, कुछ लोग बड़े-बड़े शंख बजाने लगे और दूसरे बहुत-से सैनिक डंके पीटने लगे।

**चिक्रीडुश्च तथैवान्ये जहसुश्च तवाहिताः।**
**अब्रुवंश्चासकृद् वीरा भीमसेनमिदं वचः ॥४॥**

आपके बहुत-से शत्रु भाँति-भाँति के खेल खेलने और हास-परिहास करने लगे। कितने ही वीर भीमसेन के पास जाकर इस प्रकार कहने लगे—

**दुष्करं भवता कर्म रणेऽद्य सुमहत् कृतम्।**
**कौरवेन्द्रं रणे हत्वा गदयातिकृतश्रमम् ॥५॥**

"कौरवराज दुर्योधन ने गदायुद्ध में बड़ा भारी परिश्रम किया था। आज युद्धभूमि में उसका वध करके आपने महान् एवं दुष्कर पराक्रम कर दिखाया है।

**कुञ्जरेणेव मत्तेन वीर संग्राममूर्धनि।**
**दुर्योधनशिरो दिष्टया पादेन मृदितं त्वया ॥६॥**

"वीर! मतवाले गजराज की भाँति आपने युद्ध के मुहाने पर अपने पैर से दुर्योधन के मस्तक को कुचल दिया है, यह बड़े सौभाग्य की बात है।

**सिंहेन महिषस्येव कृत्वा सङ्गरमुत्तमम।**
**दुःशासनस्य रुधिरं दिष्टया पीतं त्वयानघ ॥७॥**

"निष्पाप! जैसे सिंह ने भैंसे का रक्तपान कर लिया हो, वैसे ही आपने महान् युद्ध ठानकर दुःशासन के रक्त का पान किया है, यह भी सौभाग्य की ही बात है।

**ये विप्रकुर्वन् राजानं धर्मात्मानं युधिष्ठिरम्।**
**मूर्ध्नि तेषां कृतः पादो दिष्टया ते स्वेन कर्मणा ॥८॥**

"जिन लोगों ने धर्मात्मा राजा युधिष्ठिर का अपराध किया था, उन सबके मस्तक पर आपने अपने पराक्रम द्वारा पैर रख दिया, यह कितने सौभाग्य की बात है!"

**तान्हृष्टान्पुरुषव्याघ्रान्पाञ्चालान्पाण्डवैः सह।**
**ब्रुवतोऽसदृशं तत्र प्रोवाच मधुसूदनः ॥९॥**

श्रीकृष्ण ने जब देखा कि पुरुषसिंह पाञ्चाल और पाण्डव अयोग्य बातें कह रहे हैं, तब वे वहाँ उन सबसे बोले—

**न न्याय्यं निहतं शत्रुं भूयो हन्तुं नराधिपाः।**
**असकृद् वाग्भिरुग्राभिर्निहतो ह्येष मन्दधीः ॥१०॥**

"भूपालो! मरे हुए शत्रु को पुनः मारना उचित नहीं है। तुम लोगों ने इस मन्दबुद्धि दुर्योधन को बारम्बार कठोर वचनों द्वारा घायल किया है।

**तदैवैष हतः पापो यदैव निरपत्रपः।**
**लुब्धः पापसहायश्च सुहृदां शासनातिगः ॥११॥**

"यह निर्लज्ज पापी तो उसी समय मर चुका था जब लोभ में फँसकर और पापियों को अपना सहायक बनाकर सुहृदों के शासन से दूर रहने लगा था।

**नैष योग्योऽद्य मित्रं वा शत्रुर्वा पुरुषाधमः।**
**किमनेनातिभुग्नेन वाग्भिः काष्ठसधर्मणा ॥१२॥**

"यह नराधम अब किसी योग्य नहीं है। न यह किसी का मित्र है और न शत्रु। यह तो सूखे काष्ठ के समान है। इसे कटुवचनों से अधिक झुकाने की चेष्टा करने से क्या लाभ?"

**इति श्रुत्वा त्वधिक्षेपं कृष्णाद् दुर्योधनो नृपः।**
**अमर्षवशमापन्न उदतिष्ठद् विशाम्पते ॥१३॥**

**स्फिग्देशेनोपविष्टः स दोर्भ्यां विष्टभ्य मेदिनीम् ।**
**दृष्टिं भ्रूसङ्कटां कृत्वा वासुदेवे न्यपातयत् ॥१४॥**

नरेश्वर ! श्रीकृष्ण के मुख से ये आक्षेप-युक्त वचन सुनकर राजा दुर्योधन अमर्ष के वशीभूत होकर उठा और दोनों हाथ पृथिवी पर टेककर नितम्बों के सहारे बैठ गया, फिर उसने श्रीकृष्ण की ओर भौहें टेढ़ी करके देखा ।

**प्राणान्तकारिणीं घोरां वेदनामप्यचिन्तयन् ।**
**दुर्योधनो वासुदेवं वाग्भिरुग्राभिरार्दयत् ॥१५॥**

उसे प्राणों का अन्त कर देनेवाली भयंकर वेदना हो रही थी, तो भी उसकी परवाह न करते हुए दुर्योधन ने अपने कठोर वचनों द्वारा वसुदेवनन्दन श्रीकृष्ण को पीड़ा देना प्रारम्भ किया ।

**कंसदासस्य दायाद न ते लज्जास्त्यनेन वै ।**
**अधर्मेण गदायुद्धे यदहं विनिपातितः ॥१६॥**

"ओ कंस के दास के पुत्र ! मैं जो गदायुद्ध में अधर्म से मारा गया हूँ, इस कुकृत्य के कारण क्या तुम्हें लज्जा नहीं आती ?

**ऊरू भिन्धीति भीमस्य स्मृतिं मिथ्या प्रयच्छता ।**
**किं न विज्ञातमेतन्मे यदर्जुनमवोचथाः ॥१७॥**

"भीमसेन को मेरी जाँघें तोड़ने का मिथ्या स्मरण दिलाते हुए तुमने अर्जुन से जो कुछ कहा था, क्या वह मुझे ज्ञात नहीं है ?

**घातयित्वा महीपालानृजुयुद्धान् सहस्रशः ।**
**जिह्मैरुपायैर्बहुभिर्न ते लज्जा न ते घृणा ॥१८॥**

"सरलता से धर्मानुकूल युद्ध करनेवाले सहस्रों भूपालों को बहुत-से कुटिल उपायों द्वारा मरवाकर न तुम्हें लज्जा आती है और न बुरे कर्म से घृणा होती है ।

**अहन्यहनि शूराणां कुर्वाणः कदनं महत् ।**
**शिखण्डिनं पुरस्कृत्य घातितस्ते पितामहः ॥१९॥**

"जो प्रतिदिन शूरवीरों का भारी संहार कर रहे थे, उन पितामह भीष्म का तुमने शिखण्डी को आगे रखकर वध कराया ।

**अश्वत्थाम्नः सनामानं हत्वा नागं सुदुर्मते ।**
**आचार्यो न्यासितः शस्त्रं किं तन्न विदितं मया ॥२०॥**

"दुर्मते ! अश्वत्थामा के सदृश नामवाले एक हाथी को मारकर तुम लोगों ने द्रोणाचार्य के हाथ से शस्त्र नीचे डलवा दिये थे, क्या वह मुझे ज्ञात नहीं है ?

**छिन्नहस्तः प्रायगतस्तथा भूरिश्रवा बली ।**
**त्वयाभिसृष्टेन हतः शैनेयेन महात्मना ॥२१॥**

"बलवान् भूरिश्रवा का हाथ कट गया था और वे आमरण अनशन का व्रत लेकर बैठे हुए थे । उस अवस्था में तुमसे ही प्रेरित होकर महामना सात्यकि ने उनका वध किया ।

**पुनश्च पतिते चक्रे व्यसनार्तः पराजितः ।**
**पातितः समरे कर्णश्चक्रव्यग्रोऽग्रणीर्नृणाम् ॥२२॥**

"फिर जब कर्ण के रथ का पहिया गढ़े में गिर गया और वह उसे उठाने में व्यग्रतापूर्वक संलग्न हुआ, उस समय उसे संकट से पीड़ित एवं पराजित जानकर तुम लोगों ने मार डाला ।

**यदि मां चापि कर्णं च भीष्मद्रोणौ च संयुतौ ।**
**ऋजुना प्रतियुध्येथा न ते स्याद् विजयो ध्रुवम् ॥२३॥**

"यदि मेरे, कर्ण के तथा भीष्म और द्रोणाचार्य के साथ मायारहित, सरलभाव से तुम युद्ध करते तो निश्चय ही तुम्हारे पक्ष की विजय नहीं होती ।

**त्वया पुनरनार्येण जिह्ममार्गेण पार्थिवाः ।**
**स्वधर्ममनुतिष्ठन्तो वयं चान्ये च घातिताः ॥२४॥**

"परन्तु तुम-जैसे अनार्य ने कुटिल मार्ग का सहारा लेकर स्वधर्मपालन में लगे हुए हम लोगों का तथा दूसरे राजाओं का भी वध करवाया है ।"

वासुदेव उवाच

**हतस्त्वमसि गान्धारे सभ्रातृसुतबान्धवः ।**
**सगणः ससुहृच्चैव पापं मार्गमनुष्ठितः ॥२५॥**
**तवैव दुष्कृतैर्वीरौ भीष्मद्रोणौ निपातितौ ।**
**कर्णश्च निहतः संख्ये तव शीलानुवर्तकः ॥२६॥**

**श्रीकृष्ण बोले**—गान्धारीनन्दन ! तुमने पाप के मार्ग पर पैर रखा था, अतः तुम भाई, पुत्र, बान्धव, सेवक और सुहृद्गणोंसहित मारे गये हो । वीर भीष्म और द्रोणाचार्य भी तुम्हारे दुष्कर्मों से ही मारे गये हैं । कर्ण भी तुम्हारे स्वभाव का ही अनुसरण करनेवाला था, अतः वह भी युद्ध में मारा गया ।

**याच्यमानं मया मूढ पित्र्यमंशं न दित्ससि ।**
**पाण्डवेभ्यः स्वराज्यं च लोभाच्छकुनिनिश्चयात् ॥२७॥**

ओ मूर्ख ! तुम शकुनि की सलाह मानकर मेरे माँगने पर भी पाण्डवों को उनकी पैतृकसम्पत्ति, उनका अपना राज्य लोभवश नहीं देना चाहते थे ।

**विषं ते भीमसेनाय दत्तं सर्वे च पाण्डवाः ।**
**प्रदीपिता जतुगृहे मात्रा सह सुदुर्मते ॥२८॥**
**सभायां याज्ञसेनी च कृष्टा द्यूते रजस्वला ।**
**तदैव तावद् दुष्टात्मन् वध्यस्त्वं निरपत्रप ॥२९॥**

ओ खोटी बुद्धिवाले ! तुमने जब भीमसेन को विष दिया, समस्त पाण्डवों को उनकी माता के साथ लाक्षागृह में जला डालने का प्रयत्न किया और निर्लज्ज ! दुष्टात्मन् ! द्यूतक्रीड़ा के समय जब तुम लोग भरी-सभा में रजस्वला द्रौपदी को घसीट लाये थे, तभी तुम वध के योग्य हो गये थे ।

**अनक्षज्ञं च धर्मज्ञं सौबलेनाक्षवेदिना ।**
**निकृत्या यत् पराजैषीस्तस्मादसि हतो रणे ॥३०॥**

तुमने द्यूतक्रीड़ा के जानकार सुबलपुत्र शकुनि के द्वारा उस कला को न जाननेवाले धर्मज्ञ युधिष्ठिर को जो छल से पराजित किया था, उसी पाप से तुम युद्धभूमि में मारे गये हो ।

**अभिमन्युश्च यद् बाल एको बहुभिराहवे ।**
**त्वद्दोषैर्निहतः पाप तस्मादसि हतो रणे ॥३१॥**

पापात्मन् ! तुम्हारे ही अपराध से बहुत-से योद्धाओं ने मिलकर जो अकेले बालक अभिमन्यु का वध किया था, इन्हीं सब कारणों से आज तुम भी युद्धभूमि में मारे गये हो ।

**यान्यकार्याणि चास्माकं कृतानीति प्रभाषसे ।**
**वैगुण्येन तवात्यर्थं सर्वं हि तदनुष्ठितम् ॥३२॥**

तुम जिन्हें हमारे किये हुए अनुचित कार्य बता रहे हो, वे सब तुम्हारे महान् दोष से ही किये गये हैं ।

**बृहस्पतेरुशनसो नोपदेशः श्रुतस्त्वया ।**
**वृद्धा नोपासिताश्चैव हितं वाक्यं न ते श्रुतम् ॥३३॥**

तुमने बृहस्पति और शुक्राचार्य के नीति-सम्बन्धी उपदेशों को नहीं सुना है, बड़े-बूढ़ों की उपासना=सत्सङ्ग नहीं की है और उनके हितकर वचन भी नहीं सुने हैं ।

**लोभेनातिबलेन त्वं तृष्णया च वशीकृतः ।**
**कृतवानस्यकार्याणि विपाकस्तस्य भुज्यताम् ॥३४॥**

तुमने अत्यन्त प्रबल लोभ और तृष्णा के वशीभूत होकर न करने योग्य कार्य किये हैं, अतः अब तुम उनका परिणाम भोगो ।

दुर्योधन उवाच

**अधीतं विधिवद् दत्तं भूः प्रशास्ता ससागरा ।**
**मूर्ध्नि स्थितममित्राणां को नु स्वन्ततरो मया ॥३५॥**

**दुर्योधन बोला**—मैंने विधिपूर्वक वेद अध्ययन किया, दान दिये, समुद्रोंसहित पृथिवी का शासन किया और शत्रुओं के मस्तक पर पैर रखकर खड़ा रहा, मेरे समान उत्तम अन्त किसका हुआ है ?

**यदिष्टं क्षत्रबन्धूनां स्वधर्ममनुपश्यताम् ।**
**तदिदं निधनं प्राप्तं को नु स्वन्ततरो मया ॥३६॥**

अपने धर्म पर दृष्टि रखनेवाले क्षत्रिय-बन्धुओं को जो अभीष्ट है, वैसी ही मृत्यु मुझे प्राप्त हुई है, अतः मुझसे अच्छा अन्त और किसका हुआ है ?

**विषादो मे न भीमेन पादेन शिर आहतम् ।**
**काका वा कङ्कगृध्रा वा निधास्यन्ति पदं क्षणात् ॥३७॥**

भीम ने अपने पैर से जो मेरे सिर को ठुकराया है, इसका भी मुझे दुःख नहीं है, क्योंकि अभी क्षण-भर पश्चात् कौए, कङ्क तथा गीध भी तो इस शरीर पर अपने पञ्जे गाड़ेंगे ।

**इति महाभारते शल्यपर्वणि एकविंशोऽध्यायः ॥२१॥**

# द्वाविंशोऽध्यायः

## पाण्डवों का शिबिर में पहुँचना, युधिष्ठिर की प्रेरणा से श्रीकृष्ण का हस्तिनापुर में जाकर धृतराष्ट्र और गान्धारी को आश्वासन देना

सञ्जय उवाच

**हृष्टा दुर्योधनं दृष्ट्वा निहतं पुरुषर्षभ ।**
**ततस्ते प्रययुः सर्वे निवासाय महीक्षितः ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—पुरुषप्रवर ! दुर्योधन को मारा गया देख सभी नरेश हर्ष में भरकर शिबिर में विश्राम करने के लिए चल दिये ।

**ततस्ते प्राविशन् पार्था हतत्विट्कं हतेश्वरम् ।**
**दुर्योधनस्य शिबिरं रङ्गवद्विसृते जने ॥२॥**

वहाँ पहुँचकर सर्वप्रथम कुन्ती के पुत्रों ने दुर्योधन के शिबिर में प्रवेश किया जो दर्शकों के चले जाने पर सूने रङ्गमण्डप के समान शोभाहीन दिखाई देता था ।

**शिबिरं समनुप्राप्य कुरुराजस्य पाण्डवाः ।**
**अवतेरुर्महाराज रथेभ्यो रथसत्तमाः ॥३॥**

महाराज ! कुरुराज के शिबिर में पहुँचकर रथियों में श्रेष्ठ पाण्डव अपने रथों से नीचे उतरे ।

**प्रविश्य प्रत्यपद्यन्त कोशरत्नर्द्धिसंचयान् ।**
**रजतं जातरूपं च मणीनथ च मौक्तिकान् ॥४॥**

राजन् ! शिबिर में प्रवेश करके उन्होंने चाँदी, सोना, मोती, मणि, खजाना, रत्नों के ढेर और भण्डार-घर पर अधिकार कर लिया ।

**ते प्राप्य धनमक्षय्यं त्वदीयं भरतर्षभ ।**
**उदक्रोशन्महाभागा नरेन्द्र विजितारयः ॥५॥**

भरतश्रेष्ठ ! जनेश्वर ! आपके धन का अक्षय भण्डार पाकर शत्रुविजेता महाभाग पाण्डव जोर-जोर से हर्षध्वनि करने लगे ।

**ते तु वीराः समाश्वस्य वाहनान्यवमुच्य च ।**
**अतिष्ठन्त मुहुः सर्वे पाण्डवाः सात्यकिस्तथा ॥६॥**

वे सभी वीर अपने वाहनों को खोलकर वहीं विश्राम करने लगे । समस्त पाण्डव और सात्यकि वहाँ एकसाथ बैठे हुए थे ।

**अथाब्रवीन्महाराज वासुदेवो महायशाः ।**
**अस्माभिर्मङ्गलार्थाय वस्तव्यं शिबिराद् बहिः ॥७॥**

महाराज ! उस समय महायशस्वी वसुदेवनन्दन श्रीकृष्ण ने कहा—"आज की रात्रि में हम लोगों को अपने मङ्गल के लिए शिबिर से बाहर ही रहना चाहिए ।"

**तथेत्युक्त्वा हि ते सर्वे पाण्डवाः सात्यकिस्तथा ।**
**वासुदेवेन सहिता मङ्गलार्थं बहिर्ययुः ॥८॥**

तब 'बहुत अच्छा' कहकर समस्त पाण्डव और सात्यकि श्रीकृष्ण के साथ अपने मङ्गल के लिए शिबिर से बाहर चले गये ।

**ते समासाद्य सरितं पुण्यामोघवतीं नृप ।**
**न्यवसन्नथ रात्रिं तां पाण्डवा हतशत्रवः ॥९॥**

राजन् ! जिनके शत्रु मारे गये थे, उन पाण्डवों ने उस रात में पुण्यसलिला ओघवती नदी के तट पर जाकर निवास किया ।

**हतं दुर्योधनं दृष्ट्वा भीमसेनेन संयुगे ।**
**युधिष्ठिरं महाराज महद् भयमथाविशत् ॥१०॥**

हे महाराज ! उस समय दुर्योधन को भीमसेन द्वारा [अन्यायपूर्वक] मारा गया देख युधिष्ठिर के मन में बड़ा भारी भय समा गया ।

**चिन्तयानो महाभागां गान्धारीं तपसान्विताम् ।**
**घोरेण तपसा युक्तां त्रैलोक्यमपि सा दहेत् ॥११**

वे घोर तपस्या से युक्त महाभागा तपस्विनी गान्धारीदेवी का चिन्तन करने लगे । उन्होंने सोचा—'गान्धारीदेवी क्रुद्ध होने पर तीनों लोकों को जलाकर भस्म कर सकती हैं ।'

**तस्य चिन्तयमानस्य बुद्धिः समभवत्तदा ।**
**गान्धार्याः क्रोधदीप्तायाः पूर्वं प्रशमनं भवेत् ॥१२॥**

सोचते-सोचते उस समय राजा युधिष्ठिर के हृदय में यह विचार उत्पन्न हुआ कि पहले क्रोध से प्रज्वलित गान्धारीदेवी को शान्त कर देना चाहिए ।

**सा हि पुत्रवधं श्रुत्वा कृतमस्माभिरीदृशम् ।**
**मानसेनाग्निना क्रुद्धा भस्मसान्नः करिष्यति ॥१३॥**

वे हम लोगों द्वारा अन्यायपूर्वक पुत्र का वध किया गया सुनकर क्रुद्ध हो अपनी सङ्कल्पजनित

अग्नि से हमें भस्म कर डालेंगी ।

**एवं विचिन्त्य बहुधा भयशोकसमन्वितः ।**
**वासुदेवमिदं वाक्यं धर्मराजोऽभ्यभाषत ॥१४॥**

इस प्रकार अनेक प्रकार से विचार करके धर्मराज युधिष्ठिर भय एवं शोक में डूब गये और वसुदेव-नन्दन श्रीकृष्ण से बोले—

**तव प्रसादाद् गोविन्द राज्यं निहतकण्टकम् ।**
**अप्राप्यं मनसापीदं प्राप्तमस्माभिरच्युत ॥१५॥**

"गोविन्द ! अच्युत ! जिसे मन के द्वारा भी प्राप्त करना असम्भव था, वही यह निष्कण्टक राज्य हमें आपकी कृपा से प्राप्त हो गया ।

**सन्देहदोलां प्राप्तं नश्चेतः कृष्ण जये सति ।**
**गान्धार्या हि महाबाहो क्रोधं बुद्ध्यस्व माधव ॥१६॥**

"परन्तु कृष्ण ! आज विजय हो जाने पर भी हमारा मन सन्देह के झूले पर झूल रहा है । महाबाहु माधव ! आप गान्धारीदेवी के क्रोध पर तो ध्यान दीजिए ।

**सा हि नित्यं महाभागा तपसोग्रेण कर्शिता ।**
**पुत्रपौत्रवधं श्रुत्वा ध्रुवं नः सम्प्रधक्ष्यति ॥१७॥**

"महाभागा गान्धारी प्रतिदिन उग्र तपस्या से अपने शरीर को दुर्बल करती जा रही हैं । वे पुत्रों और पौत्रों का वध हुआ सुनकर निश्चय ही हमें भस्म कर डालेंगी ।

**तस्याः प्रसादनं वीर प्राप्तकालं मतं मम ।**
**तत्र मे गमनं प्राप्तं रोचते तव माधव ॥१८॥**

"वीर ! इस समय मुझे उन्हें प्रसन्न करने का कार्य ही समयोचित प्रतीत होता है और उन्हें शान्त करने के लिए आपका वहाँ जाना ही मुझे उचित जान पड़ता है ।"

**वचनं धर्मराजस्य श्रुत्वा यदुकुलोद्वहः ।**
**जगाम हास्तिनपुरं त्वरितः केशवो विभुः ॥१९॥**

धर्मराज युधिष्ठिर की यह बात सुनकर यदुकुल-भूषण भगवान् श्रीकृष्ण तुरन्त ही हस्तिनापुर की ओर चल दिये ।

**प्रविश्य नगरं वीरो सोऽवतीर्य रथोत्तमात् ।**
**अभ्यगच्छददीनात्मा धृतराष्ट्रनिवेशनम् ॥२०॥**

नगर में प्रविष्ट होकर वीर श्रीकृष्ण अपने उत्तम रथ से उतरकर मन में दीनता न लाते हुए धृतराष्ट्र के महल में गये ।

**पादौ प्रपीड्य कृष्णस्य राज्ञश्चापि जनार्दनः ।**
**अभ्यवादयदव्यग्रो गान्धारीं चापि केशवः ॥२१॥**

महर्षि व्यास [जो वहाँ पहले ही विद्यमान थे] और राजा धृतराष्ट्र दोनों के चरण स्पर्श कर जनार्दन श्रीकृष्ण ने बिना किसी घबराहट के गान्धारीदेवी को प्रणाम किया ।

**ततस्तु यादवश्रेष्ठो धृतराष्ट्रमधोक्षजः ।**
**पाणिमालम्ब्य राजेन्द्र सुस्वरं प्ररुरोद ह ॥२२॥**

हे राजेन्द्र ! तत्पश्चात् यादवश्रेष्ठ श्रीकृष्ण धृतराष्ट्र का हाथ अपने हाथ में लेकर उन्मुक्त स्वर से फूट-फूटकर रोने लगे ।

**स मुहूर्तादिवोत्सृज्य बाष्पं शोकसमुद्भवम् ।**
**उवाच प्रस्तुतं वाक्यं धृतराष्ट्रमरिन्दमः ॥२३॥**
**न तेऽस्त्यविदितं किञ्चिद् वृद्धस्य तव भारत ।**
**कालस्य च यथावृत्तं तत् ते सुविदितं प्रभो ॥२४॥**

शत्रुदमन श्रीकृष्ण ने दो घड़ी तक शोक के आँसू बहाकर राजा धृतराष्ट्र से प्रस्तुत वचन कहा—"हे भारत ! आप वृद्ध हैं, अतः काल के द्वारा जो कुछ भी संघटित हुआ और हो रहा है, वह कुछ भी आप से छिपा नहीं है । प्रभो ! आपको सब-कुछ अच्छी प्रकार ज्ञात है ।

**यतितं पाण्डवैः सर्वैस्तव चित्तानुरोधिभिः ।**
**कथं कुलक्षयो न स्यात्तथा क्षत्रस्य भारत ॥२५॥**

"हे भारत ! सभी पाण्डव सदा से ही आपकी इच्छा के अनुसार बर्ताव करनेवाले हैं । उन्होंने बहुत प्रयत्न किया कि किसी प्रकार हमारे कुल का और क्षत्रियसमूह का विनाश न हो ।

**मया च स्वयमागम्य युद्धकाल उपस्थिते ।**
**सर्वलोकस्य सांनिध्ये ग्रामाँस्त्वं पञ्च याचितः ॥२६॥**
**त्वया कालोपसृष्टेन लोभतो नापवर्जिताः ।**
**तवापराधान्नृपते सर्वं क्षत्रं क्षयं गतम् ॥२७॥**

"युद्ध का अवसर उपस्थित होने पर मैंने स्वयं आकर शान्ति स्थापित करने के लिए सब लोगों के समक्ष आपसे केवल पाँच गाँव माँगे थे, परन्तु काल से प्रेरित हो आपने लोभवश वे पाँच गाँव भी नहीं

दिये। प्रजेश्वर ! आपके अपराध से समस्त क्षत्रियों का विनाश हो गया।

**द्रोणेन च सपुत्रेण भीष्मेण विदुरेण च।**
**याचितस्त्वं शमं नित्यं न च तत्कृतवानसि ॥२८॥**

"द्रोणाचार्य, अश्वत्थामा, भीष्म और विदुरजी ने भी सदा आपसे शान्ति की याचना की थी, परन्तु आपने किसी की बात नहीं मानी।

**अल्पोऽप्यतिक्रमो नास्ति पाण्डवानां महात्मनाम्।**
**धर्मतो न्यायतश्चैव स्नेहतश्च परन्तप ॥२९॥**

"परन्तप ! धर्म, न्याय और स्नेह की दृष्टि से महात्मा पाण्डवों का इसमें थोड़ा-सा भी अपराध नहीं है।

**एतत् सर्वं तु विज्ञाय ह्यात्मदोषकृतं फलम्।**
**असूयां पाण्डुपुत्रेषु न भवान् कर्तुमर्हति ॥३०॥**

"यह सब अपने ही अपराधों का फल है, ऐसा समझकर आपको पाण्डवों के प्रति दोष-दृष्टि नहीं करनी चाहिए।

**त्वं चैव कुरुशार्दूल गान्धारी च यशस्विनी।**
**मा शुचो नरशार्दूल पाण्डवान् प्रति किल्बिषम् ॥३१॥**

"कुरुप्रवर ! पुरुषसिंह ! आप और यशस्विनी गान्धारीदेवी कभी पाण्डवों की बुराई करने की बात न सोचें।

**एतत् सर्वमनुध्याय आत्मनश्च व्यतिक्रमम्।**
**शिवेन पाण्डवान् पाहि नमस्ते भरतर्षभ ॥३२॥**

"भरतश्रेष्ठ ! इन सब बातों और अपने अपराधों का चिन्तन करके आप पाण्डवों के प्रति कल्याण-भावना रखते हुए उनकी रक्षा करें। आपको नमस्कार है।

**जानासि च महाबाहो धर्मराजस्य या त्वयि।**
**भक्तिर्भरतशार्दूल स्नेहश्चापि स्वभावतः ॥३३॥**

"महाबाहो ! भरतवंश के सिंह ! आप जानते हैं कि धर्मराज युधिष्ठिर के मन में आपके प्रति कितनी भक्ति और कितना स्वाभाविक स्नेह है।

**एतच्च कदनं कृत्वा शत्रूणामपकारिणाम्।**
**दह्यते स दिवारात्रौ न च शर्माधिगच्छति ॥३४॥**

"अपने अपराधी शत्रुओं का संहार करके वे दिन-रात शोक की अग्नि में जलते हैं, उन्हें कभी चैन नहीं मिलता।

**त्वां चैव नरशार्दूल गान्धारीं च यशस्विनीम्।**
**स शोचन् नरशार्दूलः शान्तिं नैवाधिगच्छति ॥३५॥**

"पुरुषसिंह ! आप और यशस्विनी गान्धारी-देवी के लिए निरन्तर शोक करते हुए नरश्रेष्ठ युधिष्ठिर को शान्ति नहीं मिल रही है।

**ह्रिया च परयाऽऽविष्टो भवन्तं नाधिगच्छति।**
**पुत्रशोकाभिसन्तप्तं बुद्धिव्याकुलेन्द्रियम् ॥३६॥**

"आप पुत्रशोक से अतिसन्तप्त हैं, आपकी बुद्धि और इन्द्रियाँ शोक से व्याकुल हैं। ऐसी स्थिति में अत्यन्त लज्जित होने के कारण वे आपके सामने नहीं आ रहे हैं।"

**एवमुक्त्वा महाराज धृतराष्ट्रं यदूत्तमः।**
**उवाच परमं वाक्यं गान्धारीं शोककर्शिताम् ॥३७॥**

महाराज ! यदुश्रेष्ठ श्रीकृष्ण राजा धृतराष्ट्र से ऐसा कहकर शोक से दुर्बल हुई गान्धारी देवी से यह उत्तम वचन बोले—

**सौबलेयि निबोध त्वं यत्त्वां वक्ष्यामि तच्छृणु।**
**त्वत्समा नास्ति लोकेऽस्मिन्नद्य सीमन्तिनी शुभे ॥३८॥**

"सुबलनन्दिनि ! मैं आपसे जो कुछ कहता हूँ, उसे ध्यानपूर्वक सुनो और समझो। शुभे ! इस जगत् में तुम-जैसी तपोबल-सम्पन्न स्त्री दूसरी कोई नहीं है।

**जानासि च यथा राज्ञि सभायां मम संन्निधौ।**
**धर्मार्थसहितं वाक्यमुभयोः पक्षयोर्हितम्।**
**उक्तवत्यसि कल्याणि न च ते तनयैः कृतम् ॥३९॥**

"रानी ! आपको स्मरण होगा, उस दिन सभा में मेरे सामने ही तुमने दोनों पक्षों का हित करने-वाला धर्म और अर्थयुक्त वचन कहा था, परन्तु कल्याणि ! तुम्हारे पुत्रों ने उसे नहीं माना।

**दुर्योधनस्त्वया चोक्तो जयार्थी परुषं वचः।**
**शृणु मूढ वचो मह्यं यतो धर्मस्ततो जयः ॥४०॥**

"आपने विजय के अभिलाषी दुर्योधन को सम्बोधित करके उससे अत्यन्त रुखाई के साथ कहा था— 'ओ मूढ़ ! मेरी बात सुन ले, जहाँ धर्म होता है, उसी पक्ष की विजय होती है।'

**तदिदं समनुप्राप्तं तव वाक्यं नृपात्मजे ।**
**एवं विदित्वा कल्याणि मा स्म शोके मनः कृथाः ॥४१॥**

"कल्याणमयी राजपुत्री ! तुम्हारी वही बात आज सत्य सिद्ध हुई है, ऐसा समझकर तुम मन में शोक मत करो ।

**पाण्डवानां विनाशाय मा ते बुद्धिः कदाचन ।**
**शक्ता चासि महाभागे पृथिवीं सचराचराम् ।**
**चक्षुषा क्रोधदीप्तेन निर्दग्धुं तपसो बलात् ॥४२॥**

"पाण्डवों के विनाश का विचार आपके मन में कभी नहीं आना चाहिए । महाभागे ! तुम अपने तपोबल और क्रोधभरी दृष्टि द्वारा चराचर प्राणियों-सहित सम्पूर्ण पृथिवी को भस्म कर डालने की शक्ति रखती हो ।"

**वासुदेववचः श्रुत्वा गान्धारी वाक्यमब्रवीत् ।**
**एवमेतन्महाबाहो यथा वदसि केशव ॥४३॥**
**आधिभिर्दह्यमानाया मतिः संचलिता मम ।**
**सा मे व्यवस्थिता श्रुत्वा तव वाक्यं जनार्दन ॥४४॥**

श्रीकृष्ण की यह बात सुनकर गान्धारी ने कहा—"महाबाहु केशव ! तुम जैसा कहते हो, वह बिल्कुल सत्य है । मानसिक व्यथाओं से दग्ध होने के कारण मेरी बुद्धि विचलित हो गई थी [अतः मैं पाण्डवों के अनिष्ट की बात सोचने लगी थी], परन्तु जनार्दन ! इस समय तुम्हारी बात सुनकर मेरी बुद्धि स्थिर हो गई है—क्रोध का आवेश उतर गया है ।

**राज्ञस्त्वन्धस्य वृद्धस्य हतपुत्रस्य केशव ।**
**त्वं गतिः सहितैर्वीरैः पाण्डवैर्द्विपदां वर ॥४५॥**

"मनुष्यों में श्रेष्ठ केशव ! ये राजा अन्धे और बूढ़े हैं तथा इनके सभी पुत्र मारे गये हैं । अब समस्त वीर पाण्डवों के साथ तुम्हीं इनके आश्रयदाता हो ।"

**एतावदुक्त्वा वचनं मुखं प्रच्छाद्य वाससा ।**
**पुत्रशोकाभिसन्तप्ता गान्धारी प्ररुरोद ह ॥४६॥**

इतनी बात कहकर पुत्रशोक से सन्तप्त हुई गान्धारी देवी अपने मुख को आँचल से ढककर फूट-फूटकर रोने लगीं ।

**तत एनां महाबाहुः केशवः शोककर्शिताम् ।**
**हेतुकारणसंयुक्तैर्वाक्यैराश्वासयत् प्रभुः ॥४७॥**

तब महाबाहु केशव ने शोक से दुर्बल हुई गान्धारी को कितने ही कारण बताकर युक्तियुक्त वचनों द्वारा आश्वासन दिया—धैर्य बँधाया ।

**समाश्वास्य च गान्धारीं धृतराष्ट्रं च माधवः ।**
**प्रायात् ततस्तु त्वरितो दारुकेण सहाच्युतः ॥४८॥**

गान्धारी और धृतराष्ट्र को सान्त्वना देकर माधव श्रीकृष्ण दारुक के साथ वहाँ से शीघ्र ही चल दिये ।

**आगम्य शिबिरं रात्रौ सोऽभ्यगच्छत पाण्डवान् ।**
**तच्च तेभ्यः समाख्याय सहितस्तैः समाहितः ॥४९॥**

शिबिर में आकर रात्रि में वे पाण्डवों से मिले और उन्हें सारा वृत्तान्त सुनाकर उन्हींके साथ सावधान होकर रहे ।

**इति महाभारते शल्यपर्वणि द्वाविंशोऽध्यायः ॥२२॥**

# त्रयविंशोऽध्यायः

## दुर्योधन का सञ्जय के समक्ष विलाप तथा वाहकों द्वारा अपने साथियों को सन्देश भेजना

धृतराष्ट्र उवाच

**अधिष्ठितः पदा मूर्ध्नि भग्नसक्थो महीं गतः ।**
**शौर्याभिमानी पुत्रो मे किमभाषत सञ्जय ॥१॥**

**धृतराष्ट्र ने पूछा**—सञ्जय ! जिसे अपने बल पर बड़ा अभिमान था, जब जाँघें टूट जाने के कारण मेरा वह पुत्र पृथिवी पर गिर पड़ा और भीमसेन ने उसके मस्तक पर पैर रख दिया, तब उसने क्या कहा ?

सञ्जय उवाच

**भग्नसक्थो नृपो राजन् पाँसुना सोऽवगुण्ठितः ।**
**गर्हयन् पाण्डवं ज्येष्ठं निःश्वस्येदमथाब्रवीत् ॥२॥**

**सञ्जय ने कहा**—राजन् ! टूटी हुई जाँघोंवाले और धरती पर गिरकर धूल में सने हुए राजा दुर्योधन ने ज्येष्ठ पाण्डव युधिष्ठिर की निन्दा करते हुए दीर्घ निःश्वास छोड़, इस प्रकार कहा—

**भीष्मे शान्तनवे नाथे कर्णे शस्त्रभृतां वरे ।**

गौतमे शकुनौ चापि द्रोणे चास्त्रभृतां वरे ॥३॥
अश्वत्थाम्नि तथा शल्ये शूरे च कृतवर्मणि ।
इमामवस्थां प्राप्तोऽस्मि कालो हि दुरतिक्रमः ॥४॥

"शान्तनुनन्दन भीष्म, शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ कर्ण, कृपाचार्य, शकुनि, अस्त्रधारियों में सर्वश्रेष्ठ द्रोणाचार्य, अश्वत्थामा, शूरवीर शल्य और कृतवर्मा मेरे रक्षक थे, तो भी मैं इस अवस्था को प्राप्त हो गया। निश्चय ही काल का उल्लङ्घन करना किसी के लिए भी अत्यन्त कठिन है।

एकादशचमूभर्ता सोऽहमेतां दशां गतः ।
कालं प्राप्य महाबाहो न कश्चिदतिवर्तते ॥५॥

"महाबाहो सञ्जय ! मैं एक दिन ग्यारह अक्षौहिणी सेना का स्वामी था, परन्तु आज इस अवस्था में आ पड़ा हूँ। वस्तुतः काल को पाकर कोई उसका उल्लङ्घन नहीं कर सकता।

आख्यातव्यं मदीयानां येऽस्मिञ्जीवन्ति संयुगे ।
यथाहं भीमसेनेन व्युत्क्रम्य समयं हतः ॥६॥

"मेरे पक्ष के वीरों में जो लोग इस युद्ध में जीवित बच गये हों, उन्हें यह बताना कि भीमसेन ने किस प्रकार गदायुद्ध के नियम का उल्लङ्घन करके मुझे मारा है।

किन्तु चित्रमितस्त्वद्य भग्नसक्थस्य यन्मम ।
क्रुद्धेन भीमसेनेन पादेन मृदितं शिरः ॥७॥

"आज जब मेरी जाँघें टूट गई थीं, ऐसी अवस्था में कुपित हुए भीमसेन ने मेरे मस्तक को जो पैर से ठुकराया है, इससे बढ़कर दुःखभरे आश्चर्य की बात और क्या हो सकती है ?

प्रतपन्तं श्रिया जुष्टं वर्तमानं च बन्धुषु ।
एवं कुर्यान्नरो यो हि स वै सञ्जय पूजितः ॥८॥

"सञ्जय ! जो अपने तेज से तप रहा हो, राज्यलक्ष्मी से सेवित हो और अपने सहायक बन्धु-बान्धवों के बीच में विद्यमान हो, ऐसे शत्रु के साथ जो उक्त व्यवहार करे, वही वीर पुरुष सम्मानित होता है [मरे हुए को मारने में क्या बड़ाई है !]

अभिज्ञौ युद्धधर्मस्य मम माता पिता च मे ।
तौ हि सञ्जय दुःखार्तौ विज्ञाप्यौ वचनाद्धि मे ॥९॥
इष्टं भृत्या भृताः सम्यग् भूः प्रशास्ता ससागरा ।
अमित्रा बाधिताः सर्वे को नु स्वन्ततरो मया ॥१०॥

"सञ्जय ! मेरे माता-पिता युद्धधर्म के ज्ञाता हैं। वे दोनों मेरी मृत्यु का समाचार सुनकर दुःख से आतुर हो जाएँगे। तुम मेरे कहने से उन्हें यह सन्देश देना कि मैंने यज्ञ किये, जो भरण-पोषण करने योग्य थे, उनका पालन किया और समुद्रपर्यन्त पृथिवी का अच्छी प्रकार शासन किया। साथ ही सम्पूर्ण शत्रुओं को सदा ही क्लेश पहुँचाया। संसार में कौन ऐसा पुरुष है, जिसका अन्त मेरे समान सुन्दर हुआ हो ?

मानिता बान्धवाः सर्वे वश्यः सम्पूजितो जनः ।
त्रितयं सेवितं सर्वं को नु स्वन्ततरो मया ॥११॥

"मैंने सभी इष्ट-मित्रों को सम्मान दिया। अपनी आज्ञा के अधीन रहनेवाले लोगों का आदर-सत्कार किया और धर्म, अर्थ तथा काम—सबका सेवन किया, अतः मेरे समान सुन्दर अन्त किसका हुआ होगा ?

आज्ञप्तं नृपमुख्येषु मानः प्राप्तः सुदुर्लभः ।
आजानेयैस्तथा यातं को नु स्वन्ततरो मया ॥१२॥

"राजाओं में प्रमुख महाराजाओं पर हुक्म चलाया, अत्यन्त दुर्लभ सम्मान प्राप्त किया और आजानेय [उत्तम, अरबी] घोड़ों पर सवारी की, अतः मुझसे श्रेष्ठ अन्त और किसका हुआ होगा ?

अधीतं विधिवद् दत्तं प्राप्तमायुर्निरामयम् ।
स्वधर्मेण जिता लोकाः को नु स्वन्ततरो मया ॥१३॥

मैंने विधिवत् वेदों का स्वाध्याय किया, अनेक प्रकार के दान दिये और रोगरहित आयु प्राप्त की। इन सबके अतिरिक्त मैंने पुण्यलोकों पर विजय पाई है, अतः मेरे समान उत्तम अन्त और किसका हुआ होगा ?

दिष्टचा नाहं जितः संख्ये परान् प्रेष्यवदाश्रितः ।
दिष्टचा मे विपुला लक्ष्मीर्मृते त्वन्यगता विभो ॥१४॥

"विभो ! सौभाग्य की बात है कि मैं न तो युद्ध में कभी पराजित हुआ और न दास की भाँति कभी शत्रुओं की शरण ली। सौभाग्य से मेरे अधिकार में विशाल राज्यलक्ष्मी रही है, जो मेरे मरने के पश्चात् ही दूसरे के हाथ में गई है।

**अश्वत्थामा महाभागः कृतवर्मा च सात्वतः ।**
**कृपः शारद्वतश्चैव वक्तव्या वचनान्मम ॥१५॥**
**अधर्मेण प्रवृत्तानां पाण्डवानामनेकशः ।**
**विश्वासं समयघ्नानां न यूयं गन्तुमर्हथ ॥१६॥**

"महाभाग अश्वत्थामा, सात्वतवंशी कृतवर्मा और कृपाचार्य—इन सबको मेरी यह बात सुना देना कि पाण्डवों ने अधर्म में प्रवृत्त होकर अनेक बार युद्ध की मर्यादा तोड़ी है, अतः आप लोग कभी उनका विश्वास न करें।"

**वार्तिकाँश्चाब्रवीद् राजा पुत्रस्ते सत्यविक्रमः ।**
**अधर्माद् भीमसेनेन निहतोऽहं यथा रणे ॥१७॥**
**सोऽहं स्वर्गगतं द्रोणं कर्णशल्यावुभौ तथा ।**
**दुःशासनपुरोगाँश्च भ्रातॄनात्मसमाँस्तथा ॥१८॥**
**एताँश्चान्याँश्च सुबहून् मदीयाँश्च सहस्रशः ।**
**पृष्ठतोऽनुगमिष्यामि सार्थहीनो यथाध्वगः ॥१९॥**

मुझ-[सञ्जय]-से ऐसा कहकर आपके सत्य-पराक्रमी पुत्र राजा दुर्योधन ने सन्देशवाहक दूतों से इस प्रकार कहा—"भीमसेन ने युद्धभूमि में अधर्म से मेरा वध किया है। अब मैं स्वर्ग में गये हुए द्रोणाचार्य, कर्ण, शल्य, अपने ही समान पराक्रमी दुःशासन आदि बन्धुगण—इन सबके तथा और भी जो बहुत-से मेरे पक्ष के सहस्रों योद्धा मारे गये हैं, उन सबके पीछे स्वर्ग में जाऊँगा। मेरी अवस्था उस पथिक के समान है, जो अपने साथियों से बिछुड़ गया हो।

**कथं भ्रातॄन् हताञ्श्रुत्वा भर्तारं च स्वसा मम ।**
**रोरूयमाणा दुःखार्ता दुःशला सा भविष्यति ॥२०॥**

"हाय ! अपने भाइयों और पति की मृत्यु का समाचार सुनकर दुःख से व्याकुल हो अत्यन्त रुदन करती हुई मेरी बहिन दुःशला की क्या दशा होगी ?

**स्नुषाभिः प्रस्नुषाभिश्च वृद्धो राजा पिता मम ।**
**गान्धारीसहितश्चैव कां गतिं प्रतिपत्स्यति ॥२१॥**

"पुत्रों और पौत्रों की बिलखती हुई बहुओं के साथ मेरे बूढ़े पिता राजा धृतराष्ट्र माता गान्धारी-सहित किस अवस्था को पहुँच जाएंगे ?

**नूनं लक्ष्मणमातापि हतपुत्रा हतेश्वरा ।**
**विनाशं यास्यति क्षिप्रं कल्याणी पृथुलोचना ॥२२॥**

"निश्चय ही जिसके पति और पुत्र मारे गये हैं, वह कल्याणमयी विशाल नेत्रोंवाली लक्ष्मण की माता भी सारा समाचार सुनकर तुरन्त ही प्राण दे देगी।

**समन्तपञ्चके पुण्ये त्रिषु लोकेषु विश्रुते ।**
**अहं निधनमासाद्य लोकान्प्राप्स्यामि शाश्वतान् ॥२३॥**

"तीनों लोकों में विख्यात पुण्यमय समन्त पञ्चक क्षेत्र में मृत्यु को प्राप्त होकर अब मैं सनातन लोकों में जाऊँगा।"

**ते द्रोणपुत्रमासाद्य यथावृत्तं न्यवेदयन् ।**
**व्यवहारं गदायुद्धे पार्थिवस्य च पातनम् ॥२४॥**

उन सन्देशवाहकों ने गदायुद्ध में भीमसेन का जैसा व्यवहार हुआ और राजा दुर्योधन को जिस प्रकार धराशायी किया गया, वह सारा वृत्तान्त द्रोणपुत्र अश्वत्थामा को यथावत् कह सुनाया।

**इति महाभारते शल्यपर्वणि त्रयोविंशोऽध्यायः ॥२३॥**

# चतुर्विंशोऽध्यायः

## दुर्योधन की अवस्था देखकर अश्वत्थामा का विषाद, उसकी प्रतिज्ञा और दुर्योधन द्वारा उसका सेनापति-पद पर अभिषेक

सञ्जय उवाच

**वार्तिकाणां सकाशात्तु श्रुत्वा दुर्योधनं हतम् ।**
**अश्वत्थामा कृपश्चैव कृतवर्मा च सात्वतः ॥१॥**
**त्वरिता जवनैरश्वैरायोधनमुपागमन् ।**
**तत्रापश्यन् महात्मानं धार्तराष्ट्रं निपातितम् ॥२॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! सन्देशवाहकों के मुख से दुर्योधन के मारे जाने का समाचार सुनकर अश्वत्थामा, कृपाचार्य और सात्वतवंशी कृतवर्मा—शीघ्रगामी घोड़ों से जुते हुए रथ पर सवार हो तुरन्त ही युद्धभूमि में आये। वहाँ आकर उन्होंने देखा कि महामनस्वी धृतराष्ट्रपुत्र दुर्योधन धराशायी कर दिया गया है।

**ते तं दृष्ट्वा महेष्वासं भूतले पतितं नृपम् ।**
**मोहमभ्यागमन् सर्वे कृपप्रभृतयो रथाः ॥३॥**

महाधनुर्धर राजा दुर्योधन को पृथिवी पर पड़ा हुआ देख कृपाचार्य आदि सभी महारथी शोक के वशीभूत हो गये ।

**अवतीर्य रथेभ्यश्च प्राद्रवन् राजसन्निधौ ।**
**दुर्योधनं च सम्प्रेक्ष्य सर्वे भूमावुपाविशन् ॥४॥**

वे अपने रथों से उतरकर राजा के पास दौड़े हुए गये और दुर्योधन को देखकर सब लोग उसके पास ही भूमि पर बैठ गये ।

**ततो द्रोणिर्महाराज बाष्पपूर्णेक्षणः श्वसन् ।**
**उवाच भरतश्रेष्ठं सर्वलोकेश्वरेश्वरम् ॥५॥**

महाराज ! उस समय अश्वत्थामा की आँखों में आँसू भर आये। वह सिसकता हुआ सम्पूर्ण जगत् के राजाधिराज भरतभूषण दुर्योधन से इस प्रकार बोला—

**न नूनं विद्यते सत्यं मानुषे किञ्चिदेव हि ।**
**यत्र त्वं पुरुषव्याघ्र शेषे पाँसुषु रूषितः ॥६॥**

"पुरुषसिंह ! निश्चय ही इस संसार में कुछ भी सत्य नहीं है, सभी नाशवान् है, जहाँ तुम्हारे-जैसा राजा धूल में सना हुआ लोट रहा है ।

**दुर्विज्ञेया गतिर्नूनं कार्याणां कारणान्तरे ।**
**यद् वै लोकगुरुर्भूत्वा भवानेतां दशां गतः ॥७॥**

"किस कारण से कौन-सा कार्य होगा, इसको समझ लेना निश्चय ही बहुत कठिन है, क्योंकि सम्पूर्ण संसार के सम्माननीय नरेश होकर भी आज आप इस अवस्था को पहुँच गये ।

**अध्रुवा सर्वमर्त्येषु श्रीरुपलक्ष्यते भृशम् ।**
**भवतो व्यसनं दृष्ट्वा शक्रविस्पर्धिनो भृशम् ॥८॥**

"आप अपनी साम्राज्य-लक्ष्मी के द्वारा इन्द्र की समानता करनेवाले थे। आज आपपर यह संकट आया हुआ देखकर निश्चय हो गया कि किसी भी मनुष्य की सम्पत्ति सदा स्थिर नहीं देखी जा सकती ।"

**तस्य तद् वचनं श्रुत्वा दुःखितस्य विशेषतः ।**
**उवाच राजन् पुत्रस्ते प्राप्तकालमिदं वचः ॥९॥**

राजन् ! अत्यन्त दुःखी हुए अश्वत्थामा की वह बात सुनकर आपके पुत्र राजा दुर्योधन ने यह समयोचित वचन कहा—

**ईदृशो लोकधर्मोऽयं धात्रा निर्दिष्ट उच्यते ।**
**विनाशः सर्वभूतानां कालपर्यायमागतः ॥१०॥**

"मित्रो ! इस मर्त्यलोक का ऐसा ही धर्म=नियम है। विधाता ने ही इसका निर्देश किया है, ऐसा कहा जाता है, अतः कालक्रम से एक-न-एक दिन सब प्राणियों के विनाश की घड़ी आ ही जाती है ।

**सोऽयं मां समनुप्राप्तः प्रत्यक्षं भवतां हि यः ।**
**पृथिवीं पालयित्वाहमेतां निष्ठामुपागतः ॥११॥**

"वही यह विनाश का समय अब मुझे भी प्राप्त हुआ है, जिसे आप लोग प्रत्यक्ष देख रहे हैं। एक दिन मैं सारी पृथिवी का पालक था और आज इस दशा को पहुँच गया हूँ ।

**दिष्टचा नाहं परावृत्तो युद्धे कस्यांचिदापदि ।**
**दिष्टचाहं निहतः पापैश्छलेनैव विशेषतः ॥१२॥**

"तो भी मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि कैसी ही आपत्ति क्यों न आई, मैंने युद्ध से कभी मुख नहीं मोड़ा। यह भी मेरे लिए सौभाग्य की बात है कि पापियों ने मुझे छल से मारा है ।

**उत्साहश्च कृतो नित्यं मया दिष्टचा युयुत्सता ।**
**दिष्टचा चास्मिन्हतो युद्धे निहतज्ञातिबान्धवः ॥१३॥**

"यह भी सौभाग्य की बात है कि मैंने युद्धभूमि में जूझने की इच्छा रखकर सदा उत्साह ही दिखाया है तथा बन्धु-बान्धवों के मारे जाने पर स्वयं भी युद्ध में ही प्राण त्याग रहा हूँ, यह भी मेरे लिए सन्तोष एवं सौभाग्य की बात है ।

**दिष्टचा च वोऽहं पश्यामि मुक्तानस्माज्जनक्षयात् ।**
**स्वस्तियुक्तांश्च कल्यांश्च तन्मे प्रियमनुत्तमम् ॥१४॥**

यह भी सौभाग्य की बात है कि मैं आप लोगों को इस नर-संहार से मुक्त देख रहा हूँ। इतना ही नहीं कि आप बच गये हैं अपितु आप लोग सकुशल और कुछ करने में समर्थ हैं—यह मेरे लिए और भी अधिक प्रसन्नता और सन्तोष की बात है ।

**मा भवन्तोऽत्र तप्यन्तां सौहृदान्निधनेन मे ।**
**यदि वेदाः प्रमाणं वो जिता लोका मयाक्षयाः ॥१५॥**

"आप लोगों का मुझपर स्वाभाविक स्नेह है,

परन्तु मेरी मृत्यु से आप लोगों को दुःख और सन्ताप नहीं होना चाहिए। यदि आपकी दृष्टि में वेदशास्त्र प्रामाणिक हैं तो मैंने अक्षय लोकों पर अधिकार प्राप्त कर लिया है।

**मन्यमानः प्रभावं च कृष्णस्यामिततेजसः।**
**तेन न च्यावितश्चाहं क्षत्रधर्मात्स्वनुष्ठितात्।**
**स मया समनुप्राप्तो नास्मि शोच्यः कथञ्चन ॥१६॥**

"अमित तेजस्वी श्रीकृष्ण के अद्भुत प्रभाव को मानते हुए भी, मैं उनकी उत्तेजना से उत्तम प्रकार से पालन किये हुए सनातन क्षत्रियधर्म से कभी विचलित नहीं हुआ। मैंने उस धर्मपालन का फल प्राप्त किया है, अतः मैं किसी प्रकार भी शोक करने के योग्य नहीं हूँ।"

**कृतं भवद्भिः सदृशमनुरूपमिवात्मनः।**
**यतितं विजये नित्यं दैवं तु दुरतिक्रमम् ॥१७॥**

"आप लोगों ने अपने स्वरूप के अनुरूप योग्य पराक्रम प्रकट किया और सदा मुझे विजय दिलाने का प्रयत्न किया, तथापि दैव के विधान का उल्लङ्घन करना किसी के लिए भी सर्वथा कठिन है।"

**एतावदुक्त्वा वचनं बाष्पव्याकुललोचनः।**
**तूष्णीं बभूव राजेन्द्र रुजासौ विह्वलो भृशम् ॥१८॥**

हे राजेन्द्र! इतना कहते-कहते दुर्योधन की आँखें आँसुओं से भर आयीं और वह वेदना से अत्यन्त व्याकुल होकर चुप हो गया—उससे कुछ बोला नहीं गया।

**तथा दृष्ट्वा तु राजानं बाष्पशोकसमन्वितम्।**
**द्रौणिः क्रोधेन जज्वाल यथा वह्निर्जगत्क्षये ॥१९॥**

राजा दुर्योधन को शोक के आँसू बहाते देख अश्वत्थामा प्रलयकाल की अग्नि के समान क्रोध से प्रज्वलित हो उठा।

**स च क्रोधसमाविष्टः पाणौ पाणिं निपीड्य च।**
**बाष्पविह्वलया वाचा राजानमिदमब्रवीत् ॥२०॥**

रोष के आवेश में भरकर उसने हाथ को हाथ से दबाकर और अश्रुगद्गद वाणी द्वारा राजा दुर्योधन से इस प्रकार कहा—

**पिता मे निहतः क्षुद्रैः सुनृशंसेन कर्मणा।**
**न तथा तेन तप्यामि यथा राजंस्त्वयाद्य वै ॥२१॥**

"राजन्! नीच पाण्डवों ने अत्यन्त क्रूरतापूर्ण कर्म के द्वारा मेरे पिता का वध किया था, परन्तु उसके कारण भी मैं उतना सन्तप्त नहीं हूँ, जैसा कि आज तुम्हारे वध से दुःखी हो रहा हूँ।

**शृणु चेदं वचो मे त्वं सत्येन वदतः प्रभो।**
**अद्याहं सर्वपाञ्चालान् वासुदेवस्य पश्यतः ॥२२॥**
**सर्वोपायैर्हि नेष्यामि प्रेतराजनिवेशनम्।**
**अनुज्ञां तु महाराज भवान् मे दातुमर्हति ॥२३॥**

"प्रभो! मैं सत्य की शपथ खाकर जो कह रहा हूँ, मेरी इस बात को सुनो। मैं आज श्रीकृष्ण के देखते-देखते सम्पूर्ण पाञ्चालों को सभी उपायों द्वारा यमराज के लोक में भेज दूँगा। महाराज! इसके लिए आप मुझे आज्ञा प्रदान करें।"

**इति श्रुत्वा तु वचनं द्रोणपुत्रस्य कौरवः।**
**मनसः प्रीतिजननं कृपं वचनमब्रवीत्।**
**आचार्य शीघ्रं कलशं जलपूर्णं समानय ॥२४॥**

द्रोणपुत्र अश्वत्थामा का यह मन को प्रसन्न करनेवाला वचन सुनकर कुरुराज दुर्योधन ने कृपाचार्य से कहा—"आचार्य! आप शीघ्र ही जल से भरा हुआ कलश ले आइए।"

**स तद् वचनमाज्ञाय राज्ञो ब्राह्मणसत्तमः।**
**कलशं पूर्णमादाय राज्ञोऽन्तिकमुपागमत् ॥२५॥**

राजा की यह बात सुनकर ब्राह्मण-शिरोमणि कृपाचार्य जल से भरा हुआ कलश ले उसके समीप आये।

**तमब्रवीन्महाराज पुत्रस्तव विशाम्पते।**
**ममाज्ञया द्विजश्रेष्ठ द्रोणपुत्रोऽभिषिच्यताम्।**
**सैनापत्येन भद्रं ते मम चेदिच्छसि प्रियम् ॥२६॥**

महाराज! प्रजानाथ! तब आपके पुत्र ने उससे कहा—"द्विजश्रेष्ठ! आपका कल्याण हो। यदि आप मेरा प्रिय करना चाहते हैं तो मेरी आज्ञा से द्रोणपुत्र का सेनापति के पद पर शीघ्र अभिषेक कीजिए।"

**राज्ञस्तु वचनं श्रुत्वा कृपः शारद्वतस्तथा।**
**द्रौणिं राज्ञो नियोगेन सैनापत्येऽभ्यषेचयत् ॥२७॥**

राजा की यह बात सुनकर शरद्वान् के पुत्र कृपाचार्य ने उसकी आज्ञा के अनुसार—अश्वत्थामा का सेनापति के पद पर अभिषेक किया।

**सोऽभिषिक्तो महाराज परिष्वज्य नृपोत्तमम् ।**
**प्रययौ सिंहनादेन दिशः सर्वा निनादयन् ॥२८॥**

महाराज ! अभिषेक हो जाने पर अश्वत्थामा ने नृपश्रेष्ठ दुर्योधन को हृदय से लगाया और अपने सिंहनाद से सम्पूर्ण दिशाओं को निनादित करते हुए वहाँ से प्रस्थान किया ।

**दुर्योधनोऽपि राजेन्द्र शोणितेन परिप्लुतः ।**
**तां निशां प्रतिपेदेऽथ सर्वभूतभयावहाम् ॥२९॥**

हे राजेन्द्र ! रक्त से लथपथ दुर्योधन ने भी सम्पूर्ण प्राणियों के मन में भय उत्पन्न करनेवाली वह रात्रि वहीं व्यतीत की ।

**अपक्रम्य तु ते तूर्णं तस्मादायोधनान्नृप ।**
**शोकसंविग्नमनसश्चिन्ताध्यानपराभवन् ॥३०॥**

नरेश्वर ! शोक से व्याकुलचित्त हुए वे तीनों महारथी उस युद्धभूमि से तुरन्त ही दूर हट गये और चिन्ता एवं कर्तव्य के विचार में निमग्न हो गये ।

**इति महाभारते शल्यपर्वणि चतुर्विंशोऽध्यायः ॥२४॥**

**॥ इति शल्यपर्व सम्पूर्णम् ॥**

# सौप्तिकपर्व

## प्रथमोऽध्यायः

### तीन महारथियों का एक वन में विश्राम, कौओं पर उलूक का आक्रमण देख अश्वत्थामा के मन में क्रूर सङ्कल्प का उदय और अपने साथियों से विचार-विमर्श

धृतराष्ट्र उवाच

**अधर्मेण हते तात पुत्रे दुर्योधने मम ।**
**कृतवर्मा कृपो द्रौणिः किमकुर्वत सञ्जय ।।१।।**

**धृतराष्ट्र ने पूछा**—तात ! सञ्जय ! मेरे पुत्र दुर्योधन के अधर्मपूर्वक मारे जाने पर कृतवर्मा, कृपाचार्य और अश्वत्थामा ने क्या किया ?

सञ्जय उवाच

**गत्वा तु तावका राजन् नातिदूरमवस्थिताः ।**
**अपश्यन्त वनं घोरं नानाद्रुमलतावृतम् ।।२।।**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! आपके पक्ष के वे तीनों वीर वहाँ से थोड़ी ही दूर जाकर खड़े हो गये । वहाँ उन्होंने नाना प्रकार के वृक्षों और लताओं से भरा हुआ एक भयंकर वन देखा ।

**ते मुहूर्तं तु विश्रम्य लब्धतोयैर्हयोत्तमैः ।**
**सूर्यास्तमनवेलायां समासेदुर्महद् वनम् ।।३।।**

उस स्थान पर थोड़ी देर विश्राम करके उन सब लोगों ने अपने उत्तम घोड़ों को पानी पिलाया और सूर्यास्त होते-होते वे उस विशाल तथा घोर वन में जा पहुँचे ।

**प्रविश्य तद् वनं घोरं वीक्षमाणाः समन्ततः ।**
**शाखासहस्रसंछन्नं न्यग्रोधं ददृशुस्ततः ।।४।।**

उस भयंकर वन में प्रवेश करके सब ओर दृष्टि डालने पर उन्हें सहस्रों शाखाओं से आच्छादित एक बरगद का वृक्ष दिखाई दिया ।

**तेऽवतीर्य रथेभ्यश्च विप्रमुच्य च वाजिनः ।**
**उपस्पृश्य यथान्यायं सन्ध्यामन्वासत प्रभो ।।५।।**

प्रभो ! वहाँ रथों से उतरकर उन तीनों ने अपने घोड़ों को खोल दिया और यथोचितरूप से स्नान आदि करके सन्ध्योपासना की ।

**ततोऽस्तं पर्वतश्रेष्ठमनुप्राप्ते दिवाकरे ।**
**सर्वस्य जगतो धात्री शर्वरी समपद्यत ।।६।।**

तत्पश्चात् सूर्यदेव के पर्वतश्रेष्ठ अस्ताचल पर पहुँच जाने पर धाय की भाँति सम्पूर्ण संसार को अपनी गोद में विश्राम देनेवाली रात्रि-देवी का सर्वत्र आधिपत्य हो गया ।

**तस्मिन् रात्रिमुखे घोरे दुःखशोकसमन्विताः ।**
**कृतवर्मा कृपो द्रौणिरुपोपविविशुः समम् ।।७।।**

रत्रि का प्रथम प्रहर व्यतीत हो रहा था । उस भयंकर वेला में दुःख और शोक से सन्तप्त हुए कृतवर्मा, कृपाचार्य और अश्वात्थामा एक साथ ही आस-पास बैठ गये ।

**तत्रोपविष्टाः शोचन्तः कुरुपाण्डवयोः क्षयम् ।**
**निद्रया च परीताङ्गा निषेदुर्धरणीतले ।।८।।**

वहाँ बैठकर कौरव और पाण्डव योद्धाओं के विनाश के लिए शोक करते हुए वे तीनों वीर निद्रा से सारे अङ्ग शिथिल हो जाने के कारण पृथिवी पर लेट गये ।

**ततो निद्रावशं प्राप्तौ कृपभोजौ महारथौ ।**
**सुखोचितावदुःखार्हौ निषण्णौ धरणीतले ।।९।।**

तब कृपाचार्य और कृतवर्मा—इन दोनों महारथियों को गाढ निद्रा ने आ दबाया । वे सुख भोगने के योग्य थे, दुःख पाने योग्य कदापि नहीं थे, तो भी धरती पर ही सो गये थे ।

**क्रोधामर्षवशं प्राप्तो द्रोणपुत्रस्तु भारत ।**
**न वै स्म स जगामाथ निद्रां सर्प इव श्वसन् ॥१०॥**

हे भारत ! अश्वत्थामा क्रोध और अमर्ष के वशीभूत था, अतः उस समय उसे नींद नहीं आई । वह सर्प के समान लम्बी साँसें छोड़ता रहा ।

**न लेभे स तु निद्रां वै दह्यमानो हि मन्युना ।**
**वीक्षाञ्चक्रे महाबाहुस्तद् वनं घोरदर्शनम् ॥११॥**

क्रोध से जलते रहने के कारण नींद उसके पास फटक नहीं पा रही थी । उस महाबाहु वीर ने भयंकर दिखाई देनेवाले उस वन की ओर बारम्बार दृष्टिपात किया ।

**वीक्षमाणो वनोद्देशं नानासत्त्वैर्निषेवितम् ।**
**अपश्यत महाबाहुर्न्यग्रोधं वायसैर्युतम् ॥१२॥**

नाना प्रकार के जीव-जन्तुओं से सेवित वनस्थली का निरीक्षण करते हुए महाबाहु अश्वत्थामा ने कौओं से भरे हुए वटवृक्ष पर दृष्टिपात किया ।

**तत्र काकसहस्राणि तां निशां पर्यणामयन् ।**
**सुखं स्वपन्ति कौरव्य पृथक् पृथगुपाश्रयाः ॥१३॥**

कुरुनन्दन ! उस वृक्ष पर सहस्रों कौए रात में बसेरा ले रहे थे । वे पृथक्-पृथक् घौंसलों का आश्रय लेकर सुख की नींद सो रहे थे ।

**सुप्तेषु तेषु काकेषु विश्रब्धेषु समन्ततः ।**
**सोऽपश्यत् सहसायान्तमुलूकं घोरदर्शनम् ॥१४॥**

उन कौओं के सब ओर निर्भय होकर सो जाने पर अश्वत्थमा ने देखा कि सहसा एक भयानक उल्लू उधर आ निकला ।

**सन्निपत्य तु शाखायां न्यग्रोधस्य विहङ्गमः ।**
**सुप्ताञ्जघान सुबहून् वायसान् वायसान्तकः ॥१५॥**

कौओं के लिए कालरूपी उस पक्षी ने वटवृक्ष की उस शाखा पर बड़े वेग से आक्रमण किया और सोये हुए बहुत-से कौओं को मार डाला ।

**केषाँचिदच्छिनत् पक्षाञ्छिरांसि च चकर्त ह ।**
**चरणाँश्चैव केषाँचिद् बभञ्ज चरणायुधः ॥१६॥**

उसने अपने पञ्जों से ही अस्त्र का काम लेकर किन्हीं कौओं के पंख नोच डाले, किन्हीं के सिर काट लिये और किन्हीं के पाँव तोड़ डाले ।

**ताँस्तु हत्वा ततः काकान् कौशिको मुदितोऽभवत् ।**
**प्रतिकृत्य यथाकामं शत्रूणां शत्रुसूदनः ॥१७॥**

वह शत्रुओं का संहारक उलूक उन कौओं का वध करके अपने शत्रुओं से इच्छानुसार भरपूर बदला लेकर बहुत प्रसन्न हुआ

**तद् दृष्ट्वा सोपधं कर्म कौशिकेन कृतं निशि ।**
**तद्भावकृतसङ्कल्पो द्रौणिरेकोऽन्वचिन्तयत् ॥१८॥**

रात्रि में उलूक द्वारा किये गये उस कपटपूर्ण क्रूरकर्म को देखकर स्वयं भी वैसा ही करने का संङ्कल्प लेकर अश्त्थमा अकेला ही विचार करने लगा—

**उपदेशः कृतोऽनेन पक्षिणा मम संयुगे ।**
**शत्रूणां क्षपणे युक्तः प्राप्तः कालश्च मे मतः ॥१९॥**

'मुझे युद्ध में क्या करना चाहिए, इस पक्षी ने इसका उपदेश कर दिया । मैं समझता हूँ कि मेरे लिए इसी प्रकार शत्रुओं के संहार करने का समय प्राप्त हुआ है ।

**नाद्य शक्या मया हन्तुं पाण्डवा जितकाशिनः ।**
**बलवन्तः कृतोत्साहाः प्राप्तलक्ष्याः प्रहारिणः ॥२०॥**

'पाण्डव विजय से उल्लसित, बलवान्, उत्साही और प्रहार करने में कुशल हैं । उन्हें अपना लक्ष्य प्राप्त हो गया है । ऐसी दशा में आज मैं अपनी शक्ति से उनका वध नहीं कर सकता ।

**न्यायतो युद्धमानस्य प्राणत्यागो न संशयः ।**
**छद्मना च भवेत् सिद्धिः शत्रूणां च क्षयो महान् ॥२१॥**
**तत्र संशयितादर्थाद् योऽर्थो निःसंशयो भवेत् ।**
**तं जना बहु मन्यन्ते ये च शास्त्रविशारदाः ॥२२॥**

'इसमें सन्देह नहीं कि यदि मैं न्याय के अनुसार युद्ध करूँगा तो मुझे अपने प्राणों से हाथ धोना पड़ेगा । यदि छल से काम लूँ तो निश्चय ही मेरे अभीष्ट मनोरथ की सिद्धि हो सकती है । शत्रुओं का महान् संहार भी तभी सम्भव होगा । जहाँ सिद्धि मिलने में सन्देह हो, उसकी अपेक्षा उस उपाय का आश्रय लेना उत्तम है, जिसमें संशय के लिए स्थान न हो । साधारण लोग तथा शास्त्रज्ञ पुरुष भी उसी का अधिक आदर करते हैं ।

**अस्मिन्नर्थे पुरा गीताः श्रूयन्ते धर्मचिन्तकैः ।**
**श्लोका न्यायमवेक्षद्भिस्तत्त्वार्थास्तत्त्वदर्शिभिः ॥२३॥**

'इस विषय में न्याय पर दृष्टि रखनेवाले धर्म-चिन्तक एवं तत्त्वदर्शी पुरुषों ने प्राचीनकाल में ऐसे श्लोकों का गान किया है, जो तात्त्विक अर्थों का प्रतिपादन करनेवाले हैं। वे श्लोक इस प्रकार सुने जाते हैं—

**परिश्रान्ते विदीर्णे वा भुञ्जाने वापि शत्रुभिः।**
**प्रस्थाने वा प्रवेशे वा प्रहर्तव्यं रिपोर्बलम् ॥२४॥**

"शत्रुओं की सेना यदि बहुत थक गयी हो, तितर-बितर हो गई हो, भोजन कर रही हो, कहीं जा रही हो, अथवा किसी स्थान विशेष में प्रवेश कर रही हो तो भी विपक्षियों को उसपर प्रहार करना ही चाहिए।

**निद्रार्तमर्धरात्रे च तथा नष्टप्रणायकम्।**
**भिन्नयोधं बलं यच्च द्विधा युक्तं च यद् भवेत् ॥२५॥**

"जो सेना अर्धरात्रि में निद्रा में अचेत पड़ी हो, जिसका सेनापति मारा गया हो, जिसके योद्धाओं में फूट पड़ी हो, और जो दुविधा में पड़ी हो, उसपर शत्रु को अवश्य प्रहार करना चाहिए।"

**इत्येवं निश्चयं चक्रे सुप्तानां निशि मारणे।**
**पाण्डूनां सह पाञ्चालैर्द्रोणपुत्रः प्रतापवान् ॥२६॥**

इस प्रकार विचार करके प्रतापी द्रोणपुत्र ने रात्रि में सोते समय पाञ्चालोंसहित पाण्डवों के वध का निश्चय किया।

**स क्रूरां मतिमास्थाय विनिश्चित्य मुहुर्मुहुः।**
**सुप्तौ प्राबोधयत् तौ तु मातुलं भोजमेव च ॥२७॥**

क्रूरतापूर्ण बुद्धि का सहारा ले, बारम्बार उपर्युक्त निश्चय करके अश्वत्थामा ने सोये हुए अपने मामा कृपाचार्य और भोजवंशी कृतवर्मा को जगाया।

**तौ प्रबुद्धौ महात्मानौ कृपभोजौ महाबलौ।**
**नोत्तरं प्रतिपद्येतां तत्र युक्तां ह्रिया वृतौ ॥२८॥**

जागने पर महामनस्वी महाबली कृपाचार्य और कृतवर्मा ने जब अश्वत्थामा का निश्चय सुना, तब वे लज्जा से गड़ गये और उन्हें कोई उत्तर नहीं सूझा।

**स मुहूर्तमिव ध्यात्वा बाष्पविह्वलमब्रवीत्।**
**भवतोस्तु यदि प्रज्ञा न मोहादपनीयते।**
**व्यापन्नेऽस्मिन् महत्यर्थे यन्नः श्रेयस्तदुच्यताम् ॥२९**

तब अश्वत्थामा दो घड़ी तक चिन्तामग्न रहकर अश्रुगद्गद वाणी में इस प्रकार बोला—"यदि आपकी बुद्धि मोह से नष्ट न हो गई हो तो इस महान् संकट के समय अपने बिगड़े हुए कार्य को बनाने के उद्देश्य से हमारे लिए क्या करना श्रेष्ठ होगा, यह बताइए।"

कृप उवाच

**श्रुतं ते वचनं सर्वं यद्यदुक्तं त्वया विभो।**
**ममापि तु वचः किञ्चिच्छृणुष्वाद्य महाभुज ॥३०॥**

**कृपाचार्य ने कहा**—शक्तिशाली महाबाहो! तुमने जो-जो बात कही है, वह सब मैंने सुन ली। अब कुछ मेरी भी बात सुनो।

**आबद्धा मानुषाः सर्वे निबद्धाः कर्मणोर्द्वयोः।**
**दैवे पुरुषकारे च परं ताभ्यां न विद्यते ॥३१॥**

सभी मनुष्य प्रारब्ध और पुरुषार्थ दो प्रकार के कर्मों से बँधे हुए हैं। इन दो के सिवा दूसरा कुछ नहीं है।

**न हि दैवेन सिध्यन्ति कार्याण्येकेन सत्तम।**
**न चापि कर्मणैकेन द्वाभ्यां सिद्धिस्तु योगतः ॥३२॥**

सत्पुरुषों में श्रेष्ठ अश्वत्थामन्! केवल दैव या प्रारब्ध से अथवा अकेले पुरुषार्थ से भी कार्यों की सिद्धि नहीं होती है। दोनों के संयोग से ही सिद्धि प्राप्त होती है।

**पर्जन्यः पर्वते वर्षन् किन्नु साधयते फलम्।**
**कृष्टे क्षेत्रे तथा वर्षन् किन्नु साधयते फलम् ॥३३॥**

मेघ पर्वत पर वर्षा करके किस फल की सिद्धि करता है? वही मेघ यदि जोते हुए खेत में वर्षा करे तो वह कौन-सा फल नहीं उत्पन्न कर सकता?

**उत्थानं चाप्यदैवस्य ह्यनुत्थानं च दैवतम्।**
**व्यर्थं भवति सर्वत्र पूर्वस्तत्र विनिश्चयः ॥३४॥**

दैवरहित पुरुष का पुरुषार्थ व्यर्थ है और पुरुषार्थ शून्य दैव भी व्यर्थ हो जाता है। सर्वत्र ये दो ही पक्ष उठाये जाते हैं। इन दोनों में पहला पक्ष ही सिद्धान्त-भूत एवं श्रेष्ठ है [अर्थात् दैव के सहयोग के बिना पुरुषार्थ काम नहीं देता]।

**सुवृष्टे च यथा देवे सम्यक् क्षेत्रे च कर्षिते।**
**बीजं महागुणं भूयात् तथा सिद्धिर्हि मानुषी ॥३५॥**

जैसे मेघ ने अच्छी प्रकार वर्षा की हो और खेत को भी भली-भाँति जोता गया हो, तब उसमें बोया

हुआ बीज अधिक लाभदायक हो सकता है। इसी प्रकार मनुष्यों की सारी सिद्धि दैव और पुरुषार्थ के सहयोग पर ही अवलम्बित है।

**कृतः पुरुषकारश्च सोऽपि दैवेन सिध्यति।**
**तथास्य कर्मणः कर्तुरभिनिर्वर्तते फलम् ॥३६॥**

किया हुआ पुरुषार्थ भी दैव के सहयोग से ही सफल होता है तथा दैव की अनुकूलता से ही कर्ता को उसके कर्म का फल प्राप्त होता है।

**उत्थानं च मनुष्यणां दक्षाणां दैववर्जितम्।**
**अफलं दृश्यते लोके सम्यगप्युपपादितम् ॥३७॥**

चतुर मनुष्यों द्वारा अच्छी प्रकार सम्पादित किया हुआ पुरुषार्थ भी यदि दैव के सहयोग से रहित है तो वह संसार में निष्फल होता दिखाई देता है।

**तत्रालसा मनुष्याणां ये भवन्त्यमनस्विनः।**
**उत्थानं ते विगर्हन्ति प्राज्ञानां तन्न रोचते ॥३८॥**

मनुष्यों में जो आलसी और मन पर काबू न रखनेवाले होते हैं, वे पुरुषार्थ की निन्दा करते हैं, परन्तु विद्वानों को यह बात अच्छी नहीं लगती।

**प्रायशो हि कृतं कर्म नाफलं दृश्यते भुवि।**
**अकृत्वा च पुनर्दुःखं कर्म पश्येन्महाफलम् ॥३९॥**

प्रायः किया हुआ कर्म इस संसार में कभी व्यर्थ होता नहीं देखा जाता, परन्तु कर्म न करने से दुःख की प्राप्ति ही देखने में आती है, अतः कर्म को महान् फलदायक समझना चाहिए।

**चेष्टामकुर्वल्लँभते यदि किञ्चिद् यदृच्छया।**
**यो वा न लभते कृत्वा दुर्दर्शौ तावुभावपि ॥४०॥**

यदि कोई पुरुषार्थ न करके दैवेच्छा से ही कुछ पा जाता है अथवा जो पुरुषार्थ करके भी कुछ नहीं पाता, इन दोनों प्रकार के मनुष्यों का मिलना बहुत कठिन है।

**शक्नोति जीवितुं दक्षो नालसः सुखमेधते।**
**दृश्यन्ते जीवलोकेऽस्मिन् दक्षाः प्रायो हितैषिणः ॥४१**

पुरुषार्थ में लगा हुआ दक्ष पुरुष सुख से जीवन-निर्वाह कर सकता है, परन्तु आलसी मनुष्य कभी सुखी नहीं होता। इस संसार में प्रायः तत्परतापूर्वक कर्म करनेवाले ही अपना हित साधन करते देखे जाते हैं।

**यदि दक्षः समारम्भात् कर्मणो नाश्नुते फलम्।**
**नास्य वाच्यं भवेत्किचिल्लब्धव्यं वाधिगच्छति ॥४२॥**

यदि कार्यदक्ष मनुष्य कर्म का आरम्भ करके भी उसका कोई फल नहीं पाता है तो उसके लिए उसकी कोई निन्दा नहीं की जाती अथवा वह अपने प्राप्तव्य लक्ष्य को पा ही लेता है।

**अकृत्वा कर्म यो लोके फलं विन्दति धिष्ठितः।**
**स तु वक्तव्यतां याति द्वेष्यो भवति भूयशः ॥४३॥**

परन्तु जो इस संसार में कोई कर्म न करके बैठा-बैठा फल भोगता है, वह प्रायः निन्दित होता है और दूसरों के द्वेष का पात्र बन जाता है।

**हीनं पुरुषकारेण यदि दैवेन वा पुनः।**
**कारणाभ्यामथैताभ्यामुत्थानमफलं भवेत् ॥४४॥**

पुरुषार्थहीन दैव अथवा दैवहीन पुरुषार्थ—इन दो ही कारणों से मनुष्य का उद्योग निष्फल होता है।

**दैवतेभ्यो नमस्कृत्य यस्त्वर्थान् सम्यगीहते।**
**दक्षो दाक्षिण्यसम्पन्नो न स मोघैर्विहन्यते ॥४५॥**

जो दैव को मस्तक झुकाकर सभी कार्यों के लिए भली-भाँति चेष्टा करता है, वह दक्ष एवं उदार मनुष्य असफलताओं का शिकार नहीं होता।

**सम्यगीहा पुनरियं यो वृद्धानुपसेवते।**
**आपृच्छति च यच्छ्रेयः करोति च हितं वचः ॥४६॥**

यह भली-भाँति चेष्टा उसी की मानी जाती है जो बड़े-बूढ़ों की सेवा करता है, उनसे अपने कल्याण की बात पूछता है और उनके बताये हुए हितकारक वचनों का पालन करता है।

**उत्थायोत्थाय हि सदा प्रष्टव्या वृद्धसम्मताः।**
**ते स्म योगे परं मूलं तन्मूला सिद्धिरुच्यते ॥४७॥**

प्रतिदिन प्रातःकाल उठ-उठकर वृद्धजनों द्वारा सम्मानित पुरुषों से अपने हित की बात पूछनी चाहिए, क्योंकि वे अप्राप्त की प्राप्ति करानेवाले उपाय के मुख्य कारण हैं। उनके द्वारा निर्दिष्ट उपाय ही सिद्धि का मूलकारण कहा जाता है।

**वृद्धानां वचनं श्रुत्वा योऽभ्युत्थानं प्रयोजयेत्।**
**उत्थानस्य फलं सम्यक् तदा स लभतेऽचिरात् ॥४८॥**

जो वृद्ध पुरुषों का वचन सुनकर उसके अनुसार कार्यारम्भ करता है, वह उस कार्य का उत्तम फल

शीघ्र ही प्राप्त कर लेता है।

**रागात्क्रोधाद्भयाल्लोभाद्योऽर्थानीहेत मानवः।**
**अनीशश्चावमानी च स शीघ्रं भ्रश्यते श्रियः॥४९॥**

अपने मन को वश में न रखते हुए दूसरों की अवहेलना करनेवाला जो मानव राग, क्रोध, भय और लोभ से किसी कार्य की सिद्धि के लिए चेष्टा करता है, वह अति शीघ्र अपने ऐश्वर्य से भ्रष्ट हो जाता है।

**सोऽयं दुर्योधनेनार्थो लुब्धेनादीर्घदर्शिना।**
**असमर्थ्य समारब्धो मूढत्वादविचिन्तितः॥५०॥**
**हितबुद्धीननादृत्य सम्मन्त्र्यासाधुभिः सह।**
**वार्यमाणोऽकरोद् वैरं पाण्डवैर्गुणवत्तरैः॥५१॥**

दुर्योधन लोभी और अदूरदर्शी था। उसने मूर्खतावश न तो किसी का समर्थन प्राप्त किया और न स्वयं ही अधिक सोच-विचार किया। उसने अपना हित चाहनेवाले लोगों का अनादर करके दुष्टों के साथ सलाह की और सबके मना करने पर भी अधिक गुणवान् पाण्डवों के साथ वैर बाँध लिया।

**पूर्वमप्यतिदुःशीलो न धैर्यं कर्तुमर्हति।**
**तपत्यर्थे विपन्ने हि मित्राणां न कृतं वचः॥५२॥**

पहले भी वह अति दुष्ट स्वभाव का था। धैर्य रखना तो वह जानता ही न था। उसने अपने मित्रों की बात नहीं मानी, अतः अब काम बिगड़ जाने पर पश्चात्ताप करता है।

**अनुवर्तामहे यत्तु तं वयं पापपूरुषम्।**
**अस्मानप्यनयस्तस्मात् प्राप्तोऽयं दारुणो महान्॥५३॥**

हम लोग जो उस पापी का अनुसरण कर रहे हैं, अतः हमें भी यह अत्यन्त दारुण अनर्थ प्राप्त हुआ है।

**अनेन तु ममाद्यापि व्यसनेनोपतापिता।**
**बुद्धिश्चिन्तयते किंचित् स्वं श्रेयो नावबुद्ध्यते॥५४॥**

इस संकट से सर्वथा सन्तप्त होने के कारण मेरी बुद्धि आज बहुत विचार-विमर्श करने पर भी अपने लिए किसी हितकर कार्य का निर्णय नहीं कर पाती है।

**मुह्यता तु मनुष्येण प्रष्टव्याः सुहृदो जनाः।**
**तत्रास्य बुद्धिर्विनयस्तत्र श्रेयश्च पश्यति॥५५॥**

जब मनुष्य मोह के वशीभूत हो अपने हित और अहित का निर्णय करने में असमर्थ हो, तब उसे अपने मित्रों से सलाह लेनी चाहिए। वहीं उसे बुद्धि और विनय की प्राप्ति हो सकती है और वहीं उसे अपने हित का साधन भी दिखाई देता है।

**ते वयं धृतराष्ट्रं च गान्धारीं च समेत्य ह।**
**उपपृच्छामहे गत्वा विदुरं च महामतिम्॥५६॥**

अतः हम लोग राजा धृतराष्ट्र, देवी गान्धारी और परम बुद्धिमान् विदुरजी के पास चलकर पूछें।

**ते पृष्टास्तु वदेयुर्यच्छ्रेयो नः समनन्तरम्।**
**तदस्माभिः पुनः कार्यमिति मे नैष्ठिकी मतिः॥५७॥**

हमारे पूछने पर वे लोग अब हमारे लिए जो श्रेयस्कर कार्य बताएँ, वही हमें करना चाहिए, मेरी बुद्धि का तो यही दृढ़ निश्चय है।

**इति महाभारते सौप्तिकपर्वणि प्रथमोऽध्यायः॥१॥**

# द्वितीयोऽध्यायः

**अश्वत्थामा का कृपाचार्य और कृतवर्मा को उत्तर देते हुए रात्रि में सोते हुए पाण्डवों को मारने का आग्रह करना और तीनों का पाण्डव-शिबिर की ओर प्रस्थान**

सञ्जय उवाच

**कृपस्य वचनं श्रुत्वा धर्मार्थसहितं शुभम्।**
**अश्वत्थामा महाराज दुःखशोकसमन्वितः॥१॥**
**दह्यमानस्तु शोकेन प्रदीप्तेनाग्निना यथा।**
**क्रूरं मनस्ततः कृत्वा तावुभौ प्रत्यभाषत॥२॥**

सञ्जय कहते हैं—महाराज! कृपाचार्य के धर्म और अर्थ से युक्त मङ्गलकारी वचनों को सुनकर अश्वत्थामा दुःख और शोक में डूब गया। उसके हृदय में शोक की अग्नि प्रज्वलित हो उठी। वह उस अग्नि से जलने लगा और अपने मन को कठोर बनाकर कृपाचार्य और कृतवर्मा दोनों से इस प्रकार बोला—

अश्वत्थामोवाच

**पुरुषे पुरुषे बुद्धिर्या या भवति शोभना।**
**तुष्यन्ति च पृथक् सर्वे प्रज्ञया ते स्वया स्वया ।।३।।**

**अश्वत्थामा ने कहा**—मामाजी ! प्रत्येक मनुष्य में जो पृथक्-पृथक् बुद्धि होती है, वही उसे सुन्दर जान पड़ती है। अपनी-अपनी उसी बुद्धि से सब लोग अलग-अलग सन्तुष्ट रहते हैं।

**सर्वो हि मन्यते लोक आत्मानं बुद्धिमत्तरम्।**
**सर्वस्यात्मा बहुमतः सर्वात्मानं प्रशंसति ।।४।।**

सभी लोग अपने-आपको अधिक बुद्धिमान् समझते हैं। सबको अपनी ही बुद्धि अधिक महत्त्व-पूर्ण जान पड़ती है और सब लोग अपनी ही बुद्धि की प्रशंसा करते हैं।

**सर्वस्य हि स्वका प्रज्ञा साधुवादे प्रतिष्ठिता।**
**परबुद्धिं च निन्दन्ति स्वां प्रशंसन्ति चासकृत् ।।५।।**

सबकी दृष्टि में अपनी ही बुद्धि धन्यवाद पाने के योग्य ऊँचे पद पर प्रतिष्ठित जान पड़ती है। सब लोग दूसरों की बुद्धि की निन्दा और अपनी बुद्धि की निरन्तर प्रशंसा करते हैं।

**सर्वो हि पुरुषो भोज साध्वेतदिति निश्चितः।**
**कर्तुमारभते प्रीतो मारणादिषु कर्मसु ।।६।।**

कृतवर्मन् ! सभी मनुष्य "यह श्रेष्ठ कार्य है" —ऐसा निश्चय करके प्रसन्नतापूर्वक कार्य-आरम्भ करते हैं और हिंसा आदि कर्मों में भी लग जाते हैं।

**सर्वे हि बुद्धिमाज्ञाय प्रज्ञां वापि स्वकां नराः।**
**चेष्टन्ते विविधां चेष्टां हितमित्येव जानते ।।७।।**

सब लोग अपनी ही बुद्धि अथवा विवेक का आश्रय लेकर भाँति-भाँति की चेष्टाएँ करते हैं और उन्हें अपने लिए हितकर ही समझते हैं।

**उपजाता व्यसनजा येयमद्य मतिर्मम।**
**युवयोस्तां प्रवक्ष्यामि मम शोकविनाशिनीम् ।।८।।**

आज संकट में पड़ने से मेरे अन्दर जो बुद्धि उत्पन्न हुई है, उसे मैं आप दोनों को बता रहा हूँ। वह मेरे शोक का विनाश करनेवाली है।

**अदान्तो ब्राह्मणोऽसाधुर्निस्तेजाः क्षत्रियोऽधमः।**
**अदक्षो निन्द्यते वैश्यः शूद्रश्च प्रतिकूलवान् ।।९।।**

मन और इन्द्रियों को वश में न रखनेवाला ब्राह्मण अच्छा नहीं माना जाता। तेजहीन क्षत्रिय अधम समझा जाता है, व्यापार में अकुशल वैश्य की निन्दा की जाती है और अन्य वर्णों के प्रतिकूल चलनेवाले शूद्र को भी निन्दनीय माना जाता है।

**सोऽस्मि जातः कुले श्रेष्ठे ब्राह्मणानां सुपूजिते।**
**मन्दभाग्यतयास्म्येतं क्षत्रधर्ममनुष्ठितः ।।१०।।**

मैंने ब्राह्मणों के परम सम्मानित श्रेष्ठ कुल में जन्म लिया है, तथापि दुर्भाग्य के कारण मैं इस क्षत्रियधर्म का अनुष्ठान कर रहा हूँ।

**सोऽहमद्य यथाकामं क्षत्रधर्ममुपास्य तम्।**
**गन्तास्मि पदवीं राज्ञः पितुश्चापि महात्मनः ।।११।।**

अतः आज मैं अपनी रुचि के अनुसार उस क्षत्रियधर्म का सहारा लेकर अपने महात्मा पिता और राजा दुर्योधन के पथ का अनुसरण करूँगा।

**अद्य स्वप्स्यन्ति पाञ्चाला विश्वस्ता जितकाशिनः।**
**विमुक्तयुग्यकवचा हर्षेण च समन्विताः ।।१२।।**

आज अपनी विजय से सुशोभित होनेवाले पाञ्चाल योद्धा अत्यन्त हर्ष में भरकर कवच उतार, जूओं में जुते हुए घोड़ों को खोलकर बेखटके सो रहे होंगे।

**अद्य पाञ्चालसेनां तां निहत्य निशि सौप्तिके।**
**कृतकृत्यः सुखी चैव भविष्यामि महामते ।।१३।।**

महामते ! आज रात्रि में सोते समय उस पाञ्चाल सेना का वध करके मैं कृतकृत्य एवं सुखी हो जाऊँगा।

कृप उवाच

**दिष्ट्या ते प्रतिकर्तव्ये मतिर्जातेयमच्युत।**
**न त्वां वारयितुं शक्तो वज्रपाणिरपि स्वयम् ।।१४।।**

**कृपाचार्य बोले**—तात ! तुम अपने निश्चय से डिगनेवाले नहीं हो। सौभाग्य की बात है कि तुम्हारे मन में बदला लेने का दृढ़ विचार उत्पन्न हुआ है। तुम्हें साक्षात् वज्रधारी इन्द्र भी इस कार्य से रोक नहीं सकते।

**अनुयास्यावहे त्वां तु प्रभाते सहितावुभौ।**
**अद्य रात्रौ विश्रमस्व विमुक्तकवचध्वजः ।।१५।।**

आज रात्रि में कवच और ध्वजा खोलकर विश्राम करो। कल प्रातः हम दोनों [मैं तथा कृतवर्मा]

एकसाथ होकर तुम्हारे पीछे-पीछे चलेंगे ।

**शक्तस्त्वमसि विक्रान्तुं विश्रमस्व निशामिमाम् ।**
**चिरं ते जाग्रतस्तात स्वप तावन्निशामिमाम् ॥१६॥**

तात ! तुम पराक्रम प्रकट करके शत्रुओं का वध करने में समर्थ हो, अतः इस रात्रि में विश्राम कर लो । तुम्हें जागते हुए बहुत देर हो गई है, अब इस रात में सो लो ।

**विश्रान्तश्च विनिद्रश्च स्वस्थचित्तश्च मानद ।**
**समेत्य समरे शत्रून् वधिष्यसि न संशयः ॥१७॥**

मानद ! थकान दूर करके निद्रा पूरी कर लेने से तुम्हारा चित्त स्वस्थ हो जाएगा । फिर तुम समरभूमि में जाकर शत्रुओं का वध कर सकोगे, इसमें संशय नहीं है ।

**न हि त्वां रथिनां श्रेष्ठं प्रगृहीतवरायुधम् ।**
**जेतुमुत्सहते शश्वदपि देवेषु वासवः ॥१८॥**

तुम रथियों में श्रेष्ठ हो । तुमने अपने हाथ में उत्तम आयुध ले रखा है । तुम्हें देवताओं के राजा इन्द्र भी कभी जीतने का साहस नहीं कर सकते ।

**न चाहं समरे तात कृतवर्मा न चैव हि ।**
**अनिर्जित्य रणे पाण्डून् व्यपयास्याव कर्हिचित् ॥१९॥**

तात ! समरभूमि में मैं और कृतवर्मा भी पाण्डवों को परास्त किये बिना कभी पीछे नहीं हटेंगे ।

**हत्वा च समरे क्रुद्धान्पाञ्चालान्पाण्डुभिः सह ।**
**निर्वर्तिष्यामहे सर्वे हता वा स्वर्गगा वयम् ॥२०॥**

रणभूमि में क्रुद्ध हुए पाञ्चालों को पाण्डवोंसहित मारकर ही हम सब लोग पीछे हटेंगे अथवा स्वयं ही मारे जाकर स्वर्गलोक की राह लेंगे ।

**सर्वोपायैः सहायास्ते प्रभाते वयमाहवे ।**
**सत्यमेतन्महाबाहो प्रब्रवीमि तवानघ ॥२१॥**

निष्पाप महाबाहु वीर ! कल प्रातःकाल हम लोग सभी उपायों से युद्ध में तुम्हारे सहायक होंगे । मैं तुमसे यह सच्ची बात कह रहा हूँ ।

सञ्जय उवाच

**एवमुक्तस्ततो द्रौणिर्मातुलेन हितं वचः ।**
**अब्रवीन्मातुलं राजन् क्रोधसंरक्तलोचनः ॥२२॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! मामा के इस प्रकार हितकारक वचन कहने पर द्रोणपुत्र अश्वत्थामा ने क्रोध से लाल आँखें करके उनसे कहा—

**आतुरस्य कुतो निद्रा नरस्यामर्षितस्य च । □**
**अर्थांश्चिन्तयतश्चापि कामयानस्य वा पुनः ॥२३॥**

"मामाजी ! जो मनुष्य शोकातुर हो, अमर्ष= क्रोध से भरा हो, नाना प्रकार के कार्यों की चिन्ता कर रहा हो तथा किसी कामना में आसक्त हो, इन चारों दुःखों से अभिभूत व्यक्ति को निद्रा कैसे आ सकती है ?

**यस्य भागश्चतुर्थो मे स्वप्नमह्नाय नाशयेत् ।**
**किं नाम दुःखं लोकेऽस्मिन् पितुर्वधमनुस्मरन् ।**
**हृदयं निर्दहन्मेऽद्य रात्र्यहनि न शाम्यति ॥२४॥**

"इन चारों का चौथाई भाग जो शोक है, वही मेरी निद्रा को तत्काल नष्ट किये देता है । अपने पिता के वध की घटना का बार-बार स्मरण करके इस संसार में कौन-सा ऐसा दुःख है, जिसका मुझे अनुभव न होता हो ! वह शोकाग्नि रात-दिन मेरे हृदय को जलाती हुई अबतक बुझ नहीं पा रही है ।

**विलापो भग्नसक्थस्य यस्तु राज्ञो मया श्रुतः ।**
**स पुनर्हृदयं कस्य क्रूरस्यापि न निर्दहेत् ॥२५॥**

"दूसरी ओर, जिसकी जाँघें तोड़ डाली गई हैं, उस राजा दुर्योधन का जो विलाप मैंने अपने कानों से सुना है, वह किस क्रूर मनुष्य के हृदय को शोक-सन्तप्त नहीं कर देगा ?

**अहं तु कदनं कृत्वा शत्रूणामद्य सौप्तिके ।**
**ततो विश्रमिता चैव स्वप्ता च विगतज्वरः ॥२६॥**

"मैं तो आज सोते समय शत्रुओं का संहार करके निश्चिन्त होने पर ही विश्राम करूँगा और नींद लूँगा ।"

कृप उवाच

**न वधः पूज्यते लोके सुप्तानामिह धर्मतः ।**
**तथैवापास्तशस्त्राणां विमुक्तरथवाजिनाम् ॥२७॥**
**ये च ब्रूयुस्तवास्मीति ये च स्युः शरणागताः ।**
**विमुक्तमूर्धजा ये च ये चापि हतवाहनाः ॥२८॥**

**कृपाचार्य बोले**—हे तात ! जो सोये हुए हों, जिन्होंने अस्त्र-शस्त्र रख दिये हों, रथ और घोड़े खोल दिये हों, जो "मैं आपका हूँ"—ऐसा कह रहे हों, जो शरण में आ गये हों, जिनके बाल खुले हुए

हों और जिनके वाहन नष्ट हो गये हों, इस संसार में ऐसे लोगों का वध करना धर्म की दृष्टि से अच्छा नहीं समझा जाता।

**अद्य स्वप्स्यन्ति पाञ्चाला विमुक्तकवचा विभो।**
**विश्वस्ता रजनीं सर्वे प्रेता इव विचेतसः ॥२९॥**
**यस्तेषां तदवस्थानां द्रुह्येत पुरुषोऽनृजुः।**
**व्यक्तं स नरके मज्जेदगाधे विपुलेऽप्लवे ॥३०॥**

प्रभो! आज रात्रि में समस्त पाञ्चाल कवच उतारकर निश्चिन्त हो मुर्दों के समान अचेत होकर सो रहे होंगे। ऐसी दशा में जो क्रूर मनुष्य उनके साथ द्रोह करेगा, वह निश्चय ही नौकारहित अगाध एवं विशाल नरक के समुद्र में गिर पड़ेगा।

**सर्वास्त्रविदुषां लोके श्रेष्ठस्त्वमसि विश्रुतः।**
**न च ते जातु लोकेऽस्मिन्सुसूक्ष्ममपि किल्बिषम् ॥३१॥**

संसार के समस्त अस्त्रवेत्ताओं में तुम श्रेष्ठ हो। तुम्हारी सर्वत्र प्रसिद्धि है। इस संसार में अबतक कभी तुम्हारा छोटे-से-छोटा दोष भी देखने में नहीं आया है।

**त्वं पुनः सूर्यसंकाशः श्वोभूत उदिते रवौ।**
**प्रकाशे सर्वभूतानां विजेता युधि शात्रवान् ॥३२॥**

कल प्रातः सूर्योदय होने पर तुम सूर्य के समान प्रकाशित हो, उजाले में युद्ध छेड़कर समस्त प्राणियों के सामने पुनः शत्रुओं पर विजय प्राप्त करना।

**असम्भावितरूपं हि त्वयि कर्म विगर्हितम्।**
**शुक्ले रक्तमिव न्यस्तं भवेदिति मतिर्मम ॥३३॥**

जैसे श्वेत वस्त्र में लाल रंग का धब्बा लग जाए, वैसे ही तुममें निन्दित कर्म का होना सम्भावना से परे की बात है, ऐसा मेरा विश्वास है।

अश्वत्थामोवाच

**एवमेव यथाऽऽत्थ त्वं मातुलेह न संशयः।**
**तैस्तु पूर्वमयं सेतुः शतधा विदलीकृतः ॥३४॥**

**अश्वत्थामा बोला**—मामाजी! आप जैसा कहते हैं, निःसन्देह वही ठीक है, परन्तु पाण्डवों ने ही पहले इस धर्ममर्यादा के सैकड़ों टुकड़े कर डाले हैं।

**प्रत्यक्षं भूमिपालानां भवतां चापि सन्निधौ।**
**न्यस्तशस्त्रो मम पिता धृष्टद्युम्नेन घातितः ॥३५॥**

धृष्टद्युम्न ने सम्पूर्ण राजाओं के समक्ष और आप लोगों के निकट ही मेरे उस पिता को मार गिराया जिसने अस्त्र-शस्त्र रख दिये थे।

**दुर्योधनश्च भीमेन समेत्य गदया रणे।**
**पश्यतां भूमिपालानामधर्मेण निपातितः ॥३६॥**

भीमसेन ने भी सम्पूर्ण राजाओं के देखते-देखते युद्धभूमि में गदायुद्ध करते समय दुर्योधन को अधर्मपूर्वक गिराया था।

**विलापो भग्नसक्थस्य यो मे राज्ञः परिश्रुतः।**
**वार्तिकाणां कथयतां स मे मर्माणि कृन्तति ॥३७॥**

टूटी जाँघवाले राजा दुर्योधन का जो विलाप मैंने सुना है और सन्देशवाहक दूतों के मुख से जो समाचार मुझे ज्ञात हुआ है, वह सब मेरे मर्मस्थानों को विदीर्ण किये देता है।

**पितृहन्तॄनहं हत्वा पाञ्चालान् निशि सौप्तिके।**
**कामं कीटः पतङ्गो वा जन्म प्राप्य भवामि वै ॥३८॥**

पिता की हत्या करनेवाले पाञ्चालों का रात्रि में सोते समय वध करके मैं भले ही दूसरे जन्म में कीट या पतङ्ग हो जाऊँ, सब-कुछ स्वीकार है।

**त्वरे चाहमनेनाद्य यदिदं मे चिकीर्षितम्।**
**तस्य मे त्वरमाणस्य कुतो निद्रा कुतः सुखम् ॥३९॥**

इस समय मैं जो कुछ करना चाहता हूँ, उसी को पूर्ण करने के उद्देश्य से उतावला हो रहा हूँ। इतनी उतावली में रहते हुए मुझे नींद कहाँ और सुख कहाँ?

**न स जातः पुमाँल्लोके कश्चिन्न स भविष्यति।**
**यो मे व्यावर्तयेदेतां वधे तेषां कृतां मतिम् ॥४०॥**

इस संसार में ऐसा कोई पुरुष न तो पैदा हुआ है और न होगा ही, जो उन पाञ्चालों को मौत के घाट उतारने के लिए किये गये मेरे इस दृढ़ निश्चय को पलट दे।

सञ्जय उवाच

**एवमुक्त्वा महाराज द्रोणपुत्रः प्रतापवान्।**
**एकान्ते योजयित्वाश्वान् प्रायादभिमुखः परान् ॥४१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—महाराज! ऐसा कहकर प्रतापी द्रोणपुत्र अश्वत्थामा एकान्त में घोड़ों को जोतकर शत्रुओं की ओर चल दिया।

**तमब्रूतां महात्मानौ भोजशारद्वतावुभौ ।**
**किमर्थं स्यन्दनो युक्तः किञ्च कार्यं चिकीर्षितम् ॥४२॥**

उस समय भोजवंशी कृतवर्मा और शरद्वान् के पुत्र कृपाचार्य दोनों महामनस्वी वीरों ने उससे कहा—"अश्वत्थामन् ! तुमने रथ को क्यों जोता है ? तुम इस समय क्या करना चाहते हो ?

**एकसार्थप्रयातौ स्वस्त्वया सह नरर्षभ ।**
**समदुःखसुखौ चापि नावां शङ्कितुमर्हसि ॥४३॥**

"नरश्रेष्ठ ! हम दोनों एकसाथ तुम्हारी सहायता के लिए चले हैं । तुम्हारे दुःख-सुख में हमारा समान भाग होगा । तुम्हें हम दोनों पर सन्देह नहीं करना चाहिए ।"

**अश्वत्थामा तु संक्रुद्धः पितुर्वधमनुस्मरन् ।**
**ताभ्यां तथ्यं तथाऽऽचख्यौ यदस्यात्मचिकीर्षितम् ॥४४**

उस समय अश्वत्थामा अपने पिता के वध का स्मरण कर अति कुपित हो रहा था । उसके मन में जो कुछ करने की इच्छा थी, वह सब उसने दोनों से ठीक-ठीक कह सुनाया ।

**हत्वा शतसहस्राणि योधानां निशितैः शरैः ।**
**न्यस्तशस्त्रो मम पिता धृष्टद्युम्नेन घातितः ॥४५॥**

वह बोला—"मेरे पिता अपने तीखे बाणों से लाखों योद्धाओं का वध करके जब अस्त्र-शस्त्र नीचे डाल चुके थे, उस अवस्था में धृष्टद्युम्न ने उनका वध किया था ।

**तं तथैव हनिष्यामि न्यस्तधर्माणमद्य वै ।**
**पुत्रं पाञ्चालराजस्य पापं पापेन कर्मणा ॥४६॥**

"अतः धर्म का परित्याग करनेवाले उस पापी पाञ्चाल-राजकुमार को भी मैं उसी प्रकार पापकर्म द्वारा ही मार डालूँगा ।

**क्षिप्रं संनद्धकवचौ सखड्गावात्तकार्मुकौ ।**
**मामास्थाय प्रतीक्षेतां रथवर्यौ परन्तपौ ॥४७॥**

"आप दोनों रथियों में श्रेष्ठ और शत्रुओं को सन्ताप देनेवाले वीर हैं । आप शीघ्र ही कवच बाँध-कर खड्ग और धनुष हाथ में लेकर रथ पर आरूढ़ होकर मेरी प्रतीक्षा कीजिए ।"

**इत्युक्त्वा रथमास्थाय प्रायादभिमुखः परान् ।**
**तमन्वगात् कृपो राजन् कृतवर्मा च सात्वतः ॥४८॥**

राजन् ! ऐसा कहकर अश्वत्थामा रथ पर आरूढ़ हो शत्रुओं की ओर चल दिया । कृपाचार्य और सात्वतवंशी कृतवर्मा भी उसी के मार्ग का अनु-सरण करने लगे ।

**ते प्रयाता व्यरोचन्त परानभिमुखास्त्रयः ।**
**हूयमाना यथा यज्ञे समिद्धा हव्यवाहनाः ॥४९॥**

शत्रुओं की ओर जाते समय वे तीनों तेजस्वी वीर यज्ञ में आहुति पाकर प्रज्वलित हुए तीन अग्नियों की भाँति प्रकाशित हो रहे थे ।

**ययुश्च शिबिरं तेषां सम्प्रसुप्तजनं विभो ।**
**द्वारदेशं तु सम्प्राप्य द्रौणिस्तस्थौ महारथः ॥५०॥**

प्रभो ! वे तीनों पाण्डवों और पाञ्चालों के उस शिबिर के पास गये, जहाँ सब लोग सो गये थे । शिबिर के द्वार पर पहुँचकर महारथी अश्वत्थामा खड़ा हो गया ।

**इति महाभारते सौप्तिकपर्वणि द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥**

# तृतीयोऽध्यायः

## अश्वत्थामा द्वारा रात्रि में सोये हुए पाञ्चाल आदि समस्त वीरों का संहार

सञ्जय उवाच

**तस्मिन् प्रयाते शिबिरं द्रोणपुत्रे महात्मनि ।**
**कृपश्च कृतवर्मा च शिबिरद्वार्यतिष्ठताम् ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! महामनस्वी द्रोणपुत्र अश्वत्थामा जब शिबिर के भीतर जाने लगा, तब कृपाचार्य एवं कृतवर्मा भी द्वार पर जा खड़े हुए ।

**अश्वत्थामा तु तौ दृष्ट्वा यत्नवन्तौ महारथौ ।**
**प्रहृष्टः शनकैः राजन्निदं वचनमब्रवीत् ॥२॥**

महाराज ! उन दोनों महारथियों को अपना साथ देने के लिए उद्यत देखकर अश्वत्थामा को बड़ी प्रसन्नता हुई और उसने उनसे धीरे से इस प्रकार कहा—

**यत्तौ भवन्तौ पर्याप्तौ सर्वक्षत्रस्य नाशने ।**
**किं पुनर्योधशेषस्य प्रसुप्तस्य विशेषतः ॥३॥**

"यदि आप दोनों सावधान होकर चेष्टा करें तो सम्पूर्ण क्षत्रियों का विनाश करने के लिए पर्याप्त हैं। फिर इन बचे-खुचे और विशेषतः सोये हुए योद्धाओं को मारना कौन-सी बड़ी बात है !

**अहं प्रवेक्ष्ये शिबिरं चरिष्यामि च कालवत् ।**
**यथा न कश्चिदपि वा जीवन् मुच्येत मानवः ॥४॥**
**तथा भवद्भ्यां कार्यं स्यादिति मे निश्चिता मतिः ।**
**इत्युक्त्वा प्राविशद् द्रौणिः पार्थानां शिबिरं महत् ॥५॥**

"मैं इस शिबिर के भीतर प्रविष्ट हो जाऊँगा और वहाँ काल के समान विचरूँगा। आप लोग ऐसा करें जिससे कोई भी मनुष्य आप दोनों के हाथों से जीवित न बच सके, यही मेरा दृढ़ विचार है।" ऐसा कहकर द्रोणपुत्र अश्वत्थामा पाण्डवों के विशाल शिबिर में प्रविष्ट हो गया।

**स प्रविश्य महाबाहुरुद्देशज्ञश्च तस्य ह ।**
**धृष्टद्युम्नस्य निलयं शनकैरभ्युपागमत् ॥६॥**

वह महाबाहु वीर शिबिर के प्रत्येक स्थान से परिचित था, अतः शनैः-शनैः वह धृष्टद्युम्न के खेमे में जा पहुँचा।

**तं शयानं महात्मानं विश्रब्धमकुतोभयम् ।**
**प्राबोधयत पादेन शयनस्थं महीपते ॥७॥**

पृथिवीपते ! अश्वत्थामा ने निश्चिन्त एवं निर्भय होकर शय्या पर सोये हुए महामनस्वी धृष्टद्युम्न को पैर से ठोकर मारकर जगाया।

**सम्बुध्य चरणस्पर्शादुत्थाय रणदुर्मदः ।**
**अभ्यजानादमेयात्मा द्रोणपुत्रं महारथम् ॥८॥**

अमेय आत्मबल से सम्पन्न युद्धदुर्मद धृष्टद्युम्न उसका पैर लगते ही जाग उठा और जागते ही उसने महारथी द्रोणपुत्र को पहचान लिया।

**तमुत्पतन्तं शयनादश्वत्थामा महाबलः ।**
**केशेष्वालम्ब्य पाणिभ्यां निष्पिपेष महीतले ॥९॥**

जब वह शय्या से उठने की चेष्टा करने लगा तब महाबली अश्वत्थामा ने दोनों हाथों से उसके बाल पकड़कर भूमि पर दे मारा और उसे अच्छी प्रकार रगड़ने लगा।

**तमाक्रम्य पदा राजन् कण्ठे चोरसि चोभयोः ।**
**नदन्तं विस्फुरन्तं च पशुमारममारयत् ॥१०॥**

राजन् ! उसने पैर से उसकी छाती और गला दोनों को दबा दिया और उसे पशु की भाँति मारना आरम्भ किया। वह बेचारा चीखता और छटपटाता रह गया।

**तुदन्नखैस्तु स द्रौणिं नातिव्यक्तमुदाहरत् ।**
**आचार्यपुत्र शस्त्रेण जहि मां माचिरं कृथाः ॥११॥**
**त्वत्कृते सुकृताँल्लोकान् गच्छेयं द्विपदां वरः ।**
**एवमुक्त्वा तु वचनं विरराम परन्तपः ॥१२॥**

उसने अपने नखों से द्रोणपुत्र को बकोटते हुए अस्पष्ट वाणी में कहा—"मनुष्यों में श्रेष्ठ आचार्य-पुत्र ! अब देरी न करो। मुझे किसी शस्त्र से मार डालो, जिससे तुम्हारे कारण मैं पुण्यलोकों में जा सकूँ।" ऐसा कहकर शत्रुसन्तापी धृष्टद्युम्न चुप हो गया।

अश्वत्थामोवाच

**आचार्यघातिनां लोका न सन्ति कुलपांसन ।**
**तस्माच्छस्त्रेण निधनं न त्वमर्हसि दुर्मते ॥१३॥**

**अश्वत्थामा ने कहा**—रे कुलकलंक ! अपने आचार्य की हत्या करनेवाले लोगों के लिए पुण्यलोक नहीं है, अतः दुर्मते ! तू शस्त्र के द्वारा मारे जाने के योग्य नहीं है।

सञ्जय उवाच

**एवं ब्रुवाणस्तं वीरं सिंहो मत्तमिव द्विपम् ।**
**मर्मस्वभ्यवधीत् क्रुद्धः पादाष्ठीलैः सुदारुणैः ॥१४॥**

**सञ्जय कहते हैं**—उस वीर से ऐसा कहते हुए क्रूर अश्वत्थामा ने मतवाले हाथी पर चोट करनेवाले सिंह के समान अपनी अत्यन्त भयंकर एड़ियों से उसके मर्मस्थानों पर प्रहार किया।

**तस्य वीरस्य शब्देन मार्यमाणस्य वेश्मनि ।**
**अबुध्यन्त महाराज स्त्रियो ये चास्य रक्षिणः ॥१५॥**

हे महाराज ! उस समय मारे जाते हुए वीर धृष्टद्युम्न के आर्तनाद से उस शिबिर की स्त्रियाँ और सारे रक्षक जाग उठे।

**धृष्टद्युम्नं च हत्वा स ताँश्चैवास्य पदानुगान् ।**
**अपश्यच्छयने सुप्तमुत्तमौजसमन्तिके ॥१६॥**

अश्वत्थामा ने धृष्टद्युम्न और उसके सेवकों को मौत के घाट उतारकर पास के ही खेमे में पलंग पर सोये हुए उत्तमौजा को देखा।

**तमप्याक्रम्य पादेन कण्ठे चोरसि तेजसा।**
**तथैव मारयामास विनर्दन्तमरिन्दमम् ॥१७॥**

फिर तो शत्रुदमन उत्तमौजा के भी कण्ठ और छाती को बलपूर्वक पैर से दबाकर उसने उसी प्रकार पशु की भाँति उसे मार डाला। वह बेचारा भी चीखता-चिल्लाता रह गया था।

**स घोररूपो व्यचरत् कालवच्छिबिरे ततः।**
**द्रौपदेयानभिद्रुत्य खड्गेन व्यधमद् बली ॥१८॥**

उन दोनों वीरों का संहार कर वह भयानक रूपधारी द्रोणकुमार सारे शिबिर में काल के समान विचरने लगा। वहाँ विचरते हुए उस बलवान् वीर ने द्रौपदी के पुत्रों पर आक्रमण करके उन्हें खड्ग से काट डाला।

**ततो भीष्मनिहन्तारं द्रोणपुत्रो महाबलः।**
**शिखण्डिनं समासाद्य द्विधा चिच्छेद सोऽसिना ॥१९॥**

तत्पश्चात् महाबली द्रोणकुमार ने भीष्महन्ता शिखण्डी के पास पहुँचकर अपनी तलवार से उसके दो टुकड़े कर डाले।

**द्रुपदस्य च पुत्राणां पौत्राणां सुहृदामपि।**
**चकार कदनं घोरं दृष्ट्वा दृष्ट्वा महाबलः ॥२०॥**

उस महाबली वीर ने द्रुपद के पुत्रों, पौत्रों और सुहृदों को ढूँढ-ढूँढकर उनका घोर संहार कर डाला।

**अन्यानन्याँश्च पुरुषानभिसृत्याभिसृत्य च।**
**न्यकृन्तदसिना द्रौणिरसिमार्गविशारदः ॥२१॥**

तलवार के पैंतरों में कुशल द्रोणपुत्र ने दूसरे-दूसरे पुरुषों के पास पहुँचकर तलवार से ही उनके टुकड़े-टुकड़े कर डाले।

**सोऽच्छिनत्कस्यचित्पादौ जघनं चैव कस्यचित्।**
**काँश्चिद् बिभेद पार्श्वेषु कालसृष्ट इवान्तकः ॥२२॥**

उस समय कालप्रेरित यमराज के समान उसने किसी के पैर काट डाले, किसी की कमर के टुकड़े-टुकड़े कर डाले और किन्हीं की पसलियों में तलवार भोंककर उन्हें चीर डाला।

**क्रोशतां किमिदं कोऽयं कः शब्दः किं नु किं कृतम्।**
**एवं तेषां तथा द्रौणिरन्तकः समपद्यत ॥२३॥**

घायल वीर चिल्ला-चिल्लाकर कहते थे कि—"यह क्या है? यह कौन है? यह कैसा कौलाहल हो रहा है? यह क्या कर डाला?" इस प्रकार चीखते हुए उन सब योद्धाओं के लिए द्रोणपुत्र अश्वत्थामा काल बन गया था।

**तत्रापरे वध्यमाना मुहुर्मुहुरचेतसः।**
**शिबिरान्निष्पतन्ति स्म क्षत्रिया भयपीडिताः ॥२४॥**

बारम्बार अश्वत्थामा की मार खाते हुए अन्य बहुत-से क्षत्रिय भय से पीड़ित और अचेत हो शिबिर से बाहर निकलने लगे।

**ताँस्तु निष्पतिताँस्त्रस्ताञ्शिबिराज्जीवितैषिणः।**
**कृतवर्मा कृपश्चैव द्वारदेशे निजघ्नतुः ॥२५॥**

प्राण बचाने की इच्छा से भयभीत हो शिबिर से निकले हुए उन क्षत्रियों को कृतवर्मा और कृपाचार्य द्वार पर ही मार डालते थे।

**प्रत्यूषकाले शिबिरात् निश्चक्राम नरर्षभः।**
**आचख्यौ कर्म तत् सर्वं हृष्टः संहर्षयन् विभो ॥२६॥**

प्रातःकाल पौ फटने पर नरश्रेष्ठ अश्वत्थामा शिबिर से बाहर निकला। स्वयं हर्षमग्न हो उन दोनों का हर्ष बढ़ाते हुए उसने अपना किया हुआ सारा कर्म उन्हें कह सुनाया।

**पाञ्चाला निहताः सर्वे द्रौपदेयाश्च सर्वशः।**
**सोमका मत्स्यशेषाश्च सर्वे विनिहता मया ॥२७॥**

वह बोला—"सारे पाञ्चाल, द्रौपदी के सभी पुत्र, सोमकवंशी क्षत्रिय और मत्स्य देश के अवशिष्ट सैनिक—ये सभी मेरे हाथों मारे गये।

**इदानीं कृतकृत्याः स्म याम तत्रैव माचिरम्।**
**यदि जीवति नो राजा तस्मै शंसामहे वयम् ॥२८॥**

"इस समय हम कृतकृत्य हो गये। अब हमें शीघ्र वहीं चलना चाहिए। यदि हमारे राजा दुर्योधन जीवित हों तो हम उन्हें भी यह समाचार कह सुनाएँ।"

**इति महाभारते सौप्तिकपर्वणि तृतीयोऽध्यायः ॥३॥**

# चतुर्थोऽध्यायः

## पाञ्चालों के वध का वृत्तान्त जानकर दुर्योधन का प्रसन्न होकर प्राणत्याग करना

सञ्जय उवाच

**ते हत्वा सर्वपाञ्चालान् द्रौपदेयाँश्च सर्वशः ।**
**आगच्छन् सहितास्तत्र यत्र दुर्योधनो हतः ॥१॥**

**सञ्जय कहते हैं**—राजन् ! वे तीनों महारथी समस्त पाञ्चालों और द्रौपदी के सभी पुत्रों का वध करके एक-साथ उस स्थान पर आये, जहाँ राजा दुर्योधन मृतप्राय पड़ा था ।

**तं भग्नसक्थं राजेन्द्र कृच्छ्रप्राणमचेतसम् ।**
**वमन्तं रुधिरं वक्त्रादपश्यन् वसुधातले ॥२॥**

हे राजेन्द्र ! वहाँ पहुँचकर उन्होंने देखा कि टूटी हुई जाँघवाले राजा बड़े कष्ट से प्राण धारण किये हुए हैं । उनकी चेतना लुप्त हो गई है और वे अपने मुख से पृथिवी पर रक्त वमन कर रहे हैं ।

**ते तं शयानं सम्प्रेक्ष्य राजानमतथोचितम् ।**
**अविषह्येन दुःखेन कृपणं पर्यदेवयन् ॥३॥**

राजा दुर्योधन को इस प्रकार अनुचित अवस्था में सोया देख वे तीनों असह्य दुःख से पीड़ित हो, दीन वाणी में विलाप करने लगे ।

कृप उवाच

**न दैवस्यातिभारोऽस्ति यदयं रुधिरोक्षितः ।**
**एकादशचमूभर्ता शेते दुर्योधनो हतः ॥४॥**

**कृपाचार्य बोले**—हाय ! विधाता के लिए कुछ भी करना कठिन नहीं है । जो कभी ग्यारह अक्षौहिणी सेना का स्वामी था, वही राजा दुर्योधन मारा जाकर रक्त से लथपथ हुआ यहाँ पड़ा है ।

**योऽयं मूर्धाभिषिक्तानामग्रे यातः परन्तपः ।**
**स हतो ग्रसते पांसून् पश्य कालस्य पर्ययम् ॥५॥**

समय का उलट-फेर तो देखो, जो ये शत्रुसन्तापक नरेश सभी मूर्धाभिषिक्त राजाओं के आगे चला करते थे, वे ही आज मारे जाकर धरती पर पड़े-पड़े धूल फाँक रहे हैं ।

**येनाजौ निहता भूमावशेरत पुरा द्विषः ।**
**स भूमौ निहतः शेते कुरुराजः परैरयम् ॥६॥**

पूर्वकाल में जिनके द्वारा युद्ध में मारे गये शत्रु पृथिवी पर सोया करते थे, वे ही ये कुरुराज आज शत्रुओं द्वारा स्वयं मारे जाकर भूमि पर शयन कर रहे हैं ।

**भयान्नमन्ति राजानो यस्य स्म शतसंघशः ।**
**स वीरशयने शेते क्रव्याद्भिः परिवारितः ॥७॥**

जिसके समक्ष सैकड़ों राजा भय से सिर झुकाते थे, वे ही आज हिंसक जन्तुओं से घिरे हुए वीर-शय्या पर सो रहे हैं ।

**उपासत द्विजाः पूर्वमर्थहेतोर्यमीश्वरम् ।**
**उपासते च तं ह्यद्य क्रव्यादा मांसहेतवः ॥८॥**

पहले बहुत-से ब्राह्मण धन की प्राप्ति के लिए जिस नरेश के पास बैठे रहते थे, उन्हीं के समीप आज मांस के लिए मांसाहारी जन्तु बैठे हुए हैं ।

अश्वत्थामोवाच

**कालो नूनं महाराज लोकेऽस्मिन् बलवत्तरः ।**
**पश्यामो निहतं त्वां च भीमसेनेन संयुगे ॥९॥**

**अश्वत्थामा बोला**—महाराज ! निश्चय ही इस संसार में समय महाबलवान् है, तभी तो रणभूमि में हम आपको भीमसेन के द्वारा मारा गया देखते हैं ।

**कथं त्वां सर्वधर्मज्ञं क्षुद्रः पापी वृकोदरः ।**
**निकृत्या हतवान् मन्दो नूनं कालो दुरत्ययः ॥१०॥**

आप तो सम्पूर्ण धर्मों के ज्ञाता थे, आपको उस मूर्ख, नीच और पापी भीम ने किस प्रकार धोखे से मार डाला ? अवश्य ही काल का उल्लंघन करना सर्वथा कठिन है ।

**धर्मयुद्धे ह्यधर्मेण समाहूयौजसा मृधे ।**
**गदया भीमसेनेन निर्भग्ने सक्थिनी तव ॥११॥**

भीमसेन ने आपको धर्मयुद्ध के लिए बुलाकर रणभूमि में अधर्म के बल से गदा द्वारा आपकी दोनों जाँघें तोड़ डालीं ।

**अधर्मेण हतस्याजौ मृद्यमानं पदा शिरः ।**
**य उपेक्षितवान् क्षुद्रं धिक् कृष्णं धिग्युधिष्ठिरम् ॥१२**

एक तो आप रणभूमि में अधर्मपूर्वक मारे गये, दूसरे भीम ने आपके मस्तक पर ठोकर मारी । इतने

पर भी जिन्होंने उस नीच की उपेक्षा की, उसे कोई दण्ड नहीं दिया, उन कृष्ण और युधिष्ठिर को धिक्कार है !

**ननु रामोऽब्रवीद् राजँस्त्वां सदा यदुनन्दनः ।**
**दुर्योधनसमो नास्ति गदया इति वीर्यवान् ॥१३॥**

राजन् ! पराक्रमी यदुनन्दन बलरामजी आपके विषय में सदा कहा करते थे कि "गदायुद्ध की शिक्षा में दुर्योधन की समानता करनेवाला दूसरा कोई नहीं है।"

**युद्धेष्वपवदिष्यन्ति योधा नूनं वृकोदरम् ।**
**यावत् स्थास्यन्ति भूतानि निकृत्या ह्यसि पातितः ॥१४**

आपको धोखे से मारा गया है, अतः इस जगत् में जबतक प्राणियों की स्थिति रहेगी, तबतक सभी युद्धों में सम्पूर्ण योद्धा भीमसेन की निन्दा ही करेंगे।

**यां गतिं क्षत्रियस्याहुः प्रशस्तां परमर्षयः ।**
**हतस्याभिमुखस्याजौ प्राप्तस्त्वमसि तां गतिम् ॥१५॥**

महर्षियों ने युद्ध में शत्रु का सामना करते हुए मारे जानेवाले क्षत्रिय के लिए जो उत्तम गति बताई है, आपने वही गति प्राप्त की है।

**धिगस्तु कृतवर्माणं मां कृपं च महारथम् ।**
**ये वयं न गताः स्वर्गं त्वां पुरस्कृत्य पार्थिवम् ॥१६॥**

मुझे, कृतवर्मा और महारथी कृपाचार्य को भी धिक्कार है कि हम आप-जैसे महाराज को आगे करके स्वर्गलोक में नहीं गये ।

**किं नाम तद्भवेत् कर्म येन त्वां न व्रजाम वै ।**
**हीनानां नस्त्वया राजन् कुतः शान्तिः कुतः सुखम् ॥१७**

राजन् ! न जाने वह कौन-सा कर्म है, जिससे विवश होकर हम आपके साथ नहीं चल रहे हैं। आपसे बिछुड़कर हमें शान्ति और सुख कैसे मिल सकते हैं !

**दुर्योधन जीवसि चेद् वाक्यं श्रोत्रसुखं शृणु ।**
**सप्त पाण्डवतः शेषा धार्तराष्ट्रास्त्रयो वयम् ॥१८॥**

महाराज दुर्योधन ! यदि आप जीवित हैं तो कानों को सुख देनेवाली इन बातों को सुनो। पाण्डव-पक्ष में केवल सात और कौरवपक्ष में मात्र हम तीन ही व्यक्ति बच गये हैं ।

**ते चैव भ्रातरः पञ्च वासुदेवोऽथ सात्यकिः ।**
**अहं च कृतवर्मा च कृपः शारद्वतस्तथा ॥१९॥**

उधर तो पाँचों भाई पाण्डव, श्रीकृष्ण और सात्यकि बचे हैं और इधर मैं, कृतवर्मा तथा शरद्वान् के पुत्र कृपाचार्य शेष रह गये हैं ।

**द्रौपदेया हताः सर्वे धृष्टद्युम्नस्य चात्मजाः ।**
**पाञ्चाला निहताः सर्वे मत्स्यशेषं च भारत ॥२०॥**

भरतभूषण ! द्रौपदी तथा धृष्टद्युम्न के सभी पुत्र मारे गये, समस्त पाञ्चालों का संहार कर दिया गया और मत्स्यदेश की अवशिष्ट सेना भी समाप्त हो गई ।

**कृते प्रतिकृतं पश्य हतपुत्रा हि पाण्डवाः ।**
**सौप्तिके शिबिरं तेषां हतं सनरवाहनम् ॥२१॥**

राजन् ! देखिए, शत्रुओं की करनी का कैसा बदला चुकाया गया । पाण्डवों के भी सारे पुत्र मारे डाले गये । रात में सोते समय मनुष्यों और वाहनों-सहित उनके सारे शिबिर का नाश कर दिया गया ।

**मया च पापकर्मासौ धृष्टद्युम्नो महीपते ।**
**प्रविश्य शिबिरं रात्रौ पशुमारेण मारितः ॥२२॥**

हे भूपाल ! मैंने स्वयं रात के समय शिबिर में प्रविष्ट होकर पापाचारी धृष्टद्युम्न को पशुओं की भाँति गला घोंटकर मार डाला है ।

सञ्जय उवाच

**दुर्योधनस्तु तां वाचं निशम्य मनसः प्रियाम् ।**
**प्रतिलभ्य पुनश्चेत इदं वचनमब्रवीत् ॥२३॥**

**सञ्जय कहते हैं**—यह मन को प्रिय लगनेवाली बात सुनकर दुर्योधन को पुनः होश आ गया और वह इस प्रकार बोला—

**न मेऽकरोत् तद् गाङ्गेयो न कर्णो न च ते पिता ।**
**यत् त्वया कृपभोजाभ्यां सहितेनाद्य मे कृतम् ॥२४॥**

"मित्रवर ! आज आचार्य कृप और कृतवर्मा के साथ तुमने जो कार्य कर दिखाया है, उसे न गङ्गा-नन्दन भीष्म, न कर्ण और न तुम्हारे पिताजी ही कर सके थे ।

**स च सेनापतिः क्षुद्रो हतः सार्धं शिखण्डिना ।**
**तेन मन्ये मघवता सममात्मानमद्य वै ॥२५॥**

"शिखण्डीसहित वह नीच सेनापति धृष्टद्युम्न मार डाला गया, इससे आज निश्चय ही मैं अपने को

इन्द्र के समान समझता हूँ ।

**स्वस्ति प्राप्नुत भद्रं वः स्वर्गे नः संगमः पुनः ।**
**इत्येवमुक्त्वा तूष्णीं स कुरुराजो महामनाः ।।२६।।**
**प्राणानुपासृजद् वीरः सुहृदां दुःखमुत्सृजन् ।**
**अपाक्रामद् दिवं पुण्यां शरीरं क्षितिमाविशत् ।।२७।।**

"तुम सब लोगों का कल्याण हो ! तुम्हें सुख प्राप्त हो ! अब स्वर्ग में ही हम लोगों का पुनर्मिलन होगा।" ऐसा कहकर महमनस्वी वीर कुरुराज दुर्योधन चुप हो गया और अपने सुहृदों के लिए दुःख छोड़कर उसने अपने प्राण त्याग दिये । वह स्वयं तो पुण्यधाम स्वर्गलोक में चला गया परन्तु उसका पार्थिव शरीर पृथिवी पर ही पड़ा रह गया ।

**एवं ते निधनं यातः पुत्रो दुर्योधनो नृप ।**
**अग्रे यात्वा रणे शूरः पश्चाद् विनिहतः परैः ।।२८।।**

प्रजेश्वर ! इस प्रकार आपका पुत्र दुर्योधन मृत्यु को प्राप्त हुआ । वह समराङ्गण में सबसे पहले गया था और सबसे पीछे शत्रुओं द्वारा मारा गया ।

**एवमेष क्षयो वृत्तः कुरुपाण्डवसेनयोः ।**
**घोरो विशसनो रौद्रो राजन् दुर्मन्त्रिते तव ।।२९।।**

राजन् ! इस प्रकार आपकी कुमन्त्रणा के कारण कौरव और पाण्डवों की सेनाओं का यह घोर एवं भयंकर विनाश-कार्य सम्पन्न हुआ है ।

**इति महाभारते सौप्तिकपर्वणि चतुर्थोऽध्यायः ।।४।।**

# पञ्चमोऽध्यायः

**धृष्टद्युम्न के वध का वृत्तान्त सुनकर युधिष्ठिर का विलाप, द्रौपदी का शिबिर में आकर मारे हुए पुत्रादि को देखकर शोकातुर होना, भीमसेन का अश्वत्थामा को मारने के लिए प्रस्थान**

वैशम्पायन उवाच

**तस्यां रात्र्यां व्यतीतायां धृष्टद्युम्नस्य सारथिः ।**
**शशंस धर्मराजाय सौप्तिके कदनं कृतम् ।।१।।**

**वैशम्पायनजी कहते हैं**—राजन् ! उस रात्रि के व्यतीत होने पर धृष्टद्युम्न के सारथि ने, रात्रि में सोते समय जो नरसंहार किया गया था, उसका समाचार धर्मराज से कह सुनाया ।

सूत उवाच

**द्रौपदेया हता राजन् द्रुपदस्यात्मजैः सह ।**
**प्रमत्ता निशि विश्वस्ताः स्वपन्तः शिबिरे स्वके ।।२।।**

**सारथि ने कहा**—राजन् ! द्रुपद के पुत्रोंसहित देवी द्रौपदी के भी सारे पुत्र मारे गये। वे रात्रि में अपने शिबिर में निश्चिन्त एवं असावधान होकर सो रहे थे ।

**कृतवर्मणा नृशंसेन गौतमेन कृपेण च ।**
**अश्वत्थाम्ना च पापेन हतं वः शिबिरं निशि ।।३।।**

क्रूर कृतवर्मा, गौतमवंशी कृपाचार्य और पापी अश्वत्थामा ने रात्रि में आक्रमण करके आपके सारे शिबिर का विनाश कर डाला।

**अहमेकोऽवशिष्टस्तु तस्मात् सैन्यान्महामते ।**
**मुक्तः कथंचिद् धर्मात्मन् व्यग्रस्य कृतवर्मणः ।।४।।**

महामते ! धर्मात्मन् ! उस विशाल सेना में से अकेला मैं ही किसी प्रकार बचकर निकल आया हूँ । कृतवर्मा दूसरों को मारने में लगा हुआ था, इसलिए मैं उस संकट से बच सका हूँ ।

**तत् श्रुत्वा वाक्यमशिवं कुन्तीपुत्रो युधिष्ठिरः ।**
**पपात मह्यां दुर्धर्षः पुत्रशोकसमन्वितः ।।५।।**

वह अमङ्गल वचन सुनकर दुर्धर्ष कुन्तीपुत्र राजा युधिष्ठिर पुत्रशोक से सन्तप्त हो पृथिवी पर गिर पड़े ।

**लब्धचेतास्तु कौन्तेयः शोकविह्वलया गिरा ।**
**जित्वा शत्रून् जितः पश्चात् पर्यदेवयदार्तवत् ।।६।।**

फिर होश में आने पर कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर शोकाकुलवाणी द्वारा आर्त की भाँति विलाप करने लगे—"हाय ! मैं शत्रुओं को पहले जीतकर पीछे परास्त हो गया ।

**दुर्विदा गतिरर्थानामपि ये दिव्यचक्षुषः ।**
**जीयमाना जयन्त्यन्ये जयमाना वयं जिताः ।।७।।**

"जो लोग दिव्यदृष्टि से सम्पन्न हैं, उनके लिए भी पदार्थों की गति को समझना अत्यन्त दुष्कर है।

हाय ! दूसरे लोग तो हारकर जीतते हैं, परन्तु हम लोग जीतकर हार गये हैं !

**हत्वा भ्रातॄन्वयस्याँश्च पितॄन्पुत्रान्सुहृद्गणान् ।**
**बन्धूनमात्यान्पौत्राँश्च जित्वा सर्वाञ्जिता वयम् ॥८॥**

"हमने भाइयों, समवयस्क मित्रों, पितृतुल्य पुरुषों, पुत्रों, सुहृद्गणों, बन्धुओं, मन्त्रियों और पौत्रों की हत्या करके उन सबको जीतकर विजय प्राप्त की थी, किन्तु अब शत्रुओं द्वारा हम ही पराजित हो गये।

**कर्णिनालीकदंष्ट्रस्य खड्गजिह्वस्य संयुगे ।**
**चापव्यात्तस्य रौद्रस्य ज्यातलस्वननादिनः ॥९॥**
**क्रुद्धस्य नरसिंहस्य संग्रामेष्वपलायिनः ।**
**ये व्यमुञ्चन्त कर्णस्य प्रमादात् त इमे हताः ॥१०॥**

"क्रोध में भरा हुआ कर्ण मनुष्यों में सिंह के समान था। कर्णि और नालीक नामक बाण उसकी दाढ़ें और युद्ध में उठी हुई तलवार उसकी जिह्वा थी। धनुष का खींचना ही उसका मुँह फैलाना था। प्रत्यञ्चा की टंकार ही उसकी दहाड़ के समान थी। युद्ध में कभी पीठ न दिखानेवाले उस भयंकर पुरुष-सिंह के हाथ से जो जीवित छूट गये, वे ही ये मेरे सगे-सम्बन्धी अपनी असावधानी के कारण मार डाले गये हैं।

**न हि प्रमादात् परमस्ति कश्चिद्**
**वधो नराणामिह जीवलोके । □**
**प्रमत्तमर्था हि नरं समन्तात्**
**त्यजन्त्यनर्थाश्च समाविशन्ति ॥११॥**

"इस संसार में मनुष्यों के लिए प्रमाद से बढ़कर दूसरी कोई मृत्यु नहीं है। प्रमादी मनुष्य को सारे अर्थ सब ओर से त्याग देते हैं और अनर्थ बिना बुलाये ही उसके पास चले आते हैं।

**न हि प्रमत्तेन नरेण शक्यं**
**विद्या तपः श्रीर्विपुलं यशो वा । □**
**पश्याप्रमादेन निहत्य शत्रून्**
**सर्वान् महेन्द्रं सुखमेधमानम् ॥१२॥**

"प्रमादी मनुष्य कभी विद्या, तप, वैभव अथवा महान् यश नहीं प्राप्त कर सकता। देखो, देवराज इन्द्र प्रमाद त्याग देने के ही कारण अपने सारे शत्रुओं का संहार करके सुखपूर्वक उन्नति कर रहे हैं।

**अमर्षितैर्ये निहताः शयाना**
**निःसंशयं ते त्रिदिवं प्रपन्नाः ।**
**कृष्णां तु शोचामि कथं नु साध्वी**
**शोकार्णवे साद्य विनंक्ष्यतीति ॥१३॥**

"शत्रुओं ने अमर्ष के वशीभूत होकर जिन्हें सोते समय ही मार डाला है, वे तो निःसन्देह स्वर्गलोक में पहुँच गये हैं। मुझे तो उस सती साध्वी द्रौपदी की चिन्ता हो रही है जो आज शोक-सागर में डूबकर नष्ट हो जाने की दशा में पहुँच गई है।

**भ्रातॄँश्च पुत्राँश्च हतान् निशम्य**
**पाञ्चालराजं पितरं च वृद्धम् ।**
**ध्रुवं विसंज्ञा पतिता पृथिव्यां**
**सा शोष्यते शोककृशाङ्गयष्टिः ॥१४॥**

"एक तो पहले ही निरन्तर शोक के कारण क्षीण होकर उसकी देह सूखी लकड़ी के समान हो गई है। दूसरे जब वह अपने भाइयों, पुत्रों और बूढ़े पिता पाञ्चालराज द्रुपद की मृत्यु का समाचार सुनेगी तब और भी सूख जाएगी और निश्चय ही अचेत होकर भूमि पर गिर पड़ेगी।"

**इत्येवमार्तः परिदेवयन् स**
**राजा कुरूणां नकुलं बभाषे ।**
**गच्छानयैनामिह मन्दभाग्यां**
**समातृपक्षामिति राजपुत्रीम् ॥१५॥**

इस प्रकार आर्तस्वर से विलाप करते हुए कुरुराज युधिष्ठिर ने नकुल से कहा—"भाई ! जाओ, मन्दभागिनी राजकुमारी द्रौपदी को उसके मातृपक्ष की स्त्रियों के साथ यहाँ लिवा लाओ।"

**माद्रीसुतस्तत् परिगृह्य वाक्यं**
**धर्मेण धर्मप्रतिमस्य राज्ञः ।**
**ययौ रथेनालयमाशु देव्याः**
**पाञ्चालराजस्य च यत्र दाराः ॥१६॥**

माद्रीकुमार नकुल ने धर्माचरण के द्वारा साक्षात् धर्मराज की समानता करनेवाले राजा युधिष्ठिर की आज्ञा शिरोधार्य करके रथ के द्वारा तुरन्त ही महारानी द्रौपदी के उस भवन की ओर प्रस्थान किया, जहाँ पाञ्चालराज के घर की भी महिलाएँ रहती थीं।

**प्रस्थाप्य माद्रीसुतमाजमीढः**
**शोकार्दितस्तैः सहितः सुहृद्भिः ।**
**ददर्श पुत्रान् सुहृदः सखींश्च**
**भूमौ शयानान् रुधिरार्द्रगात्रान् ॥१७॥**

माद्रीकुमार को वहाँ भेजकर अजमीढ़कुलभूषण युधिष्ठिर ने शोकाकुल हो सभी सुहृदों के साथ [शिबिर में जाकर] अपने पुत्रों, सुहृदों और सखाओं को देखा जो रक्त से लथपथ होकर पृथिवी पर पड़े थे।

**स दृष्ट्वा निहतान्संख्ये पुत्रान्पौत्रान्सखींस्तथाः ।**
**महादुःखपरीतात्मा बभूव जनमेजयः ॥१८॥**

जनमेजय ! अपने पुत्रों, पौत्रों और मित्रों को युद्ध में मारा गया देख राजा युधिष्ठिर का हृदय महान् दुःख से सन्तप्त हो उठा।

**तमश्रुपरिपूर्णाक्षं वेपमानमचेतसम् ।**
**सुहृदो भृशसंविग्नाः सान्त्वयाञ्चक्रिरे तदा ॥१९॥**

उनकी आँखें आँसुओं से भर आईं, शरीर काँपने लगा और चेतना लुप्त होने लगी। उनकी ऐसी दशा देख उनके सुहृद् अत्यन्त व्याकुल हो उस समय उन्हें सान्त्वना देने लगे।

**ततस्तस्मिन् क्षणे कल्पो रथेनादित्यवर्चसा ।**
**नकुलः कृष्णया सार्धमुपायात् परमार्तया ॥२०॥**

इसी समय सामर्थ्यशाली नकुल सूर्य के समान तेजस्वी रथ के द्वारा शोक से अत्यन्त पीड़ित हुई द्रौपदी को साथ लेकर वहाँ आ पहुँचा।

**उपप्लव्यं गता सा तु श्रुत्वा सुमहदप्रियम् ।**
**तदा विनाशं सर्वेषां पुत्राणां व्यथिताभवत् ॥२१॥**

उस समय द्रौपदी उपप्लव नगर में गई हुई थी, वहाँ अपने सारे पुत्रों के मारे जाने का अत्यन्त अप्रिय वृत्तान्त सुनकर वह व्यथित हो उठी थी।

**कम्पमानेव कदली वातेनाभिसमीरिता ।**
**कृष्णा राजानमासाद्य शोकार्ता न्यपतद् भुवि ॥२२॥**

राजा युधिष्ठिर के पास पहुँचकर शोक से व्याकुल हुई द्रौपदी हवा से हिलाई गई कदली के समान कम्पित हो भूमि पर गिर पड़ी।

**ततस्तां पतितां दृष्ट्वा संरम्भी सत्यविक्रमः ।**
**बाहुभ्यां परिजग्राह समुत्पत्य वृकोदरः ॥२३॥**

**सा समाश्वासिता तेन भीमसेनेन भामिनी ।**
**रुदती पाण्डवं कृष्णा सा हि भारतमब्रवीत् ॥२४॥**

उसे गिरी हुई देख क्रोध में भरे हुए सत्यपराक्रमी भीमसेन ने उछलकर दोनों बाहों से सँभाला और उस मानिनी को धीरज बँधाया। उस समय रोती हुई कृष्णा ने भरतनन्दन पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर से कहा—

**शोकस्तपति मां पार्थ हुताशन इवाश्रयम् ।**
**तस्य पापकृतो द्रौणेर्न चेदद्य त्वया रणे ॥२५॥**
**ह्रियते सानुबन्धस्य युधि विक्रम्य जीवितम् ।**
**इहैव प्रायमासिष्ये तन्निबोधत पाण्डवाः ॥२६॥**

"पार्थ ! शोक मुझे उसी प्रकार सन्तप्त कर रहा है, जैसे आग अपने आधारभूत काष्ठ को ही जला डालती है। यदि आज आप रणभूमि में पराक्रम प्रकट करके सगे-सम्बन्धियों सहित पापी द्रोणपुत्र के प्राण नहीं हर लेते हैं, तो मैं यहीं अनशन करके अपने जीवन का अन्त कर दूँगी ! पाण्डवो ! आप सब लोग इस बात को कान खोलकर सुन लें।"

**एवमुक्त्वा ततः कृष्णा पाण्डवं प्रत्युपाविशत् ।**
**युधिष्ठिरं याज्ञसेनी धर्मराजं यशस्विनी ॥२७॥**

ऐसा कहकर यशस्विनी द्रुपदकुमारी कृष्णा पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर के सामने ही अनशन के लिए बैठ गई।

**दृष्ट्वोपविष्टां राजर्षिः पाण्डवो महिषीं प्रियाम् ।**
**प्रत्युवाच स धर्मात्मा द्रौपदीं चारुदर्शनाम् ॥२८॥**

अपनी प्रिय महारानी परम सुन्दरी द्रौपदी को अनशन के लिए बैठी देख धर्मात्मा राजर्षि युधिष्ठिर ने उससे कहा—

**धर्म्यं धर्मेण धर्मज्ञे प्राप्तास्ते निधनं शुभे ।**
**पुत्रास्ते भ्रातरश्चैव तान्न शोचितुमर्हसि ॥२९॥**

"शुभे ! तुम धर्म को जाननेवाली हो। तुम्हारे पुत्रों और भाइयों ने धर्मपूर्वक युद्ध करके धर्मानुकूल मृत्यु प्राप्त की है, अतः तुम्हें उनके लिए शोक नहीं करना चाहिए।

**स कल्याणि वनं दुर्गं दूरं द्रौणिरितो गतः ।**
**तस्य त्वं पातनं संख्ये कथं ज्ञास्यसि शोभने ॥३०॥**

"कल्याणि ! द्रोणपुत्र तो यहाँ से भागकर दुर्गम वन में चला गया है। शोभने ! यदि उसे युद्ध में मार

गिराया जाए तो भी तुम्हें इसका विश्वास कैसे होगा ?"

द्रौपद्युवाच

**द्रोणपुत्रस्य सहजो मणिः शिरसि मे श्रुतः ।**
**निहत्य संख्ये तं पापं पश्येयं मणिमाहृतम् ।**
**राजञ्शिरसि ते कृत्वा जीवेयमिति मे मतिः ॥३१॥**

**द्रौपदी बोली**—महाराज ! मैंने सुना है कि द्रोणपुत्र के मस्तक में एक मणि है जो उसके जन्म के साथ ही उत्पन्न हुई है । उस पापी को युद्ध में मार-कर यदि वह मणि ला दी जाएगी तो मुझे उसकी मृत्यु का विश्वास हो जाएगा । राजन् ! उस मणि को आपके सिर पर धारण कराकर ही मैं जीवन धारण कर सकूँगी, ऐसा मेरा दृढ़ निश्चय है ।

वैशम्पायन उवाच

**इत्युक्त्वा पाण्डवं कृष्णा राजानं चारुदर्शना ।**
**भीमसेनमथागत्य परमं वाक्यमब्रवीत् ॥३२॥**

**वैशम्पायनजी कहते हैं**—पाण्डुपुत्र राजा युधिष्ठिर से ऐसा कहकर सुन्दरी कृष्णा भीमसेन के पास आई और यह उत्तम वचन बोली—

**त्रातुमर्हसि मां भीम क्षत्रधर्ममनुस्मरन् ।**
**जहि तं पापकर्माणं शम्बरं मघवानिव ॥३३॥**

"प्रिय भीम ! आप क्षत्रियधर्म का स्मरण करके मेरे जीवन की रक्षा कर सकते हैं । वीर ! जैसे इन्द्र ने शम्बर का विनाश किया था, वैसे ही आप भी पापी अश्वत्थामा का वध करें ।"

**तस्या बहुविधं दुःखान्निशम्य परिदेवितम् ।**
**नामर्षयत कौन्तेयो भीमसेनो महाबलः ॥३४॥**

दुःख के कारण द्रौपदी का यह भाँति-भाँति का विलाप सुनकर महाबली कुन्तीपुत्र भीमसेन इसे सहन नहीं कर सके ।

**स काञ्चनविचित्राङ्गमारुरोह महारथम् ।**
**आदाय रुचिरं चित्रं समार्गणगुणं धनुः ॥३५॥**
**नकुलं सारथिं कृत्वा द्रोणपुत्रवधे धृतः ।**
**विस्फार्य सशरं चापं तूर्णमश्वानचोदयत् ॥३६॥**

वे द्रोणपुत्र के वध का निश्चय करके सुवर्णमण्डित विचित्र अङ्गोंवाले रथ पर आरूढ़ हुए । उन्होंने बाण और प्रत्यञ्चासहित एक सुन्दर एवं विचित्र धनुष हाथ में लेकर नकुल को सारथि बनाया तथा बाण-सहित धनुष को फैलाकर तुरन्त ही घोड़ों को हँक-वाया ।

**इति महाभारते सौप्तिकपर्वणि पञ्चमोऽध्यायः ॥५॥**

## षष्ठोऽध्यायः

**अश्वत्थामा की चपलता और क्रूरता के प्रसङ्ग में सुदर्शन चक्र माँगने की बात सुनाते हुए श्रीकृष्ण का भीमसेन की रक्षा के लिए प्रयत्न करने का आदेश देना**

वैशम्पायन उवाच

**तस्मिन् प्रयाते दुर्धर्षे यदूनामृषभस्ततः ।**
**अब्रवीत् पुण्डरीकाक्षः कुन्तीपुत्रं युधिष्ठिरम् ॥१॥**

**वैशम्पायनजी कहते हैं**—राजन् ! दुर्धर्ष वीर भीमसेन के प्रस्थान कर देने पर यदुकुलतिलक कमल-नयन श्रीकृष्ण ने कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर से कहा—

**एष पाण्डव ते भ्राता पुत्रशोकपरायणः ।**
**जिघांसुर्द्रौणिमाक्रन्दे एक एवाभिधावति ॥२॥**

"पाण्डुपुत्र ! ये आपके भाई भीमसेन पुत्रशोक से शोकाकुल होकर युद्ध में द्रोणकुमार के वध की इच्छा से अकेले ही उसपर धावा बोल रहे हैं ।

**भीमः प्रियस्ते सर्वेभ्यो भ्रातृभ्यो भरतर्षभ ।**
**तं कृच्छ्रगतमद्य त्वं कस्मान्नाभ्युपपद्यसे ॥३॥**

"भरतभूषण ! भीमसेन आपको अपने समस्त भाइयों में सबसे अधिक प्रिय हैं । आज वे संकट में पड़ गये हैं फिर आप उनकी सहायता के लिए क्यों नहीं जाते ?

**यत् तदाचष्ट पुत्राय द्रोणः परपुरञ्जयः ।**
**अस्त्रं ब्रह्मशिरो नाम दहेत पृथिवीमपि ॥४॥**

"शत्रुओं की नगरी पर विजय पानेवाले द्रोणाचार्य ने अपने पुत्र को जिस ब्रह्मशिर नामक अस्त्र का उपदेश किया है वह सम्पूर्ण भूमण्डल को दग्ध कर

सकता है ।

**तन्महात्मा महाभागः केतुः सर्वधनुष्मताम् ।**
**प्रत्यपादयदाचार्यः प्रीयमाणो धनञ्जयम् ॥५॥**

"सम्पूर्ण धनुर्धरों के शिरोमणि महाभाग महात्मा द्रोणाचार्य ने प्रसन्न होकर वह अस्त्र पहले अर्जुन को दिया था ।

**तं पुत्रोऽप्येक एवैनमन्वयाचदमर्षणः ।**
**ततः प्रोवाच पुत्राय नातिहृष्टमना इव ॥६॥**

"उनका इकलौता पुत्र अश्वत्थामा इसे सहन नहीं कर सका, अतः उसने भी अपने पिता से उसी अस्त्र के लिए प्रार्थना की, तब आचार्य ने अनमनेपन से अपने पुत्र को भी उस अस्त्र का उपदेश कर दिया ।

**विदितं चापलं ह्यासीदात्मजस्य दुरात्मनः ।**
**सर्वधर्मविदाचार्यः सोऽन्वशासत् सुतं ततः ॥७॥**

"उन्हें अपने दुरात्मा पुत्र की चपलता ज्ञात थी, अतः सब धर्मों के ज्ञाता आचार्य ने अपने पुत्र को इस प्रकार शिक्षा प्रदान की—

**परमापद्गतेनापि न स्म तात त्वया रणे ।**
**इदमस्त्रं प्रयोक्तव्यं मानुषेषु विशेषतः ॥८॥**

"पुत्र ! बड़ी-से-बड़ी विपत्ति में पड़ने पर भी तुम्हें युद्धभूमि में, विशेषतः मनुष्यों पर इस अस्त्र का प्रयोग नहीं करना चाहिए ।"

**इत्युक्तवान् गुरुः पुत्रं द्रोणः पश्चादथोक्तवान् ।**
**न त्वं जातु सतां मार्गे स्थातेति पुरुषर्षभ ॥९॥**

"नरश्रेष्ठ ! अपने पुत्र से ऐसा कहकर गुरु द्रोण पुनः उससे बोले—"पुत्र ! मुझे सन्देह है कि तुम कभी सत्पुरुषों के मार्ग पर स्थिर नहीं रहोगे ।"

**स तदाज्ञाय दुष्टात्मा पितुर्वचनमप्रियम् ।**
**निराशः सर्वकल्याणैः शोकात् पर्यचरन्महीम् ॥१०॥**

"पिता के इस अप्रिय वचन को सुन और समझकर दुरात्मा द्रोणपुत्र सब प्रकार के कल्याण की आशा छोड़ बैठा और शोक से पीड़ित हो पृथिवी पर विचरने लगा ।

**ततस्तदा कुरुश्रेष्ठ वनस्थे त्वयि भारत ।**
**अवसद् द्वारकामेत्य वृष्णिभिः परमार्चितः ॥११॥**

"भरतभूषण ! कुरुश्रेष्ठ ! तत्पश्चात् जब तुम वन में थे, उन्हीं दिनों अश्वत्थामा द्वारका में आकर रहने लगा । वहाँ वृष्णिवंशियों ने उसका बड़ा सत्कार किया ।

**स कदाचित् समुद्रान्ते वसन् द्वारवतीमनु ।**
**एक एकं समागम्य मामुवाच हसन्निव ॥१२॥**

"एक दिन द्वारका में समुद्र-तट पर रहते समय उसने अकेले ही मुझ अकेले के पास आकर हँसते हुए-से कहा—

**यत् तदुग्रं तपः कृष्ण चरन् सत्यपराक्रमः ।**
**अगस्त्याद् भारताचार्यः प्रत्यपद्यत मे पिता ॥१३॥**
**अस्त्रं ब्रह्मशिरो नाम देवगन्धर्वपूजितम् ।**
**तदद्य मयि दाशार्ह यथा पितरि मे तथा ॥१४॥**
**अस्मत्तस्तदुपादाय दिव्यमस्त्रं यदूत्तम ।**
**ममाप्यस्त्रं प्रयच्छ त्वं चक्रं रिपुहणं रणे ॥१५॥**

"दशार्हनन्दन ! श्रीकृष्ण ! भरतवंश के आचार्य मेरे सत्यपराक्रमी पिता ने कठोर तप करके महर्षि अगस्त्य से जो ब्रह्मास्त्र प्राप्त किया था, वह देवों और गन्धर्वों द्वारा सम्मानित अस्त्र इस समय पिता के समान मेरे पास भी विद्यमान है, अतः यदुश्रेष्ठ ! आप मुझसे वह दिव्यास्त्र लेकर उसके बदले में युद्ध-भूमि में शत्रुसंहारक अपना 'सुदर्शन चक्र' नामक अस्त्र मुझे दे दीजिए ।"

**स राजन् प्रीयमाणेन मयाप्युक्तः कृताञ्जलिः ।**
**याचमानः प्रयत्नेन मत्तोऽस्त्रं भरतर्षभ ॥१६॥**

"भरतभूषण ! वह हाथ जोड़ बड़े प्रयत्न के द्वारा मुझसे अस्त्र की याचना कर रहा था, तब मैंने भी प्रसन्नतापूर्वक ही उससे कहा—

**देवदानवगन्धर्वमनुष्यपतगोरगाः ।**
**न समा मम वीर्यस्य शतांशेनापि पिण्डिताः ॥१७॥**

"ब्रह्मन् ! देवता, दानव, गन्धर्व, मनुष्य, पक्षी और नाग—ये सब मिलकर भी मेरे पराक्रम के सौवें अंश की भी समानता नहीं कर सकते ।

**इदं धनुरियं शक्तिरिदं चक्रमियं गदा ।**
**यद्यदिच्छसि चेदस्त्रं मत्तस्तत् तद् ददामि ते ॥१८॥**

"यह मेरा धनुष है, यह शक्ति है, यह चक्र है और यह गदा है । तुम जो-जो अस्त्र मुझसे लेना चाहते हो, वही वह तुम्हें दिये देता हूँ ।

**यच्छक्नोसि समुद्यन्तुं प्रयोक्तुमपि वा रणे ।**
**तद्गृहाण विनास्त्रेण यन्मे दातुमभीप्ससि ॥१९॥**

"तुम मुझे जो अस्त्र देना चाहते हो, उसे दिये बिना ही युद्धक्षेत्र में मेरे जिस हथियार को उठा अथवा चला सको, उसे ही ले लो ।"

**स सुनाभं सहस्रारं वज्रनाभमयस्मयम् ।**
**वव्रे चक्रं महाभागो मत्तः स्पर्धन्मया सह ॥२०॥**

"तब उस महाभाग ने मेरे साथ स्पर्धा रखते हुए मुझसे मेरा वह लोहमय चक्र माँगा, जिसकी सुन्दर नाभि में वज्र लगा हुआ है और जो एक सहस्र अरों से सुशोभित होता है ।

**गृहाण चक्रमित्युक्तो मया तु तदनन्तरम् ।**
**जग्राहोत्पत्य सहसा चक्रं सव्येन पाणिना ॥२१॥**

"मैंने भी कह दिया—"ले लो चक्र," मेरे इतना कहते ही उसने सहसा उछलकर बाएँ हाथ से चक्र को पकड़ लिया ।

**न चैनमशकत्स्थानात् संचालयितुमच्युत ।**
**अथैनं दक्षिणेनापि गृहीतुमुपचक्रमे ॥२२॥**

"परन्तु वह उसे अपने स्थान से हिला भी नहीं सका । तब उसने उसे दाहिने हाथ से उठाने का प्रयत्न आरम्भ किया ।

**सर्वयत्नबलेनापि गृह्णन्नैतदकल्पयत् ।**
**ततः सर्वबलेनापि यदैतन्न शशाक सः ॥२३॥**
**उद्यन्तुं वा चालयितुं द्रौणिः परमदुर्मनाः ।**
**कृत्वा यत्नं परिश्रान्तः स न्यवर्तत भारत ॥२४॥**

"सारा प्रयत्न और सारी शक्ति लगाकर भी जब वह उस चक्र को पकड़कर उठा या हिला न सका, तब अश्वत्थामा मन-ही-मन अत्यन्त दुःखी हुआ । हे भारत ! प्रयत्न करके थक जाने पर वह उसे प्राप्त करने की चेष्टा से निवृत्त हो गया ।

**निवृत्तमनसं तस्मादभिप्रायाद् विचेतसम् ।**
**अहमामन्त्र्य संविग्नमश्वत्थामानमब्रुवम् ॥२५॥**

"जब उस संकल्प से उसका मन हट गया और वह दुःख से अचेत एवं उद्विग्न हो गया, तब मैंने अश्वत्थामा को बुलाकर कहा—

**यः सदैव मनुष्येषु प्रमाणं परमं गतः ।**
**गाण्डीवधन्वा श्वेताश्वः कपिप्रवरकेतनः ॥२६॥**
**तेनापि सुहृदा ब्रह्मन् पार्थेनाक्लिष्टकर्मणा ।**
**नोक्तपूर्वमिदं वाक्यं यत् त्वं मामभिभाषसे ॥२७॥**

"ब्रह्मन् ! जो मनुष्य-समाज में सदा ही परम प्रामाणिक समझे जाते हैं, जिनके पास गाण्डीव धनुष और श्वेत घोड़े हैं, जिनकी ध्वजा पर श्रेष्ठ वानर विराजमान होता है, अनायास ही महान् कर्म करनेवाले मेरे उस प्रिय सुहृद् कुन्तीकुमार अर्जुन ने भी पहले कभी ऐसी बात नहीं कही थी, जो आज तुम मुझसे कह रहे हो ।

**ब्रह्मचर्यं महद्घोरं चीर्त्वा द्वादशवार्षिकम् ।**
**हिमवत्पार्श्वमास्थाय यो मया तपसार्जितः ॥२८॥**
**समानव्रतचारिण्यां रुक्मिण्यां योऽन्वजायत ।**
**सनत्कुमारस्तेजस्वी प्रद्युम्नो नाम मे सुतः ॥२९॥**
**तेनाप्येतन्महद् दिव्यं चक्रमप्रतिमं रणे ।**
**न प्रार्थितमभून्मूढ यदिदं प्रार्थितं त्वया ॥३०॥**

"मूढ़ ब्राह्मण ! मैंने बारह वर्ष तक घोर ब्रह्मचर्य का पालन करके हिमालय की घाटी में रहकर बड़े भारी तप के द्वारा जिसे प्राप्त किया था, मेरे समान व्रतपालन करनेवाली रुक्मणीदेवी के गर्भ से जिसका जन्म हुआ है, जिसके रूप में साक्षात् तेजस्वी सनत्कुमार ने ही मेरे यहाँ जन्म लिया है, वह प्रद्युम्न मेरा प्रिय पुत्र है । रणभूमि में जिसकी कहीं तुलना नहीं है, मेरे इस परम दिव्य चक्र को कभी उस प्रद्युम्न ने भी नहीं माँगा था, जिसकी आज तुमने माँग की है ।

**रामेणातिबलेनैतन्नोक्तपूर्वं कदाचन ।**
**न गदेन न साम्बेन यदिदं प्रार्थितं त्वया ॥३१॥**

"अत्यन्त बलशाली बलरामजी ने भी पहले कभी ऐसी बात नहीं कही है । जिसे तुमने माँगा है, उसे गद और साम्ब ने भी कभी लेने की इच्छा नहीं की ।

**भारताचार्यपुत्रस्त्वं मानितः सर्वयादवैः ।**
**चक्रेण रथिनां श्रेष्ठ कं नु तात युयुत्ससे ॥३२॥**

"तात ! रथियों में श्रेष्ठ ! तुम तो भरतकुल के आचार्य के पुत्र हो । समस्त यादवों ने तुम्हारा बड़ा सम्मान किया है, फिर बताओ तो सही, इस चक्र के द्वारा तुम किसके साथ युद्ध करना चाहते हो ?

**एवमुक्तो मया द्रौणिर्मामिदं प्रत्युवाच ह।**
**प्रयुज्य भवते पूजां योत्स्ये कृष्ण त्वया सह ॥३३॥**
**प्रार्थितं ते मया चक्रं देवदानवपूजितम्।**
**अजेयः स्यामिति विभो सत्यमेतद् ब्रवीमि ते ॥३४॥**

"जब मैंने इस प्रकार पूछा, तब द्रोणपुत्र ने मुझे यह उत्तर दिया—'श्रीकृष्ण ! मैं आपकी पूजा करके फिर आपके साथ युद्ध करूँगा। प्रभो ! मैं सच कहता हूँ कि मैंने इस देव-दानवपूजित चक्र को आपसे इसीलिए माँगा था, कि इसे पाकर मैं अजेय हो जाऊँ।

**त्वत्तोऽहं दुर्लभं काममनवाप्यैव केशव।**
**प्रतियास्यामि गोविन्द शिवेनाभिवदस्व माम् ॥३५॥**

"'परन्तु केशव ! अब मैं अपनी इस दुर्लभ कामना को आपसे प्राप्त किये बिना ही लौट जाऊँगा। गोविन्द ! आप मुझे केवल इतना कह दें कि तेरा कल्याण हो।'

**एतत् सुभीमं भीमानामृषभेण त्वया धृतम्।**
**चक्रमप्रतिचक्रेण भुवि नान्योऽभिपद्यते ॥३६॥**

"'यह चक्र अत्यन्त भयंकर है और आप भी भयानक वीरों के शिरोमणि हैं। आपके किसी विरोधी के पास ऐसा भयानक चक्र नहीं है। आपने ही इसे धारण कर रखा है। इस भूतल पर दूसरा कोई मनुष्य इसे नहीं उठा सकता।'

**एतावदुक्त्वा द्रौणिर्मां युग्यानश्वान् धनानि च।**
**आदायोपययौ काले रत्नानि विविधानि च ॥३७॥**

"मुझसे इतना ही कहकर द्रोणपुत्र अश्वत्थामा रथ में जोतने योग्य घोड़े, धन और नाना प्रकार के रत्न लेकर वहाँ से यथासमय लौट गया।

**स संरम्भी दुरात्मा च चपलः क्रूर एव च।**
**वेद चास्त्रं ब्रह्मशिरस्तस्माद् रक्ष्यो वृकोदरः ॥३८॥**

"वह क्रोधी, दुष्टात्मा, चपल और क्रूर है। साथ ही उसे ब्रह्मास्त्र का भी ज्ञान है, अतः उससे भीमसेन की रक्षा करनी चाहिए।"

**इति महाभारते सौप्तिकपर्वणि षष्ठोऽध्यायः ॥६॥**

# सप्तमोऽध्यायः

**श्रीकृष्ण आदि का भीम के पीछे जाना, भीम का गङ्गातट पर पहुँचकर अश्वत्थामा को ललकारना, अश्वत्थामा द्वारा ब्रह्मास्त्र का प्रयोग, जिसके निवारणार्थ अर्जुन का भी ब्रह्मास्त्र छोड़ना**

वैशम्पायन उवाच

**एवमुक्त्वा युधां श्रेष्ठः सर्वयादवनन्दनः।**
**सर्वायुधवरोपेतमारुरोह रथोत्तमम् ॥१॥**

**वैशम्पायनजी कहते हैं**—समस्त यादवकुल को आनन्दित करनेवाले योद्धाओं में श्रेष्ठ श्रीकृष्ण ऐसा कहकर सम्पूर्ण श्रेष्ठ आयुधों [शस्त्रों] से सम्पन्न उत्तम रथ पर आरूढ़ हुए।

**अर्जुनः सत्यकर्मा च कुरुराजो युधिष्ठिरः।**
**अशोभेतां महात्मानौ दाशार्हमभितः स्थितौ ॥२॥**

सत्यपराक्रमी अर्जुन और कुरुराज युधिष्ठिर—ये दोनों महात्मा श्रीकृष्ण के दोनों ओर बैठे हुए अत्यधिक सुशोभित हो रहे थे।

**ते समार्च्छन्नरव्याघ्राः क्षणेन भरतर्षभ।**
**भीमसेनं महेष्वासं समनुद्रुत्य वेगिताः ॥३॥**

भरतभूषण ! वे तीनों नरश्रेष्ठ बड़े वेग से पीछे-पीछे रथ दौड़ाकर क्षणभर में महाधनुर्धर भीमसेन के पास जा पहुँचे।

**क्रोधदीप्तं तु कौन्तेयं द्विषदर्थे समुद्यतम्।**
**नाशक्नुवन् वारयितुं समेत्यापि महारथाः ॥४॥**

उस समय कुन्तीकुमार भीमसेन क्रोध से प्रज्वलित हो शत्रु का संहार करने पर तुले हुए थे, अतः वे तीनों महारथी उनसे मिलकर भी उन्हें रोक न सके।

**स तेषां प्रेक्षतामेव श्रीमतां दृढधन्विनाम्।**
**ययौ भागीरथीतीरं यत्र द्रौणिः स्म श्रूयते ॥५॥**

उन सुदृढ़ धनुर्धर तेजस्वी वीरों के देखते-देखते वे भागीरथी के तट पर जा पहुँचा जहाँ अश्वत्थामा बैठा सुना गया था।

**स ददर्श महात्मानमुदकान्ते यशस्विनम्।**
**कृष्णद्वैपायनं व्यासमासीनमृषिभिः सह ॥६॥**

**तं चैव क्रूरकर्माणं घृताक्तं कुशचीरिणम् ।**
**रजसा ध्वस्तमासीनं ददर्श द्रौणिमन्तिके ।।७।।**

वहाँ जाकर उन्होंने गङ्गा के किनारे परम यशस्वी महात्मा श्रीकृष्ण द्वैपायन व्यास को अनेक महर्षियों के साथ बैठे देखा। उनके समीप ही क्रूरकर्मा द्रोणपुत्र भी बैठा दिखाई दिया। उसने अपने शरीर में घी लगाकर कुश का चीर पहन रखा था। उसके सारे अङ्गों पर धूल छा रही थी।

**तमभ्यधावत् कौन्तेयः प्रगृह्य सशरं धनुः ।**
**भीमसेनो महाबाहुस्तिष्ठ तिष्ठेति चाब्रवीत् ।।८।।**

कुन्तीपुत्र महाबाहु भीमसेन बाणसहित धनुष लिये हुए उसकी ओर दौड़े और बोले—"अरे खड़ा रह, खड़ा रह।"

**स दृष्ट्वा भीमधन्वानं प्रगृहीतशरासनम् ।**
**व्यथितमभवद् द्रौणिः प्राप्तं चेदममन्यत ।।९।।**

भयंकर धनुर्धर भीमसेन को हाथ में धनुषबाण लिये देखकर अश्वत्थामा के हृदय में बड़ी व्यथा हुई और उस घबराहट में उसने यही करना उचित समझा।

**स तद् दिव्यमदीनात्मा परमास्त्रमचिन्तयत् ।**
**जग्राह च स चैषीकां द्रौणिः सव्येन पाणिना ।।१०।।**

उसने दीन न होकर उस दिव्य एवं उत्तम अस्त्र का चिन्तन किया, साथ ही बायें हाथ से एक सींक उठा ली।

**स तामापदमासाद्य दिव्यमस्त्रमुदैरयत् ।**
**अपाण्डवायेति रुषा व्यसृजद् दारुणं वचः ।।११।।**

उस आपत्ति में पड़कर उसने रोषपूर्वक उस दिव्यास्त्र का प्रयोग किया और मुख से इस कठोर वचन का उच्चारण किया—"यह अस्त्र समस्त पाण्डवों का विनाश कर डाले।"

**इत्युक्त्वा राजशार्दूल द्रोणपुत्रः प्रतापवान् ।**
**सर्वलोकप्रमोहार्थं तदस्त्रं प्रमुमोच ह ।।१२।।**

नृपश्रेष्ठ! ऐसा कहकर प्रतापी अश्वत्थामा ने सम्पूर्ण लोकों को मोह में डालने के लिए वह अस्त्र छोड़ दिया।

**इङ्गितेनैव दाशार्हस्तमभिप्रायमादितः ।**
**द्रौणेर्बुद्ध्वा महाबाहुरर्जुनं प्रत्यभाषत ।।१३।।**

हे राजन्! दशार्हनन्दन महाबाहु श्रीकृष्ण अश्वत्थामा की चेष्टा से उसके मन का भाव पहले ही ताड़ गये थे, अतः वे अर्जुन से कहने लगे—

**अर्जुनार्जुन यद्दिव्यमस्त्रं ते हृदि वर्तते ।**
**द्रोणोपदिष्टं तस्यायं कालः सम्प्रति पाण्डवः ।।१४।।**

"अर्जुन! अर्जुन! पाण्डवनन्दन! आचार्य द्रोण द्वारा उपदिष्ट जो दिव्यास्त्र तुम्हारे हृदय में विद्यमान है, उसके प्रयोग का अब यह समय आ गया है।

**भ्रातॄणामात्मनश्चैव परित्राणाय भारत ।**
**विसृजैतत् त्वमप्याजावस्त्रमस्त्रनिवारणम् ।।१५।।**

"भरतनन्दन! भाइयों की और अपनी रक्षा के लिए तुम भी युद्ध में इस ब्रह्मास्त्र का प्रयोग करो। अश्वत्थामा के अस्त्र का निवारण इसी के द्वारा हो सकता है।"

**केशवेनैवमुक्तोऽथ पाण्डवः परवीरहा ।**
**अवातरद् रथात् तूर्णं प्रगृह्य सशरं धनुः ।।१६।।**

श्रीकृष्ण के ऐसा कहने पर शत्रुवीरों के संहारक पाण्डुकुमार अर्जुन धनुष-बाण हाथ में लेकर तुरन्त ही रथ से नीचे उतर गये।

**पूर्वमाचार्यपुत्राय ततोऽनन्तरमात्मने ।**
**भ्रातृभ्यश्चैव सर्वेभ्यः स्वस्तीत्युक्त्वा परन्तपः ।।१७।।**
**देवताभ्यो नमस्कृत्य गुरुभ्यश्चैव सर्वशः ।**
**उत्ससर्ज शिवं ध्यायन्नस्त्रमस्त्रेण शाम्यताम् ।।१८।।**

शत्रुओं को सन्ताप देनेवाले अर्जुन ने सबसे पहले यह कहा कि 'आचार्यपुत्र का कल्याण हो' तत्पश्चात् अपने और सम्पूर्ण भाइयों के लिए मङ्गल-कामना करके उन्होंने देवों और गुरुजनों को नमस्कार किया। तत्पश्चात् 'इस ब्रह्मास्त्र से शत्रु का ब्रह्मास्त्र शान्त हो जाए' ऐसा संकल्प करके सबके कल्याण की भावना करते हुए अपना दिव्यास्त्र छोड़ दिया।

**ततस्तदस्त्रं सहसा सृष्टं गाण्डीवधन्वना ।**
**प्रजज्वाल महार्चिष्मद् युगान्तानलसन्निभम् ।।१९।।**

गाण्डीवधारी अर्जुन के द्वारा छोड़ा गया वह ब्रह्मास्त्र सहसा प्रज्वलित हो उठा। उससे प्रलयाग्नि के समान बड़ी-बड़ी लपटें उठने लगीं।

**तथैव द्रोणपुत्रस्य तदस्त्रं तिग्मतेजसा ।**
**प्रजज्वाल महाज्वालं तेजोमण्डलसंवृतम् ।।२०।।**

इसी प्रकार प्रचण्ड तेजस्वी द्रोणपुत्र का वह अस्त्र भी तेजोमण्डल से घिरकर बड़ी-बड़ी ज्वालाओं के साथ जलने लगा।

**सशब्दमभवद् व्योम ज्वालामालाकुलं भृशम्।**
**चचाल च मही कृत्स्ना सपर्वतवनद्रुमा ॥२१॥**

सम्पूर्ण आकाश अग्नि की प्रचण्ड ज्वालाओं से व्याप्त हो गया तथा वहाँ जोर-जोर से शब्द होने लगा। पर्वत, वन और वृक्षोंसहित सारी पृथिवी हिलने लगी।

**महर्षी सहितौ तत्र दर्शयामासतुस्तदा।**
**नारदः सर्वभूतात्मा भरतानां पितामहः ॥२२॥**

उस समय वहाँ सम्पूर्ण भूतों के आत्मा [सबसे आत्मवत् प्रेम करनेवाले] नारद और भरतवंश के पितामह व्यास इन दो महर्षियों ने एक-साथ दर्शन दिया।

**उभौ शमयितुं वीरौ भारद्वाजधनञ्जयौ।**
**दीप्तयोरस्त्रयोर्मध्ये स्थितौ परमतेजसौ ॥२३॥**

वे दोनों परम तेजस्वी मुनि अश्वत्थामा और अर्जुन—इन दोनों वीरों को शान्त करने के लिए इनके प्रज्वलित अस्त्रों के बीच में खड़े हो गये।

ऋषी ऊचतुः

**नानाशस्त्रविदः पूर्वे येऽप्यतीता महारथाः।**
**नैतदस्त्रं मनुष्येषु तैः प्रयुक्तं कथञ्चन।**
**किमिदं साहसं वीरौ कृतवन्तौ महात्ययम् ॥२४॥**

**दोनों ऋषि बोले**—वीरो! पूर्वकाल में भी जो बहुत-से महारथी हो चुके हैं, वे नाना प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों के जानकार थे, परन्तु उन्होंने किसी प्रकार भी मनुष्यों पर इस अस्त्र का प्रयोग नहीं किया था। तुम दोनों ने यह महाविनाशकारी दुःसाहस क्यों किया है?

**इति महाभारते सौप्तिकपर्वणि सप्तमोऽध्यायः ॥७॥**

## अष्टमोऽध्यायः

**व्यासजी की आज्ञा से अर्जुन द्वारा अपने अस्त्र का उपसंहार, अश्वत्थामा का अपनी मणि देकर पाण्डवों के गर्भों पर दिव्यास्त्र छोड़ना, पाण्डवों का मणि देकर द्रौपदी को शान्त करना**

वैशम्पायन उवाच

**दृष्ट्वैव नरशार्दूल तावग्निसमतेजसौ।**
**संजहार शरं दिव्यं त्वरमाणो धनञ्जयः ॥१॥**

**वैशम्पायनजी कहते हैं**—नरश्रेष्ठ! उन अग्नि के समान तेजस्वी महर्षियों को देखते ही धनञ्जय ने बड़ी फुर्ती से अपने दिव्यास्त्र का उपसंहार आरम्भ किया।

**उवाच भरतश्रेष्ठ तावृषी प्राञ्जलिस्तदा।**
**प्रयुक्तमस्त्रमस्त्रेण शाम्यतामिति वै मया ॥२॥**
**संहृते परमास्त्रेऽस्मिन् सर्वानस्मानशेषतः।**
**पापकर्मा ध्रुवं द्रौणिः प्रधक्ष्यत्यस्त्रतेजसा ॥३॥**

भरतश्रेष्ठ! उस समय उन्होंने हाथ जोड़कर उन दोनों महर्षियों से कहा—"मुनिवरो! मैंने तो यह अस्त्र इस उद्देश्य से छोड़ा था कि इसके द्वारा शत्रु का छोड़ा हुआ ब्रह्मास्त्र शान्त हो जाए। अब इस श्रेष्ठ अस्त्र को लौटा लेने पर पापाचारी अश्वत्थामा अपने अस्त्र के तेज से निश्चय ही हम सब लोगों को भस्म कर डालेगा।

**यदत्र हितमस्माकं लोकानां चैव सर्वथा।**
**भवन्तौ देवसंकाशौ तथा सम्मन्तुमर्हतः ॥४॥**

"आप दोनों देवताओं के तुल्य हैं, अतः इस समय जिस कार्य के करने से हमारा और सब लोगों का सर्वथा हित हो, उसी के लिए आप हमें परामर्श दें।"

**इत्युक्त्वा संजहारास्त्रं पुनरेवं धनञ्जयः।**
**संहारो दुष्करस्तस्य देवैरपि हि संयुगे ॥५॥**
**विसृष्टस्य रणे तस्य परमास्त्रस्य संग्रहे।**
**अशक्तः पाण्डवादन्यः साक्षादपि शतक्रतुः ॥६॥**

ऐसा कहकर अर्जुन ने उस अस्त्र को वापस लौटा लिया। युद्ध में उसे लौटा लेना देवताओं के लिए भी दुष्कर था। संग्राम में एक बार उस दिव्य अस्त्र को छोड़ देने पर पुनः उसे लौटा लेने में पाण्डुपुत्र अर्जुन के सिवा इन्द्र भी समर्थ नहीं था।

**ब्रह्मतेजोद्भवं तद्धि विसृष्टमकृतात्मना ।**
**न शक्यमावर्तयितुं ब्रह्मचारिव्रतादृते ।।७।।**

वह ब्रह्मास्त्र ब्रह्मतेज से उत्पन्न हुआ था। यदि अजितेन्द्रिय पुरुष के द्वारा इस अस्त्र का प्रयोग किया गया हो तो उसके लिए इसे पुनः लौटाना असम्भव है, क्योंकि ब्रह्मचर्यव्रत का पालन किये बिना कोई इसे लौटा नहीं सकता।

**अचीर्णब्रह्मचर्यो यः सृष्ट्वावर्तयते पुनः ।**
**तदस्त्रं सानुबन्धस्य मूर्धानं तस्य कृन्तति ।।८।।**

ब्रह्मचर्य का पालन न करनेवाला जो मनुष्य उसका एक बार प्रयोग करके उसे वापस लौटाने का प्रयत्न करे तो यह अस्त्र सगे-सम्बन्धियोंसहित उसका सिर काट लेता है।

**ब्रह्मचारी व्रती चापि दुरवापमवाप्य तत् ।**
**परमव्यसनार्तोऽपि नार्जुनोऽस्त्रं व्यमुञ्चत ।।९।।**

अर्जुन ने ब्रह्मचारी एवं व्रतधारी रहकर ही उस दुर्लभ अस्त्रको प्राप्त किया था। वे बड़े-से-बड़े संकटों में पड़ने पर भी कभी उस अस्त्र का प्रयोग नहीं करते थे।

**सत्यव्रतधरः शूरो ब्रह्मचारी च पाण्डवः ।**
**गुरुवर्ती च तेनास्त्रं संजहारार्जुनः पुनः ।।१०।।**

सत्यव्रतधारी, ब्रह्मचारी, शूरवीर पाण्डव अर्जुन गुरु की आज्ञा का पालन करनेवाले थे, अतः उन्होंने उस अस्त्र को लौटा लिया।

**द्रौणिरप्यथ सम्प्रेक्ष्य तावृषी पुरतः स्थितौ ।**
**न शशाक पुनर्घोरमस्त्रं संहर्तुमोजसा ।।११।।**

अश्वत्थामा ने भी उन दोनों ऋषियों को अपने सामने खड़ा देखकर उस घोर अस्त्र को बलपूर्वक लौटा लेने का प्रयत्न किया, किन्तु वह उसमें सफल न हो सका।

**अशक्तः प्रतिसंहारे परमास्त्रस्य संयुगे ।**
**द्रौणिर्दीनमना राजन् द्वैपायनमभाषत ।।१२।।**

राजन्! युद्ध में उस दिव्य-अस्त्र का उपसंहार करने में समर्थ न होने के कारण अश्वत्थामा मन-ही-मन बहुत दुःखी हुआ और व्यासजी से इस प्रकार बोला—

**उत्तमव्यसनार्तेन प्राणत्राणमभीप्सुना ।**
**मयैतदस्त्रमुत्सृष्टं भीमसेनभयान्मुने ।।१३।।**

"मुने! मैंने भीमसेन के भय से भारी संकट में पड़कर अपने प्राणों की रक्षा के लिए ही यह अस्त्र छोड़ा था।

**अधर्मश्च कृतोऽनेन धार्तराष्ट्रं जिघांसता ।**
**मिथ्याचारेण भगवन् भीमसेनेन संयुगे ।।१४।।**

"भगवन्! दुर्योधन के वध की इच्छा से इस भीमसेन ने युद्धभूमि में मिथ्याचार का आश्रय लेकर महान् अधर्म किया था।

**अतः सृष्टमिदं ब्रह्मन् मयास्त्रमकृतात्मना ।**
**तस्य भूयोऽद्य संहारं कर्तुं नाहमिहोत्सहे ।।१५।।**

"ब्रह्मन्! यद्यपि मैं जितेन्द्रिय नहीं हूँ फिर भी मैंने इस अस्त्र का प्रयोग कर दिया है। अब इसे लौटा लेने की शक्ति मुझमें नहीं है।

**विसृष्टं हि मया दिव्यमेतदस्त्रं दुरासदम् ।**
**अपाण्डवायेति मुने वह्नितेजोऽनुमन्त्र्य वै ।।१६।।**

"मुने! मैंने इस दुर्जय दिव्यास्त्र को अग्नि के तेज से युक्त और अभिमन्त्रित करके इस उद्देश्य से छोड़ा था कि पाण्डवों का नाम निःशेष हो जाए।

**तदिदं पाण्डवेयानामन्तकायाभिसंहितम् ।**
**अद्य पाण्डुसुतान् सर्वाञ्जीविताद् भ्रंशयिष्यति ।।१७।।**

"पाण्डवों के विनाश का संकल्प करके छोड़ा गया यह अस्त्र आज समस्त पाण्डवों को जीवनशून्य कर देगा।

**कृतं पापमिदं ब्रह्मन् रोषाविष्टेन चेतसा ।**
**वधमाशास्य पार्थानां मयास्त्रं सृजता रणे ।।१८।।**

"ब्रह्मन्! मैंने मन में रोष भरकर रणभूमि में कुन्तीकुमारों के वध की इच्छा से इस अस्त्र का प्रयोग करके निश्चय ही बड़ा भारी पाप किया है।"

व्यास उवाच

**अस्त्रं ब्रह्मशिरस्तात विद्वान् पार्थो धनञ्जयः ।**
**उत्सृष्टवान्न रोषेण न नाशाय तवाहवे ।।१९।।**

**व्यासजी ने कहा**—तात! कुन्तीपुत्र अर्जुन भी तो इस ब्रह्मास्त्र के ज्ञाता हैं, परन्तु उन्होंने रोष में भरकर तुम्हें मारने के लिए उसे नहीं छोड़ा।

**अस्त्रमस्त्रेण तु रणे तव संशमयिष्यता ।**
**विसृष्टमर्जुनेनेदं पुनश्च प्रतिसंहृतम् ।।२०।।**

देखो ! युद्धभूमि में अपने अस्त्र द्वारा तुम्हारे अस्त्र को शान्त करने के उद्देश्य से ही अर्जुन ने उसका प्रयोग किया था और अब उसे लौटा भी लिया है ।

**ब्रह्मास्त्रमप्यवाप्यैतदुपदेशात् पितुस्तव ।**
**क्षत्रधर्मान्महाबाहुर्नाकम्पत धनञ्जयः ॥२१॥**

इस ब्रह्मास्त्र को पाकर भी महाबाहु अर्जुन तुम्हारे पिताजी का उपदेश मानकर कभी क्षात्रधर्म से विचलित नहीं हुए हैं ।

**एवं धृतिमतः साधोः सर्वास्त्रविदुषः सतः ।**
**सभ्रातृबन्धोः कस्मात्त्वं वधमस्य चिकीर्षसि ॥२२॥**

ये ऐसे धैर्यवान्, सज्जन, सम्पूर्ण अस्त्रों के ज्ञाता और सत्पुरुष हैं फिर भी तुम भाई-बन्धुओंसहित इनका वध करने की इच्छा क्यों रखते हो ?

**अस्त्रं ब्रह्मशिरो यत्र परमस्त्रेण वध्यते ।**
**समा द्वादश पर्जन्यस्तद्राष्ट्रं नाभिवर्षति ॥२३॥**

जिस देश में एक ब्रह्मास्त्र को दूसरे श्रेष्ठ अस्त्र से दबा दिया दिया जाता है, उस राष्ट्र में बारह वर्षों तक वर्षा नहीं होती है ।

**एतदर्थं महाबाहुः शक्तिमानपि पाण्डवः ।**
**न विहन्त्येतदस्त्रं ते प्रजाहितचिकीर्षया ॥२४॥**

इसीलिए प्रजागण के हित की इच्छा से महाबाहु अर्जुन शक्तिशाली होते हुए भी तुम्हारे इस अस्त्र को नष्ट नहीं कर रहे हैं ।

**पाण्डवास्त्वं च राष्ट्रं च सदा संरक्ष्यमेव हि ।**
**तस्मात् संहर दिव्यं त्वमस्त्रमेतन्महाभुज ॥२५॥**

महाबाहो ! तुम्हें पाण्डवों की, अपनी और इस राष्ट्र की भी सदा रक्षा ही करनी चाहिए, अतः तुम अपने इस दिव्यास्त्र को लौटा लो ।

**अरोषस्तव चैवास्तु पार्थाः सन्तु निरामयाः ।**
**न ह्यधर्मेण राजर्षिः पाण्डवो जेतुमिच्छति ॥२६॥**

तुम्हारा रोष शान्त हो और पाण्डव भी स्वस्थ रहें । पाण्डुपुत्र राजर्षि युधिष्ठिर किसी को भी अधर्म से नहीं जीतना चाहते हैं ।

**मणिं चैव प्रयच्छाद्य यस्ते शिरसि तिष्ठति ।**
**एतमादाय ते प्राणान् प्रतिदास्यन्ति पाण्डवाः ॥२७॥**

तुम्हारे सिर में जो मणि है, इसे आज पाण्डवों को प्रदान कर दो । इस मणि को लेकर ये बदले में तुम्हें प्राणदान देंगे ।

द्रौणिरुवाच

**पाण्डवैर्यानि रत्नानि यच्चान्यत् कौरवैर्धनम् ।**
**अवाप्तमिह तेभ्योऽयं मणिर्मम विशिष्यते ॥२८॥**

**अश्वत्थामा बोला**—पाण्डवों ने अबतक जो-जो रत्न प्राप्त किये हैं और कौरवों ने भी यहाँ जो धन पाया है, मेरी यह मणि उन सबसे अधिक मूल्यवान् है ।

**यमाबध्य भयं नास्ति शस्त्रव्याधिक्षुधाश्रयम् ।**
**देवेभ्यो दानवेभ्यो वा नागेभ्यो वा कथञ्चन ॥२९॥**

इसे बाँध लेने पर शस्त्र, व्याधि, क्षुधा, देवता, दानव अथवा नाग किसी से भी किसी प्रकार का भय नहीं रहता ।

**न च रक्षोगणभयं न तस्करभयं तथा ।**
**एवंवीर्यो मणिरयं न मे त्याज्यः कथञ्चन ॥३०॥**

इसे बाँध लेने पर न राक्षसों का भय रहता है, न चोरों का, मेरी इस मणि का ऐसा अद्भुत प्रभाव है, अतः मुझे इसका त्याग किसी प्रकार भी नहीं करना चाहिए ।

**यत्तु मे भगवानाह तन्मे कार्यमनन्तरम् ।**
**अयं मणिरयं चाहमीषिका तु पतिष्यति ॥३१॥**
**गर्भेषु पाण्डवेयानाममोघं चैतदुत्तमम् ।**
**न च शक्तोऽस्मि भगवन् संहर्तुं पुनरुद्यतम् ॥३२॥**

परन्तु आप पूज्यपाद महर्षि मुझे जो आज्ञा देते हैं, उसी का अब मुझे पालन करना है, अतः यह रही मणि और यह रहा मैं, परन्तु यह दिव्यास्त्र से अभिमन्त्रित की हुई सींक तो पाण्डवों के गर्भस्थ शिशुओं पर गिरेगी ही, क्योंकि यह उत्तम अस्त्र अमोघ है । भगवन् ! इस उठे हुए अस्त्र को मैं पुनः लौटा लेने में असमर्थ हूँ ।

**एतदस्त्रमतश्चैव गर्भेषु विसृजाम्यहम् ।**
**न च वाक्यं भगवतो न करिष्ये महामुने ॥३३॥**

महामुने ! यह अस्त्र मैं पाण्डवों के गर्भों पर ही छोड़ रहा हूँ । आपकी आज्ञा का मैं कदापि उल्लंघन नहीं करूँगा ।

व्यास उवाच

**एवं कुरु न चान्या तु बुद्धिः कार्या त्वयानघ ।**
**गर्भेषु पाण्डवेयानां विसृज्यैतदुपारम ॥३४॥**

**व्यासजी ने कहा**—निष्पाप ! अच्छा ऐसा ही हो । अब अपने मन में दूसरा कोई विचार मत लाना । इस अस्त्र को पाण्डवों के गर्भों पर ही छोड़कर शान्त हो जाओ ।

वैशम्पायन उवाच

**ततः परममस्त्रं तु द्रौणिरुद्यतमाहवे ।**
**द्वैपायनवचः श्रुत्वा गर्भेषु मुमोच ह ॥३५॥**

**वैशम्पायजी कहते हैं**—राजन् ! व्यासजी का यह वचन सुनकर अश्वत्थामा ने युद्ध में उठे हुए उस दिव्यास्त्र को पाण्डवों के गर्भों पर ही छोड़ दिया ।

**तदाज्ञाय हृषीकेशो विसृष्टं पापकर्मणा ।**
**हृष्यमाण इदं वाक्यं द्रौणिं प्रत्यब्रवीत्तदा ॥३६॥**

पापी अश्वत्थामा ने अपना अस्त्र पाण्डवों के गर्भ पर छोड़ दिया है, यह जानकर श्रीकृष्ण को बड़ी प्रसन्नता हुई । उस समय उन्होंने अश्वत्थामा से इस प्रकार कहा—

**विराटस्य सुतां पूर्वं स्नुषां गाण्डीवधन्वनः ।**
**उपप्लव्यगतां दृष्ट्वा व्रतवान् ब्राह्मणोऽब्रवीत् ॥३७॥**

"पहले की बात है, राजा विराट की कन्या और गाण्डीवधारी अर्जुन की पुत्रवधू जब उपप्लव्यनगर में रहती थी, उस समय किसी व्रतधारी ब्राह्मण ने उसे देखकर कहा—

**परिक्षीणेषु कुरुषु पुत्रस्तव भविष्यति ।**
**एतदस्य परिक्षित्वं गर्भस्थस्य भविष्यति ॥३८॥**

"पुत्री ! जब कौरववंश परिक्षीण हो जाएगा, तब तुम्हें एक पुत्र प्राप्त होगा और इसीलिए उस गर्भस्थ शिशु का नाम परिक्षित् होगा ।"

**तस्य तद् वचनं साधोः सत्यमेतद् भविष्यति ।**
**परिक्षिद् भवता ह्येषां पुनर्वंशकरः सुतः ॥३९॥**

"उस साधु ब्राह्मण का वह वचन सत्य होगा । उत्तरा का पुत्र परिक्षित् ही पुनः पाण्डववंश का प्रवर्तक होगा ।"

**एवं ब्रुवाणं गोविन्दं सात्वतां प्रवरं तदा ।**
**द्रौणिः परमसंरब्धः प्रत्युवाचेदमुत्तरम् ॥४०॥**

सात्वतवंश शिरोमणि श्रीकृष्ण जब ऐसा कह रहे थे, उस समय अश्वत्थामा अत्यन्त कुपित हो उठा और उत्तर देते हुए बोला—

**नैतदेवं यथाऽऽत्थ त्वं पक्षपातेन केशव ।**
**वचनं पुण्डरीकाक्ष न च मद्वाक्यमन्यथा ॥४१॥**

"कमलनयन केशव ! तुम पाण्डवों का पक्षपात करते हुए इस समय जैसी बात कह गये हो, वह कभी नहीं हो सकती । मेरा वचन मिथ्या नहीं होगा ।

**पतिष्यति तदस्त्रं हि गर्भे तस्या मयोद्यतम् ।**
**विराटदुहितुः कृष्ण यं त्वं रक्षितुमिच्छसि ॥४२॥**

"श्रीकृष्ण ! मेरे द्वारा चलाया गया वह अस्त्र विराटपुत्री उत्तरा के गर्भ पर ही, जिसकी तुम रक्षा करना चाहते हो गिरेगा ।"

श्रीकृष्ण उवाच

**अमोघः परमास्त्रस्य पातस्तस्य भविष्यति ।**
**स तु गर्भो मृतो जातो दीर्घमायुरवाप्स्यति ॥४३॥**

**श्रीकृष्ण बोले**—द्रोणपुत्र ! उस दिव्यास्त्र का प्रहार तो अमोघ ही होगा । उत्तरा का वह गर्भ मरा हुआ ही उत्पन्न होगा, फिर उसे दीर्घायु प्राप्त हो जाएगी ।

**वयः प्राप्य परिक्षित् तु वेदव्रतमवाप्य च ।**
**कृपाच्छारद्वताच्छूरः सर्वास्त्राण्युपपत्स्यते ॥४४॥**

परिक्षित् दीर्घायु प्राप्त करके ब्रह्मचर्यपालन तथा वेदाध्ययन का व्रत धारण करेगा और वह शूरवीर बालक शरद्वान् के पुत्र कृपाचार्य से ही सम्पूर्ण अस्त्र-शस्त्रों का ज्ञान प्राप्त करेगा ।

**अहं तं जीवयिष्यामि दग्धं शस्त्राग्नितेजसा ।**
**पश्य मे तपसो वीर्यं सत्यस्य च नराधम ॥४५॥**

पापी ! तेरी शस्त्राग्नि के तेज से दग्ध हुए उस बालक को मैं जीवित करूँगा । उस समय तू मेरे सत्य और तप का प्रभाव देख लेना ।

वैशम्पायन उवाच

**प्रदायाथ मणिं द्रौणिः पाण्डवानां महात्मनाम् ।**
**जगाम विमनास्तेषां सर्वेषां पश्यतां वनम् ॥४६॥**

**वैशम्पायनजी कहते हैं**—राजन् ! इस वार्तालाप के पश्चात् द्रोणपुत्र अश्वत्थामा महात्मा पाण्डवों

को मणि देकर उदास मन से उन सबके देखते-देखते वन में चला गया।

**ततस्ते पुरुषव्याघ्राः सदश्वैरनिलोपमैः।**
**अभ्ययुः सहदाशार्हाः शिबिरं पुनरेव हि ॥४७॥**

मणि लेकर श्रीकृष्णसहित वे पुरुषसिंह पाण्डव वहाँ से वायु के समान वेगशाली उत्तम घोड़ों के द्वारा पुनः अपने शिबिर में आ पहुँचे।

**अवतीर्य रथेभ्यस्तु त्वरमाणा महारथाः।**
**ददृशुर्द्रौपदीं कृष्णामार्तामार्ततराः स्वयम् ॥४८॥**

वहाँ रथों से उतरकर वे महारथी वीर अत्यन्त उतावली के साथ आकर शोक-पीड़ित द्रुपदकुमारी कृष्णा से मिले। उस समय वे स्वयं भी शोक से अत्यन्त व्याकुल हो रहे थे।

**ततो राज्ञाभ्यनुज्ञातो भीमसेनो महाबलः।**
**प्रददौ तं मणिं दिव्यं वचनं चेदमब्रवीत् ॥४९॥**

कृष्णा के पास पहुँचकर राजा युधिष्ठिर की आज्ञा से महाबली भीमसेन ने वह दिव्य मणि द्रौपदी के हाथ में दे दी और इस प्रकार कहा—

**अयं भद्रे तव मणिः पुत्रहन्तुर्जितः स ते।**
**उत्तिष्ठ शोकमुत्सृज्य क्षात्रधर्ममनुस्मर ॥५०॥**

"भद्रे! यह तुम्हारे पुत्रों का वध करनेवाले अश्वत्थामा की मणि है। तुम्हारे उस शत्रु को हमने जीत लिया। अब शोक छोड़कर उठो और क्षत्रिय-धर्म का स्मरण करो।

**जित्वा मुक्तो द्रोणपुत्रो ब्राह्मण्याद् गौरवेण च।**
**यशोऽस्य पतितं देवि शरीरं त्ववशेषितम्।**
**वियोजितश्च मणिना भ्रंशितश्चायुधं भुवि ॥५१॥**

"देवि! हमने द्रोणपुत्र अश्वत्थामा को जीतकर केवल ब्राह्मण और गुरुपुत्र होने के कारण ही उसे जीवित छोड़ दिया है। उसका सारा यश धूल में मिल गया, केवल शरीर शेष रह गया है। उसकी मणि छीन ली गई और उससे पृथिवी पर हथियार डलवा दिये गये हैं।"

द्रौपद्युवाच

**केवलानृण्यमाप्तास्मि गुरुपुत्रो गुरुर्मम।**
**शिरस्येतं मणिं राजा प्रतिबध्नातु भारत ॥५२॥**

**द्रौपदी बोली**—भरतभूषण! गुरुपुत्र तो मेरे लिए भी गुरु के ही समान हैं। मैं तो केवल पुत्रों के वध का प्रतिशोध लेना चाहती थी, वह पा गई। अब महाराज इस मणि को अपने मस्तक पर धारण करें।

**तं गृहीत्वा ततो राजा शिरस्येवाकरोत् तदा।**
**गुरोरुच्छिष्टमित्येव द्रौपद्या वचनादपि ॥५३॥**

तब राजा युधिष्ठिर ने उस मणि को लेकर द्रौपदी के कथनानुसार उसे अपने मस्तक पर धारण कर लिया। उन्होंने उस मणि को गुरु का प्रसाद ही समझा।

**ततो दिव्यं मणिवरं शिरसा धारयन् प्रभो।**
**शुशुभे स तदा राजा सचन्द्र इव पर्वतः।**
**उत्तस्थौ पुत्रशोकार्ता ततः कृष्णा मनस्विनी ॥५४॥**

उस दिव्य एवं उत्तम मणि को मस्तक पर धारण करके शक्तिशाली राजा युधिष्ठिर चन्द्रोदय की शोभा से युक्त उदयाचल के समान सुशोभित हुए और पुत्रशोक से पीड़ित हुई मनस्विनी कृष्णा भी अनशन छोड़कर उठ गई।

**इति महाभारते सौप्तिकपर्वणि अष्टमोऽध्यायः ॥८॥**

**॥ इति सौप्तिकपर्व सम्पूर्णम् ॥**

# स्त्रीपर्व

## प्रथमोऽध्यायः

### धृतराष्ट्र का विलाप और सञ्जय तथा विदुर का उन्हें सान्त्वना देना

जनमेजय उवाच

**हते दुर्योधने चैव हते सैन्ये च सर्वशः।**
**धृतराष्ट्रो महाराजः श्रुत्वा किमकरोन्मुने ॥१॥**

**जनमेजय ने पूछा**—मुने ! दुर्योधन और उसकी सारी सेना का संहार हो जाने पर महाराज धृतराष्ट्र ने इस वृत्तान्त को सुनकर क्या किया ?

**तथैव कौरवो राजा धर्मपुत्रो महामनाः।**
**कृपप्रभृतयश्चैव किमकुर्वत ते त्रयः ॥२॥**

इसी प्रकार कुरुवंशी राजा महामनस्वी धर्मपुत्र युधिष्ठिर ने तथा कृपाचार्य आदि तीनों महारथियों ने भी क्या किया ?

वैशम्पायन उवाच

**हते पुत्रशते दीनं छिन्नशाखमिव द्रुमम्।**
**पुत्रशोकाभिसन्तप्तं धृतराष्ट्रं महीपतिम् ॥३॥**
**ध्यानमूकत्वमापन्नं चिन्तया समभिप्लुतम्।**
**अभिगम्य महाराज सञ्जयो वाक्यमब्रवीत् ॥४॥**

**वैशम्पायनजी ने कहा**—राजन् ! अपने पुत्र के मारे जाने पर राजा धृतराष्ट्र की अवस्था ऐसी दयनीय हो गई, जैसे शाखाओं के कट जाने पर वृक्ष की हो जाती है। वे पुत्रों के शोक से सन्तप्त हो उठे। महाराज ! उन्हीं पुत्रों का ध्यान करते-करते वे मौन हो गये, चिन्ता में डूब गये। ऐसी दशा में उनके पास जाकर सञ्जय ने इस प्रकार कहा—

**किं शोचसि महाराज नास्ति शोके सहायता।**
**अक्षौहिण्यो हताश्चाष्टौ दश चैव विशाम्पते ॥५॥**

"महाराज ! आप शोक क्यों कर रहे हैं ? इस शोक में आपकी सहायता करनेवाला, आपका दुःख बाँटनेवाला भी तो कोई नहीं बचा है। प्रजेश्वर ! इस युद्ध में अठारह अक्षौहिणी सेनाएँ मारी गई हैं।

**निर्जनेयं वसुमती शून्या सम्प्रति केवला।**
**नानादिग्भ्यः समागम्य नानादेश्या नराधिपाः।**
**सहैव तव पुत्रेण सर्वे वै निधनं गताः ॥६॥**

"इस समय यह पृथिवी निर्जन होकर केवल सूनी-सी दिखाई पड़ती है। विभिन्न देशों के भूपाल नाना दिशाओं से आकर आपके पुत्र के साथ ही सब-के-सब काल के करालगाल में समा गये हैं।

**पितॄणां पुत्रपौत्राणां ज्ञातीनां सुहृदां तथा।**
**गुरूणां चानुपूर्व्येण प्रेतकार्याणि कारय ॥७॥**

"महाराज ! अब आप क्रमशः अपने चाचा, ताऊ, पुत्र-पौत्र, भाई-बन्धु, सुहृद् तथा गुरुजनों के प्रेतकार्य सम्पन्न कराइए।"

**तत् श्रुत्वा करुणं वाक्यं पुत्रपौत्रवधार्दितः।**
**पपात भुवि दुर्धर्षो वाताहत इव द्रुमः ॥८॥**

राजन् ! सञ्जय की यह करुणाभरी बात सुनकर पुत्र और पौत्रों के वध से व्याकुल हुए दुर्जय राजा धृतराष्ट्र आँधी से उखाड़े हुए वृक्ष की भाँति पृथिवी पर गिर पड़े।

धृतराष्ट्र उवाच

**हतपुत्रो हतामात्यो हतसर्वसुहृज्जनः।**
**दुःखं नूनं गमिष्यामि विचरन् पृथिवीमिमाम् ॥९॥**

**धृतराष्ट्र बोले**—सञ्जय ! मेरे पुत्र, मन्त्री और समस्त बन्धु-बान्धव मारे गये। अब तो अवश्य ही मैं इस संसार में भटकता हुआ केवल दुःख ही भोगूँगा।

**किं नु बन्धुविहीनस्य जीवितेन ममाद्य वै ।**
**लूनपक्षस्य इव मे जराजीर्णस्य पक्षिणः ।।१०।।**

जिसके पंख काट लिये गये हों, उस जराजीर्ण पक्षी के समान बन्धु-बान्धवों से हीन हुए मुझ वृद्ध को अब इस जीवन से क्या प्रयोजन है ?

**नूनं व्यपकृतं किञ्चिन्मया पूर्वेषु जन्मसु ।**
**येन मां दुःखभागेषु धाता कर्मसु युक्तवान् ।।११।।**

निश्चय ही मैंने पूर्वजन्म में कोई ऐसा महान् पाप किया है, जिससे विधाता ने मुझे इन दुःखमय कर्मों में नियुक्त कर दिया है ।

**हृतराज्यो हतबन्धुर्हतचक्षुश्च वै तथा ।**
**कोऽन्योऽस्ति दुःखिततरो मत्तोऽन्यो हि पुमान्भुवि ।।१२**

मेरा राज्य छिन गया, बन्धु-बान्धव मारे गये और आँखें पहले से ही नष्ट हो चुकी थीं । भला, अब इस भू-मण्डल में मुझसे बढ़कर महान् दुःखी और कौन होगा ?

**तन्मामद्यैव पश्यन्तु पाण्डवाः संशितव्रताः ।**
**विवृतं ब्रह्मलोकस्य दीर्घमध्वानमास्थितम् ।।१३।।**

अतः कठोर व्रत का पालन करनेवाले पाण्डव लोग मुझे आज ही ब्रह्मलोक के खुले हुए विशाल मार्ग पर आगे बढ़ते देखें ।

सञ्जय उवाच

**शोकं राजन् व्यपनुद श्रुतास्ते वेदनिश्चयाः ।**
**शास्त्रागमाश्च विविधा वृद्धेभ्यो नृपसत्तम ।।१४।।**

**सञ्जय बोले**—नृपश्रेष्ठ राजन् ! आपने बड़े-बूढ़ों के मुख से वेदों के सिद्धान्त, नाना प्रकार के शास्त्र एवं आगम सुने हैं, अतः आप शोक को त्याग दीजिए ।

**श्रुतवानसि मेधावी सत्यवाँश्चैव नित्यदा ।**
**न मुह्यन्तीदृशाः सन्तो बुद्धिमन्तो भवादृशाः ।।१५।।**

आप स्वयं शास्त्रों के विद्वान्, मेधावी और सदा सत्य में तत्पर रहनेवाले हैं । आप-जैसे बुद्धिमान् तथा श्रेष्ठ पुरुष मोह के वशीभूत नहीं होते हैं ।

**पुत्रगृद्ध्या त्वया राजन् प्रियं तस्य चिकीर्षितम् ।**
**पश्चात्तापमिमं प्राप्तो न त्वं शोचितुमर्हसि ।।१६।।**

राजन् ! पुत्र के प्रति आसक्ति रखने के कारण आपने सदा उसी [दुर्योधन] का प्रिय करना चाहा, अतः इस समय आपको पश्चात्ताप का अवसर प्राप्त हुआ है, इसलिए अब आप शोक न करें ।

**मधु यः केवलं दृष्ट्वा प्रपातं नानुपश्यति ।**
**स भ्रष्टो मधुलोभेन शोचत्येवं यथा भवान् ।।१७।।**

जो मनुष्य ऊँचे स्थान पर लगे हुए मधु को देखकर वहाँ से नीचे गिरने की सम्भावना की ओर से आँखें बन्द कर लेता है, वह उस मधु के लोभ से नीचे गिरकर ऐसे ही शोक करता है, जैसा आप कर रहे हैं ।

**अर्थान्न शोचन्प्राप्नोति न शोचन्विन्दते फलम् ।**
**न शोचञ्छ्रियमाप्नोति न शोचन्विन्दते परम् ।।१८।।**

शोकग्रस्त मनुष्य अपने अभीष्ट पदार्थों को नहीं पाता, शोक करनेवाला किसी फल को भी हस्तगत नहीं कर सकता । शोकपरायण पुरुष को न धन ही मिलता है और न परमात्मा ही ।

**स्वयमुत्पादयित्वाग्निं वस्त्रेण परिवेष्टयन् ।**
**दह्यमानो मनस्तापं भजते न स पण्डितः ।।१९।।**

जो मनुष्य स्वयं आग जलाकर उसे कपड़े में लपेट लेता है और जलने पर मन-ही-मन सन्ताप का अनुभव करता है, वह बुद्धिमान् नहीं कहा जा सकता ।

**त्वयैव ससुतेनायं वाक्यवायुसमीरितः ।**
**लोभाज्येन च संसिक्तो ज्वलितः पार्थपावकः ।।२०।।**

पुत्रसहित आपने ही अपने लोभरूपी घी से सींचकर और वचनरूपी वायु से प्रेरित करके पार्थरूपी अग्नि को प्रज्वलित किया था ।

**तस्मिन् समिद्धे पतिताः शलभा इव ते सुताः ।**
**तान् वै शराग्निनिर्दग्धान्न त्वं शोचितुमर्हसि ।।२१।।**

उसी प्रज्वलित अग्नि में आपके सारे पुत्र पतङ्गों के समान गिरकर जल गये हैं । बाणों की अग्नि में जलकर भस्म हुए उन पुत्रों के लिए आपको शोक नहीं करना चाहिए ।

वैशम्पायन उवाच

**एवमाश्वासितस्तेन सञ्जयेन महात्मना ।**
**विदुरो भूय एवाह बुद्धिपूर्वं परन्तप ।।२२।।**

**वैशम्पायनजी कहते हैं**—शत्रुसन्तापक जनमेजय! महात्मा सञ्जय के इस प्रकार आश्वासन दे चुकने

पर विदुरजी ने भी राजा धृतराष्ट्र को पुनः आश्वासन देते हुए उनसे यह विचारपूर्ण वचन कहा—

विदुर उवाच

**उत्तिष्ठ राजन् किं शेषे धारयात्मानमात्मना ।**
**एषा वै सर्वसत्त्वानां लोकेश्वर परा गतिः ॥२३॥**

**विदुरजी बोले**—राजन् ! आप भूमि पर क्यों पड़े हैं ? उठकर बैठिए और बुद्धि द्वारा अपने मन को स्थिर कीजिए । लोकेश्वर ! समस्त प्राणियों की यही अन्तिम गति है ।

**सर्वे क्षयान्ता निचयाः पतनान्ताः समुच्छ्रयाः । □**
**संयोगा विप्रयोगान्ता मरणान्तं च जीवितम् ॥२४॥**

समस्त संग्रहों का अन्त उनके क्षय में ही है । भौतिक उन्नतियों का अन्त पतन में ही है । सारे संयोगों का अन्त वियोग में ही है । इसी प्रकार सम्पूर्ण जीवनों का अन्त मृत्यु में ही होनेवाला है ।

**अयुध्यमानो म्रियते युध्यमानश्च जीवति ।**
**कालं प्राप्य महाराज न कश्चिदतिवर्तते ॥२५॥**

महाराज ! युद्ध न करनेवाला भी मर जाता है और रण में जूझनेवाला भी जीवित बच जाता है । काल को पाकर कोई भी उसका उल्लंघन नहीं कर सकता ।

**न शोचन् मृतमन्वेति न शोचन् म्रियते नरः ।**
**एवं सांसिद्धिके लोके किमर्थमनुशोचसि ॥२६॥**

शोकपरायण पुरुष न तो मरनेवाले के साथ जा सकता है और न मर ही सकता है । जब संसार की ऐसी ही स्वाभाविक स्थिति है, तब आप किसके लिए शोक कर रहे हैं ?

**कालः कर्षति भूतानि सर्वाणि विविधान्युत ।**
**न कालस्य प्रियः कश्चिन्न द्वेष्यः कुरुसत्तम ॥२७॥**

कुरुकुलभूषण ! काल नाना प्रकार के सब प्राणियों को खींच लेता है । काल को न तो कोई प्रिय है और न कोई उसके द्वेष का ही पात्र है ।

**यथा वायुस्तृणाग्राणि संवर्तयति सर्वशः ।**
**तथा कालवशं यान्ति भूतानि भरतर्षभ ॥२८॥**

भरतभूषण ! जैसे वायु तिनकों को सब ओर उड़ाती और डालती रहती है, वैसे ही समस्त प्राणी काल के अधीन होकर आते-जाते हैं ।

**एकसार्थप्रयातानां सर्वेषां तत्र गामिनाम् ।**
**यस्य कालः प्रयात्यग्रे तत्र का परिदेवना ॥२९॥**

जो एक साथ संसार की यात्रा में आये हैं, उन सबको एक दिन वहीं—परलोक में जाना है । उनमें से जिसका समय पहले आ गया, वह पहले चला जाता है । ऐसी अवस्था में किसी के लिए शोक क्या करना ?

**न चाप्येतान् हतान् युद्धे राजञ्शोचितुमर्हसि ।**
**प्रमाणं यदि शास्त्राणि गतास्ते परमां गतिम् ॥३०॥**

राजन् ! युद्ध में मारे गये इन वीरों के लिए तो आपको शोक करना ही नहीं चाहिए । यदि आप शास्त्रों का प्रमाण मानते हैं तो वे निश्चय ही परम गति को प्राप्त हुए हैं ।

**सर्वे स्वाध्यायवन्तो हि सर्वे च चरितव्रताः ।**
**सर्वे चाभिमुखाः क्षीणास्तत्र का परिदेवना ॥३१॥**

वे सभी वीर वेदों का स्वाध्याय और ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन करनेवाले थे । वे सभी युद्ध में शत्रु का सामना करते हुए वीरगति को प्राप्त हुए हैं, अतः उनके लिए शोक करने की क्या बात है ?

**न यज्ञैर्दक्षिणावद्भिर्न तपोभिर्न विद्यया ।**
**स्वर्गं यान्ति तथा मर्त्या यथा शूरा रणे हताः ॥३२॥**

युद्ध में मारे गये शूरवीर जितनी सरलता से स्वर्गलोक में जाते हैं, उतनी सुगमता से मनुष्य प्रचुर दक्षिणा देनेवाले यज्ञ, तपस्या और विद्या द्वारा भी नहीं जा सकते ।

**क्षत्रियास्ते महात्मानः शूराः समितिशोभनाः ।**
**आशिषः परमाः प्राप्ता न शोच्याः सर्व एव हि ॥३३॥**

वे महामनस्वी वीर क्षत्रिय युद्ध में शोभा पानेवाले थे, अतः उन्होंने अपनी कामनाओं के अनुरूप उत्तम लोक प्राप्त किये हैं । उन सबके लिए शोक करना तो किसी भी प्रकार उचित नहीं है ।

**आत्मानमात्मनाऽऽश्वास्य मा शुचः पुरुषर्षभ ।**
**नाद्य शोकाभिभूतस्त्वं कायमुत्स्रष्टुमर्हसि ॥३४॥**

पुरुषश्रेष्ठ ! आप स्वयं ही अपने मन को सान्त्वना देकर शोक को त्याग दीजिए । आज शोक से व्याकुल होकर आपको अपने शरीर का त्याग नहीं करना चाहिए ।

**मातापितृसहस्राणि पुत्रदारशतानि च ।**
**संसारेष्वनुभूतानि कस्य ते कस्य वा वयम् ॥३५॥**

हम लोगों ने बारम्बार संसार में जन्म लेकर सहस्रों माता-पिताओं और सैकड़ों स्त्री-पुरुषों के सुख का अनुभव किया है किन्तु आज वे किसके हैं अथवा हम उनमें से किसके हैं ?

**शोकस्थानसहस्राणि भयस्थानशतानि च ।□**
**दिवसे दिवसे मूढमाविशन्ति न पण्डितम् ॥३६॥**

शोक के सहस्रों स्थान हैं और भय के भी सैकड़ों स्थान हैं, परन्तु वे प्रतिदिन अज्ञानी मनुष्य पर ही अपना प्रभाव डालते हैं, विद्वान् पुरुष पर नहीं ।

**अनित्यं यौवनं रूपं जीवितं द्रव्यसञ्चयः ।□**
**आरोग्यं प्रियसंवासो गृद्ध्येदेषु न पण्डितः ॥३७॥**

यौवन, सौन्दर्य, जीवन, धन का संग्रह, आरोग्य और प्रियजनों का एकसाथ निवास, ये सभी अनित्य हैं, अतः विद्वान् पुरुष को चाहिए कि वह कभी इनमें आसक्त न हो ।

**न जानपदिकं दुःखमेकः शोचितुमर्हसि ।**
**अप्यभावेन युज्येत तच्चास्य न निवर्तते ॥३८॥**

जो दुःख सारे देश पर पड़ा है, उसके लिए अकेले आपको ही शोक करना उचित नहीं है । शोक करते-करते कोई मर जाए तो भी उसका वह शोक दूर नहीं होता है ।

**भैषज्यमेतद् दुःखस्य यदेतन्नानुचिन्तयेत् ।□**
**चिन्त्यमानं हि न व्येति भूयश्चापि प्रवर्धते ॥३९॥**

दुःख को दूर करने की सर्वश्रेष्ठ ओषधि यही है कि उसका चिन्तन छोड़ दिया जाए । चिन्तन करने से दुःख कभी कम नहीं होता, अपितु और भी बढ़ जाता है ।

**नार्थो न धर्मो न सुखं यदेतदनुशोचसि ।**
**न च नापैति कार्यार्थात्त्रिवर्गाच्चैव हीयते ॥४०॥**

जो आप यह शोक कर रहे हैं, यह न अर्थ का साधक है, न धर्म का और न सुख का ही । इससे मनुष्य अपने कर्तव्यपथ से तो भ्रष्ट होता ही है धर्म, अर्थ और कामरूपी त्रिवर्ग से भी वञ्चित हो जाता है ।

**प्रज्ञया मानसं दुःखं हन्याच्छारीरमौषधैः ।**
**एतद्विज्ञानसामर्थ्यं न बालैः समतामियात् ॥४१॥**

मनुष्य को चाहिए कि वह मानसिक दुःख को बुद्धि एवं विचार द्वारा और शारीरिक कष्ट को ओषधियों द्वारा दूर करे, यही विज्ञान की शक्ति है । मनुष्य को बालकों के समान मूर्खतापूर्ण व्यवहार नहीं करना चाहिए ।

**शयानं चानुशेते हि तिष्ठन्तं चानुतिष्ठति ।**
**अनुधावति धावन्तं कर्मपूर्वकृतं नरम् ॥४२॥**

मनुष्य का पूर्वकृत कर्म उसके सोने पर उसके साथ ही सोता है, उठने पर साथ ही उठता है और दौड़ने पर भी साथ-ही-साथ दौड़ता है ।

**आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः ।**
**आत्मैव ह्यात्मनः साक्षी कृतस्यापकृतस्य च ॥४३॥**

मनुष्य आप ही अपना बन्धु है, आप ही अपना शत्रु है और आप ही अपने शुभ या अशुभ कर्मों का साक्षी है ।

**शुभेन कर्मणा सौख्यं दुःखं पापेन कर्मणा ।**
**कृतं भवति सर्वत्र नाकृतं लभते क्वचित् ॥४४॥**

शुभकर्म से सुख मिलता है और पापकर्म से दुःख । सर्वत्र किये हुए कर्म का ही फल प्राप्त होता है, कहीं भी बिना किये कर्म का फल नहीं मिलता ।

**न हि ज्ञानविरुद्धेषु बह्वपायेषु कर्मसु ।**
**मूलघातिषु सज्जन्ते बुद्धिमन्तो भवद्विधाः ॥४५॥**

आप-जैसे बुद्धिमान् पुरुष अनेक विनाशकारी दोषों से युक्त और मूलभूत शरीर का भी नाश करने-वाले बुद्धिविरुद्ध कर्मों में आसक्त नहीं होते ।

**इति महाभारते स्त्रीपर्वणि प्रथमोऽध्यायः ॥१॥**

# द्वितीयोऽध्यायः

## विदुरजी का संसाररूपी गहन वन का वर्णन करते हुए उससे निस्तार का उपाय बताना

धृतराष्ट्र उवाच

**सुभाषितैर्महाप्राज्ञ शोकोऽयं विगतो मम ।**
**भूय एव तु वाक्यानि श्रोतुमिच्छामि तत्त्वतः ।।१।।**

**धृतराष्ट्र बोले**—परम बुद्धिमान् विदुर ! आपके सुभाषितों से मेरा शोक दूर हो गया, फिर भी मैं तुम्हारे सात्त्विक वचनों को अभी और सुनना चाहता हूँ ।

**अनिष्टानां च संसर्गादिष्टानां च विसर्जनात् ।**
**कथं हि मानसैर्दुःखैः प्रमुच्यन्ते तु पण्डिताः ।।२।।**

विद्वान् मनुष्य अनिष्ट के संयोग और इष्ट के वियोग से होनेवाले मानसिक दुःखों से किस प्रकार छुटकारा पा सकते हैं ?

विदुर उवाच

**यतो यतो मनो दुःखात् सुखाद् वा विप्रमुच्यते ।**
**ततस्ततो नियम्यैतच्छान्तिं विन्देत वै बुधः ।।३।।**

**विदुरजी ने कहा**—महाराज ! विद्वान् मनुष्य को चाहिए कि जिन-जिन साधनों में लगने से मन दुःख अथवा सुख से मुक्त होता हो, उन्हीं में इसे नियमपूर्वक लगाकर शान्ति प्राप्त करे ।

**अशाश्वतमिदं सर्वं चिन्त्यमानं नरर्षभ ।**
**कदलीसंनिभो लोकः सारो ह्यस्य न विद्यते ।।४।।**

पुरुषश्रेष्ठ ! विचार करने पर यह सारा संसार अनित्य ही जान पड़ता है। सारा संसार केले के समान सारहीन है, इसमें सार-तत्त्व कुछ भी नहीं है।

**गृहाणीव हि मर्त्यानामाहुर्देहानि पण्डिताः ।**
**कालेन विनियुज्यन्ते सत्त्वमेकं तु शाश्वतम् ।।५।।**

पण्डित लोग मरणधर्मा प्राणियों के शरीर को घर के समान बतलाते हैं, क्योंकि सारे शरीर समय पर नष्ट हो जाते हैं, परन्तु उनके भीतर जो एकमात्र सत्त्वस्वरूप आत्मा है, वह नित्य है ।

**यथा जीर्णमजीर्णं वा वस्त्रं त्यक्त्वा तु पूरुषः ।**
**अन्यद् रोचयते वस्त्रमेवं देहाः शरीरिणाम् ।।६।।**

जैसे मनुष्य नये अथवा पुराने वस्त्र को उतारकर नये वस्त्र पहनने की इच्छा रखता है, वैसे ही देहधारियों के शरीर उनके द्वारा समय-समय पर त्यागे और ग्रहण किये जाते हैं ।

**वैचित्रवीर्य प्राप्यं हि दुःखं वा यदि वा सुखम् ।**
**प्राप्नुवन्तीह भूतानि स्वकृतेनैव कर्मणा ।।७।।**

विचित्रवीर्यकुमार ! यदि दुःख या सुख प्राप्त होनेवाला है तो प्राणी उसे अपने किये हुए कर्म के अनुसार ही पाते हैं ।

**कर्मणा प्राप्यते स्वर्गं सुखं दुःखं च भारत ।**
**ततो वहति तं भारमवशः स्ववशोऽपि वा ।।८।।**

भरतनन्दन ! कर्म के अनुसार ही परलोक में स्वर्ग या नरक और इस लोक में सुख एवं दुःख प्राप्त होते हैं, फिर मनुष्य सुख या दुःख के उस भार को स्वाधीन होकर ढोता रहता है ।

**यथा च मृन्मयं भाण्डं चक्रारूढं विपद्यते ।□**
**किंचित् प्रक्रियमाणं वा कृतमात्रमथापि वा ।।९।।**
**गर्भस्थो वा प्रसूतो वाप्यथ वा दिवसान्तरः ।□**
**अर्धमासगतो वापि मासमात्रगतोऽपि वा ।।१०।।**
**संवत्सरगतो वापि द्विसंवत्सर एव वा ।□**
**यौवनस्थोऽथ मध्यस्थो वृद्धो वापि विपद्यते ।।११।।**

जैसे मिट्टी का बर्तन बनाये जाने के समय कभी चाक पर चढ़ाते ही नष्ट हो जाता है, कभी कुछ-कुछ बनने पर और कभी पूरा बन जाने पर नष्ट हो जाता है, वैसे ही कोई मनुष्य गर्भ में रहते समय, कोई उत्पन्न हो जाने पर, कोई कई दिनों का होने पर, कोई पन्द्रह दिन का, कोई एक मास का तथा कोई एक अथवा दो वर्ष का होने पर, कोई युवावस्था में, कोई मध्यावस्था में अथवा कोई वृद्धावस्था में पहुँचने पर मृत्यु को प्राप्त हो जाता है ।

**प्राक्कर्मभिस्तु भूतानि भवन्ति न भवन्ति च ।**
**एवं सांसिद्धिके लोके किमर्थमनुतप्यसे ।।१२।।**

प्राणी पूर्वजन्म के कर्मों के अनुसार ही इस संसार में रहते और यहाँ से चले जाते हैं । जब संसार की ऐसी ही स्वाभाविक स्थिति है, तब आप किसलिए शोक कर रहे हैं ?

**यथा तु सलिले राजन् क्रीडार्थमनुसन्तरन् ।**
**उन्मज्जेच्च निमज्जेच्च किंचित्सत्त्वं नराधिप ॥१३॥**
**एवं संसारगहने उन्मज्जननिमज्जने ।**
**कर्मभोगेन बध्यन्ते क्लिश्यन्ते चाल्पबुद्धयः ॥१४॥**

राजन् ! प्रजेश्वर ! जैसे क्रीड़ा के लिए पानी में तैरता हुआ कोई प्राणी कभी डूबता और कभी ऊपर आ जाता है, उसी प्रकार इस अगाध संसार-समुद्र में जीवों का जन्म लेना और मरना लगा रहता है। मन्दबुद्धि मनुष्य ही यहाँ कर्म-भोग से बँधते और कष्ट पाते हैं।

**ये तु प्राज्ञाः स्थिताः सत्त्वे संसारेऽस्मिन् हितैषिणः ।**
**समागमज्ञा भूतानां ते यान्ति परमां गतिम् ॥१५॥**

जो बुद्धिमान् मनुष्य इस संसार में सत्त्वगुण से युक्त, सबका हित चाहनेवाले और प्राणियों के समागम को कर्मानुसार समझनेवाले हैं, वे परमगति को प्राप्त होते हैं।

धृतराष्ट्र उवाच

**कथं संसारगहनं विज्ञेयं वदतां वर ।**
**एतदिच्छाम्यहं श्रोतुं तत्त्वमाख्याहि पृच्छतः ॥१६॥**

**धृतराष्ट्र ने पूछा**—वक्ताओं में श्रेष्ठ विदुर ! इस गहन संसार के स्वरूप का ज्ञान कैसे हो—यह मैं सुनना चाहता हूँ। मेरे प्रश्न के अनुसार आप इस विषय का यथार्थरूप से वर्णन करो।

विदुर उवाच

**अहो विनिकृतो लोको लोभेन च वशीकृतः ।□**
**लोभक्रोधमदोन्मत्तो नात्मानमवबुध्यते ॥१७॥**

**विदुरजी बोले**—अहो राजन् ! लोभ के वशीभूत होकर यह सारा संसार ठगा जा रहा है। लोभ, क्रोध और अभिमान से यह इतना पागल हो गया है कि अपने-आपको भी नहीं जानता।

**अत्र ते वर्तयिष्यामि नमस्कृत्वा स्वयंभुवे ।**
**यथा संसारगहनं वदन्ति परमर्षयः ॥१८॥**

मैं स्वयंभू परमेश्वर को नमस्कार करके संसाररूप गहन वन के उस स्वरूप का वर्णन करता हूँ, जिसका निरूपण बड़े-बड़े महर्षि करते हैं।

**कश्चिन्महति कान्तारे वर्तमानो द्विजः किल ।**
**महद् दुर्गमनुप्राप्तो वनं क्रव्यादसंकुलम् ॥१९॥**

कहते हैं कि किसी विशाल एवं दुर्गम वन में कोई ब्राह्मण यात्रा कर रहा था। वह वन के अत्यन्त दुर्गम प्रदेश में जा पहुँचा, जो हिंसक प्राणियों से परिपूर्ण था।

**तदस्य दृष्ट्वा हृदयमुद्वेगमगमत् परम् ।**
**अभ्युच्छ्रयश्च रोम्णां वै विक्रियाश्च परन्तप ॥२०॥**

शत्रुसन्तापक नरेश ! वह स्थान देखकर ब्राह्मण का हृदय अत्यन्त उद्विग्न हो उठा। उसे रोमाञ्च हो आया और मन में अन्य प्रकार के विकार भी उत्पन्न होने लगे।

**स तद् वनं व्यनुसरन् सम्प्रधावन्नितस्ततः ।**
**वीक्षमाणो दिशः सर्वाः शरणं क्व भवेदिति ॥२१॥**

वह उस वन का अनुसरण करता इधर-उधर दौड़ता तथा सम्पूर्ण दिशाओं में ढूँढता फिरता था कि कहीं उसे शरण मिले।

**स तेषां छिद्रमन्विच्छन् प्रद्रुतो भयपीडितः ।**
**न च निर्याति वै दूरं न वा तैर्विप्रमोच्यते ॥२२॥**

वह उन हिंसक प्राणियों से बचने को आतुर, भय से पीड़ित हो भागने लगा, परन्तु न तो वहाँ से दूर निकल पाता था और न वे हिंसक जन्तु ही उसका पीछा छोड़ते थे।

**अथापश्यद् वनं घोरं समन्ताद् वागुरावृतम् ।**
**बाहुभ्यां सम्परिक्षिप्तं स्त्रिया परमघोरया ॥२३॥**

इतने में ही उसने देखा कि वह भयानक वन चारों ओर से जल से घिरा हुआ है और एक बड़ी भयानक स्त्री ने अपनी दोनों भुजाओं से उसे आवेष्टित किया हुआ है।

**पञ्चशीर्षधरैर्नागैः शैलैरिव समुन्नतैः ।**
**नभःस्पृशैर्महावृक्षैः परिक्षिप्तं महावनम् ॥२४॥**

पर्वतों के समान ऊँचे और पाँच सिरोंवाले नागों और बड़े-बड़े गगनचुम्बी वृक्षों से वह विशाल वन व्याप्त हो रहा है।

**वनमध्ये च तत्राभूदुदपानः समावृतः ।**
**वल्लीभिस्तृणछन्नाभिर्दृढाभिरभिसंवृतः ॥२५॥**

उस वन के भीतर एक कुआँ था, जो घासों से ढकी हुई सुदृढ़ लताओं द्वारा सब ओर से आच्छादित हो गया था।

**पपात स द्विजस्तत्र निगूढे सलिलाशये ।**
**विलग्नश्चाभवत् तस्मिन् लतासंतानसंकुले ।।२६।।**

वह ब्राह्मण उस छिपे हुए कुएँ में गिर पड़ा, परन्तु लताओं से व्याप्त होने के कारण वह उसमें फँसकर नीचे नहीं गिरा, ऊपर ही लटका रह गया ।

**पनसस्य यथा जातं वृन्तबद्धं महाफलम् ।**
**स तथा लम्बते तत्र ह्यूर्ध्वपादो ह्यधःशिराः ।।२७।।**

जैसे कटहल का विशाल फल डंठल में बँधा हुआ लटकता रहता है, उसी प्रकार वह ब्राह्मण ऊपर को पैर और नीचे को सिर किये उस कुएं में लटक गया ।

**अथ तत्रापि चान्योऽस्य भूयो जात उपद्रवः ।**
**कूपमध्ये महानागमपश्यत् स महाबलम् ।।२८।।**
**कूपवीनाहवेलायामपश्यत् स महागजम् ।**
**षड्वक्त्रं कृष्णशुक्लं च द्विषट्कपदचारिणम् ।।२९।।**

वहाँ भी उसके समक्ष पुनः दूसरा उपद्रव खड़ा हो गया । उसने कुएँ में एक महाबली नाग बैठा हुआ देखा और कूप के ऊपरी तट पर उसके मुखबन्ध के पास एक विशाल हाथी को खड़ा देखा, जिसके छह मुख थे । वह सफेद एवं काले रंग का था और बारह पैरों से चलता था ।

**क्रमेण परिसर्पन्तं वल्लीवृक्षसमावृतम् ।**
**तस्य चापि प्रशाखासु वृक्षशाखावलम्बिनः ।।३०।।**
**नानारूपा मधुकरा घोररूपा भयावहाः ।**
**आसते मधु संवृत्य पूर्वमेव निकेतजाः ।।३१।।**

वह गजराज लताओं और वृक्षों से घिरे हुए उस कूप की ओर क्रमशः बढ़ा आ रहा था । वह ब्राह्मण, जिस वृक्ष की शाखा पर लटका था, उसकी छोटी-छोटी टहनियों पर पहले से ही मधु के छत्तों से उत्पन्न हुई अनेक रूपवाली, घोर एवं भयंकर मधुमक्खियाँ मधु को घेरकर बैठी हुई थीं ।

**भूयो भूयः समीहन्ते मधूनि भरतर्षभ ।**
**स्वादनीयानि भूतानां यैर्बालो विप्रकृष्यते ।।३२।।**

भरतकुलभूषण ! समस्त प्राणियों को स्वादिष्ट प्रतीत होनेवाले उस मधु को, जिसपर बालक आकृष्ट हो जाते हैं, वे मक्खियाँ बारम्बार पीना चाहती थीं ।

**तेषां मधूनां बहुधा धारा प्रस्रवते तदा ।**
**आलम्बमानः स पुमान् धारां पिबति सर्वदा ।।३३।।**

उस समय उस मधु की अनेक धाराएँ वहाँ झर रही थीं और वह लटका हुआ पुरुष निरन्तर उस मधुधारा को पी रहा था ।

**न चास्य तृष्णा विरता पिबमानस्य संकटे ।**
**अभीप्सति तदा नित्यमतृप्तः स पुनः पुनः ।।३४।।**

यद्यपि वह आपत्ति में पड़ा हुआ था तथापि उस मधु को पीते-पीते उसकी तृष्णा शान्त नहीं होती थी । वह सदा अतृप्त रहकर ही बारम्बार उसे पीने की इच्छा रखता था ।

**न चास्य जीविते राजन् निर्वेदः समजायत ।**
**तत्रैव च मनुष्यस्य जीविताशा प्रतिष्ठिता ।।३५।।**

राजन् ! उसे अपने उस संकटपूर्ण जीवन से वैराग्य नहीं हुआ था । उस मनुष्य के मन में वहीं उसी अवस्था में जीवित रहकर मधु पीने की आशा जड़ जमाये हुए थी ।

**कृष्णाः श्वेताश्च तं वृक्षं कुट्टयन्ति च मूषकाः ।**
**व्यालैश्च वनदुर्गान्ते स्त्रिया च परमोग्रया ।।३६।।**
**कूपाधस्ताच्च नागेन वीनाहे कुञ्जरेण च ।**
**वृक्षप्रपाताच्च भयं मूषकेभ्यश्च पञ्चमम् ।**
**मधुलोभान्मधुकरैः षष्ठमाहुर्महद् भयम् ।।३७।।**

जिस वृक्ष के सहारे वह लटका हुआ है, उसे काले और सफेद चूहे निरन्तर काट रहे हैं । सर्वप्रथम तो उसे वन के दुर्गम प्रदेश के भीतर ही अनेक सर्पों से भय है, दूसरा भय सीमा पर खड़ी हुई उस भयंकर स्त्री से है, तीसरा कुएँ के नीचे बैठे हुए नाग से है, चौथा कुएँ के मुखबन्ध के पास खड़े हुए हाथी से है, और पाँचवाँ भय चूहों के काट देने पर उस वृक्ष से गिर जाने का है । इनके अतिरिक्त, मधु के लोभ से मधुमक्खियों की ओर से जो उसको महान् भय प्राप्त होनेवाला है, वह छठा भय बताया गया है ।

**एवं स वसते तत्र क्षिप्तः संसारकानने ।**
**न चैव जीविताशायां निर्वेदमुपगच्छति ।।३८।।**

इस प्रकार संसार-वन में गिरा हुआ वह मनुष्य इतने भयों से घिरकर वहाँ निवास करता है, तो भी उसे जीने की आशा बनी हुई है और उसके मन में वैराग्य उत्पन्न नहीं होता है ।

धृतराष्ट्र उवाच

**अहो खलु महद् दुःखं कृच्छ्रवासश्च तस्य ह ।**
**कथं तस्य रतिस्तत्र तुष्टिर्वा वदतां वर ॥३९॥**

**धृतराष्ट्र ने पूछा**—वक्ताओं में श्रेष्ठ विदुर ! यह तो बड़े आश्चर्य की बात है। उस ब्राह्मण को तो महान् दुःख प्राप्त हुआ था। वह अति कष्ट से वहाँ रह रहा था, फिर भी उसका मन वहाँ कैसे लगता था और कैसे उसे सन्तोष होता था ?

**स देशः क्व नु यत्रासौ वसते धर्मसंकटे ।**
**कथं वा स विमुच्येत नरस्तस्मान्महाभयात् ॥४०॥**

कहाँ है वह स्थान, जहाँ बेचारा ब्राह्मण ऐसे धर्मसंकट में रहता है ? उस महान् भय से उसका छुटकारा कैसे हो सकता है ?

**एतन्मे सर्वमाचक्ष्व साधु चेष्टामहे तदा ।**
**कृपा मे महती जाता तस्याभ्युद्धरणेन हि ॥४१॥**

मुझे सारा वृत्तान्त बताओ, फिर हम सब लोग उसे वहाँ से निकालने की पूरी चेष्टा करेंगे। उसके उद्धार के लिए मुझे बड़ी दया आ रही है।

विदुर उवाच

**उपमानमिदं राजन् मोक्षविद्भिरुदाहृतम् ।**
**सुकृतं विन्दते येन परलोकेषु मानवः ॥४२॥**

**विदुरजी बोले**—राजन् ! मोक्षतत्त्व के विद्वानों द्वारा बताया गया यह एक दृष्टान्त है, जिसे समझकर वैराग्य धारण करने से मनुष्य परलोक में पुण्य का फल पाता है।

**उच्यते यत्तु कान्तारं महासंसार एव सः ।**
**वनं दुर्गं हि यच्चैतत् संसारगहनं हि तत् ॥४३॥**

जिसे दुर्गम स्थान बताया गया है, वह महासंसार ही है और जो यह दुर्गम वन कहा गया है यह संसार का ही गहन स्वरूप है।

**ये च ते कथिता व्याला व्याधयस्ते प्रकीर्तिताः ।**
**या सा नारी बृहत्काया अध्यतिष्ठत तत्र वै ॥४४॥**
**तामाहुस्तु जरां प्राज्ञा रूपवर्णविनाशिनीम् ।**
**यस्तत्र कूपो नृपते स तु देहः शरीरिणाम् ॥४५॥**
**यस्तत्र वसतेऽधस्तान्महाहिः काल एव सः ।**
**अन्तकः सर्वभूतानां देहिनां सर्वहार्यसौ ॥४६॥**

जो सर्प कहे गये हैं, वे नाना प्रकार के रोग हैं। उस वन की सीमा पर जो विशालकाय नारी खड़ी थी, उसे विद्वान् लोग रूप और कान्ति का विनाश करनेवाली वृद्धावस्था बताते हैं। नरेश्वर ! उस वन में जो कूप बताया गया है, वह मनुष्यों का शरीर है। उसमें नीचे जो महानाग रहता है, वह काल ही है। वही सम्पूर्ण प्राणियों का अन्त करनेवाला और प्राणियों का सर्वस्व हर लेनेवाला है।

**कूपमध्ये च या जाता वल्ली यत्र स मानवः ।**
**प्रताने लम्बते लग्नो जीविताशा शरीरिणाम् ॥४७॥**

कुएँ के मध्यभाग में जो लता उत्पन्न हुई बतायी गई है, जिसे पकड़कर वह मनुष्य लटक रहा है, वह प्राणियों के जीवन की आशा ही है।

**स यस्तु कूपवीनाहे तं वृक्षं परिसर्पति ।**
**षड्वक्त्रः कुञ्जरो राजन् स तु संवत्सरः स्मृतः ॥४८॥**

राजन् ! जो कुएँ के मुखबन्ध के समीप छह मुखोंवाला हाथी उस वृक्ष की ओर बढ़ रहा है उसे संवत्सर माना गया है।

**मुखानि ऋतवो मासाः पादा द्वादश कीर्तिताः ।**
**ये तु वृक्षं निकृन्तन्ति मूषकाः सततोत्थिताः ॥४९॥**
**रात्र्यहानि तु तान्याहुर्भूतानां परिचिन्तकाः ।**
**ये ते मधुकरास्तत्र कामास्ते परिकीर्तिताः ॥५०॥**
**यास्तु ता बहुशो धाराः स्रवन्ति मधुनिस्रवम् ।**
**तांस्तु कामरसान् विद्याद्यत्र मज्जन्ति मानवाः ॥५१॥**

छह ऋतुएँ ही उसके छह मुख हैं तथा बारह मास ही उसके पैर बताये गये हैं। जो चूहे सदा उद्यत रहकर उस वृक्ष को काटते हैं, उन चूहों को विचारक लोग प्राणियों के दिन और रात बताते हैं और जो वहाँ मधुमक्खियाँ बताई गईं हैं, वे सब कामनाएँ हैं। जो बहुत-सी धाराएँ मधु के झरने झरती रहती हैं, उन्हें कामरस जानना चाहिए, जहाँ सभी मनुष्य डूब जाते हैं।

**यतेन्द्रियो नरो राजन् क्रोधलोभनिराकृतः । □**
**सन्तुष्टः सत्यवादी यः स शान्तिमधिगच्छति ॥५२॥**

राजन् ! जो मनुष्य जितेन्द्रिय, क्रोध और लोभ से शून्य, सन्तोषी एवं सत्यवादी होता है वही [संसार-बन्धन को काटकर] शान्ति को प्राप्त करता है।

**ज्ञानौषधमवाप्येह दूरपारं महौषधम् ।**
**छिन्द्याद् दुःखमहाव्याधिं नरः संयतमानसः ॥५३॥**

मनुष्य को चाहिए कि वह अपने मन को वश में करके ज्ञानरूपी महौषधि प्राप्त करे, जो परम दुर्लभ है। उस ज्ञानरूपी ओषधि से दुःखरूपी महान् व्याधि का नाश कर डाले।

**न विक्रमो न चाप्यर्थो न मित्रं न सुहृज्जनः ।**
**तथोन्मोचयते दुःखाद् यथाऽऽत्मा स्थिरसंयमः ॥५४॥**

पराक्रम, धन, मित्र और सुहृद् भी उस प्रकार दुःख से छुटकारा नहीं दिला सकते, जैसा कि दृढ़तापूर्वक संयम में रहनेवाला अपना मन दिला सकता है।

**तस्मान्मैत्रं समास्थाय शीलमापद्य भारत ।□**
**दमस्त्यागोऽप्रमादश्च ते त्रयो ब्रह्मणो हयाः ॥५५॥**
**शीलरश्मिसमायुक्तः स्थितो यो मानसे रथे ।□**
**त्यक्त्वा मृत्युभयं राजन् ब्रह्मलोकं स गच्छति ॥५६॥**

भरतभूषण ! सर्वत्र मैत्री-भाव रखते हुए शील प्राप्त करना चाहिए। दम, त्याग और अप्रमाद—ये तीन परमात्मा के धाम में ले जानेवाले घोड़े हैं। जो मनुष्य शीलरूपी लगाम को पकड़कर इन तीनों घोड़ों से जुते हुए मनरूपी रथ पर सवार होता है, वह मृत्यु का भय छोड़कर ब्रह्मलोक में चला जाता है।

**अभयं सर्वभूतेभ्यो यो ददाति महीपते ।**
**स गच्छति परं स्थानं विष्णोः पदमनामयम् ॥५७॥**

हे भूपाल ! जो सम्पूर्ण प्राणियों को अभयदान देता है, वह भगवान् विष्णु के अविनाशी परमधाम में चला जाता है।

**एवं ज्ञात्वा महाप्राज्ञ स तेषामौर्ध्वदेहिकम् ।**
**कर्तुमर्हति तेनैव फलं प्राप्स्यति वै भवान् ॥५८॥**

महाप्राज्ञ ! ऐसा जानकर आप अपने मरे हुए सगे-सम्बन्धियों का और्ध्वदैहिक संस्कार कीजिए। इसी से आपको उत्तम फल की प्राप्ति होगी।

**इति महाभारते स्त्रीपर्वणि द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥**

# तृतीयोऽध्यायः

**स्त्रियों और प्रजासहित धृतराष्ट्र का रणभूमि के लिए प्रस्थान, पाण्डवों का धृतराष्ट्र से मिलना, धृतराष्ट्र का भीम की लोहमयी प्रतिमा को तोड़ना, श्रीकृष्ण का उन्हें फटकारना**

वैशम्पायन उवाच

**विदुरस्य तु तद् वाक्यं श्रुत्वा तु पुरुषर्षभः ।**
**युज्यतां यानमित्युक्त्वा पुनर्वचनमब्रवीत् ॥१॥**

**वैशम्पायनजी कहते हैं**—राजन् ! विदुर की यह बात सुनकर पुरुषश्रेष्ठ राजा धृतराष्ट्र ने रथ जोतने की आज्ञा देकर पुनः इस प्रकार कहा—

धृतराष्ट्र उवाच

**शीघ्रमानय गान्धारीं सर्वाश्च भरतस्त्रियः ।**
**वधूं कुन्तीमुपादाय याश्चान्यास्तत्र योषितः ॥२॥**

**धृतराष्ट्र बोले**—गान्धारी को और भरतवंश की अन्य सब स्त्रियों को शीघ्र ले आओ तथा वधू कुन्ती को साथ लेकर वहाँ जो दूसरी स्त्रियाँ हों, उन्हें भी बुला लो।

वैशम्पायन उवाच

**एवमुक्त्वा स धर्मात्मा विदुरं धर्मवित्तमम् ।**
**शोकविप्रहतज्ञानो यानमेवान्वपद्यत ॥३॥**

**वैशम्पायनजी कहते हैं**—परम धर्मज्ञ विदुरजी से ऐसा कहकर शोक से जिनकी शक्ति नष्ट-सी हो गई थी, वे धर्मात्मा राजा धृतराष्ट्र रथ पर सवार हुए।

**गान्धारी पुत्रशोकार्ता भर्तुर्वचननोदिता ।**
**सह कुन्त्या यतो राजा सह स्त्रीभिरुपाद्रवत् ॥४॥**

गान्धारी पुत्रशोक से पीड़ित हो रही थीं, पति की आज्ञा पाकर वे कुन्ती तथा अन्य स्त्रियों के साथ जहाँ राजा धृतराष्ट्र थे, वहाँ आईं।

**ताः समासाद्य राजानं भृशं शोकसमन्विताः ।**
**आमन्त्र्यान्योन्यमीयुः स्म भृशमुच्चुक्रुशुस्ततः ॥५॥**

वहाँ राजा के पास पहुँचकर अत्यन्त शोक में मग्न वे सभी स्त्रियाँ एक-दूसरी को पुकार-पुकारकर परस्पर गले से लग गईं और जोर-जोर से फूट-फूटकर रोने लगीं।

**ताः समाश्वासयत् क्षत्ता ताभ्यश्चार्ततरः स्वयम् ।**
**अश्रुकण्ठीः समारोप्य ततोऽसौ निर्ययौ पुरात् ॥६॥**

विदुरजी स्वयं भी अत्यन्त आर्त हो रहे थे, फिर भी उन्होंने उन सब स्त्रियों को आश्वासन दिया। आँसुओं से गद्गद कण्ठ हुई उन सबको रथ पर बैठाकर वे नगर से बाहर निकले।

**ततः प्रणादः संजज्ञे सर्वेषु कुरुवेश्मसु ।**
**आकुमारं पुरं सर्वमभवच्छोककर्षितम् ॥७॥**

उस समय कौरवों के सभी घरों में बड़ा भारी आर्तनाद होने लगा। वृद्धों से लेकर बच्चों तक सारा नगर व्याकुल हो उठा।

**अदृष्टपूर्वा या नार्यः पुरा देवगणैरपि ।**
**पृथग्जनेन दृश्यन्ते तास्तदा निहतेश्वराः ॥८॥**

जिन नारियों को पहले कभी देवताओं ने भी नहीं देखा था, उन्हीं को उस समय पतियों के मारे जाने पर साधारण लोग देख रहे थे।

**प्रकीर्य केशान् सुशुभान् भूषणान्यवमुच्य च ।**
**एकवस्त्रधरा नार्यः परिपेतुरनाथवत् ॥९॥**

वे स्त्रियाँ अपने सुन्दर केशों को खोलकर, सारे आभूषण उतारकर तथा एक वस्त्र धारण किये अनाथ की भाँति रणभूमि की ओर जा रही थीं।

**विलपन्त्यो रुदन्त्यश्च धावमानास्ततस्ततः ।**
**शोकेनोपहतज्ञानाः कर्तव्यं न प्रजज्ञिरे ॥१०॥**

शोक के कारण उनकी ज्ञानशक्ति लुप्त-सी हो गई थी। वे रोती और विलाप करती हुईं इधर-उधर दौड़ रही थीं। उन्हें कोई कर्तव्य नहीं सूझ रहा था।

**ताभिः परिवृतो राजा रुदतीभिः सहस्रशः ।**
**निर्ययौ नगराद् दीनस्तूर्णमायोधनं प्रति ॥११॥**

उन रोती हुई बहुत-सी स्त्रियों से घिरे हुए दुःखी राजा धृतराष्ट्र नगर से रणभूमि में जाने के लिए तुरन्त निकल पड़े।

**शिल्पिनो वणिजो वैश्याः सर्वकर्मोपजीविनः ।**
**ते पार्थिवं पुरस्कृत्य निर्ययुर्नगराद् बहिः ॥१२॥**

कारीगर, व्यापारी, वैश्य और अनेक प्रकार के कर्मों से जीवन-निर्वाह करनेवाले लोग राजा को आगे करके नगर से बाहर निकले।

**हतेषु सर्वसैन्येषु धर्मराजो युधिष्ठिरः ।**
**शुश्रुवे पितरं वृद्धं निर्यान्तं गजसाह्वयात् ॥१३॥**
**सोऽभ्ययात् पुत्रशोकार्तः पुत्रशोकपरिप्लुतम् ।**
**शोचमानं महाराज भ्रातृभिः सहितस्तदा ॥१४॥**

महाराज जनमेजय! उधर समस्त सेनाओं का संहार हो जाने पर धर्मराज युधिष्ठिर ने जब सुना कि उसके वृद्ध ताऊ संग्राम में मरे हुए वीरों का अन्त्येष्टि कर्म कराने के लिए हस्तिनापुर से चल दिये हैं, तब वे स्वयं पुत्रशोक से आतुर हो पुत्रों के ही शोक में डूबकर चिन्तामग्न हुए राजा धृतराष्ट्र के पास अपने सब भाइयों के साथ गये।

**अन्वीयमानो वीरेण दाशार्हेण महात्मना ।**
**सार्धं च युयुधानेन तथैव च युयुत्सुना ॥१५॥**

उस समय दशार्हकुलनन्दन वीर महात्मा श्रीकृष्ण, सात्यकि और युयुत्सु भी उनके साथ हो लिये थे।

**तमन्वगात् सुदुःखार्ता द्रौपदी शोककर्शिता ।**
**सह पाञ्चालयोषिद्भिर्यास्तत्रासन् समागताः ॥१६॥**

अत्यन्त दुःख से आतुर और शोक से दुर्बल हुई द्रौपदी ने भी वहाँ आई हुई पाञ्चाल महिलाओं के साथ उनका अनुसरण किया।

**स गङ्गामनु वृन्दानि स्त्रीणां भरतसत्तम ।**
**कुररीणामिवार्तानां क्रोशन्तीनां ददर्श ह ॥१७॥**

भरतकुलभूषण! गङ्गातट पर पहुँचकर युधिष्ठिर ने कुररी की भाँति आर्तस्वर से विलाप करती हुई स्त्रियों के कई दल देखे।

**अतीत्य ता महाबाहुः क्रोशन्तीः कुररीरिव ।**
**ववन्दे पितरं ज्येष्ठं धर्मराजो युधिष्ठिरः ॥१८॥**

धर्मराज महाबाहु युधिष्ठिर ने कुररी की भाँति रोती हुई उन स्त्रियों के घेरे को लाँघकर अपने ताऊ धृतराष्ट्र को प्रणाम किया।

**ततोऽभिवाद्य पितरं धर्मेणामित्रकर्षणाः ।**
**न्यवेदयन्त नामानि पाण्डवास्तेऽपि सर्वशः ॥१९॥**

तदनन्तर सभी शत्रुसंहारक पाण्डवों ने धर्मानुसार ताऊजी को प्रणाम करके अपने नाम बताये।

**तमात्मजान्तकरणं पिता पुत्रवधार्दितः ।**
**अप्रीयमाणः शोकार्तः पाण्डवं परिषस्वजे ॥२०॥**

पुत्रवध से पीड़ित हुए पिता ने शोक से व्याकुल हो अपने पुत्रों का अन्त करनेवाले पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर

का आलिंगन किया, परन्तु उस समय उनका मन प्रसन्न नहीं था।

**धर्मराजं परिष्वज्य सान्त्वयित्वा च भारत ।**
**दुष्टात्मा भीममन्वैच्छद् दिधक्षुरिव पावकः ।।२१।।**

भरतभूषण ! धर्मराज का आलिंगन कर तथा उन्हें सान्त्वना देकर धृतराष्ट्र भीम को इस प्रकार खोजने लगे, मानो आग बनकर उन्हें जला डालना चाहते हों। उस समय उनके मन में दुष्ट भावना जाग उठी थी।

**तस्य संकल्पमाज्ञाय भीमं प्रत्यशुभं हरिः ।**
**भीममाक्षिप्य पाणिभ्यां प्रददौ भीममायसम् ।।२२।।**

भीमसेन के प्रति उनके अशुभ संकल्प को जानकर श्रीकृष्ण ने भीमसेन को झटका देकर हटा दिया और दोनों हाथों से भीम की लोहमयी मूर्ति धृतराष्ट्र के आगे कर दी।

**प्रागेव तु महाबुद्धिर्बुद्ध्वा तस्येङ्गितं हरिः ।**
**संविधानं महाप्राज्ञस्तत्र चक्रे जनार्दनः ।।२३।।**

महाज्ञानी और परम बुद्धिमान् श्रीकृष्ण को पहले से ही उनका अभिप्राय ज्ञात हो गया था, अतः उन्होंने वहाँ यह व्यवस्था कर ली थी।

**तं गृहीत्वैव पाणिभ्यां भीमसेनमयस्मयम् ।**
**बभञ्ज बलवान् राजा मन्यमानो वृकोदरम् ।।२४।।**

बलवान् राजा धृतराष्ट्र ने उस लोहमय भीमसेन को ही वास्तविक भीम समझा और उसे दोनों बाहों से दबाकर तोड़ डाला।

**स तु कोपं समुत्सृज्य गतमन्युर्महामनाः ।**
**हा हा भीमेति चुक्रोश नृपः शोकसमन्वितः ।।२५।।**

जब रोष का आवेग दूर हो गया, तब वे महामना नरेश क्रोध छोड़कर शोक में डूब गये और "हा भीम ! हा भीम !" कहते हुए विलाप करने लगे।

**तं विदित्वा गतक्रोधं भीमसेनवधार्दितम् ।**
**वासुदेवो वरः पुंसामिदं वचनमब्रवीत् ।।२६।।**

उन्हें भीमसेन के वध की आशंका से पीड़ित और क्रोधशून्य हुआ जान पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण ने इस प्रकार कहा—

**मा शुचो धृतराष्ट्र त्वं नैष भीमस्त्वया हतः ।**
**आयसी प्रतिमा ह्येषा त्वया निपातिता विभो ।।२७।।**

"महाराज धृतराष्ट्र ! आप शोक न करें। ये भीम आपके हाथ से नहीं मारे गये हैं। प्रभो ! यह तो लोहे की प्रतिमा थी, जिसे आपने चकनाचूर कर डाला।

**त्वां क्रोधवशमापन्नं विदित्वा भरतर्षभ ।**
**मयापकृष्टः कौन्तेयो मृत्योर्दंष्ट्रान्तरं गतः ।।२८।।**

"भरतश्रेष्ठ ! आपको क्रोध के वशीभूत हुआ जान मैंने मृत्यु की दाढ़ों में फँसे हुए कुन्तीपुत्र भीमसेन को पीछे खींच लिया था।

**न हि ते राजशार्दूल बले तुल्योऽस्ति कश्चन ।**
**कः सहते महाबाहो बाह्वोर्विग्रहणं नरः ।।२९।।**

"हे राजसिंह ! बल में आपकी समानता करनेवाला कोई नहीं है। महाबाहो ! आपकी दोनों भुजाओं की पकड़ को कौन मनुष्य सह सकता है ?

**यथान्तकमनुप्राप्य जीवन् कश्चिन्न मुच्यते ।**
**एवं बाह्वन्तरं प्राप्य तव जीवेन्न कश्चन ।।३०।।**

"जैसे यमराज के पास पहुँचकर कोई भी जीवित नहीं छूट सकता, वैसे ही आपकी भुजाओं में पड़कर किसी के प्राण नहीं बच सकते।

**तस्मात्पुत्रेण या तेऽसौ प्रतिमा कारिताऽऽयसी ।**
**भीमस्य सेयं कौरव्य तवैवोपहृता मया ।।३१।।**

"कुरुनन्दन ! इसीलिए आपके पुत्र ने जो भीमसेन की लोहमयी प्रतिमा बनवा रखी थी, वही मैंने आपके समक्ष कर दी थी।

**पुत्रशोकाभिसन्तप्तं धर्मादपकृतं मनः ।**
**तव राजेन्द्र तेन त्वं भीमसेनं जिघांससि ।।३२।।**

"हे राजेन्द्र ! आपका मन पुत्रशोक से सन्तप्त हो धर्म से विचलित हो गया है, अतः आप भीमसेन को मार डालना चाहते हैं।

**न त्वेतत्ते क्षमं राजन्हन्यास्त्वं यद् वृकोदरम् ।**
**न हि पुत्रा महाराज जीवेयुस्ते कथञ्चन ।।३३।।**

"राजन् ! आपके लिए यह कदापि उचित नहीं होगा कि आप भीमसेन का वध करें। महाराज ! [यदि भीमसेन न मारते तो भी] आपके पुत्र किसी प्रकार जीवित नहीं रह सकते थे [क्योंकि उनकी आयु पूर्ण हो चुकी थी]।

**आत्मापराधादापन्नस्तत् किं भीमं जिघांससि ।**
**तस्मात् संयच्छ कोपं त्वं स्वमनुस्मर दुष्कृतम् ।।३४।।**

"अपने ही अपराध से विपत्ति में पड़कर आप भीमसेन को क्यों मार डालना चाहते हैं ? आप अपने क्रोध को रोकिए और अपने दुष्कर्मों को स्मरण कीजिए ।

**यस्तु तां स्पर्धया क्षुद्रः पाञ्चालीमानयत्सभाम् ।**
**स हतो भीमसेनेन वैरं प्रतिजिहीर्षता ।।३५।।**

"जिस नीच दुर्योधन ने मन में ईर्ष्या रखने के कारण पाञ्चाल-राजकुमारी द्रौपदी को भरी सभा में बुलाकर अपमानित किया, उसे वैर का बदला लेने की इच्छा से भीमसेन ने मार डाला ।

**आत्मनोऽतिक्रमं पश्य पुत्रस्य च दुरात्मनः ।**
**यदनागसि पाण्डूनां परित्यागस्त्वया कृतः ।।३६।।**

"आप अपने और अपने दुरात्मा पुत्र दुर्योधन के उस अत्याचार पर तो दृष्टि डालिए, जबकि बिना किसी अपराध के ही आपने पाण्डवों का परित्याग कर दिया था ।"

**एवमुक्तः स कृष्णेन सर्वं सत्यं जनाधिप ।**
**उवाच देवकीपुत्रं धृतराष्ट्रो महीपतिः ।।३७।।**

नरेश्वर जनमेजय ! जब इस प्रकार श्रीकृष्ण ने सच्ची-सच्ची बातें कह डालीं, तब पृथिवीपति धृतराष्ट्र ने देवकीनन्दन श्रीकृष्ण से कहा—

**एवमेतन्महाबाहो यथा वदसि माधव ।**
**पुत्रस्नेहस्तु बलवान् धैर्यान्मां समचालयत् ।।३८।।**

"महाबाहो ! माधव ! आप जैसा कह रहे हैं, ठीक ऐसी ही बात है, परन्तु पुत्र का स्नेह प्रबल होता है, उसने मुझे धैर्य से विचलित कर दिया था ।

**दिष्ट्या तु पुरुषव्याघ्रो बलवान् सत्यविक्रमः ।**
**त्वद्गुप्तो नागमत् कृष्ण भीमो बाह्वन्तरं मम ।।३९।।**

"श्रीकृष्ण ! सौभाग्य की बात है कि आपसे सुरक्षित होकर बलवान्, सत्यपराक्रमी, पुरुषसिंह भीमसेन मेरी भुजाओं के बीच में नहीं आये ।

**इदानीं त्वहमव्यग्रो गतमन्युर्गतज्वरः ।**
**मध्यमं पाण्डवं वीरं द्रष्टुमिच्छामि माधव ।।४०।।**

"माधव ! अब इस समय मैं शान्त हूँ । मेरा क्रोध उतर गया है और चिन्ता भी दूर हो गई है, अतः मैं मध्यम पाण्डव अर्जुन को देखना चाहता हूँ ।

**हतेषु पार्थिवेन्द्रेषु पुत्रेषु निहतेषु च ।**
**पाण्डपुत्रेषु वै शर्म प्रीतिश्चाप्यवतिष्ठते ।।४१।।**

"समस्त राजाओं और अपने पुत्रों के मारे जाने पर अब मेरा प्रेम और हित-चिन्तन पाण्डु के इन पुत्रों पर ही आश्रित है ।"

**ततः स भीमं च धनञ्जयं च**
**माद्रयाश्च पुत्रौ पुरुषप्रवीरौ ।**
**पस्पर्श गात्रैः प्ररुदन् सुगात्रा-**
**नाश्वास्य कल्याणमुवाच चैतान् ।।४२।।**

तत्पश्चात् रोते हुए धृतराष्ट्र ने सुन्दर शरीरों-वाले भीमसेन, अर्जुन एवं माद्री के दोनों पुत्र नरवीर नकुल-सहदेव का आलिंगन किया और उन्हें सान्त्वना देकर कहा—"तुम्हारा कल्याण हो !"

**इति महाभारते स्त्रीपर्वणि तृतीयोऽध्यायः ।।३।।**

# चतुर्थोऽध्यायः

## गान्धारी का क्रोध

वैशम्पायन उवाच

**धृतराष्ट्राभ्यनुज्ञातास्ततस्ते कुरुपाण्डवाः ।**
**अभ्ययुर्भ्रातरः सर्वे गान्धारीं सहकेशवाः ।।१।।**

**वैशम्पायनजी कहते हैं**—राजन् ! धृतराष्ट्र से आज्ञा लेकर वे कुरुवंशी पाण्डव सब भाई श्रीकृष्ण के साथ गान्धारी के पास गये ।

**ततो ज्ञात्वा हतामित्रं युधिष्ठिरमुपागतम् ।**
**गान्धारी पुत्रशोकार्ता शप्तुमैच्छदनिन्दिता ।।२।।**

पुत्रशोक से पीड़ित हुई गान्धारी को जब यह ज्ञात हुआ कि युधिष्ठिर अपने शत्रुओं का संहार करके मेरे पास आये हैं, तब उस सती-साध्वी देवी ने उन्हें शाप देने की इच्छा की ।

**तस्याः पापमभिप्रायं विदित्वा पाण्डवान् प्रति ।**
**ऋषिः सत्यवतीपुत्रः प्रागेव समबुध्यत ॥३॥**

पाण्डवों के प्रति गान्धारी के मन में पापपूर्ण संकल्प है, इस बात को सत्यवती-कुमार महर्षि व्यास पहले ही ताड़ गये [अतः वे बोले—]

व्यास उवाच

**न कोपः पाण्डवे कार्यो गान्धारि शममाप्नुहि ।**
**वचो निगृह्यतामेतच्छृणु चेदं वचो मम ॥४॥**

**व्यासजी बोले**—गान्धारि ! शान्त हो जाओ। तुम्हें पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर पर क्रोध नहीं करना चाहिए। जो बात कहना चाहती हो उसे रोको और मेरी बात सुनो।

**उक्तास्यष्टादशाहानि पुत्रेण जयमिच्छता ।**
**शिवमाशास्व मे मातर्युध्यमानस्य शत्रुभिः ॥५॥**

गत अठारह दिनों में विजय-अभिलाषी तुम्हारा पुत्र प्रतिदिन तुमसे जाकर कहता था कि "माँ ! मैं शत्रुओं के साथ युद्ध करने जा रहा हूँ, आप मेरे कल्याण के लिए आशीर्वाद दो।"

**सा तथा याच्यमाना त्वं काले काले जयैषिणा ।**
**उक्तवत्यसि गान्धारि यतो धर्मस्ततो जयः ॥६॥**

जब विजय-अभिलाषी दुर्योधन समय-समय पर आपसे इस प्रकार प्रार्थना करता था, तब तुम सदा यही उत्तर देती थीं कि—"जहाँ धर्म है, वहीं विजय है।"

**क्षमाशीला पुरा भूत्वा साद्य न क्षमसे कथम् ।**
**अधर्मं जहि धर्मज्ञे यतो धर्मस्ततो जयः ॥७॥**

धर्मज्ञे ! तुम पहले बड़ी क्षमाशील थी, अब क्षमा क्यों नहीं करती हो ? अधर्म छोड़ो, क्योंकि जहाँ धर्म है, वहीं विजय है।

**त्वं च धर्मं परिस्मृत्य वाचं चोक्तां मनस्विनि ।**
**कोपं संयच्छ गान्धारि मैवं भूः सत्यवादिनि ॥८॥**

मनस्विनि गान्धारि ! अपने धर्म तथा कही हुई बात का स्मरण करके क्रोध को रोको। सत्यवादिनि ! अब फिर तुम्हारा ऐसा व्यवहार नहीं होना चाहिए।

गान्धार्युवाच

**भगवन्नाभ्यसूयामि नैतानिच्छामि नश्यतः ।**
**पुत्रशोकेन तु बलान्मनो विह्वलतीव मे ॥९॥**

**गान्धारी बोली**—भगवान् ! मैं पाण्डवों के प्रति न तो कोई दुर्भाव ही रखती हूँ और न इनका विनाश ही चाहती हूँ, परन्तु क्या करूँ, पुत्रशोक से मेरा मन हठात् व्याकुल-सा हो जाता है।

**यथैव कुन्त्या कौन्तेया रक्षितव्यास्तथा मया ।**
**तथैव धृतराष्ट्रेण रक्षितव्या यथा त्वया ॥१०॥**

कुन्ती के ये पुत्र जिस प्रकार कुन्ती द्वारा रक्षणीय हैं, उसी प्रकार मेरे द्वारा भी। जैसे आप इनकी रक्षा चाहते हैं, वैसे ही महाराज धृतराष्ट्र का भी कर्तव्य है कि वे इनकी रक्षा करें।

**दुर्योधनापराधेन शकुनेः सौबलस्य च ।**
**कर्णदुःशासनाभ्यां च कृतोऽयं कुरुसंक्षयः ॥११॥**

कुरुकुल का यह विनाश तो दुर्योधन, मेरे भाई शकुनि, कर्ण और दुःशासन के अपराध से ही हुआ है।

**नापराध्यति बीभत्सुर्न च पार्थो वृकोदरः ।**
**नकुलः सहदेवश्च नैव जातु युधिष्ठिरः ॥१२॥**

इसमें न तो अर्जुन का दोष है और न कुन्ती-कुमार भीमसेन का। नकुल-सहदेव और युधिष्ठिर का भी इसमें कोई अपराध नहीं है।

**युध्यमाना हि कौरव्याः कृन्तमानाः परस्परम् ।**
**निहताः सहिताश्चान्यैस्तत्र नास्त्यप्रियं मम ॥१३॥**

कौरव आपस में ही जूझकर मार-काट मचाते हुए अपने दूसरे साथियों के साथ मारे गये हैं, अतः इसमें मुझे अप्रिय लगनेवाली कोई भी बात नहीं है।

**किं तु कर्माकरोद् भीमो वासुदेवस्य पश्यतः ।**
**दुर्योधनं समाहूय गदायुद्धे महामनाः ॥१४॥**
**शिक्षयाभ्यधिकं ज्ञात्वा चरन्तं बहुधा रणे ।**
**अधो नाभ्याः प्रहृतवांस्तन्मे कोपमवर्धयत् ॥१५॥**

परन्तु महामनस्वी भीम ने गदा-युद्ध के लिए दुर्योधन को ललकारकर श्रीकृष्ण के देखते-देखते उसके प्रति जो व्यवहार किया वह मुझे अच्छा नहीं लगा। दुर्योधन युद्धभूमि में अनेक प्रकार के पैंतरे दिखाता हुआ विचर रहा था, अतः शिक्षा में उसे अपने से बढ़ा-चढ़ा जानकर भीम ने जो उसकी नाभि के नीचे प्रहार किया, इनके इसी व्यवहार ने मेरी क्रोधाग्नि को बढ़ाया है।

**कथं नु धर्मं धर्मज्ञैः समुद्दिष्टं महात्मभिः ।**
**त्यजेयुराहवे शूराः प्राणहेतोः कथञ्चन ॥१६॥**

धर्मज्ञ महात्माओं ने गदायुद्ध के लिए जिन नियमों का निर्धारण किया है, उसे शूरवीर योद्धा युद्धभूमि में अपने प्राण बचाने के लिए कैसे छोड़ सकते हैं ?

वैशम्पायन उवाच

**तत् श्रुत्वा वचनं तस्या भीमसेनोऽथ भीतवत् ।**
**गान्धारीं प्रत्युवाचेदं वचः सानुनयं तदा ॥१७॥**

**वैशम्पायनजी कहते हैं**—जनमेजय ! गान्धारी की यह बात सुनकर भीमसेन ने डरे हुए की भाँति विनयपूर्वक उनकी बात का उत्तर देते हुए कहा—

भीमसेन उवाच

**अधर्मो यदि वा धर्मस्त्रासात् तत्र मया कृतः ।**
**आत्मानं त्रातुकामेन तन्मे त्वं क्षन्तुमर्हसि ॥१८॥**

**भीमसेन बोले**—माताजी ! वह धर्म था या अधर्म, मैंने दुर्योधन से डरकर अपने प्राण बचाने के लिए ही वहाँ ऐसा किया था, अतः आप मेरे उस अपराध को क्षमा कर दें ।

**न हि युद्धेन पुत्रस्ते धर्म्येण स महाबलः ।**
**शक्यः केनचिदुद्यन्तुमतो विषममाचरम् ॥१९॥**

आपके उस महाबली पुत्र को कोई भी धर्मानुकूल युद्ध करके मारने का साहस नहीं कर सकता था, अतः मैंने विषमतापूर्ण व्यवहार किया था ।

**अधर्मेण जितः पूर्वं तेन चापि युधिष्ठिरः ।**
**निकृताश्च सदैव स्म ततो विषममाचरम् ॥२०॥**

पहले उसने भी [जुए में] अधर्म से ही राजा युधिष्ठिर को जीता था और हम लोगों के साथ सदा ही धोखा किया था, अतः मैंने भी उसके साथ विषम व्यवहार किया था ।

**सैन्यस्यैकोऽवशिष्टोऽयं गदायुद्धेन वीर्यवान् ।**
**मां हत्वा न हरेद् राज्यमिति वै तत्कृतं मया ॥२१॥**

कौरव सेना का एकमात्र बचा हुआ यह पराक्रमी महावीर गदायुद्ध के द्वारा मुझे मारकर पुनः सारे साम्राज्य का हरण न कर ले, इसी आशंका से मैंने वह विषम व्यवहार किया था ।

**राजपुत्रीं च पाञ्चालीमेकवस्त्रां रजस्वलाम् ।**
**भवत्या विदितं सर्वमुक्तवान् यत् सुतस्तव ॥२२॥**

राजकुमारी द्रौपदी से, जो एक वस्त्र धारण किये हुए रजस्वला अवस्था में थी, आपके पुत्र ने जो कुछ कहा था, वह सब आपको ज्ञात है ।

**सुयोधनमसंगृह्य न शक्या भूः ससागरा ।**
**केवला भोक्तुमस्माभिरतश्चैतत् कृतं मया ॥२३॥**

दुर्योधन का वध किये बिना हम लोग निष्कण्टक पृथिवी का राज्य नहीं भोग सकते थे, अतः मैंने वह अनुचित कार्य किया था ।

**तथाप्यप्रियमस्माकं पुत्रस्ते समुपाचरत् ।**
**द्रौपद्या यत् सभामध्ये सव्यमूरुमदर्शयत् ॥२४॥**

आपके पुत्र ने तो हम सब लोगों का इससे भी बढ़कर अप्रिय किया था कि उसने भरी सभा में द्रौपदी को अपनी बायीं जाँघ दिखाई थी ।

**तदैव वध्यः सोऽस्माकं दुराचारश्च ते सुतः ।**
**धर्मराजाज्ञया चैव स्थिताः स्म समये तदा ॥२५॥**

आपके उस दुराचारी पुत्र का तो हमें उसी समय वध कर देना चाहिए था, परन्तु धर्मराज की आज्ञा से हम लोग प्रतिज्ञा के बन्धन में बँधकर चुप रह गये ।

**वैरमुद्दीपितं राज्ञि पुत्रेण तव तन्महत् ।**
**क्लेशिताश्च वने नित्यं तत एतत् कृतं मया ॥२६॥**

महारानी ! आपके पुत्र ने उस महान् वैर की अग्नि को और भी प्रचण्ड कर दिया और हमें वन में भेजकर सदा क्लेश पहुँचाया, अतः मुझे उसके साथ ऐसा व्यवहार करना पड़ा ।

**वैरस्यास्य गताः पारं हत्वा दुर्योधनं रणे ।**
**राज्यं युधिष्ठिरः प्राप्तो वयं च गतमन्यवः ॥२७॥**

युद्धभूमि में दुर्योधन को मारकर हम लोग इस वैर से पार हो गये। राजा युधिष्ठिर को राज्य मिल गया और हम लोगों का क्रोध शान्त हो गया ।

गान्धार्युवाच

**न तस्यैष वधस्तात यत् प्रशंससि मे सुतम् ।**
**कृतवांश्चापि तत् सर्वं यदिदं भाषसे मयि ॥२८॥**

**गान्धारी ने कहा**—तात ! तुम मेरे पुत्र की इतनी प्रशंसा कर रहे हो, अतः उसका वध नहीं हुआ

[वह अपने यशोमय शरीर से अमर है]। हाँ, मेरे समक्ष तुम जो कुछ कह रहे हो, वह सारा अपराध दुर्योधन ने अवश्य किया है।

**हताश्वे नकुले यत्तु वृषसेनेन भारत।**
**अपिबः शोणितं संख्ये दुःशासनशरीरजम् ॥२९॥**
**सद्भिर्विगर्हितं घोरमनार्यजनसेवितम्।**
**क्रूरं कर्माकृथास्कस्मात्तदयुक्तं वृकोदर ॥३०॥**

परन्तु भारत! वृषसेन ने जब नकुल के घोड़ों को मारकर उसे रथहीन कर दिया था, उस समय तुमने युद्ध में दुःशासन को मारकर उसका रक्त पिया था, वह सज्जनों द्वारा निन्दित और नीच पुरुषों द्वारा सेवित घोर क्रूरतापूर्ण कर्म है। वृकोदर! तुमने वही क्रूर कार्य किया है, अतः तुम्हारे द्वारा अत्यन्त अयोग्यकर्म बन गया है।

भीमसेन उवाच

**अन्यस्यापि न पातव्यं रुधिरं किं पुनः स्वकम्।**
**यथैवात्मा तथा भ्राता विशेषो नास्ति कश्चन ॥३१॥**

**भीमसेन बोले**—माताजी! दूसरे का भी रक्त नहीं पीना चाहिए, फिर अपना ही खून कोई कैसे पी सकता है? जैसे अपना शरीर है, वैसे ही भाई का शरीर है। अपने में और भाई में कोई अन्तर नहीं है।

**रुधिरं न व्यतिक्रामद् दन्तोष्ठं मेऽम्ब मा शुचः।**
**वैवस्वतस्तु तद् वेद हस्तौ मे रुधिरोक्षितौ ॥३२॥**

माँ! आप शोक न करें। वह रक्त मेरे दाँतों और ओठों को लाँघकर आगे नहीं जा सका था। इस बात को सूर्यपुत्र यमराज जानते हैं कि केवल मेरे दोनों हाथ ही रक्त में सने हुए थे।

**हताश्वं नकुलं दृष्ट्वा वृषसेनेन संयुगे।**
**भ्रातॄणां सम्प्रहृष्टानां त्रासः संजनितो मया ॥३३॥**

युद्ध में वृषसेन के द्वारा नकुल के घोड़ों को मारा गया देख जो दुःशासन के सभी भाई हर्ष से विभोर हो उठे थे, उनके मन में वैसा करके मैंने त्रास उत्पन्न किया था।

**केशपक्षपरामर्शे द्रौपद्या द्यूतकारिते।**
**क्रोधाद् यदब्रुवं चाहं तच्च मे हृदि वर्तते ॥३४॥**

जुए के समय जब द्रौपदी के केश खींचे गये थे, उस समय क्रोध में भरकर मैंने जो प्रतिज्ञा की थी, उसकी स्मृति मेरे हृदय में निरन्तर बनी रहती थी।

**क्षत्रधर्माच्च्युतो राज्ञि भवेयं शाश्वतीः समाः।**
**प्रतिज्ञां तामनिस्तीर्य ततस्तत् कृतवानहम् ॥३५॥**

महारानीजी! यदि मैं उस प्रतिज्ञा को पूर्ण न करता तो सदा के लिए क्षत्रिय-धर्म से गिर जाता, इसलिए मैंने वह कार्य किया था।

**न मामर्हसि गान्धारि दोषेण परिशंकितुम्।**
**अनिगृह्य पुरा पुत्रानस्मास्वनपकारिषु।**
**अधुना किं नु दोषेण परिशंकितुमर्हसि ॥३६॥**

हे माता गान्धारी! आपको मुझमें दोष की आशंका नहीं करनी चाहिए। पहले जब हम लोगों ने कोई अपराध नहीं किया था, उस समय हमपर अत्याचार करनेवाले अपने पुत्रों को तो आपने रोका नहीं, फिर इस समय आप मुझपर दोषारोपण क्यों करती हैं?

गान्धार्युवाच

**वृद्धस्यास्य शतं पुत्रान् निघ्नंस्त्वमपराजितः।**
**कस्मान्नाशेषयः कंचिद् येनाल्पमपराधितम् ॥३७॥**

**गान्धारी बोली**—पुत्र! तुम अपराजित वीर हो। तुमने इस वृद्ध महाराज के सौ पुत्रों को मारते समय किसी एक को भी, जिसने बहुत थोड़ा अपराध किया था, क्यों नहीं जीवित छोड़ दिया?

**सन्तानमावयोस्तात वृद्धयोर्हृतराज्ययोः।**
**कथमन्धद्वयस्यास्य यष्टिरेका न वर्जिता ॥३८॥**

तात! हम दोनों वृद्ध हुए। हमारा राज्य भी तुमने छीन लिया। ऐसी अवस्था में हमारी एक ही सन्तान को—हम दो अन्धों के लिए एक ही लाठी के सहारे को तुमने क्यों नहीं जीवित छोड़ दिया?

**शेषे ह्यवस्थिते तात पुत्राणामन्तके त्वयि।**
**न मे दुःखं भवेदेतद् यदि त्वं धर्ममाचरेः ॥३९॥**

तात! तुम मेरे सारे पुत्रों के लिए यमराज बन गये। यदि तुम धर्म का आचरण करते और मेरा एक पुत्र भी रह जाता तो मुझे इतना दुःख नहीं होता।

वैशम्पायन उवाच

**एवमुक्त्वा तु गान्धारी युधिष्ठिरमपृच्छत।**
**क्व स राजेति सक्रोधा पुत्रपौत्रवधार्दिता ॥४०॥**

**वैशम्पायनजी कहते हैं**—राजन् ! भीमसेन से ऐसा कहकर अपने पुत्रों और पौत्रों के वध से पीड़ित हुई गान्धारी ने क्रुद्ध होकर पूछा—"कहाँ है वह राजा युधिष्ठिर ?"

**तामभ्यगच्छद् राजेन्द्रो वेपमानः कृताञ्जलिः ।**
**युधिष्ठिरस्त्विदं तत्र मधुरं वाक्यमब्रवीत् ॥४१॥**
**पुत्रहन्ता नृशंसोऽहं तव देवि युधिष्ठिरः ।**
**शापार्हः पृथिवीनाशे हेतुभूतः शपस्व माम् ॥४२॥**

यह सुनकर महाराज युधिष्ठिर काँपते हुए, हाथ जोड़े उनके सम्मुख आये और अत्यन्त मधुरवाणी में बोले—"देवि ! आपके पुत्रों का संहार करनेवाला क्रूरकर्मा युधिष्ठिर मैं हूँ । भू-मण्डल के राजाओं का नाश कराने में मैं ही हेतु हूँ, अतः शाप के योग्य हूँ । आप मुझे शाप दे दीजिए ।

**न हि मे जीवितेनार्थो न राज्येन धनेन वा ।**
**तादृशान् सुहृदो हत्वा मूढस्यास्य सुहृद्द्रुहः ॥४३॥**

"मैं अपने सुहृदों का द्रोही और अविवेकी हूँ । अपने उन-जैसे श्रेष्ठ सुहृदों का वध करके अब मुझे जीवन, राज्य अथवा धन से कोई प्रयोजन नहीं है ।"

**तमेवं वादिनं भीतं संनिकर्षगतं तदा ।**
**गान्धारी विगतक्रोधा सान्त्वयामास मातृवत् ॥४४॥**

जब निकट आकर भयभीत हुए राजा युधिष्ठिर ने ऐसी बातें कहीं, तब गान्धारी का क्रोध उतर गया और उसने एक स्नेहमयी माता के समान उसे सान्त्वना प्रदान की ।

**तया ते समनुज्ञाता मातरं वीरमातरम् ।**
**अभ्यगच्छन्त सहिताः पृथां पृथुलवक्षसः ॥४५॥**

तत्पश्चात् उनकी आज्ञा ले चौड़ी छातीवाले सभी पाण्डव एकसाथ वीरजननी माता कुन्ती के पास गये ।

**सा तानेकैकशः पुत्रान् संस्पृशन्ती पुनः पुनः ।**
**अन्वशोचत दुःखार्ता द्रौपदीं च हतात्मजाम् ॥४६॥**

बारी-बारी से पुत्रों के शरीर पर बारम्बार हाथ फेरती हुई कुन्ती दुःख से आतुर हो उस द्रौपदी के लिए शोक करने लगीं, जिसके सभी पुत्र मारे गये थे ।

द्रौपद्युवाच

**आर्ये पौत्राः क्व ते सर्वे सौभद्रसहिता गताः ।**
**किं नु राज्येन वै कार्यं विहीनायाः सुतैर्मम ॥४७॥**

**द्रौपदी बोली**—आर्ये ! अभिमन्यु सहित वे आपके सभी पौत्र कहाँ चले गये ? अपने पुत्रों से हीन होकर अब इस राज्य से हमें क्या कार्य है ?

वैशम्पायन उवाच

**तां समाश्वासयामास पृथा पृथुललोचना ।**
**उत्थाप्य याज्ञसेनीं तु रुदतीं शोककर्शिताम् ॥४८॥**
**तयैव सहिता चापि पुत्रैरनुगता नृप ।**
**अभ्यगच्छत गान्धारीमार्तामार्ततरा स्वयम् ॥४९॥**

**वैशम्पायनजी कहते हैं**—राजन् ! विशाल नेत्रों-वाली कुन्ती ने शोक से कातर हो रोती हुई द्रुपद-कुमारी को उठाकर धीरज बँधाया और उनके साथ ही वे स्वयं भी अत्यन्त आर्त होकर शोकाकुल गान्धारी के पास गईं । उस समय उसके पुत्र पाण्डव भी उनके पीछे-पीछे गये ।

**तामुवाचाथ गान्धारी सह वध्वा यशस्विनीम् ।**
**मैवं पुत्रीति शोकार्ता पश्य मामपि दुःखिताम् ॥५०॥**
**मन्ये लोकविनाशोऽयं कालपर्यायनोदितः ।**
**अवश्यम्भावी सम्प्राप्तः स्वभावाल्लोमहर्षणः ॥५१॥**

गान्धारी ने बहू द्रौपदी और यशस्विनी कुन्ती से कहा—"पुत्री ! इस प्रकार शोकाकुल मत होओ । देखो, मैं भी तो दुःख में डूबी हुई हूँ । मैं समझती हूँ समय के उलट-फेर से प्रेरित होकर सम्पूर्ण जगत् का विनाश हुआ है, जो स्वभाव से ही रोमाञ्चकारी है । यह काण्ड अवश्यम्भावी था, इसीलिए प्राप्त हुआ है ।

**तस्मिन्नपरिहार्येऽर्थे व्यतीते च विशेषतः ।**
**मा शुचो न हि शोच्यास्ते संग्रामे निधनं गताः ॥५२॥**
**यथैवाहं तथैव त्वं को नावाश्वासयिष्यति ।**
**ममैव ह्यपराधेन कुलमग्र्यं विनाशितम् ॥५३॥**

जब यह विनाश किसी प्रकार टल नहीं सकता था, विशेषतः जब सब-कुछ होकर समाप्त हो गया, तो अब तुम्हें शोक नहीं करना चाहिए । वे सभी वीर युद्ध में मारे गये हैं, अतः शोक करने के योग्य नहीं हैं । आज जैसी मैं हूँ, वैसी ही तुम भी हो । हम दोनों को कौन धैर्य प्रदान करेगा ? मेरे ही अपराध से इस श्रेष्ठ कुल का संहार हुआ है ।

**इतिमहाभारते स्त्रीपर्वणि चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥**

# पञ्चमोऽध्यायः

## श्रीकृष्ण के समक्ष गान्धारी का विलाप

वैशम्पायन उवाच

**ततो व्यासाभ्यनुज्ञातो धृतराष्ट्रो महीपतिः ।**
**पाण्डुपुत्राश्च ते सर्वे युधिष्ठिरपुरोगमाः ॥१॥**

**वैशम्पायनजी कहते हैं**—जनमेजय ! समाश्वासन आदि के पश्चात् व्यासजी की आज्ञा से महाराज धृतराष्ट्र और युधिष्ठिर आदि सब पाण्डुपुत्र युद्धभूमि की ओर चले ।

**वासुदेवं पुरस्कृत्य हतबन्धुं च पार्थिवम् ।**
**कुरुस्त्रियः समासाद्य जग्मुरायोधनं प्रति ॥२॥**

जिनके बन्धु-बान्धव मारे गये थे, उन राजा धृतराष्ट्र और श्रीकृष्ण को आगे करके कुरुकुल की स्त्रियों को साथ लेकर वे सब लोग रणभूमि में गये ।

**समासाद्य कुरुक्षेत्रं ताः स्त्रियो निहतेश्वराः ।**
**अपश्यन्त हतांस्तत्र पुत्रान्भ्रातृन्पितृन्पतीन् ।**
**क्रव्यादैर्भक्ष्यमाणान् वै गोमायुबलवायसैः ॥३॥**

कुरुक्षेत्र में पहुँचकर उन अनाथ स्त्रियों ने वहाँ मारे गये अपने पुत्रों, भाइयों, पिताओं और पतियों की लाशों को देखा, जिन्हें मांसभक्षी जीव-जन्तु, गीदड़-समूह और कौए नोच-नोचकर खा रहे थे ।

**रुद्राक्रीडनिभं दृष्ट्वा तदा विशसनं स्त्रियः ।**
**महार्हेभ्योऽथ यानेभ्यो विक्रोशन्त्यो निपेतिरे ॥४॥**

रुद्र की कीड़ास्थली के समान उस रणभूमि को देखकर वे स्त्रियाँ रोती और विलाप करती हुई अपने बहुमूल्य रथों से नीचे गिर पड़ीं ।

**दुःखोपहतचित्ताभिः समन्तादनुनादितम् ।**
**दृष्ट्वाऽऽयोधनमत्युग्रमब्रवीत् सुबलात्मजा ॥५॥**

दुःख से व्याकुलचित्त हुई युवतियों के करुण-क्रन्दन से वह अत्यन्त भयंकर युद्धस्थल सब ओर से गूंज उठा । यह देखकर सुबलपुत्री गान्धारी बोली—

**पश्यैताः पुण्डरीकाक्ष स्नुषा मे निहतेश्वराः ।**
**प्रकीर्णकेशाः क्रोशन्तीः कुररीरिव माधव ॥६॥**

"कमलनयन माधव ! मेरी इन विधवा पुत्र-वधुओं की ओर देखो, जो केश खोले हुए कुररी की भाँति विलाप कर रही हैं ।

**एता दीर्घमिवोच्छ्वस्य विक्रुश्य च विलप्य च ।**
**विस्पन्दमाना दुःखेन वीरा जहति जीवितम् ॥७॥**

"ये वीर वनिताएँ दीर्घ निःश्वास छोड़कर स्वजनों को पुकार-पुकारकर करुण विलाप करके दुःख से छटपटाती हुई अपने प्राण त्याग देना चाहती हैं ।

**बह्व्यो दृष्ट्वा शरीराणि क्रोशन्ति विलपन्ति च ।**
**पाणिभिश्चापरा घ्नन्ति शिरांसि मृदुपाणयः ॥८॥**

"बहुत-सी स्त्रियाँ स्वजनों की लाशों को देखकर रोती, चिल्लाती और विलाप करती हैं । कितनी ही कोमल हाथोंवाली कामिनियाँ अपने हाथों से सिर पीट रही हैं ।

**अतो दुःखतरं किं नु केशव प्रतिभाति मे ।**
**यदिमाः कुर्वते सर्वा रवमुच्चावचं स्त्रियः ॥९॥**

"केशव ! मेरे लिए इससे बढ़कर महान् दुःख और क्या होगा कि ये सारी बहुएँ यहाँ आकर अनेक प्रकार से आर्तनाद कर रही हैं ।

**नूनमाचरितं पापं मया पूर्वेषु जन्मसु ।**
**या पश्यामि हतान्पुत्रान्पौत्रान्भ्रातृँश्च माधव ॥१०॥**

"माधव ! निश्चय ही मैंने पूर्वजन्मों में कोई बड़ा भारी पाप किया है, जिससे आज अपने पुत्रों, पौत्रों और भाइयों को यहाँ मारा गया देख रही हूँ ।"

**एवमार्ता विलपती समाभाष्य जनार्दनम् ।**
**गान्धारी पुत्रशोकार्ता ददर्श निहतं सुतम् ॥११॥**

"श्रीकृष्ण को सम्बोधित करके पुत्रशोक से व्याकुल हो इस प्रकार आर्तस्वर से विलाप करती हुई गान्धारी ने युद्ध में मारे गये अपने पुत्र दुर्योधन को देखा ।

**दुर्योधनं हतं दृष्ट्वा गान्धारी शोककर्शिता ।**
**सहसा न्यपतद् भूमौ छिन्नेव कदली वने ॥१२॥**

दुर्योधन को मारा गया देखकर शोक से पीड़ित हुई गान्धारी वन में कटे हुए केले के वक्ष की भाँति सहसा पृथिवी पर गिर पड़ी ।

**सा तु लब्ध्वा पुनः संज्ञां विक्रुश्य च विलप्य च ।**
**दुर्योधनमभिप्रेक्ष्य शयानं रुधिरोक्षितम् ॥१३॥**

**परिष्वज्य च गान्धारी कृपणं पर्यदेवयत् ।**
**हा हा पुत्रेति शोकार्ता विललापाकुलेन्द्रिया ।।१४।।**

थोड़ी देर में होश में आने पर वे अपने पुत्र को पुकार-पुकारकर रोने लगीं। दुर्योधन को रक्त से लथपथ होकर सोया देख उसे हृदय से लगाकर गान्धारी दीन होकर रोने लगी। उस समय उनकी सारी इन्द्रियाँ व्याकुल हो उठी थीं। वे शोकातुर हो "हा पुत्र ! हा पुत्र !" कहकर विलाप करने लगीं।

**समीपस्थं हृषीकेशमिदं वचनमब्रवीत् ।**
**उपस्थितेऽस्मिन्संग्रामे ज्ञातीनां संक्षये विभो ।।१५।।**
**मामयं प्राह वार्ष्णेय प्राञ्जलिर्नृपसत्तमः ।**
**अस्मिन् ज्ञातिसमुद्धर्षे जयमम्बा ब्रवीतु मे ।।१६।।**

फिर वे पास ही खड़े हुए श्रीकृष्ण से इस प्रकार कहने लगीं—"वृष्णिनन्दन ! प्रभो ! भाई-बन्धुओं का विनाश करनेवाला जब यह भीषण युद्ध उपस्थित हुआ था, उस समय इस नृपश्रेष्ठ दुर्योधन ने मुझसे हाथ जोड़कर कहा था—"माताजी ! कुटुम्बीजनों के इस संग्राम में आप मुझे मेरी विजय के लिए आशीर्वाद दें।"

**इत्युक्ते जानती सर्वमहं स्वव्यसनागमम् ।**
**अब्रुवं पुरुषव्याघ्र यतो धर्मस्ततो जयः ।।१७।।**

"पुरुषसिंह कृष्ण ! उसके ऐसा कहने पर मैं यह सब जानती थी कि मुझपर विपत्ति का पहाड़ टूटनेवाला है, तथापि मैंने उससे यही कहा—"जहाँ धर्म है, वहीं विजय है।"

**इत्येवमब्रुवं पूर्वं नैनं शोचामि वै प्रभो ।**
**धृतराष्ट्रं तु शोचामि कृपणं हतबान्धवम् ।।१८।।**

"प्रभो ! यह बात मैंने पहले ही कह दी थी, अतः मुझे इस दुर्योधन के लिए शोक नहीं हो रहा है। मैं तो इन दीनहीन महाराज धृतराष्ट्र के लिए शोकाकुल हो रही हूँ, जिनके सारे बन्धु-बान्धव मार डाले गये।

**अमर्षणं युधां श्रेष्ठं कृतास्त्रं युद्धदुर्मदम् ।**
**शयानं वीरशयने पश्य माधव मे सुतम् ।।१९।।**

"माधव ! अमर्षशील ! योद्धाओं में श्रेष्ठ, अस्त्रविद्या के ज्ञाता, रणदुर्मद और वीर शय्या पर सोये हुए मेरे इस पुत्र को देखो तो सही।

**योऽयं मूर्धाभिषिक्तानामग्रे याति परन्तपः ।**
**सोऽयं पांसुषु शेतेऽद्य पश्य कालस्य पर्ययम् ।।२०।।**

"शत्रुओं को सन्ताप देनेवाला जो दुर्योधन मूर्धाभिषिक्त राजाओं के आगे-आगे चलता था, वही यह आज धूल में लोट रहा है। काल का यह उलट-फेर तो देखो !

**ध्रुवं दुर्योधनो वीरो गतिं नसुलभां गतः ।**
**तथा ह्यभिमुखः शेते शयने वीरसेविते ।।२१।।**

"निश्चय ही शूरवीर दुर्योधन उस गति को प्राप्त हुआ है, जो सबके लिए सुलभ नहीं है, क्योंकि यह वीरशय्या पर सामने मुँह किये सो रहा है।

**यं पुरा पर्युपासीना रमयन्ति वरस्त्रियः ।**
**तं वीरशयने सुप्तं रमयन्त्यशिवाः शिवाः ।।२२।।**

"पूर्वकाल में जिसके समीप बैठकर सुन्दर रमणियाँ उसका मनोरञ्जन करती थीं, वीरशय्या पर सोये हुए उसी वीर का मन आज ये अमङ्गलकारिणी गीदड़ियाँ बहलाती हैं।

**यं पुरा पर्युपासीना रमयन्ति महीक्षितः ।**
**महीतलस्थं निहतं गृध्रास्तं पर्युपासते ।।२३।।**

"पहले राजा लोग जिसके पास बैठकर उसे आनन्द प्रदान करते थे, आज मरकर धरती पर पड़े हुए उसी वीर के पास गीध बैठे हुए हैं।

**यं पुरा व्यजनै रम्यैरुपवीजन्ति योषितः ।**
**तमद्य पक्षव्यजनैरुपवीजन्ति पक्षिणः ।।२४।।**

"पहले जिसके पास खड़ी होकर युवतियाँ सुन्दर पंखे झला करती थीं, आज उसी को पक्षीगण अपने पंखों से हवा करते हैं।

**अक्षौहिणीर्महाबाहुर्दश चैकां च केशव ।**
**आनयद् यः पुरा संख्ये सोऽनयान्निधनं गतः ।।२५।।**

"केशव ! जिस महाबाहु वीर ने पहले ग्यारह अक्षौहिणी सेनाओं को जुटा लिया था, वही अपनी अनीति के कारण युद्ध में मार डाला गया।

**एष दुर्योधनः शेते महेष्वासो महाबलः ।**
**शार्दूल इव सिंहेन भीमसेनेन पातितः ।।२६।।**

"सिंह द्वारा मारे गये दूसरे सिंह के समान भीमसेन के हाथों मारा गया यह महाबली, महाधनुर्धर दुर्योधन सो रहा है।

**इदं कष्टतरं पश्य पुत्रस्यापि वधान्मम ।**
**यदिमाः पर्युपासन्ते हताञ्शूरान् रणे स्त्रियः ॥२७॥**

"मेरे लिए पुत्र-वध से भी अधिक कष्ट देनेवाली बात यह है कि ये स्त्रियाँ युद्ध में मारे गये अपने शूर-वीर पतियों के पास बैठी रो रही हैं। इनकी दयनीय दशा तो देखो !

**प्रकीर्णकेशां सुश्रोणीं दुर्योधनशुभाङ्कगाम् ।**
**रुक्मवेदीनिभां पश्य कृष्ण लक्ष्मणमातरम् ॥२८॥**

"श्रीकृष्ण ! सुवर्ण की वेदी के समान तेजस्विनी और सुन्दर कटिप्रदेशवाली उस लक्ष्मण की माता को तो देखो, जो दुर्योधन के शुभ-अङ्क में स्थित हो केश खोले रो रही है।

**कथं नु शतधा नेदं हृदयं मम दीर्यते ।**
**पश्यन्त्या निहतं पुत्रं पुत्रेण सहितं रणे ॥२९॥**

"युद्धभूमि में मेरा पुत्र [दुर्योधन] अपने पुत्र [लक्ष्मण] के साथ ही मार डाला गया है। इसे इस अवस्था में देखकर मेरे इस हृदय के सैकड़ों टुकड़े क्यों नहीं हो जाते ?

**पश्य माधव पुत्रान्मे शतसंख्याञ्जितक्लमान् ।**
**गदया भीमसेनेन भूयिष्ठं निहतान् रणे ॥३०॥**

"माधव ! जो परिश्रम को जीत चुके थे, उन मेरे सौ पुत्रों को देखो, जिन्हें युद्धस्थल में प्रायः भीमसेन ने अपनी गदा से मार डाला है।

**इदं दुःखतरं मेऽद्य यदिमा मुक्तमूर्धजाः ।**
**हतपुत्रा रणे बालाः परिधावन्ति मे स्नुषाः ॥३१॥**

"सबसे अधिक दुःख मुझे आज यह देखकर हो रहा है कि मेरी बालवधुएँ, जिनके पुत्र भी मारे जा चुके हैं, रणभूमि में बाल बिखेरे चारों ओर अपने स्वजनों की खोज में दौड़ रही हैं।

**पूर्वजातिकृतं पापं मन्ये नाल्पमिवानघ ।**
**एताभिर्निरवद्याभिर्मया चैवाल्पमेधया ॥३२॥**
**यदिदं धर्मराजेन पातितं नो जनार्दन ।**
**न हि नाशोऽस्ति वार्ष्णेय कर्मणोः शुभपापयोः ॥३३॥**

"निष्पाप ! मैं समझती हूँ कि इन अनिन्द्य सुन्दरी अबलाओं ने और मन्दमति मैंने भी पूर्वजन्म में कोई बड़ा भारी पाप किया है, जिसके फलस्वरूप धर्मराज ने हम लोगों को बड़ी भारी विपत्ति में डाल दिया है। जनार्दन ! वृष्णिनन्दन ! जान पड़ता है कि किये हुए पुण्य और पापकर्मों का उनके फल का उपभोग किये बिना नाश नहीं होता है।

**एष दुःशासनः शेते शूरेणामित्रघातिना ।**
**पीतशोणितसर्वाङ्गो युधि भीमेन पातितः ॥३४॥**

"शत्रुसंहारक शूरवीर भीमसेन ने युद्ध में जिसे मार गिराया और जिसके सारे अङ्गों का रक्तपान कर लिया, वही यह दुःशासन यहाँ सो रहा है।

**अध्यर्धगुणमाहुर्यं बले शौर्ये च केशव ।**
**पित्रा त्वया च दाशार्ह दृप्तं सिंहमिवोत्कटम् ॥३५॥**
**यो बिभेद चमूमेको मम पुत्रस्य दुर्भिदाम् ।**
**स भूत्वा मृत्युरन्येषां स्वयं मृत्युवशं गतः ॥३६॥**

"दशार्हनन्दन ! केशव ! जिसे बल और शौर्य में अपने पिता से और तुमसे भी डेढ़ गुना बताया जाता था, जो प्रचण्ड सिंह के समान अभिमान में भरा रहता था, जिसने अकेले ही मेरे पुत्र के दुर्भेद्य व्यूह को तोड़ डाला था, वही अभिमन्यु दूसरों की मृत्यु बनकर स्वयं भी मृत्यु के अधीन हो गया है।

**पश्य वैकर्तनं कर्णं निहत्यातिरथान् बहून् ।**
**शोणितौघपरीताङ्गं शयानं पतितं भुवि ॥३७॥**

"माधव ! देखो, वैकर्तन कर्ण बहुत-से अतिरथी वीरों का संहार करके स्वयं भी खून से लथपथ होकर पृथिवी पर सोया पड़ा है।

**अमर्षी दीर्घरोषश्च महेष्वासो महाबलः ।**
**रणे विनिहतः शेते शूरो गाण्डीवधन्वना ॥३८॥**

"शूरवीर कर्ण महान् बलवान् और महाधनुर्धर था। यह दीर्घकाल तक रोष में भरा रहनेवाला और अमर्षशील था, परन्तु गाण्डीवधारी अर्जुन के हाथ से मारा जाकर यह वीर युद्धभूमि में सो गया है।

**पुत्रशोकाभितप्तेन प्रतिज्ञां चाभिरक्षता ।**
**पाकशासनिना संख्ये वार्धक्षत्रिर्निपातितः ॥३९॥**
**एकादश चमूर्भित्वा रक्ष्यमाणं महात्मना ।**
**सत्यं चिकीर्षता पश्य हतमेनं जयद्रथम् ॥४०॥**

"श्रीकृष्ण ! पुत्रशोक से सन्तप्त हो अपनी की हुई प्रतिज्ञा का पालन करते हुए इन्द्रकुमार अर्जुन ने रणभूमि में वृद्धक्षत्र के पुत्र जयद्रथ को मार गिराया है। यद्यपि उसकी रक्षा की पूरी व्यवस्था की गई

थी, तब भी अपनी प्रतिज्ञा को सत्य कर दिखाने की इच्छावाले महात्मा अर्जुन ने ग्यारह अक्षौहिणी सेनाओं को लाँघकर जिसे मार डाला था, वही यह जयद्रथ यहाँ पड़ा है। इसे देखो।

**यदा कृष्णामुपादाय प्राद्रवत् केकयैः सह।**
**तदैव वध्यः पाण्डूनां जनार्दन जयद्रथः ॥४१॥**
**दुःशलां मानयद्भिस्तु तदा मुक्तो जयद्रथः।**
**कथमद्य न तां कृष्ण मानयन्ति स्म ते पुनः ॥४२॥**

"जनार्दन! जिस दिन जयद्रथ द्रौपदी का अपहरण करके केकयों के साथ भागा था, उसी दिन यह पाण्डवों का वध्य हो गया था, परन्तु उस समय दुःशला का सम्मान करते हुए उन्होंने जयद्रथ को जीवित छोड़ दिया था। श्रीकृष्ण! उन्हीं पाण्डवों ने आज फिर क्यों नहीं उसका सम्मान किया?

**सैषा मम सुता बाला विलपन्ती च दुःखिताः।**
**आत्मना हन्ति चात्मानमाक्रोशन्ती च पाण्डवान् ॥४३**

"देखो, वही मेरी यह पुत्री दुःशला जो अभी बालिका है, किस प्रकार दुःखी होकर विलाप कर रही है! यह पाण्डवों को कोसती हुई स्वयं ही अपनी छाती पीट रही है।

**किं नु दुःखतरं कृष्ण परं मम भविष्यति।**
**यत् सुता विधवा बाला स्नुषाश्च निहतेश्वराः ॥४४॥**

"श्रीकृष्ण! मेरे लिए इससे बढ़कर महान् दुःख की बात और क्या होगी कि मेरी छोटी अवस्था की यह पुत्री विधवा हो गई और मेरी सारी पुत्रवधुएँ भी अनाथा हो गईं।

**सोमदत्तसुतं पश्य युयुधानेन पातितम्।**
**वितुद्यमानं विहगैर्बहुभिर्माधवान्तिके ॥४५॥**

"माधव! देखो, सात्यकि ने जिन्हें मार गिराया था, वे ही ये सोमदत्त के पुत्र भूरिश्रवा पास ही दिखाई दे रहे हैं। इन्हें बहुत-से पक्षी चोंच मार-मारकर नोच रहे हैं।

**गान्धारराजः शकुनिर्बलवान् सत्यविक्रमः।**
**निहतः सहदेवेन भागिनेयेन मातुलः ॥४६॥**

"यह गान्धार देश का राजा महाबली सत्य-पराक्रमी शकुनि पड़ा हुआ है। इसे सहदेव ने मारा है। भानजे ने मामा के प्राण लिये हैं।

**मायया निकृतिप्रज्ञो जितवान् यो युधिष्ठिरम्।**
**सभायां विपुलं राज्यं स पुनर्जीवितं जितः ॥४७॥**

"जो छलविद्या का पण्डित था, जिसने द्यूतसभा में माया द्वारा युधिष्ठिर और उनके विशाल राज्य को जीत लिया था, वही फिर अपना जीवन भी हार गया।

**शकुन्ताः शकुनिं कृष्ण समन्तात् पर्युपासते।**
**कैतवं मम पुत्राणां विनाशायोपशिक्षितम् ॥४८॥**

"श्रीकृष्ण! आज शकुनि [पक्षी] ही इस शकुनि की चारों ओर से उपासना करते हैं। इसने मेरे पुत्रों के विनाश के लिए ही द्यूतविद्या अथवा धूर्तता सीखी थी।

**एष चेदिपतिः शूरो धृष्टकेतुर्महारथः।**
**शेते विनिहतः संख्ये हत्वा शत्रून् सहस्रशः ॥४९॥**

"यह चेदिराज शूरवीर महारथी धृष्टकेतु सहस्रों शत्रुओं को मारकर मारा गया और रणशय्या पर सदा के लिए सो गया।

**ये हन्युः शस्त्रवेगेन देवानपि नरर्षभाः।**
**त इमे निहताः संख्ये पश्य कालस्य पर्ययम् ॥५०॥**

"जो नरश्रेष्ठ अपने शस्त्र के वेग से देवताओं को भी नष्ट कर सकते थे, वे ही ये युद्ध में मार डाले गये हैं, यह काल का उलट-फेर तो देखो।

**नातिभारोऽस्ति दैवस्य ध्रुवं माधव कश्चन।**
**यदिमे निहताः शूराः क्षत्रियैः क्षत्रियर्षभाः ॥५१॥**

"माधव! निश्चय ही दैव के लिए कोई भी कार्य कठिन नहीं है, क्योंकि उसने क्षत्रियों द्वारा ही इन शूरवीर क्षत्रियशिरोमणियों का संहार करा डाला है।

**तदैव निहताः कृष्ण मम पुत्रास्तरस्विनः।**
**यदैवाकृतकामस्त्वमुपप्लव्यं गतः पुनः ॥५२॥**

"श्रीकृष्ण! मेरे बलशाली पुत्र तो उसी दिन मार डाले गये, जिस दिन तुम भग्नमनोरथ होकर उपप्लव्य नगर को लौट गये थे।

**शान्तनोश्चैव पुत्रेण प्राज्ञेन विदुरेण च।**
**तदैवोक्तास्मि मा स्नेहं कुरुष्वात्मसुतेष्विति ॥५३॥**

"श्रीकृष्ण! मुझे तो शान्तनुनन्दन भीष्म और ज्ञानी विदुरजी ने उसी दिन कह दिया था कि "अब

तुम अपने पुत्रों पर स्नेह न करो।"

**तयोर्हि दर्शनं नैतन्मिथ्या भवितुमर्हति।**
**अचिरेणैव मे पुत्रा भस्मीभूता जनार्दन ॥५४॥**

"जनार्दन! उन दोनों की यह दृष्टि मिथ्या नहीं हो सकती थी, अतः थोड़े ही समय में मेरे सारे पुत्र युद्ध की अग्नि में जलकर भस्म हो गये।"

**इत्युक्त्वा न्यपतद् भूमौ गान्धारी शोकमूर्च्छिता।**
**दुःखोपहतविज्ञाना धैर्यमुत्सृज्य भारत ॥५५॥**

भरतकुलभूषण जनमेजय! ऐसा कहकर शोक से मूर्च्छित हुई गान्धारी धैर्य छोड़कर पृथिवी पर गिर पड़ीं, दुःख से उनकी विवेकशक्ति नष्ट हो गई।

**ततः कोपपरीताङ्गी पुत्रशोकपरिप्लुता।**
**जगाम शौरिं दोषेण गान्धारी व्यथितेन्द्रिया ॥५६॥**

तत्पश्चात् उनके समस्त अंगों में क्रोध व्याप्त हो गया। पुत्रशोक में डूब जाने के कारण उनकी सारी इन्द्रियाँ व्याकुल हो उठीं। उस समय उसने सारा दोष श्रीकृष्ण के ही माथे मढ़ दिया।

गान्धार्युवाच

**पाण्डवा धार्तराष्ट्राश्च दग्धाः कृष्ण परस्परम्।**
**उपेक्षिता विनश्यन्तस्त्वया कस्माज्जनार्दन ॥५७॥**

**गान्धारी बोली**—श्रीकृष्ण! जनार्दन! पाण्डव और धृतराष्ट्र के पुत्र आपस में लड़कर भस्म हो गये। तुमने इन्हें नष्ट होते देखकर भी इनकी उपेक्षा कैसे कर दी?

**शक्तेन बहुभृत्येन विपुले तिष्ठता बले।**
**उभयत्र समर्थेन श्रुतवाक्येन चैव ह ॥५८॥**
**इच्छतोपेक्षितो नाशः कुरूणां मधुसूदन।**
**यस्मात् त्वया महाबाहो फलं तस्मादवाप्नुहि ॥५९॥**

महाबाहु मधुसूदन! तुम शक्तिशाली थे। तुम्हारे पास बहुत-से सेवक और सैनिक थे। तुम महान् बल में प्रतिष्ठित थे। तुममें दोनों पक्षों से अपनी बात मनवा लेने की सामर्थ्य थी। तुमने वेद-शास्त्रों और महात्माओं की बातें सुनी और जानी थीं। यह सब होते हुए भी तुमने स्वेच्छा से कुरुकुल के नाश की उपेक्षा की। यह तुम्हारा महान् दोष है, अतः तुम इसका फल चखो।

**पति शुश्रूषया यन्मे तपः किंचिदुपार्जितम्।**
**तेन त्वां दुरवापेन शप्स्ये चक्रगदाधर ॥६०॥**

चक्र और गदा धारण करनेवाले केशव! मैंने पति की सेवा से जो कुछ भी तप=शक्ति उपार्जित की है, उस दुर्लभ तपोबल से तुम्हें शाप देती हूँ।

**यस्मात् परस्परं घ्नन्तो ज्ञातयः कुरुपाण्डवाः।**
**उपेक्षितास्ते गोविन्द तस्माज्ज्ञातीन् वधिष्यसि ॥६१॥**

गोविन्द! तुमने परस्पर मार-काट मचाते हुए कुटुम्बी कौरवों और पाण्डवों की उपेक्षा की है, अतः तुम अपने भाई-बन्धुओं का भी विनाश कर डालोगे।

कृष्ण उवाच

**जानेऽहमेतदप्येवं चीर्णं चरसि क्षत्रिये।**
**दैवादेव विनश्यन्ति वृष्णयो नात्र संशयः ॥६२॥**

**श्रीकृष्ण ने कहा**—क्षत्राणी! मैं जानता हूँ, यह ऐसा ही होनेवाला है। तुम तो किये हुए को ही कर रही हो। इसमें सन्देह नहीं कि वृष्णिबंश के यादव दैवगति से ही नष्ट होंगे।

**इति महाभारते स्त्रीपर्वणि पञ्चमोऽध्यायः ॥५॥**

# षष्ठोऽध्यायः

## युधिष्ठिर की आज्ञा से सभी मृतकों का दाह-संस्कार

वैशम्पायन उवाच

**धृतराष्ट्रस्तु राजर्षिर्निगृह्याबुद्धिजं तमः।**
**पर्यपृच्छत धर्मज्ञो धर्मराजं युधिष्ठिरम् ॥१॥**

**वैशम्पायनजी कहते हैं**—जनमेजय! उस समय धर्मज्ञ राजर्षि धृतराष्ट्र ने अज्ञान से उत्पन्न होनेवाले शोक और मोह को रोककर धर्मराज युधिष्ठिर से पूछा—

धृतराष्ट्र उवाच

**अनाथानां जनानां च सनाथानां च भारत।**
**कच्चित्तेषां शरीराणि धक्ष्यसे विधिपूर्वकम् ॥२॥**

**धृतराष्ट्र ने पूछा**—भारत ! यहाँ जो अनाथ और सनाथ योद्धा मरे पड़े हैं, क्या तुम उनके शरीरों का विधिपूर्वक दाह-संस्कार करा दोगे ?

**न येषामस्ति संस्कर्ता न च येऽत्राहिताग्नयः ।**
**वयं च कस्य कुर्यामो बहुत्वात् तात कर्मणाम् ॥३॥**

जिनका कोई संस्कार करनेवाला नहीं है और जो अग्निहोत्री नहीं रहे हैं, उनका भी प्रेतकर्म कराना होगा । तात ! यहाँ तो बहुतों के अन्त्येष्टिकर्म करने हैं, हम किस-किसका करें ?

वैशम्पायन उवाच

**एवमुक्तो महाराज कुन्तीपुत्रो युधिष्ठिरः ।**
**आदिदेश सुधर्माणं धौम्यं सूतं च सञ्जयम् ॥४॥**
**विदुरं च महाबुद्धिं युयुत्सुं चैव कौरवम् ।**
**इन्द्रसेनमुखाँश्चैव भृत्यान् सूताँश्च सर्वशः ॥५॥**
**भवन्तः कारयन्त्वेषां प्रेतकार्याण्यशेषतः ।**
**यथा चानाथवत् किंचिच्छरीरं न विनश्यति ॥६॥**

**वैशम्पायनजी कहते हैं**—महाराज ! धृतराष्ट्र के ऐसा कहने पर कुन्तीकुमार युधिष्ठिर ने सुधर्मा, धौम्य, सारथि सञ्जय, परमबुद्धिमान् विदुर, कुरुवंशी युयुत्सु और इन्द्रसेन आदि सेवकों तथा समस्त सूतों को यह आज्ञा दी कि "आप लोग इन सब मृतकों के प्रेतकार्य सम्पन्न कराएँ । ऐसा न हो कि कोई भी लाश अनाथ के समान नष्ट हो जाए ।"

**शासनाद् धर्मराजस्य क्षत्ता सूतश्च सञ्जयः ।**
**सुधर्मा धौम्यसहित इन्द्रसेनादयस्तथा ॥७॥**
**चन्दनागुरुकाष्ठानि तथा कालीयकान्युत ।**
**घृतं तैलं च गन्धाँश्च क्षौमाणि वसनानि च ॥८॥**
**समाहृत्य महार्हाणि दारूणां चैव सञ्चयान् ।**
**रथाँश्च मृदिताँस्तत्र नानाप्रहरणानि च ॥९॥**
**चिताः कृत्वा प्रयत्नेन यथामुख्यान् नराधिपान् ।**
**दाहयामासुरव्यग्राः शास्त्रदृष्टेन कर्मणा ॥१०॥**

धर्मराज के आदेश से विदुरजी, सारथि सञ्जय, सुधर्मा, धौम्य तथा इन्द्रसेन आदि ने चन्दन और अगर की लकड़ी, कालीयक, घी, तेल, सुगन्धित पदार्थ और बहुमूल्य रेशमी वस्त्र आदि वस्तुएँ एकत्र कीं, लकड़ियों का संग्रह किया, टूटे हुए रथादि और नाना प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों को भी एकत्र कर लिया । फिर उन सबके द्वारा प्रयत्नपूर्वक कई चिताएँ बनाकर बड़े-छोटे के क्रम से सभी राजाओं का शास्त्रीय विधि के अनुसार उन्होंने शान्तभाव से अन्त्येष्टि-संस्कार सम्पन्न कराया ।

**कारयित्वा क्रियास्तेषां कुरुराजो युधिष्ठिरः ।**
**धृतराष्ट्रं पुरस्कृत्य गङ्गामभिमुखोऽगमत् ॥११॥**

उन सबका दाह-संस्कार कराकर कुरुराज युधिष्ठिर धृतराष्ट्र को आगे करके गङ्गा की ओर चल दिये ।

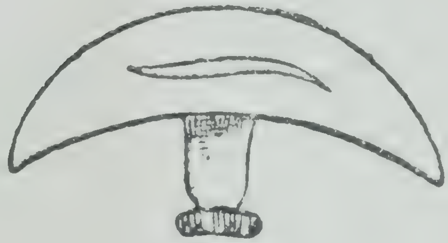
**ते समासाद्य गङ्गां तु शिवां पुण्यजलोचिताम् ।**
**उदकं चक्रिरे सर्वा रुदन्त्यो भृशदुःखिताः ॥१२॥**

कल्याणमयी, पुण्यसलिला गङ्गा के तट पर पहुँचकर युधिष्ठिर आदि सब लोगों ने अत्यन्त दुःखी होकर रोते हुए स्नान किया ।

**इति महाभारते स्त्रीपर्वणि षष्ठोऽध्यायः ॥६॥**

**॥ इति स्त्रीपर्व सम्पूर्णम् ॥**

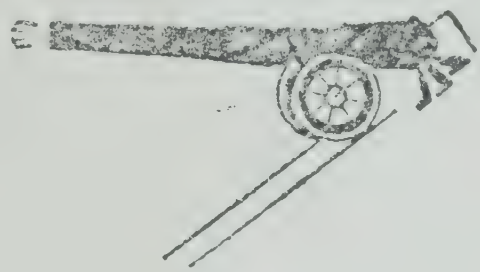
# महाभारतकालीन अस्त्र-शस्त्र



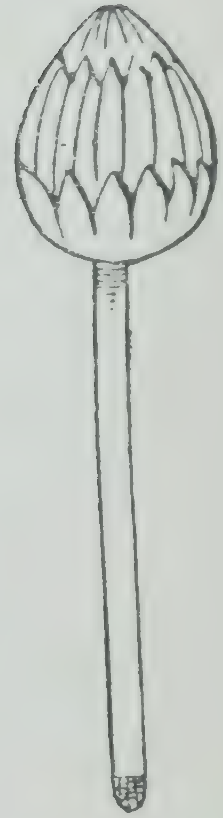
ढाल



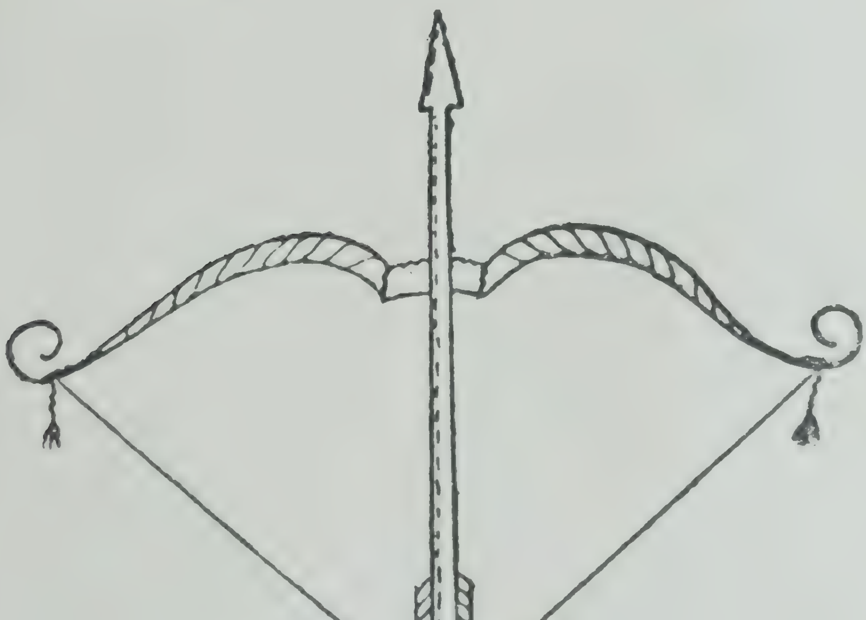
शमशीर



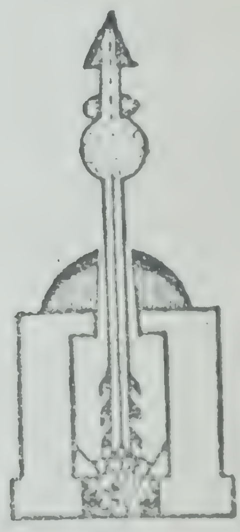
महातोप



गदा

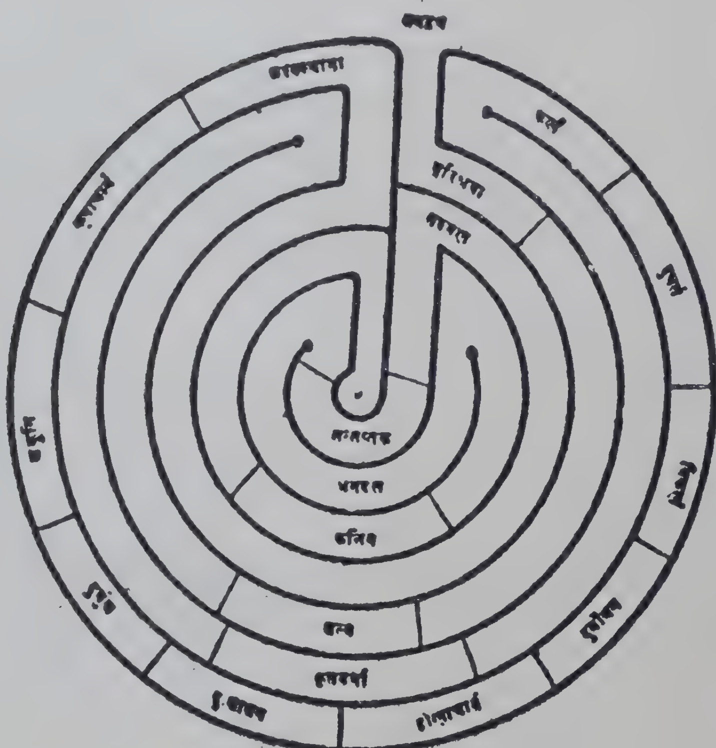


धनुषबाण

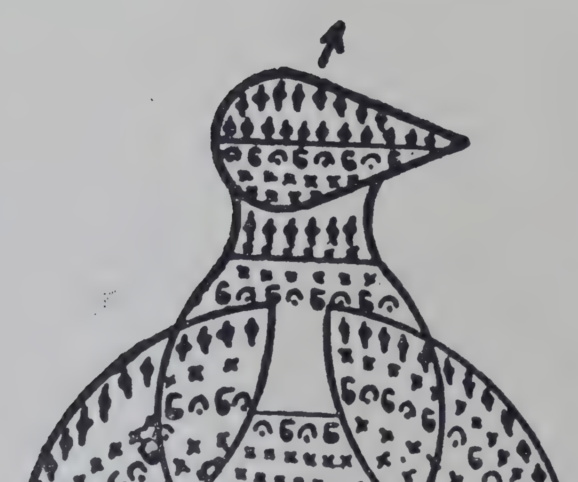


अग्निबाण

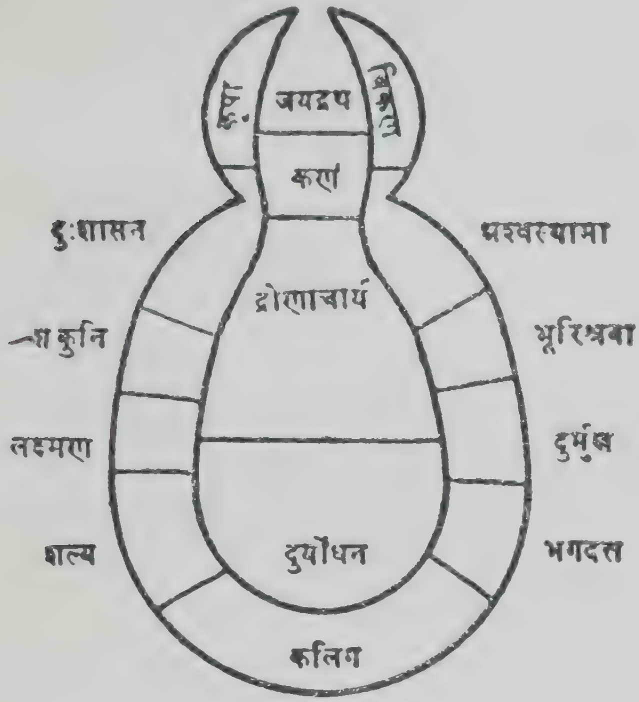
# महाभारतकालीन व्यूह रचना



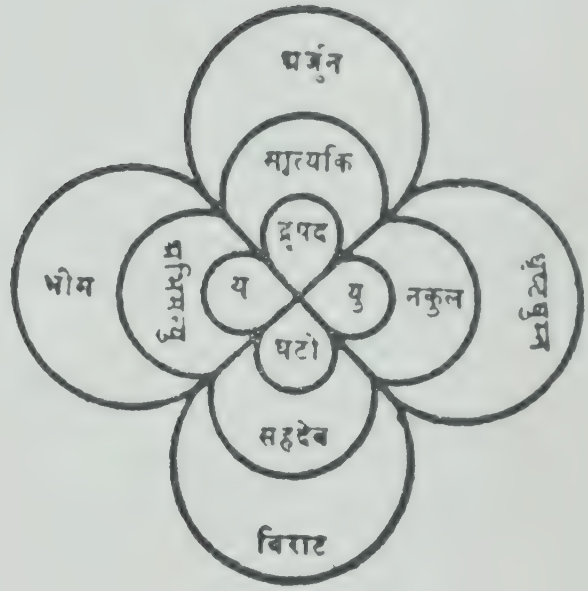
चक्र व्यूह



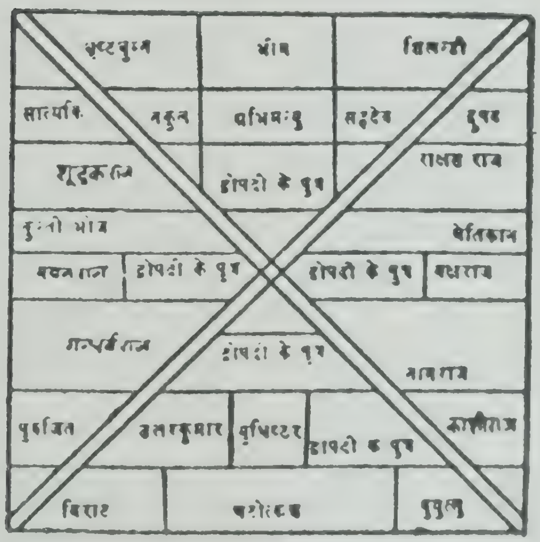
गरुड़ व्यूह



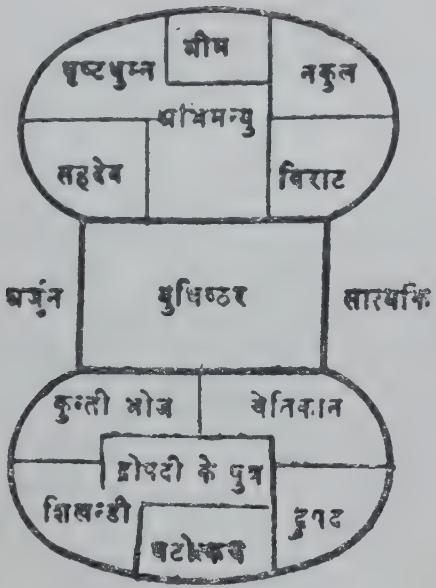

घटक व्यूह



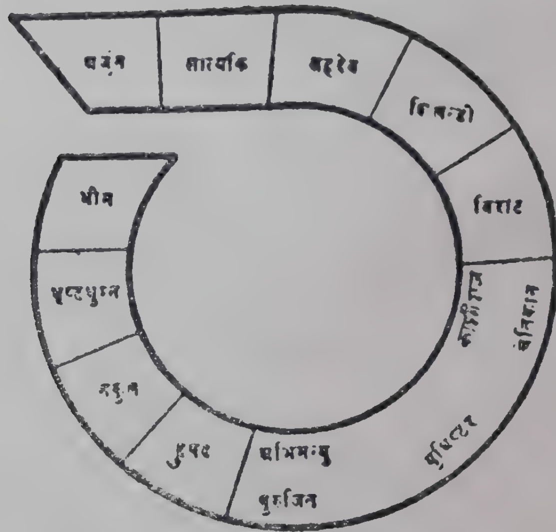

कमल व्यूह



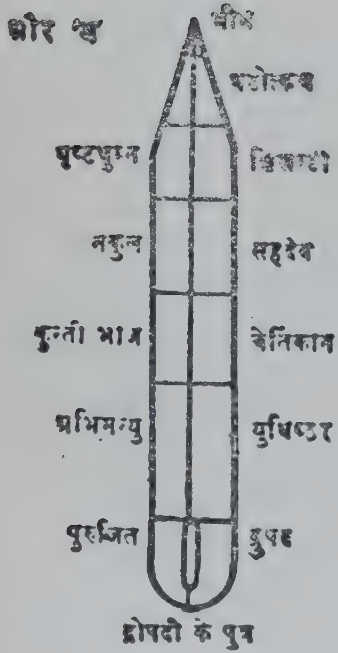

सर्वतोभद्र व्यूह



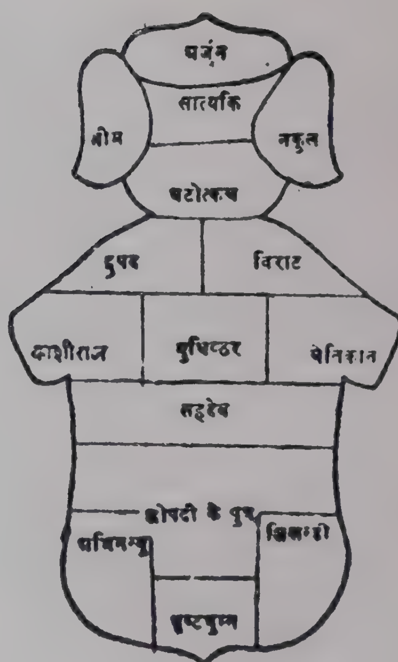

शटक व्यूह




सुदर्शन व्यूह




सूची व्यूह




गज व्यूह



